इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

- मांगीलाल भूतोड़िया -

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

(ओसवाल जाति का इतिहास)

(द्वितीय खण्ड)

लेखक

श्री मांगीलाल भूतोड़िया

एम. ए., एल. बी., साहित्यरत्न

प्रकाशक

प्रियदर्शी प्रकाशन

लाडनूं (राजस्थान) — ३४१ ३०६

एवं

७, ओल्ड पोस्ट ऑफिस स्ट्रीट, कलकत्ता—७०० ००१

(फोन :२८-०२६०/३०-६६७८)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रथम खण्ड

लेखक – ***श्री मांगीलाल भूतोड़िया***
एम. ए., एल. एल. बी., साहित्यरत्न
अधिवक्ता, उच्च-न्यायालय, कलकत्ता

प्राक्कथन – ***डॉ. रघुवीर सिंह***
डी, लिट्., एल. एल. बी.
भू. पू. महाराजा, सीतामऊ

उपोद्‌घात – ***डॉ. लक्ष्मी मल्ल सिंघवी***
अधिवक्ता, उच्चतम न्यायालय, नई दिल्ली

भूमिका – ***श्री शरद कुमार साधक***
भू. पू. उपाध्यक्ष, आचार्य कुल

© कापी राईट के सर्वाधिकार लेखकाधीन

प्रथम संस्करण – १९८८ (विक्रमाब्द २०४५)

मूल्य – एक सौ रुपये

द्वितीय खण्ड

लेखक – ***श्री मांगीलाल भूतोड़िया***
एम. ए., एल. एल. बी., साहित्यरत्न
अधिवक्ता, उच्च-न्यायालय, कलकत्ता

© कापी राईट के सर्वाधिकार लेखकाधीन

प्रथम संस्करण – १९९२ (विक्रमाब्द २०४९)

मूल्य – एक सौ पचहत्तर रुपये

मुद्रक – *तारा प्रिंटिंग वर्क्स*
कमच्छा, वाराणसी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

(ओसवाल जाति का इतिहास)

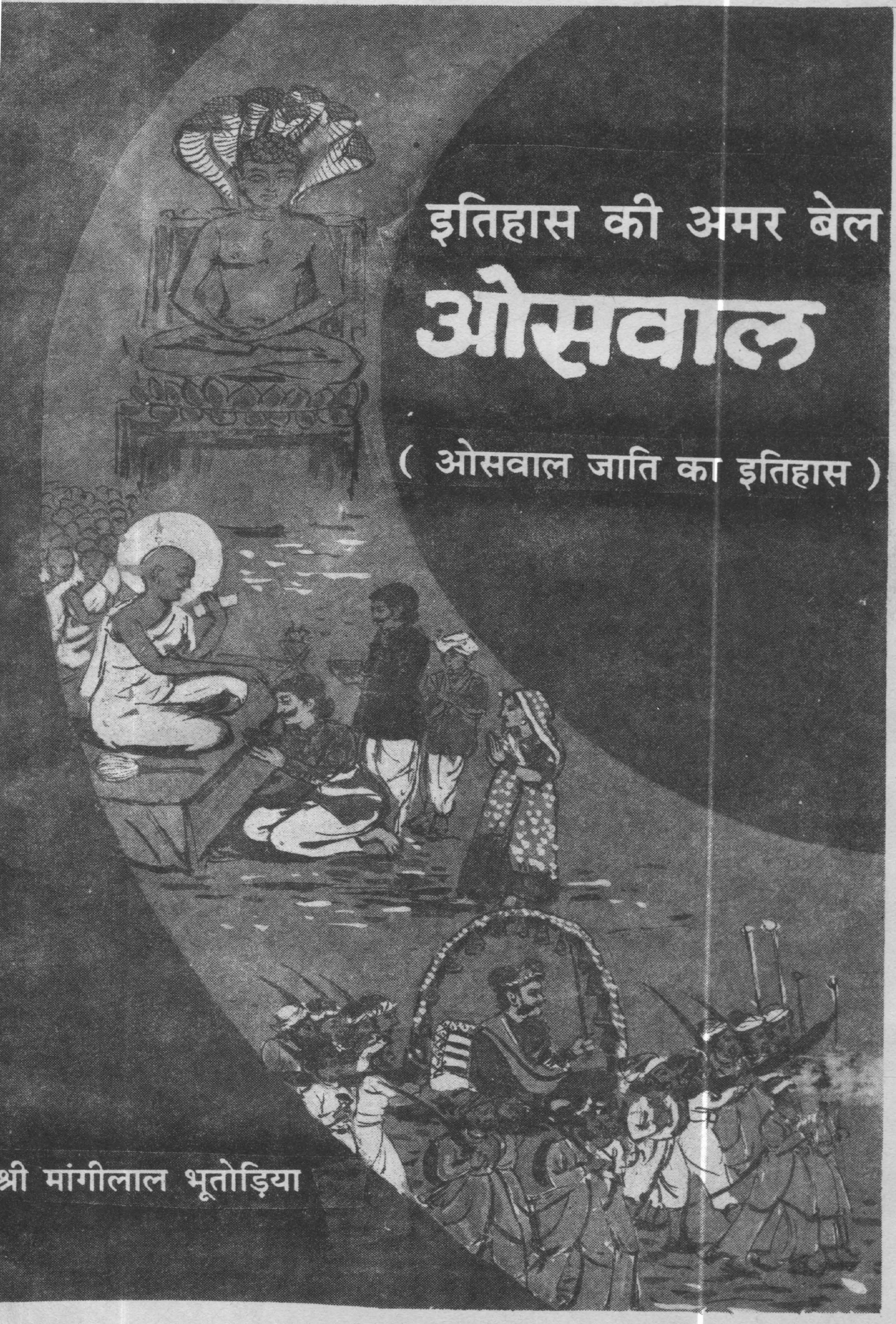

श्री मांगीलाल भूतोड़िया

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कसौटी पर—

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

दुस्तर अनुसन्धान यात्रा : रोचक प्रस्तुति

यह ग्रन्थ श्रीमांगीलाल जी भूतोड़िया के अथक अध्यवसाय और अनुशीलन की पुरस्कृति है। इस में इतिहास और पुरातत्त्व, साहित्य और कला, धर्म और दर्शन, संस्कृति और समाज- शास्त्र—इन सबका सार्थक संगम और समन्वय सम्पन्न हुआ है। विद्वान् लेखक ने अपनी दुस्तर अनुसन्धान यात्रा में एक सुदीर्घ कालखण्ड के पठारों और पड़ावों का मानक और मनोरम मानचित्र बनाया है। एक पुरातन जाति की जीवन्त गाथा प्रस्तुत करने में प्रमाण और प्रवाद को, साध्य और संभावना को, तथ्य और अनुमान को जोड़ने और आँकने का यह उल्लेखनीय प्रयास है। न केवल इतिहासकार की दृष्टि से बल्कि कवि की संवेदना से लेखक ने भारतीय जीवन के शतदल-पद्मवृन्त पर 'ओस' (शबनम) की तरह सुशोभन ओस-वाल जाति के उद्भव और उन्मेष की गाथा प्रस्तुत की है। इस प्रस्तुति में सहृदय आत्मीयता ने विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण को दिशा दी है और कई बिखरे हुए तथ्यों एवं मतों को एक सूत्र में पिरोने की प्रेरणा भी।

मुझे यह ग्रन्थ संयुक्त राष्ट्रसंघ के स्विट्जरलैंड में जीनीवा स्थित मुख्यालय की एक भित्ति पर सुसज्जित व सुविशाल चित्र की याद दिलाता है। उस बुने हुए चित्र में परिवारों, कबीलों, गाँवों, शहरों, जनपदों, राष्ट्रों और एक विश्व के अन्तर्ग्रथित विकास-क्रम की कथा कहने की कलात्मक चेष्टा की गई है। हर बार जब मैं उस चित्र को देखता हूँ तो मेरे मानस पटल पर अनेकताओं में झाँकती हुई मनुष्य जाति की एकता, सांस्कृतिक-सामाजिक विभिन्नताओं में बसी हुई मनुष्य की अभिन्नता और इतिहास के क्रम में उभरते और निखरते हुए मानवीय सम्बन्धों की आत्मीयता रेखांकित और आलोकित हो उठती है। मनुष्य का इतिहास इन्हीं सम्बन्धों में गुँथी हुई अस्मिताओं की कहानी है। श्री भूतोड़िया जी का यह ग्रन्थ उसी कथा-श्रृंखला की एक कड़ी है।

भारतवर्ष में परम्परा से शुद्ध इतिहास की तथ्यात्मक और घटनापरक दृष्टि का अभाव रहा है। भारत में अधिकांश जातियों का इतिहास इस दृष्टि से न्यूनाधिक परिमाण में अभावग्रस्त है। ओसवाल जाति का इतिहास इसका अपवाद नहीं है। विभिन्न साक्ष्य-स्रोत जो संकेत देते हैं, उनमें तिथिक्रम एवं

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अन्य विविध प्रश्नों के अलग-अलग निष्कर्ष प्रकट होते हैं, अलग-अलग प्रस्थापनाओं और संभावनाओं की प्रतीति उभरती है। विद्वान् लेखक ने उन विभिन्न निष्कर्षों और प्रस्थापनाओं का तरतीब से और तुलनात्मक विवेचन किया है, उनके पक्ष और विपक्ष को तथ्य और तर्क की कसौटी पर रखा है, एवं एक सधे हुए कथाकार की बानगी से सुसंगत तारतम्य का निर्वाह किया है। इसलिए मत-मतान्तर के बीहड़ के बीच लेखक अपना मार्ग कभी नहीं खोता। दिगदिगन्त के सर्वेक्षण में भी लेखक को दिशाभ्रम नहीं होता।

वस्तुतः ओसवाल जाति के उद्भव और उत्कर्ष को जानने, समझने और सत्यापित करने के लिये इतिहास, नेतृत्व, पुरातत्त्व, साहित्य, कला, संस्कृति, धर्म, सम्प्रदाय, अर्थ, समाजशास्त्र और राजनीति का समन्वित एवं सम्मिश्रित विश्लेषण और विवेचन अनिवार्य है। श्री भूतोड़ियाजी ने इस पुस्तक में गहरी एवं बहुमुखी जिज्ञासाओं को जगाया है। उन जिज्ञासाओं का समग्र-सम्पूर्ण दृष्टि से सम्पन्न समाधान सुझाने का भगीरथ प्रयास बरसों तक इस विषय के शोध, मंथन और बहु-आयामी अवगाहन और समन्वय की अपेक्षा करता है। मै श्री मांगीलाल जी भूतोड़िया को हृदय से सविनय, सादर साधुवाद देता हूँ और यह आशा करता हूँ कि उन्होंने जो प्रस्थापनाएँ और सम्भावनाएँ प्रस्तुत की हैं, उन पर निकट भविष्य में, और भी गहरा उत्खनन और अनुशीलन होगा। श्री भूतोड़िया जी का यह ग्रन्थ उस उपक्रम के मार्गदर्शन के लिये एक मशाल की तरह प्रज्ज्वलित रहेगा और जगमगाता रहेगा।

डा. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी
उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठ अधिवक्ता
(ग्रन्थ के प्रथम खण्ड के उपोद्‌घात एवं 'तिथ्ययर'
जुलाई ८९ में प्रकाशित समीक्षा-अंश)

*

महत्त्वपूर्ण कार्य : प्रामाणिक विवेचन

श्रीमांगीलाल भूतोड़िया द्वारा लिखित "ओसवाल की अमर बेल—ओसवाल" शीर्षक ओसवाल समाज के इस सचित्र इतिहास का मै हृदय से स्वागत करता हूँ। लेखक ने श्रमण परम्परा की ऐतिहासिकता और धर्मचक्र के महत्त्व का विवेचन करते हुए सम्प्रदायों की वर्तमान स्थिति पर प्रकाश डाला है। जोधपुर से ३२ मील उत्तर-पश्चिम में स्थित ओसिया नगरी की संस्थापना का विवरण देते हुए ओसवालों की उत्पत्ति तथा कुलदेवी सचिया माता के प्रभाव का सविस्तार विवेचन किया है। ओसिया की प्राचीनता सम्बन्धी नवीनतम शोधों का विवरण देते हुए ओसिया तीर्थ के पुनरुद्धार पर भी विचार किया है। ओसवाल उत्पत्ति के काल-निर्णय में सारे मतों और इतिहासकारों के तर्कों पर भी विचार-विमर्श करते हुए इस तीर्थ के पुनरुद्धार विषयक प्रस्तावों के सन्दर्भ में वर्तमान ओसिया नगरी की पूर्ण जानकारी दी है।

तद्‌विषयक प्राचीन ग्रन्थों और शिलालेखों सम्बन्धी मान्यता पर विचार कर परमार आदि राजपूत जाति की उत्पत्ति की भ्रान्ति पर अपना स्पष्ट मत दिया है। इतिहास लेखन में ओसवालों के इतिहास के विभिन्न स्रोतों पर अपनी मान्यता प्रकट करते हुए लेखक ने ओसवालों के गोत्रों की स्थापना और विकास सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण जानकारी प्रस्तुत की है। ओसवालों के सामाजिक समीकरणों की चर्चा करते हुए उनके समुचित कार्यों का भी विवरण दिया है, जिससे इस जाति के इतिहास पर पूरा-पूरा प्रकाश पड़ता है। ओसवालों के गोत्रों की स्थापना और विकास के विवरण के साथ माहेश्वरी जाति से आये हुए ओसवालों की भी जानकारी सम्मिलित की गई है। विभिन्न जैनाचार्यों की चर्चा करते हुए स्थानकवासी, तेरापंथी और दिगम्बर सम्प्रदायों के प्रभावी सन्तों की जानकारी जोड़ दी गई है। प्राचीन ओसवाल तीर्थों के विवरण देकर ओसवाल इतिहास पुरुषों की भी संक्षिप्त जीवनियाँ और शासन-सम्मानित ओसवालों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

का भी उल्लेख किया गया है। इस प्रकार यह ग्रन्थ ओसवाल जाति सम्बन्धी एक विस्तृत सामग्री-संग्रह बन गया है, जिसके आधार पर ओसवाल इतिहास पर भविष्य में बहुत-बहुत अध्ययन और भरपूर शोध सम्भव हो सकेंगे।

अतः आशा करता हूँ कि यह इतिहास अधिकाधिक प्रसारित ही नहीं होगा; परन्तु इसका गहन अध्ययन भी होगा। इस ग्रन्थ को लिखकर श्रीमांगीलाल भूतोड़िया ने जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया है, उसके लिये मैं उनका समादर करते हुए उनको हृदय से धन्यवाद देता हूँ कि भारतीय इतिहास की इस महत्त्वपूर्ण कड़ी का प्रामाणिक विवेचन हमें यो सुलभ कराया। यह ग्रन्थ पठनीय ही नहीं, अध्ययनीय और सयत्न संग्रहणीय भी है।

डा. रघुवीर सिंह, डी. लिट्.
भूतपूर्व महाराजा-सीतामऊ स्टेट
(ग्रन्थ के प्रथम खण्ड के प्राक्कथन से उद्धृत)

*

अक्षर अक्षर जीवन-संगीत

श्रीमांगीलाल भूतोड़िया ने वि. पू. ५००० से वि. सं. २०३० तक की इतिहास यात्रा की और असि, मसि, कृषि के आचार्य ऋषभ की सन्तति के रूप में ओसवाल समाज को प्रस्तुति दी है। ओसवाल व्यवच्छेदक नहीं हैं, समावेशक हैं। 'समानशीलव्यसनेषु सख्यम्' के अनुसार उन्होंने अपने जैसे रहन-सहन वालों को अपनाया और सबकी पहचान के गोत्र का निर्धारण कर इतिहास की इस अमर बेल को पल्लवित पुष्पित रखा है।— यह विवरण इतना सजीव है कि पढ़ते-पढ़ते पाठकों का हृदय इतिहास की अपेक्षा पूरी करने के लिये मचल उठेगा। ग्रन्थ के एक एक अक्षर में जीवन-संगीत है। 'इतिहास की अमर बेल ओसवाल' जैसी सूझबूझ वाला यह ग्रन्थ लिखकर श्रीमांगीलाल भूतोड़िया ने समाज का गौरव बढ़ाया है।

श्री शरद कुमार साधक
भू. पू. उपाध्यक्ष, अखिल भारत आचार्य कुल एवं संपादक आचार्य कुल, वाराणसी
(ग्रन्थ के प्रथम खण्ड की भूमिका से उद्धृत)

*

अभिनन्दनीय

आपने ओसवाल-इतिहास लिखकर समाज की जो सेवा की है, वह सदा अवर्णनीय रहेगी और कभी विस्मृत नहीं की जायेगी। ओसवाल-इतिहास अब तक अतीत के अन्धकार के घेरे में निर्जीव हो इस प्रतीक्षा में था कि समाज का कोई पुरुष साहस जुटा उसका उद्धार करे। आपने इसका बीड़ा उठा, त्याग, लगन, अविरल परिश्रम, अध्ययन, अध्यवसाय, खोज और अनुसन्धान द्वारा उसका न केवल उद्धार ही किया है, वरन् भारत के ऐतिहासिक मंच पर उसको अतीत के धार्मिक एवं राजनैतिक कार्यकलापों से अभिभूत कर, उसके प्रति समाज को जागृत कर इतिहास की अमर बेल के रूप में प्रस्थापित किया। इसके लिये समाज सदा आपका ऋणी रहेगा। इतिहास जगत् में यह आपकी सदा के लिये बड़ी देन मानी जायेगी। आपने भावी शोधकर्त्ताओं के लिये भी मार्ग बहुत सरल और प्रशस्त कर दिया है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपने लाडनूँ इतिहास-सेमीनार में आने के लिये लिखा है, पर यदि आपका वहाँ अभिनन्दन का कार्यक्रम होता हो तो ही मैं आने का प्रयत्न करूँगा; क्योंकि मेरा स्वास्थ्य आयु के कारण गिरता जा रहा है। मेरे जीवन की बहुत बड़ी साध थी— ओसवाल इतिहास की, वह तो आपने पूरी कर दी।

श्री बलवंतसिंह मेहता, उदयपुर
भू. पू. सदस्य—संविधान निर्मात्री सभा, लोकसभा,
संसदीय लेखा समिति, राष्ट्रीय खनिज विकास निगम।
भू. पू. मन्त्री—राजस्थान सरकार

*

आपने बड़े परिश्रम और सूझ बूझ से 'इतिहास की अमर बेल—ओसवाल' को लिखने का प्रयत्न किया है, उसकी प्रशंसा करता हूँ।

पं. दलसुख भाई मालवणिया
अहमदाबाद

*

ऐतिहासिक दस्तावेज

'इतिहास की अमर बेल—ओसवाल' की पांडुलिपि पढ़ी। ओसवाल समाज के सम्बन्ध में ऐसा शोध-ग्रन्थ देखने में नहीं आया। वस्तुतः यह ग्रन्थ एक ऐतिहासक दस्तावेज है। इस श्रम-साध्य प्रस्तुति के लिये श्रीमांगीलाल भूतोड़िया बधाई के पात्र हैं। वृहद् ओसवाल समाज की शक्ति को पहचानने की दृष्टि से यह विशिष्ट उपलब्धि है। हर ओसवाल परिवार के लिये यह ऐतिहासिक ग्रन्थ संग्रहणीय एवं पठनीय है।

श्री कन्हैयालाल सेठिया, कलकत्ता
साहित्य वाचस्पति

*

जाति आपकी ऋणी रहेगी

'इतिहास की अमर बेल— ओसवाल' का प्रथम भाग देखकर बहुत खुशी हुई। आपने इसमें बहुत परिश्रम किया है। पुस्तक में आपने कई शिलालेखों, प्राचीन ग्रन्थों, पत्रावलियों आदि का उल्लेख किया है। इनमें से अति महत्त्वपूर्ण कुछ के चित्र होते तो अच्छा रहता। आपने स्वकथ्य में लिखा है "मै इतिहासकार नहीं हूँ"। इतिहासकार के पर नहीं होते, आप इतिहासकार नहीं थे; परन्तु अब इतिहासकार हैं। इस प्रयास की मैं हृदय से प्रशंसा करता हूँ। इस कार्य के लिये ओसवाल जाति आपकी सदैव ऋणी रहेगी।

श्री श्रीचन्द मेहता, साहित्यरत्न
अध्यक्ष—श्री सिंह सभा, जोधपुर

*

तटस्थ एवं विश्वसनीय निरूपण

प्रस्तुत ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने ओसवाल समाज के उद्भव, विकास और उसके सांस्कृतिक, सामाजिक और धार्मिक अवदान पर गहन तथ्यात्मक प्रकाश डाला है। प्राक्कथन (डा. रघुवीर सिंह), उपोद्घात (डा. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी), भूमिका (शरदकुमार साधक) तथा स्वकथ्य (लेखक) में जैन धर्म और

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ओसवाल समाज की बृहत् भूमिका और उनके योगदान पर व्यापक विचार किया गया है। भूतोड़िया जी ने जिस उदारता, अनासक्ति, तटस्थता और निष्काम वृत्ति से तथ्यों का आकलन, आलोड़न और निरूपण किया है, वैसा/उस तरह बहुत कम लोग कर पाते हैं। कुल मिलाकर ग्रन्थ अतिरंजन से ऊपर और इसीलिए विश्वसनीय है। यदि देश के तमाम वर्ग उपवर्ग के तटस्थ इतिहास इसी तरह पेश हों और उनका उदार, वस्तुनिष्ठ महायोग किया जाए तो भारत की जो सांस्कृतिक मुख छवि बनेगी वह अभिनव, भिन्न और मृत्युञ्जयी होगी। ग्रन्थ संकलनीय और पठनीय है।

डा. नेमीचन्द जैन, इन्दौर
('तीर्थंकर' के मई/जून ८९ अंक से उद्धृत)

*

सरावण जोग उंडी शोध खोज

जैन समाज रै इण जागरूक ओसवाल समाज री इतिहासगत पोथी री घणी चावी कमी री पूरती इण ग्रंथ सूं हुयी है।

श्रीभूतोड़िया इतिहास लेखन री रूढ़ परम्परा री लीक पीटणै रै बजाय आपरी पोथी में बहु आयामी सामग्री रौ समावेश करणै री पूरी चेष्टा कीवी है। ओसवाल प्रणेता-जैनाचार्य/ग्रंथकारां अर वही भाटां रा कथानक/ओसवाल उत्पत्ति/कालनिर्णय/गोत्र विकास/श्रीमाल वंश/गोत्र सूचि/इतिहास स्रोत/जैनाचार्य अर ओसवाल/प्राचीन तीर्थ/इतिहास पुरुष/अर शासन सम्मानित ओसवाल - आं अध्यायां मं ओ ग्रंथ पूरीजियो है।

इतिहास पुरूष अध्याय में जगत सेठ री तीन पीढ़ियाँ रो वर्णन इण ग्रंथ री खासियत है। जग्गा शाह सूं विक्रम साराभाई जेड़ा वैज्ञानिकां री जीवण परिचयां सूधी आ इतिहास लिखावट सरावण जोग है। कैणो पड़सी क ग्रंथ लेखक इण कृति सारू खाली मैणत ई नीं कीधी है, पण शोध-खोज भी ऊंडी करी है।

पोथी में ३० चित्र है। एक-एक चित्र एक एक स्यूं आपरी ठौड़ अनुपम है। कारण जिका लोग जन में चर्चित रैया, उणारी याद चित्रां पेटै लोक मानस माथै आपरी रंग रखरी पैठ छोड़े।

सती पाटण दे, रतनकुवँरी बीबी, सेठाणी हरकौर इत्याद समाज प्रेरिकावां, धीर वीर गंभीर चरित सम्पन्न महिलावां रौ इण ग्रंथ मं विवरण भणनैं मन गरवीजै। नारी शक्ति री सम्मान भावना रौ ध्यान ग्रंथ लेखक राखियौ, आ आछी बात है।

इतिहास कोरौ इतिहास मात्र रैवे तो मात्र घटना क्रमां रौ विवरण ई बजै। पण जद इतिहास सम-सामयिक संदर्भा सूं जुड़ै तो बो दिग्दर्शनकारी ग्रंथ बण जावै। मसलन आधुनिक काल ताईं अलंकृत व्यक्तियाँ रौ ग्रंथ में समावेश, ग्रंथ नै तांजे संदर्भा सूं जोड़ै।

इतिहास री भणत-गिणत जिकौ समाज सारे, बो ताजी हवा में जीवंत रेवै। ओसवाल समाज री बहुमुखी विकास धारा रौ अवगाहन ओ ग्रंथ करावै, आ उपलब्धि है इण री।

श्रीभूतोड़िया, भीनमाल नगर, नगर संस्कृति, धर्म, साहित्य, ज्योतिष इत्याद इतिहास संदर्भित सामग्री घणे विस्तार सूं दीवी है। पण एक बात अखरी। श्री माघ नै ग्रंथ लेखक श्रीमाल ओसवाल सिद्ध करणे री असफल चेष्टा करी है। इस प्रसंग सूं विवाद उठ खड़ी हुवणै री गुंजाइश है।.........

खैर लेखक नै लखदाद क उणरी कलम सूं एक जातीय इतिवृत्त सूरज री रोशनी में जगमगायो तो सही।

श्री पदम मेहता, जोधपुर
('माणक' के अप्रैल ८९ के अंक से उद्धृत)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

भव्य एवं प्रामाणिक दस्तावेज

ओसवाल जाति के इतिहास-लेखन के समय-समय पर स्फुट प्रयत्न होते रहे हैं। श्री भूतोड़िया द्वारा लिखित यह ग्रन्थ एक प्रामाणिक दस्तावेज है। इसके लेखन में इतिहास के विभिन्न स्रोतों—जैन ग्रन्थों, शिलालेखों, वंशावलियों आदि का पूरा उपयोग किया गया है। यह ग्रन्थ १२ अध्यायों में विभक्त है। इनमें जैनधर्म और श्रमण परम्परा के ऐतिहासिक विकास पर प्रकाश डालते हुए ओसवाल जाति की उत्पत्ति, उसके काल निर्धारण, विभिन्न गोत्रों के विकास का समीक्षात्मक विवेचन करते हुए इस जाति में हुए जैनाचार्यों, श्रीमन्तों तथा विभिन्न क्षेत्रों में अपना योग देने वाले महान् व्यक्तियों का परिचय दिया गया है। प्रमुख तीर्थों पर भी प्रकाश डाला गया है। प्राचीन एवं आधुनिक शासन द्वारा सम्मानित ओसवाल जाति के विशिष्ट पुरुषों की देन को भी रेखांकित किया गया है। पुस्तक में ३० दुर्लभ चित्र हैं। पुस्तक के प्रारम्भ में पृष्ठ ३३ से ४७ तक दी गई काल-सरणि विक्रम पूर्व ५००० वर्ष से विक्रम सं. २०३० तक की प्रमुख घटनाओं का दिग्दर्शन कराती है। यह ग्रन्थ लेखक की अनुसन्धान वृत्ति, व्यापक अध्ययनशीलता और अथक लगन का प्रतीक है। प्रकाशन भव्य, आकर्षक और संग्रहणीय है।

डा. नरेन्द्र भानावत, जयपुर
('जिनवाणी' के मार्च ८९ अंक से उद्धृत)

*

ऐतिहासिक महत्त्व

सचमुच आपने अत्यन्त अध्यवसाय, लगन और परिश्रम से ओसवाल समाज की उत्पत्ति और तज्जन्य ऐतिहासिक एवं पुरातात्त्विक सामग्री का गहन अध्ययन किया है। मैं अभिभूत हो गया। इस वैदुष्य का लाभ सबको मिलना चाहिए।....... आपने एक ऐतिहासिक महत्त्व का काम किया है, जिसकी महत्ता वर्तमान और भविष्य दोनों के लिये निर्विवाद है।....... माघ के विषय में आपकी अवधारणा पूर्णतः सत्य और प्रामाणिक है। श्रीमाल नगर से ही ब्राह्मणों के श्रीमाली गोत्र का नामकरण हुआ और यही उनके विषय में भ्रान्ति का कारण बना। आपने पुष्ट प्रमाणों से उसे निरस्त कर दिया है। आपकी स्थापनाएँ तर्कसंगत और विविकपूर्ण हैं।

डा. कल्याणमल लोढ़ा
भू. पू. अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
कलकत्ता विश्वविद्यालय

*

समाज का दर्पण

श्रीमांगीलाल जी भूतोड़िया ने 'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' ग्रन्थ लिखकर समाज का बड़ा उपकार किया है। विगत अर्द्ध शताब्दी से इतिहास और सामाजिक दृष्टि से हम लोग सुषुप्त हैं। हमारा महासम्मेलन, मुख पत्र, अधिवेशन आदि सभी चेतनाएँ/प्रेरणाएँ ऐतिहासिक वस्तु बन गईं। 'प्रियदर्शी प्रकाशन' ने जागृति हेतु यह दर्पण समाज के सामने रखा है। हम अपना ज्वाज्वल्यमान अतीत उसमें देखें। जो तथ्य स्तरों के नीचे आवृत हो गये हैं, उन्हें शोध कर उद्घाटित करें।

श्रीभँवरलाल जी नाहटा, कलकत्ता
प्रसिद्ध पुरातत्त्व एवं प्राच्य भाषाविद्

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

शोधपूर्ण उपादेय कृति

'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' ग्रन्थ के प्रथम खण्ड को मैं आद्योपान्त सरसरी नजर से देख गया। श्रीभूतोड़िया जी जाति के उतार-चढ़ाव की गहन घाटियाँ पार कर शिखर पर चढ़े हैं। आग्रहपूर्ण दृष्टि से रहित तथ्यों पर आधारित निर्णय, ग्रन्थ को एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक शोध-ग्रन्थ का रूप प्रदान करते हैं। विशाल दृष्टि, विस्तृत विषय-स्पर्श, उपलब्ध मुद्रित-अमुद्रित सामग्री का सांगोपांग अध्ययन और संयोजन आपके अथक श्रम के परिचायक हैं। ओसवाल गोत्रों, इतिहास पुरुषों एवं तीर्थस्थलों का विषय निरूपण विद्वत्तापूर्ण है। ओसवाल जाति की उत्पत्ति विषयक आपका निष्कर्ष नवीन न होते हुए भी पुष्ट-प्रमाण आधारित बन पड़ा है। विषय नीरस होते हुए भी बड़ा सजीव और सरस बन गया है। भारतीय संस्कृति, धर्म, साहित्य, कला, राजनीति आदि बहु दिशाओं में ओसवालों के अवदान को यह ग्रन्थ मुखरित करता है। ऐसी शोधपूर्ण उपादेय कृति प्रस्तुत करने के लिये मेरी हार्दिक बधाई है।

श्री श्रीचन्द जी रामपुरिया
उपकुलपति श्री जैन विश्व भारती, लाडनूँ

*

समाज का कल्पवृक्ष

यह ओसवाल समाज के लिए एक कल्पवृक्ष सिद्ध होगा। आने वाली पीढ़ियों के लिए यह ग्रन्थ मार्गदर्शक बनेगा। इस ग्रन्थ से समाज के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व का विशद परिचय प्राप्त होगा। इस सराहनीय कार्य के लिये आपका श्रम प्रशंसनीय है।

श्री चन्द्रा स्वामी
श्री विश्व धर्मायतन, नई दिल्ली

*

समाज को शाश्वत लाभ

'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' के बारे में विवरण जानकर बहुत हर्ष हुआ। आखिर तुम्हारी सृजनात्मक एवं रचनाधर्मी प्रवृत्ति से समाज को शाश्वत लाभ पहुँच सका, यह बात और भी अधिक सुख व सन्तोष देती है।

श्री उमाशंकर व्यास
प्रधानाध्यापक रा. उ. मा. वि. बाड़मेर

*

इस शताब्दी का शीर्ष सौभाग्य

आप जिसे अकिंचन प्रयास कह रहे हैं, वह इस शताब्दी में हमारा शीर्ष सौभाग्य है। इसी शताब्दी में श्रीभंडारी जी (सुखसम्पत राय जी) एवं श्रीभंसाली जी (सोहनराज जी) ने भी ओसवाल जाति का इतिहास लिखा। उन्होंने उत्पत्ति सम्बन्धी शोध को प्रायः शिलालेखों तक ही सीमित रखा है। श्रीभंसाली जी ने तो इस मिस खरतर गच्छ का ही इतिहास लिखा है, न कि ओसवाल जाति का। आपका यह सत्प्रयास किसी भी आग्रह से रहित एवं समग्र उपलब्ध सामग्रियों पर आधारित तथा बोधपूर्ण विश्लेषण से वेष्टित है। आपकी लेखनी एवं प्रतिभा की जितनी सराहना की जाय, न्यून होगी। इतने अल्प समय में आपने इस विशाल ग्रन्थ की रचना की, इसके लिये सम्पूर्ण ओसवाल समाज, हमारी आने वाली पीढ़ियाँ आपकी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कृतज्ञ रहेंगी। आपने हमारी जाति का कर्म कौशल, धार्मिक, सामाजिक एवं आर्थिक वर्चस्व इतिहास के पन्नों पर अमर कर दिया।

श्री शेखरमल ममैया, जोधपुर
महामन्त्री-अखिल भारतीय संखलेचा
ममैया कांस्टिया बुच्चा जन्नाणी महासभा

*

भव्य उपलब्धि

आपकी यह अतीव उपयोगी, श्रमसाध्य एवं भव्य उपलब्धि है। आपने इन बारह अध्यायों में अद्भुत सामग्री बटोरी है। ऐसा प्रयास संभवतः प्रथम बार हुआ है। बधाई।

डा. बुधमल शामसुखा, नई दिल्ली

*

तपस्यामूलक श्रम

लेखक श्रीभूतोड़िया ने समीक्ष्य ग्रन्थ 'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' में इतिहास की घटनापरक तथा तथ्यपरक दृष्टि का पूर्णतः आश्रय लेने का प्रयत्न किया है। और इसको पढ़ने पर लगता है कि इसके लिये लेखक ने अथक अध्यवसाय, गहन अनुशीलन और तपस्यामूलक श्रम किया है। लेखक का श्रम सफल और श्लाघनीय है।

श्री हर्षचन्द्र, दिल्ली
सम्पादक—'कथा लोक', अप्रैल ८९ अंक

*

मननीय ग्रन्थ

'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' भारत के एक उद्यमशील और आर्थिक तथा सांस्कृतिक रूप से समृद्ध जाति के उद्भव, विकास एवं उपलब्धियों को प्रस्तुत करने वाला एक मननीय, ग्रन्थ है। इसके अध्ययन, मनन और विश्लेषण से न केवल ओसवाल जाति अपनी गौरवमयी परम्परा का दिग्दर्शन कर सकती है, बल्कि अन्य जातियाँ भी अभ्युदय और निःश्रेयस के रहस्य को समझकर उत्कृष्ट और उन्नत जीवन की ओर प्रगति कर सकती हैं। मैं इसके लिए विद्वान् लेखक को हृदय से साधुवाद देता हूँ।

डा. दशरथ सिंह, पी-एच. डी.
भू. पू. प्रोफेसर, जैन विश्व भारती, लाडनूँ

*

भावप्रवण, सौम्य एवं सहृदय

ग्रन्थ हाथ में आते ही मैं उसे सम्पूर्ण पढ़ने का लोभ संवरण नहीं कर सका। आपने अत्यधिक परिश्रम से इस आवेद ग्रन्थ का प्रणयन किया है। आपकी दृष्टि केवल इतिहासकार की ही नहीं रही; अपितु एक भावप्रवण सौम्य एवं सहृदय रचयिता की भी रही है।

डा. मदनराज डी. मेहता
एसो. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सबसे भिन्न व अनूठा ग्रन्थ

किसी भी अच्छे समाज की पहचान उसकी संस्कृति और इतिहास होता है। हमारी संस्कृति उन्नत है और इतिहास गौरवशाली। यदि इतिहासकार नहीं होते तो शायद हमें स्वयं को पहचानने में ही कठिनाई होती।

मैंने ओसवाल जाति के 'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' सहित चार इतिहास-ग्रन्थ पढ़े हैं। पूर्व पठित तीनों ग्रन्थों से मेरे मन और मस्तिष्क को पूर्ण सन्तोष नहीं हुआ। आप द्वारा लिखा गया ग्रन्थ सबसे भिन्न व अनूठा है। अतीत की सच्चाईयों को जानने और प्रस्तुत करने में आपने न केवल ठोस प्रमाण ही दिये हैं; अपितु ईमानदारी भी बरती है। मुझे यह कहने में संकोच नहीं है कि आपने ओसवाल में हर शब्द लिखते समय विवेक को जागृत रखा है। इसके लिये आप साधुवाद के पात्र हैं। इस ग्रन्थ की रचना के लिये मै आपका हार्दिक अभिनन्दन करता हुआ 'ओसवाल' के द्वितीय भाग की बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहा हूँ। आप यशस्वी बनें और देव-गुरु-धर्म आपको निरन्तर शक्ति प्रदान करता रहे, यही शुभेच्छ है।

श्री जिनेन्द्रकुमार जैन, जयपुर
सम्पादक—"जैन समाज", दैनिक पत्र से उद्धृत

*

सार्थक निष्पत्ति

'इतिहास की अमर बेल—ओसवाल' एक महत्वपूर्ण एवं गवेषणात्मक उत्कृष्ट प्रयास है, जो लेखक के सदुद्देश्य एवं गहन परिश्रम का परिचायक है। ओसवाल समाज के गौरवपूर्ण अतीत, सांस्कृतिक घटनाक्रम, धार्मिक परम्पराओ एवं सामाजिक मान्यताओं का अभिनव आकलन इसमें हुआ है। नैतिक और सांस्कृतिक अवमूल्यन के इस युग में प्रस्तुत ग्रन्थ हमारी नई पीढ़ी को अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से परिचित कराएगा। लेखक के शोध, अनुशीलन एवं अध्यवसाय को सार्थक निष्पत्ति मिले, यही शुभाशंसा है।

श्री शुभकरण दस्सानी, कलकत्ता

*

प्रत्येक ओसवाल घर में ग्रन्थ अवश्य रहना चाहिए

विद्वान् लेखक ने 'इतिहास की अमर बेल—ओसवाल' ग्रन्थ जाति का प्रामाणिक एवं क्रमबद्ध इतिहास इस ग्रन्थ में प्रस्तुत किया है। हमारे विचार से अत्यन्त परिश्रम और सूझ बूझ से ओसवाल जाति के इतिहास का लेखन हुआ है। प्रत्येक ओसवाल घर में यह ग्रन्थ अवश्य रहना चाहिये।

श्री चन्दन मल चाँद, बम्बई
सम्पादक—'जैन जगत्', फरवरी ८९ अंक से उद्धृत

*

अद्वितीय ग्रन्थ

सचमुच आपने ऐसे ऐतिहासिक विषय पर काफी परिश्रम एवं अनुसन्धान करके इस महत्वपूर्ण ग्रन्थ का प्रकाशन कर समाज की बड़ी सेवा की है। छपाई, सफाई ओर गेटअप की दृष्टि से ग्रन्थ अद्वितीय बन पड़ा है। विद्वानों की भूमिकाएँ भी समीचीन हैं। निस्सन्देह इसका भारी स्वागत होगा। आज इस

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

लौकतांत्रिक युग में जातियों के बारे में सामान्य लोगों की दिलचस्पी नहीं है, फिर भी भारत को ओसवाल समाज का जो अवदान रहा है, उसका ऐतिहासिक महत्त्व कभी कम नहीं होगा। शोधकर्त्ताओं के लिये यह एक सन्दर्भ ग्रंथ एवं सामान्य जनों के लिये यह पठनीय एवं संग्रहणीय ग्रन्थ बन गया है।

श्री ओंकार लाल बोहरा, उदयपुर
भू. पू. सांसद

*

मील का पत्थर

'इतिहास की अमर बेल—ओसवाल' ग्रन्थ से आपकी अपने कार्य को प्रति असाधारण निष्ठा, कठोर परिश्रम और विस्तृत अध्ययन का परिचय मिलता है। सन्दर्भ-ग्रन्थों की विस्तृत सूची देखने से ही पता चलता है कि आपने अपनी जानकारी के सभी स्रोतों का भरपूर उपयोग करते हुए कुछ निश्चित निष्कर्षों पर पहुँचने का अथक प्रयास किया है। इसके लिये आप सम्पूर्ण ओसवाल जाति एवं जैन समाज की बधाई के पात्र हैं। आपने अनेक नये तथ्यों का उद्घाटन भी किया है यथा माघ कवि का ओसवाल होना। इतिहास तो एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। स्व. सुखसम्पतराज जी भंडारी के बाद आपका यह प्रयास इतिहास की सतत यात्रा का दूसरा मील का पत्थर है, जो भावी पीढ़ी के मनीषियों को इस यात्रा में आगे बढने की प्रेरणा देगा। ग्रन्थ का मुद्रण व गेटअप भी आकर्षक है।

श्री गणपतिचन्द्र भंडारी, जोधपुर
भू. पू. व्याख्याता, जोधपुर विश्वविद्यालय

*

इतिहास और समाज के प्रति निष्ठासूचक

यह शोध ग्रन्थ लिखकर एवं ओसवाल समाज के इतिहास को प्रकाश में लाकर आपने एक बहुत बड़ा कार्य किया है, जिसके लिये आपके प्रति जितना भी आभार प्रकट किया जाय, कम है। कलकत्ता के व्यस्त प्रोफेशनल एवं यांत्रिक जीवन में रहते हुए इस प्रकार का शोध-कार्य करना कठिन तपस्या और साधना की चरम सीमा है, जिससे इतिहास और समाज के प्रति आपकी निष्ठा और अनुरागिता परिलक्षित होती है।

ऐसे ग्रन्थ का किसी की भी कलम से निःसृत होना समाज के सभी लोगों और इतिहास के विद्यार्थियों के लिए स्वागत योग्य होता है; लेकिन मेरे लिये यह व्यक्तिगत आनन्दानुभूति एवं गौरव की बात है कि इसके रचयिता और प्रणेता अन्य कोई नहीं, बल्कि मेरे अपने बचपन के साथी और मित्र हैं। इस उपलब्धि और सृजन के लिए मैं आपसे अधिक बधाई आदरणीया किरण जी को दूँगा, जिनकी मधुर सन्निधि एवं प्रेरणा से आपके काव्य एवं साहित्य सृजन का निर्झर निरन्तर प्रवाहित और गतिमान है।

श्री कन्हैयालाल कोचर, जयपुर
श्रम-आयुक्त, राजस्थान सरकार

*

अद्भुत अनुपम और अमोलक

अद्भुत अनुपम और अमोलक 'ओसवाल' ऐतिहासिक निधि है,
अतिशय अलभ्य, शोध-परिपूरण, मौलिक, अमर प्रमाणिक कृति है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मांगीलाल ने जो प्रण धारा अलख जगाकर कर दिखलाया
अटूट निष्ठा प्राण-प्रतिष्ठा शुभ संकल्पित यह फल श्रुति है ॥

स्वर्णिम था इतिहास हमारा कितने गौरवशाली हैं हम,
प्रियदर्शी ने सत्यम् शिवम् सुन्दरम् ये दर्पण दिखलाए।
अन्वेषण विश्लेषण और विवेचन से ये स्वर्ण तपाए,
'मालचन्द्र' कुन्दन बन चमके, जग में यह सौरभ फैलाए ॥

श्री मालचन्द बोथरा, लाडनूँ
प्रतिष्ठित सर्वोदयी समाज-सेवक

*

सार्थक इतिहासकार

तुमने जो अथक परिश्रम से यह शोध-ग्रन्थ तैयार किया, उसके लिये तुम्हें बधाई देना तो मात्र औपचारिकता है। मुझे जो बेहद प्रसन्नता हुई, उसे व्यक्त करने के लिये उचित शब्द नहीं है। तुम एक साहित्यकार हो और कवि भी। जीवन की विभिन्न कोणों से मीमांसा करने वाला एक विचारक भी तुम में है। यह ग्रन्थ लिखकर तुमने 'इतिहासकार' शब्द को सार्थक किया है

श्री रामरख खड़गावत, बीकानेर
डी. आई. ओ., राजस्थान सरकार

*

पढ़कर गौरवान्वित

ओसवालों के इस इतिहास की प्रस्तुति वास्तव में स्तुत्य है। यह लेखक के अथक परिश्रम, अध्यवसाय एवं गहन अध्ययन, अनुशीलन का प्रतीक है, इसमें किसी प्रकार का सन्देह नहीं है। इसे मार्गदर्शिका मानकर चलें तो इसने उस अज्ञात को उद्घाटित किया है, जिसके द्वारा अन्वेषण-अनुसन्धान के लिये विशद मार्ग प्रशस्त हुआ है।

पुस्तक के शीर्षक में 'अमर बेल' शब्द का प्रयोग युक्तियुक्त है। वनस्पति शास्त्र के अनुसार अमर बेल सदैव विकासोन्मुख रहती है। वह नीचे से ऊपर बढ़ती ही जाती है। सहारा मिलने की अपेक्षा रखने वाली बेल शक्तिशाली इतनी होती है कि समय पाकर सहारे को भी दृढ़ता प्रदान करती है। स्वयं प्रकाश की ओर ध्यान केन्द्रित किये रहती है और विकसित होती रहती है। इसी तरह ओसवाल समाज और उसका इतिहास भी विकासोन्मुख है। इसीलिये अमर बेल है। कल्पना प्रशंसनीय है।

प्रारम्भ में कालसरणि शीर्षक के अन्तर्गत कतिपय मुख्य घटनाओं के काल-वर्ष अंकित किये गये हैं—इसने पुस्तक की उपादेयता में वृद्धि की है। इन कालक्रमों पर कहीं-कहीं मान्यताओं में अन्तर हो सकता है, जिनसे सम्बन्धित तथ्यों पर गवेषणा की सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता।

ओसवाल इतिहास में पुरुष-महिलाओं का अध्याय एकादश में विस्तृत विवेचन किया गया है, जिसे पढ़कर कौन अपने आपको गौरवान्वित अनुभव नहीं करेगा।

सर्वोपरि श्री भूतोड़िया के इस प्रयास की जितनी प्रशंसा की जाय, कम है। स्थान-स्थान से खोज बीन कर सामग्री जुटाना जो आज तक किसी के लिए सम्भव नहीं हो सका ऐसा कार्य अकेले श्री भूतोड़िया जी ने कर दिया, इसके लिये उन्हें जितना साधुवाद दें, वह कम है।

श्री सौभाग्यमल श्री श्रीमाल एम. ए., जयपुर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कितनी मेहनत से भाई मांगीलाल जी ने इसे सम्पन्न किया है। पहले जब ये मेरे पास आये थे— मैंने सोचा था— ये कर पायेंगे— इतना बड़ा कार्य ? पर मुझे आनन्द हो रहा है यह देखकर कि उन्होंने इतने कम समय में इसे सम्पन्न कर प्रकाशित किया है। मैं हृदय से उनका अभिनन्दन करता हूँ।

श्री विजय सिंह नाहर
भूतपूर्व उपमुख्यमंत्री बंगाल
(ग्रन्थ के विमोचन समारोह में व्यक्त उद्गार)

*

श्री मांगीलाल जी से मेरा सम्पर्क हाईकोर्ट में वकील के बतौर ही रहा है। एक इतिहासज्ञ के रूप में उनका परिचय आह्लादकारी है। अपने काम में व्यस्त रहते हुए भी इस विशाल ग्रन्थ की रचना की है, वह सराहनीय है। आने वाली पीढ़ियाँ इस पर गर्व करेंगी।

जस्टिस बाबूलाल जैन,
कलकत्ता हाई कोर्ट
(ग्रन्थ के विमोचन समारोह में व्यक्त विचार)

*

भाई मांगीलाल भूतोड़िया ने श्रम किया है—इतिहास की बहुत सारी विस्मृत हो गई बातें सामने आई हैं। किसी भी जाति के बारे में ऐतिहासिक, वैचारिक और सांस्कृतिक उतार-चढ़ावों का मूल्यांकन और तथ्यों का संकलन कठिन से कठिन कार्य है। जो बन पड़ा है, वह विस्तृत जानकारी की दृष्टि से अति महत्वपूर्ण है।

युवाचार्य महाप्रज्ञ जी
('ओसवाल इतिहास सेमिनार (१५.१०.८९)' लाडनूं में सम्प्रेषित उद्गार)

*

सौ सवाल एक ओसवाल

इस (ओसवाल) जाति पर सर्वथा मौलिक और सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य कलकत्ता के अधिवक्ता श्रीमांगीलाल भूतोड़िया ने किया। 'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' नाम से हाल ही में उनका लगभग साढ़े चार सौ पृष्ठों का ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है, जो ओसवालों का अमर इतिहास बन गया है। इसमें भूतोड़िया जी की अनवरत साधना, अकूत श्रम और अहर्निश निष्ठा पद-पद पर देखने को मिलती है।

इसके लिये भूतोड़िया जी ने कितनी ही प्रकाशित-अप्रकाशित सामग्री का अवलोकन किया। ग्रन्थ भंडार छाने। जगह जगह की यात्राएँ की। विद्वानों से सत्पपरामर्श किया और सामग्री एकत्र करने का प्रसव-श्रम भोगा, तब जाकर यह मणिरत्न दिया। इससे भूतोड़िया जी स्वयं ही हम सबके पद्मविभूषण हो गये हैं। शोधानुसन्धान की दृष्टि से यदि विश्लेषण किया जाय तो ओसवाल जाति का यह ऐतिहासिक टकसाली ग्रन्थ ही बन गया है।

इसके प्रणेता श्री भूतोड़िया जी को मैं तो इस बात की विशेष बधाई देना चाहूँगा कि अपना सर्वस्व समर्पण देकर उन्होंने यह अभूतरत्न हमें प्रदान किया, जो 'न भूतो न भविष्यति' ही कहा जायेगा। कई बार गाँवों में लोगों को बात करते समय 'सौ सवाल एक ओसवाल' कहते सुनता आ रहा था, इस ग्रन्थ में मुझे उनकी बात का उत्तर—अर्थ मिल गया, यह मेरे लिये एक ओर महत्वपूर्ण उपलब्धि रही।

डा. महेन्द्र भानावत, उदयपुर
('जय राजस्थान' के १० सितम्बर ८९ अंक से उद्धृत)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अद्भुत-कार्य

ओसवाल समाज के इतिहास को श्री भूतोड़िया जी ने जिस विशालता एवं प्रामाणिकता से प्रस्तुत पुस्तक के द्वारा उपस्थित किया है, वह उनके तलस्पर्शी व्यापक चिन्तन का साक्षत उदाहरण है।

ओसवाल समाज पर पहले भी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। सभी ने अपने-अपने दृष्टिकोण से ओसवाल समाज की ऐतिहासिकता को उद्घाटित किया है; किन्तु श्री भूतोड़िया जी ने जो कार्य किया है, वह अद्भुत है। इधर-उधर दूर-दूर तक अनेक रूपों में फैले हुए ओसवाल समाज का यह एकत्र चित्रण ओसवाल समाज की उस महती गरिमा को प्रकाशमान करता है जिसकी अब तक बहुत अधिक अपेक्षा थी। इतिहास के जिज्ञासु महानुभाव प्रस्तुत पुस्तक से अवश्य ही लाभ उठायें, यह हमारा हार्दिक नम्र निवेदन है।

श्री अमर भारती (वीरायतन)
(सितम्बर ९० में प्रकाशित ग्रन्थ-समीक्षा)

*

शोध-छात्रों के लिए मार्गदर्शक

किसी भी जाति या वर्ग के अतीत के अध्ययन का महत्त्व केवल उस जाति विशेष तक सीमित नहीं रहता अपितु उसका अपना नृतत्त्वशास्त्रीय तथा समाजशास्त्रीय महत्व भी है। यह अध्ययन कभी कभी अत्यन्त रोचक और ज्ञानवर्धक भी हो जाता है। प्रस्तुत ग्रन्थ में ओसवाल जाति का जो विशद अध्ययन किया गया है, वह भी रोचक और ज्ञानवर्धक होने के साथ ही समाजशास्त्रीय दृष्टि से भी अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

अतीत की अनजानी गहराईयों में डूबकर किसी भी जाति के इतिहास की थाह लेना और उनमें से अनमोल रत्नों को ढूँढ़ निकालना सरल कार्य नहीं है। मांगीलाल भूतोड़िया ने खोजबीन का यह श्रम-साध्य और उल्लेखनीय कार्य करके 'इतिहास की अमर बेल-ओसवाल' नामक ग्रन्थ तैयार किया है। ग्रन्थ में दिये गये तथ्यों के लिए लेखक ने अपनी ओर से ठोस प्रमाण प्रस्तुत किये हैं और तत्सम्बन्धी दंतकथाओं का उल्लेख करना भी वह नहीं भूला है। ओसवालों से सम्बन्धित विभिन्न तीर्थों तथा ओसवालों के इतिहासप्रसिद्ध पुरुषों और महिलाओं की भी विशद चर्चा ग्रन्थ में है। इससे ग्रन्थ की उपादेयता काफी अधिक बढ़ गयी है।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना से पूर्व लेखक ने लगभग दो सौ से भी अधिक ग्रन्थों और पत्र-पत्रिकाओं का अध्ययन किया है, जिनकी सूची ग्रन्थ के अन्त में संलग्न की गई है। इससे निष्कर्षों की प्रामाणिकता के लिए प्रयत्न की भी जानकारी मिलती है। पुस्तक की छपाई साफ-सुथरी है और यत्र तत्र आई अशुद्धियों के लिए शुद्धिपत्र भी संलग्न कर दिया गया है।

ग्रन्थ निश्चित रूप से इतिहासकारों समाजशास्त्रियों तथा विशेषतः ओसवाल समाज में लोकप्रियता प्राप्त करेगा। शोध-छात्रों के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगा।

श्री योगेशचन्द्र शर्मा
(राजस्थानपत्रिका दिनांक २१.७.९१ में प्रकाशित समीक्षा)

* * *

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ओसवाल कुलरत्न

धन्य हैं आप जैसे सपूत, जिन्होने सम्पूर्ण ओसवाल जाति की महिमा और गरिमा को इतिहास के पुनीत पृष्ठों पर अल्प समय में एक विशाल ग्रन्थ के रूप में रेखांकित किया। आपका यह अत्यन्त सराहनीय प्रयास शब्दातीत, वर्णनातीत एवं पूर्णरूपेण अभिनन्दनीय है।

इतिहासकार युगस्रष्टा ही नहीं, युगद्रष्टा भी होता है। आपने इस विस्तृत ग्रन्थ द्वारा ओसवाल समाज के भूत, वर्तमान और भविष्य का जो प्राणवान् पुनर्मूल्यांकन किया है और आने वाली पीढ़ियों को जो नूतन संदेश दिया है, उसके लिये जब तक ओसवाल वंश इस धरा पर स्थापित रहेगा एवं परमपूज्य तीर्थंकरों की वन्दना-अर्चना होती रहेगी, तब तक हमारे वंशज आपके चरणों में नतमस्तक होकर आपके चिर ऋणी रहेंगे।

आपकी निःस्वार्थ एवं निस्पृह सेवा अजर-अमर है। अतः हमारी अखिल भारतीय संखलेचा, मंमैया, कांस्य्यिा, बुचा जनाणी महासभा अति प्रसन्नतापूर्वक और गौरवान्वित होकर इस 'ओसवाल' ग्रन्थ के विमोचन समारोह की पुण्यमयी वेला में आप श्री को **'ओसवाल कुल-रत्न'** उपाधि से विभूषित करती है।

महामन्त्री अखिल भारतीय
संखलेचा मंमैया, कांस्टिया, बुचा, जनाणी महासभा

("इतिहास की अमर बेल-ओसवाल" ग्रन्थ के विमोचन समारोह (२३.११.८९) पर कलकत्ता में लेखक श्री मांगीलाल भूतोड़िया को भेंट किये गये 'अभिनन्दन पत्र' का अंश)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

(ओसवाल जाति का इतिहास)

ग्रन्थ-संरक्षकसूची

१. स्व. श्री कंवर लाल जी बेताला,	गौहाटी
२. श्री कानमल जी सेठिया,	कलकत्ता
३. श्री पूसराज जी बोथरा,	कलकत्ता
४. श्री बच्छराज जी दूगड़,	कलकत्ता
५. श्री धनपत सिंह जी बैद,	कलकत्ता
६. श्री मांगीलाल जी विनायकिया,	अहमदाबाद
७. श्री मदनलाल जी बोथरा,	कलकत्ता
८. श्री फतहचन्द जी कुंडलिया,	हैदराबाद
९. श्री प्रदीप कुमार विनोद कुमार कुंडलिया,	कलकत्ता
१०. श्री राजेन्द्र सिंह जी दूगड़,	कलकत्ता
११. स्व. श्री उमराव सिंह जी चोरड़िया,	नई दिल्ली
१२. डा. वाई. एस. बापना,	कलकत्ता
१३. श्री डालमचन्द जी सुराना,	कलकत्ता
१४. श्री मानमल जी भूतोड़िया,	कलकत्ता
१५. श्री सार्दूलसिंह जी भूतोड़िया,	कलकत्ता
१६. श्री राजेन्द्र सिंह जी सेठिया,	कलकत्ता
१७. श्री रूपचन्द जी सिंघी,	कलकत्ता
१८. श्री अभयसिंह जी सुराणा,	कलकत्ता
१९. श्री कन्हैयालाल जी पटावरी,	नई दिल्ली
२०. श्री चन्दनमल जी भूतोड़िया,	कलकत्ता
२१. श्री सुन्दरलाल जी दूगड़,	कलकत्ता
२२. श्री अमोलक चन्द जी सिंघवी,	हैदराबाद
२३. श्री भँवरलाल जी बैद,	कलकत्ता
२४. श्री विजराज जी सुराणा,	नई दिल्ली
२५. श्री हुलासचन्द जी गोल्छा,	काठमण्डू
२६. श्री हेमन्त कुमार जी सेखावत,	इन्दौर
२७. श्री नगराज जी दूगड़,	काठमण्डू
२८. श्री नथमल जी कन्हैयालाल बैद,	वीरगंज
२९. श्री भौमसिंह जी सेठिया,	काठमण्डू
३०. श्री पद्मचन्द जी सुरेन्द्र कुमार गोल्छा (फाजिलका निवासी),	वीरगंज
३१. श्री महालचन्द जी ज्योति कुमार,कमल कुमार,बैंगानी,	काठमण्डू
३२. श्री जयचन्द लाल जी आनन्दमल बैद,	काठमण्डू
३३. श्री तोलाराम जी दूगड़,	काठमण्डू

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

स्वकथ्य

मुझे खुशी है कि ग्रन्थ के प्रथम खण्ड को पाठकों ने सराहा है एवं विद्वत् वृन्द ने मेरे लिए उत्साहवर्धक शब्द कहे हैं। मैं उन सभी सुधी-जनों का हृदय से आभारी हूँ।

प्रथम खण्ड की समालोचनाएँ

सबसे बढ़कर मैं कृतज्ञ हूँ उन सुहृदयों का, जिन्होंने निरपेक्ष भाव से ग्रन्थ के कतिपय अंशों की आलोचना की है। माननीय डा. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी (सम्प्रति—ब्रिटेन में भारत के उच्चायुक्त) ने ग्रन्थ के उपोद्घात में ओसवालों के उत्पत्ति-समय सम्बन्धी प्रस्थापना में शंका व्यक्त की थी। यह तो अब सर्वमान्य है कि साम्प्रदायिक मोह एवं पूर्वाग्रह से खींचतान कर बिना किसी साक्ष्य के विक्रम की १० वीं या ११वीं सदी को उत्पत्ति-समय माने चलना अनुचित है। प्राचीन लिपियों के विशेषज्ञ एवं मूर्धन्य विद्वान् श्रीभँवरलाल जी नाहटा ने 'श्रमण' (अगस्त,१९८९) में ओसवालों के पार्श्वापत्य सम्बन्धों पर टिप्पणी करते हुए अनुशंसा व्यक्त की है कि 'ओसवाल जाति की उत्पत्ति ६ठी-७वीं शताब्दी से पूर्व प्रमाणित करनें में नये-प्राचीन प्रमाणों को प्रस्तुत करने का श्रम करें।' मैं मानता हूँ कि और अधिक प्रामाणिक साक्ष्यों का अनुसन्धान एवं अध्ययन आवश्यक है।

महाकवि माघ

दूसरी चुनौती की ओर इंगित 'माणक' के सम्पादक आदरणीय श्री पदम मेहता ने महाकवि माघ के ओसवाल-श्रीमाल कुल सम्बन्धी प्रस्थापना के संदर्भ में माणकीय समीक्षा में कर दिया था। तदुपरान्त प्रसिद्ध साहित्य-मनीषी डा. कल्याण मल लोढ़ा ने जयपुर में हुई एक विद्वत् गोष्ठी में डा. दयानन्द भार्गव द्वारा एतत् सम्बन्धी अपने उद्धृत कथन को नकारने का जिक्र किया। मैंने इस नुक्ते पर अपनी शोध जारी रखी। डा. रघुवीर सिंह (स्वर्गीय महाराजा, सीतामऊ) के अभिनन्दन ग्रन्थ में प्रकाशनार्थ अपने प्रबन्ध 'महाकवि माघ' में और तथ्य दिये। डा. भार्गव को एकाधिक पत्र लिखे ताकि वस्तुतः उन्हें इन्कार हो तो ग्रन्थ के नवीन संस्करण में उनके नाम का उपयोग न किया जाय, परन्तु उनसे सम्पर्क नहीं हो पाया। नवीन साक्ष्यों के आधार पर यह प्रस्थापना कि महाकवि माघ श्रीमाल-ओसवाल कुल के ही दीपक थे, और पुष्ट हुई है।

ग्रन्थ का लोकार्पण

दिनांक २३ नवम्बर, १९८८ को कलकत्ता के भारतीय भाषा परिषद् सभागार में आयोजित ग्रन्थ के प्रथम खण्ड के विमोचन समारोह को साहित्य मनीषी श्री कन्हैयालाल जी सेठिया, ओसवाल समाज के प्रमुख राजनेता एवं बंगाल के भूतपूर्व उपमुख्यमंत्री श्री विजय सिहं जी नाहर, कलकत्ता उच्च न्यायालय के न्यायाधीश माननीय श्री बाबूलाल जैन, सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रोफेसर कल्याणमल लोढ़ा प्रभृति सज्जनों का सान्निध्य प्राप्त हुआ। इसी सन्दर्भ में दिनाङ्क १५/१६ अक्टूबर, १९८९ को लाडनूँ के विश्व-भारती प्रांगण में आयोजित **'ओसवाल इतिहास-सेमिनार'** को आचार्य तुलसी एवं युवाचार्य महाप्रज्ञ का दिशा निर्देश एवं श्री श्रीचन्द जी रामपुरिया (कुलपति, विश्वभारती) डा. बुधमल शामसुखा एवं श्री शरद कुमार साधक जैसे मर्मज्ञ विद्वानों का वैचारिक सम्बल प्राप्त हुआ। इस सेमिनार की एक विशेष उपलब्धि ओसवाल महासम्मेलन हेतु लेखक के संयोजन में एक तदर्थ समिति का गठन था, जिसकी परिणति स्वरूप कलकत्ता में आदरणीय श्री गुलाबमल जी सिंघवी की अध्यक्षता में **'श्री ओसवाल महासंघ'** की विधिवत् स्थापना हुई।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सुखद संयोग

इतिहास-लेखन की इस प्रकिया में मुझे बहुत से विद्वानों का सौहार्द्र मिला— एक सुखद उपलब्धि अनायास हुई । मैं अपने कनिष्ठ डाक्टर पुत्र के लिए हम-पेशा जीवन-संगिनी की तलाश में था । उन्हीं दिनों आदरणीय श्री सौभाग्यमल जी श्री श्रीमाल के सौजन्य से उन द्वारा सम्पादित जयपुर की जैन डाईरेक्टरी प्राप्त हुई । 'ओसवाल : जन-गणना' सम्बन्धी अध्याय में मैंने उसके विभिन्न आंकड़ों का समाज-शास्त्रीय विश्लेषण किया है । इसी दौरान डाईरेक्टरी में से चार एम.बी.बी. एस. अध्ययनरत लड़कियाँ छाँटकर उनके अभिभावकों को पत्र लिखे । मेरी पुत्र-वधू इसी खोज का सुफल है ।

ग्रन्थ की बिक्री

लिखने से भी अधिक श्रमसाध्य ग्रन्थ बेचना होता है—इस बारे में पहले कभी सोचा ही नहीं था । अब तो खट्टे-मीठे अनुभवों का एक अम्बार है । ऐसे समय में स्वजनों एवं इतिहास के चहेता पाठकों का सहयोग मेरा सम्बल बना । मेरे अनुरोध पर कुछ ने ग्रन्थ का संरक्षक (Patron) बनना स्वीकार किया । मैं सभी संरक्षकों एवं पाठकों का हृदय से आभारी हूँ ।

द्वितीय खण्ड : गोत्रों के विवरण

इस वृहद् समाज के सैकड़ों प्रमुख गोत्रों के दो हजार वर्षों के विवरण का संकलन दुःसाध्य कार्य है । अपनी सीमाएँ देखते हुए मैंने कुछ आधार निश्चित किये । गोत्रों की सम्पूर्ण वंशावलियाँ ग्रन्थ के कलेवर एवं ऐतिहासिक मूल्यों की दृष्टि से आवश्यक न मानकर मैंने ऐसे प्रमुख श्रेष्ठियों एवं घटना-विवरणों को ही प्रमुखता दी है, जो सम्पूर्ण ओसवाल जाति के सन्दर्भ में उन गोत्रों की भूमिका रेखांकित करते हैं । उत्पत्तिविषयक भाटों/चारणों के विवरण यद्यपि यतियों के विवरण से मेल खाते हैं; परन्तु मध्ययुगीन सम्प्रदायों के आपसी वैमनस्य, नये गोत्र बनाने की आकाक्षां और खींचतान ने उत्पत्ति कथानकों की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिह्न लगा दिया है । फिर भी नजर अन्दाज करना उचित न मानकर मैंने यथासम्भव उन्हें उद्धृत किया है । भाटों द्वारा इच्छित फल प्राप्ति के लिए प्रस्तावित देवी आराधना के विधि-विधान, नेवजों की लम्बी फहरिश्ते (यथा लापसी ९ थाली, सुपारी ७, गेहूँ पायली ४ आदि) एवं नख-विशेष के लिए अनोखी हिदायतें (यथा— काली भैंस नहीं रखनी, अमुक जगह पुत्रों के झडूले उतारना आदि) मैंने बाद दे दी हैं ।

उभरते हस्ताक्षर

इतिहास को अतीत का ही दर्पण कहा जाता है; किन्तु हर बीता हुआ क्षण भी तो अतीत है । इसलिये इस बृहद् समाज को अपनी सुगन्ध से सुवासित करने वाली वर्तमान की उन अनेक हस्तियों— जिनके हस्ताक्षर इतिहास-फलक पर उभर तो रहे हैं, पर अभी उनके शतायु होकर समाज के और अधिक लाभान्वित होने की आशा है— के विवरण संकलित कर प्रकाशित करना भी आवश्यक है, जो मैं नहीं कर सका हूँ । इसके लिए एक अलग ग्रन्थ-खण्ड अपेक्षित है । फिर भी वर्तमान की विशिष्ट महिलाओं के विवरण यथासम्भव इसी ग्रन्थ में देने का लोभ संवरण नहीं कर सका हूँ ।

निवेदन

अपनी सांस्कृतिक धरोहर की सुरक्षा एवं उससे साक्षात्कार सामाजिक विकास की प्रथम आवश्यकता है । ओसवाल जाति के लिए अपने इतिहास का अनुसन्धान एक चुनौती है । शोध खोज की बहुत अपेक्षा है । हर गोत्र एक पूर्ण ईकाई भी है और उसका वृहद् स्वतन्त्र इतिहास भी । मेवाड़ एवं गुजरात अंचल के अनेक गोत्रों की गौरव गाथाएँ चर्चित हैं, किनु प्रामाणिक सन्दर्भाभाव में उनकी चर्चा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नहीं हो सकी है। अभीप्सा यह है कि हर गोत्र इस ओर सजग होकर प्रयत्नशील बने एवं एक केन्द्रीय संस्थान पूर्णतः इस कार्य को समर्पित हो। यह ग्रन्थ भी एक माध्यम है। सुधी पाठकों से मेरा नम्र निवेदन है कि ऐतिहासिक महत्त्व के जो भी नवीन या विपरीत तथ्य या विवरण उनके पास हों, कृपया लिख भेजें ताकि ग्रन्थ के नवीन संस्करण में साभार उन्हें शामिल किया जा सके।

आभार

इतिहास शोध-सन्दर्भ में ही चुरू के बिरले इतिहासकार एवं विद्वान् श्री गोविन्द अग्रवाल से परिचय का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वृद्ध और बीमार होते हुए भी उन्होंने प्रथम खण्ड के हर पृष्ठ को अपनी पैनी एवं विज्ञ दृष्टि से पावन किया, अनेक सुझाव दिये एवं 'मरुश्री' में प्रकाशित सामग्री मेरे अध्ययनार्थ उपलब्ध की। आदरणीय प्रो. गणपतिचन्द्र भंडारी के सौजन्य से समाज की वर्तमान विशिष्ट महिलाओं के विवरण संकलित करने में सहायता मिली है। स्वर्गीय श्री इन्द्र दूगड़ के सुपुत्रों ने प्रेमपूर्वक इन्द्र बाबू के कतिपय रेखांकनों से ग्रन्थ सुसज्जित करने की अनुमति दी है। सुश्री पापिया मंडल एवं मेरे सुपुत्र संदीप प्रियदर्शी ने ग्रन्थ के लिए रेखाचित्र बनाये हैं। मेरे अभिन्न मित्र श्री कन्हैयालाल बोथरा तो शुरू से ग्रन्थ समायोजन की धुरी पर मेरे साथ रहे हैं एवं श्री नथमल बैद ग्रंथ जन-जन तक पहुँच सके इसके लिये प्रयत्नशील रहे हैं। बनारस के सुप्रसिद्ध 'तारा यन्त्रालय' ने ग्रन्थ के कम्प्यूटर-टंकण एवं लेसर-मुद्रण में अमूल्य श्रम किया है। मै इन सभी सुधीजनों का हृदय से आभारी हूँ।

—मांगीलाल भूतोड़िया

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

(द्वितीय खण्ड)

अनुक्रमणिका

पृष्ठांक

अध्याय : १३— **ओसवाल प्रवसन** ३३-७१

जातीय स्थानान्तरण : कारण ३३

(१) पंजाब एवं पश्चिमोत्तर प्रदेशों में ओसवाल प्रवसन ३६
(२) दक्षिण में जैन धर्म एवं ओसवाल ४३
(३) गुजरात (सौराष्ट्र एवं कच्छ) में ओसवाल प्रवसन ५१
(४) बंगाल आसाम आदि पूर्वी प्रदेशों में ओसवाल ५६
(५) विदेशों में ओसवाल ६७

अध्याय : १४— **ओसवाल गोत्रों का इतिहास** ७३-२६४

(१) क्षत्रियों से निसृत ओसवाल गोत्र ७४-९५

श्रेष्ठि/वैद्य/बैद/मेहता/मूंथा ७४
झाबक/झंबक/झामड़/जम्मड़ ८१
बापना/बहुफणा/बाफना ८४
नाहटा ८७
पटवा ८९
कोचेटा/कोटेचा ८९
बेताला ९०
सांभर/साभर/चतुर साम्भर ९०
कुम्भट ९१
सिंघी (मुर्शिदाबाद के बलदोटा सिंघी) ९१
राज कोष्ठागार/राय कोठारी ९२
कावड़िया ९३
तातेड़ ९३
विनायकिया ९३
गांधी ९४

(२) चौहान क्षत्रियों से निसृत ओसवाल गोत्र ९५-१३८

बोहित्थरा (बोथरा) ९६
दस्साणी ९९
बच्छावत (मेहता) ९९
मुकीम १०३
फोफलिया १०३
लोढ़ा १०३
खजांची १०६
मिन्नी १०७
दूगड़/सूगड़/शेखाणी/कोठारी १०७
बावेल सिंघी/बावेल कोठारी ११३
कमाणी सिंघी ११४
बोलिया/बूलिया ११४
बेगाणी/बैंगाणी ११५
खींवसरा ११६
डागा ११६
भंडारी ११७
लूनावत भंडारी १२१
खाटेड़/खटेड़/आबेड़/खटोल १२३
रतनपुरा (बोहरा) कटारिया १२३
पावेचा १२६
बलाही १२७
संचेती/सुचिन्ती १२७
डोसी/दोषी/सोनीगरा/पीथलिया १२९
बागरेचा/मेहता/आच्छा १३०
संखलेचा/संखवाल/संखवालेचा १३१
ममैया १३४
जिन्दाणी/जन्नाणी १३७
कानूंगो १३७

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कांस्टियां १३७
बूंटा/बूचा १३८
बोरदिया १३८

(३) परमार राजपूतों से निसृत गोत्र १३८-१५९

दूधोरिया १३९
गड़िया (गडिया) गिड़िया १४०
गांग/गंग १४०
पालावत १४१
बरड़िया १४१
नाहर १४२
गोखरू १४४
बांठिया १४५
मल्लावत १४९
हरखावत/कुवाड़ १४९
ललवाणी १४९
बरमेचा/ब्रह्मेचा १५०
कुण्डलिया १५१
बोरड़/बरड़ १५२
डीडू सिंघवी १५३
सुराणा १५३
राय सुराणा १५७
सांखला १५८
सांड १५८
सालेचा १५८
पीथलिया/पीतलिया १५८

(४) राठौड़ राजपूतों से निसृत गोत्र १५९-१८४

चोरड़िया १५९
रामपुरिया १६२
भटनेरा चौधरी १६३
गधैया १६४
गोलेच्छा १६५
सावणसुखा (शामसुखा) १६८
गूगलिया/गुलगुलिया १६९
नांदेचा १६९
बुच्चा १७०
पारख/साधु १७०
आसाणी/ओसतवाल/सराफ १७०
मुहणोत १७१
पींचा १७८
छाजेड़ १७८
भड़गतिया/गडवाणी १८३
मुरड़िया १८३
घलूण्डिया १८३
पोकरणा १८४
घेमावत १८४

(५) बोहरा गोत्र १८४-१८८

भीलड्या १८५
सिंघवी १८६
नीबजिया/सिंघवी १८६
पातावत/कोठारी १८७
सालेचा १८७
अन्य १८७

(६) पड़िहार राजपूतों से निसृत गोत्र १८८-१९९

चोपड़ा/कूकड़/गणधर/परिहार/
गांधी/सियाल १८९
सांड १९३
मंत्री (महेश्वरी) १९३
कोठारी (चोपड़ा) १९३
ऋषभ कोठारी १९५
कांकरिया १९७
बन्दा मेहता १९८

(७) शिशोदिया राजपूतों से निसृत गोत्र २००-२०४

शिशोदिया/सुरपुरिया २००
जौहरी २०१

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

(८) खींची राजपूतों से निसृत गोत्र — २०७

नखत/कुचेरिया	२०४	गेहलडा/गेलडा	२०६
धाड़ीवाल/धाड़ेवा/कोठारी/टांटिया	२०४	पींपाड़ा	२०७

(९) कछवाहा राजपूतों से निसृत गोत्र — २०८-२१४

नौलखा/नवलखा	२०८	प्रियदर्शी	२१४
भूतोड़िया/भूतेड़िया	२०८		

(१०) ब्राह्मण वर्ण से निसृत गोत्र — २१४-२२१

कठोतिया	२१५	संघवी/सिंघी/सिंघवी	२१६
पगारिया/खेतसी/मेड़तवाल/गोलिया	२१५	ननवाणा सिंघी	२१६
सेठ/सेठिया	२१५		

(११) सोलंकी राजपूतों से निसृत गोत्र — २२१-२२५

श्रीपति/ढढ़ा/तिलेरा/तलेरा	२२१	लूंकड़/कवाड़िया/ठाकुर/हंस	२२४
भणसाली/सोलंकी/आभू	२२४	सोलंकी सेठीया/नाग सेठिया	२२५

(१२) गौड़ राजपूतों से निसृत गोत्र — २२५-२३१

छजलाणी/घोड़ावत	२२५	सेठिया (सेठी/रांका)	२२७
गोठी	२२६		

(१३) (अ) माहेश्वरी जाति से बने गोत्र — २३१-२३९

कोचर	२३१	लूंकड़	२३८
लूणियाँ	२३५	डागा	२३८
लोढा	२३६	बांभ	२३८
मालू	२३७	रीहड़	२३९
भाभू	२३७	(ब) खण्डेलवाल जाति से बने गोत्र	२३९
		खण्डेलवाल/कोठारी/गांधी/जौहरी	२३९

(१४) सोढ़ा राजपूतों से निसृत गोत्र — २३९-२४०

समदड़िया	२३९	रुणवाल	२४०
भाण्डावत	२४०		

(१५) श्रीमाल वंश के उपगोत्र — २४०-२४७

सींघड़	२४१	खारड़	२४४
राक्यान	२४१	जूनीवाल	२४४
फाफू	२४२	बदलिया	२४५
नागर	२४३	टांक	२४५
फोफलिया	२४३	जरगड़	२४५
संघवी	२४३	मेहमवार	२४६
भांडिया	२४४	पटोलिया	२४६
धांधिया	२४४	मूसल	२४६

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ढ़ोर	२४६	श्री श्रीमाल (महतियाण)	२४७
चंडालिया	२४७		

(१६) *भाटी राजपूतों से निसृत गोत्र* २४७-२५७

आर्य\आयरिया	२४८	भणसाली पूगलिया	२५४
लूणावत	२४८	चील मेहता	२५४
भंसाली\भण्डसाली	२५०	राखेचा\पूंगलिया	२५५
राय भंसाली	२५३	जड़िया	२५७
चंडालिया	२५३	आग्रहिया\आगरिया	२५७
भूरा	२५४		

(१७) *गुजरात में बसे ओसवाल गोत्र* २५७-२६४

गाल्हा	२५८	बोरीचा	२६२
नागड़ा	२५८	विषापहार	२६२
मीठडिया	२५९	काश्यप	२६२
वडहरा\वडोरा\वडेरा\वडेर	२५९	कटारिया	२६२
लालन	२५९	चहुआन	२६३
गांधी (सहसगुणा)	२६०	ब(ड\बहुल	२६३
देवाणंदसुखा	२६०	हथुडीया	२६३
गौतम	२६०	पड़ाइया	२६३
कांटीया (गोखरू)	२६१	वाहणी\वहाणी	२६३
हरिया	२६१	जासल	२६३
देढ़ीया	२६१	करणीया\केनिया	२६४
स्याल	२६२		

अध्याय : १५— ओसवाल संस्कृति २६५-२८१

भाषा एवं लिपि	२६५	श्रृंगार-आभूषण	२७२
शिक्षा	२६६	रीति-रिवाज	२७३
व्यापार	२६७	त्यौहार	२७५
मुद्रा	२६८	खान-पान	२७७
महाजनी लेन-देन	२६८	खेल-मनोरंजन	२७७
सुरक्षा और बहियाँ	२६९	चित्रकला	२७९
वेश-भूषा	२६९	भित्ति चित्र	२८१

अध्याय : १६— शासन : योग-सहयोग-कौशल २८२-३१०

मुस्लिम शासकों पर ओसवाल प्रभाव	२८२	क्षात्र तेज की झलकियाँ	३०२
ओसवालों का शासन में योग	२९१		

अध्याय : १७— ओसवालों की सहजातियाँ ३११-३२२

महाजन जातियाँ	३११	अग्रवाल	३१७
पोरवाल	३१३	खंडेलवाल	३२१
माहेश्वरी	३१५	बघेरवाल	३२२

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय : १८— **ओसवालों के सामाजिक समीकरण** ३२३-३३९

दसा-बीसा-पाँचा-ढ़ाया प्रभेद ३२४
मारवाड़ी पंजाबी गुजराती पूरबी प्रभेद ३२७
देशी-विलायती विवाद ३२८
मालवीय अरुणोदय-ओसवाल विवाद ३३६
वैष्णव परम्परा के ओसवाल ३३६
दिगम्बर परम्परा के ओसवाल ३३९

अध्याय : १९— **ओसवाल : समस्याएँ-समाधान** ३४०-३४८

बाल विवाह ३४१
वृद्ध विवाह ३४२
बहु पत्नित्व ३४३
भगतनों के नाच ३४३
पासवान ३४४
कन्या विक्रय ३४४
पंचायतों की ज्यादती ३४५
यतियों का प्रभाव ३४६
चाँदनी ३४६
मृत्यु पर रोने की प्रथा ३४६
मृत्यु-भोज ३४७
विधवा-विवाह ३४७
दहेज एवं अन्य समस्याएँ ३४८

अध्याय : २०— **ओसवाल: जन गणना में** ३४९-३६०

अध्याय : २१— **सती, साध्वी, नारी-रत्न** ३६१-३९१

ओसवाल-सती ३६१
बीकानेर के सती स्मारक ३६२
सुसाणी सती ३६४
ओसवाल साध्वियाँ ३६६
साध्वी गुण समृद्धि महत्तरा ३६६
महासती सरदारा जी ३६६
महासती गुलाबा जी ३६७
साध्वी भूर सुन्दरी जी ३६८
प्रवर्तिनी साध्वी देवश्री जी ३६८
महत्तरा साध्वी मृगावती जी ३६९
प्रवर्तिनी साध्वी पुण्यश्री जी ३६९
प्रवर्तिनी साध्वी विचक्षणश्री जी ३७०
आचार्य चन्दना जी ३७१
ओसवाल नारी रत्न ३७२
गौतमी बीबी ३७२
श्रीमती गोविन्द देबी पटुआ ३७२
श्रीमती पुष्पादेवी कोटेचा ३७३
श्रीमती सरस्वती देवी रांका ३७३
श्रीमती सरदार बाई लूणिया ३७३
श्रीमती धनवती बाई रांका ३७३
श्रीमती नन्दू बाई ओसवाल ३७३
श्रीमती हीरा कुमारी बोथरा ३७४
डा. कमला देवी दूगड़ ३७५
श्रीमती मृणालिनी साराभाई ३७५
डा. प्रो. अरुणा सिंघवी ३७७
श्रीमती डा. शांता भानावत ३७८
डा. श्रीमती किरण कुचेरिया ३७८
डा. मिस कांति जैन ३७९
डा. किरन हरखावत ३८०
श्रीमती कमला सिंघवी ३८१
श्रीमती विमला मेहता ३८१
श्रीमती शशि मेहता ३८२
सुश्री प्रभा शाह ३८३
श्रीमती ममता डाकलिया ३८४
श्रीमती प्रीति लोढ़ा ३८४
श्रीमती प्रसन्न कुँवर भण्डारी ३८५
श्रीमती छगन बहिन ३८५
श्रीमती सुशीला बोहरा ३८७
डा. सरयू डोसी ३८७
सुश्री मल्लिका साराभाई ३८८
सुश्री रीता नाहटा ३८९
श्रीमती सुशीला सिंघी ३९०

अध्याय : २२— **ओसवाल नर-पुंगव** ३९२-४४४
स्वतन्त्रता सेनानी ३९२-४०१

सेठ अचल सिंह ३९३
श्री पूनमचन्द जी रांका ३९४
देशभक्त जीतमल जी लूणिया ३९४
श्री दीपचन्द जी गोठी ३९५

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री राजमल ललवानी ३९५
श्री राजरूप टांक ३९६
श्री देवराज सिंघी ३९६
श्री ऋषभदास रांका ३९७
श्री आनन्दराज सुराणा ३९७
श्री कुन्दनमल फिरोदिया ३९८
श्री सुगनचन्द लूणावत ३९८
श्री मोतीलाल भूरा ३९८
श्री सरदार सिंह महनोत ३९८
श्री डालिमचन्द सेठिया ३९९
श्री नथमल चोरड़िया ३९९
श्री चाँदमल चोरड़िया ३९९
श्री तिलकचन्द तिरपंखिया ४००
श्री रोशनलाल बोरदिया ४००
श्री चिमनलाल बोरदिया ४०१
श्री रतनलाल कर्णावट ४०१
श्री पूनमचन्द नाहर ४०१
श्री उमराव सिंह ढाबरिया ४०१
श्री मोतीलाल तेजावत ४०१
श्री दाड़मचन्द्र दोषी ४०१
श्री बालकृष्ण भंडारी ४०१

साहित्य संस्कृति शिक्षा एवं न्यायविद् ४०१-४१६

आसड़ श्रीमाल ४०२
भण्डारी नेमिचन्द ४०२
भंडशाली आजड़ ४०२
सोनी संग्राम सिंह ४०३
मण्डन श्रीमाल ४०३
महाकवि संघवी रइधू ४०३
सेठ हीराचन्द मुकीम ४०३
कवि पं. बनारसीदास ४०४
कवि जटमल नाहर ४०४
कवि भगवती प्रसाद भैया ४०५
कवि चेतन विजय ४०५
भंडारी उत्तमचन्द ४०६
भंडारी उदयचन्द ४०६
हरजसराम ओसवाल ४०६
कुंभट विनयचन्द ४०६
जेठमल चोरड़िया ४०६
सुखसम्पतराम भंडारी ४०६
लाला ठाकुरदास मुन्हानी ४०७
कवि लाला खुशीराम दुग्गड़ ४०८
मुनि ज्ञान सुन्दर जी ४०८
श्री परमानन्द भाई कापड़िया ४०९
प्रज्ञाचक्षु पं. सुखलाल संघवी ४०९
पं. बेचरदास डोसी ४१०
श्री अगरचन्द नाहटा ४११
जस्टिस चाँदमल लोढ़ा ४१२
श्री कस्तूरचन्द ललवानी ४१२
जस्टिस श्री रणधीर सिंह बछावत ४१३
श्री इन्द्र दूगड़ ४१४

समाज-धर्म-शासन-उद्योग एवं व्यापार उन्नायक ४१६-४४०

राजा डालचन्द गोखरू ४१६
राजा बच्छराज नाहरा ४१८
कोठारी केशरी सिंह ४१८
शाह कर्मचन्द दूगड़ ४१८
रायबहादुर बद्रीदास मुकीम ४२०
दानवीर सेठ प्रेमचन्द रायचन्द ४२३
श्री जोधराज बैद ४२४
श्री जसवन्तराय भाभू ४२४
राय बहादुर विशनदास दूगड़ ४२५
श्री चैनरूप सम्पतराम दूगड़ ४२५
सेठ रूपचन्द जी सेठिया ४२६
दानवीर भैरूदान सेठिया ४२६
राजा विजय सिंह दूधोरिया ४२७
सितारे हिन्द श्री चाँदमल ढढ्ढा ४२७
लाला गुज्जरमल दौलतराम नाहर ४२८
सेठ बालचन्द हीराचन्द शाह ४२८
श्री ईसरदास चोपड़ा ४२९
रायसाहब कृष्णलाल बाफणा ४२९
श्री छोगमल चोपड़ा ४३०
रायबहादुर फूलचन्द मोघा ४३१
श्री बहादुर सिंह सिंघी ४३२
श्री अम्बालाल साराभाई ४३२
सेठ कस्तूर भाई लाल भाई ४३३
डा. मोहन सिंह मेहता ४३५
लाला मोतीशाह गद् हिया ४३६
सेठ रामलाल गोलछा ४३६
पद्मश्री मोहनलाल चोरड़िया ४३७
श्री मेघ जी पेथराज शाह ४३८

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री कन्हैयालाल मेहता	४३९	श्री भवँरमल सिंघी	४४०
श्री भवँरलाल दूगड़	४३९		

अध्याय : २३— **प्रगति के बढ़ते चरण** ४४५-४५५

अखिल भारतवर्षीय प्रथम		अमरावती सम्मेलन	४५१
ओसवाल महासम्मेलन	४४६	ओसवाल नवयुवक समिति,कलकत्ता	४५२
द्वितीय महासम्मेलन	४४८	ओसवाल मित्रमंडल,बम्बई	४५३
तृतीय महासम्मेलन	४४८	ओसवाल-ओसवाल सुधारक-	
चतुर्थ महासम्मेलन	४४९	ओसवाल नवयुवक-तरुण ओसवाल	४५४
पंचम महासम्मेलन	४५१	नये क्षितिज की पुकार	४५५

चित्र-सूची

१. मानचित्र-भारत : ओसवाल जाति का उद्भव (वि. सं. से ४०० वर्ष पूर्व) ३७
२. मानचित्र-भारत : उपकेश जाति प्रवसन (वि. २ री से ५ वीं सदी) ४२
३. छायाचित्र-बाबू जीवनलाल पन्नालाल जौहरी ५५
४. मानचित्र-भारत : ओसवाल प्रवसन (वि. १६वीं से १९वीं सदी) ५८
५. मानचित्र-राजस्थान (प्राचीन एवं अर्वाचीन नगर) ७२
६. छायाचित्र-सेठ शांतिदास आसकरण शाह ५४
७. छायाचित्र-सेठ बेलजी लखमसी ५४
८. छायाचित्र-सेठ मेघ जी भाई घोषण ५४
९. छायाचित्र-श्री रतीलाल मनीलाल नानावाटी ५४
९. छायाचित्र-सेठ केशरी सिंह बापना ८६
१०. छायाचित्र-सेठ रोशनलाल चतुर ९०
११. छायाचित्र-सेठ विरदमल लोढ़ा १०६
१२. छायाचित्र-श्री पदमचन्द दूगड़ ११०
१३. छायाचित्र-सेठ सूरजमल बैंगानी ११५
१४. छायाचित्र-श्री जैन श्वे. ग्लास टेम्पल १२१
१५. रेखाचित्र-भंडारी गंगाराम जी १२१
१६. छायाचित्र-दादाबाड़ी स्थित ममैया परिवार की छतरियाँ १३५
१७. छायाचित्र-श्री हीरालाल रामपुरिया १६२
१८. रेखाचित्र-मोहन जी राठौड़ १७२
१९. रेखाचित्र-मुणोत सुन्दर सी १७४
२०. रेखाचित्र-सेठ लछमणदास मुणोत १७७
२१. छायाचित्र-सेठ भैरोंदान चोपड़ा १९१
२२. रेखाचित्र-श्री तिलोकचन्द भूतोड़िया २११
२३. छायाचित्र-सिंघी फतेराज जी २१७
२४. छायाचित्र-सिंघी जेठमल जी २१९
२५. छायाचित्र-सेठ भैरोदान सेठिया २२९
२६. छायाचित्र-सुख भवन,भागलपुर २४२
२७. छायाचित्र-१९वीं सदी की मुत्सद्दी परिवार की नारी २७०
२८. रेखाचित्र-बहेली २७६
२९. रेखाचित्र-महिलाओं के लिए बहेली २७६

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

३०. रेखाचित्र-श्मशान चौपड़ २७८
३१. रेखाचित्र-सिंघी फत्तहराज जी २९४
३२. रेखाचित्र-पंचायती हुक्मनामा ३३०
३३. रेखाचित्र-पंचायती हुक्मनामा ३३१
३४. रेखाचित्र-ओसवाल सुधारक के विज्ञापन ३४१
३५. छायाचित्र-श्रीमती नन्दूबाई ओसवाल ३७४
३६. छायाचित्र-श्रीमती मृणालिनी एवं मल्लिका साराभाई ३७९
३७. छायाचित्र-डा. प्रो. अरुणा सिंघवी ३७७
३८. छायाचित्र-डा. श्रीमती किरण कुचेरिया ३७९
३९. छायाचित्र-डा.मिस कांति जैन ३८०
४०. छायाचित्र-श्रीमती कमला सिंघवी ३८१
४१. छायाचित्र-सुश्री प्रभा शाह ३८३
४२. छायाचित्र-डा. सरयू डोसी ३८८
४३. छायाचित्र-श्रीमती सुशीला सिंघी ३९०
४४. छायाचित्र-श्री अगरचन्द नाहटा ४११
४५. रेखाचित्र-श्री हीराचन्द दूगड़ ४१४
४६. छायाचित्र-श्री इन्द्र दूगड़ ४१५
४७. रेखाचित्र-श्री बद्रीदास मुकीम ४२०
४८. छायाचित्र-जैन मन्दिर, कलकत्ता ४२१
४९. छायाचित्र-सेठ प्रेमचन्द रायचन्द ४२३
५०. रेखाचित्र-श्री फूलचन्द मोथा ४३१
५१. छायाचित्र-सेठ कस्तूर भाई लाल भाई ४३४
५२. छायाचित्र-श्री मेघ जी भाई शाह ४३८
५३. छायाचित्र-श्री भंवरमल सिंघी ४४१
५४. छायाचित्र-प्रथम अ. भा. ओसवाल महासम्मेलन ४४७
५५. छायाचित्र-श्री वंशीलाल कुचेरिया ४५३

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

(ओसवाल जाति का इतिहास)

(द्वितीय खण्ड)

श्री मांगीलाल भूतोड़िया

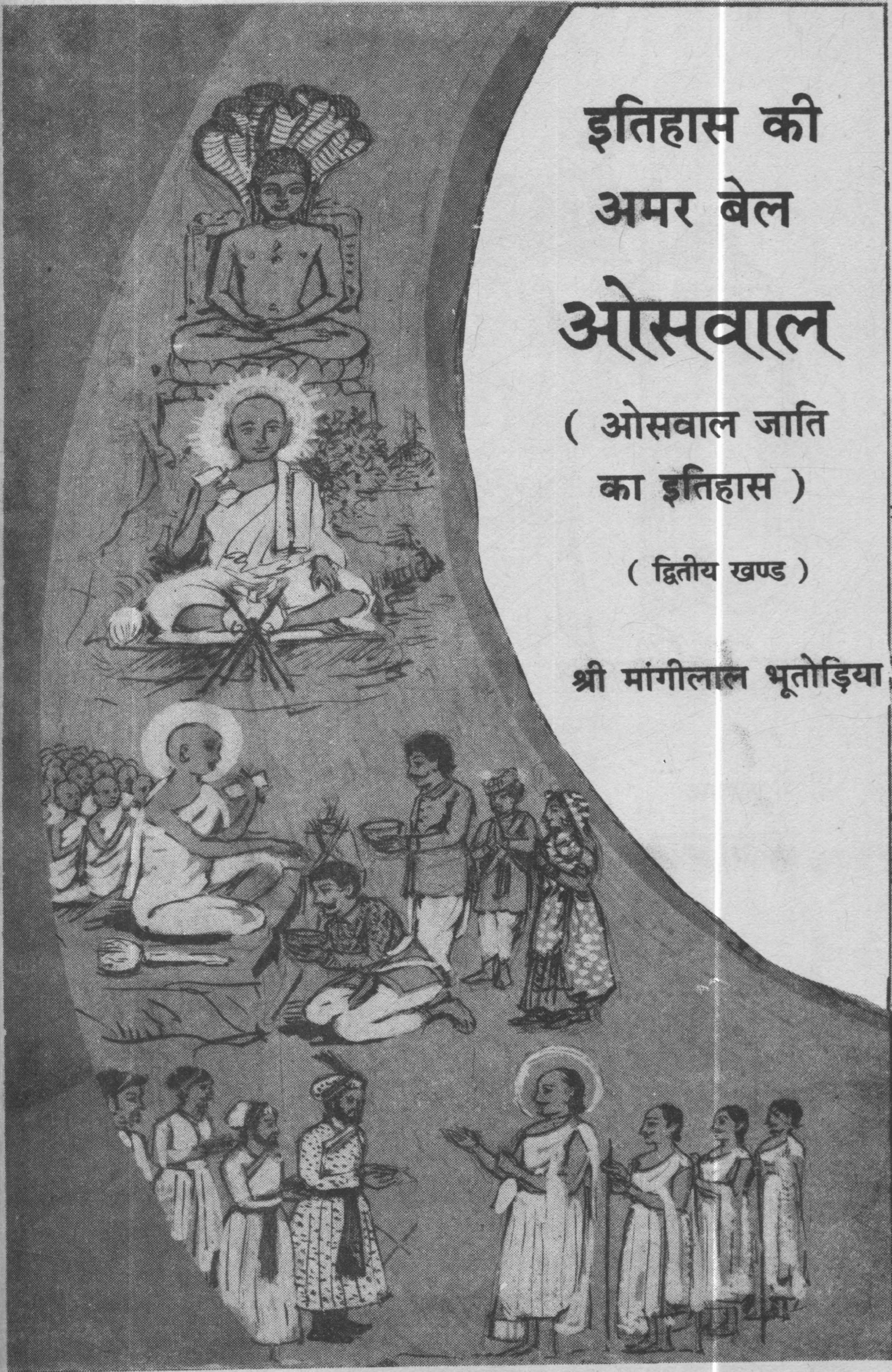

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय

त्रयोदश

ओसवाल प्रवसन

जातीय स्थानान्तरणः कारण

किसी समय राजस्थान के चन्द ग्राम-नगरों में संस्थापित एवं बसी हुई ओसवाल जाति किस तरह अमर बेल की तरह भारत के हर कोने में फैल गई, इसका इतिहास एवं भूगोल दिलचस्प तो है ही, हमारा भविष्य-पथ आलोकित करने में प्रेरणास्पद भी। कभी कभार कोई एकाध घर-परिवार किसी विशेष पारिवारिक या व्यक्तिगत कारण से स्थानान्तरित हुआ हो— यह और बात है। परन्तु प्रशासनिक एवं दैवी या अन्य कारणों से जाति के अधिकांश परिवार कोई प्रदेश छोड़-कर अन्यत्र जा बसे हों— ऐसे जातीय स्थानान्तरण की समीचीन व्याख्या आवश्यक है। यों तो मनुष्य जाति के सन्दर्भ में ऐसे स्थानांतरण कोई नई बात नहीं है। प्रसिद्ध मनीषी कन्हैयालाल माणक लाल मुंशी के अनुसार ईसा से ३००० वर्ष पूर्व परम पावन सरस्वती नदी के अन्तःसलिला होने से भारत के *प्रथम जातीय प्रवसन* के उल्लेख पुराण-ग्रंथो में विद्यमान हैं। इस प्रवसन का मूल कारण था अन्न एवं पेय ज़ल की तलाश। भारतीय संदर्भ में *द्वितीय ऐतिहासिक जातीय*

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रवसन का प्रारम्भ हुआ विक्रम की ५ वीं शदी में हूणों के आक्रमण से, जिसने ओसवाल जाति को भी प्रभावित किया। *तृतीय वृहद् स्थानान्तरण* हुआ उन्नीसवीं शदी के शुरू में। सन् १८६० में अंग्रेजों द्वारा रेल-सेवा की शुरूआत से यह स्थानान्तरण बड़ी त्वरित गति से हुआ। कहते हैं सन् १८९० तक विभिन्न प्रदेशों के कोई ८० लाख परिवार अपने पैतृक स्थानों को छोड़ कर अन्यत्र बस गए। इन स्थानान्तरणों को मूलतः जीविका के संसाधनों की तलाश एवं अर्थोपार्जन से सहज ही जोड़ा जा सकता है।

राजकीय उत्तरदायित्व

ओसवाल जाति के संदर्भ में हुए प्रवसनों के कारणों में उक्त कारणों के अतिरिक्त राजस्थान के भूगोल एवं धार्मिक अपेक्षाओं का विशेष हाथ रहा है। इस जाति की परम्परागत विशेषताओं यथा— राजनीति, शासन-प्रबन्ध एवं सैन्य-संचालन में उनका वर्चस्व उन्हें सुदूर प्रदेशों में ले गया।

अर्थोपार्जन

क्षत्रिय समाज, जो ईसा पूर्व शैव एवं तांत्रिक बलि, यज्ञ आदि अनुष्ठानों का पालक था धर्म परिवर्तन से एक नई दिशा ग्रहण कर चुका था। यद्यपि उन्होंने अपना क्षात्र-धर्म एक बारगी छोड़ नहीं दिया पर उनके संस्कारों में अहिंसा का मंत्र प्रवेश पा चुका था, जिसने उनके समस्त कार्य-कलापों को प्रभावित किया। धर्म परिवर्तन की इस प्रक्रिया को बाहरी आक्रमणों ने हवा दी एवं वे सहज ही वर्ण परिवर्तन की ओर उन्मुख हो गए। शनैः शनैः युद्ध एवं राजनीति को छोड़कर वे कृषि और व्यवसाय में लगे। इस प्रत्यावर्तन ने इतिहास ही नहीं जातियों का भूगोल भी बदल दिया। जहाँ कहीं अर्थोपार्जन की संभावनाऐं प्रकट हुई उसी ओर प्रवसन होने लगे।

अकाल की विभीषिका

अकाल से राजस्थान की भूमि सदैव संत्रस्त रही है। यह बहुजन मृत्यु का पर्याय है। क. टॉड ने इन अकाल क्षेत्रों को 'रीजन आफ डेथ' कहा है। भूख की यंत्रणा से पशु दम तोड़ देते हैं। मनुष्य त्राहि-त्राहि कर उठता है। इस यंत्रणा से छुटकारा पाने के लिए लोग सामूहिक रूप से जल-समाधि लेने या आत्महत्या करने को विवश हो जाते हैं। थोड़ी सी सांगरी के लिए जवान स्त्री बेच दी जाती है। ऐसी विभीषिका; तीस वर्ष की सामान्य अवधि में १० साधारण एवं ३ भयंकर दुर्भिक्ष, इस क्षेत्र के लिए आम बात थी। ईसा पूर्व ३६६ में बारह वर्षीय अकाल पड़ा। इसी तरह इग्यारहवीं सदी में बारह वर्षीय अकाल पड़ा। टॉड ने इस अकाल का लोमहर्षक वर्णन किया है। वि. स. १३४७-५३ के भीषण अकाल में लाखों लोग दिल्ली की ओर कूच कर गए। अमीर खुसरो ने इस अकाल का वर्णन करते हुए लिखा है कि भूखे लोगों ने यमुना में कूद कर आत्महत्या कर ली। वि.स. १३९२ के भयंकर दुर्भिक्ष का आँखो देखा वर्णन करते हुए अरब यात्री इतिहासकार इब्नबतूता ने लिखा है कि लोग मरे जानवरों के शव खा गये, नरभक्षी भी बन गए। सं. १६८७ के अकाल का बन्सीतर्त नामक अंग्रेजी यात्री ने वर्णन करते हुए लिखा है कि शहरों, गाँवों, खेतों, रास्तों में संख्याबद्ध मनुष्यों के शव पड़े हैं, मनुष्य ढोरों के शव खा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रहे हैं, ढोर मनुष्यों के शव खा रहे हैं, बाजार में खुलेआम नर मांस बिक रहा है। इस हृदय विदारक अकाल का वर्णन महाकवि समय सुन्दर ने भी 'दुष्काल छत्तीसी' में किया है। वि. स. १८०४ के अकाल में राजस्थान में मुँह धोने को भी पानी नहीं था— लोगों को खाने के लिए घास की पत्ती तक नहीं थी। वि. स. १८६० एवं १८६९ के भीषण अकालों का 'बीदावतों की ख्यात' में सजीव वर्णन है— तीन चौथाई पशु इन अकालों की भेंट हो गए, गाँव जनशून्य हो गये। "गुणेतरे आदमी आदमी ने खायो"- कहावत बन गई। वि. सं. १९२५ के अकाल के आंकड़े पाउलेट ने 'इम्पीरियल गजेटियर' में दर्ज किए हैं— इस अकाल में सामूहिक प्रवसन से जनसंख्या एक तिहाई रह गई, पशुधन का मात्र बीसवाँ हिस्सा बचा। वि. स. १९५६ का "छपनिया काल" तो सबसे भयंकर था। रात सोते, सुबह गलियाँ लाशों से पटी मिलती। अनेक लोग 'अब क्या होगा'- की आशंका से मर गए। अकाल के साथ ही भयंकर व्याधियों ने वेग से आक्रमण किया। सेंशस रिपोर्ट के अनुसार बीकानेर राज्य की आबादी ८ लाख ३२ हजार से घट कर १ लाख ८४ हजार मात्र रह गई। कवियों ने गीत रचे :— "मत आई रे छपनिया काल ओझ्यूं म्हारे देश में"। वि. स. २०३० का अकाल भी बहुत भयंकर था। खाद्यान्नों की महंगाई ने सभी रिकार्ड तोड़ दिए। प्रसिद्ध इतिहासकार श्री गोविन्द अग्रवाल (निर्देशक- नगरश्री चुरु) ने 'मरुश्री' (जुलाई १९७३) में अकालों की इस लोमहर्षक श्रृंखला का ब्यौरेवार वर्णन किया है।

इन दुर्भिक्षों से राहत पाने का लोगों को एक ही रास्ता सूझता— सामूहिक प्रवसन। रोटी और नौकरी की तलाश में लोग दर-दर भटकते। तब यातायात के साधन कम थे- रास्ते में लूटे जाने की आशंका बराबर बनी रहती। अनेक तो रास्ते में ही मर जाते। लोग कमर की नोली में दाम बाँधे रहते, खाद्यान्न के अभाव से मर जाते। अमीर खुसरों के वर्णन में दिल्ली प्रवसित लोगों की आत्महत्या की दास्तान बड़ी लोमहर्षक है। ऐतिहासिक तथ्य यह है कि अकाल की यह विभीषिका समय-समय पर ओसवालों के सामूहिक प्रवसनों का कारण बनी।

स्थानीय उत्पीड़न

अपने पूर्वजों की भूमि एवं पुश्तैनी स्थानीय धंधो को छोड़कर दूर दराज परदेश प्रवसन का एक ओर कारण बना। अंग्रेजों का शिकञ्जा जैसे-जैसे स्थानीय जमींदारों एवं शासकों पर कसता गया, ठाकुर सामंतों एवं राजाओं के कोश खाली होने लगे और प्रजा पर उनके उत्पीड़न बढ़ने लगे। इसके प्रथम शिकार हुए व्यापारी। नये-नये टेक्स, जकात, नजराना आदि बलात् वसूल किए जाने लगे। व्यापारी शनैः शनैः श्रीहीन होते गये। इस बीच अंग्रेजों ने विदेश धन ले जाने के लक्ष्य से समुद्री किनारों पर व्यापार की नई मंडियाँ विकसित की। पुरानी परम्परागत मंडियाँ उजड़ने लगी। संवत् १९१७ के आस-पास जब अंग्रेजों ने रेल-मार्गों की प्रस्थापना शुरू की तो इनके ईर्द-गिर्द नए शहर एवं मंडियाँ आबाद होने लगे। अंग्रेजों ने पूर्वी क्षेत्र से ही पाँव जमाने शुरू किये थे अतः स्वभावतः ये नई सम्भावनाऐं पूर्वी प्रदेशों में अप्रत्याशित रूप से प्रकट हुई। उन्नीसवीं शदी के पूर्वार्द्ध में देश में चारों ओर से पूर्व दिशा में प्रवसन बढ़ा- इनमें ओसवाल श्रेष्ठि भी थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

राजनैतिक परिवर्तन

सन् १९४७ में जब भारत स्वतंत्र हुआ तो पश्चिमोत्तर प्रदेशों यथा-सिंध, पंजाब, कश्मीर एवं पूर्वी बंगाल (अर्वाचीन बंगलादेश) में बसे ओसवाल परिवार देश के राजनैतिक विभाजन के शिकार हुए। हजारों - लाखों ओसवाल अपना सब कुछ गवाँ कर दिल्ली, उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बंगाल के नगर-कस्बों में आ बसे। पाकिस्तान व बंगलादेश में मात्र उनकी स्थावर सम्पत्ति ही नहीं रह गई, सांस्कृतिक धरोहर के प्रतीक मन्दिर, उपाश्रय भी छूट गए। इस सामूहिक प्रवसन की चुनौती को स्वीकार कर प्रवसित ओसवालों ने उद्योग, व्यापार एवं कृषि के क्षेत्र में फिर से अपना वर्चस्व स्थापित किया।

(१) पंजाब एवं पश्चिमोत्तर प्रदेशों में ओसवाल प्रवसन

भारत की प्राचीनतम संस्कृति- आर्हत् (श्रमण) पुरुषार्थवादी एवं आचारमूलक रही है। बार्हत् ब्रह्मवादी संस्कृति इतिहासकारों के अनुसार त्रेतायुग के प्रारम्भ में ईसा से ३००० वर्ष पूर्व लघु एशिया एवं एशिया से उठ कर भारत खण्ड के उत्तरी सीमान्त खैबर दर्रे से होकर आने वाले लोगों की थी। इस प्रवृत्तिमूलक अनुष्ठान का परिणाम ही वैदिक-यज्ञ हैं— ब्रह्मवादी ही वेदों के जनक हैं। इस तथ्य की पुष्टि इस बात से भी होती है कि मोहनजोदड़ो और सिन्धु घाटी के सन् १९२२ में हुए उत्खनन में ईसा पूर्व ३००० वर्ष की सभ्यता के जो चिह्न मिले हैं उनमें ऋषभ की कायोत्सर्ग मुद्रा वाली पाषाण मूर्तियाँ तो हैं परन्तु यज्ञ या वैदिक सभ्यता का कोई चिह्न नहीं मिलता है।

ईसा पूर्व ८वीं से दूसरी शताब्दी तक का समय इस पृथ्वी के इतिहास में आध्यात्मिक उन्नयन का रहा है— जब ज्ञान बहिर्मुखी न रह कर अन्तर्मुखी बना। चीन में लाओत्सो एवं कन्फ्यूशियस, भारत में बुद्ध और महावीर, ईरान में जरथुस्त्र, जुड़ा में अनेक मसीहा, ग्रीस में पाइथो गोरस, सुकरात, प्लेटो आदि मनीषी एक ही साथ हुए। अतः इस काल को दो काल युगों का संधिकाल कहा जा सकता है। इसी संधि युग की देन है— ओसवालों का उद्भव।

सिन्धु नदी एवं काबुल नदी के बीच का भू-भाग प्राचीन समय में "गांधार" नाम से प्रख्यात था। प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव ने कई बार इस प्रदेश में विहार किया। ऋषभदेव के द्वितीय पुत्र बाहुबलि का राज्य इसी जनपद में था एवं तक्षशिला उसकी राजधानी थी। सन् १९२२ में हुए उत्खनन से पूर्व उस जगह को स्थानीय जनता "शाह की ढेरी" के नाम से पहचानती थी। ओसवालों में प्राचीन काल से "शाह" की उपाधि चली आ रही है एवं "शाह" नाम से गोत्र अब भी विद्यमान है। इन कुषाण कालीन अवशेषों का समय ईसा की द्वितीय शताब्दी माना जाता है। सम्भव है ओस वंश ने तब तक वहां अपने पाँव फैला लिए हों। ईसा की ५वीं शताब्दी में 'हूणो' द्वारा तक्षशिला के मन्दिरों का विध्वंस किये जाने का उल्लेख मिलता है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

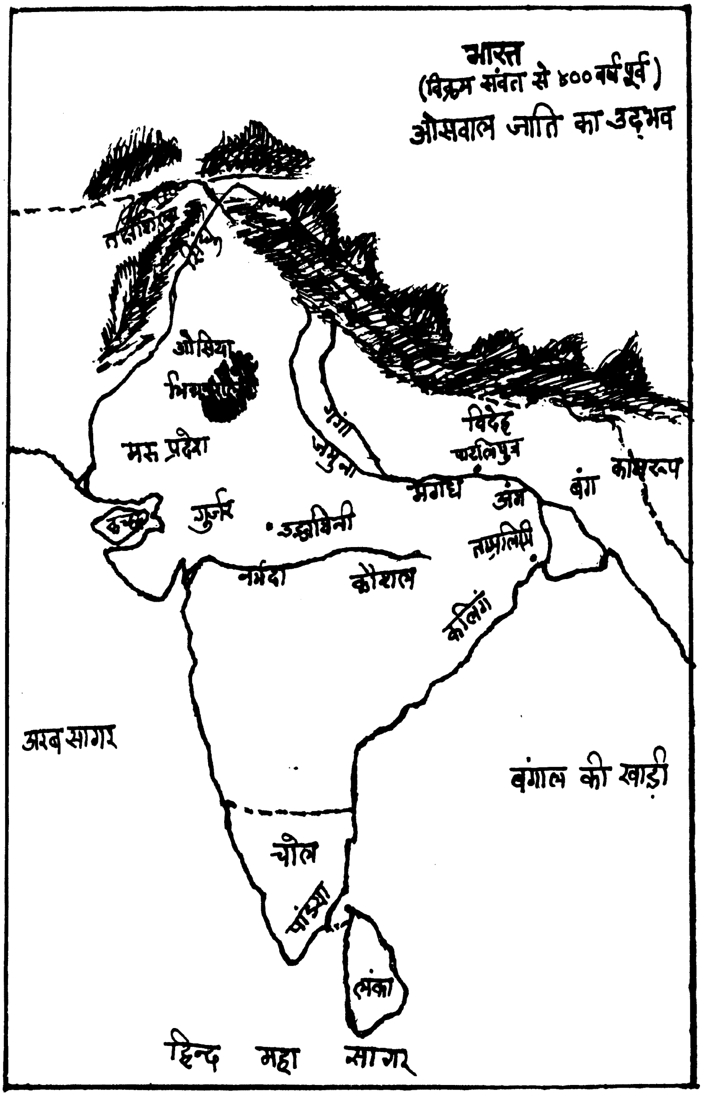

विक्रम पूर्व तीसरी शदी में उपकेश गच्छाचार्य श्री देवगुप्त सूरि ने पंजाब प्रदेश में विहार किया- ऐसा उल्लेख उपकेश गच्छ पट्टावलि में मिलता है। उपकेश गच्छ के अन्य आचार्यों ने सिंध प्रदेश में भी जैन धर्म का प्रचार किया। पं. हीरालाल दूगगड़ ने अपने प्रसिद्ध इतिहास ग्रंथ "मध्य एशिया और पंजाब में जैनधर्म" में इस जाति का उल्लेख करतें हुए ऐसे अनेक उदाहरण दिए हैं जिनसे पता चलता है कि विक्रम की दूसरी शताब्दी में

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पश्चिमोत्तर प्रदेशों में जैनधर्मी ओसवाल जाति के अनेक परिवार निवास करते थे एवं जैनाचार्य वहाँ बराबर विहार करते रहते थे।

ओसवालों के लिए पंजाब में 'भावड़ा' नाम विदित है। भावड़ा जाति में एक गोत्र "पठान" भी है। गांधार, कश्मीर, सिन्धु प्रदेशों में भावड़ाओं के अनेक परिवार निवास करते थे। खरतर गच्छीय यति श्रीपालजी ने अपने ग्रंथ "जैन सम्प्रदाय शिक्षा" में ओसवाल जाति के गोत्रों की तालिका में एक गोत्र "पठान" का भी उल्लेख किया है। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि आततायी यवनों के प्रभाव में उन्होंने अपना धर्म-परिवर्तन कर लिया हो। काबुल के मुसलमानों में 'भावड़ा-पठान' नामक एक जाति विद्यमान है।

विक्रम पूर्व पहली शताब्दी में जैनाचार्य कालिक हुए थे। उन्होंने अपनी बहिन सरस्वती को उज्जयिनी-सम्राट गर्दभिल्ल के पंजों से छुड़ाने में सिन्धुराज शकवीरों की सहायता ली थी। इन्हीं कालिकाचार्य का गच्छ "भावडार" या "भावड़ा" नाम से जाना जाता था। उस समय सिन्धु के जनपदों में बहुत संख्या में ओसवाल महाजन आबाद थे। कालिकाचार्य के "भावड़ा" गच्छ के नाम पर ही सिंधु एवं अन्य उत्तरीय प्रदेशों के ओसवाल "भावड़ा" कहलाए। भावड़ा गच्छ सत्रहवीं शदी तक विद्यमान था- ऐसा अनेक उपलब्ध शिलालेखों से ज्ञात होता है।

श्री धनेश्वर सूरि कृत "शत्रुञ्जय माहात्म्य" के अनुसार सेठ भावड़ शाह के पुत्र जावड़ शाह ने वि. सं. १८७ में शत्रुञ्जय तीर्थ का उद्धार किया एवं तक्षशिला से भगवान् ऋषभदेव की मूर्ति ले जाकर शत्रुञ्जय तीर्थ पर स्थापित की थी। महावीर की पट्ट परम्परा में १९ वें पट्टधर आचार्य श्री मानदेव सूरि ने तक्षशिला, उच्चनगर, देराउल आदि नगरों में बहुत से क्षत्रियों को प्रतिबोध देकर ओसवाल जैन बनाया। पन्नयास कल्याण विजयजी के अनुसार ओसवाल जाति पंजाब से पश्चिम दिशा में गई होगी। नाडुलाई (राजस्थान) के चतुर्मास में तक्षशिला में महामारी रोग फूट जाने से संघ की प्रार्थना पर आ. मानदेव सूरि ने वि.सं. २८० में संस्कृत भाषा में लघु शांति स्तवन बना कर तक्षशिला भेजा जिसके जाप से महामारी उपद्रव शांत हुआ।

विक्रम की ४थी शदी में आचार्य कक्क सूरि (संवत् ३३६-३५७) के उद्बोधन से श्रेष्ठि मालाशाह ने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला एवं तक्षशिला से करणाट गोत्रीय श्रेष्ठि रावत ने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। इन्हीं आचार्य कक्क सूरि ने मरोठ में महाबीर मन्दिर की प्रतिष्ठा की।

वि. सं. ३७२ में धवल पि. गोसल शाह गोत्र भूरि ने वीरपुर से शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। सकल संघ को पूजा करके सोने की सुपारियों की प्रभावना दी।

वि. सं. ४७० में गोकुल सा के पुत्र सोभा गोत्र चोरड़िया ने मरोठ कोट से शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला।

वि. सं. ६१३ में मोपत शाह के पुत्र अगरो गोत्र गोलेच्छा ने जोगनीपुर (दिल्ली) से शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। प्रत्येक गाँव के साधर्मी को एक-एक सोने की मोहर की प्रभावना दी।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आ. देवगुप्त सूरि (७ वां - वि. सं. ६०१-६३१) ने डमरेल में पार्श्वनाथ के मन्दिर की प्रतिष्ठा की। इन्होंने स्यालकोट में रांका गोत्रीय शाह खेता द्वारा निर्मित भगवान् मल्लिनाथ के मन्दिर की प्रतिष्ठा की।

आ. देवगुप्त सूरि (९ वां - वि. सं. ८३७-८९२) ने डमरेल में श्रीमाल गोत्रीय श्रावक देवल द्वारा निर्मित जीवंत स्वामी के मन्दिर की प्रतिष्ठा की।

आ. देवगुप्त सूरि (११ वां- वि. सं. ११०८- १२२९) के समय शिवपुर में श्रीमाल गोत्रीय शूरा ने सात साधर्मी वात्सल्य किए।

आ. सिद्ध सूरि (११ वां- वि. सं. ११२८-११७४) ने तक्षशिला में झांझान पारख के धर्मनाथ के जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा की।

वि. सं. १३१२-१५ के बीच देश में महा भयंकर अकाल पड़ा। इस समय ओसवाल महाजनों ने सारे देश में अन्न-चारा बँटवाया। सिंध के राव पमीर को ८०० मूढ़ा धान दिया, दिल्ली बादशाह को २१००० मूढ़ा धान, गांधार के राजा को १२००० बो. मूढ़ा धान एवं अन्य जगह को ८०००० मूढ़ा धान दिया।

वि. सं १२९३ में आचार्य कक्क सूरि (१२ वां) का चतुर्मास मरोट में हुआ। चोरड़िया गोत्रीय शाह काना और माना ने सात लाख द्रव्य खर्च कर सिद्धांचल तीर्थ का संघ निकाला।

पंजाब जनपद में ओसवाल, श्रीमाल, खंडेलवाल और अग्रवाल ये जातियाँ मुख्य रूप से जैनी है। इनमें ओंसवाल श्रीमाल और खण्डेलवाल मुख्यतः श्वेताम्बर एवं ढूंढक मत के अनुयायी हैं।

ये लोग इस जनपद में भावड़ा कहलाते हैं। अग्रवालों में दिगम्बर, तेरापंथी एवं ढूंढिया हैं। अग्रवाल अधिकांश में वैष्णव या सनातनी हैं, श्वेताम्बर कम हैं। ये लोग अपने को बनिया कहते हैं।

मुनि विद्या विजयजी कृत "सद्धर्म संरक्षक बूटेराव" ग्रंथ के अनुसार विक्रम की १३ वीं शदी में मेवाड़ के आघाट नगर से राज्य के भय से आक्रांत ईश्वरचन्द्र जी दूगड़ अपने परिवार सहित आकर पश्चिमोत्तर प्रदेश के उच्च नगर (तक्षशिला के पास) में बसे। ये दूगड़ वंश संस्थापक दूगड़ जी की ९वीं पीढ़ी में थे। उस समय वहाँ ओसवाल जैनों के ७०० घर थे। विक्रम की १८ वीं शदी तक वहाँ ओसवालों के अनेक गोत्रों के निवास का उल्लेख मिलता है।

कश्मीर जनपद में प्राचीन समय से एक जाति 'महाजन' नाम से है। ओसवालों को पहले महाजन नाम से ही जाना जाता था - अब भी उन्हें महाजन कहा जाता है। कश्मीर की महाजन जाति ने कालांतर में ब्राह्मण धर्म अंगीकार कर लिया। अब तो उनका ओसवाल समाज से भी सम्बंध टूट चुका है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कश्मीर राज्य के इतिहास में सन् १३९९ से सन् १४१६ तक १७ वर्षों का समय भयंकर उथल पुथल का था। हिन्दुओं के जिनमें जैन भी शामिल थे प्रायः सभी मन्दिर और मूर्तियाँ नष्ट कर दी गई। सारे कश्मीर में मात्र १०-११ उच्च पदासीन ब्राह्मण घरों को छोड़कर सभी को मुसलमान बना लिया गया।

वि.सं.१९४३ में कश्मीर के महाराजा प्रतापसिंह जी ने ओसवाल कुलभूषण लाला विशनदास जी दूगड़ को निजी सचिव बनाया। कालान्तर में वे राज्य के गृहमंत्री एवं अन्ततः चीफ मिनिस्टर बने। भारत सरकार नें उन्हें राय बहादुर एवं कैसरे हिन्द (१९७२) के अलंकारों से विभूषित किया। वे जैन धर्मावलम्बी थे। उनके वंशज जम्मू-तवी में अब भी विद्यमान हैं। महाराजा प्रतापसिंह ने तोपखाने का उच्चाधिकारी पद भी एक ओसवाल श्रेष्ठि को प्रदान किया- वे थे दूगड़ गोत्रीय लाला हर भगवान दास जी। महाराजा के उत्तराधिकारी राजा हरिसिंह के समय सहारनपुर के श्रीमाल गोत्रीय श्री फूलचन्द जी मोगा स्टेट में उच्च पदासीन थे। ये फूलचन्द जी अपने जमाने के प्रसिद्ध वकील रहे हैं। आपका लिखा 'प्लीडिंग्स' आज तक सर्वमान्य न्यायशास्त्रीय ग्रंथ माना जाता है।

पाकिस्तान बनने से पहले कश्मीर में ओसवालों के अनेक परिवार थे। वर्तमान जम्मू में ओसवालों के करीब १०० परिवार हैं।

पंजाब में बसे ओसवाल गोत्र

पंजाब में बसे ओसवालों के मुख्य गोत्र निम्न हैं — दुग्गड़, नाहर, भाभू, संचिति (संचेती), बबेल, घरकुट्टा, लोढ़ा, जांबड़, हींगड़, सुसांखुला, डागा, बघेरवाल, तातेड़ राजध्याना, सुरोंवा, पुष्करणा, मिचकिन, सोना, दुसाझा, बाफणा, सोमालिया, धारा, कुलहणा, धूपड़, बहुरा, जाईल, बरड़, नाणा, मुन्हानी, पारख अनविघपारख, नक्षत्र (नखत) मालकस, गद्दहिया, चोरड़िया, तिरपैंखिया, बम्ब, कोचर, बरहूड़िया, नाहर, सुराणा, बैद, सिंघवीं, सिंघी, डोसी, मोहिवाल, चोपड़ा, बोथरा, जख, गोठी, रांका, चौधरी, पैंचा, बेगानी, वुचस (बुच्चा), नौलखा, छाजेड़, गोसल, लींगा, भन्साली, बागचर, सेठिया, वेवल, नागड़, गोदिबा, जदिया, बच्छावत, कनोड़ा, ननगानी, पडंरीवाल, बोहरा, श्रीमाल, बांठिया, श्रीश्रीमाल, पठाण, डुक आदि। इनमें से अनेक परिवार पाकिस्तान बनने के बाद भारत के विभिन्न राज्यों में जाकर बस गए हैं।

पंजाब के नगरों में ओसवालों का वैभव

समाना— किसी समय भावड़ा ओसवालों के यहाँ ५०० घर थे— औरंगजेब के समय अनेकों को बलात् मुसलमान बनाया गया। अब यहाँ ओसवालों के १०० परिवार है- दूगड़, गदैया, रांका, बंब, गोत्र हैं।

जीरा नगर— नगर बसने के साथ ही यहाँ भावड़ा ओसवाल भी आकर बसे जिनमें नौलखा, दूगड़, बोथरा, गोसल, रांका, पैचां, नाहटा, गोत्र मुख्य थे। यहाँ अब भी नौलखा जैन परिवार सबसे अधिक हैं। २०० वर्ष पूर्व मुलतान-लाहौर होते हुए लाला पिंडीदास के पुत्र फत-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हचन्द जी नौलखा यहाँ आकर बसे। जैनाचार्य आत्माराम जी थे तो कपूर (क्षत्रिय) गोत्रीय, किन्तु उनका लालन-पालन लाला जोधामल जी नौलखा के घर हुआ। राधाबाई दूगड़ नामक एक विधवा श्राविक ने यहाँ वि. सं. १९४८ में १०५ फुट ऊंचा शिखरबद्ध जैन मन्दिर बनवाया। मन्दिर में मूलनायक पार्श्वनाथ की प्रतिमा बड़ी चमत्कारी है- सूर्य की पहली किरण प्रभु के चरण स्पर्श करती है- प्रतिमा दिन में तीन रंग बदलती है। पंजाब के मुख्य मन्दिरों में अमृतसर स्वर्ण मंदिर के बाद यह दूसरे दर्जे का जैन मन्दिर है। मन्दिर में हस्तलिखित ग्रंथों का भंडार भी है।

लाहौर— लाहौर वि. सं. ३४८ में बसा। यह भी जैनधर्म और ओसवाल भावड्यों का गढ़ रहा है। ओसवालों की बस्ती को थड़ियाँ-भावड़याँ कहा जाता था। पाकिस्तान बनने से पहले इसे जैन स्ट्रीट कहा जाने लगा था। सम्राट् अकबर के समय यहाँ जैन मन्दिर और उपाश्रय निर्मित हुए। पाकिस्तान बनने पर उन्हे समूल नष्ट कर दिया गया। लाहौर से ७-८ मील दूर अब भी भावड़ा नामक एक गाँव है। यहां मंत्रीश्वर कर्मचन्द बछावत ने आ. जिन कुशल सूरि के चरण पद स्थापित किए थे। सम्राट् अकबर के समय दुर्जनसालसिंह नामक भावड़ा-जदिया गोत्रीय श्रेष्ठि धर्मानुरागी हुए हैं- जिन्होंने जैन मन्दिर बनवाया। वे आ. हीर विजय जी के अनन्य भक्त थे। अकबरनामा के अनुसार शाहजादा जहाँगीर के एक पुत्री मूलनक्षत्र में जन्म लेने के कारण बादशाह अकबर ने लाहौर में वि. सं. १६४६- में तपगच्छीय उपाध्याय मुनि भानुचन्द्र से अष्टोत्तरी स्नात्र पूजा सम्पन्न करवाई थी।

मुल्तान— पाकिस्तान बनने के पहले यहाँ ओसवाल भावड़ा श्वेताम्बर मूर्ति पूजक जैनों के ८० घर थे। इनमें से ४० घर ५० वर्ष पहले दिगम्बरी (तेरह पंथी) बन गए थे। उन्होंने यहाँ एक दिगम्बर मन्दिर का भी निर्माण करवाया। नगर की चूड़ी सराय में एक प्राचीन श्वेताम्बर जैन मन्दिर था। पाकिस्तान बनने पर सभी जैन-ओसवाल भारत चले आए और दिल्ली, जयपुर आदि नगरों में बस गए।

सरहद्दी सूबा— सिन्धु नदी के पहाड़ी क्षेत्र में अनेक ओसवाल भावड़ा मूर्ति पूजक श्वेताम्बर परिवार आबाद थे। लाला विशन दास जी लोढा और हेमराज जी सुराणा के अनुसार, जो अब गाजियाबाद आकर वहीं बस गए हैं, उनके पूर्वज सम्राट् शाहजहाँ के समय विक्रम की १७ वीं शदी में जैसलमेर व अजमेर से उठकर आए- प्रथमतः गंडलिया में बसे- फिर बन्नू लतम्बर, काला बाग, मरोट आदि नगरों में जा बसे। इनका व्यवसाय मुसलमान पठानों से था- उन पर इनकी धाक थी। ये लोग इस क्षेत्र में भावड़ा शाह नाम से मशहूर थे। इनमें सुराणा, लूणिया, वेद, बागचर, नाहर, लोढ़ा, बाफणा आदि गोत्र थे। पाकिस्तान बनने पर ये सभी भारत चले आए और गाजियाबाद, कोटकपूरा, जयपुर, हाथरस आदि नगरों में बस गए।

काला बाग में सेंधे (काले) नमक का पहाड़ है। वहाँ वि. स. १९६२ में पार्श्वनाथ भगवान् की प्रतिमा प्रकट हुई थी एवं एक जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा यति राजर्षि ने करवाई थी। बन्नू में मुहल्ला भावड़यान में लाला पन्ना लाल सुराणा ने वि. सं. १९७४ में एक जैन मन्दिर का निर्माण करवाया था। शाबाज नगर के बागचार गोत्रीय ओसवाल भावड़ा लाला सोमशाह ज्योतिष और

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

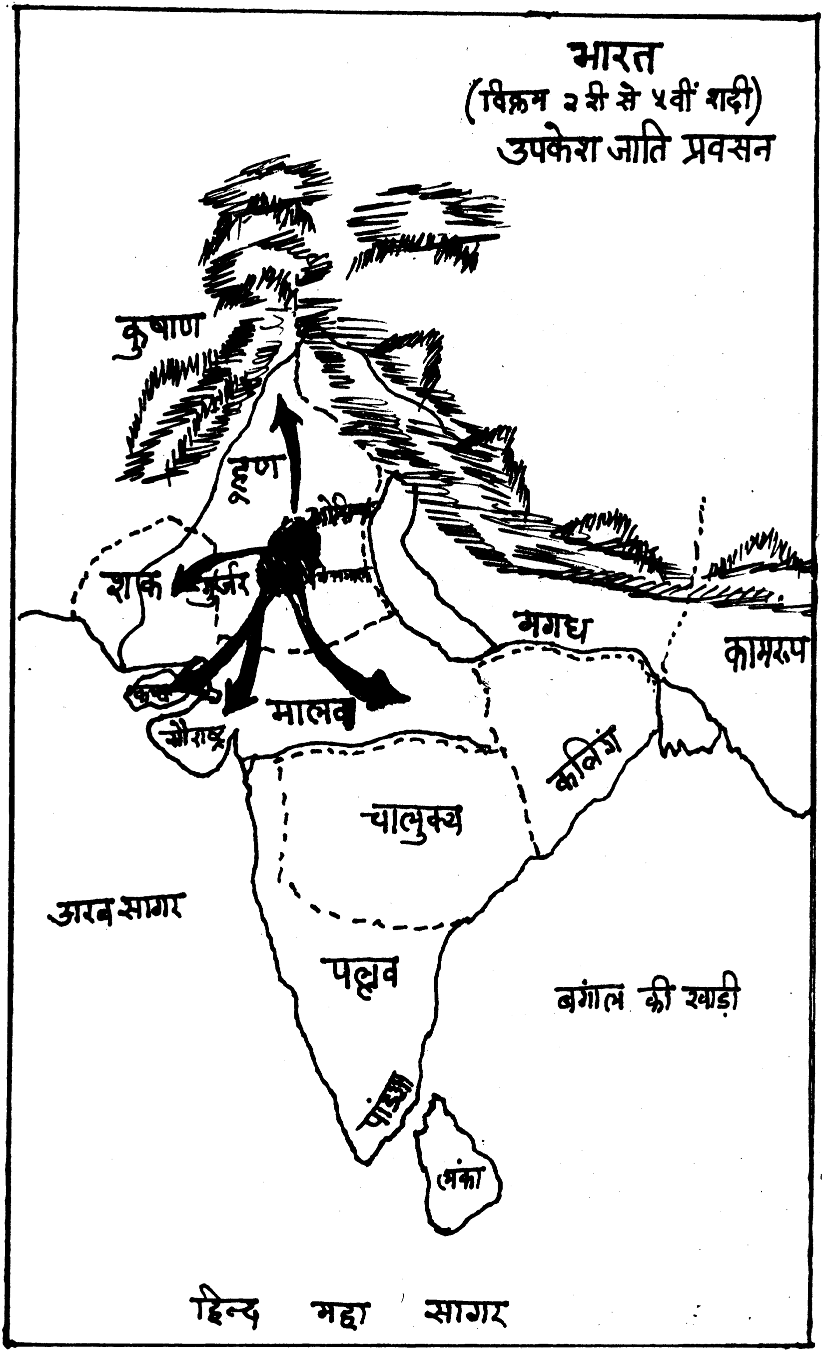

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वैद्यक के बड़े विद्वान् थे। लतम्बर के सुराणा गोत्रीय लाला जेठाशाह भावड़ा ने बड़ी समृद्धि पाई। अब उनके वंशज गाजियाबाद में निवास करते हैं। कालाबाग में बाफणा गोत्रीय ओसवाल भावड़ा लाला जवायाशाह जैनागमों के अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने १९ वीं शदी में अनेक शास्त्र स्वयं लिपिबद्ध किए।

गुजरानवाला— यह नगर लाहौर से ४२ मील उत्तर पेशावर की तरफ स्थित है। महाराजा रणजीत सिंह एवं उनके सरदार हरिसिंह नलवा यहीं के थे। वेदांत धर्म के जगत् प्रसिद्ध विद्वान् स्वामी रामतीर्थ की यह जन्मभूमि है। गुजरानवाला के ओसवाल श्रेष्ठि लाला कर्मचन्द जी दूगड़ जैन दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इनसे शिक्षा पाकर एवं शास्त्रज्ञान कर वि. सं. १८९२ में ढूंढ़क मुनि बूटेराय ने सत्य धर्म की स्थापना की। पंजाबी लिपि के आविष्कर्ता एवं सिक्खमत के आदि संस्थापक गुरुनानकदेव इसी जिले के तलबंडी ग्राम के थे। ऋषिकेश में स्वर्गाश्रम की स्थापना करने वाले महापुरुष रामानन्द जी "काली कमली वाले बाबा" भी इसी जिले के रामनगर गाँव के रहने वाले थे।

विक्रम के १९ वीं शदी में यहाँ अनेक ओसवाल भांवड़ा परिवार स्थायी रूप से बसे जिनमें दूगड़, बरड़, लोढ़ा, जख, मुन्हानी, लींगा, तिरपैंखिया, पारख, गदैया गोत्र प्रमुख थे। वे कपड़ा, अनाज, सराफा, मनियारी, धातु के बर्तन, घी-तेल, इत्तर, किराणा. लकड़ी का सामान, चिकित्सा आदि विभिन्न धन्धों में संलग्न थे। यहाँ लौंका गच्छीय चमत्कारी यति दुनीचन्द जी का बहुत प्रभाव था। महाराजा रणजीत सिंह भी उनपर बड़ी श्रद्धा रखते थे। पाकिस्तान बनने के समय यहाँ भावड़ा ओसवालों के ३०० परिवार थे जिनमें २२५ परिवार श्वेताम्बर मूर्तिपूजक एवं बाकी ढूंढ़िया सम्प्रदाय के अनुयायी थे।

इस भूमि ने अनेक स्वतंत्रता संग्रामी पैदा किए जिनमें एक ज़िला कांग्रेस कमिटी के जनरल सेक्रेटरी ओसवाल श्री तिलकजैन थे। यहाँ के बीसा ओसवाल दूगड़ गोत्रीय लाला हर भगवान दास जम्मू-कश्मीर के महाराजा प्रताप सिंह के तोशकखाने के इंचार्ज थे। उनके पुत्र लाला अनन्तराम जी दूगड़ 'आत्मानन्द जैन गुरुकुल" के अधिष्ठाता रहे।

(२) दक्षिण में जैनधर्म एवं ओसवाल

ओसवाल वंश के उद्भावक जैनधर्म का दक्षिण में प्रवसन ईसा पूर्व चौथी शताब्दी में माना जाता है। भगवान् महावीर की श्रमण परम्परा में अंतिम श्रुत केवली भद्रबाहु (३१७ से २९७ ईसापूर्व) भगवान् के १३ वें पट्टधर थे। श्रवण बेल गोला के प्राचीन शिलालेखों के अनुसार उन्होंने उत्तर भारत में १२ वर्षीय भीषण दुष्काल की आशंका से चतुर्विध संघ के साथ दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। मैसूर राजवंश से सम्बन्धित महिलारत्न देवीर्अम्मा के लिए मालेयूर मठ के श्री देवचन्द्र द्वारा वि.सं.१८९६ में रचित कन्नड़ भाषा के ईसा पूर्व ४थी शदी से आद्योपान्त जैन इतिहास लिपिबद्ध करने वाले प्रसिद्ध ग्रंथ राजवली कथा के अनुसार भद्रबाहु स्वामी का जन्म भरतखण्ड के पुण्ड्रवर्धन क्षेत्र के कोटिकपुरा नगर में राजपुरोहित सोमशर्मा के घर हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

७ वर्ष की अल्पआयु में महामुनि गोवर्धन से वे दीक्षित हुए। कालान्तर में पाटलिपुत्र के क्षत्रिय नरेश चन्द्रगुप्त मौर्य (३२२ ई. पू.) ने जैनधर्म अंगीकार किया एवं भद्रबाहु स्वामी से दीक्षित हो उन्हीं के साथ दक्षिण की ओर प्रस्थान किया। प्रसिद्ध इतिहासकार विन्सेंट स्मिथ ने श्रवण बेल्गोला के शिलालेखों के आधार पर इन तथ्यों को असंदिग्ध माना है। भारतीय इतिहासकार काशीप्रसाद जायसवाल ने भी सम्राट् चन्द्रगुप्त के विरक्त होकर जैन मुनि होने का उल्लेख किया है। श्रवण बेलगोला पहुँच कर भद्रबाहु स्वामी ने अपना अन्तिम समय निकट जान कर मुनि-संघ को सुदर दक्षिण प्रदेशों में विचरण करने का आदेश दिया एवं स्वयं वहीं रुक गए। यूनानी यात्री मेगस्थनीज के यात्रा वर्णनों एवं "एनसाईक्लोपिडिया आफ रीलीजन" के अनुसार भी चन्द्रगुप्त का जैनी होना एवं श्रमण बेल गोला में श्रमण साधना एवं संलेखना करना सिद्ध होता है।

भद्रबाहु के प्रवसन से मैसूर राज्य (कर्नाटक) का श्रवण बेलगोला (शब्दार्थ:— श्रमणों का जलाशय-सा) क्षेत्र जैन दिगम्बर सम्प्रदाय का प्रमुख केन्द्र बना। यहाँ से दिगम्बर आचार्य विशाख ने सुदूर दक्षिण मद्रास के अन्य क्षेत्रों की ओर धर्म प्रसारार्थ प्रयाण किया। मदुराई उनका केन्द्र बना। उस क्षेत्र में पाण्ड्य एवं चोल राजवंशों का राज्य था। भद्रबाहु स्वामी अपने शिष्य चन्द्रगुप्त के साथ चन्द्रगिरी पर्वत पर आवासित रहे एवं दोनों ही कालान्तर में संलेखना कर समाधि मरण को प्राप्त हुए। सेरिंपट्टम के सन् ९०० के दो शिलालेखों में चन्द्रगिरी पर्वत पर भद्रबाहु एवं चन्द्रगुप्त के प्रतिष्ठापित चरणचिन्हों का उल्लेख है। चन्द्रगिरी पर्वत पर सन् ६५८ का एक लेख उत्कीर्णित है एवं सबसे प्राचीन प्रमाण चन्द्रगिरी पर्वत के निकट पार्श्वनाथ बस्ति का सन् ६०० का एक लेख है जिनसे इन तथ्यों की पुष्टि होती है। इसी पर्वत पर बाहुबलि स्वामी (गोम्मटेश्वर) की भीमकाय तेरह पुरुषाकार ५७ फीट ऊंची मूर्ति यदु नरेश राजमल्ल के महा-सामन्त चामुण्डराय ने ई. सन् ९३३ में स्थापित की। कुछ इतिहासकार इस विराट् मूर्ति का स्थापना समय सन् ९७८-८४ मानते हैं एवं कुछ सन् १०२८ ।

ईसा की प्रथम शताब्दी में जैनधर्म दक्षिण के सुदूर प्रान्तों में प्रसार पा गया था— इसे उजागर करने वाले अनेक लेख एवं प्राचीनतम् तामिल ग्रंथ उपलब्ध हैं। मद्रास से ९ मील दूर पोलाल स्थित आदीश्वर मन्दिर प्राचीनतम् है। इसका निर्माण ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में हुआ माना जाता है। अनेक चमत्कारों की दंतकथाएं इस मन्दिर से जुड़ी हैं। दिगम्बर ऐलाचार्य कुन्दकुन्द द्वारा ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में रचित तमिल के प्राचीनतम नीतिशास्त्र "कुराल" में अहिंसा की महत्वपूर्ण भूमिका है हालांकि, इसमें किसी भी धर्म का नामोल्लेख नहीं है। यह "तिरूक्कुराल" नाम से भी प्रसिद्ध है। कुछ इतिहासकार इसी वजह से इसे कुन्दकुन्दाचार्य के शिष्य तिरूवल्लूवर द्वारा रचित मानते है। किंवदंती यह भी है कि राज्य सभा में ग्रंथ वाचन के समय कुन्दकुन्दाचार्य ने स्वयं न जाकर अपने शिष्य तिरूवल्लूवर को भेजा अतः उनके नाम से प्रसिद्ध हो गया। यह तमिल भाषा का महान् क्लासिक ग्रन्थ माना जाता है। इसका प्रथम श्लोक आदि भगवान् की आराधना में लिखा गया है। कुन्दकुन्द दक्षिणी अर्काट जिले के पदीरि पुल्लियार जैन-मठ के संस्थापक थे। इससे प्रतीत होता है कि जैन श्रमणों ने तमिल भाषा को अपनाया, उसी में उपदेश दिया एवं ग्रन्थ रचे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ईसा की दूसरी शदी में जैनाचार्य सामंतभद्र हुए जिन्होंने "आत्ममीमांसा" नामक प्रसिद्ध संस्कृत शास्त्र की रचना की। कांची में हुए शास्त्र विवाद में आपने हिन्दू पण्डितों को पराजित किया था। हाल ही में दक्षिण अर्काट जिले के सेन जी के पास तिरूनादन कुनरू ग्राम में ३०० ई. सन् का एक शिलालेख मिला है जो ब्राह्मी लिपि में है। इसके अनुसार वहां जैन मुनि चन्द्रनन्दी असिरीयार ने संलेखना की थी। कांची के निकट प्राप्त एक तांबे की प्लेट पर उत्कीर्णित लेख में ई. सन् ५५० के राजा सिंह वर्मन के समय के जैन मठों का विवरण है एवं आ. वज्रनन्दी को दिए गए अवदान का उल्लेख है।

धीरे-धीरे जैनधर्म को राज्याश्रय प्राप्त हुआ। पांड्यन राजा सुन्दर कालान्तर में जैन बना। पल्लवराज महेन्द्र वर्मन भी जैन थे। उन्होंने राज्य की तरफ से मन्दिरों और उपाश्रयों को जमीनें दी एवं राजकीय फर्मानों द्वारा सुरक्षा प्रदान की। राजा विक्रम वर्मन ने आचार्य वज्रनन्दी को परूमन्दूर के ऋषभनाथ मन्दिर के लिए मूल्यवान् अवदान दिए। चोल राजकुमारी कुन्दावी ने तिरूमलाई एवं रंगराजपुरम में जैन मन्दिर बनवाए। लाट राजा वीर चोल एवं उनकी महारानी ने जैन धर्म अंगीकार किया। ५वीं एवं ६ठी शताब्दी में कालभ्र राज के सत्ता सम्भालने से मदुराई एवं कावेरी प्रदेशों में भी जैनधर्म का अत्यधिक प्रभाव बढ़ा। कांची के महाराजा शिवकोटि जो शैव थे व जिन्हें एक करोड़ शिवलिंग स्थापित करने का श्रेय प्राप्त था, कालान्तर में जैन बने। आचार्य शिवकोटि ने रत्नमाला ग्रंथ की रचना की एवं अनेकानेक व्यक्तियों को जैन बनाया।

ईसा की ५वीं शदी में प्रसिद्ध भाषाशास्त्री आचार्य पूज्यपाद के शिष्य जैनाचार्य व्रजनन्दी ने दक्षिण मथुरा में जैनधर्म का प्रचार किया। उन्होंने सन् ४७० में जैनधर्म एवं तमिल भाषा के उन्नयन के लिए "द्रविड संघम्" की स्थापना की जिसमें चारो गणों-नन्दी, सार, सिंह और देव- का प्रमुख योगदान था। आठवीं शदी में जैनाचार्य अकलंक ने पल्लव नरेश के दरबार में शास्त्रार्थ कर बौद्ध भिक्षुओं को हराया। तब से बौद्धमत दक्षिण से लुप्त प्राय हो गया। नवीं शताब्दी में जैनाचार्य अज्जनन्दी ने वेल्लीमलाई में प्रसिद्ध जैन गुफाओं का निर्माण कराया। गंग नरेश राजमल्ल के सामन्त चामुण्डराय ने श्रवण बेलगोला में सन् ९३३ में जगत् प्रसिद्ध बाहुबलि स्वामी की विराट् मूर्ति स्थापित करवाई। जैन मुनियों ने धर्मशास्त्र एवं नीतिग्रन्थ ही नहीं रचे, अपितु अंकगणित, ज्योतिष, संगीत, भाषाशास्त्र आदि क्षेत्रों में तमिल साहित्य को महत्वपूर्ण अवदान दिए। "सिरूपंचमूलम्" नामक ग्रंथ जड़ी-बूटियों के लक्षणार्थों एवं अहिंसक खाद्य सामग्री पर एक सौ पदों की बहुश्रुत रचना है जिसे जैन कवि करियासन ने रचा। महाकाव्यों एवं कथाओं की तो एक श्रृंखला ही है जो जैन मुनियों की अद्भुत रचनाशक्ति की परिचायक है। जीवक चिन्तामणि ऐसा ही एक महाकाव्य है जिसकी रचना मैलापुर के जैन मुनि थिरूत्तक्क देवर ने की। अगास्थियार के शिष्य थोल्कप्पियर ने दूसरी तमिल संगम् के समय तमिल भाषा के अधिकारिक भाषाशास्त्र की रचना की जो "थोल्कप्पियम" नाम से प्रसिद्ध है। १४ वीं शताब्दी में भावनन्दी ने तमिल भाषाशास्त्र "नान्नूल" की रचना की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दक्षिण में जैन धर्म के प्रसार में जैन साध्वियों का अवदान कुछ कम नहीं रहा। जैन साध्वी कनकवीरा कुरथियार के निर्देशन में ५०० साध्वियाँ आर्काट् जिले के वेदाल मठ में साधना करती थी। वहां से प्राप्त शिलालेखों के अनुसार वे आचार्य गुणकीर्ति भट्टारक की शिष्या थी। मदुराई जिले के एवरमलई ग्राम में उपलब्ध शिलालेख के अनुसार पत्तिनी कुरथि नामक जैन साध्वी ने एवरमलई में जैनमठ की स्थापना की एवं अनेक लोक हितकारी कार्यों में सहायक बनी। उनकी शिष्या पुव्वनन्दी कुरथि बाद में उस मठ की अधिष्ठात्री बनी। उपलब्ध शिलालेखों के अनुसार साध्वियां मिझलूर कुरथि एवं थिरूप्परूथि कुरथि जैन-दर्शन के प्रसार एवं मातृजाति के उद्धार में सहायक बनी। "शिलप्पादिकरम" नामक ग्रंथ के अनुसार कवुंथी अदिगल नामक साध्वी-रत्न के निर्देशन में कन्नगी और कोवलम ने मदुराई में जैन धर्म का प्रचार किया। कवुंथी अदिगल ने संलेखणा कर समाधि मरण प्राप्त किया। "नीलकेशी" नामक साध्वि ने अनेक अन्य-धर्मी आलोचकों से शास्त्रार्थ कर उन्हें हराया एवं उनके सूक्तों से "नीलकेशी" ग्रंथ की रचना हुई। यशोधरा काव्य के अनुसार अभयमति एवं अभयरुचि नामक साध्वियों ने प्रदेश के राजा को जैनधर्म अंगीकार कराया। 'जीवक चिन्तामणि' के अनुसार "पम्मई" नामक जैन साध्वी जैन मठ की अधिष्ठात्री थीं।

आज भी दक्षिणी भारत विशेषतः तामिलनाडु के आस-पास के प्रदेशों में जैनधर्म के अव-शेष विद्यमान हैं। कांची के पास तिरूपरूत्ति कुन्नू में प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के दो भव्य मन्दिर थे - इसी से यह स्थान जिन कांची नाम से प्रसिद्ध था। यहाँ अनेक शिलालेख भी मिले हैं। तिरूमलै नामक गाँव और निकटवर्ती पहाड़ी क्षेत्र में अभी भी जैन मतावलम्बियों का निवास है। दक्षिणी आरकाट जिले का पाटलिपुर ग्राम जैनों का प्रसिद्ध केन्द्र था। सित्तन्नवासाम में अनेक गुफाऐं एवं जैन मंदिर है। सित्तन्नवासाम का शाब्दिक अर्थ ही है - सिद्धों का वास स्थान। आज भी वहाँ सित्तवणकम् यानि अभिवादन स्वरूप "सिद्धों को नमस्कार" प्रचलित है। नारट्टमलै पहाड़ी पर जैनधर्म एवं संस्कृति के अवशेष पाए जाते हैं। एक अन्य पहाड़ी-नारट्टामलै पर भी सित्तन्नवासल की भाँतिं जैन गुफाऐं हैं। मदुरा, अज्जनन्दि आदि स्थान जैन-अवशेषों के लिए प्रसिद्ध हैं। अरगमकुप्पम् गाँव "अरिहंतों का गाँव" कहलाता है। कडलू के विशाल खण्डहर किसी प्राचीन जैन विश्वविद्यालय की याद दिलाते हैं।

किंवदन्ती है कि उत्तरी भारत में १२ वर्ष के दुष्काल की आशंका से भद्रबाहु स्वामी जब दक्षिण पधारे तो उनके साथ चतुर्विध संघ था जो पाण्डयन राज्य में बसा। जब १२ वर्ष समाप्त हुए तो उत्तर भारतीय जैनों ने वापिस अपने देश लौटना चाहा। तात्कालीन पांड्य-राजा ने इसकी अनुमति नहीं दी। इस पर उनमें से आठ हजार श्रावकों ने भोजपत्र पर एक एक पद अंकित किया और गुप्त मार्ग से उत्तरी भारत चले गए। राजा को जब यह ज्ञात हुआ तो उसने वे भोजपत्रक बैगई नदी में बहा दिए। किन्तु आश्चर्य यह हुआ कि उनमें से चार सौ भोज-पत्रक धारा के विपरीत बहने लगे। राजा ने उन्हें संग्रहित करवाया। इस संग्रह का नाम "नलादियार" नामक ग्रंथ है। उपलब्ध "नलादियार" के कर्ता कवि पदुमनार कहे जाते हैं। जनश्रुति के अनुसार पदुमनार ने इसे मदुराई में अंतिम "तमिल संगम" के समय संग्रहित किया। इस ग्रन्थ को "वेल्लालार वेदम" (कृषकों का वेद) कहा जाता है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जैन श्रावकों के साथ जुड़ी इस जनश्रुति से लगता है दक्षिण के तमिल भाषियों में जैनधर्म के सहज प्रसार का एक कारण यह भी था कि जैन सर्वदा व्यापार और खेती से जुड़े रहे। दक्षिण में साधारण जन खेती एवं व्यापार पर आश्रित होते हुए भी ब्राह्मणवाद से एवं उसके महन्तों से दबे रहे। ब्राह्मणों ने खेती एवं व्यापार को हमेशा हेय दृष्टि से देखा एवं इन पेशों को नीचा मानते रहे। अतः जब जैन-संघ प्रवसन कर दक्षिण गए तो वहां के जन- मानस में घुल मिल गए। हमपेशा होने से वे ग्राह्य बन गए एवं जल्द ही जैनधर्म एवं जातियां वहां लोकप्रिय हो गई।

श्रवण बेलगोला के शिलालेखों में ५३ लेख ऐसे हैं जिनसें वर्तमान ओसवाल गोत्रों का स्पष्ट नामोल्लेख मिलता है। ये सभी लेख सन् १४७८ से सन् १८३८ के बीच के हैं। इनके साथ अधिकांशतः जैन गच्छ का नाम काष्टा संघ दिया है। जातियों में बघेरवाल, गोनासा, पीतला आदि गोत्रों का उल्लेख है। निवास पुर स्थान, माण्डवगढ़, गुड़घटीपुर आदि हैं। अनेक में पानी-पथीय (पानीपत) होने का उल्लेख भी है। इनमें से ३६ लेख देवनागरी लिपि में हैं एवं १७ लेख महाजनी लिपि में।

लगता है भद्रबाहु स्वामी के साथ जैन जातियों का जो प्रवसन उत्तरी भारत से दक्षिणी भारत की ओर शुरु हुआ वह कालान्तर में भी निर्बाधगति से चलता रहा। दक्षिण भारत की मूल आबादी द्राविड़ थी। महाकवि इलंगोवादिगल के ईसा की दूसरी शदी में रचित प्रसिद्ध नीति ग्रंथ "शिल्पथिरकम" के अनुसार द्रविड़ जाति बलि, भूतप्रेत, लोकनृत्य, देवी-देवता की पूजा आदि पर निर्भर थी। अतः दिगम्बर जैन श्रमण अवश्य ही उन्हें प्रभावित कर सके होंगे। जैन श्रावकों ने भी खेती एवं साहूकाराना धन्धों से उन जन-जातियों को व्यापक रूप से प्रभावित किया होगा। किन्तु उनका इतिहास उपलब्ध नहीं है। इसका एक प्रमुख कारण है शैव, वैष्णव एवं बौद्धमतों से जैनों की प्रतिस्पर्धा। ईसा की ६ठी शदी सें आरम्भ हुए जैनों के विरोध में अत्याचार १३ वीं-१४ वीं शदी में अपनी चरम सीमा पर पहुंच गए। शंकराचार्य के उदय ने जैनों के राज्याश्रय की जड़ें ही काट डाली। वैष्णव एवं शैव मतानुयायी नरेशों एवं सामन्तों ने अनेकानेक जैन मन्दिरों, मूर्तियों, संघों, श्रमणों, शास्त्रों को व्यापक पैमाने पर नष्ट कर दिया। वि. सं. ७०७ में दक्षिण का पांड्य राजा शैव हो गया। चोल वंश के राजा जैनों के कट्टर शत्रु थे। उन्होंने अनेक जैन मन्दिरों को ध्वस्त किया व लूटा। वैष्णव आचार्य रामानुज ने होयसल राजा विष्णुवर्धन को अपने धर्म में मिला लिया। इससे सारे कनारा प्रदेश से जैनधर्म का प्रभाव लुप्त हो गया। १२ वीं शताब्दी में हैहय राज्य में लिंगायत लोंगो ने जैनों को बहुत सताया। श्री एम.एस. रामा स्वामी आयंगर ने अपने शोधग्रन्थ "स्टडीज इन साउथ इंडिया जैनिज्म" में इन अन्यायों की विस्तार से चर्चा की है एवं दक्षिण में जैन धर्म के पिछड़ जाने के कारणों पर प्रकाश डाला है। जैन धर्मावलम्बियों के विरूद्ध विषाक्त धर्म प्रचार की एक झलक "शंकर दिग्विजय" के प्रथम संर्ग में परिलक्षित होती है जिसमें जैनों को अनेक लाछंनों से लांछित कर उनकी हत्या को पुण्य कर्म बता कर लोगों को उकसाया गया है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मुनि सुमेरमल सुमन ने "कर्मयोगी श्री केसरीमल सुराणा अभिनन्दन ग्रंथ" में प्रकाशित आलेख "तमिलनाडु में जैनधर्म" में उक्त अन्यायों की चर्चा करते हुए लिखा है "मन नहीं चाहता कि ऐसी घटनाओं का विस्तार से उल्लेख किया जाय। किसी घटना को लेकर सैंकड़ो जैन संतों को, लाखों जैनी भाईयों को मौत के घाट उतारा गया। कोल्हू में पीला गया। कड़ाहों में तला गया। हिंसा चरम सीमा पर पहुँची। उस हिंसा के तूफान में अनेकों मरे। अनेकों शैव धर्मी बने और अनेकों ने छद्म वेष धारण किया और अनेक भव्य जैन मन्दिर शिव मन्दिर में परिणत हो गए।"

आज भी तमिलनाड के अर्काट, पोलूर और वान्दावासी तालुकों में अनेक जैन धर्मावलम्बी जातियाँ वास करती हैं। उनके गोत्र नयीनार, उदायार, मुदालियार, चेट्टियार, राव, दोष आदि हैं। ये सभी वणिक जातियां हैं। जैनधर्म से इनका परम्परागत सम्बन्ध बहुत पुराना है। हालांकि इन पर वैष्णव मत का प्रभाव भी परिलक्षित होता है- वे ललाट पर चन्दन का लेप करते हैं एवं जनेउ धारण करते हैं। ये दोनों ही वस्तुएं जैनधर्म के आदि विधि-विधानों का भी हिस्सा रही हैं। लोग रात्रि-भोजन नहीं करते एवं मांस नहीं खाते। अपनी संतानों के नाम जैन तीर्थंकरों एवं आचार्यों के नाम पर रखते हैं। माताऐं अपने बच्चे को रात्रि में स्तन-पान भी नहीं कराती। लोग विवाह दिन में ही करते हैं। फूलों को बींधने में भी परहेज अहिंसा की पराकाष्ठा का सूचक है। मन्दिरों में प्रतिष्ठित मूल बिम्ब दिगम्बर एवं तीर्थंकरों के ही होते हैं। पूजा-अर्चना वैष्णव मन्दिरों की तरह ही होती है। मन्त्रोचार की भाषा संस्कृत है। अर्काट जिले के चित्तमूर क्षेत्र में एक जैन मठ अब भी विद्यमान है। ये लोग व्यापार, कृषि, अध्यापन एवं राज्य शासन में लगे हैं। ये जातियाँ ब्राह्मणों से अपने को उच्चतर मानती हैं। जैन मतावलम्बियों की सर्वाधिक आबादी दक्षिण और अर्काट जिलों में है। दिगम्बर मन्दिरों की संख्या भी सर्वाधिक उन्हीं जिलों में हैं। थंजावूर और चिंगलपेठ जिलों में जैन आबादी हैं। धर्मपुरी जिले में एक मल्लिनाथ स्वामी का मन्दिर है जो आजकल मल्लिकार्जुन मन्दिर के नाम से विख्यात है। मद्रास शहर में अनेक जैन मन्दिर हैं जो १९ वीं/२० वीं शदी में निर्मित हुए हैं। श्रमण परम्परा के अवसान के साथ इन मठों की व्यवस्था के लिए मठाधिपति परम्परा की शुरूआत हुई एवं उन्हें भट्टारक या भट्टाचार्य उपाधि से विभूषित किया गया। चित्तमूर मठ के वर्तमान भट्टारक (पूर्वनाम-श्रीपाल नयनार) का इस प्रदेश में बड़ा सम्मान है।

वेदारण्यम के श्री अनन्थराजयन ने महावीर स्वामी मठ एवं मल्लिनाथ स्वामी मठ (मन्ना-रगुडि) की व्यवस्थार्थ दो न्यासों (ट्रस्टों) की स्थापना की है। करन्दई ग्राम के श्री अप्पन्दई बीस वर्षों से धर्म प्रभावना एवं दीन-दुखियों की सहायता में संलग्न हैं। थीरुपारुति कुन्दरम के श्री अप्पाभू जैन किग्सं स्काउट रहे हैं। वे कांचीपुरम तालुक के स्काउट कमिश्नर मनोनीत हुए। श्री अरुगकीर्ति नयनार उत्तरी आर्काट के वेम्बाक्कम पंचायत बोर्ड के अध्यक्ष एवं कांचीपुरम जैन मन्दिर के ट्रस्टी रहे हैं। प्रथम जैन पत्रिका 'धर्मशीलन' प्रकाशित करने का श्रेय श्री औति नयनार को है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री चक्रवर्ती नयनार (जन्म-सन् १८८० मृत्यु-१९६०) जैन दर्शन के उद्भट विद्वान् थे। आपके पिता अप्पास्वामी शास्त्री टिंडीवनम तालुक के जाने माने तमिल स्कॉलर थे। श्री चक्रवर्ती ने कुछ वर्षों तक राजमुंदरी एवं कुम्बकोनम कॉलेजों में अध्यापन किया। वे मद्रास एवं अन्य अनेक युनिवर्सिटियों तथा दिल्ली एवं मैसूर की सिविल सर्विस परीक्षाओं के परीक्षक मनोनीत हुए। सन् १९३८ में उन्हें राव बहादुर की पदवी से विभूषित किया गया। भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रकाशित तामिल एव आंग्ल भाषायी मुक्ति देवीग्रंथमाला के वे सम्पादक रहे। उन्होंने जैन दर्शन सम्बन्धी अनेक तमिल ग्रंथो की रचना की।

वर्तमान में ओसवाल गोत्रों से चिह्नित दक्षिण प्रदेशीय आबादी का प्रवसन उन्नीसवीं शदी में मुस्लिम फौज की रसद के प्रबंधकर्त्ता (मोदी) के रूप में प्रारम्भ हुआ। रेल-सेवा शुरू होने के उपरान्त यह प्रवसन तीव्रतर होता गया। आज तो व्यवसाय के सभी क्षेत्रों में ओसवाल श्रेष्ठियों का प्रबल आधिपत्य है। उन्होंने सम्पत्ति अर्जन के साथ ही प्रदेश के सामाजिक एवं शैक्षणिक विकास में बहुमूल्य योग दिया। श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन एजुकेशन सोसाईटी की स्थापना सन् १९३७ में पद्मश्री श्री मोहनलालजो चोरड़िया एवं श्री ताराचन्द्र जी गेलड़ा के अथक प्रयत्नों एवं सहयोग से हुई। यह संस्था मद्रास के अनेक शैक्षणिक संस्थानों का सफल संचालन करती है। सन् १९५० में मनुष्य जाति की सेवा करने के अभिप्राय से श्री जैन मेडिकाल रीलीफ सोसा-ईटी की स्थापना हुई जो मद्रास शहर एवं उससे संलग्न उपनगरों में पन्द्रह दातव्य औषधालयों का संचालन करती है। इस संस्था को मरलेचा, नाहर, चोरड़िया, बेताला, ढ़ढ़ा, बोहरा, खटेड़, ढोका, डागा, कटारिया आदि परिवारों के ओसवाल श्रेष्ठियों का विशेष आर्थिक सौजन्य प्राप्त हुआ है। दरिद्र एवं अनाथ बच्चों के हितार्थ ओसवाल समाज द्वारा सन् १९५४ में 'दया सदन' की स्थापना अभूतपूर्व कही जायेगी जिसमें हजारों लोगो का भरण-पोषण ही नहीं होता, उनके समुचित विकास की भी व्यवस्था है। इसी संस्था द्वारा सैंकड़ो कोढ़-पीड़ित रोगियों की विशेष चिकित्सा-सेवा का भी अलग प्रबंध होता है। श्री ताराचन्द जी गेलड़ा एवं नमीचन्द जी गेलड़ा ने न्यास (ट्रस्ट) बना कर छात्रवृत्तियाँ देने एवं चिकित्सा-सेवा की अभिनव शुरुआत की। श्री मोहनलाल जी चोरड़िया एवं श्री चम्पालाल जी गोलेछा के सत् प्रयत्नों से सन् १९७३ में भगवान् महावीर अहिंसा प्रचारक संघ की स्थापना हुई। प्राणी मात्र के प्रति प्रेम एवं अहिंसा के मूल विचार को क्रियान्वित करने में इस संस्था का अभूतपूर्व योगदान रहा है। मन्दिरों में होने वाली पशु बलि का सविनय विरोध करने एवं जन-जन में शाकाहार के प्रति जागरूकता लाने का श्रेय सन् १९२६ में स्थापित दक्षिण भारतीय ह्यूमेनिटेरियन लीग को है। फलतः सन् १९५०-५१ में पशुबलि कानूनन निषिद्ध कर दी गई। इनके अलावा अन्य अनेक संस्थाऐं शैक्षणिक एवं जातीय उत्थानपरक सेवाभावी प्रवृत्तियों में संलग्न हैं। सेठ श्री धनराज बैद की सत्प्रेरणा से श्री सुन्दरलाल नाहटा के नेतृत्व में संस्थापित तामिलनाडु एजुकेशनल एंड मेडिकल ट्रस्ट ने चिकित्सा सेवा के अतिरिक्त शैक्षणिक एवं छात्र हितकारी प्रवृत्तियाँ चालू की है।

दक्षिणी आर्काट प्रदेश के पनरुत्ति नगर में श्री अजितनाथ जैन मंडल नामक संस्थान श्री उम्मेदचन्द जी कोचर एवं पदमचन्द कनुगा के सहयोग से सक्रिय हुआ। तिरुचिरापल्ली के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

काजीपेट नगर में श्री मिश्रीलाल बैद की प्रेरणा से सन् १९२७ में पशुधन के संवर्धनार्थ पिंजरापोल की स्थापना की गई। तिरुचिरापल्ली नगर में जैन श्रावक संघ के संरक्षण में भगवान् महावीर के २५०० निर्वाण महोत्सव के अवसर पर जैन-भवन का निर्माण हुआ। वहाँ श्री जैन युवक संघ के तत्त्वावधान में दातव्य औषधालय एवं शिशु आहार केन्द्र संचालित है। सलेम शहर के सेवापेट इलाके में श्री जैन मिशन सोसाईटी जन-हितकारी प्रवृत्तियों में संलग्न है। श्री चन्दनमल सकलेचा के सद् प्रयत्नों से टिंडीवनम में सन् १९७२ में जैन-भवन का निर्माण हुआ। उत्तरी आर्काट जिले में भी ऐसी ही सेवाभावी संस्थाओ का गठन ओसवाल श्रेष्ठियों के नेतृत्व में हुआ है। मदुराई नगर में श्री जी. पी. संघवी के नेतृत्व में जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी के तत्त्वावधान में चिकित्सा सेवा चालू है।

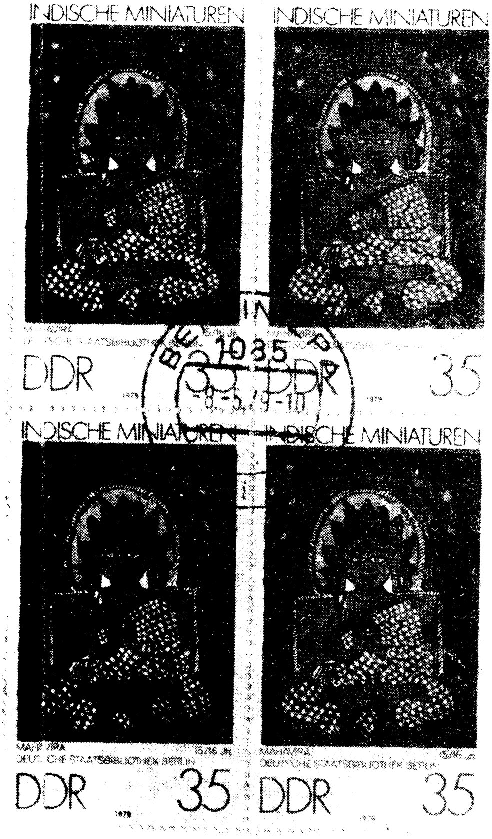

पूर्वी जर्मनी द्वारा भगवान महावीर की स्तुति में सन् १९७९ में जारी- स्टाम्प फलक

Ac. Gunratnasuri MS
Jin Gun Aradhak Trust

(३) गुजरात (सौराष्ट्र एवं कच्छ) में ओसवाल प्रवसन

जैन धर्म की प्रभावना की दृष्टि से भारत के पश्चिम में स्थित यह भूभाग बहुत महत्वपूर्ण हैं। पौराणिक काल से इस प्रदेश में स्थित शत्रुञ्जय एवं गिरनार तीर्थ तीर्थंकरो, गणधरों एवं आचार्यों के प्रिय समवशरण एवं बिहार-स्थल रहे हैं। यहाँ २३ जैन तीर्थंकरों ने समवशरण कर इस तीर्थ को वैशिष्ट्य प्रदान किया। सम्राट् भरत चक्रवर्ती द्वारा आदि तीर्थंकर भगवान् ऋषभदेव का प्रथम जैन मन्दिर शत्रुञ्जय तीर्थ पर ही प्रतिष्ठापित किया गया — जैन शास्त्रों में ऐसे उल्लेख हैं।

समय-समय पर धर्मप्रिय ओसवाल श्रेष्ठि सुदूर प्रदेशों से संघ समायोजन कर इस तीर्थ पर मन्दिर, धर्मशालाऐं एवं उपासना गृहों का निर्माण कराते रहे हैं। इस तीर्थ का १३ वाँ उद्धार विक्रम संवत १०८ में जावड़ नामक पोरवाड़ श्रेष्ठि ने करवाया था। अन्य इतिहासकारों के अनुसार तक्षशिला के महाजन श्रेष्ठि भावड़ शाह के पुत्र जावड़ शाह ने वि. सं. १८७ में इस तीर्थ का उद्धार कराया था एवं तक्षशिला से भगवान् ऋषभ की एक मूर्ति लाकर यहाँ प्रस्थापित की थी। आचार्य सिद्ध सूरि के समय (वि. सं. १७७-१९९) उनके भक्त श्रावकों ने शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ समायोजन किया। आचार्य कक्क सूरि (वि. सं. २३५-२६०) ने स्वयं शत्रुञ्जय तीर्थ की यात्रा की। आ. कक्क सूरि (पंचम) के समय तक्षशिला के करणाट गोत्रीय श्रेष्ठि रावत ने शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए एक संघ निकाला। वि. सं. ३७२ में श्रेष्ठी धवल पि. गोसल शाह गोत्र भूरि ने वीरपुर से शत्रुञ्जय के लिए एक संघ समायोजित किया। वि. सं. ४७० में गोकुल शाह पुत्र सोभा गोत्र चोरड़िया ने मरोटकोट से शत्रुञ्जय के लिए एक संघ निकाला। आ. देव गुप्त सूरि के समय (वि. सं. ४८०-५२०) वीरपुर के श्रावक शाह मुकन्द ने संघ समायोजन किया। इसी तरह आ. सिद्ध सूरि (षष्ट) के समय वीरपुर से सांखला श्रावक ने संघ निकाला।

'विविध तीर्थकल्प' 'शत्रुञ्जय रास' एवं अन्य ग्रंथों में इस पावन तीर्थ पर ओसवाल श्रेष्ठियों द्वारा समय-समय पर किए गए उद्धारों एवं संघ-समायोजनों का विस्तृत उल्लेख है। वि. स. ५१० (अन्य इतिहासकारों के अनुसार ५२३) में नृपति शिलादित्य के शास्सन काल में वल्लभी नगरी में आचार्य देवर्धि गणि क्षमाश्रमण ने एक विराट् धर्मसभा का आयोजन किया एवं समस्त आगम पुस्तकारूढ़ किए। प्रदेश के अन्य नगरों यथा— प्रभाष पाटण, भद्रेश्वर, अणहिल पाटण, सुथरी एवं आबू में ओसवाल श्रेष्ठियों द्वारा निर्मित मन्दिरों का उल्लेख जैन ग्रंथों में उपलब्ध है। चालुक्यराज कुमारपाल के दंडनायक मंत्रीश्वर वाग्भट्ट ने तीन करोड़ तीन लाख स्वर्ण मुद्राऐं खर्च कर शत्रुञ्जय तीर्थ के आदीश्वर प्रसाद का चौहदवाँ उद्धार वि.सं. १२२० में किया। ये श्रीमाल श्रेष्ठि उदयन के पुत्र थे। वि. सं. ५५७ में तोरमाण हूण ने राजस्थान व सिंध के पूरे पश्चिमी प्रदेश को अधिकृत कर लिया। वि. सं. ५६७ में उसकी मृत्योपरान्त उसके पुत्र मिहिरकुल ने मालवा, पंजाब एवं अफगानिस्तान तक अपने राज्य का विस्तार किया। वह बड़ा अत्याचारी था। उसके अत्याचारों से भयाक्रांत हो अधिकांश वणिक समुदाय दक्षिण में गुजरात के कच्छ और सौराष्ट्र प्रदेशों में पलायन कर गया। उनमें उपकेश जाति के लोग भी थे। विक्रम

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की नवीं शदी में आचार्य उद्योतन सूरि द्वारा रचित प्राकृत ग्रंथ 'कुवलयमाला कहा' में उक्त तथ्यों के विस्तार से उल्लेख मिलते हैं।

हूण सम्राट् मिहिरकुल के पश्चात् भी पश्चिमी भारत के उक्त प्रदेशों पर उत्तर-पश्चिमी सीमांत से आए मुस्लिम शासकों-यथा मुहम्मद बिन कासिम (वि. सं. ७६८), महमूद गजनी (वि. सं. १०७७), मुहम्मद गोरी (वि. सं. १२५१) आदि के बर्बर हमले जारी रहे एवं क्षत्रियों, व्यापारियों का यह पलायन भी जारी रहा।

विक्रम संवत ८०२ में पाटण की स्थापना के समय चन्द्रावती और भिन्नमाल से उपकेश जाति के बहुत से लोगों को आमंत्रित कर पाटण में बसने के लिए ले जाया गया था। आज भी उनकी संतानें वहीं वास करती हैं। सूरत, भरुच, खम्भात, बड़ौदा, भावनगर, पाटण, अहमदाबाद आदि नगरों में उक्त उपकेश वंशी लोगों की घनी आबादी थी। पाटण के चावड़ा कुल के राजा भी जैन थे।

विक्रम संवत ७९५ में शंखेश्वर गच्छ के श्री उदयप्रभ सूरि ने ब्राह्मण जाति के लोगों को जैनधर्म अंगीकार करवा कर विभिन्न श्रीमाल गोत्रों की स्थापना की। ब्राह्मणों से निःसृत इन गोत्रों में गौतम, हरियाण, कात्यायन, बंसीयाण एवं लाछिल प्रमुख हैं। कालान्तर में इनकी अनेक शाखाऐं-प्रशाखाऐं एवं दसा-बीसा प्रभेद हुए। ये गोत्र मुख्यतः सौराष्ट्र एवं कच्छ प्रदेश में बसे हुए हैं।

विक्रम की १२ वीं शदी में अंचल गच्छ का प्रादुर्भाव हुआ। इस श्वेताम्बर सम्प्रदाय के जनक आचार्य आर्य रक्षित सूरि (वि. सं. ११६९-१२५८) का पाट महोत्सव ओसवाल श्रेष्ठि श्रावक यशोधन भंशाली द्वारा आयोजित किया गया था। आपने अनेक इतर जाति के लोगों को उपदेश देकर जैन बनाया एवं ओसवाल कुल में शामिल किया। उनके द्वारा प्रस्थापित गोत्रो में सहसगुणा गांधी, माल्दे, आल्हा, वडेरा प्रमुख हैं। गुजरात के कोंकण प्रदेश में ओसवाल श्रेष्ठि दाहड़ के घर जन्में आचार्य जयसिंह सूरि (वि. सं. १२०२-१२५८) 'युगप्रधान' की पदवी से विभूषित हुए। इन्होंने ओसवालों के इतिहास प्रसिद्ध लालन गोत्र के अलावा मीठड़िया, पोलड़ीया, कटारिया, देवड़, देढ़िया, छाजेड़, लोलड़िया, पड़ाईया, नगाड़ा गोत्रों की स्थापना की। श्रीमाल श्रेष्ठि श्रीचन्द के घर जन्मे आचार्य धर्म घोष सूरि (वि. सं. १२३४-१२९८) ऊर्ध्वासन के अद्भुत् प्रयोगों के लिए प्रसिद्ध हैं। इन्होंने ब्राह्मणों में जैनधर्म का प्रचार कर देवानन्द सखा गोत्र की स्थापना की जिसकी कालान्तर में अनेक शाखाऐं हुई। हरिया गोत्र की स्थापना का श्रेय भी उन्हीं को है।

विक्रम की चौहदवीं शदी में झगड़ू (जगड़ू) शाह बड़े दानवीर हुए। वि. सं. १४७० में आचार्य मेरुतुगं सूरि की प्रेरणा से ओसवाल श्रेष्ठि मीठड़िया गोत्रीय बहुरा मेघा शाह ने गौड़ी पार्श्वनाथ तीर्थ का निर्माण करवाया। खम्भात नगर के श्रीमाल श्रेष्ठि हंसराज के घर जन्मे प्रसिद्ध क्रियोद्धारक आचार्य धर्ममूर्ति सूरि को युगप्रधान की पदवी दी गई। आपकी प्रेरणा से ओसवंशीय लोढ़ा गोत्रीय श्रेष्ठि सोनपाल कुवँरपाल ने सं. १६६५ में दो हजार यात्रियों का सम्मे-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दशिखर तीर्थ के लिए संघ समायोजन किया। लोलड़ा ग्राम के श्रीमाली सेठ नानिंग कोठारी के घर जन्मे आचार्य कल्याण सागर सूरि (सं. १६४९-१७१७) बड़े चमत्कारी संत थे। बादशाह जहाँगीर को दर्शन देने के लिए आकाशगामिनी विद्या के द्वारा वहाँ पहुँच कर सबको चमत्कृत कर दिया। आपको 'युग-प्रधान' पद से विभूषित किया गया। आपकी अध्यक्षता में ओस वंशीय लालन गोत्रीय मंत्रीश्वर वर्धमान शाह और पद्मसिंह शाह ने पन्द्रह हजार यात्रियों का शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ समायोजन किया।

गुजरात में बसे ओसवालों की वंशावलियाँ मारवाड़ के विभिन्न यतियों द्वारा उपासरों में विक्रम की १६वीं सदी तक उनके कुलगुरुओं द्वारा अंकित की जाती रही हैं।

जामनगर के पंडित हीरालाल हंसराज लालन ने गुजरात के विभिन्न प्रदेशों में बसे गुजराती ओसवालों का लेखा-जोखा सन् १९२३ में 'श्री जैनगोत्रसंग्रह' के नाम से गुजराती भाषा में प्रकाशित किया। इसमें कच्छ एवं सौराष्ट्र में बसे ओसवाल गोत्रों एवं उनकी खांपों का विशद वर्णन है। इनमें भी दसा-बीसा विभेद प्रचलित है। इसके कारण की व्याख्या करते हुए पं. हीरालाल ने लिखा है कि मूल में सभी बीसा थे। कालान्तर में उनमें लघु सजनी-वृद्ध सजनी हुए। कारण यह था कि जिन्होंने पुनर्लग्न (घर घेणुं-संग्रहण) किया उन्हें बहिष्कृत कर दिया गया एवं संख्या में अधिक हो जाने से उनकी जाति बन गई- वे दसा कहलाए। इनमें से अधिकांश कच्छी महाजन बम्बई में बस गए। ये सभी ओसवाल महाजन हैं इसमें कोई सन्देह नहीं किन्तु इनके मूल गोत्र का पता नहीं चलता।

सेठ मेघजी भाई थोबण का खानदान भुज (कच्छ) से आकर बम्बई बसा। मेघजी भाई इग्यारह बर्ष की वय में बम्बई आए। कालान्तर में वे गिल कम्पनी में रूई की दलाली करने लगे और अन्ततः उनके भागीदार बन गए। इस फर्म में रूई निर्यात का प्रमुख व्यवसाय था। संवत् १९७८ में मेघजी भाई को सरकार ने जे.पी. (जस्टिस ऑफ पीस) की उपाधि दी। आपने पशु-वध बन्द करवाने के लिए महत्त्वपूर्ण प्रयत्न किया।

शाह शांतिदास आशकरण का खानदान मांडवी (कच्छ) से आकर बम्बई बसा। सेठ शांतिदास के पिता ने संवत् १९२२ में निकल की दलाली शुरू की। कुछ समय बाद गिल कम्पनी में रूई की दलाली करने लगे। सेठ शांतिदास ने संवत् १९७४ में अपना स्वतंत्र व्यवसाय शुरू किया। चाँदी-सोना और रूई के वे प्रमुख व्यापारी माने जाते थे। महियर राज्य में पशुबध बन्द करवाने में आपका भी योगदान रहा। महामना मदनमोहन मालवीय ने जब बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी की स्थापना की तो आपने पचास हजार रुपए का अवदान दिया। संवत् १९८८ में उन्हें सरकार ने जे.पी. की उपाधि दी। न्यू ग्रेट मिल, कोहीनूर मिल, माडल मिल, ज्यूपिटर जेनरल इन्सोरेन्स आदि अनेक नामी प्रतिष्ठानों के आप डाईरेक्टर थे। तात्कालीन राजा-महाराजाओं से आपका खासा परिचय था।

बम्बई में डा. बालभाई नानावाटी हस्पताल के संस्थापक सेठ रतीलाल मनीलाल नानावाटी श्वेताम्बर ओसवाल थे। आपको भारत सरकार ने फर्टीलाइजार की खरीद के लिए रूस

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री सेठ शांतिदास आसकरण शाह
जे. पी. बम्बई

श्री सेठ बेलजी लखमसी
(नप्पूनेनसी) बम्बई

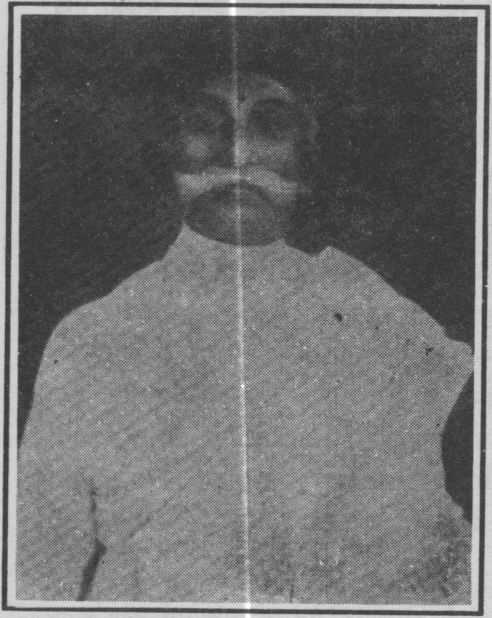

श्री सेठ मेघजी भाई थोबण
जे. पी. (गील एण्ड को.) बम्बई

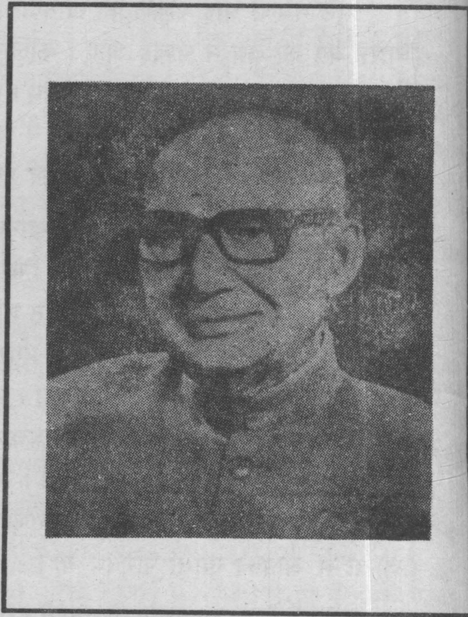

श्री रतीलाल मनीलाल नानावटी
(सन् १८९७-१९८४)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

भेजा था। आपने अनेक उद्योगों की स्थापना की। आप अनेक शैक्षणिक व सामाजिक संस्थाओं को सहयोग देते रहे हैं। नानावाटी हस्पताल जिसका उद्घाटन संवत् २००८ में पं. जवाहरलाल नेहरू ने किया था रेडियो-कोबाल्ट थिरेपी की एकमात्र संस्था थी। आप पूर्ण शाकाहारी थे। पूना युनिवर्सिटी में 'जैन चेयर' की स्थापना का श्रेय आपको ही है। आप अखिल भारतीय जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस के उपसभापति रह चुके हैं। संवत् २०४० में अहिंसा इन्टरनेशनल द्वारा आपका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। संवत् २०४१ में आप स्वर्गस्थ हुए।

सेठ नप्पू भाई नेनसी बम्बई के स्थानकवासी ओसवाल समाज के स्तम्भ थे। संवत् १९२० में उन्होंने अपनी प्रसिद्ध फर्म मेसर्स नप्पू नेनसी एंड कम्पनी की स्थापना की। उनके पुत्र लखमसी भाई में व्यवसायिक कुशलता तो थी ही, वे जन-हितकारी प्रवृत्तियों के भी प्रणेता थे। वे ग्रेन मर्चेंट्स एसोशियेसन के सभापति चुने गए। सरकार ने उन्हें जे. पी. की उपाधि से सम्मानित किया। उनके पुत्र वेलजी भाई देश एवं विद्याप्रेमी थे। वे खद्दर पहनते थे एवं कुछ समय तक कांग्रेस की वर्किंग कमिटी के भी सदस्य रहे।

गुजरात का जवेरी (जौहरी) कहलाने वाला समाज मूलतः श्रीमाली बीसा गोत्र की ही एक शाखा है। बम्बई आकर बसे सेठ अमृतलाल रायचन्द के खानदान का मूल निवास पालनपुर था। वे ओसवाल स्थानकवासी जैनसंघ के ट्रस्टी थे। सेठ अमीचन्द जवेरी के खानदान का मूल निवास पाटन था। उनके पुत्रों— दौलतचन्द और सिताबचन्द ने संवत् १९२० में बम्बई में अपना कारोबार जमाया एवं समृद्धि हासिल की। उन्होंने बालकेश्वर में आदीश्वर भगवान् का जिन-मन्दिर बनवाया। हैदराबाद के निजाम एवं ग्वालियर, पटियाला, त्रावनकोर, उदयपुर, रामपुर आदि राज्यों के नरेशों से उनके अच्छे सम्बन्ध थे। सेठ डाह्यालाल मकनजी जवेरी का खानदान वैष्णव धर्मावलम्बी है। उनका मूल निवास मोरबी (काठियावाड़) था। सेठ नगीन दास लल्लू भाई के खानदान का मूल निवास पालनपुर था। संवत् १९३० में बम्बई आकर उन्होनें जवाहरात के व्यवसाय में खूब शोहरत हासिल की। सेठ लहरचन्द भाई डायमण्ड मर्चेन्ट्स एसोशियेसन के प्रेसिडेन्ट रहे। वे पालनपुर नबाव के खास जौहरी थे। सेठ पूर्णचन्द पन्नालाल जौहरी का खानदान बीसा श्रीमाल बाणिया कुल का है।

बाबू जीवनलाल पन्नालाल जौहरी जे. पी.
(पूर्णचन्द्र पन्नालाल) बम्बई

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उनका मूल निवास पाटन था। सेठ पूर्णचन्द बर्मा गए एवं वहाँ उन्होंने खूब सम्पत्ति अर्जित की। बर्मा की रूबी-खानों का भ्रमण कर उन कीमती पत्थरों के बारे में विशेष योग्यता हासिल की। ये बर्मा के राजा थीओ से विशेष सम्मान पाकर बम्बई लौटे। संवत् १९२२ में बम्बई में अपना कारोबार स्थापित किया। सभी देशी नरेशों एवं यूरोप के राजवंशों से उन्होंने प्रशंसा पाई। सेठ पन्नालाल जी को सरकार ने जे. पी. की उपाधि से सम्मानित किया। उनके सुपुत्र जीवनमल जी भी बड़े उदार हृदय थे। महामना मालवीय जी द्वारा स्थापित बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के लिए उन्होंने अस्सी हजार रुपयों का अनुदान दिया।

बीसा श्रीमाली ओसवालों में भावनगर के सेठ परमानन्द कुँवर जी जौहरी का नाम भी बड़े सम्मान से लिया जाता है। वे कलाबत्तू के खास व्यापारी थे। मूलतः पाटण के निवासी सेठ भोगीलाल लहरचन्द का खानदान हीरों के व्यवसाय में संलग्न है। सेठ रवचन्द उज्जमचन्द जवेरी का खानदान मूलतः पालनपुर निवासी बीसा ओसवाल कुल का है। रवचन्द भाई ने संवत् १९३० में बम्बई आकर हीरा-पन्ना का व्यापार स्थापित किया। सेठ सूरजमल लल्लू भाई जौहरी भी पालनपुर से आकर संवत् १८९५ में बम्बई बसे। मोती के प्रसिद्ध व्यवसायी सेठ कल्याणचन्द घेलाभाई जवेरी सूरत के हैं। सेठ कस्तूरचन्द संवत् १९४५ में बम्बई आए। सेठ नगीनचन्द कपूरचन्द जवेरी एवं सेठ नेमचन्द खेमचन्द के परिवार भी सूरत के बीसा ओसवाल है। सेठ साराभाई भोगीलाल जौहरी के खानदान ने अहमदाबाद से आकर जवाहरात एवं रूई के व्यापार में खूब समृध्दि हासिल की। सूरत के ही सेठ कीकाभाई प्रेमचन्द का परिवार संवत् १८८८ में बम्बई आकर बसा। सेठ प्रेमचन्द रायचन्द शेयर एवं रूई बाजार के बादशाह थे। उनकी जीवनी ग्रंथ में अन्यत्र दी जा रही है।

गुजरात में 'शाह' नाम से चिह्नित समाज मूलतः ओसवाल है। करीब ४५० वर्ष पूर्व कच्छ से उद्योग-धन्धों की तलाश में प्रवसित हो गुजरात एवं मुम्बई के विभिन्न अंचलों में बसने वाले बीसा ओसवाल इसी, नाम से जाने जाते हैं। गुजरात के हलारी तालुके में बस जाने वाले अपने आपको 'हलारी बीसा ओसवाल' या 'हलारी महाजन' कहते है। इनका मूल पेशा खेती-बाड़ी ही रहा। अकाल की विभीषिका से त्रस्त अनेक पूर्वी अफ्रीका जाकर बस गए। कुल हलारी महाजनों की संख्या साठ/सत्तर हजार से भी ऊपर होगी जिनमें से आधे अभी भी जामनगर, भिवान्डी, बम्बई आदि नगरों एवं उनके पार्श्ववर्त्ती अंचलों में रहते हैं। इनकी पहचान "कच्छी बाणिया" नाम से हो सकती है।

जिस तरह उन्नीसवीं शदी में पूर्व में व्यवसाय की तलाश में जाने वाले राजस्थान के प्रवासी थाली-लोटा लेकर ही चले, इसी तरह कच्छ व गुजरात से मुम्बई आने वाले ओसवाल महाजन भी साधारण मजूरी करने वाले लोग ही थे। उन्होंने अपने अध्यवसाय एवं बुद्धि कौशल से मुम्बई प्रदेश के अनेक व्यवसायिक क्षेत्रों में एक छत्र साम्राज्य स्थापित कर लिया है। एक अनुमान के अनुसार वर्तमान में इस जाति के श्रेष्ठियों के पास मुम्बई प्रदेश में २०० रुपए से २२००० रुपये/स्क्वेयर फुट कीमत की ३०००० दुकाने हैं एवं ५ लाख से ३५ लाख कीमत वाली २५० सर्वाधुनिक कारें हैं। सवा तीन करोड़ रुपए की सर्वोच्च लागत वाले एक फ्लेट के मालिक ओस-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वाल कच्छी महाजन है, २० लाख रुपए रोजाना की सर्वोच्च विक्री वाले डिपार्टमेंटल स्टोर के मालिक भी ओसवाल कच्छी वाणिया है। 'रीटेल ट्रेड' के वे राजा हैं। 'लेक्मे' नेल पालिश से लेकर १५००० रुपए कीमत की पंजाबी ड्रेस उनकी दुकान से खरीदी जा सकती है। 'साधु' छाप चोखा, 'दीपक' छाप तेल, 'गोटी' छाप दाल, 'एंकोर' की स्विचें, 'नवनीत' गाईड, 'प्रिंस' छाप प्लास्टिक के सामान, 'बेंजर' की साड़ियाँ, 'अमरसन्स' की कटलरी, 'शीतल' की पंजाबी ड्रेसें, 'सत्यम्' के ग्रीटिंग कार्ड समस्त प्रदेश में धूम मचाए हैं। यह कच्छी ओसवालों का स्वर्ण-काल है। यह समृद्धि यों ही नहीं आ गई। इसके लिए कच्छी परिवार का हर सदस्य भरपूर मेहनत करता है एवं आपसी सहयोग इसकी कुञ्जी है। इसी वजह से तैयार पोशाकों का नब्बे प्रतिशत एवं स्टील के बर्तनों का साठ प्रतिशत रीटेल व्यापार कच्छी ओसवालों के हाथ में हैं। प्रायः चार सौ कच्छी फर्मे भवन निर्माण कार्य में संलग्न हैं। स्टेशनरी, नोटबुक, डायरी आदि के व्यवसाय में तो उनकी मोनोपोली है।

कच्छी ओसवालों ने व्यवसाय के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी नाम कमाया है। जन हित-कारी प्रवृत्तियों के संचालन में उनका आर्थिक अवदान किसी से कम नहीं है। घर के लिये पाँच हजार का फर्नीचर खरीदने में संकोच करने वाला कच्छी श्रेष्ठि अपने भाईचारे एवं जरूरत मंद के सहयोगार्थ पाँच हजार का दान करने में रत्ती भर देर नहीं करेगा। किन्तु स्वभाव से ही वे प्रचार से बचते हैं। लाखों रुपये दान देने वाला कच्छी वणिया भी पर्दे के पीछे रहना ही पसंद करता है। विधि और न्याय के क्षेत्र में जस्टिस लल्लू भाई शाह का अवदान कुछ कम न था। संवत् १९७३ में राष्ट्र के नेता बाल गंगाधर तिलक को राजद्रोह के अभियोग में तीसरी बार गिरफ्तार किया गया। वे दो बार पहले भी ऐसे अभियोग में अंग्रेज न्यायाधीशों द्वारा सजा पा चुके थे। जिला मजिस्ट्रेट ने इस बार भी सजा सुना दी। मामला उच्च न्यायालय में आया। जस्टिस लल्लूभाई शाह एवं जस्टिस बेवलर की अदालत ने सुनाई की। यहाँ तिलक प्रथम बार राजद्रोह के अभियोग से मुक्त किए गए। बम्बई के तात्कालीन गवर्नर लार्ड विलिंगटन बहुत नाराज हुए। उन्होंने तत्कालीन वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड से भी शिकायत की। तब तक भारतीय मानसिकता अंग्रेजों की गुलामी से पूर्णतः त्रस्त थी। यह निर्णय उसके प्रथम बार अपने सही स्वरूप को पहचान लेने का प्रतीक था।

उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए सैंकड़ों कच्छी युवक अमरीका एवं विदेश जाते रहते हैं। उन्होंने विज्ञान एवं टेकनालाजी में महारत हासिल कर देश का गौरव बढ़ाया है। प्रसिद्ध संगीतकार कल्याण जी आनन्दजी ने शास्त्रीय एवं सुगम संगीत के क्षेत्र में नये कीर्तिमान स्थापित किए हैं। नये कलाकारों ने थियेटर व अन्यान्य सांस्कृतिक मंचों पर अपने आपको प्रस्थापित कर जाति की श्रीवृद्धि की है।

(४) बंगाल आसाम आदि पूर्वी प्रदेशों में ओसवाल

जैन तीर्थंकारों के जन्मस्थानों की तालिका (प्रथम खण्ड -पृष्ठ ५५) पर दृष्टिपात करने से साफ परिलक्षित होता है कि भारतीय सभ्यता मूलतः पंचनद एवं गंगा-यमुना के मैदानों में

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

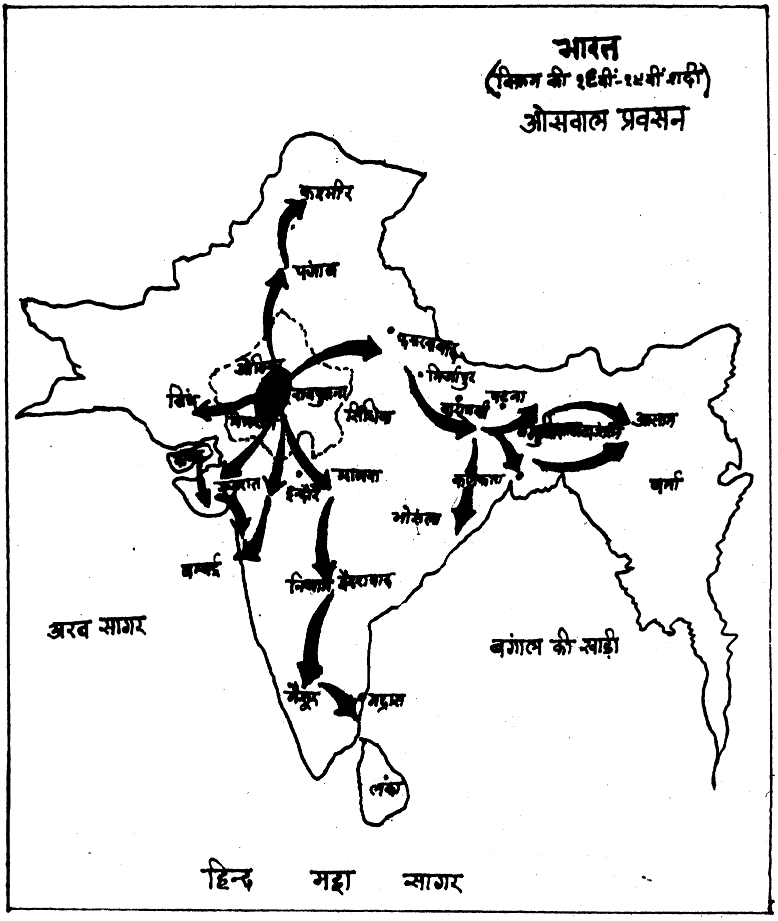

ही विकसित हुई। जैनधर्म के प्रचारप्रसार की अनन्त काल तक ये सीमाऐं रही। सम्मेद शिखर प्राचीनतम जैन तीर्थ तो रहा ही जिसे बीस तीर्थंकरों ने अपना पुण्य समाधि-स्थल बनाया साथ ही जैन संस्कारों का यह पूर्वी सीमांत भी रहा। विशेषतः २३ वें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ के काल में इस क्षेत्र का बहुत विकास हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सराक जाति

प्रसिद्ध इतिहासकार प्रबोधचन्द्र सेन ने जैनधर्म को बंगाल का आदि धर्म बताया है। लेफ्टिनेन्ट कर्नल ई. टी. डाल्टन के अनुसार इस प्रदेश के मानभूम जिले में सर्वप्रथम आकर बसने वाली सभ्य जाति 'सराक' थी। अब भी इस जाति के लोग मानभूम, सिंहभूम, वीरभूम, वर्धमान, रांची, हजारीबाग, बाँकुड़ा, मेदेनीपुर, संथाल परगना एवं उड़ीसा प्रांत में छिन्न-भिन्न हुई निवास करती है। इनकी संख्या प्रायः ३ लाख है। इससे पूर्व यह प्रदेश आदिवासी संथाल व अन्य वन्य जातियों से आवासित था। सन् १८६३ में डाल्टन छोटा नागपुर क्षेत्र में कमिश्नर होकर आए। उन्होंने मानभूम जिले के भीतरी भागों का दौरा किया एवं अपनी रपट एशियाटिक सोसाईटी आफ बंगाल के मुखपत्र (Vol. 35 Part - १- १८६६) में प्रकाशित करवाई। डाल्टन के अनुसार सराक जाति मूलतः 'पासत्थ' (पार्श्व के अनुयायी) थी। वे इन प्रदेशों की मुंडा व कोल आदिवासी जातियों से सर्वथा भिन्न हैं। इनका रंग गोरा और नाक नक्श आर्य जाति का-सा है। ये लोग व्यापार करते हैं। इनका मूल पेशा महाजन का है। कुछ लोग खेती भी करते हैं। ये लोग समृद्ध, बुद्धिमान और सभ्य हैं, कोई अपराधी नहीं, निरामिष भोजी हैं, रात्रि भोजन नहीं करते, अहिंसक हैं एवं घरों में पार्श्वनाथ की पूजा करते हैं।

'सराक' शब्द 'श्रावक' का ही अपभ्रंश है। 'श्रावक' शब्द जैनशास्त्रों में धर्मानुरागी सद्गृहस्थ के लिए व्यवहृत होता है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि भगवान् पार्श्वनाथ एवं भगवान् महावीर ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा के अनेक क्षेत्रों में विचरण किया। सम्भवतः पार्श्व प्रभु एवं भगवान् महावीर के बिहारों में ही यह श्रावक समाज सम्मेद शिखर के आसपास इन बिहार क्षेत्रों में बस गया। भूमिज आदिवासी भी स्वीकार करते हैं कि बाहर से आने वालों में ये 'सराक' ही सर्व प्रथम यहाँ बसे। इन लोगों ने यहाँ सुन्दर पाषाण मूर्तियों एवं विशाल मन्दिरों का निर्माण किया। ये लोग खनिज निकालने में भी दक्ष थे। प्रतिमाओं के शिल्प सौन्दर्य से इनकी कलाप्रियता का अन्दाज सहज ही लगाया जा सकता है। इन श्रावकों को वन्य जातियों एवं अन्य धर्मावलम्बियों की यातनाऐं भी समय-समय पर सहनी पड़ी। विशेषतः 'शाक्त' मतानुयायियों की जो यज्ञ-हवन, पशुबलि एवं पंच मकार को महत्त्व देते थे। कालान्तर में इसी विरोध के कारण जैनाचार्यों एवं उपदेशकों ने इन क्षेत्रों में बिहार ही वर्जित या बन्द कर दिया। एक किंवदन्ती के अनुसार मान बाजार (मानभूम) के राजा ने एक श्रावक श्रेष्ठि की कन्या मांगी। उसी दिन श्रावक मान बाजार से पलायन कर गए।

क. डाल्टन ने इस क्षेत्र में बिखरे पड़े जैन मन्दिरों के भग्नावशेषों का विवरण दिया है। सिंहभूम जिले में कोसी एवं दामोदर नदियों के तटवर्ती क्षेत्रों में ये भग्नावशेष देखे जा सकते हैं। पुरुलिया के पलमा ग्राम के निकटवर्ती क्षेत्र में तीर्थंकरों की आदमकद कायोत्सर्ग मुद्रा में पाषाण प्रतिमाऐं हैं, नीचे चवँर डुलाती देवकन्याऐं एवं बीच में तीर्थंकरों के प्रतीक पशु-चिह्न उत्कीर्णित हैं। कई प्रतिमाऐं १२ फीट ऊँची हैं। बागदा परगने में भी अनेक जैन पाषाण मूर्तियाँ हैं। इनमे 'भीरम' की एक ७.५ फीट ऊँची शानदार मूर्ति है। डालमा, कटरासगढ़ क्षेत्रों में

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

भी अनेक खण्डहर अवशिष्ट हैं। पाक बीरा (पुरुलिया) एवं पावनपुर (वीरभूम) आदि अंचलों में कायोत्सर्ग मुद्रा की मूर्तियों एवं देवालयों के अवशेष देखे जा सकते हैं। चूड़ा ग्राम में खंडित देवली एवं १३० फीट ऊँचा देवालय है। दामोदर के किनारे तेलकूपी ग्राम में भी खंडित मन्दिर है जिनमें स्थित पाषाण मूर्ति को स्थानीय लोग 'वीरम' कहकर पूजा करते हैं। शायद यह वीर प्रभु (महावीर) का ही अपभ्रंश है। जयपुर शहर से ४ मील दक्षिण में बोरम ग्राम के निकट ३ मन्दिरों के खण्डहर हैं जिन्हें स्थानीय लोग 'सराक जाति' के ही मानते हैं।

ले. बीवन ने एशियाटिक सोसाईटी के मुखपत्र (मई- १८६५) में प्रकाशित विवरण में उक्त तथ्यों की पुष्टि की है। डब्लू. डब्लू हंटर, सर हरबर्ट रिसले आदि इतिहासकारों की भी सराक लोगों के सम्बन्ध में यही अवधारणा है। ओ. माली (O' Malley) ने बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेट आफ सिंहभूम (Vol. २०-१९१०) में कोल्हण (तामलुक जिला) में प्राप्त बड़े बड़े जलाशयों का जिक्र किया है जिन्हें वहाँ बसे 'हो' जाति के लोग 'सराक टैंक' कहते हैं। जी. कूपलेंड (G. Coupland) ने 'गजेटियर आफ मानभूम डिस्ट्रिक्ट' में सराक जाति के सम्बन्ध में अनेक नये तथ्यों पर प्रकाश डाला है। उनके अनुसार मूलतः सराक जाति की बस्तियाँ मानभूम जिले में ही पाई जाती है। सरकारी जनगणना में दर्ज कुल १७,३८५ में से १०,४९६ सराक इसी प्रदेश में रहते हैं। किसी समय यह ज़ाति इस क्षेत्र में बहुत प्रभाव शाली रही होगी। किन्तु सातवीं शदी के आसपास ब्राह्मण संस्कृति के उन्नयन से वे दब गए। वर्धमान एवं वीरभूम जिलों में रहने वाले सराक अपना मूल देश गुजरात मानते है। उनके अनुसार मन्दिरों एवं मूर्तियों के निर्माण हेतु उनके पूर्वजों को यहाँ लाकर बसाया गया था।

इस जाति के सात गोत्र हैं— आद्यदेव, धर्म देव, रिसीदेव, सांडिल्य, काश्यप, अनन्त और भारद्वाज। वीरभूम जिलें में गौतम और व्यास गोत्र भी है। रांची में वात्सव गोत्र है। वैसे गुजरात में प्रवसित ओसवालों में भी इस तरह के गोत्र हैं। अधिक सम्भावना यह है कि प्रथम तीन मूल गोत्रों के सिवाय बाकी कालान्तर में ब्राह्मण संस्कृति के प्रभाव में बने गोत्र हैं। इस जाति की शांतिप्रियता का लाभ उठाकर स्थानीय लोगों ने इनकी जमीनों एवं जलाशयों पर कब्जा कर लिया। एक समय समृद्ध रही इस जाति का वैभव अब तिरोहित हो चुका है। वर्तमान में उपाध्याय मुनि मंगलविजय जी एवं ओसवाल श्रेष्ठि श्री बहादुर सिंह जी सिंघी के सहयोग से इनकी उन्नति के सामान्य प्रयास अवश्य हुए हैं किन्तु आज के वैभवसम्पन्न जैन समाज के सन्दर्भ में वे अत्यल्प हैं।

मध्यकालीन प्रवसन

विक्रम की ६ठीं से १२ वीं शदी तक लगातार हुए मुस्लिम आक्रमणों ने भारत के पश्चिमी छोर पर रहनेवाली जातियों को सब तरह से प्रभावित किया। जैनधर्म को अंगीकार कर हिंसा को अपने समस्त कार्य-कलापों से त्याज्य मान कर ओसवालों ने क्षात्रधर्म (युद्ध) ही नहीं छोड़ा, कृषि को भी तिलाञ्जलि दे दी क्योंकि उसमें स्थूल हिंसा तो थी ही। डा. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने 'मध्यकालीन संस्कृति' प्रबंध में इस स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि "वैश्य

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

लोगों ने ७ वीं शदी के प्रारम्भ से ही कृषि को नीच कर्म समझ कर छोड़ दिया था"। केवल व्यापार ही उनका एकमात्र आधार बन गया। जब व्यापार के क्षेत्र उपरोक्त कारणों से सीमित होने लगे तो नये क्षेत्रों की तलाश शुरू हुई। ओसवाल श्रेष्ठियों नें उन मुस्लिम आक्रमणकारियों से जो यहीं आकर बस गए थे, सम्बन्ध बढ़ाने शुरु किए। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में राज्य की समृद्धि मूलतः वाणिज्य एवं व्यापारियों के सहयोग पर निर्भर थी। मुस्लिम शासकों ने इस सत्य को पहचाना। अतः सभी विजेता शासक व्यापारी वर्ग का सहयोग प्राप्त करने के लिए आतुर रहते थे। उन्हें भारत के मात्र सीमावर्ती प्रदेशों को विजित कर चैन नहीं आता था वे सम्पूर्ण भारत के शासक होने का स्वप्न देखने लगते थे। उनके भारत के भीतरी भागों सुदूर दक्षिण एवं सुदूर पूर्व के विजय अभियानों के साथ ही ओसवाल जाति के प्रवसन का नया दौर शुरू होता है।

इस प्रवसन का पहला दौर मध्यभारत मालवा और दक्षिणी प्रदेशों की ओर उन्मुख हुआ। मुस्लिम सैनिक दस्तों की रसद के लिए मोदी खाने की जरूरत होती थी। मोदीखानों के मालिक वणिक श्रेष्ठि सदल-बल सेना के साथ चलते थे। उनका काम सेना को आवश्यकतानुसार खाद्य-पदार्थ मुहैया करना तो था ही, साथ ही सेना के लिए लड़ाई के नाना उपकरणों का संग्रह करना भी उनके जिम्में रहता था। सैनिकों को समय-समय पर उधार रकम भी देते थे। एक तरह से यह उनके बैंकिंग व्यवसाय का ही एक विस्तृत आयाम था। मोदीखाने का यह लाभ लेने वालों में प्रथमतः अग्रवाल और महेश्वरी जाति के सेठ ही अधिक थे क्योंकि ओसवालों का राज्यों के राजतंत्र पर पूरा प्रभाव था। दीवान, प्रधान सेनानायक, कोषाध्यक्ष आदि प्रमुख स्थानों पर ओसवाल मुत्सद्दी नियुक्त थे। स्थानीय रेवेन्यू के अधिकार भी उन्हीं तक सीमित थे। अतः ओस-वालों को इस नये व्यावसायिक आयामों की आवश्यकता बहुत बाद में पड़ी।

प्रवसन का दूसरा दौर पूर्वी प्रदेशों की ओर अग्रसर हुआ। मोदी खाने की आवश्यकता के अतिरिक्त अन्यान्य पूर्वोक्त कारणों से परदेश गमन आवश्यकता बन गई। बीहड़ मार्गों पर मीलों पैदल या बहेली की सवारी पर, डाकुओं एवं लुटेरों से लूटे जाने की जोखिम उठा कर, महीनों चलते रहना एवं पत्नि-परिवार से सालों दूर रह कर अर्थोपार्जन करना इस जाति की शारी-रिक एवं मानसिक क्षमता परिलक्षित करता है। संवत् १९१७ के आसपास रेल मार्ग बिछ जाने से इन कष्टों से कुछ रिहाई अवश्य मिली। और इसीलिये उन्नीसवी शदी के पूर्वार्द्ध में यह प्रवसन त्वरित गति से हुआ।

मुसलमानी तवारीखों से पता लगता है कि संवत् १६२१ में जो सेना पहले पहल बंगाल में सुलेमान किरानी की सहायता के लिए आई वह राजपूत सेना थी। इस सेना के मोदीखाने के साथ जोधपुर-मारवाड़ के श्रेष्ठि वर्ग थे। ये लोग जहाँ जाते, स्थानीय जनता से उनके सम्बन्ध बनते एवं जहाँ अर्थोपार्जन की स्थायी संभावनाऐं दिखती वहीं वे बस जाते। इस तरह गंगा के किनारे बसे उत्तर प्रदेश, बिहार एवं बंगाल के शहरों में ओसवाल प्रवासियों की संख्या बड़ती गई। नवाबों के लिए जवाहरातों के खजाने लिए अनेक ओसवाल मुत्सद्दी श्रेष्ठियों ने इस क्षेत्र

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

को अपना आवास बनाया। अंग्रेजी साम्राज्य के अभ्युदय से कलकत्ता और उसके समीपवर्ती क्षेत्र का विकास हुआ। अंग्रेजी साम्राज्य के साथ ही पाट (जूट) व्यवसाय के उन्नयन की कथा जुड़ी है। संवत् १९१७ में रेल-मार्ग खुल जाने से इस प्रवसन में त्वरा आई। संवत् १९२८ तक भारत के मुख्य शहर बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली और मद्रास, रेल-मार्ग से जुड़ गए। संवत् १९७५ तक देश के छोटे शहरों तक रेल पहुँच गई। इस कारण चारों ओर आधुनिक संसाधनों के पहुँचने से प्रदेशों की दूरियाँ कम होने लगी। कालांतर में सामाजिक बंधन एवं धार्मिक वर्जनाऐं तोड़ कर विदेशों में भी ओसवाल एवं अन्य व्यवसायिक जातियाँ प्रवसित होने लगी।

कलकत्ता

मध्य काल में हिन्दुओं की यह तीर्थभूमि कालीक्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध थी। उत्तर प्रदेश एवं बिहार के हिन्दू तीर्थयात्री गंगासागर या जगन्नाथपुरी की यात्रा के लिए इसी रास्ते से जाया करते थे। यहाँ तान्त्रिकों का प्रभाव था। 'दिग्विजय प्रकाश' नामक काव्य-ग्रंथ में इसे 'किल-किला' कहा गया है—

"काली देव्याः प्रसादेन किलकिला देशवासिनः।
द्रविणैः पूरिता नित्यं भाविताश्चिरकालतः।"

सेनवंशीय राजाओं के समय यह कालीक्षेत्र दक्षिणेश्वर से बेहाला तक विस्तृत था। राजा वल्लाल सेन ने समस्त कालीक्षेत्र एक ब्राह्मण को दान दे दिया। विप्रदास के "मनसा मंगल" (१४९५) एवं मुकुंद राम के चंडी काव्य (१५७४) में इसका 'कलिकात्ता' नाम से उल्लेख है। आईने अकबरी (१५९६) के अनुसार कलिकात्ता सात गाँ (सप्तग्राम) सरकार में अन्तर्भुक्त था। सन् १६८९ में अंग्रेज अधिकारी जॉब चारनाक ने ईस्ट इंडिया कम्पनी की प्रथम कोठी सुतानुटि में स्थापित की। सन् १६९० में उसने सुतानुटि, कलिकत्ता और गोविन्दपुर - ये तीनों गाँव मात्र सौलह हजार रुपयों में बंगाल के तात्कालीन नवाब अजीमुशान से खरीद लिए। यहीं से इस क्षेत्र के विकास की कहानी शुरू होती है। अंग्रेजों ने अपना पहला किला सन् १६९६ में वर्तमान डाक घर (G.P.O.) के स्थान पर बनाया। तदुपरांत फोर्ट विलियम का किला बना।

एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार इस प्रदेश में चूने के भट्ठे बहुत थे एवं यहाँ के लोग रस्सी बनाने का व्यवसाय करते थे। अतः कलि (यानि चूना) और काता (रस्सी बुनना) को मिला-कर इस जगह की पहचान बनी- कलीकाता। सन् १५८६ में बादशाह अकबर ने लगान के सम्बंध में एक नक्शा तैयार करवाया जिसमें यह प्रदेश 'कलिकाटा' नाम से दर्ज था। अंग्रेजों के आने पर उनके उच्चारण में यही 'केलकाटा' में परिवर्तित हो गया।

इसी काल में ओसवाल शिरोमणि जगत सेठ माणकचन्द गेहलड़ा ने यहाँ अपनी कोठी स्थापित की। जब मुर्शीदकुली खाँ दीवान बना तो बंगाल की राजधानी ढाका थी। जगतसेठ की सलाह पर राजधानी मुर्शिदाबाद ले जाई गई। इस बीच अंग्रेजों नें पाँव फैलाना शुरू किया। कलकत्ता व्यापार का केन्द्र बन गया। ईस्ट इंडिया कम्पनी का सारा काम यहीं से होने लगा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वे रक्षा के लिए अपनी सेना भी रखने लगे। इस समय मुगलिया सल्तनत मृत प्रायः ऊपरी साँसे ले रही थी। अराजकता की इस स्थिति में सिराजुद्दौला नवाब बना। वह अंग्रेजों की घात से वाकिफ था। उसने कलकत्ता पर कब्जा कर लिया और इसका नाम 'अलीनगर' कर दिया। जगतसेठ की सिराजुद्दौला से कभी नहीं बनी। सन् १७५७ के प्लासी के युद्ध में सिराजुद्दौला मारा गया। तब से दिल्ली के बादशाह नाम मात्र के एवं बंगाल के नवाब अंग्रजों की मात्र कठपुतली बन कर रह गए।

बंगाल की आधुनिक मुख्य जैन ओसवाल बस्तियाँ राजस्थान से आकर बसी हैं। मुर्शिदाबाद की बस्ती प्राचीनतम मानी जाती है। जगतसेठ के सिवाय कलकत्ता में सर्वप्रथम बसने वाले ओसवालों में जौहरी खानदान भी था। इन्होंने संवत् १८६७ में पंचायती मन्दिर का निर्माण करवाकर वहाँ आदिनाथ भगवान की प्रतिमा प्रतिष्ठित की। इसी वर्ष मानिकतल्ला स्थित भूखण्ड पर श्वेताम्बर संघ की ओर से एक सुरम्य उद्यान का निर्माण हुआ एवं दादा बाड़ी की स्थापना हुई। धीरे-धीरे मन्दिर के ईर्द-गिर्द जैनों की बस्ती बस गई। लखनऊ, बनारस, दिल्ली, जयपुर आदि स्थानों से श्रीमाल/ओसवाल श्रेष्ठि आकर यहाँ बसने लगे।

पाट व्यवसाय

इस मध्यकालीन प्रवसन का एक सुफल यह हुआ कि अधिकांश बैंकिंग व्यवसाय (महाजनी सूद पर लेन देन) पर जीने वाला ओसवाल समाज पटसन के ऐसे व्यवसाय में लगा जो आने वाले २०० वर्षों तक पूर्वी प्रदेशों में इसका प्रमुख व्यवसाय होनेवाला था।

'पाट' संस्कृत के पट्ट या झट्टि शब्द से बना हैं। अंग्रेजी का 'जूट' शब्द भी संस्कृत शब्द का ही रूपान्तर है। मूलतः पाट पूर्वी प्रदेशों की एक सामान्य पैदावार थी जिसे स्थानीय कृषक रस्सी बनाने आदि के घरेलू कामों में लाते थे। सन् १८२० में ईस्ट इंडिया कम्पनी के मालिकों ने इसकी शक्ति और टिकाऊपन को पहचाना और इससे चटाईयाँ बनाने का उद्योग शुरू किया। इंग्लैण्ड (आक्सफार्डशायर) के आविंगटन नामक स्थान पर सर्व प्रथम कारखाना खोला गया। सन् १८२२ में डण्डी के थोमस नामक व्यापारी नें डण्डी में एक विशाल कारखाना लगाया जिसमें भारत से आयातित जूट के विभिन्न तरह की चटाईयाँ व गलीचे बनाए जाने लगे। सन् १८३२ में डण्डी के जेम्स वाट नामक उद्योगपति ने अन्य कार्यों के लिए जूट का इस्तेमाल खोज निकाला। सन् १८५४ में रूस और रोम के बीच हुए युद्ध के कारण जब रूस से फ्लेक्स और हेम्प का आयात बन्द हो गया तो उनकी जगह जूट का उपयोग शुरू कर दिया गया। इस तरह दिनोंदिन इसकी खपत में चौगुनी वृद्धि हुई। भारत में प्रथम जूट मिल खोलने का श्रेय जार्ज आकलैंण्ड को है जिन्होंने सन् १८५४ में रिशरा ग्राम में जूट मिल स्थापित की जो आज 'वेलिंगटन जूट मिल' के नाम से जानी जाती है। सन् १८५७ में बाटानगर एवं सन् १८६४ में गौरीपुर जूट फेक्टरियों की स्थापना हुई। अमरीका के गृहयुद्ध में जब रूई के भाव आकाश छूने लगे तो पाट की मांग एकाएक बढ़ गई एवं डण्डी में पाट से कपड़ा बनाना शुरू हुआ। यहीं से पाट का सितारा चमका। अब तो आए दिन इसके नए उपयोग खोजे जाने लंगे। प्रथम महायुद्ध

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में केनवास तिरपाल आदि अनेक वस्तुऐं पाट से बनाई जाने लगी। इस तरह भारत से जूट का निर्यात अनेक देशों को होने लगा एवं स्थानीय खपत भी कई गुना बढ़ गई।

बीसवीं सदी का यह प्रारम्भिक दौर था। ओसवालों के अतिरिक्त अग्रवाल, महेश्वरी एवं बंगाली जमींदार घराने भी इस व्यवसाय से भरपूर लाभ उठाने में जुट गए। शनैः शनैः इसमें 'फाटका' (सट्टा) का प्रादुर्भाव हुआ। माल कम और मांग अधिक होने एवं मानसून की कम-बेसी अनिश्चितता के कारण तैयारी माल के अलावा भविष्यगत माल की भी खरीद-फरोख्त होने लगी। कुछ व्यवसायी कीमतों के घटने-बढ़ने का फायदा उठाने के लिए अनावश्यक रूप से संग्रह करने लगे। इस तरह इस व्यवसाय का मौलिक रूप छिन्न-भिन्न होकर चौपट हो गया।

ओसवालों की व्यवसायिक स्थिति

भारत की व्यापारी जातियों में जिस विशेष परम्परा का विकास हुआ उसमें धार्मिक (अ-हिंसा) आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का प्रमुख हाथ था। जिस क्षेत्र के वे रहवासी थे वहाँ वर्षा की अनिश्चितता से पैदावार (जमाना) भी अनिश्चित रहती थी। इससे जन्मी असुरक्षा की भावना ने समृद्ध लोगों को जमाखोरी और सट्टा (फाटका) करने को उकसाया। इस कारण बाजारों पर एवं मूल्यों पर किसान का कोई अधिकार नहीं रहा वरन् उनका भविष्य भी व्यापारियों के कब्जे में चला गया। इसी असुरक्षा की भावना ने व्यापारियों को भी नये क्षेत्र खोजने पर मजबूर किया।

राजस्थान की व्यापारी कोमौं में दो धर्मो की प्रतिष्ठा थी— जैन और वैष्णव। इन दोनों में अहिंसा का बहुत महत्त्व है, मांस भक्षण का निषेध है। कुछ अंतर भी है — जैनों में तप और अपरिग्रह पर अधिक जोर है, वैष्णवों में भक्ति पर। सन् १९७८ में प्रकाशित "The Marwaris' नामक शोधग्रंथ में प्रसिद्ध समाज वैज्ञानिक थामस ए. टिमबर्ग ने इन धार्मिक वृत्तियों का विश्लेषण करते हुए बंगाल में व्यापारी जातियों के व्यवसायिक एवं औद्योगिक विकास की मीमांसा की है। मुख्य व्यापारी जातियाँ ओसवाल, अग्रवाल, महेश्वरी, खंडेलवाल और सरावगी या तो जैन हैं या फिर वैष्णव। ये सभी रूढ़िवादी एवं परम्परावादी हैं। जीव हिंसा के निषेध के कारण कृषि और युद्ध छोड़ कर व्यापार की ओर झुकी। बैंकिंग यानि सूद पर रकम उधार देना इनका प्रमुख पेशा बना। इनमें संयुक्त परिवार प्रथा प्रचलित होने के कारण सम्पत्ति के एक जगह जमा होने, न बँटने से व्यापार में उसके उपयोग की सहूलियत थी। बंगालियों एवं अन्य स्थानीय कौमों की तुलना में यह क्षमता उनके उभरने की शर्त बन गयी। एक और कारण उनकी सफलता का जिन्दगी के प्रति आम रवैया भी था। व्यापार में मुनाफा मूलतः दूसरे के शोषण पर आधारित है। जहाँ हृदय की भावनाओं का अधिक आदर होता है वहाँ शोषण की वृत्ति उभर नहीं पाती। इसीलिए बंगालियों में कलाप्रेम संगीत, नाटक, कविता एवं नृत्य विधाओंके रूप में चरम विकास पर पहुँच सका। अपनी सांस्कृतिक और साहित्यिक रुझान के कारण ही वे बाहर से आई व्यापारिक कौमों का मुकाबला नहीं कर सके।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एक और विशेषता है जिसे ओसवालों के संदर्भ में रेखांकित किया जा सकता है— अपनी जाति के प्रवासी लोगों का आपसी सहयोग। जो श्रेष्ठि पहले आकर जम चुके थे एवं समृद्ध थे उन्होंने जगह-जगह सामूहिक बासे (भोजनालय) खुलवा दिए जहाँ खाने-पीने की मुफ्त व्यवस्था थी। उन फर्मों की विशाल गद्दियों में अन्य नये प्रवासियों के रहने की भी व्यवस्था रहती थी। बड़े घरानों की फर्में रुपए-पैसे एवं नौकरी से भी उनकी समुचित मदद करती थी ताकि कुछ रकम जुटा कर वे अपना स्वतंत्र व्यवसाय कर सकें। सहयोग की यह वृत्ति जाति के उत्थान की आधारशिला बन गई।

एक विशेष मान्यता के कारण ओसवाल उद्योगों में कभी नहीं उभर पाए। ओसवाल बैंकिंग में तो माहिर थे परन्तु जैनों के जिस संम्प्रदाय— "तेरापंथ" के वे अनुयायी थे उसमें अहिंसा एवं अपरिग्रह के सिद्धान्त पर विशेष जोर दिया जाता है। इस वजह से आरम-समारम्भ (स्थूल हिंसा) सीमित रखने की प्रतिज्ञाऐं दिलाई जाती है। अहिंसा के इस सूक्ष्म भेद एवं स्थूल नियमों के कारण ही ओसवाल उद्योगों की ओर अग्रसर नहीं हो सके। जीव हिंसा के बिना कोई उद्योग नहीं होता। अतः वे उद्योग विरोधी बने रहे। फिर संयुक्त परिवार की व्यवस्था भी उनके आड़े आई। बाकी परिवार का देश में रहना, सुदूर विदेश में उद्योग स्थापित करने की दृष्टि से प्रतिगामी था। बच्चों को जो हिसाब-किताब की शिक्षा देश के गुरुकुलों में मिलती थी वह भी उद्योगों की स्थापना के लिए पर्याप्त नहीं थी। उद्योगों में मानवीय सम्बन्धो की समझ, संगठनात्मक शक्ति एवं टेक्निकल जानकारी की आवश्यकता होती है। इस ओर इस जाति ने पर्याप्त ध्यान दिया ही नहीं। फिर, सट्टे की जो प्रवृत्ति उभरी वह उद्योग के लिए उपयुक्त नहीं थी। 'वायदा' एक तरह का जुआ है जिसमें पूँजी को कानून सम्मत व्यापार से हटा कर सट्टे में लगा दिया जाता है। उद्योगों में बड़े धैर्य की आवश्यकता होती है। अनेक ओसवाल श्रेष्ठि इसी कारण उखड़ गये और कुछेक अपवादों के सिवाय महेश्वरियों एवं अग्रवालों की तरह बड़े उद्योग स्थापित नहीं कर सके।

फिर भी 'पटसन' के व्यवसाय में ओसवालों का सदा बोलबाला रहा जब कि पटसन-उद्योग में वे कोरे रह गये। सन् १९४५ में महायुद्ध के बाद अंग्रेजी फर्में राष्ट्रीयता के प्रभाव से अपने को असुरक्षित समझने लगी। भविष्य की आशंका से जब ये फर्में बिकने लगी तो अन्य महेश्वरी और अग्रवाल उद्योगपतियों ने उन्हे खरीदा। सन् १९५२ तक ६६ यूरोपीय फर्में उनके हाथ आ गई। उद्योगो के इस हस्तान्तरण में ओसवालों का हिस्सा नगण्य था।

ओसवालों की एक कमजोरी यह भी थी कि जिस व्यवसाय को उन्होंने चुना, सभी उसी ओर झुक गए। अन्य वस्तुओं को उन्होंने छुआ भी नहीं। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अफीम की खरीद फरोख्त में जिन व्यापारियों ने बेतहाशा पैसा बनाया उनमें अन्य जातियों के श्रेष्ठि ही प्रमुख थे। प्रथम विश्व युद्ध के समय भी सट्टे में खूब मुनाफा कमाने वाले वे ही थे। कहते हैं बिड़ला बंधु जो युद्ध के पहले बीस लाख की पार्टी थी, युद्ध के बाद अस्सी लाख की पार्टी हो गई। मुख्य बात यह थी कि यह सारा मुनाफा उन्होंने जमींदारी और उद्योग में लगाया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आयातित कपड़े एवं पटसन के व्यवसाय में ओसवाल प्रमुख थे। अठारहवीं शदी में जगत् सेठ मानिकचन्द गेहलड़ा का परिवार मुर्शिदाबाद आकर बसा। उनके सहयोग से अनेक अन्य लोग पटसन के व्यवसाय में लगे। जिया गंज व अजीम गंज में बसने वाले ओसवाल श्रेष्ठियों ने अपनी जमींदारियाँ भी स्थापित की। पुश्तैनी बैंकिंग व्यवसाय तो जैसे उनके खून में ही था।

मुर्शिदाबाद की पटसन की ओसवाल फर्मों में हरीसिंह निहालचन्द की फर्म प्रमुख थी। ये अजमेर के बलदोटा सिंघी थे। सेठ सेवईराम सिंघी ने सन् १७९२ में अजीम गंज आकर व्यवसाय शुरू किया। फिर आसाम के गोआलपाड़ा में फर्म खोली। उनके पुत्र ने 'हरीसिंह निहालचन्द' फर्म की नींव रखी। इनकी बहन गुलाब कुमारी जगतसेठ परिवार में ब्याही गई। इनके प्रपौत्र श्री डालचन्द सिंघी (१८७०-१९२७) जूट बेलर्श एसोसियेशन के प्रथम अध्यक्ष चुने गए। गंगाशहर के श्री भेरूंदानजी चोपड़ा इनके यहाँ मुनीम थे। इन्हें बाद में फर्म में साझीदार बना लिया गया। चौथे दशक में फर्म का बँटवारा हो गया। मुर्शीदाबादी फर्मों का ज्यादा ध्यान जमींदारी पर था अतः शनैः शनैः वे व्यापार से हटते गये।

पटसन के व्यवसाय में किसी समय लाडनूँ सुजानगढ़ एवं बीदासर के व्यवसायियों की प्रधानता थी। लाडनूँ के भूतोड़ियों ने उन्नीसवीं शदी के प्रारम्भ में मुर्शिदाबाद के ओसवाल श्रेष्ठियों के सहयोग से बर्दवान में अपना प्रभाव जमा लिया। लाडनूँ के ही श्री जीवनमल जी बैंगानी ने पटसन के व्यापार में खूब उन्नति की। उन्होंने सन् १९०० के आसपास 'जीवनमल चाँदमल' फर्म स्थापित की। ये पहले ओसवाल श्रेष्ठि माने जाते हैं जिनके पास एक करोड़ से अधिक सम्पत्ति थी, पूरा जूट बाजार इनकी मिल्कियत था एवं अपनी प्रेस थी। पटसन के व्यवसाय में लाडनूँ के बैद भी प्रमुख थे। सुजानगढ़ के सिंघी परिवार की पटसन बाजार में अच्छी धाक थी। सन् १९०६ में इनकी फर्म जेसराज गिरधारीलाल ने बीस लाख रुपए का कारोबार किया।

कपड़े के व्यवसाय एवं आयात में सरदाशहर की ओसवाल फर्म 'चैनरूप सम्पतराम' प्रमुख थी। उन्नीसवीं शदी के मध्य् में श्री चैनरूप जी दूगड़ कलकत्ता आए। विदेशों से कपड़े का सीधा आयात करने वाली यह प्रथम फर्म थी। बाजार में इनकी बड़ी साख थी। सम्पतराम जी देश में ही रहने लगे और व्यापार मुनीमों के माध्यम से होने लगा। बीकानेर के प्रमुख एजेंट श्री बहादुरमल जी रामपुरिया ने सन् १८८३ में अपनी निजी फर्म 'हजारीमल हीरालाल' स्थापित की। प्रथम युद्ध के बाद इन्होंने सूती कपड़े की मिल खरीदी। इस तरह ये प्रथम ओसवाल उद्योगपति बने। सरदार शहर के ही श्री ताराचन्द सेठिया सन् १८७० में कलकत्ता आए। उन्होंने पहले कपड़े का बाद में पटसन का व्यापार किया। चूरू के सेठ रुक्मानन्दजी ने कलकत्ता आकर सन् १८३६ में 'रुक्मानन्द वृद्धिचन्द' फर्म स्थापित की। सन् १९०५ तक इस फर्म की शाखाऐं बम्बई, रंगून, भिवानी, अहमदाबाद आदि प्रमुख स्थानों में खोल दी गई। ये नेनसुख कपड़े के प्रमुख व्यापारी थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अजमेर के लोढ़ा परिवार एवं बीकानेर के ढ़ढ़ा परिवार की बैंकिंग फर्में भी कलकत्ता की नामी फर्मों में से थी। जवाहरात के व्यापार में रायबहादुर सेठ बद्रीदास मुकीम एवं जौहरी खानदान का वर्चस्व रहा।

आसाम प्रवसन

आसाम के विकास में मारवाड़ी जाति का प्रमुख हाथ माना जाता है। आसाम में जो बड़ी बस्तियाँ या नगर आबाद हैं उन सबका श्रेय मारवाड़ियों को ही है। यहाँ के समस्त व्यापार और उद्योग-धन्धे उन्हीं की देन है। यहाँ के मूल निवासी गारू, राभा, खसिया, जयन्तिया आदि बड़े भोले और अनपढ़ होते थे। जैनशास्त्रों में आज से दो हजार वर्ष पूर्व जैनाचार्य कालक का इसी स्थल मार्ग से बर्मा जाने का उल्लेख मिलता है। किंवदन्ती स्वरूप कालियापुर की कामिनी प्रसिद्ध है। लोककथाओं में कामरूप की औरतों के वशीकरण सम्बन्धी अनेक किस्से सुनने को मिलते हैं जो इस प्रदेश में जाने वाले प्रवासी को दिन में भेड़ा और रात में पुरुष बना कर रख लेती थी। शायद इन स्थानों से जल्दी स्वदेश लौटना तब सम्भव भी नहीं था- इसीलिए ऐसे किस्से प्रचलित हो गए।

शुरु शुरु में आसाम जाने वाले प्रवासियों को बड़ी कठिनाईयों का सामना करना पड़ता था। समस्त प्रदेश मच्छरों एवं विषाक्त जन्तुओं से परिपूर्ण था। वायुमण्डल ही रोगाक्रांत था। बैलगाड़ियों एवं नौकाओं में बैठकर यात्रा करनी पड़ती थी। भाषा की कठिनाई भी थी। जगह जगह घनी बरसात की वजह से दलदल हो जाते थे। उन्हें पार करते खून चूसने वाली जोकों का सदैव खतरा बना रहता। लोगों को नमक की पुड़िया सदैव साथ रखनी पड़ती थी। दो सौ वर्ष पूर्व सिक्के का भी इतना प्रचलन न था। नमक का अभाव था। देहात के आदिवासी सरसों, कलाई आदि के बदले नमक ले जाते। एक बार तो नमक सौ रुपए मन हो गया था। अधिकांश घर बांसों के ही बनते थे जिन पर मिट्टी से लेप कर दिया जाता। बाद में टिनों का चलन हुआ। प्रवासी लोग भी बांसों के गोदाम और बासों से काम चलाते। खाने को दाल-भात और खिचड़ी ही थी, गेहूँ तो दुष्प्राप्य था।

परन्तु आदिवासी लोग मारवाड़ी साहूकारों का बड़ा सम्मान करते। कहते हैं जयन्तिया की पहाड़ी स्त्रियों के स्तनों में दूध विपुल परिमाण में होता है। किसी मेहमान के आने पर वे अपने स्तन का दूध निकाल कर चाय बनाती और मेहमान को प्रस्तुत कर आतिथ्य करती। पहाड़ी लोग स्वभाव से भोले होते थे। उनके इस भोलेपन का बेजा फायदा मुसलमानों ने उठाया। उन दिनों बंगाल की सीमा से लगे मुसलमान जबरदस्ती पहाड़ी लड़कियों को पकड़ ले जाते। पहाड़ी लोग उसे 'छूआ' (काम की नहीं रही) मान कर छोड़ देते। मुसलमानों ने इस रूढ़ि प्रथा का लाभ उठाया, एक एक मियां दस-दस लड़कियाँ छू कर रख लेता। पहाड़िनें काम-काज में मजबूत होती थी, मुफ्त की सेविकाऐं हो गई। उनकी सन्तानों से मुसलमानों की संख्या बहुत बढ़ गई।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में मुर्शिदाबाद के ओसवाल महाजनों ने इस क्षेत्र में अपना प्रभुत्व जमाया। उनकी इस प्रदेश में सर्वत्र दूकाने थी जो 'गोला' नाम से प्रसिद्ध थी। आदिवासी हाथी दाँत, गेंडे की खाल आदि बहुमूल्य वस्तुऐं सामान्य खाद्यान्नों एवं कपड़े के बदले बेच जाते। बंगाली और आसामी कारिन्दे रहते जिन्हे 'सरकार' कहा जाता था। ये लोग उगाही करने में निष्णात होते थे। ब्रिटिश सरकार और स्थानीय जमींदार भी ओसवाल महाजनों का बड़ा सम्मान करते थे। पंच पंचायती, कचहरी आदि में इनकी प्रामाणिकता को चुनौती नहीं दी जाती थी।

इस क्षेत्र में सर्वप्रथम स्थापित होने वाली प्रमुख ओसवाल फर्म कोठारी खानदान के 'महासिंहराय मेघराज बहादुर' की थी। महासिंहराय जी बीकानेर के निकट घरटसर (गेरसर) के थे। इनके पूर्वज कभी जोधपुर व जैसलमेर राज्यों के दीवान थे। कहते हैं महासिंराय जी को घरटसर का अपना मकान बंधक रख कर परदेश आना पड़ा था। वे सन् १८१२ में अजीम गंज आए। सन् १८१८ के आस-पास मुर्शिदाबाद के प्रसिद्ध गोलेछा परिवार के मुनीम बन कर वे गोआल पाड़ा आए। उन्होंने अपने छोटे भाईयों को वहाँ अनाज और अफीम का व्यापार शुरू कराया एवं 'महासिंहराय मेघराज' फर्म की स्थापना की। जल्दी ही फर्म ने खूब उन्नति की। सरकार से इन्होंनें जंगल प्रदेश की बहुमूल्य हाथी दाँत, गेंडे की खाल आदि वस्तुऐं खरीदने के लाइसेंस भी प्राप्त कर लिए। अंग्रेजों से आसाम की सम्पूर्ण अफीम खरीदने का एकाधिकार इन्हें प्राप्त हो गया। फर्म की कलकत्ता शाखा की स्थापना उन्नीसवीं सदी के तीसरे दशक में हुई। चरमोत्कर्ष के समय फर्म की ८२ शाखाऐं थी। इनकी दुकानें 'बड़ा गोला' के नाम से प्रसिद्ध थी। सन् १८६० तक इन्होंनें डिब्रूगढ़ तक के इलाके में अपना कारोबार फैला लिया। चाय बगानों को ऋण देना शुरू किया। महासिंहजी के पुत्र मेघराज ने नई-नई जगहों पर शाखाऐं स्थापित कर फर्म की बहुत उन्नति की।

इस फर्म के सहयोग से ओसवालों की अन्य अनेक फर्मों ने आसाम में पावँ जमाए। सन् १८९१ की जनगणना के अनुसार ओसवालों की कुल १३५२ फर्में यहाँ स्थापित हो चुकी थी। सन् १९०१ की जनगणना के अनुसार कुल मारवाड़ी प्रवासियों की संख्या ९००० थी। सन् १९३१ तक यहीं संख्या २२००० तक पहुँच गई। इस तरह बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक ओसवाल आसाम प्रदेश के प्रमुख व्यवसायियों में गिने जाने लगे।

(५) विदेशों में ओसवाल

विदेशों में बसे ओसवालों का भी एक लम्बा इतिहास हैं। यों तो धर्म-प्रभावना एवं वाणिज्य के निमित्त पश्चिमी एवं पूर्वी देशों का भ्रमण करने वाले अनेक ओसवाल श्रेष्ठियों के उल्लेख ग्रंथों एवं विरुदावलियों में उपलब्ध हैं एवं इस ग्रंथ में अन्यत्र यथास्थान अंकित किए गए हैं, परन्तु वहाँ जाकर बस गए ओसवालों के उल्लेख नाम मात्र के हैं।

भारतीय आर्हत सभ्यता के जितने पुराने चिह्न तुर्किस्तान में मिले हैं उतने स्वयं भारत में भी नहीं। ("मध्य एशिया और पंजाब में जैनधर्म"— लेखक पं. हीरालाल दूगड़ १९७९) इस्ताम्बूल से ५७० कोस पर १७ वीं शदी तक बड़े विशाल जैन मन्दिरों, पौषध शालाओं, उपाश्रयों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की विद्यामानता का वहाँ की यात्रा पर गए भारतीय यात्रियों के विवरण से पता चलता है। ऐसे विवरणयुक्त ठाकुर बुलाकीदास का राजस्थानी भाषा में सन् १६८३ का लिखा एक पत्र दिल्ली के 'शांतिनाथ मन्दिर' के शास्त्रभंडार में उपलब्ध है। चीनी यात्री ह्वेन सांग ने (६८६ A. D.) कपिश देश के अपने यात्रा विवरणों में निर्ग्रंथ जैन मुनियों का उल्लेख किया है। तिजारा (राज-स्थान) के जैन शास्त्रभंडार में सुरक्षित दिगम्बर मतावलम्बी लामची दास गोलारे द्वारा लिखित वि. स. १८०६ के यात्रा विवरण के अनुसार चीन के गिरगम प्रदेश में तीर्थंकर की प्रतिमाओं की पूजा होती थी एवं कोचीन प्रदेश में आमेढ़ना जाति के जैनियों का वास था। खास चीन (पीकिवन) में तुनावारे एवं जांगड़ा जाति के लोग अब भी रहते हैं एवं वहाँ ३०० जैन मंदिर हैं। कौरिया में पातके घघेलवाल, बाघानारे जाति के जैनी निवास करते हैं। तिब्बत में सोनावारे जाति एवं उसके एक प्रदेश मुगांर में बाघानारे जाति के जैनियों के ८००० घर हैं एवं वहाँ हजारों जैन मन्दिर हैं। तिब्बत के एरूल नगर में मावरे एवं सोहना जाति के जैनी हैं। यहाँ भी मन्दिरों की संख्या हजारों में है। तिब्बत चीन की सीमा पर हनुवर प्रदेश में दस-दस कोस पर जैनी एवं जैन मंदिर हैं। तातार देश में पातके एवं घघेलवाल जाति के जैनी हैं। वहाँ भी अनेक जैन मंदिर हैं। उक्त जातियों में से अनेक ओसवाल वंश की शाखाऐं हैं।

२० वीं शताब्दी में विलायत (इंग्लैण्ड) एवं अन्य यूरोपीय देशों में व्यापार या उच्च शिक्षा के निमित्त जाकर वहीं बस जाने, वहाँ की नागरिकता प्राप्त कर लेने अथवा उसे अपना दूसरा आवासीय देश बना लेने के उदाहरण प्रचुर हैं। गुजरात से दक्षिणी अफ्रीका के लिए प्रस्थान करने वालों को किस तरह सामाजिक भर्त्सना सहनी पड़ती थी इसका जिक्र महात्मा गांधी ने अपनी आत्मकथा में किया है। बंगाल से इंग्लैण्ड जाने वाले दूधोड़िया एवं नाहटा बंधुओं को आचारभ्रष्ट कह कर जाति बहिष्कृत करने से वि. सं. १९४६ में उठे देशी-विलायती बवण्डर की चपेट में सारा समाज ही आ गया था। हाँला कि अन्ततः उसकी परिणति स्वरूप विलायत जाने को प्रगति का एक चरण ही मान लिया गया।

सर्व प्रथम इंग्लैण्ड की यात्रा करने वाले ओसवाल श्रेष्ठि संभवतः मुर्शिदाबाद के श्री इन्दरचन्द जी दूधोड़िया एवं श्री इन्दरचन्द जी नाहटा ही थे। ऐसे उल्लेख मिलते हैं कि वे सन् १८८९ में पानी के जहाज से यात्रा आरम्भ करने जब बम्बई गए तो वहाँ के श्रेष्ठि वृन्द श्री पूनमचन्द जौहरी (जवंरी) एवं श्री प्रेमचन्द रायचन्द ने समस्त श्रीसंघ (ओसवाल पंचायत) की नुमाइन्दगी करते हुए उन्हें समझाने एवं रोकने की कोशिश की थी। अन्यान्य जातियों-महेश्वरी, ब्राह्मण, अग्रवाल, सरावगी, खत्री एवं बंगाली कौमों ने भी उनके विलायत जाने का पुरजोर विरोध किया था।

धीरे-धीरे समय की प्रगति के साथ सभी विरोध निरस्त हो गये एवं विलायत प्रवास सामान्य हो गया। वहाँ जाकर व्यापार स्थापित करने में सुजानगढ़ का सेठिया परिवार भी अग्रणी रहा। सेठ हनूतमल जी सेठिया के सुपुत्र श्री खूबचन्द जी सेठिया वहीं जाकर बस गये। उन्होंने वहाँ की नागरिकता भी स्वीकार कर ली। उनके बाद तो अनेक ओसवाल वहाँ जाकर बसे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बीसवीं शदी के शुरू में अफ्रीका जाकर बसने वाले लोगों में कच्छ/गुजरात के हलारी बीसा ओसवाल प्रमुख थे। राजस्थान से कच्छ एवं कच्छ से करीब ४५० वर्ष पूर्व जब जाम रावल ने स्थानीय जेठवा को पछाड़ कर 'जामनगर' की स्थापना की (संवत् १५९७) तो कुछ ओसवाल श्रेष्ठि नवानगर स्टेट के हलारी तालुके में आकर बसे। कच्छ से प्रवसित हो मुम्बई प्रदेश में बसने वाले कच्छी बीसा ओसवालों ने बहुत तरक्की की। किन्तु हलारी में प्रवसित लोगों ने कोई प्रगति नहीं की। जब ब्रिटिश राजसत्ता के मातहत पूर्वी अफ्रीका के द्वार खुले तो सरकार ने वहाँ एक रेल लाईन बिछाने के लिए पंजाब, कच्छ व गुजरात से हजारों कारीगरों को ले जाकर वहाँ बसाया। धन्धे की प्रत्याशा में संवत् १९५६ में सर्व प्रथम तीन हालारी ओसवाल भी साहस करके मोम्बासा गए। संवत् १९५७ के शुरू होते होते अनेक हलारी बीसा ओसवाल धन्धों की तलाश में केनिया, युगांडा और टेंगानियाका जाकर बसे। ओसवालों के अतिरिक्त काठियावाड़ के लोहाणा महाजन (हिन्दू) और खोजा (मुस्लिम) भी बड़ी संख्या में अफ्रीका गए। प्रथम महायुद्ध (सन् १९१४-१८) के समाप्त होते-होते तो वहाँ प्रवसित होने वालों की लाइन लग गई।

केनिया या अन्य अफ्रीकी प्रदेशों में बसे ओसवालों ने वहाँ एक दूसरे के सहयोग से अच्छी तरक्की की। जल्द ही उन्होंने वहाँ व्यवसाय व उद्योग स्थापित कर समृद्धि हासिल की। कालान्तर में नये धन्धों की तलाश में उनमें से अनेक ब्रिटेन, कनाडा व अमरीका जाकर बस गये। वर्तमान में पूर्वी अफ्रीका में बसे हलारी ओसवालों की संख्या १९०००, ब्रिटेन में १७०००, अमरीका-कनाडा में २००० करीब है।

इन हलारी ओसवालों में शाह एवं सेठ घराने के बीसा ओसवाल प्रमुख थे। इनमें से एक श्री मेघ जी पेथराज शाह भी थे। किस तरह आठ रुपए माहवार पाने वाले ग्रामीण अध्यापक से मेघजी भाई ने करोड़ो पाउंड (एक पाउंड की वर्तमान कीमत करीब चालीस रुपए है) की सम्पत्ति अर्जित की, यह बड़ी रोचक कहानी है। उनके जीवन प्रसंग ग्रंथ में अन्यत्र दिए जा रहे हैं।

इसी तरह संवत् १९५७ के आस-पास श्री पूनमचन्द शाह रेलवे बिल्डर की हैसियत से केनिया गए। संवत् १९७५ में जामनगर में जन्में उनके सुपुत्र श्री कांतिलाल शाह संवत् १९७८ में केनिया आए एवं जल्दी ही वहाँ के स्वतंत्रता-युद्ध में अग्रणी बन गये। केनिया के जननायक जोमो केनयात्ता के वे राजनैतिक सलाहकार रहे। जब अन्य भारतीय व्यापारी अंग्रेज सरकार का दामन थामे हुए थे श्री पूनमचन्द शाह अपने समस्त कारोबार को तिलाञ्जली दे, अफ्रीका के स्वतंत्रता अभियान से जुड़ गए। वे अफ्रीकी जनता के साथ कंधा से कंधा मिलाकर ब्रिटिश सरकार से लड़े। उन्होंने वहाँ प्रवासी भारतीयों को संगठित किया एवं बीसा ओसवाल समाज, ओसवाल शिक्षण एवं सहकारी बोर्ड आदि संस्थाओं की स्थापना की। श्री शाह ने स्कूली शिक्षण में रंगभेद की नीति का डटकर विरोध किया। वे अफ्रीका में महात्मा गांधी के अहिंसात्मक सत्याग्रह के वाहक बने। इसके लिए उन्हें यातना भी सहनी पड़ी। संवत् २०१८ में वे केनिया की धारा सभा के सदस्य निर्वाचित हुए। वे संवत् २०१७ से ही "केनिया फ्रीडम पार्टी" के महामंत्री रहे। संवत् २०२० में इस संस्था का "केनिया अफ्रीकन नेशनल यूनियन" (KANU) में विल-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

यन हो गया। श्री शाह संवत् २०२० से २०२४ तक KANU की नैरोबी शाखा के कोषाध्यक्ष रहे। जब केनिया स्वतंत्र हुआ तो उन्होंने ब्रिटिश नागरिकता का मोह त्याग कर केनिया की राष्ट्रीयता एवं नागरिकता स्वीकार की। केनिया में रहते हुए उन्होंने अपने व्यापार का विस्तार किया एवं लन्दन में शाखा स्थापित की। अब वे अधिकांशतः लन्दन ही रहते हैं। समय के साथ चलते हुए नाना जीवनोपयोगी विषयों पर पत्र-पत्रिकाओं को अपनी रचनाओं एवं सन्देशों की महक से भरते रहते हैं।

विगत ६/७ वर्षों में अमरीका और कनाडा वासी ओसवाल परिवारों में परस्पर मैत्री एवं सम्पर्क हेतु जगह-जगह सामाजिक एवं धार्मिक संगठन बने हैं जो उनके सांस्कृतिक समुत्थान के लिए सचेष्ट हैं। इन संगठनों का आधार भी जैन धर्म बना है हालाँकि संगठनों के कार्य-कलाप मात्र धर्म प्रसार तक सीमित नहीं हैं, वे रचनात्मक प्रवृत्तियों के माध्यम से प्रवासी परिवारों में सामाजिक संवाद *निर्मित करने में सफल* हुए हैं। "फेडरेशन ऑफ जैन एशोसियेशन्स इन नार्थ अमेरिका" ने तो श्री एस. ए. बी. कुमार के सम्पादन में "जैन डाईजेस्ट" नाम से एक त्रैमासिक समाचार पत्रिका का प्रकाशन शुरू किया है जो दुनिया भर में फैले बंधुओं को नजदीक लाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। "जैन सेंटर आफ ग्रेटरबोस्टन" ने डा. विनय जैन और वसन्त एफ. गाँधी के संयोजन से 'जैन डायरेक्टरी १९८७' प्रकाशित की है जिसमें प्रवासी ३००० ओसवाल जैन परिवारों का वर्गीकृत विवरण प्रकाशित हुआ है। इस निर्देशिका की समीक्षा से बड़े दिलचस्प तथ्य उजागर होते हैं। प्रवासी परिवारों में ३७.५ प्रतिशत यानि एक-तिहाई से अधिक इंजीनियर हैं एवं हर पाँच में से एक डाक्टर हैं। भारत से "ब्रेन ड्रेन" की जो बात प्रचारित हुई है वह ओसवालों के संदर्भ में तो सत्य प्रतीत होती है। प्रान्तवार गुज़रात के ४१ प्रतिशत और महाराष्ट्र के ३७.७ प्रतिशत प्रवासी है। ओसवाल गोत्रों में सर्वाधिक गुजरात के 'शाह' हैं, अधिकांश अपना मुख्य गोत्र लिखने की बजाय 'जैन' लिखना अधिक पसंद करते हैं। नीचे दी जा रही सारणी इन सारे तथ्यों पर विस्तृत प्रकाश डालती है —

व्यवसाय	प्रतिशत	मूल प्रांत	प्रतिशत	गोत्र	प्रतिशत
इंजीनियर	३७.५	गुजरात	४१.०	शाह	३४.८
चिकित्सा	१९.५	महाराष्ट्र	३७.७	जैन	११.६
स्वतंत्र	१२.५	दिल्ली	०५.२	मेहता	०७.५
साहूकारी	०९.९	राजस्थान	०४.३	डोसी	०३.४
छात्र	०७.२	मध्यप्रदेश	०२.८	सेठ	०२.३
प्रशासन	०४.४	प. बंगाल	०१.८	पटेल	०१.९
अन्य	०९.०	पंजाब	०१.४	पारेख	०१.८
		कर्नाटक	००.५	वोरा	०१.५
		हरियाणा	००.४	कोठारी	०१.५
				गांधी	०१.४

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

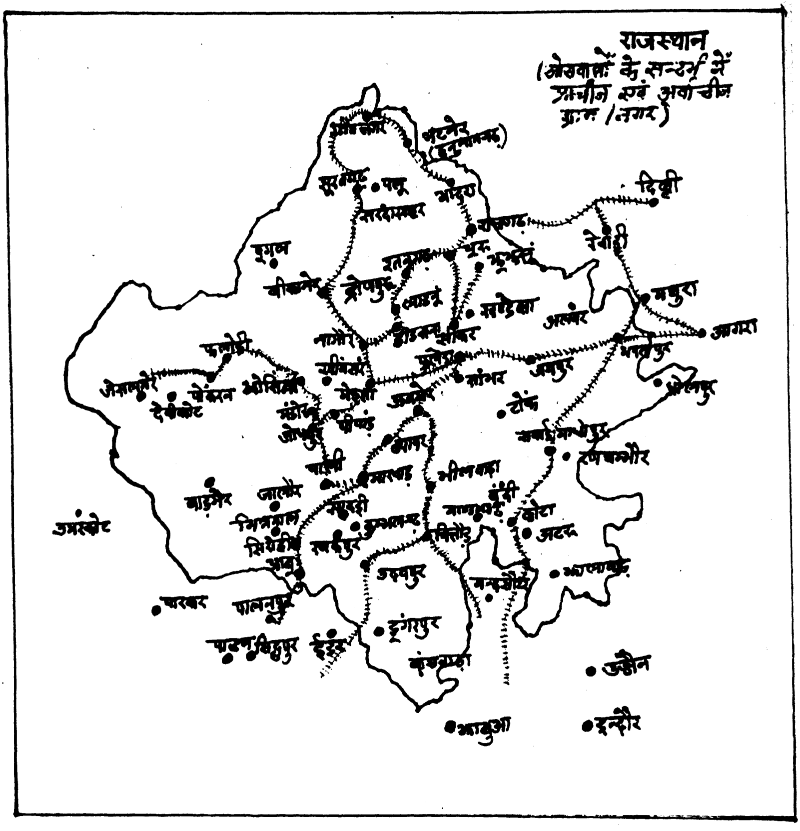

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय

चतुर्दश

ओसवाल-गोत्रों का इतिहास

ग्रंथ के प्रथम खण्ड के 'गोत्र विकास' प्रकरण में ओसवाल गोत्रों के विकास पर एक विहंगम दृष्टि डाली गई थी। वस्तुतः ओसवाल समाज इतना वृहद् है एवं उसके गोत्र इतने विभिन्न कि सामान्य परिचय एवं बंधुत्वबोध के लिए ओसवाल जाति का इतिहास नाकाफी हो जाता है। अलग-अलग गोत्रों का अपना इतिहास गोत्र-गत पहचान के लिए आवश्यक है।

वैसे भी ओसवाल गोत्रों का उद्गम कोई एक गंगोत्री नहीं है। कालापेक्षा से भी वे इतने भिन्न हैं कि समस्त गोत्रों को एक वितान तले समाहित नहीं किया जा सकता। एक ही गोत्र के बारे में उद्गम विषयक अवधारणाऐं परस्पर इतनी विपरीत हैं कि उनमें कोई तालमेल नहीं बैठता एवं वास्तविकता क्या है यह तय कर पाना मुश्किल हो जाता है। किन्तु किसी भी तथ्य या उल्लेख को सम्पूर्ण नकारना बड़े से बड़े विद्वान् के लिए भी सम्भव नहीं हो पाता।

'ओसवाल जाति की उत्पति का काल-निर्णय' प्रकरण में प्राचीन ग्रंथों एवं स्पष्ट साक्ष्यों के अभाव को रेखांकित किया जा चुका है। उपलब्ध सामग्री के आधार पर ही विभिन्न गोत्रों के अति प्राचीन होने के उल्लेख तो मिलते हैं परन्तु उनका पूर्व इतिहास काल के गर्भ में छुपा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रह गया। अतः उनका अर्वाचीन इतिहास संजों कर संतोष करना पड़ा है। मध्य काल में विभिन्न जैन सम्प्रदायों द्वारा जैन-धर्मानुगतों के नये गोत्र स्थापित करने के उल्लेख मिलते हैं। सम्भव है यह धर्म परिवर्तन ही नया था, गोत्र नामकरण नया नहीं एवं अनेक गोत्र नामों के हेतु विषयक अटकलें ही नई है, गोत्र की प्राचीनता संदिग्ध नहीं। अस्तु, विक्रम संवत् से ४०० वर्ष पूर्व क्षत्रियों से निःसृत गोत्रों एवं विक्रम की दसवीं सदी पश्चात् राजपूतों से निःसृत गोत्रों-दोनों के ही विवरण अधूरे हैं।

(१) क्षत्रियों से निःसृत ओसवाल गोत्र

१. श्रेष्ठि	१३. कुम्भट
२. बैद	१४. सिंधी बलदौटा
३. मेहता/मूंथा	१५. बदलौटा
४. झाबक/झम्मड़/झंबक	१६. राज कोष्ठागार/ राय कोठारी
५. जम्मड़	१७. कावड़िया
६. बहुफणा/बाफणा/बापना	१८. तातेड़
७. नाहटा	१९. बिनायकिया
८. पटवा	२०. गांधी
९. कोटेचा/कोचेटा	२१. गंधिया
१०. बेताल	२२. गांधी मेहता
११. सामर/साम्भर	२३. राय गांधी
१२. चतुर साम्भर	

श्रेष्ठि/वैद्य/बैद/मेहता/मूंथा:

वेद गोत्र का सीधा सम्बन्ध ओसिया बसाने वाले राजा उत्पलदेव से माना जाता है। जब आ. रत्नप्रभ सूरि ने उन्हें जैन धर्म अंगीकार करवा कर महाजन वंश में सम्मिलित किया तो उनका श्रेष्ठि गोत्र निर्धारित हुआ।

महाजन वंश मुक्तावली में वेद श्रेष्ठि गोत्र को ओसवालों का प्रथम गोत्र माना है। ओसवाल जाति के आदि पुरुष उत्पलदेव क्षत्रिय थे। उनके पूर्वजों की २७ पीढ़ियों के नाम इन्होंने दिए हैं-प्रथम पुरुष धूम और २७वें भीमसेन हुए जिन्होंने भीनमाल बसाया। भीमसेन के पुत्र उत्पलदेव ने ओसिया बसाई और आ० रत्नप्रभ सूरि से जैन-धर्म अंगीकार कर महाजन वंश की स्थापना की जो आगे चल कर ओसवाल कहलाए। इनका श्रेष्ठि गोत्र निर्धारित हुआ। इनकी ७१वीं पीढ़ी में (संवत् १२०१ में) दूल्हा हुए जो वैद्यगी करते थे। चित्तौड़ के राजा भीमसी की

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रानी के आंख में आक का दूध गिर गया तो दूल्हा को बुलाया गया। आ० जिनदत्त सूरि जी के प्रताप से दूल्हा ने रानी की आंख अच्छी कर दी। तब राणा ने उन्हें वैद्य की पदवी दी। यहां से इनका मूल श्रेष्ठि गोत्र बदला और वैद कहलाने लगे। इनकी ८२वीं पीढ़ी में लाखण सी राव बीकाजी के साथ बीकानेर आए। उनके भाई जैतसी जी के वंशज फलौदी बसते हैं। गोत्र की सम्पूर्ण वंशावली यहां दी जा रही है।

श्रेष्ठि/बैद गोत्र की वंशावली

१. धूम	२२. सेणपाल	४३. सनखत्त
२. अगन	२३. आसधर	४४. जीवचन्द
३. धीर	२४. महीधर	४५. वेलराज
४. रावसी	२५. शिवधर	४६. आसधर
५. धांधू	२६. विक्रमसेण	४७. उदयसी
६. बीसल	२७. **भीमसेण**	४८. मलसी
७. आसाम	२८. **उपलदेव**	५०. नरभ्रम
८. सोमदेव	२९. भृगुनरेश	५१. श्रवण
९. सोढ़ल	३०. चक्रवर्त्त	५२. समरसी
१०. भोमदेव	३१. पालदेव	५३. सावंतसी
११. नरदेव	३२. जोगीण	५४. सहजपाल
१२. समरसेण	३३. कोगुर	५५. राजसी
१३. सुखसेण	३४. समरसी	५६. मानसी
१४. गोदवनराज	३५. सुखमल	५७. उदयसी
१५. अचलसेण	३६. सालो	५८. विमलसी
१६. कर्मसेण	३७. समरथ	५९. नरसी
१७. कँवरसेण	३८. करमण	६०. हरसी
१८. बोहसेण	३९. बोहत्थ	६१. इरराज
१९. वीरधवल	४०. वीरधवल	६२. धनराज
२०. देवसेण	४१. पुन्यपाल	६३. पेमराज
२१. सनखत्त	४२. देवराज	६४. धानसी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

६५. वैरसी	७८. देल्हो	९१. उदयभाण
६६. **करमसी**	७९. केल्हणसी	९२. दौलतराम
६७. धरमसी	८०. त्रिभुवनसी	९३. माणकचन्द
६८. पुनसी	८१. सादूलसी	९४. घमंडसी
६९. मानसी	८२. **लालोजी**	९५. मूलचन्द
७०. देवदत्त	८३. श्रीमतंजी	९६. **आवड्दान**
७१. **दुलहा**	८४. अमराजी	९७. अमोलख
७२. वर्धमान	८५. सीमाजी	९८. हरीसिंह
७३. सच्चा	८६. **जीवणदास**	९९. किशनसिंह
७४. सहदेव	८७. ठाकरसी	१००. शेर सिंह
७५. जसवीर	८८. राजसी	(महाजन वंश मुक्तावली"
७६. मोहल	८९. आसकरण	से साभार उद्धृत)
७७. माणकसी	९०. रामचन्द	

उक्त वंशावली भाटो एवं गुरुओं की बहियों से ली गई है। इसे सर्वथा प्रामाणिक न मानते हुए भी शोधार्थ एक अवलम्ब माना जा सकता है। कुछ नाम अवश्य ही पौराणिक है जैसे धूम, अगन आदि। दूल्हा (७१) विक्रम संवत् १२०१ में हुए। उनसे भीमसेण एवं उपलदेव (२७/२८) का अन्तर ४६ पीढ़ियों का पड़ता है। तीस वर्ष का पीढी-अन्तर मान कर यह १३८० वर्षों का अन्तराल ओसवाल-उत्पति को विक्रम संवत् से १८० वर्ष पूर्व ले जाता हैं-जो शास्त्रीय मान्यता को पुष्ट करता है।

राज्य के शासन से घनिष्ट सम्बन्ध होने के कारण इनके वंशजों के साथ मेहता शब्द जोड़ा जाने लगा। कालांतर में इसी का अपभ्रंश वेद मूथा हुआ।

वेद परिवार में अनेक प्रसिद्ध व्यक्ति हुए हैं। संवत् १४५० में इस वंश के मेहता खींवसी मंडोर के राठोड़ राजा के दीवान थे। एक बार मेवाड़ के महाराणा कुम्भाजी ने आक्रमण कर मंडोवर दखल कर लिया था। उस समय खीसवीं मेहता की बहादुरी और बुद्धिमानी से ही मंडोवर पर पुनः राठोड़ राजा का झण्डा फहराया जा सका था। जोधपुर शहर बसने के समय (संवत् १५१५) से इस खानदान वाले रियासत के ऊंचे-ऊंचे ओहदों पर रहे हैं। खीसवीं जी की ५वीं पुश्त में लखन सी हुए। बीका जी जब बीकानेर बसाने चले तब लाला लखण सी वेद भी उनके साथ थे। बीकानेर नगर के २७ मुहल्लों में से १४ मुहल्ले आपकी देख-रेख में बसाए गए। बाकी बच्छराज जी बच्छावत की देख-रेख में बसे। लखण सी के प्रपौत्र जीवर्नदास जी (यति रामालालजी ने उन्हें लालो जी का प्रपौत्र लिखा है) ने जीवनदेसर गांव बसाया। राजा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रामसिंह के समय जीवनदास जी के पुत्र राज्य के दीवान थे। दक्षिण के युद्धों में विजयश्री दिलाने के उपलक्ष में उन्हें भटनेर (हनुमानगढ़) जागीर स्वरूप मिला। इसी वंश में मेहता ठाकुरसी के पौत्र मूलचन्द जी और अबीरचन्दजी राजा के लिए लड़ते हुए घायल हुए। मेहता मूलचंद जी के पुत्र वेद मेहता हिन्दूमल जी बड़े प्रतिभासम्पन्न एवं मेधावी थे। उन्हें बीकानेर दरबार ने राज्य की तरफ से वकालत के लिए दिल्ली भेजा। आपकी जीवनी ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में अन्यत्र दी गई है। संवत् १८८४ में आपके कार्यों से प्रसन्न हो कर महाराजा ने इन्हें महाराव का खिताब बख्शा। अंग्रेज रेजिडेन्ट, वाइसराय आदि सभी आपका सम्मान करते थे, शिमला दरबार में उन्हें खिल्वत प्रदान की गई। संवत् १९०४ में आपका देहांत हुआ। सन् १९२८ में महाराजा गंगा सिंहजी ने सरहदी मामलों में आपके योगदान को चिरस्मरणीय बनाने के लिए गंगानगर के पास नए बसे सरहदी नगर का नाम हिन्दूमल कोट रखा।

मेहता हिन्दूमल जी के छोटे भाई छोगमल जी भी राज्य की सेवारत रहे। सरहदी झगड़े निबटाने एवं गदर के समय ब्रिटिश सरकार की मदद करने के एवज में संवत्. १९३४ के देहली दरबार के समय आपको खिल्वत बख्शी गई। महाराजा सरदार सिंह ने आपको खुश होकर मोतियों का कंठा अपने गले से उतार कर पहनाया था। संवत्. १९२९ में सरदारसिंह जी की मृत्यु पर महाराजा डूंगरसिंह जी को राजगद्दी पर बैठाने का श्रेय आपको ही है। तात्कालीन अंग्रेज पोलीटिकल एजेन्ट कर्नल जेन ने आपकी बुद्धि चातुर्य की बहुत प्रशंसा की थी। आपको राज्य की ओर से जागीरें प्राप्त हुई। संवत्. १९४८ में आपका स्वर्गवास होने पर स्वयं महाराजा ने आपके घर जाकर संवेदना प्रकट की थी। हिन्दूमल जी के ज्येष्ठ पुत्र हरिसिंह जी संवत्. १९२९ में राज्य के प्रधान मुसाहिब नियुक्त हुए। आपको महाराव की उपाधि, पांव में सोना और हाथी सवारी इनायत हुई थी। इस परिवार के लोगों को विभिन्न पदों पर पुश्तैनी हक प्राप्त था एवं छोटे से बच्चे को पावों में सोना बख्शा हुआ था। महाराव हरिसिंह जी के पुत्र सवाईसिंह जी महाराजा गंगासिंह के समय मिनिस्टर इन वेटिंग रहे एवं राज्य कौंसिल के सदस्य नियुक्त हुए।

रतनगढ़ का वेद परिवार भी उपरोक्त गोत्र में सम्बन्धित है। इनके पूर्वपुरुष बीकानेर से फतहपुर एवं वहां से गोपालपुर आ कर बसे। कहते हैं उस समय गोपालपुर पर इनका एवं वहाँ के ठाकुर का आधा-आधा कब्जा था। वहाँ से थानसिंह जी लालसर आकर बसे। इनके एक पुत्र रतनगढ़ से ३ मील दूर पापली गाँव आ कर रहे। जहाँ से सेठ भीमसिंह जी की पत्नी पति के स्वर्गवास के बाद बच्चों को लेकर रतनगढ़ आ गई। उनके पुत्र मानसिंह जी इस खानदान के पूर्वपुरूष हैं। मानसिंह जी के पौत्र माणकचंद जी हुए। इन्होनें अपने भ्राता बीजराज जी के साथ कलकत्ता में कारोबार प्रारम्भ किया। कलकत्ते में पुरानी फर्म का नाम था माणकचन्द हुकुमचन्द। इससे पूर्व राजलदेसर के प्रसिद्ध बैद फर्म खड़गसिंह लच्छीराम में वे साझीदार थे। संवत् १९२४ में अलग हेकर स्वतन्त्र कारोबार स्थापित किया। माणकचन्द जी के पुत्र सेठ तारा-चन्द्र जी इस परिवार में बड़े योग्य व चतुर व्यापारी हुए। उन्होंने कपड़े का विदेशों से आयात प्रारम्भ किया। उस समय सालाना २० हजार गाँठे आयातित होती थीं। उन्होंने खूब समृद्धि अर्जित की। कलकत्ते के अलावा अन्य-अन्य स्थानों पर इस परिवार के लोग व्यापार करते हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चुरू का वेद परिवार भी उक्त परिवार का ही अंग है। ये गोपालपुरा से रामगढ़ एवं वहाँ से चुरू आकर बसे। इनके परिवार में मेहता तेजसिंह जी बड़े प्रतापी पुरूष थे। जिन्होंने राजा के लिए अनेक लड़ाईयाँ लड़ी। थली प्रान्त में तो कहावत प्रसिद्ध है- "तपियों मुहतो तेजसिंह और मारिया सत्तरखान"। दरबार से उन्हें सोना और रुक्के इनायत हुए। बाद में इनके वंशज व्यापार में लगे और एवं कलकत्ते में संवत्. १९१४ में उदयचन्द पन्नालाल फर्म स्थापित की।

राजलदेसर के वैद परिवार के प्रथम पुरुष दस्सूजी करीब ६५० वर्ष पूर्व जोधपुर से आकर यहाँ से ३ मील दूर बसे। उन्होंने दस्सूसर गाँव बसाया। यह गाँव चारणों को दान स्वरूप दे दिया गया है। यहाँ इनका बनवाया हुआ एक कुआँ अब भी है जिस पर इनका शिलालेख लगा है। यहाँ से राजलदेसर आकर बस गए। इस परिवार में मेहता हरिसिंह जी बड़े प्रतपी पुरुष हुए। वे राजलदेसर के राजा रायसिंह के दीवान थे। एक बार किसी शत्रु ने राजलदेसर पर आक्रमण किया। उस लड़ाई में राजा रायसिंह के पुत्र कुंवर जयमल जी के साथ आप भी जुझार हुए। सर कट कर गिर जाने के बावजूद भी तलवार हाथ में लिए लड़ते रहने को जुझार हुआ कहतें हैं। जहाँ पर आपका सिर गिरा, उस स्थान को आज भी जुझारजी कहतें हैं एवं इस परिवार के लोग उन्हें कुलदेव मानकर पूजते हैं। जिस स्थान पर धड़ गिरा था उसे मूथाथल कहते हैं। उनके अतिरिक्त इस खानदान के मेहता सवाईसिंह जी भी जूंझार हुए थे— जिनकी स्मृति स्वरूप एक चबूतरा बीदासर के रास्ते पर बना हुआ है।

बीकानेर राज्य की नींव पड़ने के बाद राजलदेसर को बीकानेर राज्य में शामिल कर लिया गया। तब से इस वंश के लोग राज्य के विभिन्न पदों पर कार्य करते रहे हैं। इनमें मेहता मनोहरदास जी बड़े प्रसिद्ध हुए। उनके वंशज मनोहरदासोत वैद कहलाते हैं। उनके प्रपौत्र दानसिंहजी मुर्शिदाबाद जाकर बस गए। वहां समृद्धि एवं अच्छी ख्याति अर्जित की। कलकत्ते में "खड़गसिंह लच्छीराम" फर्म संवत्. १९०५ में स्थापित कर चलानी का काम शुरू किया एवं अनेक मुकामों में शाखाएं स्थापित की। इस परिवार के श्री जयचन्दलाल जी ने अपना अलग व्यवसाय जेसराज जयचन्दलाल के नाम से शुरू किया एवं कलकत्ते में जूट बेलिंग का काम शुरू किया। बोगड़ा (सोनातोला) में पाँच गावों की जमींदारी स्थापित करने का श्रेय भी आपको ही है। आपने राजणा में धर्मशाला व कुंड बनवाया। बीकानेर दरबार आपका बहुत सम्मान करते थे। संवत्. १९२३ में दरबार ने आपको साहूकारी का पट्टा इनायत किया एवं १९५६ में छड़ी-चपरास का सम्मान बख्शा। संवत् १९६९ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके सुपुत्र बींजराजजी नगरपालिका के उप सभापति, बीकानेर हाईकोर्ट के जूरी, एवं तेरापंथी सभा एवं स्कूल के उपसभापति, सभापति कई वर्षों तक रहे। इस परिवार के लोग अधिकांश जूट व बैंकिंग व्यवसाय रत हैं, जमींदारी एवं गल्ले के व्यापार में भी हैं। इसी परिवार के सेठ लच्छीराम जी को बीकानेर राज्य की तरफ से साहूकारी का पट्टा इनायत हुआ था, छड़ी व चपरास का सम्मान प्राप्त था। परन्तु एक समय ऐसा भी आया जब इन्हें राजलदेसर छोड़ना पड़ा। लच्छीराम जी बीकानेर के दिवान महाराज हिन्दूमल जी के सम्बंधी थे। महाराजा सरदार सिंह ने हिंन्दूमल जी को दिवान पद से हटा दिया। तभी राज्य में अकाल पड़ा। किसी ने महाराजा को सलाह दी कि सेठ लक्ष्मीराम काफी रकम दे सकते हैं किंतु वे महाराव को दिवान पद से हटा देने से

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रुष्ट है। महाराजा तैश में आ गए। तत्काल लच्छीराम जी को पकड़ कर उनकी अंगुलियों पर कपड़ा बाँध कर आग लगा देने का आदेश दे दिया गया। गुप्तचरों द्वारा खबर लच्छीराम जी तक पहुँच गई। वे राजलदेसर छोड़कर लाडनूँ चले गये। लाडनूँ बीकानेर रियासत से बाहर था। वहाँ संवत् १९२६ में उन्होंने दो विराट हवेलियाँ बनवाई। उधर बीकानेर में पासा पलटा। महाराव फिर से दिवान बना दिए गए। सेंठ साहब भी वापिस राजलदेसर चले गए। लाडनूँ स्थित वे हवेलियाँ तेरापंथ धर्म संघ को समर्पित कर दी गई।

लाडनूँ का वैद परिवार भी उक्त गोत्र का अंग है। इस परिवार में सेठ चिमनी रामजी बैद समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। उस समय चौथी पट्टी 'सोना पट्टी' कहलाती थी। गाँव की गन्दे पानी की नाली चौथी पट्टी होकर बहती थी। एक समय सेठ जी का पाँव नाली पर फिसल गया, धोती कीचड़ से लथपथ हो गई। हवेली से आवाज आई— "माँय पधारो"। सेठ जी ने उत्तर दिया— "माँय तो नाली टूटेली जद ही आँवाला।" विरोधियों ने जाकर लाडनूँ-ठाकुर के कान भर दिए। ठाकुर ने बैद जी से कहलाया— "खबरदार, जो नाली तोड़ने की बात की"। बैद जी तत्काल जोधपुर दरबार में हाजिर हुए। वहाँ निराशा हाथ लगी तो आबू जाकर अंग्रेज रेजिडेन्ट साहब से मिले। उनकी पत्नि को एक लाख रुपए की 'डाली' भेंट की। अन्ततः नाली तोड़ने का हुक्म लेकर आए। साँभर आकर तार किया— "५० गाड़ी और ५०० मजदूर तैयार रखो।" लाडनूँ पहुँचते ही नाली तुड़वा कर मलवे से भरी गाड़ियाँ ठाकुर के गढ़ के आगे खड़ी करवा दी। कहते हैं लाडनूँ के गढ़ में अठ पहलू बंगला नाले के पत्थरों का बना है। ऐसी आन-बान के धनी थे सेठ चिमनीराम जी। इसी परिवार के सेठ जोधराज जी बैद समाज के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में से थे। प्राकृतिक चिकित्सा का समर्थन एवं प्रयोग आपके सतत प्रयत्नों से ग्राह्य बना। आपकी जीवन झांकी ग्रन्थ में अन्यत्र दी जा रही है।

अजमेर का वैद खानदान मूलतः मेड़ता निवासी है— वहां से वे किशनगढ़, कुचामन, बीकानेर आदि स्थानों पर जा बसे। करीब २०० वर्ष पूर्व चन्द्रभानजी का परिवार अजमेर आकर बसा। ये व्यापार कुशल एवं धार्मिक प्रकृति के थे। इन्होंने सिद्धांचल में सदाव्रत खोला। कलकत्ता, हैदराबाद, पूना, इन्दौर आदि अनेक स्थानों पर इनका कारोबार था। इस परिवार के सेठ मेहता गंभीरमल जी ने अस्सी हजार की लागत से पुष्कर सरोवर का घाट बनवाया। लार्ड बेंटिक ने आपकी जनहितकारी कार्यों के लिए प्रशंसा की थी। इनके वंशज मेहता प्रतापमल जी संवत्. १९२३ में जोधपुर में दीवान रह चुके हैं। उन्हें राज्य की ओर से हाथी व सिरोपाव इनायत हुए। इनके पुत्र सौभागमल जी को दरबार की ओर से ३ बार सिरोपाव प्राप्त हुए। आपने प्राचीन पुस्तकों, चित्रों, जेवर, हथियारों आदि का अमूल्य संग्रह किया। इसी खानदान के मेहता रिधकरण जी ने शत्रुञ्जय- गिरनार तीर्थों का संघ निकाला। इस परिवार के मेहता सहस्रकरण जी ने अजमेर में गोड़ी पार्श्वनाथ का मंदिर बनवाया। संवत्. १८९५ में उन्हें जोधपुर राज्य की तरफ से हाथी— पालकी का सम्मान प्राप्त हुआ। संवत्. १९०५ में उन्होंने अनासागर पर घाट और बाग बनवाया।

जयपुर के सेठ गुलाबचन्द जी जौहरी का खानदान संवत् १८०० से यहाँ जवाहरात के व्यवसाय में संलग्न है। ये विदेशों से जवाहरात का आयात भी करते हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सुजानगढ़ के सेठ चतुरभुज नवलचन्द के खानदान का मूल निवास गोपालपुरा था। सेठ हाथीमलजी संवत् १८७५ में यहाँ आकर बसे।

उदयपुर का वैद परिवार भी उक्त परिवार की एक कड़ी है। इनके पूर्वपुरुष मेहता बदनमलजी संवत्.१८९८ में उदयपुर आए। आपने बम्बई, रंगून, हांगकांग, कलकत्ता आदि सुदूर नगरों में अपनी फर्मे स्थापित की एवं राजस्थान के प्रसिद्ध धनिकों में गिने जाते थे। आपने कई जैन मन्दिरों का जीर्णोद्धार करवाया। इनके दत्तक पुत्र मेहता कनकमल जी को महाराणा ने कई सम्मान व जमीनें बख्शी। उदयपुर के मेहता रामसिंह जी बैद के खानदान का पूर्व निवास मेड़ता था।

मद्रास के सेठ मेघराज जी बैद के परिवार का मूल निवास फलौदी था। इस परिवार ने मद्रास में बैंकिंग व्यवसाय में खूब उन्नति की। इनके पूर्व पुरुष मेघराजजी १२५ वर्ष पूर्व मद्रास आए। संवत् १९८५ में आपके परिवार ने ओसिया के मंदिर पर सोने का कलश चढ़ाया था। मद्रास के सेठ रावतमल जी के खानदान का मूल निवास नागौर था।

वेदों के अनेक परिवार जयपुर, मेड़ता, चाँदोरी, अकोला, छिदवाड़ा, आगरा, फलौदी, बरोरा आदि स्थानों पर भी निवास करते हैं।

रतलाम में बसे वेद मेहता खानदान का पूर्व निवास जालौर था। संवत् १७११ में मुगल सम्राट् ने जोधपुर के राजकुमार रतनसिंह को मालवा का एक परगना इनायत किया। राजकुमार के साथ वेद मेहता खानदान के मेहता किशनदास जी यहाँ आए। वे परगने के दिवान नियुक्त हुए।

मद्रास के श्री धनराजजी बैद के परिवार का मूल निवास लश्कर था। वे श्री चम्पालाल जी सावन सुखा के रिश्तेदार थे। चम्पालाल जी नाबालिग थे तभी उनके पिता का देहान्त हो गया। सन् १९०३ में उनके हीरे के व्यवसाय को धनराज जी ने ही आकर सँभाला। मद्रास में उनका निजी व्यवसाय भी था। अपनी ईमानदारी और सूझ-बूझ से उन्होंने दोनों ही फर्मों को खूब समृद्ध किया। वे चारों ओर नेमीचन्द सेठ के नाम से भी जाने जाते थे। दुर्भाग्य से उनकी पत्नि एवं तीन पुत्र पहले ही काल कवलित हो चुके थे। अतः चम्पालालजी पर उनका बहुत प्रेम था। उन्हें जन-हितकारी कार्यों से बड़ा लगाव था। शैक्षणिक संस्थाओं को उन्होंने अनेक आर्थिक अवदान दिए। सन् १९४५ में अचानक उनकी मृत्यु हो गई। सेठ चम्पालाल सावनसुखा ने श्री धनराज जी की वसीयत के अनुसार उनकी समस्त सम्पत्ति का एक ट्रस्ट विभिन्न जन-हितकारी कार्यों के उपयोगार्थ कायम कर दिया जिसके सात लाख रुपए के अवदान से मद्रास में स्थापित 'धनराज बैद जैन कालेज' उन्नति की ओर अग्रसर है।

मद्रास के श्री हजारीमल मूथा के खानदान का मूल निवास बलूंदा था। वे सन् १८५९ में ब्यावर से बंगलौर होते हुए मद्रास आकर बसे एवं बैंकिंग व्यवसाय में समृद्धि हासिल की। इस परिवार के श्री विजय राज जी मूंथा अनेक जन-हितकारी प्रवृत्तियों से सम्बद्ध रहे हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

झाबक/ झंबक/ झामड़/जम्मड़

भाटों की बहियों में इस गोत्र के आदिपुरुष जमसेन जी माने गए हैं उन्हीं के नाम पर गोत्र का नामकरण "जम्मड़" हुआ हो— बहुत सम्भव है।

यति रामलाल जी ने "महाजन वंश मुक्तावली" (१९१०) में "झामड़" गोत्र की उत्पत्ति रतलाम के निकट बसे झबुआ (मालवा) नगर के राजाझंबदे के पुत्रों से बताई है। उक्त कथानक के अनुसार झबुआ नरेश राठौड़ राव चूंड़ाजी के वंशज थे। दिल्ली के बादशाह के हुक्म पर टांटियां भील के उत्पातों को शान्त करने के लिए झबुआ नरेश ने वि.संवत्. १५७५ में (श्री सोहनराज जी भंसाली के अनुसार संवत् १४७५ में) खरतर गच्छीय जैनाचार्य जिनभद्र सूरि से विजयपताका मंत्र लिया एवं सफल हुए। तब से भीलों का इलाका भी झबुआ राज्य में शामिल कर लिया गया। राजा एंव उसके पुत्रों ने जैनधर्म अंगीकार किया एवं आचार्य ने उन्हें महाजन कुल में शामिल कर उनके ३ गोत्र बनाए— झाबक,झामड़,झंबक। यह "झामड़" गौत्र कालान्तर में "जम्मड़" कहलाने लगा हो— यह सम्भव है किन्तु इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है। जम्मड़ इतिहास के दर्पण में "जम्मड़ भवन" (लेखिका- श्रीमती श्रीकंवर जम्मड़— १९८४) में राव सुगनचन्द मुकाम जांगलू (देशनोक) की बही से प्राप्त वंशावली एवं जानकारी के आधार पर जम्मड वंश के आदिपुरुष जमसेन जी का सम्बन्ध ओसवाल जाति के जन्मदाता "उपलदेव" से जोड़ा गया है। इस वंशावली में उपलदेव की १७वीं पीढ़ी में जमसेन जी हुए। उनसे ७ पीढ़ी बाद शंकरपाल जी हुए जो वि. संवत्. ११२१ में ओसिया छोड़कर "आईसर" आ बसे। वि. संवत्. १३०७ में इस कुल के कंवरपाल जी आईसर से मेड़ता आ गये। वि. संवत्.१४०८ में इनकें वंशज नारायणदास जी मेंड़ता से किशनगढ़ आ रहे। वि.संवत्.१६३२ में बीकानेर नरेश रामसिंह जी के समय इनके वंशज पद्मसिंह जी किशनगढ़ से तोलियासर आकर बसे। वि. संवत्. १८९६ में जब सरदार शहर बसना शुरू हुआ तो इनके वंशज खेतसीदास जी तोलियासर से सरदारशहर आकर बस गए। वर्तमान जम्मड़ परिवार खेतसी दास जी की ही सन्तानें हैं। उक्त बही में दी गई वंशावली के अनुसार उपलदेव की ४९वीं पीढ़ी में खेतसीदास जी हुए। उक्त सम्पूर्ण वंशावली वेद श्रेष्ठी गोत्र की वंशावली की तरह ही अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होने के कारण यहाँ दी जा रही है।

जम्मड़ गोत्र की वंशावली

१. **उपलदेव**	६. विक्रमादित्य	११. आलणसिंह
२. कँवरपाल	७. वीषण	१२. रणधवल
३. इन्द्रजीत	८. भोजराज	१३. उदयदीप
४. मामल	९. अजयराज	१४. **जगदेव**
५. गंधर्वसेण	१०. **पालणसिंह**	१५. जसधवल

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

१६. धूंधूमार	३०. रायमल	४४. उदयचन्द
१७. **जमसेन**	३१. भगवानदास	४५. रायसिंह
१८. घायड़राव	३२. **नारायणदास**	४६. सावंतसिंह
१९. वाघराव	३३. जवाहर मल	४७. ठाकुरसिंह
२०. भेरूंसिंह	३४. जीवणदास	४८. **उम्मेदसिंह**
२१. विक्रमपाल	३५. आलमचन्द	४९. **खेतसीदास**
२२. मामल	३६. दशरथपाल	५०. कालूराम
२३. जसधवल	३७. **पद्मसिंह**	५१. मंगलचन्द
२४. **शंकर पाल**	३८. कोचरपाल	५२. मिलापचन्द/रूपचन्द
२५. गणपाल	३९. कवँर पाल	५३. पूनमचन्द
२६. नथमल	४०. मांजल	(राव सुगनचंद मुकाम जांगलू (देशनोक) की बही से प्राप्त श्री कंवर जम्मड़ के ग्रंथ से साभार उद्धृत)
२७. बदनमल	४१. श्यामो	
२८. **कँवरपाल**	४२. हीराचन्द	
२९. कपूरचन्द	४३. प्रेमराज	

उक्त वंशावली का श्रोत भी भाट और कुल गुरुओं की बहियाँ हैं। इसे सर्वथा प्रामाणिक न मानते हुए भी शोधार्थ एक अवलम्ब के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। शंकरपाल (२४) संवत् ११२१ में ओसिया छोड़कर आईसर आ बसे। एक पीढ़ी का अन्तर ३० वर्ष मानकर उक्त उल्लेखानुसार उपलदेव (१) का समय विक्रम संवत् ४०१ आता है एवं जम्मड़ वंश के प्रणेता जमसेन (१७) का समय विक्रम संव् ९१० के लगभग आता है।

खेतसीदास जी के पिता उम्मेदमल जी तोलियासर में खेती-बाड़ी, पशुधन एवं मामूली लेनदेन से आजीविका चलाते थे। जब सरदार शहर बसा तो तोलियासर के अनेक संभ्रान्त महाजन परिवार यथा— सेठिया, नाहटा, दुगड (सेठ चेनरूप सम्पतराम का परिवार) आदि सरदार शहर आकर बसे। उन्हीं के साथ खेतसीदास जम्मड़ भी विक्रम संवत् १८९६ में सरदार शहर आए। यह वह समय था जब व्यवसाय के लिए मारवाड़ी समाज पूर्व भारत की ओर उन्मुख हुआ था। लोटा-डोर लेकर घर से निकलते थे— ६ महीने के कठिन पैदल सफर के बाद बंगाल पहुँचते एवं पुरुषार्थ आजमाते। बारह-बारह वर्षों की मुसाफिरी के बाद घर लौटते। वि. संवत्. १९०८ में सेठ खेतसीदास जी भी कलकत्ता गए वहां मौजीराम खेतसीदास नाम से साझे में वस्त्र व्यवसाय शुरू किया। वि. संवत्. १९२८ में बींजराज जी दूगड़ के साझे. में "खेतसीदास तनसुखदास" फर्म स्थापित की। इस फर्म ने अच्छी उन्नति की। ४० वर्ष तक साझे का कारोबार चलता रहा। वि. १९३६ में खेतसीदास जी का स्वर्गवास हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उनके पुत्र कालूराम जी ने यथावत कार्यभार संभाला। कालूराम जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। विनोद प्रिय एवं धार्मिक विचारों के थे। समाज एवं पंचायत में धाक थी। उस समय विदेश से रैली ब्रादार्स द्वारा आयातित नैनसुख, लंकलाट, वायल एवं ग्राहम कम्पनी के धोती जोड़े खूब चलते थे। मनोहरदास कटले की दूकान कालूराम जी की देखरेख में खूब फली फूली। उनके समय में ही पुत्रों ने अपनी अलग-अलग फर्में स्थापित कर लीं। कालूरामजी बलिष्ठ व्यक्ति थे। चिमटियों से पकड़ कर दो मन की बोरी उठा सकते थे। एक बार तो दो लड़ती घोड़ियों पर काबू पाकर अपने शौर्य का परिचय दिया। सोने में खाद मिलाने के प्रश्न पर सुनारो के विवाद को सुलझाने का श्रेय भी आपको है— आपने आधा आना भर खाद को मान्य ठहराया। तेरापंथ धर्म संघ के प्रति आपकी भक्ति सराहनीय थी। कहते हैं, एक बार बीकानेर से यति जी सरदारशहर आए— उस समय यतिजी के सम्मान में एक संग्रहालय बनाया गया। धर्म संघ के साधु-साध्वियों की सेवा तो होती थी, जनता के लिए आपका औषधालय सर्वदा खुला रहा। आप संगीत एवं नाट्यकला के भी प्रेमी थे।

बिरधीचन्द जी के ज्येष्ठ पुत्र मिलापचन्द जी भी आयुर्वेद निष्णात थे। वे राजस्थान सरकार के पंजीकृत वैद्य बने। कनिष्ठ पुत्र रूपचन्द जी संगीत एवं कला के साधक हैं। लोकगीत एवं लोकनृत्य में विशेष रुचि है एवं त्योहारों पर मनोरंजन कार्यक्रम प्रस्तुत करते रहते हैं।

इस तरह यह खानदान मारवाड़ी व्यापार परम्परा से हट कर अन्य कलाओं से जुड़ा।

जम्मड़ भवन:

जम्मड़ भवन अपने आप में एक ऐतिहासिक धरोहर हैं, राजस्थान की कला पुरातत्व, स्थापत्य एवं संस्कृति का संरक्षक है। इनके संग्रहालय में नाना प्रकार के शस्त्र, अस्त्र, सिक्के, पोशाकें. बर्तन, भांड, तस्वीरें, सजावट का सामान एवं काष्ठ की कलात्मक वस्तुएं हैं, जिनका सौष्ठव, टिकाऊपन और उपयोगिता विलक्षण है। इनके अलावा हालैन्ड का काँच का सामान, चीन के यशव और चाइना क्ले की पाटरी व खिलौने, जापान, जर्मनी, इंग्लैन्ड की गुड़ियों से लेकर विभिन्न प्रकार की मशीनें इस तरह संजोकर सुरक्षित रखी हुई हैं कि उसके रख-रखाव व प्रदर्शन क्षमता पर बड़े-बड़े म्युजियम भी मात खा जाएं।

हवेली स्थापत्य की दृष्टि से भी अनूठी है। वि.संवत्. १९२५ में निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ एवं १९३० में यह विशाल भवन बन कर तैयार हुआ। प्रमुख मिस्त्री के बतौर अमरोजी का नाम लिया जाता है। हर मौसम में अनुकूल आसरों का निर्माण एवं किलेबन्दी जैसी सुरक्षा, इसकी विशिष्टता है। काठ के बड़े-बड़े शहतीरों पर कोरनी और रंगों की छटा देखते ही बनती है। हवेली में समस्त दिवारों एवं छतों पर नयनाभिराम चित्रकारी है जो अब अलभ्य है। आज १०० वर्ष बाद भी उनकी चमक वैसी ही बनी हुई है।

फलौदी के श्री फूलचन्द जी झावक के खानदान का मूल निवास जैसलमेर था। इनके पूर्वज श्री जवरासिंह जी फलौदी आकर बसे। इनकी तीसरी पीढ़ी में जीवराज जी और मानमल जी बड़े नामांकित हुए। आप फलौदी में सर्व प्रथम चौधरी मनोनीत हुए। आज भी यह खानदान

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जिया-माना का परिवार नाम से प्रसिद्ध है। इनके भाई अखेचंद के परिवार वाले मड़िया झाबक कहलाते हैं। इसी खानदान में अचलदास जी झाबक बड़े प्रतापी हुए। जाति सेवा के लिए दरबार ने संवत्. १७५० से १७८७ के बीच इन्हें कई सनदें इनायत की। आपके पुत्र अबीरचन्द जी भी ओसवाल महेश्वरी समाजों में प्रमुख थे। इनकी पुत्री साहु कुंवर सुप्रसिद्ध ढढा तिलोकसी जी को ब्याही गई थी। झाबक रामसिह जी को संवत्. १७३९ में जोधपुर दरबार से परवाना प्राप्त हुआ। इसी परिवार में झाबक फूलचन्द जी बड़े प्रतिभाशाली एवं सुधारक व्यक्ति थे। इतिहास, ज्योतिष, आगम, पुराण आदि विषयों का आपको अच्छा ज्ञान था। आप पंच पंचायती में प्रमुख माने जाते थे। संवत्. १९७९ में बीकानेर के बाईस सम्प्रदाय एवं मन्दिर आम्नाय के झगड़े आपने कुशलतापूर्वक निपटाये। कई स्थानों पर धड़ेबन्दियां समाप्त कराने के लिए आपने अथक प्रयास किया।

इस गोत्र के शिलालेख जेसलमेर, अमरावती आदि स्थानों पर प्राप्त होते हैं।

बापना/बहुफणा/बाफना:

बाफणा गोत्र आचार्य रत्नप्रभ सूरि द्वारा महाजन वंश की स्थापना के समय बनाए गए १८ मूल गोत्रों में से एक हैं। विभिन्न इतिहासकारों ने इस गोत्र की उत्पत्ति के अनेक कथानक दिए हैं। यति रामलालजी के अनुसार कालांतर में स्थापित बाफना गोत्र ओसवाल वंश की उत्पत्ति के समय स्थापित "बाफना" मूल गोत्र से भिन्न है। ये चैत्यवासी सम्प्रदाय के अनुगामी थे। इन्होंने भी आचार्य जिनदत्त सूरि से श्रावक व्रत ग्रहण किया एवं खरतर गच्छानुगामी बने।

ओसवाल कुल के बहु प्रसिद्ध गोत्रों में बहुफणा गोत्र है। यति श्रीपाल चन्द्र जी के अनुसार धारा नगरी का राजा पृथ्वीधर पँवार राजपूत था। उनकी १६वीं पीढ़ी में जोबन और सच्चू-दो राजपूतों नें जांगलू देश फतह कर अपना राज्य स्थापित किया। वि. संवत्. ११७७ में श्री जिनदत्त सूरि ने प्रतिबोध देकर उन्हें जैन बनाया और महाजन वशं में शामिल कर उनका बहुफणा गोत्र निर्धारित किया। खरतर यति रामलालजी ने इस गोत्र की उत्पत्ति सम्बन्धी कथानक को इस प्रकार दिया है— परमार क्षत्रिय राजा पृथ्वीधर मालवा में धारा नगरी पर राज्य करता था। इसकी १६वीं पीढ़ी में जोबन और सच्चू हुए जो धार छोड़कर मारवाड़ आए और जालौर के राजा से भिड़ गए। कन्नौज के राजा जयचन्द ने सहायता दी। जय-पराजय न होने से खरतर आचार्य जिन वल्लभ सूरि के पास आए। आचार्य ने श्रावक धर्म स्वीकार करने की शर्त से उन्हें बहुफणा पार्श्वनाथ का शत्रुंजय मंत्र दिया और उसकी साधना की विधि बताई। एकाग्र मन से साढ़े बारह हजार मंत्र जाप कर विधि अनुसार घोड़े पर सवार हो वे युद्ध में गए। उनको आया देख कर दुश्मन की सेना में भगदड़ मच गई— उन्हें विजयश्री मिली। दोनों भाई आ. जिन वल्लभ सूरि के शिष्य आचार्य जिनदत्त सूरि के पास आए। आचार्य ने संवत्. ११७७ में उन्हें जैन धर्म अंगीकार कराया और उनका बहुफणा गोत्र निर्धारित किया।

डा. टैसीटरी प्रणीत राजस्थानी ग्रन्थ-सर्वेक्षण के ग्रन्थांक २५ "ओसवाल री पीढ़ियां" (बीकानेर अनूप संस्कृत लाइब्रेरी में उपलब्ध) के अनुसार इस गोत्र की उत्पत्ति "धार नगर के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

राजा श्रीपति के दो पुत्रों सच्चू और यौवन से हुआ जिन्होंने जांगलू जाकर महा भट्टारक तिल-काचार्य (वृहद गच्छ) से जैन धर्म की दीक्षा ली। साह यौवन के पुत्र सोमल हुए— उनके पुत्र भोज जिन्होंनें सोहिला ग्राम में प्रसाद बनवाया एवं जहां संवत् १२१८ में नागपुर के श्री तिल-काचार्य सूरि ने बिम्ब प्रतिष्ठा करवाई। बाफना गोत्र की १४ शाखाएं हुई— बाफणा, ठुल्ला, थोखड़ा, हंडिया, जागड़, झोरा, सोमलीया, वांहतिया, बसाह, नोषडीरा, वाघमरा, भाभू, धतूरिया, नाहटा"।

कालान्तर में इस गोत्र की अनेक शाखाएं उपशाखाएं हुई- यथा- नाहटा, रायजादा, पटवा, हुण्डिया, मरोठिया, सामूलिया, बाहतिया, जांगड़ा, मोठड़िया, सोमालिया, डूंगेरचा, कोटेचा, बाघ-मार, कुचेरिया, भाभू, बालिया, नाहऊसरा, घाँधल, नानगाणी, मगदिया, कुबेरिया, योद्धा, झोटा, मूंग-रवाल, वेताला, महाजनिया, बसहा, धतुरिया, मारू, भूआता, खोड़वाल, दफ्तरी, मकेलवाल, साहला, दसोरा, खोखा, सोनी, घोरवाड, तोसालिया, संभुआता, थुल्ल आदि। यति रामलालजी ने ३७ एवं मुनि ज्ञान सुन्दर जी ने ५२ खांपों के नाम दिए हैं।

संवत् १८९२ के अमर सागर, जेसलमेर के प्रशस्ति शिलालेख (जैन लेख संग्रह) में बापना (पटवा) देवराजजी से लेकर आगे की पुश्तों का वर्णन है। सेठ देवराज जी के पुत्र गुमानचन्द जी थे जिनके पांच पुत्र थे— बहादुरमल, सवाईराम, मगनीराम, जोरावरमल और प्रतापचन्द्र। उन्होंने संवत् १८९१ में आबू, गिरनार एवं शत्रुंजय तीर्थ के लिए बड़ा भारी संघ निकाला। जिसकी रक्षा के लिए उदयपुर, कोटा, बूंदी, जेसलमेर, टोंक, इन्दौर राज्यों एवं अंग्रेजी सरकार की फौजों पर कुल २३ लाख रूपयों से अधिक खर्च हुआ। संघ में २१०० साधु-साध्वी ८४ गच्छों के थे। संघ यात्रियों के लिए चार हाथी, ७ पालकी, ४०० बैलगाड़ी, १,५०० ऊँट, १०० रथ संघपति की ओर से थे। ५०० सेवगों को प्रत्येक को २१ रूपए और आने-जाने का व्यय दिया गया था। संघ के जेसलमेर लौटने पर ३६ कोमों का ५ मिठाई का जिमनवार किया। इस संघयात्रा के उपलक्ष में ओसवाल जाति ने आपको संघाधिपति की पदवी दी। जेसलमेर के महारावल ने संघवी सेठ की पदवी दी एवं जागीर और हाथी का सम्मान बख्शा। अमर सागर बाग आप लोगों का ही बनवाया हुआ है। इसके दो मन्दिर शिल्प एवं सौन्दर्य के बेजोड़ नमूने हैं— जो क्रमशः वि. सं. १८९७ एवं १९२८ में निर्मित हुए थे।

इन पाँचों भाईयों ने छोटा शहर, झालरापाटन, रतलाम, उदयपुर, जेसलमेर एवं इन्दौर में अपनी-अपनी कोठियाँ स्थापित की। सेठ बहादुरमल जी की प्रधान कोठी कोटा में थी। इनके हाथ में बहुत-सी रियासतों के सरकारी खजाने थे। राजस्थान के पचासों केन्द्रों में इनकी ४०० से अधिक दुकाने थी। इनकी हवेलियाँ पटवों की हवेली के नाम से जानी जाती थी। कोटा रियासत में इन्हें अनेक सम्मान प्राप्त थे। इनके दत्तक पुत्र सेठ दानमल जी ने भी शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला जिसमें अनेक देशी रियासतों एवं अंग्रेज सरकार की पलटनें सुरक्षार्थ तैनात थी। इस संघ ने पाँच तीर्थो की यात्रा की। इस महान् कार्य के लिए उन्हें श्री संघ ने संघवी की पदवी दी। रतलाम में बसे बापना परिवार में सेठ केशरी सिंह जी बड़े कुशल व्यापारी थे। अंग्रेज सरकार ने उन्हें रायसाहब (सन् १९१२) रायबहादुर (१९१६) एवं दीवान बहादुर (१९२५)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिवान बहादुर सेठ, केशरीसिंहजी कोटा (बापना)

की सम्माननीय उपाधियों से विभूषित किया। आपको एवं सेठानी जी को पैरों में सोना बख्शा हुआ था। टोंक रियासत ने तो आपके पुत्र-पुत्री, भानजे श्वसुर, फूफा और दो मुनीमों को भी सोना बख्शा। सन् १९१२ के दिल्ली दरबार में आप आमंत्रित थे। देवली, नीमच, आबू, मेवाड़, भानपुर, कोटा, बूंदी, जोधपूर, रतलाम, टोंक आदि रियासतो-राज्यों के खजाने इस परिवार के ही सुपुर्द थे। आपने ४-५ दफे सिद्धांचल आदि तीर्थों की यात्रा की।

इसी परिवार के सेठ जोरावरमल जी बापना की कर्नल टाड ने बड़ी प्रशंसा की है। रियासतों की राजनैतिक स्थिति संभालने में जोरावरमलजी ने अंग्रेज सरकार की बहुत सहायता की। ओसवाल वंश के इतिहासपुरुषों वाले अध्याय में इनका जीवन चरित्र विस्तार से दिया जा रहा है। रायबहादुर सिरेमलजी बापना भी इसी परिवार के थे। सन् १९२६ में आप इन्दौर राज्य के प्राईम मिनिस्टर नियुक्त हुए। ओसवाल वंश के इतिहास पुरुषों में आपका सम्माननीय स्थान है एवं विशद जीवन-विवरण उस अध्याय में दिया जा रहा है।

जोधपुर का बापना खानदान उक्त परिवार का ही एक अंग हैं। इनके पूर्व पुरुष ३०० वर्ष पूर्व बड़लू से जोधपुर आकर बसे। इस परिवार के लोग राज्य के विभिन्न ओहदों पर सेवारत रहे। इस परिवार में कृष्णलाल जी बापना बड़े प्रतापी हुए। आपके पिता लक्ष्मणलाल जी राज्य में फौजबख्शी का कार्य संभालते रहे। आप जोधपुर राज्य में हाकिम, राज एडवोकेट और इन्सपेक्टर जनरल आफ पोलिस नियुक्त हुए। सन् १९१७ में सरकार ने आपको रायसाहब की पदवी से सम्मानित किया। सन् १९१४ में जोधपुर से "ओसवाल" मासिक पत्र के प्रकाशन का श्रेय आपको ही है। अजमेर का प्रथम ओसवाल महा सम्मेलन आप ही के उद्योग का फल था। राजपुताने में प्रजा परिषद की स्थापना एवं अजमेर को आदर्श नगर बनाने में आपका प्रमुख सहयोग रहा। आपकी औद्योगिक रूचि ने नई-नई स्कीमों को जन्म दिया— बैर के झाड़ पर लाख लगाने की योजना सरकार द्वारा स्वीकृत हुई थी।

बापना गोत्र के अनेक परिवार सिरोही में वास करते हैं। इस परिवार के चिमनलाल जी बापना और चेनकरण जी बापना संवत्. १९१७ में सिरोही स्टेट के दीवान रहे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उदयपुर के बापना परिवार में सेठ प्रेमचन्द जी को संवत्. १९०८ में तत्कालीन महाराणा स्वरूप सिंह जी नें "नगर सेठ" का खिताब दिया था। साथ में आपको हाथी व लवाजमा का सम्मान बख्शा गया। इनके परिवार में नगर सेठ का सम्मान पुश्त दर पुश्त चलता रहा। इनके पुत्र कन्हैयालालजी एवं उनके पुत्र नन्दलालजी भी नगरसेठ के सम्मान से सम्मानित हुए।

बापना गोत्र के अनेक परिवार हरदा, कोलार गोल्डफील्ड, सादड़ी, अमलनेर, भिनासरा धूलिया, मंदसौर आदि स्थानों पर व्यापार करते हैं।

बहुफणा (बापना) गोत्र के शिलालेख कलकत्ता, बालोतरा, मेड़ता, जूनाबेड़ा, ग्वालियर, मडिया, डीसा, जैसलमेर, किशनगढ़, भेंसरागढ़, सांगानेर, चंदलाई, बीकानेर, उदरामसर, देशनोक, उदयपुर, रतलाम, जयपुर, शत्रुंजय आदि अनेक स्थानों पर प्राप्त हुए हैं। इनके अलावा इसकी शाखा गोत्रों के शिलालेख अनेक स्थानों पर मिले हैं जैसे जागंड़ा गोत्र के चेलपुर, जेसलमेर व बीकानेर में, थुल्ल गोत्र के मेड़ता, नागोर, बीकानेर, जेसलमेर, बालापुर आदि स्थानों पर, डुंगरेचा गोत्र का उदयपुर में, बाहतिया उपगोत्र का बीकानेर, सिरोही, जेसलमेर किशनगढ़ आदि स्थानों पर, सोनी-खटमड़ गोत्र का कलकत्ता, उदयपुर, बीकानेर आदि जगहों पर, घोरवाड़ उपगोत्र का हैदराबाद में, बैताला उपगोत्र का बीकानेर में, मारू गोत्र का लछबाड़ में एवं दफ्तरी उपशाखा का बीकानेर में।

नाहटा

बहुफणा (बापना) गोत्रीय राजकुमार जोबन और सच्चू के पुत्रों में एक वीर शिरोमणि सावंत जी हुए। ये राजा अजयपाल के पौत्र पृथ्वीराज की सेना में सेनापति बने। उन्होंने ६ बार काबुल के महमूद गजनी की सेना से डटकर युद्ध किया और उन्हें पछाड़ दिया। पृथ्वीराज ने संग्राम में पीछे न हटने से सेनापति को "नाहटा" विरूद दिया। उनके वंशज नाहटा कहलाए। इस तरह बहुफणा गोत्र का यह शाखा गोत्र "नाहटा" हुआ। फतहपुर के नवाब ने इनके एक पुत्र को 'रायजादा' पदवी दी तब से उनके वंशजों का रायजादा गोत्र हुआ।

इस वंश में बड़े प्रतापी पुरूष हुए है। नाहटा मोतीशाह ऐसे ही धर्मवीर दानवीर एवं कर्मवीर महापुरूष थे। ओसवालों के इतिहास पुरूषों सम्बन्धी अध्याय में उनकी जीवनी अन्यत्र दी जा रही है।

इस वंश के शिलालेख चैलपुरी, रंगपुर, लखनऊ, अयोध्या, बनारस, उदयपुर, करेड़ा, जेसलमेर, ऊंझा, शत्रुञ्जय, बीकानेर, हैदराबाद आदि अनेक स्थानों पर प्राप्त हुए हैं।

लखनऊ के नाहटा बच्छराज जी के खानदान का मूल निवास मारवाड़ था। करीब २०० वर्ष पूर्व इनके पूर्वज बनारस आकर बसे। इस खानदान में बच्छराज जी बड़े प्रतापी एवं ऐश्वर्यशाली हुए। वे लखनऊ के नबाव के खजांची थे। बनारस के भदैनी परिसर में आपने सुन्दर मन्दिर एवं घाट का निर्माण कराया जो बच्छराज घाट के नाम से प्रसिद्ध है। बनारस में इस परिवार की बहुत बड़ी जमींदारी है। इनको नवाब से 'राजा' का विरूद प्राप्त हुआ। जेसलमेर का पटवा खानदान इसी कुल का है। जेसलमेर के पटवा बादरमलजी जोरावरमलजी और मगनीरामजी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ने शत्रुञ्जय तीर्थ के संघ निकाले एवं करोड़ो रूपया-दान दक्षिणा पर खर्च किया। इनके वंशज जैसलमेर, कोटा, रतलाम में निवास करते हैं।

इस परिवार के लोग मोमासर, छापर, बीकानेर, लाडनू, सरदारशहर, राजगढ़, भुसावल, इन्दौर, धूलिया आदि विभिन्न स्थानों पर निवास करते हैं।

मोमासर का सेठ चाँदमल भोगराज के परिवार का मूल निवास तोल्यासर था। इनके पूर्व पुरुष वीर भानजी करीब १५० वर्ष पूर्व मोमासार आकर बसे। इनका कलकत्ते एवं अन्य जगहों पर जूट का मुख्य कारोबार रहा। छापर के सेठ मुल्तानचन्द चौथमल का परिवार चाड़वास से १२५ वर्ष पूर्व आकर यहां बसा। यह परिवार बैंकिंग जूट एवं कपड़े का व्यवसाय कलकत्ता, मऊनाथ भंजन आदि स्थानों पर करता रहा। बीकानेर के सेठ उदयचन्द राजरूप नाहटा के परिवार का मूल निवास कानपुर था। इस परिवार का व्यवसाय बीकानेर कलकत्ता, ग्वालपाड़ा, सिलहट, बोलपुर आदि अनेक जगहों पर है। इसी परिवार के श्री अगरचन्दजी भँवरलाल जी नाहटा ने पुरातत्व एवं जैन प्राचीन ग्रंथों पर शोध की दृष्टि से बहुत बड़ा काम किया है। श्री अगरचन्दजी नाहटा की जीवनी एवं उनके शोध कार्यों का ब्यौरा ग्रंथ में अन्यत्र दिया जा रहा है। ओसवाल समाज इन दोनों भ्राताओं का हमेशा ऋणी रहेगा।

सरदारशहर का नाहटा परिवार लाडनू के नाहटा परिवार का ही एक अंग है ! इस परिवार के लोग कलकत्ता व अन्य जगहों पर कपड़ा बैंकिंग, पाट आदि का व्यवसाय करते हैं। राजगढ़ का सेठ लखमी चन्द तोलाराम नाहटा का परिवार संवत् १९१८ में कचोर नामक स्थान से आया एवं कलकत्ता आदि जगहों पर व्यवसाय रत हैं।

भुसावल के सेठ पूनमचन्द ओंकारदास के परिवार का मूल निवास जेतारण था जहाँ से करीब २०० वर्ष पूर्व व्यापार के निमित्त यहाँ आए। इस परिवार के श्री पूनमचन्द जी नाहटा बड़े शिक्षा-प्रेमी थे। इन्दौर में सेठ सूरजमल जी नाहटा का परिवार बीकानेर से यहाँ आया एवं कपड़ा-व्यवसाय रत हैं। धूलिया के सेठ हीरालाल बालाराम का परिवार, लहेरा बावड़ी (मारवाड़) से १५० वर्ष पूर्व आकर यहाँ बसा।

भादरा के सेठ लखमीचन्द रामलाल नाहटा के खानदान के पूर्वपुरुष खेतसीदासजी बिल्लू से १५० वर्ष पूर्व आकर यहाँ बसे। संवत् १९७५ से ८५ तक इस खानदान के सेठ रामलाल जी बीकानेर की स्टेट कौंसिल के सदस्य थे। सेठ लखमीचन्द जी को भी यह सम्मान मिला था। आपके पौत्र सेठ पूनमचन्द्रजी संवत् १९८५ में बीकानेर स्टेट एसेम्बली के सदस्य मनोनीत हुए। इस परिवार में बैंकिंग व जमींदारी का काम होता है।

जलपाईगुड़ी बसा सेठ पांचीराम कुन्दनमल नाहटा के खानदान का मूल निवास तोल्यासर था। सरदार शहर बसने के समय इनके पूर्वज श्री सुखमल जी एवं कालूरामजी सरदार शहर आकर बसे। करीब १५० वर्ष पूर्व इन बंधुओं ने जलपाईगुड़ी में अपना कपड़े का व्यवसाय स्थापित किया। अपने अध्यवसाय से व्यापार में खूब उन्नति की। कालांतर में बैंकिंग चाय-बगानों में फायनेंस एवं विलायती कपड़े के आयात में खूब सम्पत्ति अर्जित की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हापुड़ के सेठ मानमाल जी नाहटा के खानदान का मूल निवास जेसलमेर था। इनके पूर्वज शामसिंजी के पुत्र दानमलजी जेसलमेर से भोपाल गए। वहाँ साहूकारी लेन-देन का व्यापार किया। आप के पुत्र हजारीमल जी ने सिकन्दराबाद में कमीशन एजेन्सी का व्यापार शुरू किया। संवत् १९८२ में सेठ मानमलजी हापुड़ आए एवं वहाँ भी फर्म स्थापित की।

झालरापाटन के सेठ तेजमल जी नाहटा के खानदान का मूल निवास जैसलमेर था।

मुल्तान जाकर बसे सेठ लक्ष्मीपत जी नाहटा के खानदान का मूल निवास मारवाड़ था। लगभग नौ पीढ़ियों तक यह खानदान मुल्तान निवास करता रहा। सिकंदराबाद बसे सेठ लाल-जीमल नाहटा के खानदान का मूल निवास रूपसियाँ (जैसलमेर) था। इनके पूर्वज लालजी राम करीब १५० वर्ष पूर्व अनवरपुर (मेरठ) आए एवं जमींदारी स्थापित की। सेठ रतनलालजी ने सिकन्दराबाद आकर जमींदारी व बैंकिंग का कारोबार शुरू किया। इस खानदान के सेठ अच-लदास जी बड़े कार्यकुशल एवं लोकप्रिय व्यक्ति थे। उन्होंने दुष्काल में गरीबों की बहुत सहायता की। आप म्युनिसिपल कमिश्नर एवं आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किए गए। सरकार ने आपको सेठ की पदवी दी। इसी परिवार के श्री जवाहरलाल जी बड़े योग्य व्यक्ति थे। आपने सार्वजनिक हित के कार्यों में बड़ी रुचि ली। आप म्यूनिसिपल कमिश्नर नियुक्त हुए। आप जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस के सदस्य, ओसवाल सुधारक के संचालक बोर्ड के सदस्य एवं ओसवाल कान्फ्रेंस के स्वागताध्यक्ष रहे।

पटवा

यह बाफणा गोत्र की एक शाखा है।

इन खानदान के पूर्वज १७वीं शदी में मारवाड़ से चलकर मेवाड़ होते हुए कूकड़ेश्वर (माल-वा) आकर बसे। इसी खानदान के नानालालजी पटवा के सुपुत्र मन्नालालजी पटवा बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। इनके पुत्र श्री सुन्दरलालजी पटवा मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री रह चुके हैं एवं अब भी हैं। द्वितीय पुत्र समर्थ लालजी ने कृषि के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किया एवं राष्ट्रपति पुरस्कार से सम्मानित हुए।

कोचेटा/कोटेचा

यह बाफणा गोत्र की एक शाखा है।

कोचेटा गोत्र के अनेक परिवार मारवाड़, भुसावल, बरार, मद्रास आदि प्रान्तों में रहते हैं। अचरापाकम (मद्रास) का सेठ कुन्दनमल मगनमल का खानदान जसवंताबाद (मेड़ता) से जाकर वहाँ बसा है। इनके पूर्व पुरूष रतनचन्दजी १२५ वर्ष पहले मुरार (ग्वालियर) गये। मुरार आकर शिवपुरी में कन्ट्राक्टिंग और कपड़े का व्यवसाय चालू किया। सेठ मगनमलजी संवत् १९८० में मद्रास गये ओर अचारापाकम में बैंकिंग व्यवसाय स्थापित किया। वे अनेक सार्वजनिक संस्थाओं और समाजोन्नति के कार्यों से जुड़े थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बोदपड़ (भुसावल) के सेठ केशवलाल लालचन्द का खानदान पीपलाद (जोधपुर) से संवत् १५० वर्ष पूर्व बोदवड़ बसा है। इनके पूर्व पुरूष लालजन्दजी ने आकोला, अमलमेर, खाम गाँव आदि जगहों में दूकानें खोली जहाँ इनकी अच्छी प्रतिष्ठा है। भुसावल के सेठ मानमल चांदमल का मूल निवास पखतसर था। ये परिवार खेती, आढ़त व साहूकारी लेन-देन का काम करते हैं। बणी (बरार) के श्री कन्हैयालाल एवं सेठ पन्नालाल ताराचन्द के परिवार मूलतः बूड (मारवाड़) में निवास करते थे। लगभग १०० वर्ष पूर्व नांदेपेरा आए और वहाँ से वणी आकर बसे। वे सराफा एवं कपड़े का व्यवसाय करते हैं।

बेताला

यह बाफणा गोत्र की एक शाखा है।

श्री बलवंत सिंहजी मेहता के अनुसार सम्भवतः खानों के अधिपति होने एवं खनिज व्यवसाय करने से उस खानदान के लोग बेताला कहलाने लगे।

डेह (नागौर) निवासी सेठ पूनमचन्दजी बेताला के सुपुत्र श्री कवंरलाल जी बेताला जैन समाज के उदार चेता व्यवसायी थे। आपने अपनी अर्जित सम्पत्ति का एक अंश समाज में शिक्षा विकास के लिए समर्पित कर दिया। आपने अनेक धार्मिक एवं सामाजिक प्रवृत्तियों के सुचारु संचालन हेतु मुक्तहस्त से आर्थिक अवदान दिए।

सांभर/साभर/चतुर साम्भर

सेठ रोशनलालजी चतुर (उम्मेदमल धरमचन्द) उदयपुर

पंवार वंश में राजपूत खेमकरण जी के पुत्र सामरसी जी हुए। इन्हीं के नाम से सामर या साम्भर गोत्र की उत्पत्ति हुई बताई जाती हैं। इस गोत्र के शाह जिनदत्तजी ने सिद्धांचल तीर्थ के लिए बड़ा भारी संघ निकाला जिसमें भोजन की बड़ी चतुराई थी। इससे संघ ने आपको "चतुर" की पदवी दी। इनके वंशज मेड़ता में निवास करते थे। संवत् १८७६ में सेठ जोरावरमल जी का परिवार उदयपुर आकर बसा। इनके पौत्र छोगमलजी ने सिद्धांचल तीर्थ का पैदल संघ निकाला था। इसी खानदान के सेठ रोशनलालजी चतुर ने लोकोपयोगी कार्यों में बहुत दान

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिया। आपके ही सत्प्रयत्न से उदयपुर में विशालतम धर्मशाला, बोर्डिगं हाउस और लाइब्रेरी का निर्माण हुआ। आपने केशरियाजी व करेड़ा तीर्थों में ध्वजा चढ़वाई एवं स्वामिवत्सल किया। उदयपुर विद्या-भवन के निर्माण में भी आपका पूरा सहयोग रहा। आप आनरेरी मजिस्ट्रेट एवं म्यूनिसिपल बोर्ड के उप सभापति रहे।

उदयपुर के इसी "सामर" खानदान में २०वीं सदी के प्रसिद्ध भारतीय नृत्यकार श्री देवीलाल सामर का जन्म हुआ। उन्होंने लोककला को नया आयाम दिया। उन्होंने उदयपुर में कठपुतली थियेटर का निर्माण करवाया। उनकी जीवनकथा ग्रंथ में अन्यत्र दी जा रही हैं।

कुम्भट

विक्रम संवत् से ४०० वर्ष पूर्व आचार्य रत्नप्रभ सूरि ने ओसिया में क्षत्रियों को जैन धर्म अंगीकार करवा कर महाजन कौम की स्थापना की। उनके परवर्ती आचार्यों ने जिन १८ प्रारम्भिक गोत्रों का निर्माण किया उनमें से एक "कुम्भट" गोत्र हैं। कुमट का व्यापार करने से वे कुम्मट कहलाए। मुनि ज्ञानसुन्दर जी ने अपने ग्रन्थ "जैन जाति महोदय" में मूल कुम्भट गोत्र की १९ शाखाओं का उल्लेख किया है जो इसप्रकार है— काजालिया, धनंतरि, सुधा, जगावत, संघवी, पूगलिया, कठोरिया, कापूरिया, संभरिया, चोखा, सोनीगरा, लाहौर, लाखाणी, मरवाणी, मोरचिया, छालिया, लघु कुंभट, मालोत और नागौरी।

कालांतर में ये परिवार दईकड़ा (जोधपुर) व्यावर, अजमेर, इन्दौर, रतलाम, पीपलिया आदि स्थानों पर बस गए। संवत् १८७३ में दईकड़ा के माईदास जी जोधपुर आकर बसे— वे राज्य के बड़े वकील थे। इन्हीं का परिवार आज जोधपुर में है। संवत् १९४० में राज्य की मर्दुम शुमारी की रिपोर्ट में जिन पांच प्रमुख ओसवाल मुत्सद्दियों का उल्लेख है उनमें से एक कुम्भट वंश के श्री चांदमलजी थे। संवत् १९४३ में न्यात का जो कानून बना उस पर भी उनके दस्तखत मौजूद हैं। दईकड़ा के श्रेष्ठि गोकुलचन्द कुम्भट के सुपुत्र विनयचन्द जी बड़े निष्ठावान् श्रावक थे। आपने प्रज्ञाचक्षु होते हुए भी अनेक अध्यात्म ग्रंथों की रचना की। "विनयचन्द चौबीसी", पूज्य हम्मीर चरित्र, आत्म निंदा आदि ग्रंथ धर्म और गुरु में उनकी निष्ठा के परिचायक हैं।

सिंघी

मुर्शिदाबाद के बलदोटा (बदलौटा) सिंघी

भारत के अग्रगण्य समृद्ध परिवारों में मुर्शिदाबाद का सिंघी परिवार प्रसिद्ध है। एक किंवदन्ती के अनुसार संवत् १०९ में रामसीण नगर में श्री प्रद्योतन सूरि ने चाहड़देव को जैनधर्म का उपदेश देकर ओसवाल बनाया। उसके पुत्र बालतदेव से बदलौटा गोत्र की स्थापना की। इन्होंने अपने नाम से बलदोटा नामक एक गाँव बसाया। इनके वंशजों ने संवत् १२५१ में चित्तौड़गढ़ में एक जैन मन्दिर बनवाया। साह रूपा जी ने संवत् १५०९ में शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ निकाला। इसमें ९९,००० रूपये खर्च हुए। कहते हैं यह सारा रूपया इनके मुसलमान मित्र हाजी खाँ ने खर्च किए। इसी समय आपको संघवी पदवी प्रदान की गई। संवत् १८४९

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में इस परिवार के सवाई सिंह जी अजीमगंज, मुर्शिदाबाद आकर बसे। मुख्य व्यापार ग्वालपाड़ा (आसाम) में था। संवत् १९०० के आसपास बाबू हुलासचन्द जी ने कलकत्ते में मशहूर फर्म "हरिसिंह निहालचन्द" की स्थापना की। दिल्ली के मुगल सम्राट बहादुर शाह ने आपके कार्य से प्रसन्न होकर "राय" की पदवी दी व खिल्लत एवं पन्ने की एक अंगूठी प्रदान की जो अभी-भी उनके वंशजों के पास है। इन्होंने अनेक तीर्थों की यात्रा की एवं स्मृति रूप डायरी लिखी— वह भी मौजूद है। आपके पुत्र न होने से सरदार शहर के चोरड़िया गोत्रीय बाबू निहालचन्द जी को गोद लिया। उनके पुत्र डालचन्द जी (जन्म संवत् १९२७) ने प्राचीन जैन मन्दिरों के जीर्णोद्धार में बहुत धन व्यय किया। जब कलकत्ता में जूट बेलर्स एसोसिएशन की स्थापना हुई तो आप उसके प्रथम सभापति बनाए गए। आपने मृत्यु (१९८४) के पूर्व कई लाख रूपए नाते-रिश्तेदारों में वितरित किए। आपके पुत्र बहादुर सिंह जी (जन्म संवत् १९४२) ने प्राचीन ग्रंथों का अमूल्य संग्रह किया। दिल्ली के बादशाह से प्राप्त अनेक अरेबियन व परसियन प्राचीन ग्रन्थ आपके संग्रह में थे। इसके अतिरिक्त आपने प्राचीन हिन्दू, कुशान, गुप्तकाल एवं मुगल कालीन सिक्कों का अलभ्य संग्रह किया। आप संवत् १९८६ में जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स बम्बई के सभापति चुने गए। कवि सम्राट् रवीन्द्रनाथ टैगोर के शान्तिनिकेतन में सिंघवी जैन विद्यापीठ की स्थापना कर आपने समस्त जैन समाज की भूरि-भूरि प्रशंसा अर्जित की। वहाँ सुप्रसिद्ध पुरातत्व वेत्ता मुनि श्री जैन विजय जी आचार्य बने एवं आगम— दर्शन की शोध/शिक्षा का सुन्दर प्रबन्ध हुआ। विद्यापीठ में एक विशाल ग्रन्थ भण्डार बनवाया एवं "सिंघी जैन ग्रन्थमाला" के अन्तर्गत बहुमूल्य जैन ग्रन्थों का प्रकाशन हुआ। आपके पुत्र राजेन्द्रसिंह जी, नरेन्द्र सिंह जी एवं वीरेन्द्र सिंह जी ने भी समाज हितकारी कार्यों से यश अर्जित किया।

वार्शी (तमिलनाडु) के सेठ मूलचन्द जी सिंघी का खानदान मूलतः जीवन्द (जोधपुर स्टेट) के बदलोटा सिंघी गोत्र का है। इनके पूर्वज सेठ महासिंह जी दक्षिण में चिक लौड़ और फिर वार्शी जाकर बस गए। इनका बैंकिंग का व्यवसाय था। सेठ मूलचन्द जी बड़े धार्मिकवृत्ति के थे। इन्होंने संवत् १९६९ में एक हस्पताल बनवाकर समाज को अर्पित किया। जैन मन्दिर, धर्मशाला एवं स्कूल निर्माण में भी यह परिवार अग्रणी रहा। जनता आपको दानवीर सेठ के नाम से सम्बोधित करती थी। सरकार ने भी संवत् १९६९ में आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त कर आपका समुचित सम्मान किया।

राज कोष्ठागार/राय कोठारी

आचार्य बप्पभट्ट सूरि ने ग्वालियर के राजा नागावलोक या नाग भट्ट प्रतिहार जो आम-राजा के नाम से प्रसिद्ध था, को प्रतिबोध देकर जैन बनाया। आम राजा का समय विक्रम की ९वीं शताब्दी है। बप्प भट्ट सूरि का जन्म विक्रम संवत् ८०० में हुआ था। आम राजा की एक रानी व्यवहारिया (वणिक) पुत्री थी। उसकी संतानों को ओसवाल कुल में शामिल कर सूरिजी ने संवत् ८९० के लगभग उनका राज कोष्ठागार गोत्र निर्धारित किया। राज कोठारी आज भी अपने को आमराजा की सन्तान मानते हैं। इसी गोत्र में १६वीं शदी में इतिहास प्रसिद्ध कर्मा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

शाह हुए। इन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ का जिर्णोद्धार करवाया। इस आशय का शिलालेख विमलवासी स्थित आदीश्वर मन्दिर में उत्कीर्णित हैं जो विक्रम संवत् १५८७ का है। शिलालेख में राजकोष्ठागार गोत्र उत्पत्ति सम्बन्धी उक्त कथानक भी है।

कावड़िया

मध्य एशिया और पंजाब में जैनधर्म के लेखक श्री हीरालाल दूगड़ के अनुसार यह खानदान मूलतः रायकोठारी (राजकोष्ठागार— जिनका उल्लेख विक्रम की ९वीं शदी में आम राजा के समकालीन श्री बप्प भट्ट सूरि ने किया है) गोत्र का है। इनके पूर्वज चांडा बच्चे ही थे— जब अनेक बंधुबांधव लड़ाईयों में मारे गए। वे उस समय दिल्ली में रहते थे। बादशाह की नाराजगी के कारण चांडा को कावड़ी (बेंहगी) में डाल कर मेवाड़ ले जाया गया। यह लगभग संवत् १५०० के आसपास घटित हुआ। कावड़ी में जाने से ही लोग उन्हें तथा उनकी सन्तान को कावड़िया कहने लगे। श्री बलवंत सिंह मेहता के अनुसार सम्भवतः सिक्कों के व्यापारी होने से ये कावेडिया कहलाए। चांडा के पुत्र टाडा हुए और टाडा के पुत्र भारमल हुए।

महाराणा सांगा के समय इस खानदान के भारमल जी रणथम्भोर किले के किलेदार नियुक्त हुए। इन्हीं के पुत्र इतिहास प्रसिद्ध भामाशाह हुए जिन्होंने राणा प्रताप को अपना सर्वस्व सौंप कर स्वामी भक्ति की एक मिसाल कायम की। ओसवाल जाति के इतिहास पुरूषों में वे अग्रगण्य हैं एवं उनकी जीवनी अन्यत्र दी जा रही है। उनके छोटे भाई ताराचन्द भी युद्ध में राणाप्रताप की ओर से लड़े और खेत रहे। भामाशाह के पुत्र जीबाशाह महाराणा अमरसिंह के प्रधान रहे। उनके पुत्र अक्षयराज महाराणा कर्णसिंह के प्रधान नियुक्त हुए। इस खानदान को महाराणा की ओर से पुश्तैनी परवाना प्राप्त है।

तातेड़

यह आ. रत्नप्रभ सूरी द्वारा प्रतिबोधित क्षत्रियों के १८ आदि गोत्रों में से एक है।

अमृतसर में अनेक तातेड़ परिवार निवास करते हैं। लाला मुन्नीलाल मोतीलाल का खानदान फेंसी, कपड़ा, होजियारी एवं मनिहारी का व्यवसाय करते हैं एवं जातीय कामों में भी दिलचस्पी लेते हैं। लाला मस्तराम का खानदान आढ़त का काम करता है। मस्तराम जी अनेक संस्थाओं से जुड़े थे एवं "आफ्ताब जैन" का सम्पादन करते थे। लाला दुलीचन्द प्यारेलाल का परिवार होजियारी मनियारी का काम करते हैं। लाला मुंशीराम जी कई सालों तक स्थानीय कांग्रेस के कोषाध्यक्ष एवं विधवा विवाह के बड़े तरफ्दार थे। आपने अनेक विधवाओं के सम्बन्ध कराये।

विनायकिया

इनका मूल गोत्र तातेड़ माना जाता है।

इस खानदान के अनेक परिवार थली प्रान्त के अनेक गांवों एवं पंजाब और जालणा आदि प्रदेशों मे निवास करते हैं। राजलदेसर के सेठ जुहारमल शोभाचन्द विनायकिया का पूर्व

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

व्यापार रंगपुर (बंगलादेश) में था, फिर कलकत्ते में चलानी का काम शुरु हुआ। इसी परिवार के सेठ मोहनलाल जी दीपचन्द जी एवं मांगीलाल जी ओसवाल समाज के गणमान्य व्यक्तियों में से हैं। लुधियाना में बसा हुआ लाला खेरातीमल पन्नालाल एवं पटियाला का लाला रोशनलाल पन्नालाल के खानदान करीब २०० वर्षों से वहाँ रह रहे हैं एवं किराना व्यापार में संलग्न हैं। लाल रोशनलाल जी जैन विरादरी के चौधरी थे। जालना का सेठ सवाईराम गुलाबचन्द बिनायकिया खानदान वहां कृषि, व्यापार एवं कमीशन व्यवसाय में संलग्न है।

गाँधी गोत्र

गाँधी गोत्र ओसवाल जाति का एक विशेष गोत्र है। अनुश्रुतियों के अनुसार इस गोत्र की उत्पत्ति गांधी (इत्र-फुलेल) व्यवसाय करने से हुई। जहाँ क्षत्रियों से उत्पन्न अन्य व्यवसायिक जातियों में अनेक समान-नामा गोत्र हैं जैसे खंडेलवालों में ओसवालों की तरह ही गदैया, साह, सेठी, सोनी, बोहरा, भंडशाली, चौधरी, मोदी आदि गोत्र, महेश्वरियों में डागा, गदईया, गेलड़ा, गट्टाणी, फोफलिया, खटवड़, सुखाणी, सिंगी, पटवा, सोनी, कोठारी, नौलखा, नागौरी, चौधरी, भंडारी, भंसाली, घीया, मोदी, सेठ, मूंथा, मंडोवरा, भूतड़ा आदि गोत्र, किन्तु गाँधी गोत्र नहीं। अग्रवालों के साढ़े सतरह गोत्रों में भी नहीं। गुजरात में मोढ़ जाति से निःसृत गाँधी गोत्र का कहीं-कहीं उल्लेख अवश्य मिलता है। ओसवालों में गंधी, गंधिया, सहसगुणा गांधी आदि खापों के भी उल्लेख है। वस्तुतः ये अन्यान्य गोत्रों द्वारा गंधी व्यवसाय अपनाने से ही बने लगते हैं।

महाजन वंश मुक्तावली में इस गोत्र को गणधर चोपड़ा गोत्र की एक शाखा माना है। चोपड़ा गोत्र की उत्पत्ति संवत् ११७६ में मंडोवर नगर के पड़िहार राजा नानू दे एवं उसके पुत्र कुकड़ दे के आचार्य जिन वल्लभ सूरि के उपदेश से प्रभावित हो जैन-धर्म अंगीकार कर लेने से मानी जाती है। राजा के कायस्थ दिवान गणधर हंसारिया ने भी संवत् ११७९ में जैन-धर्म अंगीकार किया। उनकी सन्तानें गणधर चोपड़ा कहलाई। कालांतर में उसके वंशजों द्वारा गंधी व्यवसाय करने से गांधी शाखा बनी।

भाटों की ख्यात के अनुसार जालौर के चौहान वंशीय राजा लखणसी से भंडारी एवं गाँधी मेहता गोत्रों की उत्पत्ति हुई। लखणसी जी की इग्यारहवीं पीढ़ी में पोपसी जी हुए जो आयुर्वेद के प्रख्यात ज्ञाता थे। उन्होंनें संवत् १३३८ में जालौर के रावल सावंत सिंह को एक असाध्य रोग से अच्छा किया। कहते हैं इसी से रावलजी ने उन्हें 'मेहता' उपाधि दी। पोपसी जी की तेरहवीं पुश्त में रामजी हुए जो बड़े वीर पुरुष एवं दानी थे। इनकी पाँचवीं पीढ़ी में शोभाचन्द जी हुए जो बड़े वीर और कुशल नीतिज्ञ थे। ये पोकरण के एक युद्ध में लड़ते हुए मारे गए। इस कुल में और भी अनेक योद्धा एवं अनेक सतियाँ हुई हैं।

पं. हीरालाल हंसराज के अनुसार गाँधी गोत्र वडहरा गोत्र की उपशाखा है। भिन्नमाल के परमार राजा सोम ने विक्रम संवत् १००७ में श्री जयप्रभ सूरि से प्रतिबोध पाया। उनके वंशज आचार्य जयसिंह सूरि के उपदेशों से प्रभावित हो जैनी बने। उन्हें ओसवाल कुल में शामिल किया गया। उनके वंशज आल्हा वृद्ध हो गये तो लोग उन्हें 'वडेरा आल्हा' कहने लगे। इसी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से उनके वंशज वडेरा कहलाने लगे। कालांतर में इनके वंशज गुजरात के अन्य प्रदेशों में फैल गए। इस गोत्र की एक 'शाखा' सहसगुणा नाम से जानी जाती है जिसकी उत्पत्ति विक्रम संवत् १२१० में भिन्नमाल नगर के पास रतनपुर के परमार राजा हमीर के वंशजो से मानी जाती है।

सोलापुर के सेठ धीरजमल गांधी के खानदान का मूल निवास नागौर था। इनके पूर्वज कीरतमल जी २०० वर्ष पूर्व ढाणा आए। इस परिवार के सेठ भगवान दास गांधी कोई १०० वर्ष पूर्व सोलापुर आकर बस गए। इन्होंने समाज में अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की। इस कुल के सेठ शिवलाल जी सार्वजनिक कार्यों में अग्रगण्य रहते थे। स्वदेशी, खादी प्रचार एवं राष्ट्रीय कार्यों में भी आप भाग लेते थे।

गुलेदगुड्डु के सेठ शिवदानमलजी गांधी के परिवार का मूल निवास रीयां था। वहाँ से करीब १०० वर्ष पूर्व सेठजी वेट गिरि आए एवं वहाँ से संवत् १९५३ में गुलेद गुड्डु (कर्नाटक) आकर बस गए।

बनारस के लाला कुञ्जीलाल गाँधी मेहता के खानदान का मूल निवास मुल्तान था। इस परिवार के लाला मोतीसिंजी बड़े योग्य व्यक्ति थे। वे काल्पी के राजा के दीवान नियुक्त होकर *काल्पी गए थे। इनकी कार्य कुशलता से प्रसन्न होकर लोदी बादशाह* ने इन्हें दीवान की पदवी से विभूषित किया। इस परिवार ने जवाहारात के व्यापार में खूब सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठा अर्जित की। इसी खानदान के लाला बनारसीदास बनारस आकर बस गए। आपने बनारस में बड़ी ख्याति पाई। एक दिगम्बर जैन महाविद्यालय की स्थापना की। आपका विवाह राजा बच्छराज नाहटा की पोत्री से हुआ था। संवत् १९८४ में आपका देहावसान हुआ।

जोधपुर के डा. शिवनाथचन्द गांधी मेहता उक्त खानदान के थे। वे ओसवाल यंग मेन सोसाईटी के कई वर्ष तक मंत्री रहे। वे अत्यन्त लोकप्रिय एवं निःस्वार्थ सेवाभावी डाक्टर थे।

जोधपुर के सेठ हीराचन्द रतनचन्द राय गांधी के पूर्वज गुजरात में गाँधी व्यवसाय करते थे। ये राज्य के माननीय राजवैद्य भी थे— इसी से इनकी सन्ताने राय गाँधी कहलाई। इनके पूर्वज देपाल जी गुजरात से नागौर आकर बसे। आपके पौत्र गहराजजी भी ख्याति प्राप्त वैद्य थे। संवत् १५२५ में इन्होंने देहली के लोदी बादशाह को रोगमुक्त किया था। बादशाह ने इनकी प्रार्थना पर शत्रुञ्जय तीर्थ के यात्रियों पर लगने वाला कर माफ कर दिया था। इनकी दसवीं पीढ़ी में केसरीचन्द जी बड़े *प्रतिष्ठित वैद्य हुए। संवत् १८०८ में महाराज* वख्तावरसिंह उन्हें जोधपुर लाए। तब से यह खानदान यहाँ बसा एवं राजवैद्य कहलाता है।

हिंगनघाट के सेठ बख्तावरमल गांधी के पिता ताराचन्द जी नागौर से १५० वर्ष पूर्व हिंगनघाट आकर बसे। यह परिवार लेनदेन एवं कृषि व्यवसाय में संलग्न हैं।

२. 'चौहान' क्षत्रियों (राजपूतों) से निःसृत ओसवाल गोत्र

१. बोहित्थरा/बोथरा	३. बच्छावत
२. दस्साणी	४. मेहता

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

५. मुकीम/खजांची
६. फोफलिया
७. लोढ़ा
८. खजांची
९. मिन्नी
१०. दुगड़/सूगड़
११. शेखाणी
१२. कोठारी
१३. बाबेल सिंघी
१४. कोठारी
१५. कमाणी सिंघी
१६. बोलिया/बूलिया
१७. बंगाणी/बैंगाणी
१८. खींवसरा
१९. डागा
२०. भंडारी
२१. लूनावत भंडारी
२२. खांटेड़/खटेड़/आबेड़/खटोल
२३. रतनपुरा
२४. कटारिया/मेहता
२५. पावेचा
२६. बलाही
२७. संचेती/सुचिन्ती
२८. डोसी/दोषी
२९. सोनीगरा
३०. पीथलिया
३१. बागरेचा
३२. मेहता
३३. आच्छा
३४. संखवाल/संखलेचा
३५. ममैया
३६. जिन्दाणी/जन्नाणी
३७. कांस्टिया
३८. बुच्चा/बूंटा
३९. बोरदिया

बोहित्थरा (बोथरा)

विक्रम की १२वीं शदी में देवलवाड़ा (मेवाड़) पर राजपूत राजा भीम सिंह का शासन था। वह १४४ गाँवों का अधिपति था। उसकी पुत्री जालौर के देवड़ा वंशीय चौहान राजा सावंतसिंह को ब्याही थी। सावंतसिंह की दो रानियाँ थीं जिनसे तीन पुत्रः सागर, वीरमदेव, कान्हड़ हुए एवं एक पुत्री "उमा" हुई जो पिंगल राजा को ब्याही थी। सावंतसिंह के पाट पर वीरमदेव बैठा। दूसरी रानी से अनबन एवं अपमानित होने के कारण भीमसिंह की पुत्री अपने पुत्र सागर को लेकर जालौर से अपने पिता के पास देवलवाड़ा चली आई और वहीं रहने लगी। भीमसिंह के कोई पुत्र नहीं था अतः उसके बाद दोहित्र सागर देवलवाड़ा का राजा बना। सागर बड़ा योग्य व वीर शासक था। उस समय मेवाड़ की गद्दी पर महाराणा रतनसी थे। श्री सुख सम्पतराय भण्डारी ने अपने इतिहास में मेवाड़ पर गोरी बादशाह के सं. १३०३ में हुए आक्रमण का जिक्र

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

किया है। सागर ने अवश्य इस युद्ध में मेवाड़ की ओर से लड़कर गोरी को शिकस्त दी परन्तु वह समय १२वीं शताब्दी का था। सागर ने मेवाड़ के राजा रतनसी को अन्य अनेक युद्धों में विजय दिलाई। गुजरात व मालवा के शाह शासकों को जीतकर उन्होंने २२ लाख रूपये दंड स्वरूप वसूल किए पर उनका राज्य उन्हें लौटा दिया। महाराणा ने प्रसन्न होकर सागर को मंत्री पद दिया। सागर शैवमतावलम्बी थे।

सागर के तीन पुत्र थे: बोहित्थ, गंगदत्त और जयसिंह। सागर की मृत्यु के बाद बोहित्थ राजा बना। संवत् ११९७ में आ. जिनदत्त सूरि के उपदेश से बोहित्थ नें जैन धर्म अंगीकार किया। बोहित्थ एक युद्ध में काम आए। बोहित्थ की आर्या वहरंगदे थी।

उनके आठ पुत्र थे: श्री कर्ण, जेसा, जयमल, नान्हा, भीमसिंह, पदमसिंह सोम जी, पुण्य-पाल। बोहित्थ की मृत्यु पर ज्येष्ठ पुत्र श्री कर्ण राजा बने।

कालान्तर में मुहम्मद गौरी की सेना से टक्कर लेते हुए वे भी मारे गए। उनकी भार्या रत्ना अपने चारो पुत्रों— समधर, वीरदास, हरिदास और उद्धण को लेकर पीहर रवेड़ी ग्राम (गुजरात) जाकर रहने लगी। संवत् १३२३ में वहाँ आ. जिनेश्वर सूरि पधारे। उनके उपदेशों से प्रभावित हो चारों भाईयों ने श्रावक व्रत ग्रहण किया। आचार्य ने उन्हें ओसवाल वंश में शामिल कर उनके पितामह के नाम पर उनका बोहित्थ गोत्र निर्धारित किया। कालांतर में बोहित्थ का अपभ्रंश बोथरा हो गया।

प्रसिद्ध इतिहासकार श्री बलवंत सिंह जी मेहता 'बोहित्थ' नामकरण को इस गोत्र के श्रेष्ठियों के सुदूर विदेशों में जहाजों द्वारा व्यापार किए जाने से सम्बंधित मानते हैं। संस्कृत भाषा में 'बोहित्थ' का अर्थ 'जहाज' होता है। ओसवालों के अनेक गोत्रों का नामकरण पेशे के आधार पर हुआ है।

नाहर ग्रंथागार में उपलब्ध "अथ महाजना री जाता रौ झन्द-मथेन अमीचन्द रौ कयौ" के अनुसार सोवनगिर नगर के चहुआण राजा सगर के पुत्र बोहित्थ को साँप ने डस लिया। वह आ. जिनदत्त सूरि के वासक्षेप से स्वस्थ हुआ। उसने सं. १११७ ("ग्यारह सतर" जो ११७० भी हो सकता है) में जैनधर्म अंगीकार किया एवं ओसवाल जाति में शामिल हुआ। उनके वंशज बोहित्थरा कहलाऐ। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर के ग्रंथागार में उपलब्ध हस्त-लिखित ग्रंथ 'इतिहास-ओसवंश' (गुटका न. २७०३३ संवत् १९१३ में लिपिबद्ध) में बोहित्थरा गोत्र-उत्पत्ति की ऐसी ही कथा दी है एवं समय 'इग्यारै सत्तरौ' या "इग्यारे सतरा" लिखा है। केशरियानाथजी मंदिर स्थित ग्रंथागार के 'ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति' (गुटका न. २२) ग्रंथ में स्पष्टतः उत्पत्ति समय संवत् १११७ दिया है।

इनके वंशजों ने कई बार संघ निकाले। श्री कर्ण के पुत्र समधर ने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। मार्ग में आए स्वधर्मी बन्धुओं को एक स्वर्ण मोहर और सुपारियों भरे चाँदी के थाल दिए। तब से उसके वंशज फोफलिया कहलाने लगे। बोहित्थ गोत्र की और भी शाखाएँ कालांतर में हुई यथाः मुकीम, डूंगराणी, शाह, रताणी, जोगावत, बच्छावत, दस्साणी, फोफलिया आदि।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

समधर के पुत्र तेजपाल ने संवत् १३७७ में तीन लाख रूपये खर्च कर आ. जिनकुशल सूरि जी का पाट महोत्सव कराया, पाटण में जिन मन्दिर और धर्मशाला बनवाई एवं शत्रुञ्जय आदि तीर्थों के लिए संघ निकाला। तेजपाल के पुत्र बीलहा और उनके पुत्र कडुवा मेवाड़ जाकर बस गए। उन्होंने महाराणा और मालवा के राजा के बीच संधि करवाई। बाद में बील्हा अन्हिलवाड़ पट्टन के शासक नियुक्त हुए। संवत् १४३२ में आ. जिनराज सूरि के महोत्सव पर उन्होंने अपार धन खर्च किया और शत्रुञ्जय तीर्थों के लिए संघ निकाला। कडुवा मेवाड़ के प्रधानमंत्री बनाए गए। कडुआ जी के पुत्र मेराजी ने तीर्थों पर लगे करों को माफ करवाया। उनके पुत्र मांडणजी सौराष्ट्र जाकर बसे। कडुआ की चौथी पीढ़ी में जेसल हुए जिनके तीन पुत्र थेः बच्छराज, देवराज, हंसराज। इस तरह बोहित्थ की ११वीं पीढ़ी में बच्छराज जी हुए जिनसे बच्छावत गोत्र की उत्पत्ति हुई। उनके छोटे भाई देवराज जी के ज्येष्ठ पुत्र दस्सु जी हुए जिनके वंशज दस्साणी कहलाए। इस परिवार का कारोबार कलकत्ता, बीकानेर, रायपुर आदि स्थानों पर है।

इनके वंशज गोगोलाय, नागौर, बाड़मेर, उदयपुर, बीकानेर, राजलदेसर, चुरू, सरदार शहर, इन्दौर, नवपाटा, नासिक, फरीदकोट, मद्रास, कटंगी, दुर्ग आदि स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते हैं।

गंगाशहर के सेठ हनुमान बख्श बोथरा संवत् १९७६ में यहाँ आकर बसे। उनके पूर्वजों ने दिनाजपुर में व्यवसाय आरंभ किया। कालांतर में कलकत्ते में अगरचंद चतुर्भुज फर्म की स्थापना हुई। ये परिवार कपड़ा, आढ़त आदि अन्यान्य व्यवसायों में संलग्न हैं।

गोगोलाव के श्री लालचंद अमानमल के पूर्वज करीब २५० वर्ष पूर्व बीकानेर से बडगाँव जाकर बसें। उनके पौत्र लालचंद जी ने संवत् १९०६ में चितामारी (बंगाल) में जाकर कपड़े का व्यवसाय किया एवं सम्पत्ति अर्जित की। संवत् १९३६ में आपने सम्मेद शिखर का संघ निकाला। इनके वंशज कपड़ा, जूट, ब्याज, जमींदारी के काम में भारत के विभिन्न नगरों में संलग्न हैं।

बीकानेर के सेठ सवाईराम जी तमाखू की सप्लाई का काम करते थे। उनके वंशज "मुकीम बोथरा" कहलाए। इनके वंशज जैतमल जी को खजाने का काम सौंपा गया। अतः इनका परिवार कालान्तर में खजांची कहलाने लगा। कलकत्ते में इस परिवार का कपड़े का कारोबार होता था। चूरू के सेठ रूक्मानन्द सागरमल के खानदान का मूल निवास जालौर था। संवत् १८८० में इस खानदान के सुलतानचन्द जी ने चूरू आकर अपनी हवेली बनवाई। इनके वंशज रूक्मानन्द जी संवत् १९४९ में कलकत्ता आए। उन्होंने संवत् १९६५ में रूक्मानन्द सागरमल नामसे कपड़े का व्यवसाय किया। आप लोगों ने जापान व इंग्लैण्ड से कपड़े का आयात करना शुरू किया जिसमें बहुत सफलता प्राप्त की एवं सम्पत्ति अर्जित की। इस परिवार का बैंकिंग, जूट, जमींदारी एवं सर्राफा व्यवसाय होता हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दस्साणी

यह बोहित्थरा (बोथरा) गोत्र की एक शाखा है।

जेसल जी के दूसरे पुत्र देवराज जी के तीन पुत्र थे: दस्सू जी, तेजा और भूणा। इनमें दस्सू जी प्रतापी हुए। दस्सू जी के वंशज दस्साणी कहलाए। थली के अनेक ग्रामों में इस खानदान के परिवार रहने लगे हैं एवं कलकत्ता, बीकानेर, रायपुर आदि स्थानों पर व्यवसाय करते हैं।

सरदार शहर के सेठ चौथमल दुलीचन्द्र दस्साणी के परिवार का मूल निवास अजमेर था। वहाँ से बीकानेर, डांडूसर होते हुए इस खानदान के दस्साणी हुकुमचंद जी सरदार शहर बसने के समय वहाँ जाकर बसे। अन्य दो भाई रूणिया बास एवं कुचेरा निवास करते रहे। हुकुमचन्द जी ने संवत् १९१५ में कलकत्ते में कपड़े का व्यवसाय आरम्भ किया— चोथमल दुलीचंद नाम से। ये बाहर विदेशों से कपड़े का आयात करने वाले प्रमुख व्यापारी थे। इसके अलावा अब उस परिवार का बैंकिंग, जूट, कमीशन, जमींदारी आदि विभिन्न व्यवसाय होते हैं। इनके लड़कों ने कानपुर में चौथमल-मुल्तानमल के नाम से कपड़े का व्यवसाय स्थापित किया।

सेठ शालीगराम लूनकरण का खानदान बीकानेर में कपड़े का व्यवसाय करता हैं। इन्होंने कलकत्ते में भी संवत् १९२२ से कपड़ा व्यवसाय में अच्छी प्रतिष्ठा एवं समृद्धि अर्जित की है।

बच्छावत (मेहता)

नाहर ग्रंथागार में उपलब्ध मथेन अमीचन्द रचित "महाजना री जाता रो छन्द" के अनुसार "जालोर रा धणी" सावतं सिंह (सोनगरा चौहान) की वंशावली इस प्रकार है: सावतंसी— सागर— बोहित्थ (जैन धर्म अंगीकार किया)— राघण— समरथ— तेजसी (ओसवालों में शादी की)— बिल्हो— कड़वो— ऊदो— नागदे— देशल— बच्छो। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर स्थित ग्रंथागार में उपलब्ध इतिहास ओसवंश ग्रंथ में सावंत सिंह को देवड़ा चौहान लिखा है। इस ग्रंथ के अनुसार बोहित्थ ने जैन-धर्म अंगीकार किया। किन्तु ओसवालों से विवाह-सम्बन्ध तैजसी जी के समय में शुरू हुआ।

इस तरह बोहित्थरा वंश की ११वीं पीढ़ी में श्रेष्ठि बच्छराज जी हुए जिन्हें मंडोर के राठोर राजा राव रणमल ने अपना मंत्री बनाया। राव रणमल की मृत्यु पर उनके पुत्र राव जोधा जी ने भी मंत्री बनाकर उनका सम्मान किया। जोधा जी के पुत्र राव बीका जी (वि. स. १५४१) में जब नया देश फतह करने चले तो १४ प्रधान सामंतों— काका कांथल जी, रूपा जी, मांडण जी, मंडला जी, वापू जी, जोगायत जी, बीदा जी, कोठारी सांखला नापा जी, पडिहार बेला जी, बैद लाला लखणसी, कोठारी महाजन चोथमल, बछावत बच्छराज, प्रोहित विक्रमसी, माहेश्वरी राठी साह साला जी— में बच्छराज जी भी उनके साथ थे। उन्होंने संवत् १५४१ में राती घाटी पहाड़ पर एक किला बनवा कर बीकानेर की नीवं रखी। संवत् १५४५ में बीका जी ने बीकानेर राज्य की स्थापना की एवं बोथरा बच्छराज जी को अपना मंत्री नियुक्त किया। वे अनेक लड़ाइयों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में वीरता पूर्वक लड़े। राव बीकाजी ने प्रसन्न होकर आपको "परभूमि पंचानन" की उपाधि से अभिषिक्त किया। बच्छराज जी ने बीकानेर के निकट बच्छासर नाम का एक गाँव बसाया। इन्होंने शत्रुञ्जय एवं गिरनार की तीर्थयात्रा पर एक संघ निकाला। इन्ही के नाम पर इनके वंशज बच्छावत कहलाए।

बच्छराज जी के तीन पुत्र थे: करमसी, वरसिंह, और नरसिंह। (महाजना री जातां रो छन्द' के अनुसार बच्छो जी के चार पुत्र थे (तीसरे पुत्र का नाम डूंगर था।) ज्येष्ठ पुत्र करमसी भी बीकानेर दरबार राव लूणकरण जी (संवत् १५६१-१५८३) द्वारा मंत्री नियुक्त हुए। उन्होंने संवत् १५७० में बीकानेर में नेमीनाथ स्वामी का मंदिर बनवाया एवं शत्रुञ्जय, आबू व गिरनार तीर्थों के संघ निकाले। इन्होंने करमसीसर गांव बसाया। ये नारनोल में लोदी "हाजी खाँ" के साथ राज्य की ओर से युद्ध करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए। "महाजनांरी जाता रा छन्द" के अनुसार इनके वंशज रिणी जा बसे। बच्छावत जी के छोटे पुत्र वरसी जी राव जेतसी के समय (संवत् १५८३-१५९८) मंत्री रहे। आपने भी तीर्थों के संघ निकाले। इनके पुत्र डूंगरसी जी के वंशज डूंगराणी कहलाने लगे जो लूणसर जा बसे। इस तरह बच्छावत गोत्र की भी उपशाखाएँ हुई।

वरसी जी के द्वितीय पुत्र नगराज जी प्रतिभावान थे। वे राव जेतसी जी द्वारा राज्य के मंत्री नियुक्त हुए। ये बड़े स्वामिभक्त एवं चतुर राजनीतिज्ञ थे। इनके समय में जोधपुर महाराज मालदेव ने बीकानेर पर आक्रमण किया। कोई उपाय न देखकर नगराज जी स्वयं दिल्ली के बादशाह से मदद मांगने दिल्ली गए। उन दिनों दिल्ली में शेरशाह सूरि बादशाह था। उन्होंने नगराज जी के साथ फौज भेज दी। परन्तु उनके पहुँचने से पहले ही मालदेव लड़ाई जीत चुका था। जेतसी उस युद्ध में मारे गये। नगराज जी ने हिम्मत नहीं हारी। दिल्ली की फौज ने जोधपुर पर आक्रमण कर दिया। मेड़ता के सरदार बीरमदेव की मदद से जीत उनकी हुई और बीकानेर मुक्त करवा लिया। नगराज जी ने जेतसी के पुत्र कल्याणसिंह को राजगद्दी पर बिठाया। नगराज जी ने राज्य की बहुत सेवा की। इन्होंने संघ निकाला एवं तीर्थों पर गड़बड़ देख भंडार की व्यवस्था की। वि. संवत् १५८२ में बीकानेर में अकालपड़ा तब ३ लाख रूपयों का अनाज दरिद्रों में बांटा। इन्होंने अपने नाम से नागसर गांव बसाया। इनके पुत्र संग्रामसिंह जी राव कल्याणसिंह जी के समय मंत्री रहे। आप बड़े साहसी और प्रभावशाली व्यक्ति थे। आ. जिन माणिक्य सूरि के सान्निध्य में इन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। मेवाड़ के राणा उदयसिंह ने आपका बड़ा सम्मान किया।

संग्रामसिंह जी के पुत्र कर्मचन्द जी (विं.संवत् १५८६-१६५६) बड़े प्रतापी हुए। वे महाराजा रायसिंह जी के समय बीकानेर राज्य के दीवान रहे। मुगल सम्राट् अकबर पर आपका बहुत प्रभाव था। ओसवाल कुल के इतिहास पुरुषों में आपकी जीवनी अन्यत्र ग्रंथ में दी जा रही है। अंतिम समय में महाराजा रायसिंह जी से अनबन के कारण आप दिल्ली रहने लगे थे। आपके दो पुत्र थे— भागचन्द जी और लक्ष्मीचन्द जी। महाराजा सूरसिंह जी ने आपको दिल्ली से बीकानेर बुलाकर वि. संवत् १६७०-७१ में राज्य का दीवान बनाया। परन्तु यह एक षड़यंत्र की यवनिका मात्र था। शीघ्र ही फौज भैज कर बच्छावतों का समस्त परिवार घेर लिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दोनों मंत्रीवर साहसपूर्वक लड़कर वीरगति को प्राप्त हुए। परिवार की समस्त स्त्रियाँ जौहर में जल कर सती हो गई।

इनके नौकर-चाकर भी बलि हुए— उनमें चमार रगनिया जुझार हुआ जिसे भोजक लोग रगनिया वीर नाम से पूजते हैं। कहते हैं जौहर की इस ज्वाला से एकमात्र बची मंत्रीवर भागचन्द जी की पत्नि गर्भवती थी, सेवक रघुनाथ की सहायता से भाग कर उसने करणी माता के मन्दिर में शरण ली और वहाँ से अपने पीहर किशनगढ़ चली गई। वि. संवत् १६७१ में उनकी कुक्षि से भाण का जन्म हुआ— इन्ही से बच्छावत वंश चला। कहते हैं भाण दानवीर भामाशाह के भाणजे थे।

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के ग्रंथागार में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रंथ 'इतिहास ओस वंश' (क्रमांक- २७०३३ संवत् १९१३ में लिपिबद्ध) के अनुसार "भागचन्दजी लखमीचन्द जी नुं जौहर हुयो, तद् ध्याय (नौकरानी) भागचन्दजी रा छोटा बेटा, ज्यां नु हांचल चुंगावतां, लेनैं भागी तिणरा उदैपुर छे।" इस ग्रंथ के अनुसार भागचन्दजी के पुत्र का नाम नौहरदास एवं लखमीचन्दजी के पुत्र का नाम रामचंद था जिनके पुत्र "रघुनाथ जी उदैपुर बसे छे।"

कालान्तर से बीकानेर दरबार में भी बच्छावत खानदान का सम्मान फिर से बहाल हो गया। इस खानदान के खेमराज जी को बुलाकर दरबार ने उन्हें खीयासर गांव इनायत किया एवं अठारह हजार बीघा जमीन देकर बड़े कारखाने (दरबार) में बछावतों का हाजर रहना कायम किया।

भाण के पुत्र जीवराज हुए— उनके पुत्र लालचन्द। लालचन्द के प्रपौत्र पृथ्वीराज जी के समय उदयपुर के महाराणा से इस परिवार के सम्बन्ध जुड़े। पहले ये लोग मेवाड़ के घासा ग्राम में रहते थे। वे राज्य द्वारा देबाड़ी दरवाजे के मोसल नियुक्त हुए, फिर जनानी ड्योढ़ी पर मोसल हुए। अन्ततः पृथ्वीराज जी दरबार के खास रसोड़े के अधिकारी बने। इनको मेहता विरुद प्राप्त हुआ।

पृथ्वीराज जी के पुत्र मेहता अगरचन्द जी (वि. संवत् १७७७-१८५६) बड़े प्रतापशाली हुए। महाराणा अरसिंह ने उनकी योग्यता पहचान कर उन्हें अपना प्रधान बनाया। वे उच्च कोटि के शासक और राजनीतिज्ञ थे। संवत् १८२२ में महाराणा ने उन्हें माण्डलगढ़ किले का पट्टा सौंप दिया। दुर्ग पर निरन्तर मराठों और मुगलों के हमले हो रहे थे— किला बागी सरदारों के कब्जे में था— उसे अगरचन्द जी ने युद्ध में जीता था। किला सौंपते हुए महाराणा ने रूक्के में उल्लेख किया कि किला इनके वंशजों की सम्पत्ति समझा जायेगा। उसी समय गोगुन्दा के झाला जसवन्तसिंह ने रत्नसिंह को मेवाड़ की गद्दी का उत्तराधिकारी कह कर विवाद खड़ा किया— कुछ अन्य सरदार भी उनके साथ हो गए। मराठा सरदार सिंधिया को भी उन्होंने अपनी ओर कर लिया। वि. संवत् १८२५ में युद्ध छिड़ा— दीवान अगरचन्द जी युद्ध भूमि में लड़ते हुए गिरफ्तार कर लिए गए। महाराणा के आदेश पर हेली के ठाकुर शिवसिंह ने उन्हें शिवा जी की तरह जेल से छुड़ा लिया। सिंधिया सरकार ने एक बार फिर उदयपुर घेर लिया। अन्ततः

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वि. संवत् १८२६ में उसे ६० लाख रूपए देकर संधि की गई। इसके फलस्वरूप जावद, नीमच, जीरण, मोरवण के परगने महाराणा को सिंधिया के पास गिरवी रखने पड़े। बागी सरदारों से फिर युद्ध हुआ। इस बार महाराणा की जीत हुई। वि. संवत् १८२९ में महाराणा अरिसिंह की मृत्यु हुई। महाराणा हमीरसिंह ४ वर्ष सिंहसनारूढ़ रहे। उनके बाद वि.संवत् १८३४ में महाराणा भीमसिंह गद्दी पर बैठे। मेहता अगरचन्द जी तीनों महाराणाओं के काल में समय-समय पर वि. संवत् १९५७ तक मेवाड़ राज्य के प्रधान रहे।

इनके पुत्र मेहता देवीचन्द जी महाराणा भीमसिंह के समय दो बार राज्य के प्रधान बनाए गए। इन्होंने झाला जालिमसिंह के अनुचित दबाव में आकर मेवाड़ के महाराणा द्वारा तीन बार आदेश दिए जाने पर भी मांडलगढ़ का किला उनके सुपुर्द नहीं किया। जालिमसिंह ने जबरदस्ती किले पर कब्जा करना चाहा तो देवीचन्द जी ने युद्ध में परास्त कर भगा दिया। बाद में महाराणा ने जब जालिमसिंह का दबाव घटा तो इस निर्भीकता के लिए उनकी प्रशंसा की और वि. संवत् १८७५ में उन्हें मेवाड़ का प्रधान बनाया।

मेहता देवीचन्द जी के भतीजे मेहता शेरसिंह जी भी महाराणा भीमसिंह द्वारा प्रधान नियुक्त किए गए। इनके अलावा वे महाराणा जवानसिंह, सरदार सिंह एवं स्वरूपसिंह के काल में भी समय-समय पर प्रधान बनाए गए। मेहता देवीचन्द जी के पौत्र मेहता गोकुल चन्द जी (संवत् १९१६ से १९३५ के बीच) तीन बार राज्य के प्रधान चुने गए— महाराणा स्वरूपसिंह, शम्भूसिंह और सज्जनसिंह (वि. संवत् १९३१-४१) के काल में। संवत् १९३१ में जब महकमा खास बना तो उन्हें मुख्यमंत्री बनाया गया। वे अंतिम ओसवाल प्रधान थे। सं. १९३६ में उनकी मृत्यु हुई। गोकुलचन्द जी के भतीजे मेहता पन्नालाल जी भी इन तीनों राणाओं के कार्यकाल में समय-समय पर राज्य के दीवान बने। पर राणा के बहकावे में आ जाने से कैद में भी रखे गए। भारत सरकार आपसे बहुत प्रसन्न थी। संवत् १९३७ में आपको उच्च पदवी से सम्मानित किया गया। आपने अपने पिता की स्मृति में सदाव्रत खोला एवं उदयपुर में बगीचा एवं धर्मशाला बनवाई।

मेहता पन्नालाल जी के पुत्र मेहता फतहलालजी राज्य की न्याय सभा (हाई कोर्ट) के कई वर्षों तक सदस्य रहे। आप राज्य में प्रथम अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त व्यक्ति थे। महाराणा अंग्रेजी के काम इन्हीं से लेते थे। आपने "हैण्ड बुक आफ मेवाड़" लिखकर प्रकाशित करवाई। वि. संवत् १९५१ में काशी नागरी प्रचारिणी सभा के विशेष अधिवेशन की अध्यक्षता आपने ही की। बटलर कमीशन के समक्ष रियासत का प्रतिनिधित्व आपको सौंपा गया। महाराणा ने आपको पाँवों में सोना बख्शा। आपको साहित्य एवं योगाभ्यास से विशेष प्रेम था। आपकी ड्राईंगरूम में सभी राणाओं एवं कर्मचन्द जी बच्छावत से लेकर सभी पूर्वजों के तैलचित्र टंगे थे। विदेशी पत्रों में भी आपकी प्रशंसा में अनेक लेख छपे हैं। इनके पौत्र (देवीलाल जी के सुपुत्र) मेहता कन्हैयालाल जी राजस्थान के प्रथम आई.सी.एस. आफिसर थे। वे स्वतन्त्र भारत में पं. नेहरू के अतिरिक्त चीफ सेक्रेटरी नियुक्त हुए। तदन्तर वे विदेशों में राजदूत एवं हाई कमिश्नर रहे।

जयपुर के मेहता माणकचन्द मिलापचन्द बच्छावत के खानदान के पूर्व पुरूष भैरो दास जी संवत् १८२६ में जोधपुर से यहाँ आकर बसे। वे परिवार राज्य की सेवारत रहे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कुन्नूर (नीलगिरी) के सेठ हीरालाल पन्नालाल बच्छावत के खानदान का मूल निवास फलोदी था। इनके पूर्वज सेठ खींवराज जी संवत् १९६५ में लोटा डोर लेकर निकले और हजारों मील तय कर मैसूर प्रान्त में आकर बसे एवं अच्छी सम्पत्ति अर्जित की।

बच्छावत गोत्र के १६ वीं से १७ वीं शताब्दी के बीच के अनेक शिलालेख नागौर, बीकानेर, जैसलमेर, मेड़ता, कुचेरा, सांगानेर, विक्रमपुर, सुजानगढ़, सरदार शहर, भीनासर, सिरोही आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

मुकीम

बोथरा सवाईराम जी एवं उनके वंशज बीकानेर राज्य में मुकीमात व तमाखू का कार्य कई वर्षों तक करते रहे। श्री सोहन राज जी भंसाली (ओस वंश) के अनुसार इसीलिए इस परिवार के लोग मुकीम कहलाए। इनके वंशज जैतमल जी को खजाने का काम सौंपा गया। अस्तु, इनका परिवार कालांतर में खजांची कहलाने लगा। यह परिवार कलकत्ते में कपड़े का कारोबार भी करता था।

फोफलिया

बोहित्थ— पुत्र श्री कर्ण की मृत्योपरांत उनके समधर आदि चारों पुत्रों ने संवत् १३२३ में आ. जिनेश्वर सूरि से प्रतिबोध पाकर जैन श्रावक धर्म अंगीकार किया एवं बोहित्थरा कहलाए। समधर जी ने शत्रुञ्जय संघ समायोजन के समय स्वधर्मियों को सुपारी से भरे थाल भेंट किए। तब से उनके वंशज फोफलिया कहलाने लगे।

इस गोत्र के शिलालेख, पाली, आगरा, लोद्रवा, जयपुर, सांभर, चाणस, जैसलमेर, बीकानेर आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

लोढ़ा

इस गोत्र की उत्पत्ति देवड़ा चौहानों से मानी जाती है। पृथ्वीराज चौहान के सूबेदार लाखनसिंह को कोई सन्तान न थी। इससे दुःखित वह जैनाचार्य श्री रवि प्रभ जी सूरि की शरण में आया। उनके आशीर्वाद से सन्तान सुख प्राप्त हुआ। उसने जैनधर्म अंगीकार किया। किन्तु,मन में कपट रखने से पुत्र लोदे जैसा हुआ। बाद में सूरि जी से क्षमायाचना करने पर पुत्र पूर्ण स्वस्थ हुआ। कहीं-कहीं ऐसा उल्लेख हैं कि क्षमायाचना करने पर उस लोदे को सूरि जी ने वटवृक्ष की खोखर मे रखवा दिया। लाखन सिंह को पुनः पुत्र प्राप्ति हुई। सूरि जी ने उनका लोढा गोत्र निर्धारित किया।

केशरियानाथ जी के मंदिर स्थित ग्रंथागार में उपलब्ध ग्रंथ "ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति" (गुटका न. २२) के अनुसार 'चहुआण क्षत्री चावां' पुत्र के बिना चिंतित रहते थे। उन्हें गुरु सोमजी उपाध्याय ने प्रतिबोध दिया। सामंत के 'दिल री दुविधा जाण' एक 'पूतलो बणायों' एवं पवित्र वस्त्र में लपेट कर उसे वन में बड़ वृक्ष तले रख दिया गया। इससे तरुवर ने प्रसन्न

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

होकर पुत्र का वरदान दिया। इस तरह सामंत ने संवत् ७३२ में जैनधर्म अंगीकार किया एवं गुरु ने उनको ओसवाल कुल में शामिल कर 'लोढ़ा' गोत्र निर्धारित किया।

नाहर ग्रन्थागार में उपलब्ध "महाजनां री जातां रां छन्द" से भी उक्त कथा की पुष्टि होती है। किन्तु छन्द में चहुआण सामंत का नाम 'लाखन सिंह' न देकर "इक नरपति चवां सुतन बिन बहु चिंत" कह कर परिस्थिति दर्शायी गई है। इसी तरह का उल्लेख राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान में उपलब्ध 'इतिहास ओस वंश' में मिलता है। गुरू से प्रतिबोध पाकर जैनधर्म अंगीकार करने एवं ओसवाल जाति में सम्मिलित होने का समय संवत् ७३२ दिया है।

लोढ़ों की कुलदेवी बड़लाई माता मानी जाती है। नागौर में बसे लोढ़ा परिवार सन्तान उत्पन्न होने पर उसे बड़लाई माता के दर्शन अवश्य कराते हैं एवं मुण्डन व नामकरण भी वहीं जाकर करते हैं। इस वंश के लोग काली बकरी या भैंस अपने घर में नहीं रखते, उसे अपशकुन मानते हैं। इस वंश के कतिपय परिवार कुछ समय पूर्व जैनधर्म छोड़ कर वैष्णव हो गए हैं।

पूर्व पुरुषों के नाम पर इस कुल की चार शाखाएं हुई— टोडरमलोत, छजमलोत, रतनपालोत और भावसिंहोत। टोडरमल अकबर के दरबार में कोषाध्यक्ष थे। टोडरमल और छजमल को दिल्ली सम्राट की ओर से शाह की पदवी मिली थी।

टोडरमल खानदान के परिवार जोधपुर राज्य की सेवा में नागौर रहते थे। इनके वंशज शाहमल जी बड़े प्रतापी हुए। इन्हें संवत् १८४० में जोधपुर का कमाण्डर इन चीफ नियुक्त किया गया। उन्होंने राज्य की ओर से कई लड़ाइयां लड़ी जिसके एवज में महाराजा विजयसिंह जी ने संवत् १८४९ में उन्हें रावराजा शमशेर बहादुर की पदवी प्रदान की। साथ ही, २९ हजार की जागीर और पैरों में सोना पहनने का अधिकार दिया। आपके पुत्र रावराजा रिधमल जी वीर प्रकृति के थे। उन्होंने पुष्कर के कसाईखाने को बन्द करवाने में विशेष प्रयत्न किया था। आपने फौज लेकर लाडनूं ठाकुर साहब के साथ उमरकोट पर चढ़ाई की थी। आपने संवत् १८९८ में महाराजा से प्रार्थना कर ओसवाल समाज पर लगने वाले कर को माफ कराया था। इस वंश के रावराजा राजमल जी संवत् १९०७-८ में महाराजा तख्तसिंह जी के समय जोधपुर राज्य के दीवान थे। संवत् १९३३ में रावराजा सरदारमल जी महाराजा जसवन्त सिंह जी के समय राज्य के दीवान हुए। उन्हें दरबार ने कड़ा, सिरपेच, सिरोपाव व पालकी इनायत की। संवत् १९४१ में आप राज्य के वकील बनाए गए। इसी परिवार के रावराजा माधोसिंह जी अनेक परगनों के हाकिम रहे। आप जोधपुर के ओसवाल श्री संघ के प्रेसिडेन्ट थे। इस परिवार के लोग सांचोर, जोधपुर, जेतारण, पचपदरा, पाली, जालौर आदि अनेक स्थानों पर हाकिम रहे।

सुजानगढ़ का लोढ़ा खानदान

इनके पूर्वज सेठ बागमल जी लोढ़ा का मूल निवास नागौर था। वहीं व्यापार करते थे। वि. संवत् १९०० में वे सुजानगढ़ बसे। इनके पुत्र सूरजमल जी और चांदमल जी थे। सेठ सूरजमल ने अपने भतीजे इन्द्रमल को गोद लिया। इनका सुजानगढ़ में सूरजमल इन्द्रमल के नाम से साहूकारी व्यवसाय था। सेठ इन्द्रमल के चार पुत्र थे— जीवनमल, आनन्दमल, दौलतमल

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

और कानमल। इन भाइयों ने वि. संवत् १९५१ में आनन्दमल कानमल के नाम से कलकत्ते में जूट का व्यापार शुरू किया। बाद में कपड़े के व्यवसाय में भी आए। वि. संवत् १९७५ में चारों भाई आलग-अलग कारोबार करने लगे। सेठ जीवनमल सुजानगढ़ में कारोबार करते रहे। सेठ आनन्दमल ने रंगपुर में आनन्दमल किशनमल के नाम से फर्म स्थापित कर जूट का व्यापार प्रारम्भ किया। सुजानगढ़ की ओसवाल पंचायत में आपका अच्छा सम्मान था। आपके तीन पुत्र थे— छगनमल, किशनमल और माणकमल। सेठ दौलतमल भी जूट एवं कपड़े का व्यापार करते थे। सेठ कानमल कलकत्ते में केसरीमल बादरमल नाम से व्यापार करते थे। इस परिवार की ओर से सुजानगढ़ रेलवे स्टेशन पर एक सुन्दर धर्मशाला बनी हुई है।

जंडियाला का लोढ़ा खानदान

यह खानदान मूलतः अजमेर का ही है जहां से करीब २५० वर्ष पूर्व ये लोग पंजाब के कसेल गांव में जाकर बसे। अब भी वहां इनके पूर्वजों की "बाबा बैरागी" नामक समाधि बनी हुई है। कसेल में एक विशाल मकान "भापडयानी" भी इसी खानदान का है। करीब ५० वर्ष बाद इनके पूर्वज नन्हूमल जंडियाला जाकर बसे। इस खानदान में लाला टेकचन्द जी बड़े प्रसिद्ध हुए। आपने पंजाब की स्थानकवासी जैन सभा की स्थापना संवत् १९६६ में की। आप वहां की नगरपालिका के कमिश्नर, उपाध्यक्ष व अध्यक्ष अनेक वर्षों तक रहे। आपके सार्वजनिक कार्यों की सर्वत्र बहुत प्रशंसा हुई। संवत् १९८४ में भारत सरकार ने आपको रायसाहब की पदवी दी। आप समाज सुधारक थे। ओसवालों के दसा-बीसा फिरकों में बेटी-व्यवहार फिर से चालू कराने का श्रेय आपको ही है।

अजमेर के लोढ़ा खानदान का देशी राज्यों में बहुत सम्मान रहा। इनके पूर्वज सेठ कमलनयन जी अलवर से संवत् १८६० में अजमेर आकर बसे। आपने किशनगढ़, जयपुर, जोधपुर, सीतामऊ, टोंक, फर्रूखाबाद आदि अनेक स्थानों पर दुकानें प्रस्थापित की। आपकी कार्यकुशलता एवं सत्यप्रियता से इस घराने की प्रतिष्ठा पूरे भारत में फैल गई। इनके पुत्र हमीर सिंह जी हुए जिन्होंने फर्रूखाबाद, टोंक, सीतामऊ में नई दुकाने, खोलीं। उनके पुत्र सुजानमलजी ने गदर के समय अंग्रेजों की बहुत सहायता की। तत्पश्चात आप अनेक रेजिडेसियो' में कोषाध्यक्ष नियुक्त हुए। आपके पुत्र समीरमलजी ने बहुत ख्याति अर्जित की। संवत् १९४८ में अकाल के समय आपने लोगों को सस्ते भाव में धान मुहैया करवा कर बड़ी प्रतिष्ठा अर्जित की। संवत् १९३४ में आपको ब्रिटिश सरकार ने रायसाहब की पदवी दी एवं १९४७ में रायबहादुर की पदवी से सम्मानित किया। आप करीब ३१ वर्ष तक अजमेर नगरपालिका के उपाध्यक्ष रहे। अजमेर में इसी समय फाई सागर का निर्माण हुआ। उदयपुर, जयपुर, एवं जोधपुर राज्यों की तरफ से आपको सोना और ताजिम हासिल था। इनकी मृत्यु पर इस घराने का कार्य संचालन उम्मेदमल जी ने संभाला। उन्होंने एडवर्ड मिल खोली एवं रेलवे के कोष एवं वेतन बांटने का ठेका लिया जिसे बड़ी उत्तम व्यवस्था से चलाया। आपको सरकार ने संवत् १९५८ में रायबहादुर की पदवी से सम्मानित किया। इन्होंने बी. बी. सी. आई. रेलवे का वेतन बांटने का ठेका लिया एवं खजांची मनोनीत हुए। संवत् १९७२ में सरकार ने आपको दीवान बहादुर की पदवी से

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रा. ब. सेठ बिरदमलजी लोढ़ा, अजमेर

सुशोभित किया। आपकी दुकानें भारत के विभिन्न नगरों में थीं जहां सोना व धातुओं आदि का विलायत से व्यापार होता था। आप मृत्युपर्यंत आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। अनेक रियासती नरेशों ने आपको सोना और ताजीम उपहार दिए। इनकी मृत्योपरान्त सेठ बिरदमलजी के हाथ में खानदान का संचालन आया। उन्हें सरकार ने संवत् १९८३ में राय बहादुर की पदवी दी। आपके भी देशी नरेशों से बहुत अच्छे सम्बन्ध थे।

लोढ़ा गोत्र के अनेक परिवार जोधपुर, नागौर, बगड़ी, भुसावल, हिंगनघाट, चांदा, मनमाड, कातर्णी, त्रिचनापल्ली, जांडियाला गुरू, रायकोट, अम्बाला, बनेड़ा आदि स्थानों पर निवास एवं व्यापार करते हैं। बनेड़ा का राजसिंह जी लोढ़ा का परिवार मूलतः मांडलगढ़ का है। उदयपुर महाराणा की ओर से इस परिवार को नगरसेठ की पदवी प्राप्त थी।

इस खानदान के अनेक शिलालेख कलकत्ता, बिहार, पटना, आगरा, दिल्ली, चेलपुरी, जोधपुर, मेड़ता, जूनाबेड़ा, अलवर, अजीमगंज, उदयपुर, जबलपुर, नागौर, जेसलमेर, सूरत, अजमेर, मालपुरा, कोटा, बूंदी, रतलाम, आमेर, किशनगढ़, साया, बीकानेर, बम्बई, सूरत, बालूपुर, शत्रुंजय, अहमदाबाद, बड़ौदा, राधनपुर, कतार गाँव आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

खजांची

देवीकोट के राजपूत सामंत कांधल जी ने संवत् १२१६ में आचार्य जिनचन्द्र सूरि के उद्बोधन से जैनधर्म अंगीकार किया। बोहरागत व्यवसाय करने से इनके वंशज बोहरा कहलाने लगे। इसी वंश के पूर्व पुरुष झांझण जी ४५० वर्ष पूर्व जेसलमेर की राजकुमारी गंगा के साथ बीकानेर आए। आपके पुत्र रामसिंह जी को तत्कालीन महाराजा ने खजाने का काम दिया। इससे खजांची कहलाए। इस परिवार में प्रेमचन्द जी नामांकित हुए। ये राज्य के जौहरी थे। इस परिवार का कलकत्ते में भी जवाहरात एवं कपड़े का काम होता है। इसी वंश का एक व्यक्ति सिंध में यहाँ के मुगड़ी बेरों का प्रसिद्ध व्यापारी था। अतः उसके वंशजों की मुगड़ी शाखा हुई।

भानपुर के विजयसिंह जी खजांची का खानदान अपनी उत्पत्ति चौहान राजपूतों से मानता है। ऐसा कहा जाता है कि सम्राट् अकबर ने इस खानदान के पूर्व पुरुषों को प्रान्तीय खजाने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

का काम सौंपा था, इससे खजांची कहलाए। इनका पूर्व निवास मारवाड़ था। बाद में होल्कर नरेश की सेवा में रामपुर चले आए। इस परिवार के तनसुखदास जी होल्कर नरेश की ओर से लड़ते हुए गरासियां की लड़ाई में मारे गए थे। महाराजा ने इनके परिवार को जागीरें इनायत की।

चांदा के श्री खुशालचन्द जी खजांची का परिवार बीकानेर से लगभग १३० वर्ष पूर्व कामठी आकर बसा। इस खानदान के श्री खुशालचन्द्रजी संवत् १९७० में चान्दा आए। आपकी सार्वजनिक कार्यों में बड़ी रुचि थी। संवत् १९७९ में आप म्यूनिसिपल मेम्बर और १९८४ में डिस्ट्रिक्ट काउंसिल के मेम्बर चुने गए। आपकी सेवाओं के फलस्वरुप आप संवत् १९८६ एवं पुनः १९८८ में म्यूनिसिपलिटी के अध्यक्ष चुने गए। आप कांग्रेस के सदस्य एवं अछूतोद्धार संघ के प्रेसिंडेन्ट रहे। स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय सहयोग देने के कारण आपको जेल भी जाना पड़ा। संवत् १९९० में बाढ़ के समय आपने गरीब जनता की बहुत सेवा की। चांदा में आपका बड़ा आदर था।

उदरामसर, बीकानेर आदि स्थानों पर इस गोत्र के शिलालेख मिले हैं।

मिन्नी

इनके पूर्वज चौहान राजपूत कहे जाते हैं। किंवदन्ती है कि महाजन कर्म ग्रहण करने के बाद एकदा इनके पूर्वज को यात्रा में डाकुओं का सामना करना पड़ा। उन्होंने डाकुओं को माल तो दे दिया पर चतुराई से एक रूक्का लिखवा लिया उसमें चौगुनी राशि लिखवा कर डोकरी की साक्ष्य भी डलवा ली जो पास ही खड़ी थी। कालान्तर में डाकू सेठ के ही नगर में माल बेचने आए। सेठ ने उन्हें राज्य के सैनिकों द्वारा पकड़वा दिया। न्यायाधीश ने गवाह की बाबत पूछा तो सेठ ने उत्तर दिया— "मिन्नी"। डाकू चट बोल पड़े— झूठा, डोकरी को "मिन्नी" कहता है। न्यायाधीश यह सुनकर समझ गया कि सेठ की बात सच्ची है। उसने डाकुओं से धन वापस करवा दिया। तबसे सेठ "मिन्नी" कहलाने लगा। कालान्तर में उसके वंशजों का गोत्र ही मिन्नी हो गया।

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार मोहनसिंह चौहान दिल्ली में संवत् १२१६ में आ. जिनचन्द्र सूरि के उपदेश से जैनी बने। उनका गोत्र मिन्नी प्रसिद्ध हुआ।

दूगड़/ सूगड़/ शेखाणी/ कोठारी

"ओसवाल जाति का इतिहास" के लेखक की सुखसम्पतराय भंडारी के अनुसार चौहान वंश के राजा बीसलपुर (अजमेर) में राज्य करते थे। वि. संवत् ८३८ में राजा माणिकदेव हुए जिनके पिता राजा महिपाल जी ने जैनाचार्य जिन वल्लभ सूरि से जैन धर्म अंगीकार किया था। इनकी तीसरी पीढ़ी में दूगड़-सूगड़ दो भाई हुए। इन्हीं के नाम पर इनके वंशज अनुमानतः संवत् ९१३ के लगभग दूगड़ कहलाए।

श्री सोहनराज जी भंसाली द्वारा 'ओसवाल वंश' ग्रंथ में दिए कथानक के अनुसार मेवाड़ मे आघाट गांव का शासक सूरदेव था, उसके दुगड़ सूगड़ दो पुत्र थे। ये दोनों भाई बड़े वीर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एवं कुशल प्रशासक थे। उन दिनों इस क्षेत्र में मीणों व भीलों का बड़ा आतंक था। चोरी,डकैती, हिंसा ये प्रतिदिन सामान्य बात थी। इन दोनों भाईयों ने बड़ी कुशलता से क्षेत्र में शान्ति स्थापित की। इसी आघाट गांव में नाहरसिंह का एक प्राचीन देवल था जिसे गांव के लोगों ने तुड़वा दिया था, जिससे नाहरसिंह प्रेत बन कर गांव के लोगों को भारी दुःख देने लगा। सब लोग परेशान थे। संवत् १२१७ में जैन आचार्य जिनचन्द्र सूरि आघाट पधारे। दूगड़-सूगड़ से इस विपत्ति की कथा सुनकर सूरि जी ने उपसर्गहर स्तोत्र जाप से उपद्रव शान्त कराया। इस चमत्कार से दूगड़ सूगड़ बहुत प्रभावित हुए और जैन श्रावक बन गए। तभी से इनका गोत्र दूगड़ सूगड़ प्रसिद्ध हुआ। खेताणी (खेता के वंशजों से) सेखाणी (सेखा जी के वंशजों से) एवं कोठारी (कोठार का काम संभालने से) इस गोत्र की शाखाएं हुई।

महाजन वंश मुक्तावली एवं जैन सम्प्रदाय शिक्षा में दिए कथानकों के अनुसार किसी समय पाणी नगर में सोमचन्द्र नामक एक खींची राजपूत अधिकारी रहता था। किसी कारणवश वह राजा से अनबन कर बैठा और वहां से भाग कर जंगल देश (जांगलू) जा बसा। इन्हीं सोमचन्द्र की ग्यारहवीं पीढ़ी में सूरसिंह हुए। वे बड़े शूरवीर थे। इनके दो पुत्र हुए दूगड़— सूगड़। ये दोनों भाई जांगलू छोड़ मेवाड़ के आघाट गाँव जा बसे। आघाट गाँव के निवासी नाहरसिंह नामक प्रेत से बहुत परेशान थे। अनेक तन्त्र-मन्त्र किए पर प्रेत-कष्टों से छुटकारा नहीं हुआ। तभी वि. संवत् १२१७ में जैनाचार्य जिनचन्द्र सूरि आघाट पधारे। उनके प्रताप से उपद्रव शान्त हुआ। दूगड़-सूगड़ दोनों भाई जैन श्रावक बने। तभी से उनके वंशज दूगड़-सूगड़ कहलाते हैं। उनसे प्रभावित हो सीसोदिया बैरीसाल भी श्रावक बना- उनका सीसोदिया गोत्र प्रसिद्ध हुआ।

कई पीढ़ी बाद इनके वंशज सुखजी वि. संवत् १७१९ में राजगढ़ आए। बादशाह शाह-जहां ने आपको सेनापति नियुक्त किया एवं राजा की पदवी दी। १८वीं शताब्दी में इनके वंशज वीरदास मुर्शिदाबाद में जा बसे। वहाँ पर बैंकिंग व्यवसाय शुरू किया एवं अनेक स्थानों पर जमींदारी कर ली। इस परिवार के राजा प्रतापसिंह जी दूगड़ ने अनेक जिलों में नई जमींदारी स्थापित की। अपने समय के आप जैन समाज में सबसे बड़े जमींदार थे। आपने सार्वजनिक कार्यों में खूब दान दिया, जैन मन्दिरों का निर्माण करवाया, पालीताना एवं सम्मेद शिखर के लिए संघ निकाले। दिल्ली के बादशाह और बंगाल के नवाब ने आपको खिल्लतों में सम्मानित किया। उनके पुत्र लक्ष्मीपत सिंह जी ने संवत् १९३३ में छत्रबाग (कठगोला) में एक दिव्य उपवन बनवाया जो बंगाल के दर्शनीय स्थलों में से एक हैं। संवत् १९२७ में आपने एक संघ निकला। संवत् १९२४ में भारत सरकार ने आपको राय बहादुर की पदवी से अलंकृत किया। आपके भ्राता धनपतसिंह जी दूगड़ ने जैन धर्म के आगम ग्रन्थों के प्रकाशन में प्रचुर धन व्यय किया एवं उन्हें मुफत बंटवाया। आपने २४ से भी अधिक स्थानों पर जैन मन्दिरों एवं धर्मशालाओं का निर्माण करवाया। शत्रुंजय तीर्थ की तलहट्टी में बनवाया मन्दिर तो भव्य है। आपने ४ बार संघ निकाले एवं सार्वजनिक संस्थाओं को मुक्त हस्तदान दिया। संवत् १९३२ में भारत सरकार ने आपको रायबहादुर की पदवी दी। आपके पुत्र गणपतिसिंह जी भी संवत् १९५५ में राय बहादुर के सम्मान से अलंकृत किए गए। आपके भ्राता नरपत सिंह जी ने अनेक जगह नई जमीं-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दारी स्थापित की। आपकी सम्पूर्ण जमींदारी ४०० वर्गमील में फैली हुई थी एवं डेढ़ लाख प्रजा आपका राजा के सम्बोधन से सम्मान करती थी। आपको भारत सरकार ने "कैसरे हिन्द" की उपाधि प्रदान की एवं राय बहादुर का सम्मान दिया।

इसी परिवार के राजा बहादुर सिंह जी बड़े उदार हृदय रईस थे। सम्मेदशिखर, चम्पापुरी आदि तीर्थों का प्रबन्ध जैन समाज की ओर से आपके जिम्मे किया गया था। आपकी जमींदारी बालूचर स्टेट नाम से प्रसिद्ध है। संवत् १८९५ में बालूचर निवासी दूगड़ हर्षचन्द जी ने शत्रुंजय तीर्थ पर चन्द्रप्रभु, स्वामी का देवालय बनवाया एवं प्रतापसिंह जी ने शत्रुजंय तीर्थ का संघ निकाला। इसी परिवार में श्रीपत सिंह जी दूगड़ नामांकित व्यक्ति हुए हैं। आपने भागलपुर, राजगृह, पावापुरी, जियागंज, काठगोला, वाराणसी आदि स्थानों पर स्थित प्राचीन जैन मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया। कलकत्ता के जैन भवन का पुस्तकालय कक्ष आप ही के अनुदान से निर्मित हुआ है। आपने अपना जियागंज स्थित महल (निवास) हाई स्कूल भवन हेतु प्रदान कर अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। संवत् २०१९ में आपका सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया।

नामली के कोठारी जवाहरचन्द जी दूगड़ के खानदान का मूल निवास नागौर था। इनके पूर्व पुरुष पंचानन जी को रावराजा बहादुर की पदवी मिली हुई थी। संवत् १७६५ में आपको सोना, हाथी, पालकी, सिरोपाव आदि इनायत हुए थे। आपके पुत्र बल जी नामली आकर बसे एवं कोठार का काम करने से कोठारी कहलाए। इसी परिवार के कोठारी हीराचन्द जी उच्च कोटि के कवि थे। राज दरबार में उनका अच्छा सम्मान था। कोठारी जवाहरचन्द जी रतलाम राज्य के दीवान हुए।

जम्मू के दूगड़ खानदान का मूल निवास बीकानेर था। सैंकड़ों वर्ष पहले वे बीकानेर से सरसा और वहां से वसूर जाकर बसे। महाराजा रणजीत सिंह के समय यह खानदान लाहौर जाकर बसा, वहाँ से मजीठा, गदर के समय सियालकोट और अन्ततः जम्मू आ गया। इस परिवार में श्री विशनदास जी हुए जिन्होंने अपनी प्रतिभा से बहुत सम्मान प्राप्त किया। संवत् १९४३ में आप राजा राम सिंह जी के प्राईवेट सेक्रेटरी थे, फिर मिलिटरी सेक्रेटरी, होम मिनिस्टर और अन्ततः कश्मीर राज्य के चीफ मिनिस्टर बने। भारत सरकार ने आपको अनेक अलंकारों से सम्मानित किया जैसे— रायबहादुर (१९६७) सी. आई. ई. (१९७२) सी. एस. आई. (१९७७) आदि। आप पंजाब स्थानकवासी कान्फ्रेन्स के सभापति रहे। आपके छोटे भाई दीवान अनन्तराय जी भी राज्य की सेवारत रहे। आप कश्मीर के महाराजा के प्राईवेट सेक्रेटरी बने फिर चीफ जज एवं अन्ततः हाईकोर्ट के पब्लिक प्रोसीक्यूटर मनोनीत हुए।

सरदार शहर के सेठ चैनरूप सम्पतराम दूगड़ के खानदान का मूल निवास तोल्यासर (बीकानेर) था जहां से उनके पूर्वज सेठ चैनरूप जी सरदार शहर आकर बसे। वे बड़े प्रतिभासम्पन्न एवं चतुर पुरुष थे। संवत् १९०५ में कलकत्ते में आपने चैनरूप सम्पतराम फर्म स्थापित की और लाखों रूपए की सम्पत्ति अर्जित की। आपके पुत्र सम्पतराम जी ने विलायत से कपड़ा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इम्पोर्ट करना शुरू किया। ओसवाल समाज की पंच-पंचायती में आपका बहुत सम्मान था। बीकानेर दरबार की तरफ से आपको छड़ी, चपरास, हाथी, ताजिम व सोना बख्शा गया। आप जुबान के सच्चे और पक्के थे। इस खानदान के विशिष्ट पुरुषों के जीवन ग्रन्थ में अन्यत्र दिए जा रहे हैं।

फतहपुर का सेठ सोहनलाल दूगड़ का खानदान मारवाड़ से उठकर फतहपुर बसा। फतहपुर उस समय नवाब के हाथ में था। इनके पूर्वज सूरजमल जी नवाब के देश— दीवान थे। आपके वंशजों में भान्डो जी और चामसिंह जी हुए। उन्हें कई युद्धों में नवाब की ओर से लड़ना पड़ा। ऐसी ही एक युद्ध में वे जुझार हुए। भान्डो जी की पुत्री अक्षय कुंवरि बाई आलोक के भन्डारी सुगनसिंह जी को व्याही थी। वे एक युद्ध में खेत रहे। उनकी पत्नी अक्षय कुंवरी फतहपुर में सती हुई। इनके वंशज सेठ भैंरूदानजी बड़े नामांकित हुए- उन्होंने अफीम वायदे में लाखों रूपए कमाए। इनके वंश में सेठ सोहनलाल जी भी वायदे के अद्वितीय खिलाड़ी थे। आप कर्मवीर एवं निस्पृह दानदाता थे। ओसवाल कुल के इतिहास पुरुषों में आपका जीवन-प्रसंग दिया जा रहा हैं।

फतहपुर के दूगड़ खानदान के अनेक लोग सरदारशहर जाकर बसे। इनमें प्रमुख हैं, सेठ बींजराज जी का परिवार जो १५० वर्ष पूर्व सरदार शहर आया। आपका पंच पंचायती में बड़ा प्रभाव था। इस परिवार के पैतृक फर्म बींजराज भैंरूदान में कमीशन एवं इम्पोर्ट का काम होता है। सेठ भैंरूदान जी ने अपनी लाईब्रेरी में अमूल्य ग्रन्थों का संग्रह किया। इनके वंशज सेठ पूसराज जी बीकानेर स्टेट कौन्सिल के सदस्य थे।

श्री पदमचन्द दूगड़ चुरू

सेठ पदमचन्द जी दूगड़ का खानदान फतहपुर से चुरु आकर बसा। इनके पूर्व पुरुष सेठ ज्ञानचन्द जी बड़े साहसी व्यक्ति थे। वे साहूकारी (व्याज) का व्यवसाय करते थे। फतहपुर के नवाब से अनबन हो जाने के कारण वे चूरू आ बसे। इनके तीन पुत्र थे— मंगलचन्द जी, जुहारमल जी, खेतसीदास जी। तीनों के ही कोई पुत्र न था। वि. संवत् १९५६ में सेठ जुहारमल जी ने रूणियावास के पदमचन्द जी को गोद ले लिया। खेतसीदास जी ने अपनी समस्त जायदाद यति जी के उपाश्रय को दान

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कर दी। पदमचन्द जी ने कलकत्ते में व्यवसाय जमाया और खूब सम्पत्ति अर्जित की। वे ईस्ट इंडिया जूट एसोसिएशन, सिल्वर एसोसिएशन, ह्वीट एण्ड सीड्स एसोसिएशन जैसी प्रमुख संस्थाओं के वर्षों तक डाईरेक्टर रहे। पंच पंचायती में आपका बहुत सम्मान था। आपने चूरू में अनेक भव्य मकान बनवाए। वे ओसवाल पंचायत, चूरू के वर्षों तक पंच व कोषाध्यक्ष रहे। देशी-विलायती विवाद में आप देशी धड़े के पक्षधर थे। आपके चार पुत्र और ६ पुत्रियां हुई। आपके ज्येष्ठ पुत्र श्रीचन्द जी दूगड़ सौम्य व्यक्तित्व के धनी है। आपका विवाह सुजानगढ़ के श्री मोहन लाल जी लोढ़ा की सुपुत्री कलकत्ती देवी से हुआ। आप सामाजिक कार्यों में विशेष रुचि लेते हैं। लगभग ३८ वर्षों तक कलकत्ते में व्यवसाय रत रह कर आप अपनी पत्नि के संकेत पर चूरू आकर रहने लगे। व्यवसाय का भार अपने भाईयों को सौंप कर आपने भ्रातृत्व का अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया। आप श्री जैन सेवा संघ, चूरू के अध्यक्ष रहे हैं। संघ को एक भवन दान में दिया है और उसके प्रमुख ट्रस्टियों में से हैं। अन्य अनेक ट्रस्टों एवं लोक-हितकारी संस्थाओं से भी आप जुड़े हैं। आपने पिताश्री की स्मृति में "पदमचन्द दूगड़ मार्ग" का निर्माण कराया हैं। अपनी धर्मपत्नि की स्मृति में आपने होमियोपेथिक चिकित्सालय की स्थापना की एवं एतदर्थ एक भवन निर्माण करवाकर सरकार को दान कर दिया है। आपने एक चेरिटेबल ट्रस्ट स्थापित किया है जिसके द्वारा लोक-हितकारी कार्यों में अनुदान दिया जाता है। आपकी धर्मपत्नि श्रीमती कलकत्ती देवी बड़ी धर्मपरायण महिला थी। उनकी मृत्यु पर एक स्मृति-ग्रंथ का प्रकाशन उनके धर्मोन्मुख व्यक्तित्व का परिचायक है। सेठ श्री चन्द जी के कोई संतान नहीं है। उन्होंने समाज की पीड़ा को अपनी पीड़ा मानते हुए अपने धन का सदुपयोग किया है। आपने स्थानीय कला-मंच, माउंटेसरी स्कूल आदि को संरक्षण प्रदान किया है।

सेठ लाल सिंह का परिवार सवाई नामक स्थान से आकर सरदारशहर में बसा। इसी परिवार के सेठ तेजमाल जी ने सिलहट में जाकर कारोबार किया। सेठ हजारी मलजी ने संवत् १९४२ में कलकत्ता में रेडीमेड क्लाथ का काम शुरू किया। सेठ मोती लाल नेमचन्द के परिवार का पूर्व निवास फतेपुर था। वहाँ से सवाई और सवाई से सेठ गुलाबचन्द सरदारशहर आकर बसे। सेठ गुलाबचन्द ने कलकत्ते में मनीहारी का काम शुरू किया और अच्छी सफलता पाई। इस परिवार में पाट, कपड़ा व गल्ले का भी व्यापार होता है। सेठ झन्नूमल नथमल दूगड़ का परिवार सवाई से संवत् १८९५ में सरदारशहर आकर बसा। इस परिवार का कलकत्ते में कपड़ा, जूट एवं इम्पोर्ट का काम होता है।

सेठ सालनचन्द चुन्नीलाल दूगड़ के परिवार का मूल निवास कल्याणपुर था जहाँ से सेठ जेठमल जी संवत् १९९० में सरदार शहर आकर बसे। जलपाईगुड़ी एवं कलकत्ता में कपड़ा, जूट एवं चलानी का व्यापार करते हैं। सेठ दानसिंह जी दूगड़ के परिवार का पूर्व निवास बानिदां था। ये सिरसागंज कलकत्ता आदि अनेक स्थानों पर व्यवसाय रत हैं।

बीदासर के सेठ मुल्तानचन्द जुहारमल दूगड़ कोठारी के परिवार में मेखलीगंज कूच-बिहार, कलकत्ता आदि स्थानों पर तम्बाकू एवं जूट का व्यवसाय होता हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आगरा के लाला छोटेलाल अबीरचन्द दूगड़ का खानदान तीन सौ वर्ष पूर्व आकर आगरा बसा। जोधपुर के कोठारी बेरीसाल जी दूगड़ के खानदान का मूल निवास नामली (रतलाम) था। आपके पिता सेठ जवाहरसिंह जी दूगड़ रतलाम स्टेट के दीवान थे।

कपूरथला के लाला मोहरसिंह जी दूगड़ के खानदान का पूर्व निवास जम्मू था वहाँ से यह परिवार जालंधर आया। वहाँ मोहरसिंह बाजार आपके नाम पर ही बसा है। आपके खानदान का शाही खानदान से अच्छा ताल्लुक था। कहते हैं महाराजा रणजीतसिंह ने शाहशुजा से जब कोहनूर हीरा खरीदा तो उसकी खरीद में आपका भी हाथ था। कपूरथला के महाराजा फत्तहसिंह ने आदरपूर्वक आपको यहाँ लाकर बसाया। सिक्खवार, अफगानवार, तीरावार और गदर के समय इस परिवार को बहुत-सी जमीन-जायदाद प्राप्त हुई। व्यापार में भी इस परिवार ने खूब सम्पत्ति अर्जित की। समाजहितकारी अनेक संस्थाओं में इस परिवार ने मुक्तहस्त दान दिया। ओसवाल समाज में इस परिवार की बहुत प्रतिष्ठा हैं।

अम्बाला के प्रसिद्ध वकील गेंदामल गोपीचन्द जी दूगड़ का परिवार केशरी से यहाँ आकर बसा, अतः वे केशरीवाला के नाम से प्रसिद्ध हैं। नागरी प्रचारिणी सभा, बाय स्काउट एसोशियेशन एवं अन्य अनेक शिक्षण संस्थाओं को आपका दिग्दर्शन प्राप्त था। अनेक धार्मिक संस्थाओं के आप सभापति रहे। अमृतसर के जौहरी लाला पन्नालाल जी दूगड़ के पूर्वज महाराजा रणजीतसिंह के कोर्ट ज्वेंलर्स थे। लाला पन्नालाल जी संवत् १९७१ में मुल्तान में हुई अखिल भारतीय जैन कान्फ्रेंस के सभापति थे। कसूर के लाला गौरीशंकर परमानन्द जैन दूगड़ के खानदान में सराफी का व्यवसाय होता है। लाला परमानन्द ने जैन समाज में बहुत नाम कमाया। आप स्थानकबासी जैन सभा के अम्बाला अधिवेशन के सभापति थे। आप हाईकोर्ट के एडवोकेट थे। बनारस यूनिवर्सिटी में आप पंजाब के जैन समाज की ओर से सदस्य थे। आपकी मृत्यु पर आपके परिवार ने स्थानीय कन्यापाठशाला की विल्डिग बना कर दान कर दी। लाहौर के लाला फग्गूशाह मोतीराम दूगड़ के परिवार की पंजाब के जैन समाज में बहुत प्रतिष्ठा थी।

पसरूर (पंजाब) के लाला बिशनदास फग्गूमल दूगड़ के खानदान में दिवाने शाह हुए जिनके वंशज लाला उत्तमचन्द को भारत सरकार ने राय साहब की पदवी से सम्मानित किया। यह परिवार कलकत्ता में भी व्यवसायरत हैं। रावलपिण्डी के लाला खानचन्द दूगड़ के परिवार में कन्ट्राक्टिंग बिजनेस होता रहा। लाला निहाल चन्द के पूर्वज लाला गण्डामल पसरूर में रहते रहे। लाला निहालचन्द ने रावलपिण्डी में गोटा किनारी का व्यवसाय शुरू किया। हिन्दू मुस्लिम दंगों में आपने बहादुरी से जनता की सेवा की। आपके यहाँ सराफी एवं जेवर का व्यवसाय होता था। नारोवाल (पंजाब) के लाला पंजूशाह धर्मचन्द जैन दूगड़ के खानदान ने संवत् १९१३ में यहाँ एक जैन मन्दिर बनवाया। पंजूशाह ने एक धर्मशाला बनवाई।

तिरमिल गिरी (हैदराबाद) के सेठ बनेचन्द जुहारमल दूगड़ का खानदान मूलतः नागौर से आकर बसा। इस परिवार के लोग बंगलोर और फिर सेठ बनेचन्द जी १५० वर्ष पूर्व हैदराबाद आए। वहाँ बैंकिंग और मिलिटरी कन्ट्राक्ट के काम में आपने खूब धन कमाया। आगरा का

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दूगड़ खानदान ३५० वर्षों से वहाँ बसा हुआ है। जोधपुर के दूगड़ परिवारों का मूल निवास रतलाम था जहाँ वे राज्य के दीवन थे। जालंधर में बसे दूगड़ परिवार के श्रेष्ठि कभी स्टेट के खजांची थे। इस परिवार के लाला त्रिभुवन नाथ पंजाब स्थानक वासी कांफ्रेंस के लम्बे समय तक मंत्री रहे। अम्बाला में रह रहे दूगड़ परिवार में हुए लाला गोपीचन्द ने शिक्षा क्षेत्र में समाज की बहुत सेवा की। अमृतसर के दूगड़ परिवार के श्रेष्ठि कभी महाराजा रणजीत सिंह जी के कोर्ट ज्वेलर थे। भारत के जौहरी समाज में इस खानदान की बहुत प्रतिष्ठा थी। कसूर, पसरूर, लाहौर, रावलपिंडी, नारोवाल आदि संयुक्त पंजाब के अनेक स्थानों में दूगड़ खानदान के लोगों की अच्छी प्रतिष्ठा थी। विलिपुरम का दूगड़ खानदान बगड़ी (मारवाड़) से आया है।

दूगड़ गोत्रीय अनेक शिलालेख बालूचर, लखनऊ, भागलपुर, गुणिया, पावापुरी, पटना, सम्मेद शिखर, बालोतरा, रंगपुर, माहीगंज, नागौर, नवराई, चम्पापुर, लछवाड़, मधुबन, उदयपुर, जैसलमेर, मालपुरा, सांगानेर, बीकानेर, अजीमगंज, शत्रुञ्जय आदि स्थानों पर मिले हैं।

बावेल सिंघी/ बावेल कोठारी:

इनकी उत्पत्ति विक्रम संवत् १३७१ में बावेल नगर के चौहान राजपूतों से मानी जाती है। महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार चौहान रणधीर रक्तपित्त से दुःखी थे। अनेक इलाज करवाए, कोई फायदा न हुआ। तभी आ. जिनचन्द्र सूरि वहां पधारे। रणधीर ने जैनी बनना कबूल किया तब सूरि जी ने रात को चक्रेश्वरी देवी की आराधना कर सरोहणी औषधि दी। उससे सात दिन में रणधीर स्वस्थ हो गया। उसने जैन धर्म अंगीकार किया। बावेल नगर का होने से उसके वंशज बावेल कहलाए। कालान्तर में इनके वंशजों ने शत्रुंजय तीर्थ के लिए संघ निकाला इसलिए संघवी कहलाने लगे। श्री सोहनराज जी भंशाली ने "ओसवंश" में गोत्रोत्पत्ति सम्बन्धी उक्त कथानक ही दिया है परन्तु उद्‌बोधक आचार्य का नाम आ. जिन कुशल सूरि लिखा है जो कालापेक्षा से अधिक सही लगता है। गोत्र व नगर नाम भी भंसाली जी के अनुसार बाबेला हैं। इस खानदान में कोठार का काम संभालने से कोठारी शाखा बनी।

शाहपुरा के सिंघी खानदान के पूर्व पुरुष सेठ जांझण जी बावेल का निवास "पुर" ग्राम था। संवत् १५६५ में आपने संघ निकाला इससे सिंघी कहलाए। इनकी १६ वीं पीढ़ी में देवकरण जी शाहपुरा (मेवाड़) आकर बसे। इस परिवार के सिंघी चतुरभूज जी ने "आड" नामक गांव बसाया जो सिंघी जी का खेड़ा नाम से भी जाना जाता है। इसी खानदान के सिंघी बाघमल जी बड़े प्रतापी हुए। आपने राज्य की कामदारी का काम बड़ी होशियारी से किया। आपको कई सिक्के इनायत हुए। मीणों का उपद्रव शान्त करने में आपका प्रमुख हाथ था। आपने शाहपुरा में ऋषभदेव स्वामी का मन्दिर बनवाया।

इसी परिवार में सेठ सज्जनसिंह जी बड़े नामांकित व्यक्ति हुए। आपका जन्म संवत् १९४८ में बड़ी सादड़ी में हुआ। ये संवत् १९५८ में सिंघवी कृष्णसिंह जी के दत्तक आए। आप सरकार द्वारा आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। गौशाला संस्थापन एवं अन्य अनेक लोक हितकारी प्रवृत्तियों में आपका प्रमुख सहयोग रहता था। राजपूताना/मालवा के प्रथम ओसवाल

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सम्मेलन के आप सभापति मनोनीत हुए। कुछ समय तक अखिल भारतीय ओसवाल महा-सम्मेलन के स्थानापन्न सभापति का कार्यभार भी आपने संभाला। आप वैष्णव धर्मी थे। उदयपुर राज दरबार ने आपको ताजीम बख्शी। संवत् १९८४ में आप स्वर्गस्थ हुए। इस गोत्र के शिला-लेख बूंदी, भिनाय व नागौर में विद्यमान हैं।

कमाणी सिंघी

मांडवगढ़ के देवड़ा समरसिंह के पुत्र करमसिंह बीमार हो गए। आ. वर्धमान सूरि के नवकार मंत्र के प्रभाव से वे सचेत हुए। उन्होंने जैन धर्म अंगीकार किया। संवत् १०२६ में उन्होंने शत्रुंजय का संघ निकाला तब संघवी पदवी मिली। करमसिंह की संतानें कमाणी (कर-माणी) सिंघवी गोत्र से पहचानी जाने लगी।

केशरिया नाथ जी के मन्दिर स्थित ग्रंथागार में उपलब्ध "ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति" ग्रंथ (गुटका नं. २२) में उपरोक्त उत्पत्ति कथा का समय संवत् १०२६ दिया हैं एवं सिद्धाञ्चल (शत्रुञ्जय) तीर्थ के लिए संघ समायोजन का समय संवत् १०२७ लिखा है।

बोलीया (बूलिया)

प्राचीन समय में मारवाड़ में "अप" नामक एक नगर था जिसका अनुमान वर्तमान नागौर के पास लगाया जाता है। वहां चौहानवंशीय राजा सगर राज्य करते थे। इनके पुत्र कुंवर नरदेव जी को वि संवत् ७१९ में भट्टारक कक्क सूरि ने बूली नामक गांव में उपदेश देकर जैन धर्मा-वलम्बी बनाया एवं ओसवाल वंश में शामिल किया। बूली ग्राम के नाम पर इस खानदान का बूलिया या बोलिया गोत्र हुआ। एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार नरदेव चौहान जब अपने ससु-राल से लौट रहे थे तो भट्टारक श्री कृष्णारिक सूरि एक बबूल वृक्ष के नीचे उपदेश दे रहे थे। तभी नरदेव ने जैन धर्म स्वीकारा और उनकी सन्तानें बबूलिया कहलाई जो कालान्तर में बूलिया हो गया।

इस खानदान के लोग देहली रणथम्भोर आदि जगहों में निवास करते रहे। १५ वीं शताब्दी में इस वंश की ३३ वीं पीढ़ी में टोडरमल हुए जिन्होंने रणथम्भोर में प्रसिद्ध गणपति का मन्दिर बनवाया। आपके पुत्र छाजू जी चित्तौड़ आकर बसे। आपके खानदान की राज्य के प्रधानमंत्री एवं दिल्ली बादशाह तक पहुँच थी। संवत् १४९५ में महाराणा कुम्भा ने आपका अच्छा सम्मान किया। आपने चित्तौड़गढ़ में हवेली, धर्मशाला और एक मन्दिर बनवाया एवं तालाब बंधवाया। छाजू जी के पुत्र निगलचन्द जी महाराणा उदयसिंह के समय प्रधान बने। इन्हीं के कार्यकाल में प्रसिद्ध उदय सागर की नींव पड़ी। इसी खानदान के रंगा जी महाराणा अमरसिंह एवं कर्णसिंह के समय प्रधान बने उन्होंने उदयपुर से थाणा उठवाया एवं बादशाहत समाप्त करवाई। आपकी सेवा से प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको हाथी व पालकी का सम्मान बख्शा एवं जागीरें दी। आप ने "पुर" में भगवान् नेमिनाथ का मन्दिर बनवाया।

रंगा जी के छोटे भाई पचाण जी थे जिनकी सन्तानें पचनावत कहलाती हैं। इसी परिवार के अनोपाजी राज्य के कोठार का काम देखते थे। वे कपासन में हाकिम नियुक्त हुए। आपने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अनोपपुरा नाम से एक गांव बसाया एवं वहां बावली व तालाब बनवाया। "पुर" के नेमिनाथ मन्दिर का आपने जीर्णोद्धार कराया एवं वहां बाग और बावड़ी का निर्माण कराया। आपकी हवेली "पुर" में "महल" के नाम से मशहूर थी।

बेगाणी/बैंगाणी

जैतपुर के चौहान राजा तेजसिंह जी के पुत्र बंगदेव को आंखों से दिखाई नहीं देता था। जैनाचार्य के आशीर्वाद से उन्हें चक्षु लाभ हुआ। उन्होंनें जैनधर्म अंगीकार किया। इन्हीं बंगदेव के वंशज बंगानी कहलाए।

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार वि. संवत् ७०० में आ. यशोदेव सूरि जैतपुर पधारे। वहां के चहुआण राजा जैतसिंह जी के पुत्र बंगदेव अन्धे हो गए थे। गुरु से विनती की। गुरु ने जैनी बनना कबूल करवाकर शासन देवता की आराधना कर पुत्र को दिव्य ज्योति दिलाई। बंगदेव जैनी बना। उनके वंशज बंगाणी या बेंगाणी कहलाए।

सेठ सूरजमलजी बैंगाणी (जीवनमल चंदनमल) लाडनूं

लाडनूं के बेंगानी परिवार का पूर्व निवास जयपुर था। सेठ जीतनलजी लाडनू आकर बसे तब बहुत साधारण स्थिति में थे। उनके पुत्र केसरीचन्द जी हुए जिनके तीन पुत्र थे— जीवनमल जी, इन्द्रचन्द्र जी एवं बालचन्द जी। बालचन्द जी सुजानगढ़ के सेठ छोगमल जी के गोद चले गए। सेठ इन्द्रचन्द्र जी ने 'इन्द्रसागर' कुआँ बनवाया। इससे लोगों को बड़ी राहत मिली और प्यास बुझी। "इन्द्र सागर को एक घड़ो, झख मारे सोने रो कड़ो"— कहावत ही बन गई। सेठ जीवनमल जी ने संवत् १९५७ में कलकत्ता आकर जूट का काम आरम्भ किया। आपने व्यापार कुशलता से लाखों की सम्पत्ति अर्जित की एवं कासीपुर में जमींदारी स्थापित की। जूट बाजार में आपका बहुत सम्मान था— लोग कहते थे "आज तो ये भाव है और कल का भाव जीवनमल के हाथ में है"। जोधपुर नरेश ने आपको पावों में सोना एवं पालकी-छड़ी का सम्मान बख्शा। आपके पुत्र-चन्दनमल जी, जँवरीमल जी, हाथीमल जी, मोतीलाल जी और सूरजमल जी हुए। सेठ मोतीलाल जी का कम उम्र में स्वर्गवास हो गया। उनके पुत्र हनुमानमल जी बड़े उदार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिल हैं एवं सार्वजनिक कार्यों में सहायता के लिए सदा तत्पर रहते हैं। इसी परिवार के श्री कन्हैयालाल जी बैंगानी शास्त्रीय संगीत के अच्छे जानकार हैं। बैगांनी परिवार ने नगर में पुस्त-कालय, होमियो-हॉस्पीटल शिल्प शाला, विद्यालय, आदि के लिए विपुल धन खर्च किया है।

खींवसरा

चौहान राजपूत खीमजी एक बार भाटी राजपूतों से हार रहे थे। इनकी प्रार्थना पर जैनाचार्य जिनवल्लभ सूरि ने उन्हें वशीकरण मन्त्र दिया। इससे उन्हें विजय प्राप्त हुई। इन्होंनें खींवसर नामक गांव बसाया। "ओसवाल दर्शन दिग्दर्शन" नामक ग्रंथ में भी ऐसा ही कथानक दिया गया है— मात्र आचार्य के नाम का अन्तर है। ग्रंथ की लेखिका श्रीमती मनमोहिनी जी के अनुसार आचार्य जिनेश्वर सूरि द्वारा दिए गए शत्रु-वशीकरण मन्त्र के कारण भाटी राजपूतों ने स्वयं ही आकर खीमजी की लूटी हुई सम्पत्ति लौटा दी। खीमजी ने जैन धर्म अंगीकार किया। तीन पीढ़ी तक इनके विवाहादि राजपूतों में ही होते रहे। जैन धर्मावलम्बी होने के कारण वे राजपूतों में उपहास का कारण बने। तब आ. जिनदत्तसूरि के उपदेशों से ये ओसवाल कुल में शामिल किए गए। आचार्य जिनवल्लभ सूरि द्वारा संवत् ११६३ में रचित "अष्ट सप्तिका" में खींवसर निवासी क्षेमसरीय मिषग्वर, सर्वदेव एवं उनके तीन पुत्र— रसल, धंधक, और वीरक आदि भक्तों का उल्लेख है। कालान्तर में आचार्य जिनदत्त सूरि जी के प्रभाव से खीमजी के परिवार के विवाहादि ओसवालों में होने लगे। एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार खीमजी के पौत्र भीमजी को आचार्य जिनदत्त सूरि ने ओसवाल जाति में शामिल कर लिया। खिंवसर के होने के कारण इनके वंशज खींवसरा कहलाए। कहीं कहीं खींवजी के वंशज शंकरदास जी द्वारा जैनधर्म अंगीकार करने का भी उल्लेख है।

खींवसर से इस खानदान के लोग बीकानेर, नागौर, जोधपुर, बंलूदा, बंगलोर, जालना, मद्रास, पूना, धुलिया, लोनार आदि भारत के अनेक स्थानों में फैले। जोधपुर में इस खानदान को मूथा पदवी मिली हुई है। बंलूदा ठाकुर ने उन्हें पगड़ी बदल भाई बनाया। दक्षिण में इस परिवार ने अनेकों स्थानों पर बैंकिंग के लिए दुकानें स्थापित की। पूना के खींवसरा परिवार ने समाज की कुरीतियों के विरोध में जोरों से आवाज उठाई। इसी परिवार की कन्या श्रीमती नन्दु बाई ओसवाल का स्थान समाज की अग्रणी महिलाओं में गिना जाता था।

खरतर गच्छीय आचार्य जिन कीर्ति सूरि खीवंसरा गोत्र के थे। 'ओसवाल जाति का इति-हास' के लेखक सुखसम्पत राय जी भंडारी ने खीमसरा गोत्र को परमार (पवाँर) राजपूतों से निकला बताया है।

डागा

महाजन वंश मुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार "गोडवड़ देश में नाडोल गांव के चौहान राजपूत डूंगरसिंह जी को पकड़ने के लिए दिल्ली के बादशाह ने फौज भेजी क्योंकि डूंगरसिंह ने बादशाह के कुछ आदमियों को मार दिया था। डूंगर जी अचार्य जिनकुशल सूरि जी की शरण गए। गुरु ने जैनी बनना कबूल करवा कर उसी वक्त रात को ही वीर (शासनदेव)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

को हुकम देकर महल में सोये बादशाह को पलंग सहित उपासरे में उठा मंगाया। बादशाह जाग कर हैरान। सारी बात जानकर बादशाह गुरु महाराज के चरणों में अपना ताज रखा और जैनों पर कभी जुल्म न करना कबूल किया। गुरु जी ने पलंग सहित बादशाह को महल में पहुँचा दिया। डूंगर जी विं. संवत् १३८१ में जैनी बने और उनका डागा गोत्र प्रसिद्ध हुआ। इनके वंशज राजा जी से राजाणी और पूंजे जी से पूजाणी शाखाएं बनीं। कालान्तर में कुछ परिवार जैसलमेर जाकर बसे इससे जेसलमेरिया कहलाने लगे।"

इस परिवार के लोग जेसलमेर से अनेक जगहों में व्यापार के निमित्त फैल गए। बीकानेर के सेठ हस्तीमल लखमीचन्द डागा का परिवार जैसलमेर से आकर बीकानेर बसा। वहां कालान्तर में रेशमी कपड़े का व्यापार करने लगे एवं दिल्ली-बम्बई में भी दुकानें खोली।

सरदार शहर का डागा खानदान करीब १५० वर्ष पूर्व जब सरदार शहर बसा तो घड़सीसर से आ कर यहां बसा। इस खानदान के पनेचन्द जी ने कलकत्ते में कपड़े की दुकान खोली एवं बाद में पाट का व्यवसाय भी शुरू किया। इस परिवार का कलकत्ता, फारबिस गंज आदि स्थानों पर कपड़ा, कटपीस, जूट, बैंकिंग आदि व्यवसाय होता रहा है। सेठ रतनचन्द जी डागा के परिवार का नौगांव (आसाम) में जूट, चलानी व बैंकिंग का कारोबार था।

बेतूल, रायपुर एवं अमरावती बसे डागा परिवारों का पूर्व निवास बीकानेर ही था। करीब १५० वर्ष पूर्व व्यापार के सिलसिले में यहाँ आकर बसे एवं प्रतिष्ठा अर्जित की। ये परिवार कपड़ा, तम्बाकू, बैंकिंग, जवाहरात, कृषि, सर्राफा आदि नाना व्यापारों में संलग्न रहे।

डागा गोत्र के शिळालेख लखनऊ, झूझनूं, उदयपुर, जैसलमेर, कोटा, जयपुर, बीकानेर आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

महेश्वरी जीति से निकल कर ओसवाल बना डागा गोत्र इनसे भिन्न हैं।

भन्डारी

ओसवालों के जिन गोत्रों के महापुरुषों ने अखिल भारतवर्षीय इतिहास को प्रभावित किया, उनमें भंडारी गोत्र का गौरवपूर्ण स्थान है। एक युग में राजस्थान ही नहीं तात्कालीन मुगल साम्राज्य की नीति भी उनसे प्रभावित रही। इस वंश की उत्पत्ति नाडौल के चौहान राजवंश से मानी जाती है। विक्रम की ११वीं सदी में साम्भर (कुछ ग्रन्थों में- अजमेर) के चौहान वंशी राजा वाक्पतिराज के पुत्र राव लखणसी ने नाडौल पर अपना अधिकार कर लिया एवं स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। नाडौल की सूरज पोल पर उत्कीर्णित लेख में जो विं. संवत् १२२३ का राव कल्हण के समय का है, संस्थापक का नाम "लाखण" एवं समय वि. संवत् १०३९ लिखा है। अचलेश्वर के मन्दिर में संवत् १३७७ के शिलालेख से इस बात की पुष्टि होती है। कर्नल टाड ने राजपुताने के इतिहास में भी इसका समर्थन किया है।

लखणसी के २४ रानियां थीं पर पुत्र न था। संडेरा गच्छ के जैनाचार्य यशोभद्र सूरि के आशीर्वाद से उन्हें २४ पुत्र हुए ओर वचन स्वरूप १२ वें पुत्र दूदोराव (दूदाराव) नें संवत्

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

१०४९ (भन्डारी जी के अनुसार संवत् १०३९) में जैनधर्म अंगीकार किया। बड़ा होने पर दूदाराव राज्य के खजाने का प्रभारी (भांडागारिक) बना। इसी से उसके वंशज भंडारी कहलाने लगे। भंडारियों के आदि पुरुष राव लखणसी थे, इस बात की पुष्टि अनेक शिलालेखों से होती है जिनमें मुख्य हैं नडलई का वि. संवत् १५९७ का शिलालेख एवं कापरडा का वि. संवत् १६७६ का शिलालेख। इनके अलावा भंडारीयों के प्राचीनतम शिलालेख सांचोर में संवत् १२२५ (जैन-लेख संग्रह-क्रमांक- ९३२) एवं संवत् १३२२ (कापरड़ा स्वर्ण जयंती महोत्सव अंक) के हैं। इनका उल्लेख प्रसिद्ध इतिहासकार गौरी शंकर हीराचन्द ओझा ने 'राजपूताना का इतिहास' में भी किया है।

"भण्डारियों की ख्यात" में वर्णित २४ रानियों के २४ पुत्रों वाला वर्णन अतिशयोक्तिपूर्ण हो सकता है, परन्तु दोनों वंशों की कुलदेवी आसापुरी जी के होने से उत्पत्ति चौहानों से हुई है, इसमें सन्देह नहीं है। एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार नाडौल अधिपति भांडोंजी चौहान ने जैन धर्म स्वीकार किया, इससे उनके वंशज भंडारी कहलाए। चौहान राजपूतों में भैंसे की बलि देने की प्रथा थी। भंडारी कुल वाले चुने (आटा) का भैंसा बना कर बलि देते हैं। इससे भी उनके चौहानों से उत्पत्ति की पुष्टि होती है।

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार गोडवाड देश के ग्राम नाडोल के राव लाखण जी चौहान का बेटा महेशराव अपने भाईयों सहित आचार्य भद्र सूरि जी से प्रतिबोध पाकर वि. संवत् १४७८ में जैनी श्रावक बना। इनकी कुलदेवी आसापुरी है। बाद में कुचेरा आकर बसे। इनकी उपशाखाएं दीपावत, मोनावत, लूणावत एवं नींबावत हैं।

इस गोत्र के श्रेष्ठियों ने जैन मन्दिरों के निर्माण एवं जिर्णोद्धार में महत्त्वपूर्ण योग दिया। जैन लेख संग्रह (क्रमांक-९३२) में उद्धृत शिलालेख के अनुसार संवत् १२२५ में सांचोर के महावीर मन्दिर का पुनः निर्माण भंडारी भजग सिंह ने करवाया था। इस मन्दिर को मुसलमानों ने तोड़ दिया था। संवत् १२४१ में भंडारी पासु के पुत्र भंडारी यशोवीर ने समरसिंह देव के आदेश से जालौर के जैन मन्दिरों का जिर्णोद्धार कराया। (चौकसी— "ऐतीहासिक पूर्वजों की गौरवगाथा")। भंडारी छाधाक ने सांचोर के मन्दिरों का जिर्णोद्धार संवत् १३२२ में कराया— इस आशय का शिलालेख वहाँ की जामा मस्जिद में लगा हुआ है जो जैन मन्दिर को तोड़कर बनाई गई थी। महाराणा कुम्भा के विशेष अधिकारी भंडारी बेला ने चित्तौड़ में एक मन्दिर का निर्माण कराया। उनके पिता कोला भंडारी राणा के कोषाधिकारी थे। इस आशय का शिलालेख चित्तौड़ की श्रृंगार चौकी स्तम्भ पर उत्कीर्ण है। मुसलमानों द्वारा तोड़े जाने के बाद संवत् १५०५ में मन्दिर की पुनः प्रतिष्ठा की गई। भंडारी लूण करण ने संवत् १६६७ में गांगाणी (जोधपुर) के मन्दिर का जिर्णोद्धार कराया।

जोधपुर के महाराजा गज सिंह (वि. सं. १६७८) के समय भंडारी भानाजी राज्य के दीवान थे। इन्होंने संवत् १६७८ में कापरड़ा में पार्श्वनाथ मन्दिर बनवाया। उनके पौत्र भंडारी ताराचन्द महाराजा जसवन्तसिंह के देश दीवान रहे। यह बहुत महत्वपूर्ण पद था। इन्होंने संवत् १७२३

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में मंडोर में पार्श्वनाथ भगवान् का मन्दिर बनवाया एवं सैकड़ों जिन प्रतिमाओं की अंजन शलाका कराई। कहते हैं भाना जी की ६ पीढ़ी तक बराबर मन्दिरों का निर्माण होता रहा।

शत्रुञ्जय तीर्थ पर उत्कीर्ण एक लेखानुसार नाडोल के भंडारी भानाजी के वंशज हरखचन्द ने यहाँ लाखों रुपए खर्च कर संवत् १७७४ में एक चैत्यालय का जिर्णोद्धार कराया एवं श्रीमद् देवचन्द्रजी से बिम्ब प्रतिष्ठा करवाई। संवत् १७७४ में भंडारी रूपचन्द्रजी ने जैतारण में विमलनाथ भगवान् के शिखरबन्द मन्दिर का निर्माण कराया। शत्रुञ्जय के विमलवसहि में उत्कीर्ण एक लेखानुसार भंडारी रतनसिंह ने संवत् १७९१ में गुजरात में अमारि की घोषणा करवाई। वे गुजरात के सूबेदार थे। संवत् १८६१ में भंडारी गंगाराम जसराजोत खांप लूणावत ने जोधपुर में शांतिनाथ जी के मंदिर का आगे का भाग बनवाया।

भंडारियों के वंश-वृक्ष में पहला नाम समरोजी का आता है जो दूदाराव की १७ वीं पीढ़ी में हुए। इन्होंने एवं इनके पुत्र नरोजी ने संवत् १४९३ में जोधपुर राज्य के संस्थापक राव जोधा जी की प्राणपण से सहायता की थी। इनका विस्तार से उल्लेख ग्रंथ के प्रथमखण्ड में अन्यत्र किया जा चुका है। पूर्व में ये जैनी क्षत्रीय थे। आचार्य भद्रसूरि ने इन्हें ओसवाल कुल में शामिल किया। विक्रम की १५ वीं शदी से ओंसवालों में इनके विवाह सम्बंध स्थापित हुए।

इसी खानदान में दीपा जी हुए जिससे उनके वंशज दीपावत भंडारी कहलाए। जिस समय जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह (संवत् १७३७-८२) अधिकांशतः दिल्ली रहने लगे थे, उन दिनों कर्नल वाल्टर के अनुसार मारवाड़ का शासन प्रबन्ध दीपावत भंडारी रघुनाथ जी के सुपुर्द था। यह कहावत मशहूर थी— "अजीत दिल्ली रो पातशाह, राजा तो रघुनाथ"। भण्डारी रघुनाथ जी संवत् १७६६ में राज्य के दीवान बनाए गए। महाराजा ने संवत् १७६७ में आपको राय राया की पदवी एवं हाथी, पालकी सिरोपाव आदि बख्श कर सम्मानित किया।

संवत् १७८५ में ठाकुर सरदारों के विद्वेषवश कान भरने से महाराजा ने भण्डारी रघुनाथ जी को कैद में डाल दिया। उन्हीं दिनों जयपुर नरेश ने मारवाड़ पर चढ़ाई कर दी और जोधपुर का किला घेर लिया। जोधपुर दरबार जानते थे कि जयपुर नरेश भण्डारी रघुनाथ जी का बहुत सम्मान करते हैं और वे ही इस मुसीबत में काम आ सकते हैं। महाराजा ने भण्डारी रघुनाथ जी को कैद मुक्त कर दिया। भण्डारी रघुनाथ जी के कहने से जयपुर नरेश ने फौज खर्च के दस लाख रूपये लेकर घेरा उठा लिया। संवत् १७९८ में भण्डारी रघुनाथ जी दिवंगत हुए।

इसी खानदान के भण्डारी जसराज जी भानपुरा (इन्दौर) जाकर बस गए एवं प्रतिष्ठित साहूकारों में गिने जाने लगे। इसी परिवार में जन्मे श्री सुखसम्पतराय जी भण्डारी ने अभूतपूर्व श्रमनिष्ठा से संवत् १९७१ में "ओसवाल जाति का इतिहास" लिखा। उनका जीवन विवरण ग्रन्थ में अन्यत्र दिया जा रहा है।

दीपावत खानदान के ही भण्डारी खींवसी जी को महाराजा अजीतसिंह ने संवत् १७६५ में अपना दिवान नियुक्त किया। खींवसी जी के प्रयत्न से महाराजा को दिल्ली के बादशाह से संवत् १७६९ में गुजरात का सूबा मिला। दिल्ली के राजनीतिक हलकों में खींवसी जी का बहुत

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रभाव था। संवत् १७७५ में सैय्यद बन्धुओं ने दिल्ली के तख्त से बादशाह फर्रूखशियार को हटाने के प्रयत्न शुरू किये तो खींवसी जी ने एक चतुर राजनीतिज्ञ की तरह सारे खेल को अंजाम दिया। फर्रूखशियार की हत्या के बाद नये बादशाह मुहम्मदशाह के चुने जाने में खींवसी जी का प्रमुख हाथ था— अंग्रेज इतिहासकार विलियम इर्विन ने अपने ग्रन्थ "लेट मुगल्स" में इसका उल्लेख किया है। खींवसी जी के ही प्रयत्न से महाराजा अजीतसिंह को बादशाह ने "राज राजेश्वर" की पदवी बख्शी। सारे भारत में जजिया कर माफ करवा कर खींवसी जी ने हिन्दुओं का असीम कल्याण किया। संवत् १७८२ में खींवसी जी का देहान्त हुआ। इनके पुत्र अमरसिंह जी भी जोधपुर राज्य के दीवान रहे। इनके वंशजों ने भी राज्य के विभिन्न पदों पर पुश्त-दर-पुश्त सेवा की।

भण्डारी लक्ष्मीचन्द महाराजा मानसिंह के समय संवत् १८६० से अनेक वर्ष राज्य के दीवान रहे। भण्डारी पृथ्वीराज जालौर के हाकिम नियुक्त हुए। महाराजा मानसिंह के आश्रय में कवि भण्डारी उत्तमचन्द ने (संवत् १८३३-६४) "अलंकार-आशय" आदि अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों का सृजन किया।

इसी कुल के रतनसिंह भण्डारी महाराज अभयसिंह (वि. संवत् १७८२-१८०७) के समय मारवाड़ के सेनानायक थे। दिल्ली सम्राट् मोहम्मद शाह रंगीले ने महाराजा से गुजरात की सूबेदारी छीन लेने के लिए मोमिन खाँ को भेजा तब रतनसिंह भण्डारी ने ससैन्य उसका सामना किया। बादशाह को दब कर रतनसिंह की शर्तों पर सन्धि करनी पड़ी।

महाराजा तख्तसिंह के समय (वि. संवत् १९००-१९३०) भण्डारी बहादुरमल बड़े प्रख्यात हुए। प्रजा उन्हीं को राजा मानती थी। राज्य की भलाई और प्रजा के प्रति प्रेम उनकी नस-नस में बसा हुआ था। वे तेरापंथी थे। इसी कुल के भण्डारी किशनलाल महाराजा सरदार सिंह के कोषाध्यक्ष थे।

वि. संवत् १९७५ में जोधपुर शहर में भण्डारी गोत्र के ३०० परिवार रहते थे। भण्डारियों की कुलदेवी आसापुरी माता हैं जिनका मुख्य मंदिर नाडोल में है।

इस गोत्र की अनेक शाखाएं हैं जिनमें प्रमुख है— दीपावत, लूणावत, मोनावत और नींबावत। इनमें आपस में विवाह सम्बन्ध नहीं होते। भण्डारी गोत्र की महिलाएं कुछ समय पूर्व तक पर्दे में ही रहती थी। यह इस खानदान के राज्य-शासन से सम्बन्धित रहने का परिचायक था। अन्य ओसवाल गोत्र की महिलाओं की तरह वे सर पर बोर भी नहीं पहनती।

कानपुर के लाला सखरूपमल रघुनाथ प्रसाद भण्डारी के परिवार की धार्मिक वृत्ति श्लाध्य रही। यह खानदान मूलतः रूपनगढ़ (मारवाड़) का है जहाँ से २०० वर्ष पूर्व यहाँ आकर बसा। लाला रघुनाथ प्रसाद ने लाखों रूपए की सम्पत्ति अर्जित की। उन्होंने कानपुर सम्मेद शिखर एवं लखनऊ में तीन भव्य जैन मन्दिरों का निर्माण कराया। संवत् १९४८ में आपका स्वर्गवास हुआ। इसी परिवार के लाला सन्तोषचन्द्र जी ने कानपुर मन्दिर में स्वर्ण एवं रौप्य कारीगरी में काँच जड़वा कर उसकी रौनक द्विगुणित कर दी। यह मन्दिर भारत के जड़ाऊ मन्दिरों में उच्च

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

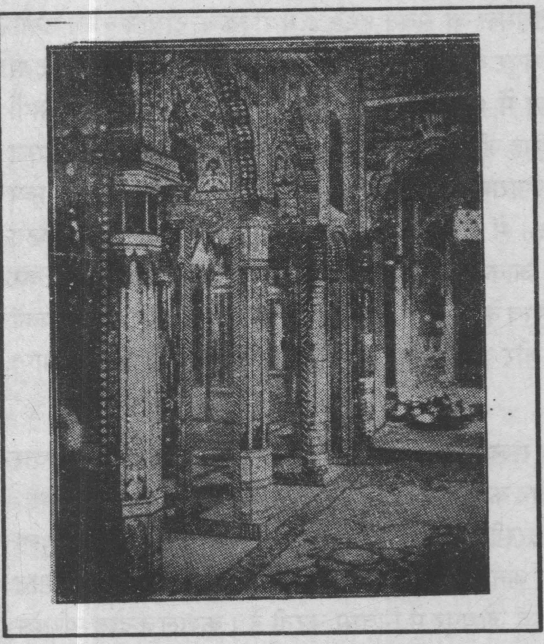

वि. स. १९२८ (ई. १८७१) में श्री रघुनाथ प्रसाद भंडारी द्वारा काचँ और सोने की कारीगरी से सुसज्जित श्री जैन श्वेताम्बर ग्लास टेम्पल कान पुर

श्रेणी का माना जाता है। साथ ही बने बगीचे एवं धर्मशाला ने इसकी उपयोगिता को चार चाँद लगा दिए। आपने गल्ले के पुश्तैनी धन्धे के अलावा जवाहरात, सोना चांदी का व्यवसाय किया। संवत् १९८९ में आप स्वर्गस्थ हुए। आपके पुत्र लाला दौलतचन्दजी जवाहारात और पुरानी वस्तुओं के विशेषज्ञ हैं।

भण्डारी गोत्र के शिलालेख अजीमगंज, भागलपुर, अजमेर, जोधपुर, मेड़ता, नाडलाई, कापरड़ा, अलवर, नागौर, जैसलमेर, सांचौर, भिनाय, सिरोही, कोटा, जयपुर, बीकानेर, शत्रुञ्जय, मण्डोर, बम्बई, चित्तौड़, अहमदाबाद, ऊंझा, भरूंच, खम्भात आदि अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं।

लूनावत भण्डारी

नरोजी भण्डारी के वंशजों में महाराजा उदयसिंह जी के समय भण्डारी लूणो जी हुए। इनकी सन्तानें लूणावत भण्डारी कहलाई। लूणो जी संवत् १६५१ से ८१ तक ३ बार जोधपुर

श्री गंगाराम भंडारी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

राज्य के प्रधान नियुक्त हुए। इनके पुत्र रायमल जी संवत् १६९४ में राज्य के दीवान बने। उनके पुत्र बिट्ठलदास जी संवत् १७६३ में जोधपुर के दीवान बने। इसी परिवार के भण्डारी माईदास संवत् १७६९ में दीवान रहे। इनके वंश में १९ वीं सदी में भण्डारी गंगाराम जी बड़े प्रतापी हुए। संवत् १८४४ में महाराजा विजयसिंह जी ने उन्हें ६ हजार की जागीर प्रदान की। महाराज भींवसिंह के तख्तनशीन होने के समय गंगाराम जी और उनके भाणजे सिंघवी इन्द्रराज जी राज्य के सेनानायक थे। इन्होंने ही संवत् १८६० में महाराजा मानसिंह को राजसिंहासन पर अधिष्ठित कराया। परन्तु मुसाहिबों के बहकावे में आकर इन दोनों सेना नायकों को महाराजा ने कैद कर दिया। जब धोकलसिंह ने राज्य के स्वामित्व के लिए उपद्रव किया तो महाराजा इन्हीं सेनानायकों की चतुराई और बहादुरी से उबर सके और जयपुर एवं बीकानेर की लड़ाईयों में विजय प्राप्त कर सके।

इनके वंशज अनेक पीढ़ियों तक राज्य की सेवा में विभिन्न पदों पर रहे। इनके परिवार में भण्डारी धनराज जी की सन्तानें धनराजोत कहलाती हैं। अनेक लूणावत भण्डारी सादड़ी (गोड़-वाड) निवास करते हैं, कुछ चांदूर बाजार (सी.पी.) में व्यापार करते हैं, कुछ कलकत्ते में। लूणा जी के भाई सादूल जी के वंश की शाखाएं अनोपसिंहोत, परतापमलोत, कुशलचन्दोत, मेसदासोत भण्डारियों के नाम से भी जानी जाती है एवं जोधपुर में निवास करती है। कुशलचन्दोत परिवार के भण्डारी लक्ष्मीचन्द जी को महाराजा मानसिंह ने संवत् १८९८ में दीवानगी बख्शी। इनके पुत्र शिवचन्द जी को संवत् १९०२ में महाराजा तख्तसिंह ने दीवान बनाया।

इनके अलावा इन्दौर, सतारा, जालौर, अहमदनगर आदि स्थानों में भी अनेक भण्डारी परिवार निवास करते हैं, जहां उन्होंने व्यापार में बहुत उन्नति एवं समृद्धि अर्जित की है।

इन्दौर के सेठ नन्दलाल जी भण्डारी के पूर्व पुरुष नाडोल से ३०० वर्ष पूर्व सासामऊ गए। वहां से ६० वर्ष बाद रामपुरा आकर बसे जहां अभी भी इस परिवार की हवेलियां हैं। इस परिवार के सेठ चरण जी रामपुरा के नामी व्यापारी थे। आज से करीब १२५ वर्ष पूर्व इस परिवार के सेठ पन्नालाल जी इन्दौर आकर बसे। इन्दौर में अफीम और कपड़े के व्यापार में सफलता पाई। आपके पुत्र नन्दलाल जी ने खूब सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठा अर्जित की। इन्दौर दरबार में आपका सम्मान था। अपके सुपुत्र कन्हैयालाल जी भण्डारी बड़े अच्छे व्यवस्थापक थे। ओस-वाल जाति के लिए आपने अनेक हितकारी कार्य किए। संवत् १९७९ में "भण्डारी मिल" कायम कर आप ओसवाल समाज के प्रथम उद्योगपति बने। आपने संवत् १९८७ में एक पीतल के बर्तन बनाने का कारखाना स्थापित किया। होल्कर सरकार ने आपको आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त कर आपका समुचित सम्मान किया।

सतारा में बसे सेठ बालमुकुन्द चन्दनमल के खानदान का मूल निवास पीपाड़ था। उनके कुटुम्ब को राज सेवा में रहने के कारण "मूंथा" पदवी मिली हुई है। करीब १३० वर्ष पूर्व इस खानदान के गुमानचन्द जी मूंथा अहमदनगर होते हुए सतारा आकर बसे। महाराष्ट्र के प्रधान धनिक व्यापारियों में इस परिवार की गणना हैं। इसी परिवार के सेठ मोतीलाल जी मूंथा म्यूनि-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सिपल कौन्सिलर एवं डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर रहे। वि. संवत् १९८८ में भारत सरकार ने आपको रायसाहब की पदवी दी।

जालौर के भण्डारी रूपराज जी के खानदान के पूर्व पुरुष नरोजी के छठे पुत्र निम्बाजी थे। अतः उनके वंशज निम्बावत भण्डारी कहलाते हैं। इनके पूर्व पुरुष करमसी जी संवत् १७७४ में जालौर आकर बसे। कुछ परिवार कालान्तर में भीनमाल जाकर बसे।

खांटेड़/खटेड़/आबेड़/खटोल:

मारवाड़ के गांव खाटू के चौहान राजपूत अड़पायत सिंह और बुधसिंह को वि. संवत् १२०१ में श्री जिनदत्त सूरि ने उपदेश देकर जैन बनाया एवं उनका खटेड गोत्र बना। महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार आचार्य ने उनकी धन की कामना पूर्ण की। अड़पायत सिंह के वंशजों का गुरु ने आवेड़ और बुधसिंह के पुत्र का खांटेड़ (खाटू के होने से) गौत्र निर्धारित किया। खांटेड़ कालान्तर में खटेड़ नाम से जाने जाने लगे। कहीं-कहीं वे खटोल भी कहलाते हैं। श्री सोहनराज जी भंसाली ने भी ओसवंश में उक्त कथानक उद्धृत किया हैं।

ट्रिवलूर निवासी सेठ सागरमल चुन्नीलाल का खानदान मूलतः बगड़ी (मारवाड़) से आया है एवं बैंकिंग व्यवसाय रत है। इससे पूर्व जालना में भी इस परिवार की दुकाने थीं। सेठ चुन्नी-लाल यहां के आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। बगड़ी के जैन-समाज में इस परिवार की बड़ी प्रतिष्ठा है।

बाली (गोडवाड़) के सेठ लक्ष्मीचन्द पूनमचन्द खंटेड का खानदान पूना एवं मोरा, बन्दर आदि स्थानों पर कारोबार करता है।

इस गोत्र के शिलालेख जयपुर, आगरा, निवाज, बीकानेर, कलकत्ता आदि स्थानों पर उप-लब्ध हैं।

रतनपुरा (बोहरा) /कटारिया :

इस गोत्र की उत्पत्ति सोनगरा चौहानों से मानी जाती है। वि. संवत् १०२१ में इस जाति के रतनसिंह जी प्रसिद्ध राजपूत सामंत थे जिन्होंने रतनपुर नाम से एक नगर बसाया। इनकी ५वीं पीढ़ी में धनपाल जी हुए। जैनाचार्य जिनदत्त सूरि के प्रतिबोध से उन्होंनें जैनधर्म अंगीकार किया। इनके वंशज ओसवाल वंश में शामिल हो रतनपुरा कहलाने लगे।

"जैन सम्प्रदाय शिक्षा" के अनुसार धनपाल जी विं. संवत् ११८१ में गद्दी पर बैठे। वे एक बार घोड़े पर सवार हो शिकार के लिए गए। थक कर एक पेड़ के नीचे विश्राम करने लगे, नींद आ गई, दुर्योग से एक सांप ने काट खाया एवं धनपालजी मूर्छित हो गए। दैवयोग से आ. जिनदत्त सूरि का उधर से पधारना हुआ- उन्होंने मन्त्र से उन्हें सचेत किया। धनपाल जी उनको रतनपुर ले गए। आचार्य ने वहां चतुर्मास किया। संवत् ११८१ में धनपाल जी ने जैन-धर्म अंगीकार किया और उनका गोत्र रतनपुरा निर्धारित हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नाहर ग्रन्थागार में उपलब्ध "अथ महाजन री जातां रो छन्द-मथेन अमीचन्द रो कयों (संवत् १९४० में गोरधन व्यास लिखित) एवं राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर के ग्रंथ भंडार में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रंथ (क्रमांक- २७०३३- संवत् १९१३ में लिपिबद्ध) 'इतिहास ओसवंश' के अनुसार इस गोत्र के पूर्वज लखमसी ने संवत् ५७८ में श्री चन्द्र गच्छ के आचार्य जिन गुप्त सूरि से प्रतिबोध पाकर जैन-धर्म अंगीकार किया था। लखमसी चौहान राजपूतों की सोनगरा शाखा के राजा जसवीर के वंशज थे। लखमसी के पुत्र रत्नसिंह ने रतनपुर गांव बसाया। आचार्य ने उनका रतनपुरा बोहरा गोत्र निर्धारित किया। इनके वंश में आगे चलकर धनपाल हुए। एक समय धनपाल शिकार खेलने वन में गए— वहां रात्रि हो जाने से उद्यान में सो रहे— एक सर्प ने काट लिया, इससे बेहोश हो गए। आ. जिनदत्त सूरि की कृपा एवं मंत्र-बल से वे सचेत हुए। संवत् ११८२ में धनपाल जैन व्रतधारी श्रावक बने। केशरियानाथजी मन्दिर के ग्रंथागार में उपलब्ध गुटका नं. २२ 'ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति' से भी उक्त कथा की पुष्टि होती है।

इस गोत्र की अनेक शाखाएं हुई- कटारिया, बलाही, कोटेचा, सापद्रहा, सामरिया, नराण, भलाबिया, रामसेगा, बोहरा आदि। इनके अलावा धनपालजी के साथ अनेक अन्य क्षत्रियों नें भी जैन-धर्म स्वीकारा जिनके विभिन्न गोत्र हुए, उनमें मुख्य हैं— हाड़ा, देवड़ा, सोनगरा, मालडीचा, कुदणचा, बेड़ा, बालोत, चीणा, काच, खींची, विहल, सेमटा, मेलवाल, बालीचा, माल्हण, पावेचा, कांवलेचा, रापड़िया, दुदणेचा, नाहरा, बबरा राकसिया, सांचोरा, बाघटा आदि।

धनपाल जी के वंश में आगे चलकर सोमजी के पुत्र झांझण जी (झांझणसिंह) नामक प्रतापी पुरूष हुए। आप मांडवगढ़ के बादशाह गौरी के मंत्री/मुसाहिब थे। आपने शत्रुंजय तीर्थ के लिए बड़ा भारी संघ निकाला। यहां आरती की बोली पर शाह अबीरचन्द नामक साहूकार से आपकी प्रतिस्पर्धा हो गई। अन्ततः ९२ लाख बोली लगाकर आपने प्रभु की आरती उतारी। आपके भाई पेथड़ शाह ने भी शत्रुंजय एवं गिरनार तीर्थों पर ध्वजा चढ़ाई। पेथड़ शाह के जीवन प्रसंग ग्रन्थ में अन्यत्र दिए जा रहे हैं। किसी के चुगली खाने पर बादशाह ने झांझणसिंह को पकड़ मंगवाया। यह पूछने पर कि खजाने से कितने रूपए चुराए, आपने दबंग उत्तर दिया "हुजूर, मैं एक पैसा भी बेहक का खाना हराम समझता हूँ। हाँ हुजूर का जगजाहिर नाम खुदा तक अवश्य पहुँचाया हैं।" यह सुनकर बादशाह बहुत प्रसन्न हुआ। इनके हाथ में कटार देखकर बादशाह ने उन्हें "कटारिया" कह कर सम्बोधित किया एवं दरबार में कटारी रखने का सम्मान इनायत किया। तभी से इस परिवार के लोग कटारिया कहलाने लगे। कटारिया उत्पत्ति की उक्त कथा नाहर ग्रंथागार के 'अथ महाजना री जातां रो छन्द' एवं राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के 'इतिहास-ओस वंश' ग्रन्थों में एक समान हैं।

कालान्तर में जावसी कटारिया के समय किसी कारणवश बादशाह ने सब गोत्र वालों को कैद कर लिया और २२ हजार रूपए दण्ड किया। एक अनुश्रुति के अनुसार खरतर गच्छ के भट्टारक यति जगरूप जी ने मुसलमानों को चमत्कार दिखा कर दण्ड नहीं लगने दिया। इसी खानदान में जावसी के वंशज महता लखन जी बड़े प्रसिद्ध हुए— आपने शत्रुंजय तीर्थ के लिए

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संघ निकाला। इसी परिवार के महता लखनसी ने एक लाख इक्कीस हजार रूपयों की लागत से महेन्द्रपुर के पास एक सुन्दर धर्मशाला का निर्माण करवाया।

उदयपुर का कटारिया/महता खानदान

सोम जी के खानदान में संवत् १६५० में महता साणखा जी हुए जो उदयपुर आ कर बस गए। इनकी तीसरी पीढ़ी में मेहता शेरसिंह जी और सवाईराम जी हुए जिन्हें महाराणा भीमसिंह ने संवत् १८७५ में प्रसन्न होकर जागीरें बख्शी। मेहता शेरसिंह ने कुंवर पदे (कुंवर जी के आधीन राजकार्य के इन्चार्ज) का काम संभाला। महाराणा ने उनके काम से खुश होकर उन्हें पालकी की इज्जत बख्शी। इनकी मृत्यु पर सवाईराम जी ने कुंवरपदे का कार्यभार संभाला और अन्ततोगत्वा उसके प्रधान बने।

महता शेरसिंह जी के पुत्र गणेशदास जी भी राजकार्य करते रहे। उनके पुत्र बख्तावर सिंह जी राज्य के हाकिम रहे। मेहता बख्तावर सिंह जी के पुत्र मेहता गोविन्दसिंह जी बहुत प्रसिद्ध हुए। वे अनेक जिलों के हाकीम रहे। आप बड़े साहसी और कुशल प्रबन्धक थे। महाराणा सज्जनसिंह के समय मगरा जिले के भीलों नें बड़ा उपद्रव किया तो मेहता गोविन्दसिंह को उस प्रदेश का हाकिम नियुक्त किया गया। भील गवांर, लड़ाकू और जरायम पेशा जाति मानी जाती थी। आपने अपने सद्व्यवहार से भीलों का उपद्रव ही शान्त नहीं किया, बल्कि उनकी काया पलट ही कर दी। आपके उपदेश से प्रभावित होकर भीलों ने गोमांस खाना छोड़ दिया। संवत् १९३९ में भोराई के भीलों ने भी उपद्रव मचाया। उसे भी शान्त करने का श्रेय आपको ही है। मेहता गोविन्दसिंह जी १४ वर्ष तक भील प्रदेश में हाकिम रहे। भील जाति ने इनके समय में खूब उन्नति की एवं उनके सामाजिक रहन सहन और खान-पान में अनेक सुधार हुए। भारत सरकार से आपको अनेक प्रशंसा-पत्र मिले। महाराणा ने प्रसन्न होकर आपको कंठी एवं सिरोपाव प्रदान किया। आप बड़े धर्मप्रेमी थे। आपने सुप्रसिद्ध केशरिया जी तीर्थ में एक धर्मशाला का निर्माण करवाया। संवत् १९७५ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपका परिवार भी राज्य की सेवारत रहा।

मेहता सवाईराम जी भी महाराणा के कृपापात्र रहे। कुंवर पदे के प्रधान होने से महाराणा ने दीपावली के अवसर पर आपकी हवेली पर पधार कर आपका सम्मान बढ़ाया। आपकी पुत्री चांदबाई के विवाह पर महाराणा ने एक गांव हथलेवे में प्रदान किया। इनके दत्तक पुत्र गोपालदास जी भी राज्य सेवारत रहे। संवत् १९०७ में नया गांव आबाद कर कुशलता प्रदर्शित करने पर महाराणा ने आपको सिरोपाव एवं रेलसगरा जिले की हकूमत बख्शी। संवत् १९१४ में आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा ने आपको "जी" कारा (उनको सम्बोधन में अन्य लोगों का 'जी' कहना आवश्यक) एवं पांव में सोना बख्शा। संवत् १९४० में महाराणा सज्जनसिंह के समय विद्रोही रावत सरदार केशरीसिंह को गिरफ्तार कर लाने के एवज में महाराणा ने इन्हें कंठी व सिरोपाव प्रदान किया। आपके पुत्र मेहता गोपालसिंह जी बड़े प्रतिभाशाली थे। वे भी राज्य की सेवा में सेवारत रहे एवं विभिन्न प्रदेशों के हाकिम नियुक्त हुए। आपने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

राज्य की आमदनी में बहुत तरक्की की. संवत् १९५६ में पड़े अकाल में आपने किसानों को बहुत राहत दिलवाई। संवत् १९५७ में आप राज्य की महद्राज सभा (चीफ कोर्ट) के सदस्य नियुक्त हुए। संवत् १९६३ में महाराणा ने आपको पांव में सोना बख्शा। आपकी पुत्री का विवाह इन्दौर राज्य के प्रधानमंत्री रायबहादुर सिरेमल जी बापना से हुआ। संवत् १९६८ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र जगन्नाथसिंह जी भी राज्य की सेवा में सेवारत रहे। संवत् १९७१ में आप महकमा खास के प्रधान बने। महाराणा ने आपको "जीकारा" बख्शा एवं पावों में सोना पहनने का अधिकार प्रदान किया।

सलखा जी के पुत्र ताणा जी के वंश में मालमदास जी हुए जिन्होंने उदयपुर में माल्सेरी मुहल्ला बसाया। इनके वंशज भी राज्य-सेवा-रत रहे। महाराणा ने समय-समय पर उन्हें सम्मानित किया।

इस खानदान के अनेक परिवार सीतामऊ, बंगलोर, पूना, न्यायडोंगरी, मले गांव आदि स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते हैं। सीतामऊ के मेहता नाथूलाल जी का खानदान रतलाम राज्य का प्रतिष्ठित परिवार है। समय-समय पर रतलाम दरबार से उन्हें जागीरें प्राप्त हुई। उन्हें टांका माफ था। बंगलोर के सेठ धनराज हीराचन्द का परिवार मूलतः देवली (मारवाड़) का है। संवत् १९४४ में सेठ धनराज जी देवली से यहाँ आए। इस परिवार का यहां सर्राफा, जवाहरात एवं बैंकिंग का प्रमुख व्यवसाय है।

पूना के सेठ बनाजी राजा जी कटारिया का मूल निवास सनपुर (सिरोही) था। यह परिवार संवत् १९२१ में पूना आकर बसा। सेठ बनाजी ने संवत् १९८६ में एरनपुरा तीर्थ के लिए संघ निकाला जिसमें ४००० स्त्री-पुरूष सम्मिलित हुए एवं एक लाख रूपया व्यय हुआ। इसी संघ में बड़ी दुखदायी घटनाएं हुई। कॉलेरा बिमारी के फलस्वरूप संघवी बनाजी के पुत्र माणकचन्द जी एवं अन्य ६० यात्री काल कवलित हो गए। सेठ बनाजी ने सनपुर के पास एक मन्दिर बनवाया।

न्याय डोंगरी (नासिक) के सेठ हमीरमल पूनमचन्द कटारिया के परिवार का मूल निवास चंडावल (जोधपुर) था। इस परिवार का यहां कपड़ा का व्यवसाय होता है। रालेगांव (बरार) के सेठ उम्मेदमल चून्नीलाल कटारिया के खानदान का मूल निवास रीयां (मारवाड़) था। इस परिवार ने किराने के व्यवसाय में बहुत सम्पत्ति अर्जित की।

रतनपुरा-कटारिया गोत्र के अनेक स्थानों पर शिलालेख उपलब्ध हैं जिनमें आजीमगंज, बिलाड़ा, जीरावाला, नागौर, जयपुर, बीकानेर, जेसलमेर, शत्रुंजय, पटना, सम्मेदशिखर, मधुवन, नागदा, देलवाड़ा, मालपुरा, तारानगर, कलकत्ता, खंभात, थराद आदि नगरों के १५ वीं से १९वीं शताब्दी के लेख हैं।

पावेचा:

बड़नगर के चौधरी परिवार का गोत्र पावेचा है। मूलतः वे सोजत के हैं, करीब ३५० वर्ष पूर्व मालवा प्रान्त में आकर बसे। वहां से कुछ परिवार रनिजा एवंबदनावर जाकर बसे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वहां से बड़नगर (बोलाई) आए। यहां के नरेश ने दुष्काल में जनता की सहायता करने के उपलक्ष में उन्हें चौधरी का पद दिया। तब से इनके वंशज चौधरी कहलाते हैं। राज्य में इस परिवार का बहुत सम्मान है।

बलाही

रतनपुरा-कटारिया गोत्र की ही एक शाखा बलाही गोत्र हैं। कहते हैं इस खानदान का एक श्रेष्ठि बलाईयों को रूपए देता था। लोग उसे बलाईया कहने लगे। कालान्तर में उसके वंशज बलाही कहलाने लगे।

नाहर ग्रन्थगार में उपलब्ध "मथेन अमीचम्द रो कयौं (संवत् १९४० में गोरधन व्यास लिखित) अथ महाजनां री जातो रौ छन्द" एवं राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर में उपलब्ध 'इतिहास ओस वंश' (क्रमांक— २७०३३ संवत् १९१३ में लिपिबद्ध) के अनुसार वि. संवत् १६४१ में कटारिया गोत्र के सेठ हरपाल हुए जो बलाईयों से लेन-देन का व्यापार करते थे। अतः उनका नख बलाही नाम से प्रसिद्ध हो गया।

संचेती/सुचिन्ती :

इस गोत्र की उत्पत्ति सोनीगरा चौहान वंशीय राजपूतों से मानी जाती है। यति रामलाल जी रचित महाजन वंश मुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार वि. संवत् १०२६ में दिल्ली के चौहान राजा के पुत्र बोहित्थकुमार को सांप ने काट लिया— उसे मृत मान श्मशान ले जाया जा रहा था। राह में जैनाचार्य वर्धमान सूरि का स्थानक था। राजा की प्रार्थना पर आचार्य श्री ने मन्त्र बल से राजकुमार को सचेत कर दिया। तब राजा ने जैनधर्म अंगीकार किया। उनके वंशज ओसवाल कुल में शामिल हुए एवं वे संचेती कहलाए। नाहर ग्रन्थगार में उपलब्ध अथ महाजनां री जाता रौ छन्द-मथेन अमीचन्द रौ कयौ (संवत् १९४० में गोरधन व्यास लिखित) एवं राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में उपलब्ध 'इतिहास ओस वंश' (संवत् १९१३ में लिपिबद्ध) से भी उक्त कथानक की पुष्टि होती है। यति श्री पालजी ने अपने ग्रन्थ "जैन सम्प्रदाय शिक्षा" में जैनाचार्य श्री वर्धमान सूरि द्वारा सोनीगरा चौहान बोहित्थकुमार को उपदेश देकर महाजन वंश में शामिल कर संचेती गोत्र की स्थापना करने का उल्लेख किया है। श्री सोहनलाल जी भंसाली के अनुसार इस गोत्र की उत्पत्ति संवत् १०७६ में आचार्य जिनेश्वर सूरि के प्रतिबोध देने से सेनीगरा चौहान राजा के जैनधर्म अंगीकार करने से हुई। भसांली जी ने अपने ग्रंथ ओसवंश में उत्पत्ति सम्बधी सर्प-विष वाला कथानक भी दिया है। यति रामलाल जी संचिती गोत्र को संचेती गोत्र से भिन्न मानते हैं।

जोधपुर के केशरिया नाथ मन्दिर के ग्रंथागार में उपलब्ध हस्त लिखित ग्रंथ 'ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति' (गुट का न. २२) में विस्तार से जो कथा दी है वह थोड़ी भिन्न है। इस गुटके में चहुआणों की २४ खांपों का नामोल्लेख कर राजा बोहित्थ की बंशावली भी दी है जो इस प्रकार है—

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चहुआण राजा धूरम्— नहुष— मानधाता— पंडार— अमर सिंह— तामदेव— समरसिंह— धरणीधर— समधर— मानसिंह— समरसिंह— सोमदेव— सिवराज— सीहो— चावदेव— समरसी— धीरंधर— सूरजमल— राजदेव— चंड— प्रचंड— प्रतापसिंह— अभयदेव— महींद्र देव— लखण— सहिस— लखमण के तीन कुवँर— बोहित्थ, लवण, जोधा। राजा बोहित्थ कलीचंडा ग्रामे राज करे। उस समय श्री वर्धमान सूरि जी नगर पाटण में राजा दुर्लभ की सभा में वाद जीत कर चंडा ग्राम पधारे। वहाँ बोहित्थ का पुत्र गुणदेव सर्प डसने से अचेत पड़ा था। सूरिजी ने मंत्र बल से उसे सचेत कर जैन धर्म अंगीकार करवाया एवं उसका संचेती गोत्र निर्धारित किया।

श्री बलवंतसिंह मेहता के अनुसार सम्भवतः थोक माल के व्यापारी होने की वजह से इनका खानदान संचेती कहलाने लगा।

मेड़ता के श्री जतनराज मेहता के संग्रह में उपलब्ध भाटों की बहियों में कहीं कहीं इस गोत्र की उत्पत्ति 'परमार राजपूतों से' दर्ज है। उनमें वीरात् ७० वर्षे राजा उपलदेव के प्रधान द्वारा सूरि जी से प्रतिबोध पाकर जैन धर्म अंगीकार करने एवं उनका सुचिंती गोत्र स्थापित करने का उल्लेख है। इनमें ढ़िलीवाल, धमाणी, बंब, चौधरी, गांधी, बैगणिया, कोठारी आदि को इस गोत्र की शाखाऐं माना हैं।

इस गोत्र के शिलालेख ओसिया, राजगृह, जयपुर, बीकानेर, ग्वालियर, सुहानियां, आगरा, लखनऊ, जेसलमेर, मंदसोर, रामपुरा, खंभात, जोमनेर, मालपुरा, सांगानेर, साथा आदि स्थानों पर प्राप्त हुए हैं। ओसिया में विद्यमान संवत् १२५९ के शिलालेख (जैन लेख संग्रह— क्रमांक ७९१) में आचार्य कक्क सूरि द्वारा सुचेत श्रेष्ठि सहाद द्वारा स्थापित प्रतिमा प्रतिष्ठापन का उल्लेख है। यह ओसवंश के प्राचीनतम उपलब्ध शिलालेखों में से हैं।

इस खानदान के परिवार विभिन्न स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते रहे। बिहार का सुचिन्ती खानदान मूलतः बीकानेर का है। इस परिवार के बाबू धन्नूलाल की देखरेख में जैन मन्दिरों (पावापुरी, कुण्डलपुर, गणाया) का जिर्णोद्धार हुआ। उनके भ्राता लक्ष्मीचन्द जी भी नामांकित व्यक्ति थे। भारत सरकार ने उन्हें रायसाहब की उपाधि दी। अजमेर के सेठ गुलाबचन्द हीराचन्द के परिवार का मूल निवास मेड़ता था। इस खानदान के सेठ वृद्धिचन्द जी ग्वालियर राज्य के खजांची थे। उन्होंने सिद्धांचल का संघ निकाला। आपने फालोदी के पार्श्वनाथ मन्दिर का जीर्णोद्धार करवा कर पक्का पर कोटा बनवाया। लोणार के सेठ हणूतमल मोतीलाल संचेती का मूल निवास बवायचा (किशनगढ़) था। सेठ मोतीलाल जी बड़े पराक्रमी थे। संवत् १९८७ में बुलखना के मुसलमानों एवं मराठों ने मिलकर मारवाड़ी समाज के घर लूट लिये एवं घरों में आग लगा दी। आपने साहसपूर्वक लोनार को उनके आक्रमणों से बचाया। इसी तरह वहाँ के "धारा" जलप्रपात पर हिन्दुओं के नहाने के अधिकार पर विवाद उठा तो आपके सद्प्रयत्नों से वह सुलझा। चिंगनपेठ (मद्रास) का सेठ थानमल चंदनमल का खानदान डूंडला (मारवाड़) से आया है। बैजापुर (निजाम) के सेठ रूपचन्द छागीराम का परिवार डाबरा से २५० वर्ष पूर्व

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आकर यहां बसा है। आपने ३ हजार एकड़ में फलों का बगीचा बड़े पैमाने पर लगाकर समाज में एक नए व्यवसाय का सफल सूत्रपात किया है।

डोसी/दोषी/सोनीगरा/पीथलिया

डोसी गोत्र की उत्पत्ति सोनगरा राजपूत ठाकुर हरिसेन से मानी जाती है। वि.संवत् ११९७ में विक्रमपुर में आ. जिनदत्त सूरि ने हरिसेन को प्रतिबोध देकर जैनी बनाया एवं उनका डोसी गोत्र निर्धारित किया। महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार ठाकुर के कोई पुत्र न था। आचार्य ने वासक्षेप दिया। ठाकुर ने पुत्र होने पर सवालाख स्वर्ण मोहरों से प्रभावना करने का वचन दिया। पुत्र हुआ पर ठाकुर को लालच आ गया, मोहरे नहीं लगाई। तब क्षेत्रपाल उपद्रव करने लगा। फलस्वरूप ठाकुर हरिसेन के पुत्र का दिमाग विक्षिप्त हो गया। आ. जिनदत्त सूरि फिर विक्रमपुर पधारे तो ठाकुर अपने पुत्र सहित दर्शनार्थ आया एवं अपना दुख सूरिजी को बताया। उस समय पुत्र उन्मुक्त होकर बोला "पिता जी दोशी हैं"। ठाकुर ने भी अपना दोष माना। गुरू जी ने पुत्र पर मन्त्रित वासक्षेप डाला जिससे धीरे-धीरे पुत्र ठीक हुआ। सूरि जी ने उन्हें जैनधर्म अंगीकार कराया एवं ओसवाल कुल में सम्मिलित किया। इस घटना के संदर्भ में उनका दोषी गोत्र निर्धारित हुआ जो कालान्तर में डोसी हो गया।

ठाकुर के कुल के अन्य सोनीगरा राजपुत्रों का सोनीगरा गोत्र हुआ। ठाकुर के साथ परमार क्षत्रिय वंश के लोग भी जैनी हुए उनमें पीथल जी (पीउला) से पीथलिया गोत्र बना।

डोसी गोत्र में कर्माशाह नाम के सुप्रसिद्ध व्यक्ति हुए जिन्होंने शत्रुंजय तीर्थ का संवत् १५८१ में १६वाँ.जीर्णोद्धार करवाया। राणा रतन सिंह द्वितीय के समय संवत् १५८४ से १५८८ तक कर्माशाह मेवाड़ राज्य के मंत्री रहे। शत्रुञ्जय तीर्थ के विमलवासी आदीश्वर मन्दिर पर उत्कीर्णित विक्रम संवत् १५८७ के एक शिलालेख से कर्मा शाह के वंश एवं उस की समृद्धि का पता चलता है। मुनि जिन विजय जी ने अपने ग्रंथ 'जैन प्रशस्ति संग्रह' में यह लेख आद्योपांत प्रकाशित किया है। इसके अनुसार ग्वालियर के आम राजा ने बप्पभट्ट सूरि के उपदेश से जैन धर्म अंगीकार किया। उसकी एक पत्नि जैन कन्या थी। उसकी कुक्षि से उत्पन्न संतानों को ओसवाल कुल में शामिल किया गया— इन्हीं के वंशज कर्माशाह थे। इनके पूर्वज सारण देव बड़े प्रसिद्ध पुरुष हुए। उनकी ८वीं पीढ़ी में तोला शाह हुए जिनकी धर्मपत्नि लीलू की कुक्षि से कर्मा शाह का जन्म हुआ। इनकी दो पत्नियाँ थी कापूर दे और कामल दे। राज दरबार में कर्माशाह का बड़ा सम्मान था। इनका सुदूर चीन आदि देशों से जहाजों द्वारा रेशमी वस्त्रों का व्यापार था।

प्रसिद्ध इतिहासकार श्री बलवंत सिंह जी मेहता के अनुसार कदाचित् वस्त्रों के प्रसिद्ध व्यापारी होने के कारण ही इनके गोत्र का 'दोषी' नाम पड़ा हो। संस्कृत में शरीर पर धारण किए जाने वाले वस्त्र को 'दुष्य' कहा जाता है। ओसवालों के अनेक गोत्रों का नामकरण निःसन्देह पेशे के आधार पर हुआ है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इस खानदान के वंशज उदयपुर में रहते हैं। इनके पूर्व पुरुष भिक्खू जी डोसी बड़े प्रसिद्ध हुए। महाराणा राजसिंह की आज्ञा से मशहूर राजसमन्द का विशाल तालाब आप ही की देख रेख में निर्मित हुआ जिस पर एक करोड़ से अधिक रूपए खर्च हुए। महाराणा से उसके एवज में आपको हाथी और सिरोपाव इनायत हुए। आपका राजनगर का मकान डोसी महल के नाम से मशहूर हैं। आपने वहां एक सुन्दर पत्थर की बावड़ी भी बनवाई। उदयपुर में आपने एक उपासरा एवं वासजूज्य स्वामी का सुन्दर काँच का मन्दिर बनवाया।

इस परिवार के लोग भोपाल में भी निवास करते हैं। सेठ गम्भीरमल कनकमल डोसी का परिवार १३० वर्ष पूर्व मेड़ता से आकर बसा। भोपाल में इस परिवार की बड़ी प्रतिष्ठा है।

इस गोत्र के अनेक शिलालेख बिहार, जोधपुर, बीकानेर, लखनऊ, जेसलमेर, जयपुर, सांगानेर, कोटा, सिरोही, बम्बई, जामनगर, शत्रुञ्जय, करवटिया, बीसनगर, सूरत, अहमदाबाद, खेड़ा, मातर, जीरावला आदि अनेक स्थानों पर प्राप्त हुए हैं— इसी से गोत्र की प्राचीनता और फैलाव का अन्दाजा लगाया जा सकता है।

बागरेचा/मेहता बागरेचा/आच्छा

इस गोत्र की उत्पत्ति सोनगरा चौहान राजपूतों से मानी जाती है। कहते हैं जालोर के राजा सोमदेव के बड़े पुत्र बागराज जी ने जैनाचार्य श्री सिद्धसूरि के उपदेश से जैनधर्म अंगीकार किया। इन्होंने जालौर के पास बागरा नामक गांव बसाया। इनकी सन्तानें बागरेचा नाम से मशहूर हुई।

संवत् १६४२ में इस खानदान के श्री अमीपाल जी सिरोही राज्य के दीवान हुए। जोधपुर के महाराजा सूरसिंह जी ने इन्हें सिरोही राव से मांग लिया। संवत् १६५६ में ये जोधपुर आ गए। बादशाह जहाँगीर इनसे बहुत प्रभावित था। इनके आग्रह पर संवत् १६५८ में जालौर का परगना जोधपुर महाराजा को इनायत हुआ। अमीपाल जी उसका प्रबंध देखने लगे। बादशाह जहाँगीर ने इनकी कार्य कुशलता देखकर जोधपुर महाराजा से इन्हें मांग लिया। तब से दिल्ली का खजाना इनके सुपुर्द हुआ। इन्होंनें बड़ी प्रतिष्ठा पाई। इनके देहांत पर इनकी धर्मपत्नी इनके साथ सती हुई जिसकी स्मारक छत्री दिल्ली में बनी हुई है। इस वंश के अनेक व्यक्तियों ने राज्यों की अच्छी सेवा की। महाराजा विजय सिंह के समय मेहता लालचन्द जी ने नजवकुलीखाँ के आक्रमण से जोधपुर को बचाया। महाराजा ने उन्हें अनेक जागीरें बख्शी। मेहता दलीचन्द जी के देहांत पर उनकी धर्मपत्नी भी सती हुई— इनकी छत्री जोधपुर में बनी हुई है। बागरेचा अमोलक चन्द जी के पुत्र माणक लालजी ने संवत् १८४४ में ब्रह्मसर (जैसलमेर) में पार्श्वनाथ भगवान् का मन्दिर बनवाया। यहाँ इस गोत्र का शिलालेख भी उपलब्ध हैं। इसी खानदान के मेहता बख्तावरमल जी बड़े पराक्रमी हुए। उन्हें अनेक ठिकानों से पालकी सिरोपाव आदि सम्मान प्राप्त हुए। संवत् १९५७ में अखिल भारतीय स्थानकवासी कान्फ्रेंस, फलौदी के आप सभापति चुने गए। इसी अवसर पर जर्मनी के प्रसिद्ध विद्वान् डा. हरमन जेकोवी पधारे थे। इसी परिवार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के मेहता रणजीतमल जी ने बड़ा सुयश कमाया। संवत् १९८४ में जोधपुर नरेश ने आपकी ईमानदारी एवं कार्यतत्परता से प्रभावित होकर आपको चीफ कोर्ट का जज नियुक्त किया।

बागरेचा गोत्र के अनेक परिवार जोधपुर, नागपुर, चिगंनपेठ आदि स्थानों पर निवास करते हैं। चिगंनपेठ का सेठ राजमल गणेशमल का परिवार सिरियारी से संवत् १८७३ में उठ कर वहां बसा हैं। ये "आच्छा" गोत्र के नाम से भी जाने जाते हैं।

संखलेचा/संखवाल/संखवालेचा

इस गोत्र की उत्पत्ति देवड़ा चौहाण क्षत्रियों से मानी जाती है। इनके पूर्वज कान्हड़ दे जालौर के शासक थे। उनके पुत्र राजा शुचिधर (सच्चाजी) हुए जो अपने पुत्र सहदेव एवं प्रपौत्र लखमसी के साथ संखवाल नगर जा बसे जहाँ आचार्य कक्क देवसूरी से उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया। संखवाल नगरी के होने के कारण अन्यत्र उन्हें संखवालेचा कहा जाने लगा जो कालांतर में 'संखवाल' हो गया

श्री सोहनलाल जी भंसाली ने 'ओसवाल वंश' ग्रंथ में इनके पूर्वजों का मूल स्थान नाडोल माना है और कान्हड़ दे को जालौर के शासक कान्हड़ दे से भिन्न माना है। उनके अनुसार कान्हड़ दे का पुत्र लखमसी यवनों के आक्रमणों से परेशान होकर जालौर से संखवाल जा बसा जहाँ संवत् ११७५ में उसने कोरण्टा गच्छ के श्री रत्नप्रभ सूरि से प्रतिबोध पाकर जैन धर्म अंगीकार किया। जालौर का शासक कान्हड़ दे संवत् १३१४ में अलाउद्दीन खिलजी से युद्ध करते मारा गया था— यह इतिहास सिद्ध घटना है। अतः लखमसी के पिता कान्हड़ दे जालौर के शासक न रहे हों— यह सम्भव है। लखमसी की आठवीं पीढ़ी में आम्बवीर हुए। उनके पुत्र कोचर शाह नामांकित व्यक्ति हुए।

एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार इस गोत्र की उत्पत्ति संवत् ७१३ में राजपूत राजा सुचिधर के ग्राम संखवाली (आहोर, जिला जालौर) में आचार्य कीर्ति रत्नसूरि से जैनधर्म अंगीकार करने से हुई। इनके प्रपौत्र लखमसी ने कोरंटा में महावीर स्वामी का मन्दिर बनवाया जिसमें जैनाचार्य देव सूरि ने प्रतिमा प्रतिष्ठापन किया। लखमसी के आगे की पीढ़ियों में इस खानदान में जीवराज, शिवराज, नरसिंह, वरसिंह, धनपाल एवं आम्बवीर हुए। उनके पुत्र कोचर शाह बड़े प्रसिद्ध हुए। उन्होंने संखवाल में आदीश्वर भगवान् का मन्दिर बनवाया। यहाँ के शासक से अनबन हो जाने के कारण कोचर शाह कोरंटा जा बसे। यहाँ भी उन्होंनें एक जैन मंदिर का निर्माण कराया। संखवाल से 'उजली आव्या' (उठ आये) इसीलिए संखवालेचा प्रसिद्ध हुए।

कोचर शाह वि. संवत् १३१३ में दादा आचार्य जिन कुशल सूरि के प्रबोधन से खरतर गच्छ अनुयायी बने। 'ओसवाल वंश' में दिए विवरण के अनुसार कोचरशाह ने खरतर गच्छ के आचार्य जिनेश्वर सूरि द्वितीय से आदीश्वर भगवान् के मन्दिर में प्रतिमा प्रतिष्ठापन करवाया। इसलिए कोरंटा गच्छ के चैत्यवासी यतियों ने बहुत विवाद किया। अन्ततः कोचरशाह ने युक्ति से काम लिया— अपनी बड़ी पत्नी के पुत्रों को खरतर गच्छ का अनुयायी माना। इस तरह धर्माचार्यों की धार्मिक मदान्धता का कुचक्र एक श्रावक श्रेष्ठि की सूझ-बूझ से खत्म हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कोचर शाह के पाँच पुत्र— जेतो (जेतसी), खेतो, नेतो, पीता एवं मूलू हुए। ज्येष्ठ पुत्र जेतसी ने संवत् १४२९ में मेवानगर में वर्धमान स्वामी के मन्दिर का निर्माण कराया। उन्होंने संवत् १५०५ में मांडवगढ़ में ऋषभदेव स्वामी के मन्दिर का निर्माण कराया। इन्हीं जेतसी ने सम्मेद शिखर तीर्थ के लिए ३००० श्रावकों के संघ का समायोजन किया जिसके दौरान १५२ गाँवों में स्वामी वात्सल्य किया एवं प्रभावना में सौनैये प्रदान किए। श्रीसंघ ने उन्हें संघपति की पदवी से विभूषित किया।

कोचर शाह के कनिष्ठ पुत्र मूलूजी के पुत्र रोलू (रतनू) हुए जिनके दो पुत्र आयमल और देवमल थे। देवमल के चार पुत्र-लक्खों भादो केला और देल्हा हुए। देल्हा ने दीक्षा ली। यही देल्हा 'कालान्तर' में खरतर गच्छ के महान् विद्वान् आचार्य जिन कीर्तिरत्न सूरि के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनका जन्म संवत् १४४९ में कोरंटा में हुआ था। संवत् १५१२ में नाकोड़ा के सूखे तालाब से पार्श्वनाथ भगवान् की प्रतिमा प्रकट हुई। आ. जिन कीर्तिरत्न सूरि ने इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा नाकोड़ा मन्दिर में करवाई। इसी के साथ आपने मन्दिर में अधिष्ठायक देव भैरवजी की स्थापना करवाई। संवत् १५३६ में शाह जेठा पुत्र रोहिणी ने इस भैरव प्रतिमा के ठीक सामने आ. जिन कीर्तिरत्न सूरि की प्रतिमा स्थापित की जो आज भी नाकोड़ा मुख्य मन्दिर में सुशोभित हैं। संवत् १५२५ में प्रस्तरांकित आ. जिनकीर्ति रत्नसूरि के स्तूप-प्रशस्ति से भी संखवाल गोत्र का उक्त इतिहास प्राप्त होता है।

देवमल जी के पुत्र भादो जी का परिवार संवत् १४६२ में कोरंटा से रिसलपुर जा बसा। शेष दो भाई मेवानगर में बस गए। लखा जी जैसलमेर जा बसे। इनके परिवार में समदर जी हुए जिनके वंशज जिदांजी से जिन्दाणी गोत्र बना जो कालांतर में जिन्नाणी या जन्नाणी कहलाने लगे।

केला जी के पुत्र माला शाह हुए। ये आ. जिन कीर्तिसूरि के भतीजे थे। इन्होंने नाकोड़ा में पार्श्वनाथ भगवान् के विशाल भव्य शिखर वाले मन्दिर का निर्माण कराया। इसमें मूर्ति प्रतिष्ठापन संवत् १५१८ में आचार्य जिनचन्द्र सूरि के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ। उस समय आ. कीर्ति रत्न सूरि भी उपस्थित थे। ये मालाशाह बड़े दानवीर थे। ये वीरमपुर (नाकोड़ा) के दिवान मनोनीत हुए। इनकी विधवा बहन छाली बाई ने संवत् १५११ में आदिनाथ भगवान् का मन्दिर बनवाया। मालाशाह ने कुलदेवी की उपासना में अहम तप कर, एक जनश्रुति के अनुसार पारस पत्थर प्राप्त किया। उक्त दोनों मन्दिर अब भी नाकोड़ा में विद्यमान हैं। मालाशाह ने शत्रुञ्जय एवं गिरनार तीर्थों के लिए संघ समायोजन किये एवं 'संघपति' की उपाधि से विभूषित हुए। लोग इन्हें मोहरों वाले मालाशाह के नाम से याद करते हैं। मालाशाह की संतानें— सोड़ा. भांडा, नीड़ा, और चूड़ा हुए। मालाशाह की सुन्दर धवल चोटी एवं दाढ़ी को देखकर मेवानगर के युवराज ने बालों से घोड़े कीं छंवरी (चाबुक) बनाने की बात कही। राजकुमार के ऐसे कुविचार जान कर मालाशाह एवं उनके परिवार ने नगर छोड़ दिया और जसोल; जिजियाणी, बाड़मेर, जैसलमेर, आहौर, सांचोर, जालौर जाकर बस गये। उनके साथ अन्य जैन परिवारों नें भी नगर छोड़ दिया। इस तरह मेवानगर उजड़ गया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मालाशाह के द्वितीय पुत्र भांडा शाह बहुत प्रसिद्ध हुए। उनका परिवार बीकानेर जा बसा। इन्होंने बीकानेर में एक विशाल कलापूर्ण मन्दिर बनवाया जो 'भांडासर के मन्दिर' नाम से विख्यात है।

वि. संवत् १५३६ में मालाशाह के परिवार ने जैसलमेर में एक मन्दिर बनवाया। संवत् १५८७ में संखलेचा गोत्रीय सिरेमल जी ने जोधपुर में मुनि सुव्रत जी के एक चौमुखा मन्दिर का निर्माण करवाया। इस मन्दिर को संवत् १७३७ के मुगलकाल में नवाब नाहर बेग ने तोड़ डाला। वर्तमान में जोधपुर में मुनिसुव्रत स्वामी का एक छोटा-सा मन्दिर है जिसे भंसाली बनेचन्द लिखमीचन्द ने बनवाया था। सम्भवतः यही वह प्राचीन मन्दिर है जिसका संवत् १८८९ में भंसाली परिवार ने पुनः निर्माण कराया। मन्दिर की स्फटिक रत्न मंडित प्रतिमा प्राचीन है। मूंथा नैणसी कृत 'मारवाड़ रे परगना री विगत' में इस मन्दिर एवं प्रतिमा का उल्लेख है।

जालौर के संखलेचा नेत सी जी बीजाजी ने संवत् १६२५ में शांतिनाथ भगवान् के मंदिर का निर्माण कराया। संवत् १६६५ में संखलेचा माणक जी मूलजी ने किले पर महावीर स्वामी का मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर में मूर्ति प्रतिष्ठा आ. देव गुप्त सूरि ने की। श्रेष्ठि माणक जी मूलजी को इनकी राजनैतिक दूरदर्शिता एवं वाक् चातुर्य से प्रसन्न होकर सम्राट अकबर ने राज्य सभा में बैठक, शिरोपाव एवं 'कानूगो' की उपाधि प्रदान की।

श्वेताम्बर स्थानकवासी सम्प्रदाय से बहिर्गमन कर तेरापंथ सम्प्रदाय के प्रवर्तन करने वाले आचार्य भीखण जी (संवत् १८१७-१८६०) जन्म से संखलेचा गोत्रीय थे।

इसी गोत्र के श्रेष्ठियों ने जालौर में संवत् १८०२ में आदिनाथ भगवान् के मन्दिर का निर्माण कराया। इन्होंने संवत् १८०५ में लाखों रूपए खर्च कर कुलदेवी संखेश्वरी के मन्दिर का निर्माण कराया। संवत् १९१७ में शत्रुञ्जय तीर्थ पर संखलेचा श्रेष्ठि बाघमलजी ने एक देव कुलिका बनवाई।

इस गोत्र में दसा, पांचा, ढाया, विभेद भी हैं। इस खानदान के अनेक परिवार जयपुर, खामगाँव, आर्वी, (बरार) येवला, जावद, आदि स्थानों में निवास करते हैं एवं भारत के विभिन्न प्रातों में फैले हुए हैं। जयपुर का खानदान काशीनाथ जी जौहरी का है। भारतीय रजवाड़ों में आप नामी जौहरी थे। भारत के वायसराय व लंदन-- अमरीका के अनेक रईसों के सर्टीफिकेट इस खानदान को प्राप्त हुए। खामगाँव का सेठ रिखबदास सवाईराम का खानदान राई की आढ़त करता है। आर्वी का सेठ रामचंद्र चुन्नीलाल का परिवार सोने-चाँदी एवं बैंकिंग व्यवसाय रत है। येवला का सेठ केसरीमल जी का परिवार तिवरी से उठा है एवं कपड़े का व्यवसाय करता है। जावद के सेठ लक्ष्मी जी ज्योतिष के अच्छे ज्ञाता थे एवं इस परिवार की वहाँ जमींदारी हैं।

कांसटिया, मंमैया (मुम्बईया), हालाखुंदी, बौरूदिया, जंनाणी, बूंटा, कानूगा, बाला, आदि संखलेचा गोत्र की शाखाएँ हैं। इनमें भाईचारा है एवं आपस में शादी-विवाह नहीं होते। भंडारी कोठारी, पटवा, सिंघवी आदि में भी संखलेचा गोत्र के वंशज हैं। पदवी लिखना शुरु करने के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बाद उनका मूल गोत्र ही छिप गया। जालौर में संखलेचा गोत्र के परिवार बूटा नाम से प्रसिद्ध हैं। भीनमाल में बसे परिवार वि. संवत् १६४३ से कानूगो नाम से जाने जाते हैं। अजमेर व जोधपुर में बसे अनेक परिवार करीब १५० वर्षों से मुम्बई (बम्बई) में कारोबार होने के कारण मंमैया या मुमबईया नाम से जाने जाते हैं। वर्तमान पाकिस्तान के सिंध प्रांत के हाला ग्राम से आने वालों परिवारों को हाला खड़ी कहते हैं— ऐसे अनेक परिवार ब्यावर में हैं। जागा व तापरा (बालोतरा के पास) के परिवार बाला नाम से प्रसिद्ध है।

संखवाल श्रेष्ठियों का धर्म प्रभावना में अभूतपूर्व योग रहा। संखवाली में एक प्राचीन मंदिर इसी गोत्र वालों का बनवाया हुआ है, जिसका जिर्णोद्धार कराया जा रहा है। मध्यप्रदेश के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री वीरेन्द्र कुमार संखलेचा की अध्यक्षता में एक महासभा के समायोजन से विभिन्न गोत्र हितकारी प्रवृत्तियों का संचालन हो रहा है। नाकोड़ा ट्रस्ट के वर्तमान अध्यक्ष बाड़मेर के श्री सुल्तानमलजी, एडवोकेट हैं।

इस गोत्र के शिलालेख अजिमगंज, कोटा, अलवर, जयपुर, नागौर, किशनगढ़, लखनऊ, नाकोड़ा, आबू रोड, रोहिड़ा, जैसलमेर, ओसिया, बीकानेर, लोहाणा नगर, खम्भात, मातर, शत्रुञ्जय आदि स्थानों में विद्यमान हैं।

मंमैया

मंमैया 'संखलेचा' का उपगोत्र है। कोचरशाह के प्रपौत्र आगरा निवासी महादानी इतिहास प्रसिद्ध तालणसी जी (तल्लाजी) हुए। इनका हीरे जवाहरात का व्यापार मुख्यतया बम्बई (मुंबई) एवं विदेशों में रहा। इस से ये मुंम्बइया (मंमैया) नाम से प्रसिद्ध हुए।

अलाउद्दीन खिलजी उस समय का क्रूर एवं धर्मान्ध शासक था। इसने हजारों हिन्दू व जैन मंदिर तुड़वाये जिनमें देलवाड़ा (आबू), जोधपुर, जालौर के मंदिर भी थे। अत्यन्त लोभवश इस अत्याचारी शासक ने देश का गोवंश समाप्त करने का संकल्प लिया था। दिल्ली एवं देश के व्यवसाइयों के निवेदन पर दानवीर सेठ तालणसी जी ने खिलजी से साढ़े बारह लाख रूपये में सौदा तय कर गोवंश को उबारा, पूरे देश में गोवध बंदी का परवाना करवा लिया जिसकी अवमानना की सजा मृत्युदण्ड थी। देश के दुर्भाग्य से इसके बाद लगातार तीन वर्ष तक दुष्काल पड़े। इस संकट में लाखों रूपये देकर तालणसी जी ने देश को भुखमरी से बचाया। खिलजी ने तालणसी जी को "मंमैया नरेश" व "गोपाला" की उपाधियों के साथ ही राजसभा में बैठक एवं अनेक शिरोपाव व जागीरें प्रदान की।

तालणसी जी के वंशज सुखमलजी अपने पुत्र शोभा चंद जी व रामचंद जी के साथ दिल्ली एवं लश्कर से अजमेर आ गये। शोभाचंद जी के पुत्र अनोप चंद जी व प्रपौत्र मूल चंद जी ने जवाहरात, लेन-देन व अफीम का व्यापार मराठा, सरदारों मुगलों, राजा एवं रईसों से बहुत बढ़ाया जो कारबार अनोप चंद मूलचंद के नाम से चलता था। मूलचंद जी के पुत्र धनरूप मल जी अत्यन्त रिद्धि— सिद्धिवान हुए। उनका विदेशों का व्यापार फर्म मूलचंद धनरूपमल के नाम से चलता था। देश में इनकी ५२ दुकाने बम्बई (मुख्यालय) कलकत्ता, मद्रास,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उज्जैन, दिल्ली, आगरा, जैसलमेर, सूरत, जयपुर, आदि जगहों पर था। अजमेर की लाखन कोटरी में लखपति लोग रहते थे जिनमें मंमैया परिवार करोड़पति माना जाता था। धनरूप मल जी के पुत्र बाघमल जी ने धन में उत्तरोत्तर वृद्धि की एवं मुगल सम्राट, कोटा महरावलों एवं अन्य रजवाड़ों से जागीरें, सोना, हाथी पालकी सिरोपाव आदि प्राप्त किए। उन्हें निजी फौज रखने का अधिकार प्राप्त था। इनके खजाने पर स्वस्तिक— ध्वजा लहराती थी।

इनकी लाखन कोटरी में अनेक नौमहली हवेलियां रही। मंमैयों के चौक में मंमैंयों का नोहरा है जिसमें लगभग १०० कमरे, दालान, चौक एवं पूजा गृह है। नौहरे में दुमंजिला जमींदोज पानी का टांका है जिसमें इनका खजाना रहता था। हवेलियों के अन्दर चांदी वाला कुंआ मशहूर है जिसमें मनो चांदी रखी जाती थी। कहा जाता है कि यह खजाना आज भी जमीं दोज है। नौहरे से मुख्य हवेली तक १५०० गज लम्बी, १५ फुट ऊंची और २० फुट चौड़ी सुरंग है। विक्रम सम्वत् १८७१ में सेठ अनोप मल जी के स्वर्गवास पर इस परिवार ने बारह न्यात के लगभग ५०००० लोगों का स्वामी वात्सल्य किया जिसमें ६२ मन शक्कर गलायी। इनकी श्मशान यात्रा में मोहरों, रूपयों, सिक्कों व कोड़ियों की उछाल की। मंमैया परिवार ने सैंकड़ों बीघा जमीन अंग्रेज कमीशनरी से प्राप्त कर उस पर दादा साहब जिनदत्त सूरीजी की दादा बाड़ी बनवा कर श्रीसंघ को भेंट की। इस दादा बाड़ी में स्व. श्री अनोप चंद जी, मूलचंद जी, धनरूपमल जी, बाघमल जी एवं इनकी धर्मपत्नियों की विशाल प्रकोष्ठों की उनके चरण चिन्हों सहित छतरियां (देवल) आज भी मौजूद हैं।

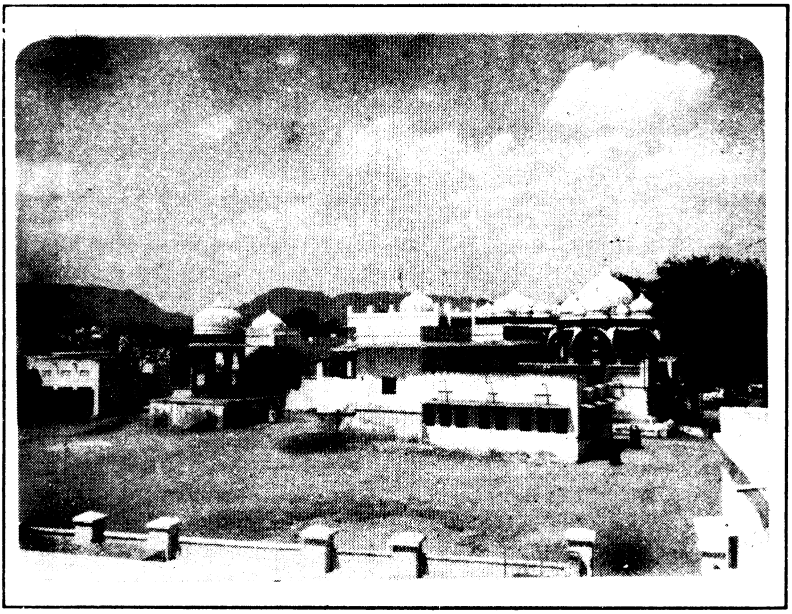

दादा बाड़ी स्थित ममैया परिवार की छतरियाँ

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

लगभग दो शताब्दियों तक यह परिवार अजमेर में रहा। तब तक इन्होंने जैन एवं अजैन धार्मिक, सामाजिक व शैक्षणिक संस्थाओं को लाखों रूपयों का योगदान दिया एवं सारे सेवाकार्य की जिम्मेदारी उठायी हुई थी। जैन मंदिरों के नवनिर्माण जिर्णोद्वार के अतिरिक्त गिरजाघरों को भी मदद देते थे। अजमेर के ख्वाजा साहब की दरगाह पर प्रति वर्ष बहुमूल्य चादर इस परिवार की ओर से ओढ़ाई-चढ़ाई जाती थी। इसी परिवार ने पर्युषणपर्व के अवसर पर जीव-हिन्सा बंद करवाने का फरमान मुगल एवं अंग्रेज शासकों से निकलवाया था। प्रतिवर्ष सपने की बोली एवं पर्वाधिराज की समाप्ति पर दादा बाड़ी में स्वामी वात्सल्य इन्हीं की ओर से होता था जिसमें जैन एवं हिन्दुओं के अतिरिक्त अंग्रेज कमीश्नर एवं दरगाह के मुख्य इमाम भी सम्मिलित होते थे। यह भोजन सूर्यास्त से पूर्व ही समाप्त हो जाता था। इस परिवार की ओर से स्वजातिय बन्धुओं को बिना ब्याज रकम दी जाती थी। शादी-ब्याह में आवश्यकतानुसार गुप्तदान भी दिया जाता था। नौहरें में निःशुल्क औषधालय चलता था। वैद्यराज जी घर-घर जाकर बीमारों को देखते थे। बालकों के लिए एक नारियल जितनी बड़ी हर्रे (हरड़) को एक आदमी घिस कर नित्य उन्हें पिलाता था। दवाइयां निजी देखरेख में बनायी जाती थी।

नगरसेठ श्री बागमल जी ममैया ने शत्रुंजय तीर्थ पर भगवान् आदिनाथ के भव्य जिनालय का निर्माण वि. संवत् १९१० में हीराभाई की टूंक के पार्श्व में करवाया जिसका शिलालेख शत्रुंजय पर ४५ नम्बर की कोठड़ी में उपलब्ध है। इस जिनालय में भगवान् पार्श्वनाथ, शांतिनाथ आदि की भव्य प्रतिमाएं हैं। इस अवसर पर सेठजी ने अजमेर से चर्तुविध संघ निकाला जिसमें लाखों रूपये खर्च किए। तीर्थराज श्री सम्मेद शिखर जी, देलवाड़ा, रणकपुर, पंचतीर्थ, जैसलमेर, व किशनगढ़ के मंदिरों में हजारों रूपयों का द्रव्य दान दिया। उदयपुर के केसरिया जी (धुलेवा जी) मन्दिर की मूर्ति के हृदय के मध्य भाग में पान नुमा बड़ा हीरा जड़वाया। वह बहुमूल्य है। अंतिम मुगल सम्राट बहादुर शाह 'जफर' ईसवी सन् १८५७ के गदर पूर्व की तैयारी में ख्वाजा साहब का आशीर्वाद लेने अजमेर आये थे। उनकी राजसभा में नगर सेठ बागमल जी ने बहुमूल्य जवाहिरात एवं पाँच हजार अशरफियों का नजराना किया। बादशाह ने प्रसन्न होकर सेठजी को अपने पास कुर्सी पर बिठाकर पीठ थपथपायी, और फरमाया कि जब तक ऐसे करोड़पति सेठ मेरे मुल्क में मौजूद है तब तक गद्दी संचालन में कोई आर्थिक कठिनाई नहीं हो सकती और अपने स्वयं की ओढ़ी हुई हाथ— कती— बुनी बहुरंगी बहुमूल्य पांच सौ नाचते मोरों एवं फूलों की बनी शाल सेठजी को ओढ़ायी जो वर्तमान पीढ़ि के पास आज भी सुरक्षित है। शाही भोज में सेठजी को संगमर्मर का एक प्याला एवं तस्तरी (पारदर्शी) प्रदान की जिसमें विष मिले पदार्थ का रंग बदल जाता है।

गदर में मेरठ से आये बागियों ने अजमेर कमिश्नरी लूट कर जला दी और अंग्रेज सिपाहियों का कत्ल कर दिया। अंग्रेज स्त्रियाँ व बच्चे भागते हुए ममैया जी के नोहरे में आ गये जिन्हें सेठ जी ने शरण देकर, नोहरे से हवेली तक सुरंग द्वारा और वहां से अपनी निजी फौज के साथ सुरक्षित दिल्ली पहुंचा दिया। गदर की समाप्ति पर भारत में कम्पनी राज कायम हो गया और अजमेर के अंग्रेज कमिश्नर ने बदले की भावना से अजमेर का कत्ले आम करना

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चाहा। इसपर सेठ बागमल जी ने स्वयं कमिश्नर को कहा कि आप पुराने कर्मचारियों की महिलाओं से उनके जीवन दान की जानकारी लें। इसपर महिलाओं ने सेठजी को पहचान लिया और बताया कि इन्हीं सेठ जी ने हमें प्राणदान दिया था। इस प्रकार अजमेर की जनता का सेठ बागमलजी की दूरदर्शिता से कत्ले आम रुक गया।

नगर सेठ बागमल जी के कोई पुत्र न था। उनकी मृत्यु के बाद इस खानदान पर नियति का वज्राघात होता रहा। पुश्तैनी रौनक शनैः शनैः समाप्त हो गई। देश भर में फैली दुकानें बन्द कर देनी पड़ी और परिवार छीपा बड़ोद आकर रहने लगा। सेठ बागमलजी के दत्तक पुत्र राजमलजी आयुर्वेद के प्रकांड विद्वान् थे एवं ज्योतिष के भी ज्ञाता थे। इनके पौत्र शेखरमलजी राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़े। वे कवि और साहित्यकार हैं। उन्होंने संखलेचा गोत्र एवं उसके उपगोत्रों का वृहद् इतिहास लिखने का संकल्प किया है। सन् १९८४ में नाकोड़ा में अखिल भारतीय संखलेचा आदि गोत्र महासभा की स्थापना हुई। तभी से श्री शेखरमल जी मंमैया इसके महामंत्री हैं।

जिन्दाणी/जन्नाणी

संखलेचा गोत्र के श्री लखाजी समदाजी वि. संवत् १४८४ में मेवानगर से पलायन कर जैसलमेर आकर बसे। उनके प्रपौत्र कुशामाजी हुए। उनके कोई पुत्र न था। जिन्ना शाह नामक एक फकीर (ओलिया) से उन्हें पुत्र प्राप्ति का आशीर्वाद मिला। पुत्रोत्पत्ति पर फकीर के नाम पर पुत्र का नाम जिन्ना या 'जिंदा' रखा गया। इन्हीं जिन्दाजी ने वि. संवत् १६८२ में शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। इनके वंशज कालान्तर में जिन्दाणी या जन्नाणी कहलाए।

जैसलमेर के राजघराने में इस परिवार का विशेष प्रभाव रहा है। जिन्नाणी परिवार का व्यक्ति ही मुख्य चौधरी मनोनीत होता था जिससे महारावल राज-काज में सलाह लेते थे। जैसलमेर बाजार में जनाणियों की चौकी एवं भवन अब भी विद्यमान है। इस परिवार के लोग मुख्यतः जयपुर, जैंसलमेर, कोटा, जोधपुर, टौकं, रतलाम, नरसिंह गढ़, भाटपाड़ा, मद्रास, कलकत्ता आदि जगहों में व्यवसाय-रत हैं।

कानूंगो

यह संखलेचा गोत्र की एक शाखा है। कोचर शाह के वशंज माणक जी मूलजी नें वि. संवत् १६६५ में जालौर किले में महावीर स्वामी का मन्दिर बनवाया। इनके वाक् चातुर्य से प्रसन्न होकर बादशाह अकबर नें इन्हें दरबार में बैठक, शिरोपाव एवं कानूंगों की उपाधि प्रदान की।

कांस्टिया

श्री उपाजी संखलेचा वि. संवत् १५५३ में मेड़ता आ बसे। यहाँ उन्होंने कांसे, पीतल के बर्तनों का व्यवसाय किया। इसीलिए इनके वंशज कांस्टिया कहलाए। मेड़ता के मीरा मन्दिर के पास एक सौ प्रकोष्ठों वाली पुरातन हवेली इन्हीं उपाजी कांस्टिया की बताई जाती

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

है। इनका परिवार कालान्तर में ब्यावर, नवानगर, अजमेर, जयपुर, जोधपुर, भोपाल आदि नगरों में जा बसा। उनका मुख्य व्यापार कपड़े का है। अब इस परिवार के अनेक व्यक्ति डाक्टर, वकील एवं राजकीय सेवा-रत हैं। भोपाल के सेठ संतोषचन्द रिखबदास के यहाँ बैंकिंग एवं सर्राफा का काम होता है।

बूंटा/बूचा

यह संखलेचा गोत्र का ही एक उपगोत्र है। एक जनश्रुति के अनुसार जालौर के संखलेचा श्रेष्ठि बावन न्यात को जीमनदार का निमंत्रण देने गए तों राह में डाकुओं ने उनकी सोने की मुरकियाँ (बालियाँ) काट ली। उनके कान बूचा हो गए। अतः वे बूचा या बूंटा कहलाने लगे। इनका मुख्य व्यवसाय कपड़े का है।

चोरड़िया गोत्र की एक उपशाखा भी बुच्चा कहलाती है। कहते हैं चन्देरी नगरी के राठौड़ राजा खरहत्थ सिंह के ८ पुत्रों ने संवत् ११९२ में जैनधर्म अंगीकार किया। खरहत्थ के एक पुत्र भैंसा शाह के तीसरे पुत्र बुच्चा शाह थे। बुच्चाशाह की संतानें बुच्चा कहलाई।

बीकानेर में इस खानदान का संव् १६०६ का एक शिलालेख उपलब्ध है।

बोरदिया

यह संखलेचा गोत्र की एक शाखा है।

उदयपुर के सेठ अनोपचन्द गम्भीरमल बोरदिया का खानदान नाथ द्वारा से आकर यहां बसा। सेठ रिखबचन्द जी ने महाराणा भीमसिंह के समय अनेक वर्षों तक कोठार का काम संभाला। इनके यहां अब बैंकिगं एवं कपास का व्यवसाय होता है। कोठियों (शाहपुरा) का डॉ. कुशलसिंह जी चौधरी का परिवार मेवाड़ के हुरड़ा नामक गाँव से आकर कोठियां में बसा। शाहपुरा सरकार से इस परिवार को कई रक्के इनायत हुए। डॉ. कुशल सिंह शाहपुरा स्टेट के मेडीकल आफीसर थे। अनेक स्थानों की जागीरें इस खानदान को समय-समय पर बख्शी गई थी।

(३) परमार राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. दूधोड़िया	७. बांठिया
२. गिड़िया	८. मल्लावत
३. गांग/गंग	९. हरखावत
४. पालावत	१०. कुवाड़
५. बरड़िया	११. ललवाणी
६. नाहर	१२. बरमेचा/ब्रह्मेचा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

१३. कुंडलिया
१४. बोरड़/बरड़
१५. डीडू
१६. संघवी
१७. सुराणा
१८. रायसुराणा
१९. सांखला
२०. सांड
२१. सालेचा
२२. पीथलिया/पीतलिया

दूधोरिया

इस गोत्र की उत्पत्ति बहुत प्राचीन मानी जाती हैं। कहते हैं ई. सन् से १२५ वर्ष पूर्व च्यवन नामक क्षत्रिय राजा अजमेर में राज्य करते थे। इनके ३०० वर्ष बाद राजा दूधोराव गद्दी पर बैठे जिन्होंनें संवत् २२२ में जैनधर्म अंगीकार किया एवं आचार्यों ने आपका दूधोरिया गोत्र निर्धारित किया। उक्त क्षत्रिय राजा च्यवन से ही चौहान राजवंश की उत्पत्ति मानी जाती है।

ओसवंश के लेखक श्री सोहन लालजी भंसाली के अनुसार परमार राजा नारायण सिंह के १६ पुत्रों में एक दुधेराव से आ. जिनचन्द्र सूरि के उपदेश से इस गोत्र की उत्पत्ति हुई। इनके इस उल्लेख का आधार महाजनवंश मुक्तावली का कथानक लगता है जिसके अनुसार— मोही नगर में परमार राजा नारायणसिंह राज्य करता था। उसके सोलह पुत्र थे। एक बार चौहानों ने आक्रमण कर नगर पर घेरा डाल दिया। नारायणसिंह का एक पुत्र गंग ज्योतिषी का स्वांग रच कर निकल गया और अजमेर जा आ. जिन चन्द्र सूरि जी को अपनी व्यथा अर्ज की। सूरिजी ने जय विजया देवी की अराधना रूप पार्श्व मंत्र स्मरण किया। देवी ने एक तुरंग (घोड़ा) दिया जिससे असंख्य फौज का भ्रम होता था। गंग के रणभूमि में जाते ही चौहान फौज भाग खड़ी हुई। राजा जैनधर्म अंगीकार कर महाजन बना। उसके १६ पुत्रों से सोलह गोत्र बने— मोही वाल (मोही नगर में वास करने से) आलापत, पालावत, दूधोड़िया, गोय, थरावत, खंडवा, टोडरवाल, भाटिया, बांभी, गिड़िया, गोढ़वाडा, पटवा, बीरीषत गांग एवं गोध।"

यति श्री पाल चन्द्र जी के अनुसार विक्रम संवत् १२२१ में मोही ग्राम के पवांर राजपूत राजा नारायण को जैनाचार्य जिनचन्द्र सूरि ने प्रतिबोध देकर महाजन वंश में सम्मिलित किया। राजा के १६ पुत्र थे उनके वंशजों के उपरोक्त १६ गोत्र हुए।

दुधोराव के तृतीय पुत्र मोहनपाल अजमेर से चन्दौरी आए। वहाँ से समय-समय पर इस परिवार के लोग बनीकोट, रतलाम, बीकानेर, राजलदेसर आदि स्थानों पर १८वीं शताब्दी तक पहुँचे। संवत्. १८३१ में इस खानदान के हजारी मलजी दूधोरिया अजीम गंज आए और वहीं बस गए। जल्दी ही उन्होंने व्यापार से खासी उन्नति की। इसी परिवार के हरकचन्द जी ने कलकत्ता सिराजगंज, जंगीपुर, मैमनसिंह आदि जगह बैंकिंग फर्मे स्थापित की। आपके सुपुत्रों— बुद्धसिंह जी एवं विंशन सिंह जी ने जमींदारी की ओर विशेष ध्यान दिया। अनेक जिलो में आपकी काफी बड़ी जमींदारी हो गई। लोकोपकारी कार्यों में सहायता करने के उपलक्ष में भारत सरकार ने दोनों भाईयों को राय बहादुर की पदवी से सम्मानित किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संवत् १९६१ में राय बुद्धसिंह जी बड़ौदा में होने वाली अखिल भारतवर्षीय जैन-श्वेताम्बर कान्फ्रेंस के सभापति चुने गए। आप लोगों ने अनेक जगह जैन मन्दिर और धर्मशालाओं का निर्माण करवाया। इसी परिवार के विजय सिंह जी को सरकार ने 'राजा" की पदवी दी। आप अनेक संस्थाओं के सभापति एवं सदस्य रहे। संवत् १९६१ में बड़ौदा में होने वाली जैन श्वेताम्बर कांफ्रेन्स के आप उप सभापति थे। आप इम्पीरियल लीग, आनन्द जी कल्याण जी पेढ़ी आदि अनेक संस्थाओं के सदस्य थे। इस परिवार के बाबू इन्द्रचन्द जी ने संवत् १९४६ में यूरोप-यात्रा की। इसीलिए उन्हें सामाजिक विच्छेद का सामना करना पड़ा एवं श्रीसंघ विलायती विवाद का जन्म हुआ। समस्त दूधोरिया परिवार अपनी दानवीरता के लिए प्रसिद्ध रहा है।

छापर का दूधोड़िया परिवार ३५० वर्ष पूर्व लच्छासर एवं वहां से १३५ वर्ष पूर्व छापर आकर बसा। इस परिवार का शिलांग, गोहाटी, कलकत्ता आदि स्थानों पर व्यवसाय है। आर्मी को रसद सप्लाई करते हुए सेठ कालूराम जी संवत् १९२५ में शिलांग पहुंचे एवं खूब सम्पत्ति पैदा की। इस परिवार की तेजपुर, पटना, कलकत्ता, गोहाटी, शिलांग आदि स्थानों पर दुकानें हैं। इस फर्म का रबर चालानी एवं अफीम गांजे की कन्ट्राक्टिंग का काम रहा। कालान्तर में चाय बागानों का काम भी रहा।

गड़िया (गडिया) /गिड़िया

नारायणसिंह परमार के एक पुत्र का नाम गडिया था। उनके वंशज कालांतर में गड़िया/गिड़िया कहलाने लगे।

जोधपुर के सेठ राजाराम गड़िया इस कुल में नामांकित व्यक्ति हुए। इन्होंने मंडोर में पार्श्वनाथ भगवान् के मन्दिर का निर्माण कराया। इन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ समायोजन किया। इनकी फर्म राजाराम पूनमचन्द जोधपुर में व्यवसाय रत हैं।

गांग/गंग

इस गोत्र की उत्पत्ति की कथा दिलचस्प है। महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार एक समय मोहीपुर (मेवाड़) के शासक नारायणसिंह परमार को चौहान सेना ने घेर लिया। राज्य का धन समाप्त होने लगा तो परमार राजा के पुत्र गंगासिंह ने आचार्य जिनचन्द्र सूरि के चमत्कारों को स्मरण किया। वह पिता की आज्ञा से भेष बदल कर आचार्य के पास गया और अपनी कष्ट कथा सुनाई। आचार्य ने श्रावक धर्म स्वीकार करने का आश्वासन मिलने पर मंत्रबल से एक अश्व प्रकट किया। गंगा अश्व पर चढ़ कर गया। मंत्रबल के प्रभाव से शत्रु सेना को गंगा के साथ असंख्य सेना दिखाई देने लगी। वे समझे- कोई और सेना सहायता के लिए आ पहुँची है— चौहान सेना भाग खड़ी हुई। राजा तुरन्त अपने सोलह पुत्रों सहित आचार्य जी के पास गया और सबने श्रावक धर्म अंगीकार किया। उसके १६ पुत्रों से १६ गोत्रों की उत्पत्ति हुई। गंगासिंह के वंशज गांग कहलाए इसी तरह दुधेराव से दुधेरिया, गिड़िया, मोहिवाल, पालावत, बांभी, पहवा, टोडरवाल, भाटिया, आलावत, वीरावत, गोढ़ (गोध) थरावता, खुरधा, गोध, गोढ़वाढ़ आदि।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

गांग गोत्र के अनेक शिलालेख लखनऊ सांगानेर कोटा, जयपुर, बीकानेर अलवर आदि स्थानों पर उपलब्ध हुए हैं।

पालावत

परमार वंशीय नारायणसिंह के एक पुत्र पाला जी के वंशज जैनधर्म अंगीकार कर ओसवाल कुल में शामिल होने पर पालावत कहलाने लगे।

लखनऊ के लाला सौभागचन्द्र रिखबदास पालावत के खानदान का मूल निवास अलवर था। करीब २०० वर्ष पूर्व इनके पूर्वज पहले दिल्ली और फिर लखनऊ आकर बसे। इस परिवार ने जवाहरात और लेन-देन के व्यवसाय में खूब प्रतिष्ठा अर्जित की। जैन मंदिरों का जिर्णोद्धार कराया। लाला रिखबदास बड़े मिलनसार एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे।

दिल्ली के लाला प्यारेलाल दलेल सिंह के खानदान का मूल निवास भी अलवर था। ये भी जवाहरात के व्यापार में संलग्न हैं। लाला प्यारेलाल बड़े धार्मिक विचारों के कुशल व्यापारी थे। आपने नौघड़े के जैन मंदिर में वेदियाँ बनवाई।

बरड़िया

इस गोत्र की उत्पत्ति पवांर वंशीय राजपूतों से मानी जाती है। पवांर लखनसी के पुत्र बेरसी को आचार्य उद्योतन सूरि ने संवत् ९५४ में उपदेश देकर जैन बनाया। बड़ के पेड़ के नीचे उपदेश ग्रहण कर जैन बनने से उनका गोत्र बड़दिया हुआ जो कालांतर में बरड़िया हो गया। यति रामलाल जी के ग्रन्थ महाजनवंश मुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार राजा भोज के परलोक गमन पर उनकी संतान लक्ष्मणपाल को धारानगरी छोड़नी पड़ी। वे मथुरा आकर बसे और माथुर कहलाए। संवत् ९५४ में नेमिचन्द्र सूरि के आर्शीवाद से उन्हें गड़ा हुआ धन और पुत्र प्राप्त हुआ। बाद में एक व्यंतर देव ने उन्हें वर दिया कि जो कोई चिणक पीड़ा वाला तुम्हारे घर का स्पर्श करेगा वह ३ दिन में पीड़ा रहित हो जायगा। उसी वर दिया को कालांतर में बरड़िया कहा जाने लगा।

यति श्रीपालचन्द्र जी (जैन सम्प्रदाय शिक्षा) के अनुसार भोज के वंशज लक्ष्मणपाल मथुरा से कैकेई ग्राम जा बसे। वहां संवत् १०३७ में आचार्य श्री वर्धमान सूरि पधारे। उनकी प्रेरणा से लक्ष्मणपाल ने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। व्यंतरदेव के वर देने से उनके वंशज "वरदिया" नाम से विख्यात हुए।

बरड़िया गोत्र के परिवार जेसलमेर, उदयपुर, सरदार शहर, नरसिंहपुर आदि विभिन्न स्थानों पर निवास करते हैं। उपरोक्त बेरसी जी की पीढ़ी में जेसलमेर में इस खानदान के समराशाह हुए, वे राज्य के दीवान थे। उनके पुत्र मूलराज जी भी दीवान नियुक्त हुए। श्री तेजमल जी बरड़िया राज्य के खजांची रहे। जैसलमेर के जैन मन्दिरों की व्यवस्था का भार इसी परिवार पर है। उदयपुर का बरड़िया खानदान १५० वर्ष पूर्व करेड़ा से जाकर वहां बसा है। इस परिवार के माणक लाल जी मजिस्ट्रेट रहे एवं फुटबाल के अच्छे खिलाड़ी थे। सरदार शहर का सेठ जूहारमल मूलचन्द

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बरड़िया के खानदान का पूर्व निवास सरसा-अबोहर रहा है। सेठ जुहारमल यहां आकर बसे। यह परिवार कपड़ा एवं जूट का व्यवसाय करता हैं। नरसिंहपुर (सी. पी.) के श्री भेरोंलाल जी बरड़िया के खानदान का मूल निवास फलौदी था। आप यवतमाल ओसवाल सम्मेलन के मंत्री थे।

इस खानदान के शिलालेख कलकत्ता, उदयपुर, जयपुर, लखनऊ, नवराई, काशी, जेसलमेर, बीकानेर, बम्बई, अहमदाबाद आदि अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं।

नाहर

इस गोत्र की उत्पत्ति परमार राजपूतों से मानी जाती है। पवांर राजा की ३५ वीं पीढ़ी में आसधर जी हुए। किंवदन्ती है कि भगवती देवी ने बाघिनी का रूप धर कर बालक आसधर को उनकी माता की गोद से उठा लिया एवं जंगल में अपने दूध से पाला। बड़े होकर जब ये मानवी दुनियां में आए तो अपने को नाहर नाम से प्रसिद्ध किया। संवत् ७१७ में जैनाचार्य मानदेव सूरि से महानगर में उपदेश ग्रहण कर आसधर जी ने जैनधर्म अंगीकार किया और वहीं बस गए। कुछ लोग कहते हैं— एक बाघिनी देपाल के पुत्र बालक आसधर को उठा ले गयी और खोजने पर भी नहीं मिले। आचार्य मानदेव सूरि दैवयोग से वहां पधारे। उन्होंने कहा— "नवकार मंत्र धारण करो और दक्षिण दिशा की ओर जाओ, बालक मिल जाएगा।" देपाल उधर ही गए तो बालक शासन देवी सिंहनी के पास बैठा दिखा। यह कहने पर कि मैं मानदेव सूरि का श्रावक हूं देवी ने बालक को लौटा दिया। सब लोग आचार्य के पास आए एवं विधिवत श्रावक धर्म स्वीकार किया। चूँकि बालक नाहर के पास मिला था अतः उनका नाहर गोत्र हुआ।

महाजन वंश मुक्तावली में नाहर गोत्र को महेश्वरी जाति से रूपान्तरित माना है। यति रामलाल जी के अनुसार— "नागौर के पास मूंदड़ा महेश्वरियों ने मुंधाड़ नगर बसाया। वहां मुंध देवी का मंदिर है। ये शैव मतावलम्बी थे। इनके वंश में भीम का पुत्र देपाल प्रह्लाद कूपनगर के राजा का प्रधान बना। उसने बड़ी समृद्धि हासिल की। देपाल के एक पुत्र था— आसधीर। एक समय कोटिक गण चन्द्रकाय वज्र शाखा के आचार्य मानदेव सूरि नगर में पधारे। उनका शिष्य संडाजी नगर में गोचरी के लिए गया पर सभी के शैव होने से गोचरी नहीं मिली। गुरु ने विहार करने की ठानी। वहां की शासन देवी ने प्रकट हो गुरु से कुछ दिन और विराजने की अर्ज की। इस बीच शासन देवी ने देपाल के पुत्र आसधीर को छुपा दिया। देपाल ढूँढ़ कर विफल हो गया। शिष्य से चमत्कारी गुरु की बात सुनकर देपाल गुरु के पास आया। गुरु ने जैनी श्रावक बनने का वचन लेकर कहा— तूं दक्षिण दिशा में जा, उद्यान में तेरा पुत्र सुख से बैठा है। वैसा ही हुआ—वहां आसधीर नाहरणी की गोद में बैठा मिला। देपाल जैनी भया— आसधीर का नाहर गोत्र संवत् ७१७ में स्थापित किया। इनकी शासन देवी व्याघ्री है।"

इनकी ४७वीं पीढ़ी में अजयसिंह जी महानगर से मारवाड़ आ बसे। कालांतर में भीन-मांल, डेलाना, डेंगा आदि स्थानों पर रहे। ७३वीं पीढ़ी में बाबू खड़गसिंह जी का जन्म डेंगा में ही हुआ। विवाह के समय तोरण की रस्म घोड़ें पर चढ़कर अदा की। उस समय राजपूत

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ही इसके अधिकारी थे। फलस्वरूप वहां के ठाकुर ने सिर काट लेने का हुक्म दिया। उसी रात खड़गसिंह जी नव वधू के साथ राज्य छोड़कर आगरा चले आए। वहां अच्छी ख्याति अर्जित की। एक बार मुर्शिदाबाद के जगतसेठ (गेहलड़ा खानदान) आगरा रुके, खड़गसिंह जी का परिचय हुआ एवं उन्हें मुर्शिदाबाद आने के लिए आमंत्रित किया। संवत् १८२३ में खड़गसिंह जी अजीमगंज आए और वहीं बस गए। जगतसेठ के आग्रह पर दिनाजपुर में कारोबार शुरू किया। तीव्र गति से उन्नति की, कलकत्ता में शाखा खोली एवं खूब समृद्धि अर्जित की। आप उदार हृदय एवं धार्मिक प्रकृति के थे। दिनाजपुर में चन्द्रप्रभु स्वामी का मन्दिर एवं धर्मशाला बनवाई। इसी परिवार में बाबू गुलाबचन्द जी हुए जो बड़े निर्भीक और हृष्ट-पुष्ट थे। कई बार बड़े साहसपूर्वक उन्होंने खतरों का सामना किया। एक बार बीबी प्राण कुमारी के साथ डाकुओं का मुकाबला करते हुए बड़ी वीरता दिखाई। इन्होंनें अपनी जमींदारी में प्रजा को अनेक सुविधाएं दी। संवत् १४०७ में उनका देहान्त हुआ। इनकी विधवा पत्नी ने पटावरी परिवार के बाबू सिताबचन्द्र जी को ३ वर्ष की अवस्था में गोद लिया और उनके बालिग होने तक स्वयं सारी जायदाद की व्यवस्था करती रहीं। सिताबचन्द जी नाहर हिन्दी, बंगला, संस्कृत, व फारसी के अच्छे विद्वान् थे। आपने अजीमगंज में "विश्व विनोद" प्रेस की स्थापना की जिससे बड़ी अच्छी अच्छी धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित की। आप संगीत एवं गायन कला के भी शौकीन थे। संवत् १९३०-३१ में बंगाल के दुर्भिक्ष में पीड़ितों की खूब सहायता की। इस उपलक्ष में भारत सरकार ने संवत् १९३२ में उन्हें राय बहादुर की पदवी से सम्मानित किया। अहमदाबाद में ५वीं जैन कान्फ्रेन्स में आप सभापति चुने गए। अजीमगंज, कासिमबाजार, पावापुरी, पालीताना, कलकत्ता आदि शहरों में धर्मशाला व मन्दिरों का निर्माण कराया। कलकत्ता में कुमारसिंह हाल का दिव्य भवन आप ही का बनवाया हुआ है। दिनाजपुर जिले में आपके नाम पर सिताबगंज नामक एक बस्ती बसी हुई है। वहां आपने एक अस्पताल का निर्माण कराया। आपके उद्योग से अहमदाबाद में "जैन मदद फण्ड" की स्थापना हुई। संवत् १९७५ में आपका स्वर्गवास हुआ।

आपके सुपुत्र बाबू पूर्णचन्द जी नाहर बड़े यशस्वी पुरातत्व वेत्ता थे। श्री गुलाबकुमारी लाइब्रेरी एवं संग्रहालय की स्थापना आप ही ने की। ओसवाल वंश के इतिहास-पुरुषों में आपका नाम स्वर्णांकित है। आपके अग्रज मणिलाल जी को भी भारत सरकार नें संवत् १९५५ में राय बहादुर की पदवी से सम्मानित किया था। आप मुर्शिदाबाद डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के मेम्बर, अजीमगंज म्यूनिसिपलिटी के चेयरमैन एवं लालबाग, अजीमगंज तथा कलकत्ते में आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। वे कलकत्ता कारपोरेशन के तीन वर्षों तक कमिश्नर थे। आपका भारतीय चित्रकारी तथा कला का संग्रह इंडियन म्यूजियम में "नाहर कलेक्शन" के नाम से अब भी प्रदर्शित होता है।

बाबू पूर्णचन्द जी नाहर के सुपुत्र विजयसिंह जी नाहर अनेक वर्षों तक कलकत्ता कारपोरेशन के कौन्सिलर चुने गए। पश्चिम बंगाल के अनेक कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों में आपका शीर्ष स्थान रहा एवं उपमुख्य मंत्री रहे। आप अपने क्रान्तिकारी विचारों के लिए प्रसिद्ध हैं। ओसवाल नवयुवक समिति, कलकत्ता के संस्थापकों में से एक नाहर जी ने अनेक वर्षों तक इसके मुखपत्र "ओसवाल" का सम्पादन बड़ी दक्षता से किया था।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इस परिवार की अनेक स्थानों पर जमींदारी रही। इस परिवार के अनेक युवकों ने उच्च शिक्षा प्राप्त की एवं समाज में अपना स्थान बनाया।

दिल्ली के नाहर खानदान के पूर्व पुरुष लाहौर में निवास करते थे एवं अब भी लाहौरी नाम से प्रसिद्ध है। अजमेर के नाहर खानदान ने राज्य सेवा एवं किनारी-गोटे के व्यवसाय में खूब नाम कमाया है। इस वंश के श्री सुगमचन्द जी नाहर अखिल भारतीय ओसवाल महा सम्मेलन के उप-स्वागताध्यक्ष थे। लखनऊ के नाहर खानदान का पूर्व निवास दिल्ली ही था। लखनऊ के नवाब के आग्रह पर इस खानदान के लाला गुजरमल जी ३०० वर्ष पूर्व लखनऊ आए। ओसवाल और जोहरी समाज में इस परिवार की अच्छी प्रतिष्ठा है। इस परिवार के लाला चुन्नीलाल जी ने लखनऊ से बैलगाड़ियों पर पंच तीर्थों का संघ निकाला।

इस खानदान के अनेक परिवार रामपुरा (इन्दौर) नासिक, अमृतसर, सियालकोट, होशियारपुर आदि स्थानों पर निवास करते हैं एवं अफीम, सोना, चाँदि, रूई गल्ला आदि का व्यापार करते हैं।

नाहरगोत्र के अनेक शिलालेख अजीमगंज, दिल्ली, जोधपुर, पालीताणा, अलवर, उदयपुर, नागौर, चुरू, लश्कर, लखनऊ, जैसलमेर, सांगानेर, सबाई माधोपुर, रतलाम, कोटा, किशनगढ़, रोडारायसिंह, बीकानेर, लूणकरणसर कालू, साहपुर, जामनगर, आबू, करेंडा, थराद, अहमदाबाद, खंभात आदि स्थानों पर मिले हैं।

गोखरू

रणथम्भौर में विक्रम संवत् १०४५ में परमार वंशीय शंखेश्वरी राजपूत श्रेष्ठि धांधल हुए। उन्होंने आचार्य जयप्रभ सूरि के उपदेशों से प्रेतिबोधित होकर जैनधर्म स्वीकार किया और ओसवाल कुल में शामिल हुए। उनके कोई पुत्र न था। अतः दुखी थे। आचार्य के निर्देश से उन्होंने अछुण्ता देवी की आराधना की। श्रम एवं तपसाध्य इस आराधना से देवी प्रसन्न हुई। देवी के वरदान से उन्हें एक पुत्र उत्पन्न हुआ। देवी के हस्तपुट में गोखरू होने से पुत्र का नाम गोखरू रख दिया गया। ये गोखरू जी बड़े प्रभावशाली थे। इन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला एवं वहाँ वि. संवत् १०९१ में एक देंहरा निर्माण करवाया।

वि. संवत् १३३५ में इस खानदान के लोग चंपानेर आकर बस गये। उस समय सुलतान अलाउद्दीन खिलजी ने रणथम्भौर पर कब्जा कर लिया था। वि. संवत् १४८५ में इस खानदान के लोग अहमदाबाद आकर बसे। वि. संवत् १६८४ में इस खानदान में पदमशी शाह बड़े ऐश्वर्यशाली हुए। वे खम्भात जाकर बसे। उन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। अनेक द्रव्य व्यय कर तीर्थों के पुस्तक भंडार भरे। इनके पुत्र अमरदत्त ने भारत के मुगल सम्राट् शाहजहाँ को एक ऐसा बहुमूल्य हीरा नजर किया कि बादशाह ने खुश होकर उन्हें "राई" (राय-राजा) की पदवी दी। वे दिल्ली जा बसे। उनके पुत्र राजा उदयचन्द आगरा में बसे। उनका विवाह मुर्शीदाबाद के शाह हीरानन्द गेलहड़ा (जगत सेठ के पितामह) की पुत्री धनबाई के साथ हुआ। उनके पुत्र

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

फतहचन्द अपने ननिहाल में मामा सेठ माणकचन्द की गोद गए और बाद में जगत् सेठ की पदवी से विभूषित हुए।

राजा उदयचन्द गोखरू के पौत्र राजा डालचन्द हुए जो नादिरशाह के कत्ले आम के समय दिल्ली छोड़ मुर्शिदाबाद जा बसे। किन्तु जब बंगाल के नवाब कासिम अली खाँ ने जगत सेठ को कैद कर लिया तो ये बनारस चले आए। राजा डालचन्द बड़े तत्वज्ञानी एवं सिद्ध योगी थे। इनके पुत्र राजा उत्तमचन्द हुए जिनका विवाह लखनऊ के राजा बच्छराज की कन्या से हुआ। राजा उत्तमचन्द के कोई पुत्र न होने से उन्होंने अपनी बहिन बीबी रत्नकुंवर के पुत्र बाबूचन्द (गोपीचन्द) को गोद लिया। इनके पुत्र राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द हुए जिन्हें अंग्रेज सरकार ने अनेक पदवियों से विभूषित किया। इनका देहांत सन् १८९५ में हुआ। इनके पुत्र राजा सच्चिदा प्रसाद और आनन्द प्रसाद हुए।

बांठिया:

इस गोत्र की उत्पत्ति रणथम्भोर (रणतभँवर) के राजा लालसिंह परमार से मानी जाती है। इनके ७ पुत्र थे। सबसे बड़े पुत्र का नाम बंठ या बंठोद्धार (बंठ्योद्धार) बताया जाता है। यति रामलाल जी के अनुसार उनका अन्य पुत्र ब्रह्मदेव जलोदर रोग से पीड़ित था। संवत् ११६७ में उन्होंने आ. जिनवल्लभ सूरि से धर्मोपदेश सुनकर जैन धर्म अंगीकार किया। सूरि जी ने उनके पुत्र को चामुंडा देवी की आराधना कर अच्छा कर दिया। आचार्य जी ने उनके वंश को ओसवाल वंश में शामिल कर लिया। उनके बड़े पुत्र के वंश का गोत्र बंठ निर्धारित किया एवं ब्रह्मदेव के वंशजों का ब्रह्मेचा गोत्र बनाया। इसी तरह छोटे पुत्र के वंशज राजा के नाम पर ललाणी एवं अन्य पुत्र मल्ल की औलाद मल्लावत कहलाए।

'महाजन वंश मुक्तावली' के लेखक यति रामलाल जी के उक्त कथन की यति श्रीपालचन्द्र जी ने अपने ग्रन्थ "जैन सम्प्रदाय शिक्षा" में पुष्टि की है। मुनि ज्ञानसुन्दरजी ने पार्श्वनाथ परम्परा के इतिहास में इस गोत्र की उत्पत्ति संवत् ९१२ में आबू के परमा गांव में राव जगदेव पंवार के पौत्र माधोदेव को भावदेव सूरि द्वारा प्रतिबोध देकर जैन बनाने से मानी है। इन्होंने शत्रुञ्जय का संघ निकाला और बांठ-बांठ पर रह रहे प्रत्येक नर-नारी को पहरावणी दी। इसी से उनकी सन्ताने बांठिया कहलाने लगीं।

भाटों और कुलगुरुओं की बहियों के अनुसार बांठिया खानदान का मूल निवास आबू था, वहाँ से जालोर आकर बसे। जालोर में बांठिया दत्तराम ने एक जैन मन्दिर का निर्माण कराया। वहाँ से तेरहवीं शताब्दी में ये मंडोवर आए। वहाँ से कोडमदेसर आए। संवत् १५७५ में महाराजा बीकानेर के अनुरोध पर श्रेष्ठि कल्याणसी बांठिया बीकानेर आए। इन्होने बीकानेर में बांठियों की गुवाड़ बसाई। बांठिया गोत्र वाले अपने बच्चों का झडूला कोडमदेसर जाकर उतरवाते हैं। वहाँ इनकी दादी माता का स्थानक है। बीकानेर में बांठियों की गुवाड़ में भी दादी माता का मन्दिर है। कल्याणसी जी की ५वीं पीढ़ी में जयपाल जी हुए जो चूरू जाकर बसे। कहते हैं वर्तमान में बांठिया गोत्र के लगभग एक हजार परिवार हैं जो भारत के कोने-कोने में बसे हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

डा. रघुवीर सिंह ने भी बांठिया गोत्र की उत्पत्ति राव माधो से मानी है। राव माधोदेव ने जालौर के किले में एक विशाल मन्दिर बनवाया जिसकी प्रतिष्ठा वि. संवत् ८१५ में आ. भावदेव सूरि ने की थी। मन्दिर वास्तविक दशा में विद्यमान नहीं है परन्तु, खण्डहर की एक मूर्ति पर इस आशय का लेख उपलब्ध है।

वि. संवत् १०२१ में भुजनगर के बांठिया तेनपाल जी ने सिद्धगिरी का चतुर्विध संघ निकाला और रास्ते में सभी गाँवों में स्वर्ण मुद्राओं की लहण दी। वि. संवत् १०२२ में अपने नाना राजसिंह जी कुनीनगर वालों के सम्मेद शिखर की यात्रा पर निकलने वाले महासंघ की व्यवस्था भी बांठिया तेनपाल जी के सुपुर्द थी।

वि. संवत् १३४० में बांठिया गोत्रीय श्रेष्ठि रत्ना शाह सिद्ध गिरी तीर्थ वृहद संघ लेकर गए। उनके साथ रूपयों की थैलियां कावड़ों में चल रही थी जिससे रत्ना शाह के वंशज कालांतर में कवाड़ (कुवाड़) कहलाए।

वि. संवत् १६३१ में मुगल बादशाह को एक दक्ष बोहरे की तलाश थी— तब जोधपुर दरबार के कहने पर मेड़ता के बांठिया परिवार को साम्राज्य का बोहरा बनाया गया। किंवदन्ती है कि जैनाचार्य द्वारा मंत्रित थैलियों में उनके पास अटूट धन था जिसमें ८४ तरह के सिक्के ८४ गढ़े खोद कर जमा कर लिए गए थे। सम्राट् इस विपुल भण्डार को देखकर आश्चर्यचकित रह गए। कहते हैं दिल्ली से मेड़ता तक कड़ाव भर कर लाईन लगा दी जाय तब भी उन सिक्कों का पार न था। बादशाह ने खुश होकर बांठिया जी को "शाह" की उपाधि दी। तब से मेड़ता के बांठिया शाह कहलाने लगे। बादशाह का दिया हुआ यह फरमान अजमेर के धनरूपलाल जी शाह के वंशजों के पास अब भी सुरक्षित हैं।

शाह जी के वंशज हरखचन्द जी से हरखावत गोत्र बना और सेखचन्द जी के वंशज सेखावत कहलाए। धारा नगरी से आचार्य सोम सुन्दर सूरि के समय कुछ बांठिया परिवार उज्जैन जाकर बसे। इस खानदान में सेठ माणकचन्द जी ऐतिहासिक पुरुष हुए। वे गच्छ के हेम विमल सूरि के भक्त थे। खूब धन उपार्जन कर अनेक नगरों में उन्होंने अपने व्यवसायिक प्रतिष्ठान स्थापित किए— ऐसी एक दुकान अजमेर में थी। वहां भी उनकी उतनी ही प्रतिष्ठा थी। हेम विमल सूरि के चतुर्मास में वे अजमेर आए। एक दिन हेम विमल सूरि ने सिद्धाचल महातीर्थ का बड़ा मनोहारी वर्णन किया। माणकचन्द जी ने उससे प्रभावित हो प्रतिज्ञा की— "जब तक उस पावन तीर्थ का दर्शन नहीं करूंगा, अन्न जल ग्रहण नहीं करूंगा"। ऐसी कठिन तपस्या की बात सुन सभी अवाक् रह गए। तीर्थ दूर था एवं घोड़े या गाड़ी में जाने पर भी बहुत समय लगता। माणकचन्द जी न माने। मुनीम को कार्य भार सम्भाल कर वे तीर्थ यात्रा के लिए रवाना हो गए। गुजरात की सीमा पर पालनपुर के निकट घोर जंगल पड़ता था। डाकू लूटपाट करते रहते थे। मगरवाड़ के नजदीक सेठ जी को डाकूओं ने ललकारा। वे सिद्धाचल की धुन में थे, कुछ न बोले। डाकुओं ने उन्हें वहीं पर कत्ल कर दिया। कहते हैं मगरवाड़ के नागरिक उनके घड़ से उनका हाल जान पाए। जहाँ उन्हें दफनाया गया वहां एक स्मृति मन्दिर का निर्माण

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कराया गया जो आज भी मौजूद है। कहते हैं तपागच्छ के अधिष्ठायक देव प्रबल थे। उस समय अजमेर में ८४ गच्छों के ८४ उपासरे थे। हेम विमल सूरि जी ५०० शिष्यों सहित सेठ माणकचन्द जी के नोहरे में रहे थे। तभी वहां भैरव उत्पात शुरू हुआ। हर रोज एक साधु काल कवलित होने लगा। आचार्य ने अष्टम तप कर के देव का आह्वान किया। कहते हैं तभी सेठ माणकचन्दजी अधिष्ठायक मणिभद्र देव के रूप में प्रकट हुए। उन्हीं के प्रताप से उपद्रव शान्त हुआ। तभी से "मणिभद्र भैरवनाथाय नमः" का उद्घोष हुआ। इसी से मणिभद्र इस कुल में अधिष्ठाता देव माने जाते हैं।

बांठिया गोत्र में अनेक प्रतापी पुरुष हुए हैं। संवत् १५०० के लगभग मुगल बादशाह हुमायूं के समय में चिमनसिंह जी बांठिया नामक प्रसिद्ध धनवान व्यक्ति हुए। कहते हैं गुजरात के हमले में बादशाह की फौज ने सोने के बर्तन पीतल के भाव इनके हाथों बेच दिए जिससे इनके पास बेशुमार दौलत हो गई। इन्होंने कई जैन मन्दिरों का जिर्णोद्धार करवाया एवं शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए विशाल संघ निकाला जिसमें प्रति व्यक्ति एक मुहर बांटी। यति रामलाल जी के अनुसार ये खानदान अब तक बंठ कहलाता था— मुहर बांटने से कालांतर में बांठिया कहलाने लगे।

राव माधोदेव की १५वीं पीढ़ी में खुशाल सिंह हुए। इनका परिवार बीकानेर वास करता था। उनकी पांचवीं पीढ़ीं में सुजाणमल जी हुए जो प्रतापगढ़ गोद चले गए। ये सुजाणमल जी वि. संवत् १९४२ में सीतामऊ राज्य के नायब दीवान नियुक्त हुए। प्रतापगढ़ राज्य में भी वे सर्वोच्च पदों पर सेवारत रहे। इनके पुत्र जसवंत सिंह जी सीतामऊ राज्य के दीवान बने। वे महाराजा रघुबीर सिंह के व्यक्तिगत शिक्षक एवं अभिभावक रहे। वि. संवत् २००५ में रियासतों के विलीनीकरण तक वे राज्य के दीवान बने रहे। दीवान पद पर से रिटायर होने के बाद आप अपने पुत्रों के पास कलकत्ता चले गए। इनके ज्येष्ठ पुत्र शेर सिंह जी बांठिया कलकत्ता के ओसवाल समाज में एवं स्वतन्त्रता संग्राम में अग्रगण्य थे। आपने गांधीजी के असहयोग आन्दोलन में सहयोग दिया एवं जेल गए। आपकी बड़ी पुत्री शान्ता का विवाह लाडनू के प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी एवं सर्वोदयी कार्यकर्त्ता महालचन्द्र जी बोथरा के बड़े पुत्र कन्हैयालाल से हुआ। ये शिक्षा प्रेमी एवं सामाजिक रूढ़ियों से जूझने वाली महिला थी। उनके असमय काल कवलित हो जाने से समाज की अपूरणीय क्षति हुई।

अजमेर के बांठिया खानदान में श्री मगनमल जी के द्वितीय पुत्र कस्तूरमलजी बांठिया अर्वाचीन ओसवाल समाज में बड़े लोकप्रिय थे। आपकी कार्य कुशलता देख कर बिड़ला ब्रदर्स की लंदन शाखा का कार्यभार आपको सौंपा गया। आप लंदन स्थित इंडियन चेम्बर आफ कामर्स के उपाध्यक्ष चुने गए। पत्नी की अकाल मृत्यु से खिन्न आप भारत में समाज की सार्वजनिक वृत्तियों में रुचि लेने लगे। ओसवाल नवयुवक पत्र के सम्पादक रहे। हिन्दी में बहीखाता प्रणाली पर आपने मूल्यवान ग्रन्थ की रचना की। हिन्दी पुस्तकों के प्रकाशन के लिए उन्होंने राजपूताना बुक हाउस की स्थापना की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इस परिवार के लोग बीकानेर, भीनासर, प्रतापगढ़, जयपुर, अजमेर, सुजानगढ़, पनरोही आदि स्थानों पर निवास करते हैं। भीनासर का सेठ मौजीराम जी एवं प्रेमराज जी हजारीमल जी बांठिया का परिवार संवत् १९१० में वहां जाकर बसा एवं कलकत्ते में व्यवसाय किया। इस परिवार ने समाज हितकारी अनेक कार्यों के लिए समय-समय पर दान दिया। बीकानेर के सेठ बिरदीचन्द जी के परिवार ने बीकानेर, मद्रास, कलकत्ता आदि जगहों पर बैंकिंग व कपड़ा व्यवसाय में अच्छी उन्नति की। प्रतापगढ़ के बांठिया परिवार का भी मूल निवास बीकानेर था। इस परिवार के पूर्वज सेठ खूबचन्द जी एवं उनके भाई सबल सिंह जी ने यहां आकर बैंकिंग व्यवसाय शुरू किया। बाद में प्रतापगढ़ की महारानी का साझा हो जाने से खूब उन्नति हुई एवं महराजा साहब से भी घनिष्ठता बढ़ी। कहते हैं महाराजा साहब जब-जब राज्य से बाहर रहते सारा कार्य भार आप पर छोड़ जाते। संवत् १९१४ में गदर के समय आपने बागियों से राज्य की रक्षा की। महाराजा ने इन्हें प्रशंसा सूचक परवाना इनायत किया।

पनवेल के बांठिया परिवार का मूल निवास पीपाड़ (मारवाड़) था। लगभग १५० वर्ष पूर्व इनके पूर्वज सेठ इन्द्रभानजी व्यापार के निमित्त अहमद-नगर तालुका में मेहकरी गाँव में आकर बसे। थोड़े समय बाद पनवेल से बम्बई माल भेजना प्रारम्भ किया। तभी से यह खानदान पनवेल बस गया। इस परिवार के सेठ आनन्दराम जी ने गाँजे के व्यवसाय में खूब धन कमाया। आप विदेशों में भी गाँजा निर्यात करते थे। अनेक वर्षों तक आप पनवेल म्युनिसिपलिटी के सदस्य रहे। आपकी स्मृति में निर्मित 'आनन्द भवन' स्थानक में जैन-लाइब्रेरी स्थापित की गई। इसी परिवार के सेठ रतनचन्द जी एवं सेठ आशाराम जी भी वर्षों तक म्युनिसिपलिटी के सदस्य रहे। सेठ आशाराम जी शुद्ध खद्दर पहनते थे एवं सन् १९३० के असहयोग आन्दोलन में जेल गए।

नरसिंहगढ़ के सेठ सूरजमल जेठमल के खानदान का मूल निवास बीकानेर था। संवत् १८८७ में इनके पूर्वज सेठ लाहोरीचन्द जी के पुत्र हीराचन्दजी नरसिंहगढ़ आए। आपने पोद्दारी एवं साहूकारी लेन-देन के व्यापार में खूब सम्मान कमाया। इस परिवार के सेठ लालचन्दजी म्यूनिसिपलिटी एवं पंचायत बोर्ड के सीनियर मेम्बर थे। दरबार की ओर से उन्हें प्रथम श्रेणी में बैठने का सम्मान प्राप्त था।

जयपुर के सेठ भागचन्द जी बांठिया के परिवार का भी मूल निवास बीकानेर था, जहां से १५० वर्ष पूर्व सेठ भागचन्द ने चुरू होते हुए जयपुर आकर जवाहरात का व्यापार शुरू किया। ये परिवार कलकत्ता जलपाईगुड़ी आदि स्थानों पर बैंकिंग व सोना चांदी का व्यवसाय करते हैं। संवत् १९५० के लगभग वे बंगाल बैंक एवं इम्पीरियल बैंक के खजांची भी थे। सुजानगढ़ का सेठ बख्तावत जी का परिवार मूलतः बांठड़ी से १५० वर्ष पूर्व आकर यहां बसा है। पनरोठी के सेठ शोभाचन्द जी के परिवार का मूल निवास नागोर था एवं संवत् १९७४ में वे पनरोठी जाकर बसे।

बांठिया गोत्र के अनेक शिलालेख बीकानेर, सिरोही अहमदाबाद, नागोर, देलवाड़ा, तेल-वाड़ा, विशनगढ़, नागपुर, जैसलमेर, ग्वालियर, जीरावाला, बीदासर आदी स्थानों पर उपलब्ध हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मूलगोत्र बांठिया से अनेक शाखाओं का जन्म हुआ है उनमें प्रमुख हैं— मल्लावत, शाह, हरखावत, शेखावत, जालानी, ललवानी, ब्रम्हेचा आदि।

मल्लावत

परमार राजा लालसिंह के एक पुत्र का नाम मल्ल था— उनके वंशजों का मल्लावत गोत्र हुआ।

हरखावत/कुवाड़

संवत् ९१२ में पंवार राजा माधवदेव को भट्टारक भवदेव सूरि ने प्रतिबोध देकर जैन बनाया। संवत् १३४० में साह रतनसी ने शाही फौज के साथ कुवाड़ियों से लड़ाई की अतः कुवाड़ कहलाने लगे। संवत् १६४४ में इस परिवार में हरखा जी हुए। उनके वंशज हरखावत कहे जाने लगे। महाजन वंश मुक्तावली के लेखक यति रामलालजी के अनुसार रणथम्भौर के परमार राजपूत राजा लालसिंह के कुल में हरखचन्द जी हुए। उनके वंशज हरखावत कहलाए। इस तरह वे इनका सम्बन्ध ब्रम्हेचा, बांठिया आदि गोत्रों से जोड़ देते हैं। इस परिवार ने सिरोही, जोधपुर, जालौर में मन्दिर बनवाए एवं शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। आपके पुत्र विमलशाह मेड़ता के समृद्ध साहूकार थे। एक बार भडौंच का बादशाह उधर से जियारत के लिए जा रहा था। उसे अचानक रुपयों की जरूरत पड़ी। विमल शाह ने तत्काल छः लाख रूपये दिए। अतः खुश होकर बादशाह ने आपको शाह की पदवी दी।

इस खानदान के लोग इन्दौर, अजमेर, सीतामऊ आदि विभिन्न स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते हैं।

ललवाणी:

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार इस गोत्र की उत्पत्ति परमार राजपूतों से हुई बताई जाती है। संवत् ११६७ में रणथम्भौर में परमार राजा लालसिंह जी राज्य करते थे। इनके पुत्र ब्रह्मदेव जलोदर रोग से पीड़ित थे। उन दिनों आ. जिन वल्लभ सूरि जी वहां पधारे। राजा की प्रार्थना पर मुनि जी ने ब्रह्मदेव को रोग मुक्त कर दिया— राजा ने जैन धर्म अंगीकार कर लिया। वे ओसवाल वंश में शामिल कर लिए गए एवं उनके पिता के नाम पर उनके वंशजों का लालाणी या ललवानी गोत्र निर्धारित हुआ। इनके वंशजों को भड़ौच के नवाब ने शाह की पदवी इनायत की— तब से वे शाह कहलाने लगे। यति श्रीपालजी, सुख सम्पतराय जी भंडारी एवं सोहनराज भी भंसाली प्रभृति इतिहासकारों ने भी उक्त उत्पत्ति कथानक का उल्लेख किया है।

इस गोत्र के अनेक परिवार बड़लू, चीलगांव, जामनेर, कलमसरा, बावनखेड़ा, नसीराबाद आदि स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते हैं। खानदेश के ललवानी खानदान का मूल निवास बड़लू था। इसी परिवार के सेठ राजमल जी ललवानी बड़े कर्मवीर एवं भाग्यशाली पुरुष हुए। आप बड़े गरीब घर में जन्मे थे एवं ललवानी परिवार में दत्तक आए थे। आप राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक— सभी क्षेत्रों में अग्रगण्य थे। संवत् १९७८ में गांधीजी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के असहयोग आन्दोलन में भाग लेने पर आपको सरकार का कोपभाजन होना पड़ा। बम्बई प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के जलगांव अधिवेशन के आप अध्यक्ष थे। आप बम्बई प्रान्तीय धारा सभा के भी सदस्य चुने गए। ओसवाल समाज के सुधार और उन्नति के लिए आप सदा प्रयत्नशील रहे। अखिल भारतीय ओसवाल महासभा की स्थापना में आपका प्रमुख हाथ था एवं अजमेर में हुए प्रथम सभा सम्मेलन के आप स्वागताध्यक्ष थे। आप अनेक परोपकारी संस्थाओं एवं कार्यों से सदैव जुड़े रहे।

जोधपुर का ललवाणी खानदान भी इसी परिवार का अंग है। संवत् १५९२ में जगु ललवानी ने शांतिनाथ जी का चौमुखा मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर को नवाब नाहरवेग ने संवत् १७३७ में क्षतिग्रस्त कर दिया। संवत् १७६३ में जैन-संघ ने इसे पुनः बनवाया— "मारवाड़ रे परगना री विगत्" में इसका उल्लेख है। कुशालचन्द्र जी ललवाणी को जोधपुर दरबार ने शाह की पदवी दी थी। राज्य की ओर से इस परिवार के वीरों ने अनेक लड़ाईयां लड़ी एवं महाराज ने उन्हें कई रुक्के बख्शे। संवत् १८६२ में उदयपुर की राजकुमारी के सगपण को लेकर जयपुर एवं जोधपुर दरबार में झगड़ा हुआ तो इस परिवार के अमरचन्द्र जी ललवाणी ने उसे सुलझाने में बहुत मदद की। उससे प्रसन्न होकर जोधपुर दरबार ने उन्हें जयपुर में राज्य का वकील नियुक्त किया। इस परिवार के अनेक व्यक्ति प्रदेशों में हाकिम नियुक्त हुए।

इस परिवार के लोग मनमाड़, भोपाल, पूना आदि नगरों मे निवास करते हैं। इनके वंशज भोपाल के स्टेट खजांची रह चुके हैं। संवत् १९८५ में सेठ मूलचन्द जी ललवानी को भोपाल सरकार ने "राय" की पदवी दी।

बरमेचा/ब्रह्मेचा

रणथम्भौर के परमार क्षत्रिय राजा लालसिंह के सात पुत्र थे। संवत् ११६७ में राजा एवं उसके पुत्रों ने जिन वल्लभ सूरिजी के उपदेश से जैनधर्म अंगीकार किया। इनके नाम पर ललवानी एवं अन्य सात गोत्रों की उत्पत्ति हुई। इनके एक पुत्र ब्रह्मदेव थे, उनके वंशजों का गोत्र ब्रह्मेचा निर्धारित हुआ जो कालांतर में बोलचाल की भाषा में "बरमेचा" हो गया।

लाडनू का बरमेचा परिवार १७५ वर्ष पूर्व आकर यहां बसा। अनुमानतः विक्रम संवत् १८७० में पूनरासर (डूंगरगढ़- राजस्थान) से इनके पूर्वज केसरीचन्दजी के पुत्र रूपचन्द जी एवं खुशालचन्द जी लाडनू आए। कुछ दिन लूंकड़ों की हवेली में रह कर विक्रम संवत् १८८० में दूसरी पट्टी में नई हवेली बनवाई। दोनों भाईयों ने सिराजगंज में कारोबार शुरू किया। कालांतर में खुशालचन्द जी ने बोगड़ा में भी व्यवसाय शुरू किया। उनके बड़े पुत्र लिछमनदास जी हुए जिन्होंने वि. संवत् १९०५ में लाडनू में दूसरी हवेली बनवाई। उनका ४३ वर्ष की अल्पायु में देहान्त (वि. संवत् १९४३) हो गया। उनके भाई धनराज जी ने बोगड़ा के कारोबार एवं जमींदारी को खूब बढ़ाया जो पूर्वी पाकिस्तान (अब बंगलादेश) के निर्माण होने तक उनके वंशजों के पास रहा। लिछ्मनदास जी के दो पुत्र— मोतीलाल जी और पृथ्वीराज जी थे। धनराज जी के चार पुत्र थे— मालमचन्द, मन्नालाल, भोपतराम और जयचन्दलाल। भोपतराम जी का

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अल्पायु में देहान्त हो गया। प्रथम पैतृक हवेली उन्हीं के वंशजों के पास रही। शुरू से बरमेचा परिवार श्वेताम्बर तेरापंथ सम्प्रदायानुयायी है। धनराज जी का सम्प्रदाय के आचार्यों में बड़ा सम्मान था। उन्हीं के समय कलकत्ते में "धनराज मोतीलाल" के नाम से पारिवारिक गद्दी संस्थापित हुई। संवत् १९६६ में लिछमन दास मोतीलाल और मालमचन्द मन्नालाल नाम से दो अलग-अलग फर्मे बन गई। अब इनके वंशज भारत के विभिन्न नगरों में अनेक तरह के व्यवसायों में रत हैं।

पूनरासर के बरमेचा खानदान का एक परिवार विक्रम संवत् १८७० में दीणी जाकर बसा।

बरमेचा खानदान के परिवार नासिक, किशनगढ़ आदि स्थानों पर भी निवास करते हैं। नासिक का सेठ साहबराम बरदीचन्द का परिवार जोधपुर के समीप दहोजर गांव से आया है। इनके यहां किराने एवं बैंकिंग का व्यवसाय होता है। किशनगढ़ के सेठ सुमन चन्द्र माणकचन्द्र का परिवार मेड़ता से आया है। ये दिनाजपुर में कपड़े एवं पाट का व्यवसाय करते रहे हैं।

कुण्डलिया

जनश्रुति के अनुसार कुण्डलिया गोत्र की उत्पत्ति राजा धरनीधर के पुत्र कुण्डल जी से हुई। राजा के चार पुत्र थे जिनसे चार अलग अलग गोत्र बने। बांठिया, बरमेचा, कुण्डलिया और कुहाड़। इसीलिए इन चारों जातियों में भाईचारे का सम्बन्ध है।

बरमेचा और बांठिया गोत्रों की उत्पत्ति उपलब्ध ग्रन्थों के आधार पर रणथम्भोर के परमार राजा लालसिंह एवं उनके सात पुत्रों के जैनधर्म अंगीकार कर लेने से विक्रम की १२वीं शदी में मानी जाती है जिनमें राजा लालसिंह से ललवाणी पुत्र ब्रह्मदेव से बरमेचा, बंठ्योद्धार से बांठिया, मल्ल से मल्लावत गोत्र बनाए जाने का उल्लेख है। इससे अनुमान है, उक्त परमार राजा के सात में से किसी एक पुत्र का नाम कुण्डल जी रहा हो— जिनसे कुण्डलिया गोत्र की उत्पत्ति हुई। तथ्य यह भी है कि अब तक किसी ग्रन्थ में "कुण्डलिया" गोत्र का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता। अतीत में कुण्डलिया गोत्र के परिवार मकराना, रेवडा, धीरदेसर आदि स्थानों पर रहते थे। विक्रम संवत् १९३० में एक परिवार राजलदेसर (बीकानेर के निकट) आकर बसा। राजलदेसर में बसे वर्तमान कुण्डलिया परिवारों के आदि पुरुष उम्मेदसिंह जी माने जाते हैं। इनके द्वितीय पुत्र हनूतराम जी आसाम में सरसों एवं गल्ले किराने का व्यापार करते रहे। वि. संवत् १९५० से संवत् १९५५ के बीच हनूतराम जी के पुत्र खूमचन्द जी पलासबाड़ी की दूकान देखते थे। एक बार दूकान भयंकर आगजनी की शिकार हो गई और सब कुछ स्वाहा हो गया। ग्वालपाड़ा में बम्बू वाला वैदों की दूकान थी। उनके सहयोग से खूमचन्दजी ने फिर से व्यापार शुरू किया और खासी उन्नति हुई। पहले जिन लेनदारों से चार आना भुगतान करना तय हो गया था उनको भी चुकती भुगतान कर अपनी साख कायम रखी। खूमचन्द जी के चार पुत्र हुए जुहारमल जी, केशरीचन्द जी, चुन्नीलालजी और भीमराज जी। इनमें से सेठ चुन्नीलाल जी बड़े व्यापार कुशल थे। श्री केशरीचन्द जी की

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सार्वजनिक कामों में बहुत रुचि थी। वे स्थानीय नगरपालिका के माननीय सदस्य थे। व्यापार में चारो भाईयों का साझा था परन्तु लाह (जिससे लाख की चपड़ी बनती है) के काम से घृणा हो जाने से वे अलग हो गए। वि. संवत् १९९३ में सारा व्यापार सलटा कर राजलदेसर आ गए। ४२ वर्ष की अल्पायु में उनका देहान्त हो गया। उनके ज्येष्ठ पुत्र फतहचन्द जी ने अपने अध्यवसाय से बम्बई में मशीनरी की दुकान खोली। आज वे हैदराबाद के प्रमुख उद्योगपतियों में गिने जाते हैं। उनके छोटे भाई रायचन्द जी भी ४२ वर्ष की अल्पायु में काल कवलित हो गए। वे बड़े मृदुभाषी और सामाजिक कार्यों में रुचि लेने वाले होनहार युवक थे। उनकी स्मृति में हाल ही में "शेष-अशेष" नाम से एक स्मृति ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ है जो उनके सहज एवं सरल जीवन को उजागर करता है।

बोरड़/बरड़

इस गोत्र की उत्पत्ति अम्बागढ़ के परमार राजा राव बोरड़ से मानी जाती है। संवत् ११७५ में आचार्य जिनदत्त सूरि के उपदेश से प्रभावित होकर उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया। किंवदन्ती है कि राजा शिव जी का भक्त था— सभी जोगी संन्यासियों में शिव के प्रत्यक्ष दर्शन की लालसा करता था। सूरि जी ने शर्त रखी कि शिव का कहा "कबूल करो तो शिव का दर्शन करवा दूं।" राजा राजी हो गया। सूरि जी उसे शिव के एक पिण्ड के पास ले गए और वहां एकाग्र दृष्टि कर शिव पिण्ड पर राजा को समाधि लगाने को कहा। राजा ने वही किया। तभी शिवलिंग से शिव प्रकट हुए। राजा ने मुक्ति की अभीप्सा की। शिव ने कहा— मुक्ति तो गुरु ही दिला सकता है— उनके वचनों पर चल। राजा चकित हो गया। वह अपने कुटुम्ब सहित जैन बना। उनके वंशज बोरड कहलाए। जो कहीं-कहीं बरड़ नाम से भी पुकारे जाते हैं। इस गोत्र का एक शिलालेख जिनसागर में है।

बोरड़ गोत्र के लोग सुजानगढ़, लाडनू आदि स्थानों एवं बरड़ गोत्र के लोग पंजाब के अमृतसर, गुजरानवाला आदि स्थानों पर निवास करते हैं।

सुजानगढ़— लाडनू के बोरड खानदान का मूल निवास देशनोक था। वहां से १५० वर्ष पूर्व सेठ धर्मसी जी यहां आकर बसे। इस परिवार का कलकत्ते, आसाम आदि जगहों में कपड़ा, जूट बैंकिंग, सोना-चाँदीं का कारबार है।

अमृतसर का लाला रतनचन्द हरजसराय बरड़ का खानदान जवाहरात, मुख्यतः मूंगा के कारोबार में रत था। अब सोने का थोक एक्सपोर्ट का काम करते हैं। इस परिवार ने पंजाब प्रान्त के ओसवाल समाज में दसा-बीसा फिरकों के आपस में शादी-विवाह करवाने में खुलकर काम किया। लाला श्रद्धामल नत्थमल बरड़ का खानदान शुरू में शालों का व्यवसाय करते थे। अब लखनऊ मसूरी आदि जगहों पर फैन्सी सिल्क का एवं अन्य व्यापार भी करते हैं। गुजरानवाला के बदरी शाह सोहनलाल बरड़ का परिवार सर्राफा एवं आढ़त का धन्धा करते हैं। इस खानदान के पास काफी तादात में स्थावर एवं जंगम सम्पत्ति है एवं समाज में बड़ी प्रतिष्ठा है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

डीडू सिंघवी

उज्जैन जिले के ढोढर (डीडूर) नामक स्थान पर परमार वंशीय राजा सोम राज्य करते थे। इनकी २० वीं पीढ़ी में माधवजी नामक पुरुष हुए जिन्होंनें जैनाचार्य जिन प्रसन्न सूरि से उपदेश ग्रहण कर जैनधर्म अंगीकार किया। इनका डीडू गोत्र हुआ। इनके वंशज नानक जी ने शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ निकाला तब से ये सिंघवी कहलाए। इनके खानदान में श्रीवन्त जी सिरोही राज्य के दीवान बने। उनके बाद उनके खानदान के श्यामजी, सुन्दर जी, अमरसिंह जी, हेमराज जी, कानजी, पोमोजी, जोर जी, कस्तूरचन्द जी, जवाहरचन्द जी आदि भी दीवान पद पर रहे। संवत् १९५६ में अकालग्रस्त गरीबों की सहायता करने के उपलक्ष में सरकार ने इस परिवार के जवाहरचन्द जी को "रायबहादुर" की पदवी से सम्मानित किया। आप सिरोही राज्य के दीवन रहे। इसी परिवार के सिंघवी पूनमचन्द जी को संवत् १९८१ में भारत सरकार ने राय-साहब की पदवी दी। इस खानदान के लोग मेड़ता, नागौर, गुलीवाड़ा (मद्रास) जाकर बसे। आहौर निवासी सिंघवी परिवार का मद्रास में बड़ा कारोबार है। इसी खानदान के लोग दिल्ली में भी निवास करते हैं। बोरावड़ निवासी सिंघी परिवार लोनार (बरार) जा कर बस गया।

सुराणा

सुराणा गोत्र की उत्पत्ति सिद्धपुर पाटन के राजा सिद्धराज जयसिंह के सामंत जगदेव से वि. संवत् ११७५ में मानी जाती है। वे बड़े पराक्रमी थे। उनके पुत्र सूरजी, संखजी, सांवल जी, सामदेव, रामदेव एवं छारड़ थे। इनमें बड़े पुत्र सूरजी राज्य का सेनापति थे। महमूद गजनी ने जब सिद्धपुर पर चढ़ाई की तो वहां हेम सूरि जी महाराज पधारे हुए थे— उन्होंने सूरजी को विजय पताका यन्त्र दिया। फलस्वरूप विजयश्री सूरजी को मिली। दरबार ने उनके कार्यों की "सूर-राणा" कह कर प्रशंसा की। उनके एवं सहकर्मी भाईयों के परिवार ने जैनधर्म अंगीकार किया। उनके वंशजों का सुराणागोत्र हुआ। अन्य भाईयों के भी संखजी से सांखला, सांवलजी से सियाल, उनके पुत्र संड-मुसंड होने से सांड, दूसरे पुत्र सुक्खा से सुखाणी, तीसरे पुत्र सालदे से सालेचा एवं चौथे पुत्र पूनम दे से पूनमियां गोत्रों एवं शाखाओं का निर्धारण हुआ। श्री सोह-नराजजी भंसाली ने अपने ग्रंथ 'ओसवंश' में उत्पत्ति सम्बधी उक्त कथानक दिया है।

यति रामलाल जी ने अपने ग्रन्थ महाजन वंश मुक्तावली में एक कथानक और जोड़ दिया है— "जगदेव जी वि. संवत् ११७५ में सिद्धपुर पाटण के राजा सिद्धराज जयसिंह के पलंग के पहरेदार थे। राजा उनको एक करोड़ सोनईया वर्ष का देता था। एक बार आधी रात वे पहरा दे रहे थे तो बाहर बड़े अट्टहास और खिलखिलाहट की ध्वनि हुई। राजा के हुक्म से जगदेव जी ढूंढ़ने निकले तो देखते क्या हैं कि कालिका आदि ६४ जोगणियां और बड़े बड़े बेताल इकट्ठे होकर नाच रहे हैं। जगदेव जी ने पुछा— कौन हो ? क्यों "फेलबाजी" करते हो। जोगणियां बोलीं— सिद्धराज नें हमारी बकरे-भैंसे की बलि बन्द कर दी सो अब एक महीने में मरेगा। गजनी की फौज आवेगी, लाखों आदमी मरेंगे तब हमारे खप्पर रक्त से भरेंगे। जगदेव ने पूछा— किसी तरह सिद्धराज बचे। जोगणियां बोली— बत्तीस लक्षण पुरुष जो अगर बलि दे तो सिद्धराज

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बचे। जगदेव तत्काल अपना सिर काटने को तैयार हो गया। जोगणियों ने हाथ पकड़ लिया और जयकार किया। उसको अमोघ विद्या देकर विदा किया। जगदेव जी ने सारी बात आ कर राजा से कही और लड़ाई का सामान तैयार कराया।" इसके पश्चात् हेमसूरि का कथानक है जिनके विजय पताका यंत्र की कृपा से सूर जी विजयी हुए।"

यति श्रीपालचन्द्र जी के ग्रन्थ "जैन सम्प्रदाय शिक्षा" के अनुसार वि. संवत् १२०५ में पवांर राजपूत जगदेव को जैनाचार्य हेमचन्द्र सूरि ने प्रतिबोध देकर जैन श्रावक बनाया। जगदेव के सूर जी और सांवल जी नामक दो पुत्र थे, इनमें सूर जी के वंशज सुराणा कहलाए और सांवल जी के वंशज सांखला कहलाए।

बीकानेर बसे सुराणा खानदान में अमरचन्द जी सुराणा बड़े पराक्रमी हुए। वे तात्कालीन बीकानेर महाराजा के दीवान थे। राज्य की ओर से बड़ी लड़ाईयां लड़ीं। संवत् १८६२ में महाराज सूरतसिंह जी ने आपको भटनेर के किलेदार जापताखां पर आक्रमण करने के लिए भेजा। उसे पराजित करने के उपलक्ष में आपको राव की पदवी मिली एवं राज्य के दीवान नियुक्त हुए। आपकी जीवनी अन्यत्र ग्रन्थ में दी जा रही है।

इसी खानदान के अनेक ओसवाल श्रेष्ठियों ने बीकानेर राज्य की अभूतपूर्व सेवा की। अमरचन्द जी के ज्येष्ठ पुत्र माणकचन्द जी ने भी राज्य की खूब सेवा की। संवत् १८७३ में वे चुरू के ठाकुर पृथ्वीसिंह के विरूद्ध सफलतापूर्वक लड़े। १८७४ में महाराजा सूरतसिंह ने उन्हें फौज का मुसाहिब नियुक्त किया एवं रुक्के प्रदान किए। संवत् १८९४ में सेखावत जुहारसिंह को युद्ध में परास्त किया। संवत् १८९७ में महाराजा रतनसिंह के कुंवर सरदार सिंह के विवाहोपलक्ष में उनके नाम पर सरदारशहर आबाद हुआ तब महाराजा ने नगर बसाने का काम शाह माणकचन्दजी एवं मुहता हुकुमचन्द जी सुराणा के सुपुर्द किया। शाह माणक चन्दजी ने वहां पार्श्वनाथ जिनालय बनवाया। इस एवज में राज्य की ओर से उन्हें अनेक गावों के पट्टे बख्शे गए। कप्तान विलियम फार्स्टर आपका बहुत सम्मान करते थे। माणकचन्द जी के पुत्र शाह फतहचन्द जी भी रण कुशल सेनापति एवं राजनीतिज्ञ थे। वे वि. संवत् १९०५ में राज्य के फौज मुसाहिब नियुक्त हुए। सन् १८५७ के गदर के समय बीकानेर राज्य की तरफ से आपके नायकत्व में अंग्रेज सरकार की सहायता के लिए सेना भेजी गई। अंग्रेज कमाण्डरों ने आपके रण-कौशल की खूब प्रशंसा की है। वि. संवत् १९२३ में महाराजा सरदारसिंह जी ने आपकी वीरता एवं दूरदर्शिता से प्रसन्न होकर आपको राज्य का दीवान बनाया। राज्य की ओर से बख्शे गए रुक्के अब भी इनके वंशजों के पास उपलब्ध है।

अमरचन्द जी के कनिष्ठ पुत्र केसरीचन्द जी सुराणा भी रणकुशल सेनापति थे। आपने बीकानेर महाराजा रामसिंह के राज्य काल में राज्य को चिरस्मरणीय सेवाएं दी। वि.संवत् १८९४ में बीदावत कान्हसिंह इलाके में लूट-मार कर प्रजा को कष्ट देने लगा था। उसको पकड़ने के लिए शाह केसरीचन्द जी भेजे गए। आपने सुजानगढ़ में इस बागी सरदार को गिरफ्तार कर लिया। इसी तरह ठाकुर खुमाणसिंह आदि ठाकुरों को राज्य से खदेड़.बाहर किया। जब जुहार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जी डूंगर जी आदि लुटेरों ने उत्पात मचाया तो कप्तान फार्स्टर शाह केसरीचन्द जी की मदद से ही उनमें से अनेकों को गिरफ्तार कर सके। वि.संवत् १९०२ में बीकानेर नरेश ने उन्हें रतनगढ़ का हाकिम नियुक्त किया, मोतियों का चौकड़ा इनायत किया एवं कई गावों के पट्टे बख्शे।

अमरचन्द जी के चाचा ताराचन्द जी के पुत्र शाह लक्ष्मीचन्द जी ने भी राज्य की सेवा कर खूब नाम कमाया। वि. संवत् १८७३ में रतनगढ़ विजय करने के उपलक्ष में बीकानेर नरेश ने उन्हें राव का खिताब बख्शा। वि. संवत् १८८१ में देवा के ठाकुर सूरजमल के उंत्पातों से राज्य को विमुक्त किया। इसी तरह महाजन के ठाकुर वैरीशाल, चुरू के ठाकुर वागी सरदार बख्तावर सिंह, हरिसिंह बीदावत आदि के उत्पातों को शान्त करने का श्रेय उन्हीं को है। वि. संवत् १९०१ में उन्हें राज्य का दीवान बनाया गया। महाराजा ने उन्हें हाथी, मोतियों का चौकड़ा और अनेक रुक्के बख्शे। संवत् १९११ में चुरू के इसरीसिंह ठाकुर को परास्त करने के एवज में उन्हें खिल्लत और पांव में सोने का कड़ा इनायत हुआ। संवत् १९१४ में गदर के समय जो सेना अंग्रेजों की सहायता के लिए भेजी गई थी उसके सेनानायकों में लक्ष्मीचन्द जी भी थे। वहीं ज्वर आ जाने से उनका देहान्त हुआ।

अमरचन्द जी के लघुभ्राता हुकमचन्द्र जी सुराणा भी पराक्रमी योद्धा थे। आपका सारा जीवन रणस्थल में बीता। वि. संवत् १८७१ में वे चुरू के थानेदार (हाकिम) बनाए गए। जब संवत् १८७३ में ठाकुर पृथ्वीसिंह ने रतनगढ़ पर कब्जा कर लिया तो हुकमचन्द जी के सेना-नायकत्व में रतनगढ़ से ठाकुर को खदेड़ा गया। इस खुशी में महाराजा सूरजसिंह ने उन्हें दीवा-नगी प्रदान की। वि. संवत् १८८६ में महाजन के ठाकुर वेरीसाल के विद्रोह को दबाने का श्रेय भी आपको ही है। डूंगरजी जुहार जी के उत्पात शान्त करवाने में भी आपका प्रमुख हाथ था। संवत् १९०१ में आप राज्य के दीवान नियुक्त हुए। बीकानेर नरेश ने उन्हें अनेक गावों के पट्टे मोतियों का चौकड़ा आदि बख्शे।

इसी तरह चुरू का सुराणा खानदान भी प्राचीन काल से सम्पन्न एवं गणमान्य रहा है। इनके पूर्वज मूलतः नागौर निवासी थे। इसी परिवार के श्रीजीवन दास जी जुझार हुए थे। उनके पुत्र सुखमल जी वि. संवत् १८०० में चुरू आकर बसे। इनके पौत्र रूँक्मानन्दजी संवत् १८९१ में ऊँट/रथ पर या पैदल चल कर भिवानी आए एवं वहाँ से रेल व जलमार्ग द्वारा कलकत्ता आए। कुछ रोज कपड़े की फेरी लेकर आप-पास के देहातो में बेचते रहे। फिर सूतापट्टी में एक आलमारी लेकर धोतियों का काम शुरू किया। धीरे-धीरे व्यवसाय चमका और प्रमुख व्यापारी बन गए। कलकत्ते में इस परिवार का बैंकिंग, कपड़े एवं छातों का कारोबार बहुत पुराना है। श्री रूकमानन्द जी द्वारा संवत् १८९३ में स्थापित तेजपाल बृद्धिचन्द फर्म का छातों का कार-खाना भारत भर में सबसे बड़ा माना जाता था। संवत् १९२२ में एक बार इनका बीकानेर रियासत में जकात का झगड़ा चला था। सुराणा बन्धु नाराज होकर रामगढ़ (जयपुर) चले गए। तब बीका-नेर दरबार सरदार सिंहजी ने अपने खास आदमी के साथ महसूल की माफी का परवाना भेज कर उन्हें वापिस बुलाया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इनके वंशजों ने बम्बई, रंगून, फर्रूखाबाद, अहमदाबाद, भिवानी आदि नगरों में फर्में स्थापित की। बीकानेर राज्य की तरफ से आप लोगों को सिरोपाव, रथ बख्शा गया था। इस परिवार के सेठ तोलाराम जी बड़े तेजस्वी एवं विद्याप्रेमी थे। उनकी पुरातत्व सम्बंन्धी खोजों में बड़ी दिलचस्पी थी। चुरू का बहु प्रसिद्ध सुराणा पुस्तकालय आप ही का स्थापित किया हुआ है जहाँ हजारों प्राचीन ग्रन्थों के अलावा २५०० हस्तलिखित ग्रन्थों का अमूल्य संग्रह है।

वि. संवत् १९७० में आप बीकानेर की धारा सभा के सदस्य चुने गये थे। सेठ ऋद्धि-करण जी का कलकत्ते के मारवाड़ी समाज में बड़ा नाम था। आपने मारवाड़ी चैम्बर आफ कामर्स की स्थापना की एवं आजन्म उसके सभापति बने रहे। अखिल भारतवर्षीय श्वेताम्बर जैन तेरापंथी सभा की स्थापना का श्रेय भी आपको ही है। आप हावड़ा के आनरेरी मजिस्ट्रेट मृत्यु पर्यन्त बने रहे। इस परिवार ने समाजसेवोपयोगी कार्यों के लिए हजारों रूपए दान दिए। सेठ शुभकरण जी भी वि. संवत् १९७५ में बीकानेर धारा सभा के सदस्य चुने गए। आप बीकानेर हाईकोर्ट में जूरी एवं चुरु के आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। अनेक अन्य संस्थाओं से आप संलग्न रहे। आपके होनहार पुत्र हरिसिंह की ८ वर्ष की अवस्था में अकाल मृत्यु से विह्वल हो आचार्य चतुरसेन शास्त्री ने "पुत्र" नामक ग्रन्थ की रचना की थी। सेठ वृद्धिचन्द जी के पौत्र सोहनलाल जी उदारमना समाजसेवी थे। उन्होंने संवत् १९९९ में केसर बालिका विद्यालय की स्थापना की। दिल्ली व कलकत्ता में धर्मशाला बनवाई। दिल्ली में पार्श्वनाथ देवालय का निर्माण कराया जिसमें २४ तीर्थंकरों की प्रतिमाऐं स्थापित है। वे सच्चे कर्मयोगी थे। उनके पुत्र डूंगरमलजी ने एक नेत्र चिकित्सालय का निर्माण कराया। इसी खानदान के सेठ मन्नालाल जी बड़े नामांकित हुए। आपके फर्म मन्नालाल शोभाचन्द ने धोती जोड़ों का विलायत से इम्पोर्ट कर लाखों रूपए कमाए। इसी परिवार के सेठ तिलोकचन्द जी समाज के अग्रगण्य नेताओं में से थे। आप कलकत्ते की अनेक संस्थाओं के मन्त्री— सभापति आदि पदों पर रहे। इस परिवार का जूट, बैंकिंग, जमींदारी एवं शिपिंग का व्यवसाय होता है।

पड़िहारा के सुराणा परिवार का पूर्व निवास नागौर था, जहां से सेठ मूलचन्द या जुग्गो जी २५० वर्ष पूर्व पड़िहारा आकर बसे। इस परिवार के सेठ भेरुंदान एवं सूरजमल ने डुमार (बंगलादेश) में पाट के व्यवसाय में खूब सम्पत्ति अर्जित की। सूरजमल जी के सुपुत्र महिपाल जी ने पड़िहारा के ठाकुर से ऐतिहासिक मुकदमा जीत कर अनेक वर्षों तक राज्य की लगान वसूल की।

उदयपुर के सुराणा खानदान में श्री ब्रजलाल जी बड़े प्रतापी हुए। आपने राज्य की ऊंचे पदों पर सेवा की। धांगड़मऊ के बागी राजपूत को ठिकाने लगाने के उपलक्ष में महाराणा ने आपको जागीर प्रदान की थी। सुराणा जोरावर सिंह जी बड़े कार्यकुशल एवं चतुर व्यक्ति थे। संवत् १९१५ में डाकू मीणों का दमन करने का श्रेय उन्हीं को है। राज्य से अनेक सम्मान उन्हें प्राप्त हुए। उनके पुत्र दौलतसिंह ने मेवाड़ के एकाउन्टेन्ट जनरल का पद सुशोभित किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

झालरपाटन के सुराणा परिवार का भी मूल निवास नागौर था। इस परिवार के पूर्व पुरुष कानीराम जी ने संवत् १८९४ में झलावड़ राज्य स्थापित करने में बहुत मदद की थी। इसी एवज में आपको जागीरें एवं नगरसेठ का खिताब बख्शा गया।

सिरोही के सुराणा परिवार में पानराज जी बड़े प्रसिद्ध हुए। कपड़े के व्यापार में आपको चौधरी का सम्मान मिला। संवत् १९५६ में राज्य द्वारा लगाए गए ३१ भारी टैक्सों के विरोध में आपने प्रजा का नेतृत्व किया और जब रियासत ने ध्यान नहीं दिया तो आपने जोधपुर महाराज से परवाना लेकर शिवगंज के समीप एक नई बस्ती ही आबाद करवा दी। जोधपुर दरबार ने उन्हें नगर सेठ की पदवी सिरोपाव आदि इनायत किए। यह सुनकर सिरोही दरबार ने भी सारे टेक्स माफ कर दिये। आपने अनेक मन्दिर, धर्मशाला आदि बनवाए।

बागलकोट के सेठ रतनचन्द जंवरीमल सुराणा के खानदान का पूर्व निवास भपी (मारवाड़) था। इस परिवार का रेशमी सूत व वस्त्रों का व्यवसाय है। इस परिवार के श्री बख्तराज जी सुराणा अनेक वर्षों तक आनरेरी मजिस्ट्रेट एवं म्यूनिसिपल कौन्सिलर रहे।

सोजत के सुराणा परिवार भी उपरोक्त परिवारों के अंग हैं। इस परिवार के सुराणा मोतीराम जी ने जोधपुर दरबार से जीव हिंसा रुकवाने के कई परवाने हासिल किए। सुराणा हीरालाल जी ने तो गाय-भेड़ मारवाड़ के बाहर न जाने देने के लिए ४ दिन तक अनशन किया। अन्ततः जोधपुर दरबार को झुकना पड़ा। इसी तरह सिरोही राज्य में भी जीव हिंसा न होने देने का फर्मान निकलवाया।

नागपुर के सुराणा परिवार के पूर्वजों का मूल निवास नागौर था। ये नागपुर में सर्राफा, गल्ला, सोना, चांदी एवं बैंकिंग व्यवसाय करते रहे।

सुराणा कुल के अनेक लोग रिणी, राजगढ़, जयपुर, भुसावल, आगरा, यवतमल, अमृतसर, हिंगनघाट, बेरहमपुर आदि विभिन्न स्थानों पर रहते एवं व्यवसाय करते हैं। सुराणा परिवार के अनेक लोग राजकीय सेवाओं में नियुक्त रहे। जोधपुर के आनन्दराज जी सुराणा देश सेवकों की अग्रिम पंक्ति में हैं। आपने अनेक वर्ष जेल यातना सही। हिंगनघाट के सौभाग्य मलजी सुराणा मैनपुर राज्य के दीवान रहे।

सुराणा गोत्र के अनेक शिलालेखि अजिमगंज, बनारस, अजमेर, मेड़ता, उदयपुर, जयपुर, नागौर, अलवर, आगरा, सम्मेद शिखर, हैदराबाद, जैसलमेर, बीकानेर, सरदारशहर, अहमदाबाद, खंभात आदि स्थानों में उपलब्ध हैं।

रायसुराणा

बनारस के बाबू निहालचन्द जी राय सुराणा के खानदान का मूल निवास नागौर था। मुगल काल में पहले देहली फिर आगरा और बनारस आकर बस गए। बाबू निहालचन्द जी बीकानेर राज्य के मुख्य न्यायाधीश (चीफ जज) नियुक्त हुए थे। आप बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के नियन्त्रक कोर्ट के सदस्य थे। आपने यूनिवर्सिटी में एक जैन सीट कायम करवाई।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सांखला

सिद्धपुर पाटन के सामंत जगदेव के दूसरे पुत्र संख जी ने जैनधर्म अंगीकार किया। उनके वंशज सांखला कहलाए!

बंगलोर के सेठ सागरमल गिरधारीलाल सांखला का मूल स्थान खोहरी है। ये बैंकिंग व्यवसाय करते हैं। सिकन्दराबाद, नीलगिरी, बंगलोर आदि स्थानों पर इनकी दुकानें हैं।

परभणी के सेठ लक्ष्मणदास शिवलाल का मूल निवास जाजौली था। यहां कपास एवं बैंकिंग का व्यवसाय होता है।

सांड

सिद्धपुर पाटन के राजपूत सामंत जगदेव के ७ पुत्र थे। संवत् ११७५ में जैनाचार्य के उपदेश से वे जैनी बने। तीसरे पुत्र सांवल जी का बड़ा पुत्र मोटा ताजा था। पाटण के राजा ने एक बार उसे "संड-मुसंड" कहा। लोग भी वैसा ही कहने लगे— इस तरह से वे सांड गोत्र से पहचाने जाने लगे। कई लोगों का कहना है कि उन्होंने एक बार मस्त सांड को पछाड़ा। इससे लोग उन्हें सांड कहने लगे। कालान्तर में उनके वंशज भी इसी गोत्र से पुकारे जाने लगे। एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार मंडोर के परिहार राजा नानू ने संवत् ११७६ में जिनवल्लभ सूरि के उपदेश से जैनधर्म ग्रहण किया। इनके पुत्र के नाम पर "सांड" गोत्र की स्थापना हुई।

इस खानदान के परिवार जोधपुर, बीकानेर आदि प्रान्तों में निवास करते हैं। जोधपुर के तेजराज जी सांड के पूर्वज मेड़ता में रहते थे। जोधपुर के महाराजा बख्तसिंह के समय में सभी परगनों में इनकी दूकानें थीं। बीकानेर के सेठ केवलचन्द मानमल का खानदान भी मेड़ता से यहां आकर बसा है। यह परिवार गोटे किनोरी का व्यवसाय करता है। कलकत्ता में भी इनकी दूकानें हैं।

सालेचा

सिद्धपुर पाटन के सामंत जगदेव के तीसरे पुत्र सांवलजी थे। सांवल जी के तीसरे पुत्र सालदे हुए। वि. संवत् ११७५ में हेमसूरि जी के प्रतिबोध से सामंत जगदेव का परिवार जैनी बना— उनके विभिन्न पुत्रों और पौत्रों के अलग-अलग गोत्र निर्धारित हुए। सालदे के वंशज सालेचा कहलाए।

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार दइया राजपूत सालमसिंह जी को आ. जिनचन्द्र सूरि ने वि. संवत् १२१२ में प्रतिबोध देकर जैनी बनाया एवं उनका सालेचा गोत्र बना। इनके वंशज सियालकोट में बोहरगत व्यवसाय होने से बोहरा कहलाए।

पीथलिया/पीतलिया

इस गोत्र की उत्पत्ति परमार वंशी क्षत्रियों से मानी जाती है। संवत् ११९७ में विक्रमपुर में आ. जिनदत्त सूरि ने सोनगरा राजपूत ठाकुर हरिसेन को प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

करवाया। उनके साथ परमार वंश के पीथलजी (पीउला) ने भी जैन धर्म स्वीकारा। उनके वंशजों का पीथलिया गोत्र हुआ।

रतलाम के सेठ बद्रीचन्द वर्धमान पीतलिया के खानदान का पूर्व निवास कुम्भलगढ़ था। इस परिवार ने रतलाम, जावरा और ताल में व्यापार स्थापित किया जहां इनकी अच्छी प्रतिष्ठा है। रतलाम दरबार ने इस परिवार के अमरचन्द जी को सेठ की उपाधि दी। अहमदनगर के सेठ भगवानदास चन्दनमल पीतलिया का परिवार रीवां से आकर करीब २०० वर्ष पूर्व यहां बसा। भगवानदास जी की मृत्यु के बाद अनेक वर्षों तक उनकी पत्नी रम्भा बाई ने व्यापार संचालन किया।

४. राठौड़ राजपूतों से निःसृत गोत्रः

१. चोरड़िया
२. रामपुरिया
३. भटनेरा
४. चौधरी
५. गधैया
६. गोलेच्छा/गोलछा
७. सावणसुखा/श्यामसुखा
८. गुगलिया
९. गुलगुलिया
१०. नांदेचा
११. बुच्चा
१२. पारख
१३. साधु
१४. आसाणी
१५. ओसतवाल
१६. सराफ
१७. मुहणोत/मुणोत
१८. पींचा
१९. छाजेड़
२०. गडवाणी
२१. भड़गतिया
२२. मुरड़िया
२३. घलूण्डिया
२४. पोकरणा
२५. घेमावत

चोरड़िया/भटनेरा/चौधरी

इस वंश की उत्पत्ति १२वीं शताब्दी में चंदेरी नगरी के राठौर राजा खरहथसिंह से मानी जाती है। खरहथ सिंह के चार पुत्र थे (कहीं कहीं ५ या ८ पुत्रों का भी उल्लेख है)— अम्बदेव, निम्बदेव, भैंसाशाह और आसपाल। एक बार यवन सेना ने इस प्रदेश को लूटा। खरहथसिंह ने अपने पुत्रों और अन्य सुभटों को लेकर उनका पीछा किया, यवन सेना भाग गई। विजय खरहथसिंह की हुई पर उसके सभी पुत्र इस लड़ाई में गम्भीर रूप से घायल हो गए। राजा ने बहुत वैद्य हकीम बुलाए पर दशा बिगड़ती चली गई। उन्हीं दिनों आचार्य जिनदत्त सूरि नगर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में पधारे। राजा की प्रार्थना पर आचार्य ने मन्त्रित जल छिड़का। कुछ दिनों के बाद वे स्वस्थ हो गए। महाजन वंश मुक्तावली में दिए इस कथानक के अनुसार संवत् ११९२ में खरहथ सिंह और उसके परिवार ने जैन धर्म अंगीकार किया। आचार्य ने इनके वंशजों को ओसवाल कुल में शामिल किया और उनके गोत्र निर्धारित किए। यति रामलाल जी के अनुसार यह चंदेरी पूर्व देश का नगर था।

यति श्रीपालचन्द्र के अनुसार वि. संवत् ११७० में जैन आचार्य जिनदत्त सूरि के उपदेश से चंदेरी के राठौड़ राजा खरहत्थसिंह एवं उनके वंशजों ने जैनधर्म अंगीकार किया। उनसे चोर-ड़िया आदि विभिन्न गोत्र बने।

खरहत्थ के बड़े पुत्र अम्बदेव जी ने चोरों को पकड़ कर उन्हें बेड़ियाँ पहनाई इससे उनके वंशज चोरड़िया या चोर— बेड़िया कहलाये जो आगे चलकर चोरड़िया हो गया।

ओसवाल वंश के लेखक सोहनराज जी भंसाली के मतानुसार जिनदत्त सूरि ने जिस गाँव में राजा खरहत्थ को उपदेश देकर जैन बनाया उसका नाम चोरड़िया था। इसलिए उनका मूल गोत्र चोरड़िया हुआ। तहसील सेरगढ़ में 'चोरड़िया' गाँव अब भी है।

खरहत्थ, उनके वशंजों एवं सरदारों के कालान्तर में ५० से भी अधिक गोत्र हो गए। मूल गोत्र चोरड़िया है एवं उनकी शाखाएं हैं— सावन सुखा, गोलछा, गदहैइया, रामपुरिया, पारख, भटनेरा, गूगलिया, सोनी, पिपलिया, फलोदिया, नाणी, धन्नाणी, तेजाणी, पीपाणी, कक्कड़, मक्कड़, सियाणी, मोलानी, देवसयाणी, वगलानी, सद्दाणी, लूटकण, कोबेरा, मट्टारेकिया, बूचा, फाकरिया, घंटेलिया, कोकड़ा, सहिला, संजोपा, कुरकच्चिया, ओस्तवाल, गुलगुलिया, सिंधड़, कुमटियां आदि। इनमें से अधिकांश शाखाऐं पिता के नाम से अपनी पहचान बनाने के कारण नामांकित हुई है।

इस गोत्र के परिवार शाहपुरा, मद्रास, आगरा, लखनऊ, नीमच, निलीपुरम (मद्रास) कुन्नूर, भानुपुरा, मनगोह, बेरहमपुर, गंगाशहर, बरार (सी.पी.) बाथली (खानदेश) आदि विभिन्न स्थानों में निवास करते हैं।

शाहपुरा (मेवाड़) के चोरड़िया खानदान का मूल निवास चित्तौड़गढ़ था जहाँ से सेठ छुंगर सिंह संवत् १७४५ में शाहपुरा आए। इनके पुत्र वेणीदास स्टेट के कामदार रहे उन्हें मांडलगांव का शिवपुरी गांव जागीर में मिला। इस परिवार के अनेक लोग शाहपुरा राज्य के लिए युद्ध में मारे गए एवं महाराजा ने उनके वंशजों को जागीरें एवं रुक्के बख्शे। इस परिवार के जोरावरमल जी राज्य के दीवान नियुक्त हुए। श्यामसुन्दरलाल जी चोरड़िया ने उच्च शिक्षा पाई। उदयपुर के महाराणा आपकी बड़ी कद्र करते थे। आपकी पुत्री दिनेशनन्दिनी चोरड़िया हिन्दी साहित्य की प्रथम गद्य गीत लेखिका मानी जाती है।

मद्रास के सेठ अमरचन्द मानमल चोरड़िया के खानदान का मूल निवास कुचेरा है। संवत्. १९०४ में सेठ अमरचन्द पैदल— जालना होते हुए मद्रास गए एवं रेजीमेन्टल बैंकर्स का काम शुरु किया। आपके परिवार की मद्रास में अच्छी प्रतिष्ठा है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आगरे का चोरड़िया खानदान करीब २०० वर्षों से वहां निवास करता है। शुरू में गोटे किनारी का व्यवसाय किया। इस खानदान के लाला चांदमल जी संवत् १९७८ में स्थानीय कांग्रेस के सभापति थे। आप वकालत छोड़ कर राष्ट्रीय आन्दोलन में जेल गए। इसी खानदान के लाला दयानन्द जी ने जवाहरात का व्यापार किया एवं खूब नाम कमाया। आपको लार्ड हार्डिंज, क्वीन मेरी आदि से सर्टिफिकेट प्राप्त हुए। आपने सार्वजनिक संस्थाओं को खूब सहयोग दिया।

इसी खानदान के लाला छुट्टनलाल जी जौहरी महाराजा पटियाला, धोलपुरा, रामपुर के खास जौहरी थे।

लखनऊ के लाला इन्द्रचन्द माणकचन्द का खानदान वहां २०० वर्षों से रह रहा है एवं जवाहरात का पुश्तैनी व्यापर करता है। नीलकुयम (मद्रास) एवं नीमच के सेठ मांगीलाल धनरूपमल चोरड़िया का परिवार मूलतः चाड़वास निवासी था। संवत् १९०० में नीमच एवं वहां से संवत् १९८४ में नीलकुयम में व्यवसाय शुरू किया। कुन्नूर (नीलगिरी) का सेठ सुगनमल पावदान चोरड़िया का खानदान संवत् १९५७ से वहां बैंकिंग व्यवसायरत हैं। भानपुरा के सेठ गुलाबचन्द जी के परिवार वालों का मूल निवास मेड़ता था। करीब २०० वर्ष पूर्व ये भानपुरा (इन्दौर) आकर बसे। मनमांड में बसा सेठ पन्नालाल हजारीलाल चोरड़िया का खानदान मूलतः धनेरिया (मेड़ता) के निवासी थे। करीब १५० वर्ष से यहां साहूकारी लेन-देन का काम करते हैं। बेरहमपुर के चौधरी पीरचन्द सूरजमल चोरड़िया का मूल निवास पीपाड़ (जोधपुर) था। बरार (सी.पी.) के सेठ रामलाल रावत मत का खानदान रूपनगर (किशनगढ़) से आकर यहां बसा। व्यापार में खूब उन्नति की एवं धार्मिक कामों में भाग लिया। संवत् १९७८ में भारत सरकार ने इस परिवार के सेठ रावतमल जी को "रायसाहब" का खिताब दिया। बाघली के चोरड़िया परिवार कुचेरा व तिवंरी से आकर यहां बसे एवं यहां अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की। दिल्ली के सेठ नेमचन्द फूलचन्द के खानदान का मूल निवास मारवाड़ था। ये स्थानकवासी जैन आम्नाय के भक्त हैं। इस परिवार का कलाबत्तू का पुश्तैनी व्यवसाय हैं जिसकी देश में अनेक जगहों पर शाखाऐं हैं। ये रंग-रंगीली पगड़ियों के व्यवसाय में भी अग्रगण्य थे। कुछ परिवार जवाहारात का व्यवसाय करते हैं। दिल्ली के सेठ सुल्तानसिंह निहालचन्द के खानदान का मूल निवास मारवाड़ था। ये गोटे किनारी एवं जवाहरात का व्यवसाय करते हैं एवं सामाजिक कार्यों में सहायता के लिए सदा तत्पर रहते हैं।

जयपुर के सेठ लक्ष्मणलाल केशरीलाल का खानदान करीब २०० वर्ष पूर्व बीकानेर से आकर यहाँ बसा। इनका मुख्यतः जवाहारात और बैंकिंग का व्यवसाय है। इस परिवार के सेठ फतेसिंह संगीत एवं चित्रकला में निपुण थे।

जबलपुर के सेठ नथमल निहालचन्द के खानदान का मूल निवास बड़ी पादू (मारवाड़) था। सेठ नथमल ने जबलपुर बस कर कपड़े के व्यवसाय में बहुत उन्नति की। इन्होंने यहाँ जैन मन्दिर एवं धर्मशाला का निर्माण कराया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

गंगाशहर के सेठ लखमीचन्द चौथमल चोरड़िया के खानदान के पूर्व पुरुष जैतपुरा निवासी थे। यह परिवार कलकत्ता, सिरसागंज आदि स्थानों पर व्यापार करते हैं।

इस गोत्र के १५वीं से १८वीं शताब्दी के शिलालेख पावापुरी पटना, मिर्जापुर, सम्मेद शिखर, अजमेर, जयपुर, रंगपुर, आगरा, लखनऊ, मेड़ता, जीरावल, बम्बई आदि अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं।

रामपुरिया

यह गोत्र चोरड़िया गोत्र की ही एक शाखा हैं। इनके पूर्व पुरुष रामपुरा (इन्दौर स्टेट) में निवास करते थे। इस खानदान के जालमचन्द जी का वंश आज भी वहीं निवास करता है। कहा जाता है कि रामपुरा के चन्द्रावती राजपूतों की एक कन्या का विवाह बीकानेर के महाराजा के साथ हुआ। उस समय चोरड़िया परिवार के आलमचन्द जी बाईजी के साथ कामदार बनाकर बीकानेर भेजे गए। एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार इनके पूर्वज श्री खीमसिंह जी महाराजा अनूप सिंह जी की महारानी के साथ संवत् १७२७ में कामदार बन कर रामपुरा से बीकानेर आए। तब से वे बीकानेर में बस गए एवं रामपुरा से आने की वजह से रामपुरिया कहलायें।

बीकानेर के रामपुरिया खानदान में सेठ जोरावरमल जी के ज्येष्ठ पुत्र बहादरमल जी बड़े मेधावी हुए। आपने बड़े कष्ट से कलकत्ते पहुंच कर चैनरूप सम्पतराम दूगड़ के यहां ८ रूपए मासिक पर गुमास्तागिरी की। संवत्. १९३६ में आपके छोटे भाई हजारीमल जी और हीरालाल जी भी कलकत्ता आ गए। संवत् १९४० में आपने परिवार की स्वतंन्त्र फर्म "हजारीमल हीरालाल" स्थापित की एवं तेजी से उन्नति कर जल्दी ही कलकत्ता के नामी इम्पोर्टरों एवं बीकानेर के धनकुबेरों की गिनती में आ गए। मेनचेस्टर एवं लंदन में भी फर्म की शाखाएं खोली गई। संवत् १९७८ में "रामपुरिया काटन मिल" की स्थापना हुई। इसी समय के लगभग कलकत्ता में भूमि एवं अन्य व्यावसायिक प्रतिष्ठान खरीदे गए। ब्रिटिश सम्राट जार्ज पंचम के देहली दरबार में वे भी आमंत्रित थे।

श्री हीरालाल जी रामपुरिया

सेठ हीरालाल जी निरभिमानी एवं सुरुचि सम्पन्न व्यक्ति थे। व्यवसायिक सफलता के अतिरिक्त बीका-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नेर में रामपुरिया परिवार के विशाल भवन निर्मित कराने का श्रेय आपको ही है। ये हवेलियां स्थापत्य कला के बेजोड़ नमूने हैं। लाल पत्थरों पर बारीक कोरनी का काम आज भी विदेशी पर्यटकों के आकर्षण का मुख्य केन्द्र बना हुआ है। राजस्थान पर्यटन विभाग की विभिन्न पुस्तकों में इनके महत्वपूर्ण चित्र प्रकाशित हुए हैं। संवत् १९८४ में बीकानेर के महाराजा गंगासिंह जी ने सेठ हीरालालजी को सोने का कड़ा, छड़ी, चपरास एवं रुक्के बख्शे। इनके पुत्र सेठ सोभागमल जी पैतृक समृद्धि सम्पन्न तो थे ही, कलात्मक अभिरुचि के भी धनी थे। उन्होंने भवन निर्माण के साथ ही हवेलियों को विभिन्न तरह की चित्रकारी से सजीव बना दिया जो आज लगभग १०० वर्ष बाद भी यथावत् सुरक्षित हैं। आपने अथक प्रयत्न से विदेशी झाड़-फानूसों, मार्बल की अलभ्य मूर्तियों, हाथीदांत के कलात्मक साजों-सामान, विभिन्न डिजाईनों के विदेशी आईनों आदि का बहुमूल्य संग्रह किया। संवत १९९८ में सेठ हीरालालजी का देहावसान हुआ। उनके सुपुत्र सेठ सोभागमल जी ६ माह पश्चात् ही काल कवलित हो गए।

इस परिवार ने संवत् २०११ में बीकानेर में रामपुरिया विद्या निकेतन की स्थापना की। यह राजस्थान की महत्वपूर्ण शिक्षण संस्था है। इसके अन्तर्गत प्राईमरी एवं सेकेण्डरी विभागों में लगभग २२०० छात्र प्रति वर्ष शिक्षा पाते हैं एवं लगभग १५ लाख रूपए खर्च होते हैं। सेठसौभागमल जी के सुपुत्र सेठ रतनलाल जी बड़े सौम्य व्यक्तित्व के धनी हैं। आप बैंक आफ बीकानेर के चेयरमैन पश्चिमी बंगाल अर्थ निगम और बंगाल मिल आनर्स एसोसिएशन के अध्यक्ष रह चुके हैं। अनेक आर्थिक एवं औद्योगिक प्रतिष्ठानों के आप डाईरेक्टर हैं। आप श्री जैनसभा एवं तेरापंथी महासभा के दो दो बार सभापति निर्वाचित हुए। आपके अवदान ट्रष्टों से अनेक लोक हितकारी प्रवृत्तियों का संचालन होता है। आपने अपने हस्तलिखित ग्रंथों का अलभ्य संग्रह जैन विश्व भारती, लाडनूँ को भेंट कर दिया है।

रामपुरिया खानदान के पूर्व पुरुष आलमचन्द जी के वंशजों में से कुछ लोग करीब १५० वर्ष पूर्व सुजानगढ़ जाकर बसे। संवत् १९१३ में इस परिवार ने कलकत्ता में चुन्नीलाल चोथमल फर्म स्थापित की। इस परिवार के श्रीचन्द जी रामपुरिया जैन विश्वभारती, लाडनूं के कुलपति हैं।

खुजनेर के सेठ रतनचन्द जी के खानदान का मूल निवास बीकानेर था। आप संवत् १९५५ में खुजनेर आकर बसे। इनके परिवार के सदस्य छापाहेड़ा व संडावता में भी निवास करते हैं।

भटनेरा चौधरी

चन्देरी के राठौर राजा खरहत्थ सिंह (१२वीं शताब्दी) की दूसरी सन्तान निम्बदेव के वंशज भटनेर जाकर बसे। भटनेर के नवाब के कहने पर उन्होंने समाज में चौधरायत करनी शुरू कर दी। अतः कालान्तर में भटनेरा चौधरी कहलाने लगे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

गधैया

इस गोत्र की उत्पत्ति चन्देरी के राठौर वंशीय राजा खरहत्थसिंह के परिवार से मानी जाती है। इन्होंने विक्रम की १२ वीं शदी में आचार्य जिनदत्त सूरि से जैनधर्म अंगीकार किया। इनके तीसरे पुत्र भैंसाशाह बड़े यशस्वी थे। भैंसाशाह राजा खरहत्थ के पुत्रों में सर्वाधिक बलशाली थे। यवनों से छीना हुआ अधिकांश धन इन्हीं के पास रहा। इनकी मां लक्ष्मीबाई ने शत्रुंजय तीर्थ के लिए संघ निकाला। महाजन वंश मुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार पाटण नगर तक पहुंचते-पहुंचते धन समाप्त हो गया तो लक्ष्मीबाई ने गुमास्ता भेजकर वहां के साहुकार गर्द-भशाह से एक करोड़ सोनैयों का ऋण मांगा। परिचय के लिए भैंसाशाह का नाम लिया तो साहूकार ने मजाक किया— "भैंसा तो हमारे यहां पाणी की परवाल लाता है।" लक्ष्मीबाई ने अपमानित अनुभव कर भैंसाशाह को सन्देश भेजा। भैंसाशाह ने आकर एक चाल चली उसने पाटण व अन्य नगरों में गुमास्ते भेजकर सारा तेल खरीदवा लिया। पाटण के व्यापारी हताश हो कर लक्ष्मीबाई के चरणों में गिर पड़े। भैंसाशाह ने शर्त रखी कि तुम लोग कभी दुलंगी धोती न बांधों तभी माफी दूंगा। तब से गुजरात वाले दुलंगी धोती नहीं बांधते। यति रामलाल जी का यह कथानक मनगढ़ंत एवं हास्यास्पद लगता है। यति श्री पालचन्द्र जी ने भी 'जैन सम्प्रदाय शिक्षा' में इसी से मिलता जुलता कथानक दिया है।

भैंसाशाह के पांचवे पुत्र का नाम सेनहत्थ था। उनका लाड़ का नाम गद्दाशाह था। अतः उनके वंशज गद्दैया नाम से मशहूर हो गये। गद्दाशाह ने अपने पिता भैंसाशाह के कहने से ६ मासे सोने का सिक्का बनवा कर कंगालों में बांटा था।

सरदार शहर के गधैया खानदान का मूल निवास नोहर था। संवत् १८९६ में सेठ मानमल जी एवं उनके भतीजे जेठमल जी सरदार शहर आकर बसे। संवत् १९०७ में आप लोगो ने कूचबिहार में कारोबार शुरू किया एवं लगातार ९ वर्ष रहकर धनोपार्जन किया। उस समय बंगाल जाने आने में ५-६ महीने लगा करते थे। धनिक श्रीमंत होते हुए भी आपका जीवन त्यागमय था। आपने ३६ वर्ष की अवस्था में पत्नी की सहमति से ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया। संवत् १९५२ में आपका देहांत हुआ। सेठ जेठमल जी के पुत्र श्री चन्द्र जी ने कलकत्ते में कपड़े का व्यवसाय प्रारम्भ किया एवं अपनी कुशलता से लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। संवत् १९६० में आप व्यापार का भार अपने पुत्रों को देकर धर्मसेवा में लग गए। आपने भी ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया। इनके पुत्र सेठ गणेशदास जी ने भी व्यापार में बहुत उन्नति की। आप संवत् १९७४ में बीकानेर राज्य के कौंसिल मेम्बर नियुक्त हुए। सरदार शहर में बनी इस परिवार की हवेलियां आलीशान कही जा सकती है।

गद्दैया खानदान के अनेक परिवार नागपुर, सियालकोट, लाहौर, अम्बाला जम्मू, मलेर-कोटला आदि स्थानों पर निवास करते हैं।

नागपुर के सेठ रामकरण हीरालाल जौहरी के परिवार पीढ़ियों से जवाहरात का व्यापार करते हैं। इनके पूर्वज होसियारपुर (पंजाब) से १७० वर्ष पूर्व यहां आए। इस परिवार के सेठ

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

माणकचन्द ने भद्रावती तीर्थ में आदीश्वर स्वामी का मंदिर बनवाया। सियालकोट के परिवार बैंकिंग व्यवसाय करते हैं। लाला टिंडेशाह का राजघराने से व्यापार संबंध था। लाला नत्थूशाह २० साल तक जैनसभा के सभापति रहे। लाला मोतीशाह स्थानीय म्यूनिसिपलिटी के मेम्बर थे।

लाहौर के लाला बुटेशाह नामी जौहरी थे। आप महाराणा रणजीतसिंह के कोर्ट ज्वेलर थे। आप लाहौर म्यूनिसिपलिटी के प्रथम मेम्बर थे। इनके वंशज लाला मोतीलाल जी ने संवत् १९६० में पुस्तक प्रकाशन का काम शुरू किया। सर्वप्रथम लाहौर और तदनन्तर बनारस में "मोतीलाल बनारसीदास" के नाम से आपने प्रेस स्थापित किए एवं पुस्तक व्यवसाय में अपना प्रमुख स्थान बना लिया। आप "आत्माराम जैनसभा" के गुजरांवाला अधिवेशन के सभापति थे। आपके सुपुत्र श्री सुन्दरलाल जैन बड़े प्रतिभाशाली विद्वान् एवं धर्मनिष्ठ श्रावक थे। आपका जन्म सन् १९०० में हुआ। आपको कर्मकुशलता एवं धर्मपरायणता अपने पिता से वरदान रूप में मिली। आप संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, गुजराती आदि भाषाओं के अच्छे जानकार थे। तांत्रिक अनुसंधान में आपकी गहरी रूचि थी। आपकी फर्म द्वारा प्राचीन भारतीय दर्शन, वांगमय एवं इतिहास पर प्रकाशित ग्रन्थों की विदेशों में बड़ी साख है। भारतीय संस्कृति के अलभ्य ग्रंथों का प्रकाशन कर आपने देश का गौरव बढ़ाया है। आप अनेक समाज हितकारी संस्थाओं के महत्वपूर्ण पदों पर रहकर समाजसेवा में संलग्न रहे। आचार्य विजय बल्लभ सूरि जी में आपकी अगाध श्रद्धा थी।

अम्बाला खानदान के लाला संतराम जी पंजाब जैनसभा के प्रधान थे। आप अम्बाला के आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए।

जम्मू का गधैया खानदान सियालकोट परिवार का ही एक अंग है। महाराजा गुलाबसिंह के आग्रह पर लाला महूशाह जम्मू जाकर बसे एवं अच्छी इज्जत हासिल की। आप लोगों का सराफे का कारोबार था। इनके वंशज फग्गूशाह जम्मू जैन सभा के सभापति थे। मलेर कोटला के गधैया खानदान में लाला पंजाब राय नामक मशहूर व्यक्ति हुए हैं।

इस गोत्र के शिलालेख शत्रुञ्जय, मेड़ता, बेड़ा, उदयपुर, लखनऊ, बीकानेर आदि स्थानों में प्राप्त हुए हैं।

गोलेच्छा

इस गोत्र की उत्पति विक्रम संवत् की १२वीं शताब्दी में चंदेरी नगरी के राठौड़ राजा खरहत्थसिंह से मानी जाती है। एक बार मुसलमानों की फौज से लड़ते हुए उनके पुत्र घायल हो गए। उस समय आचार्य जिनदत्त सूरि ने उन्हें जीवनदान दिया। संवत् ११९२ में राजा और उसके परिवार ने जैनधर्म अंगीकार किया। इनके दूसरे पुत्र भैसाशाह बड़े प्रतापी थे। उनके पुत्र गेलो जी थे व गेलो जी के पुत्र बछराज हुए। लोग उन्हें "गेलो जी का बच्छराज" नाम से पुकारने लगे जो संक्षिप्त होकर गोलेच्छा बन गया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नाहर ग्रंथागार में उपलब्ध मथेन (महतियाण) अमीचन्द रचित "महाजनां री जातां रौ छन्द" के अनुसार गोलेच्छा गोत्र से भाईपा वाली जातियाँ हैं: सामसुखा, पैतीसा, पारख, नावरीया, चोरवेड़िया, बुच्चा, गदहिया, फाकरिया, कुंभटिया, सीव्याल, संचोषा, साहिल, घंटेलिया, काकड़ा, सीघंड़ा, संखवालेचा, कुरकुचीया।

गोलेच्छा खानदान के लोग जयपुर, ग्वालियर, टिण्डीवरम, फलोदी, खिचंद, चांदा, बालाघाट, नागपुर, पनरोटी, कलकत्ता आदि भारत के प्रमुख नगरों में निवास एवं व्यापार करते हैं।

जयपुर का सेठ नथमल जी का खानदान मूलतः खिचंद से उठ कर यहां बसा। इस खानदान के सेठ रत्नचन्द जी जयपुर राज्य के ३० साल तक खजांची रहे। आपके पुत्र नथमल जी बड़े तेजस्वी थे। संवत् १९५८ तक वे राज्य के दीवान रहे। महाराजा सवाईरामसिंह जी एवं माधोसिंह जी की आप पर पूरी पूरी मेहरबानी थी। जयपुर में एक कटला और चौक आपके नाम से ही जाना जाता है। एक समय आ. हस्तीमलजी के गुरुभाई ने अभिग्रह किया। कई दिन तक वह फला नहीं। तब आपने अपनी मूंछ का एक बाल तोड़ कर दे दिया और अभिग्रह फल गया। यह उनकी आन की एक मिसाल है। आपकी पुत्री का विवाह कोटा के दीवान राय बहादुर केसरी सिंहजी बापना से हुआ।

सेठ राजमलजी जौहरी का परिवार बीकानेर से आया है। इनसे वंशज माणकचन्द जी जयपुर स्टेट के प्रधान रहे। बीकानेर दरबार की तरफ से भी आपको पावँ में सोना बख्शा गया था। इसी परिवार के गोलेच्छा राजमल जी ने फर्म की बहुत उन्नति की। आपने सोप स्टोन पाउडर बनाने की मिल लगाई। आपको जयपुर दरबार की ओर से कुर्सी व लावजमा का सम्मान प्राप्त था। क्यूरिओ और मीनाकारी के व्यवसायों में आपने काफी सम्पत्ति अर्जित की। जयपुर म्यूनिसिपलिटी के भी आप सदस्य रह चुके हैं।

ग्वालियर का गोलेच्छा खानदान उपरोक्त जयपुर घराने का ही अंग हैं। करीब २०० वर्ष पूर्व सेठ धीरजमल जी यहां आकर बसे और कपड़े का व्यवसाय किया। उनके पुत्र जीतमल जी बड़े होनहार निकले। ग्वालियर दरबार ने उन्हें राज्य का पोतदार नियुक्त किया। वे धोलपुर राज्य के वि. संवत् १९२० से १९४२ तक खजांची थे। आपने संवत् १९२८ में पालीताना का संघ निकाला। इनके पुत्र नथमल जी बड़े नामांकित थे। वे दतिया राज्य के भी बैंकर थे। दतिया के राजा ने उन्हें छत्री, हलकारा, घोड़ा एवं जमीन इनायत की। पापनपुर, जम्मूकाश्मीर, करौली, चरखारी, पालीताना आदी के नरेशों ने भी उन्हें नाना सम्मानों से विभूषित किया। संवत् १९६४ में वे ग्वालियर के चेम्बर आफ कामर्स के अध्यक्ष चुने गए। अंत समय आपका बड़ा दुःखद गुजरा। किसी ने उनके खिलाफ महाराजा के कान भर दिये— महाराजा ने नाराज होकर उनकी तमाम सम्पत्ति जब्त कर ली एवं उन्हें ७० वर्ष की वृद्धावस्था में जेल में डाल दिया— वहीं उनका देहान्त हुआ। इनके पुत्र बाथमल जी का सितारा फिर बुलन्द हुआ। आप १५ साल तक अमझेरा स्टेट के खजांची रहे। संवत् २००९ में प्रिंस आफ वेल्स जब भारत आए तो उनके सामने पेश होने का सम्मान मिला। भारत के वाइसराय लार्ड चेम्सफोर्ड ने उन्हें सेंट जान एम्बुलेंस

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एसोसियेशन का कौंसलर बनाया। ग्वालियर राज्य में आप "राजमान राजे श्रीसेठ" के सम्मानीय सम्बोधन से पुकारे जाते थे।

टिंडीवरम के गोलेछा मुन्नीलाल खुशालचन्द के खानदान का मूल निवास बीकानेर था। वहां से सेठ खुशालचन्द बंगलौर आये। आपने जहां-जहां मिलीटरी कैम्प थे वहां-वहां अपनी दुकाने खोली। इस परिवार ने धर्मार्थ बहु द्रव्य खर्च किया एवं दक्षिण भारत के गांवों में जगह-जगह अपना बैंकिंग व्यवसाय फैलाया। इस परिवार की ओर से स्कूल, गौशाला आदि को मुक्त-हस्त दान दिया गया है।

फलौदी में गोलेच्छा खानदान के अनेक परिवार व्यवसाय रत हैं। सेठ हरदत्त जी के परिवार ने हैदराबाद में सोने चांदी एवं जवाहरात का काम किया। इस परिवार ने धर्मार्थ बड़ी-बड़ी रकमें दान दी। सेठ फूलचन्द जी ने ओसिंया एवं कुलपाक तीर्थों के जीर्णोद्धार में अवदान दिए। सेठ जीवराज अगरचन्द का परिवार व्यवसाय के लिए बम्बई गया। संवत् १९८८ में इस परिवार ने जैसलमेर का संघ निकाला। सेठ मूलचन्द सोभागमल के परिवार ने कारंजा (बरार) व बम्बई में अपनी दूकानें स्थापित की। सेठ प्रतापचन्द धनराज गोलेच्छा का परिवार व्यवसाय निमित्त जबलपुर गया एवं वहां ब्रिटिश रेजीडेंट के साथ लेन-देन शुरू किया।

खिचंद का बाथमल जी गोलेच्छा का खानदान मूलतः ३२५ वर्ष पूर्व सेतरावा (जोधपुर) से आया। इस परिवार ने मद्रास और हैदराबाद में अपनी दुकानें खोली। इनके वंशज बाथमल जी ने ब्रिटिश पल्टन से लेन-देन शुरू किया। आप फौज के साथ विझगापट्टम गए एवं वहां बाथमल साहूकार के नाम से प्रसिद्ध हुए। संवत् १९५४ में महारानी विक्टोरिया ने आपको सनद इनायत की। आपके राजे महाराजाओं एवं अंग्रेज अफसरों से अच्छे सम्बन्ध थे।

मद्रास बसे श्री चम्पालाल गोलेछा के खानदान का मूल निवास भी खीचन (जोधपुर) था। उम्मेद अस्पताल जोधपुर के लिए बड़े आर्थिक अवदान के उपलक्ष में सन् १९३६ में जोधपुर महाराजा द्वारा वे स्वर्ण कड़े सिरोपाव एवं कैफियत द्वारा सम्मानित किए गए। उन्होंने खीचन में सुजान सागर नामक मनोहर सरोवर का निर्माण कराया एवं एक दातव्य औषधालय खोला। वे अन्य अनेक जन हितकारी प्रवृत्तियों एवं संस्थाओं से सम्बद्ध रहे।

चांदा के सेठ अमरचन्द अगरचन्द गोलेच्छा के परिवार का मूल निवास बीकानेर था। वहां से सेठ अमरचन्द व्यापार निमित्त नागपुर आए। वहां से गौंड राजा के आग्रह पर चान्दा में १५० वर्ष पूर्व आढ़त की दुकान खोली। सी. पी. बरार के ओसवाल समाज में इस परिवार की अच्छी प्रतिष्ठा है। इनके पौत्र गोलेच्छा सिद्धकरण जी ने भादंक में मन्दिर एवं धर्मशाला का निर्माण कराया। संवत् १९८७ में आप समाधिमरण को प्राप्त हुए। आपके पुत्र गोलेछा चैनकरण जी भांदक तीर्थ कमेटी के प्रेसिडेन्ट और चांदा म्यूनिसिपालिटी के सदस्य रहे।

तोल्यासर (बीकानेर) के सेठ भैरूदान पूनमचन्द गोलेच्छा का मूल व्यवसाय किराना एवं कपड़े का था। सेठ भैरूदान जी संवत् १९४५ में कलकत्ते आए और "खेतसीदास तनसुखदास,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सरदार शहर वालों के यहां सर्विस की। बाद में स्वतंत्र कपड़े एवं जूट का व्यवसाय किया एवं फार्बीसगंज में दुकान खोली।

इस गोत्र के अनेक शिलालेख अजीमगंज, मधुवन, जैसलमेर, मेड़ता, बीकानेर, विक्रमपुर, लूणकरणसर, गिरनार, जामनगर आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

सावणसुखा (शामसुखा)

विक्रम की १२वीं शताब्दी में हुए चन्देरी के राठौड़ राजा खरहत्थ के पुत्र भैंसाशाह के पांच पुत्र थे। इनमें सबसे बड़े पुत्र का नाम कुंवर जी था। वे ज्योतिष व शकुन शास्त्र के विद्वान् थे। उनकी भविष्यवाणियां प्रायः सच होती थी। एक बार चित्तौड़ नरेश ने उन्हें बुलवाकर मौसम के बारे में प्रश्न किया। कुंवर जी ने भविष्यवाणी की— "सावण सुखा और भादो हरा"। सच ही उस साल मौसम वैसा ही निकला। महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार तब से सब लोग कुंवर जी को "सावन सुखा" कहने लगे। धीरे-धीरे उनकी सन्तति भी इसी नाम से पहचानी जाने लगी।

उत्पति के सम्बन्ध में एक और किंवदन्ती हैं— कहते हैं राजा खरहत्थ के ८ पुत्र थे। उनसे ८ भिन्न-भिन्न गोत्र हुए। उनके एक पुत्र का नाम श्यामसी जी था जिनसे श्यामसुखा गोत्र बना। इनकी ९वीं पीढ़ी में रतन जी मेहता हुए जो संवत् १५७५ में बीकानेर दरबार के आग्रह पर पाटन से बीकानेर आकर बसे। ११वीं पीढ़ी में सेठ घमड़सी हुए जो इन्दौर जाकर होल्कर सेना की रसद व खजाना बांटने का काम करने लगे। इस स्टेट से आपको कई सम्मान प्राप्त हुए। आपके लिए इन्दौर में आधी एवं सावेंर में पौने महसूल की माफी थी। प्रदेशों में डाक की सुव्यवस्था करने एवं अन्य सेवाओं के उपलक्ष में आपको घोड़ा, छत्री, चपरास आदि का सम्मान बख्शा गया। वहां आपका परिवार सराफा व अफीम का व्यवसाय करने लगा। घमड़सी जुहारसी फर्म ८० वर्षों से समाज के धार्मिक मन्दिरों की व्यवस्था सुचारु रूप से करता रहा है। इसी वंश के श्री टीकमसिंह सावनसुखा का समग्र जीवन समाजसेवा और मन्दिरो के प्रबंध में लगा है। अनेक पारमार्थिक एवं सार्वजनिक संस्थाओं के आप प्रेरणा स्रोत हैं।

बीकानेर में इसी खानदान के सेठ समीरमल जी को राज्य की तरफ से चौकड़ी बख्शी गई। सेठ सहसकरण जी को सोने का कड़ा एवं उनकी धर्मपत्नि को पावँ में सोना इनायत हुआ था। इसी परिवार के सेठ पूनमचन्द जी को भी राज्य की ओर से छड़ी, चपरास आदि का सम्मान प्राप्त था।

इस गोत्र के अनेक परिवार सरदारशहर, रतनगढ़, मद्रास आदि स्थानों में निवास करते हैं। सरदारशहर के सेठ गणेशदास जुहारमल का परिवार सवाई से आकर यहां बसा। इस परिवार का कलकत्ते में कपड़े का थोक व्यापार होता है। रतनगढ़ के सेठ भीमराज हुकुमचन्द के खानदान का कलकत्ते में चलानी का काम होता है। मद्रास के सेठ हजारीमल रूपचन्द के खानदान का पूर्व निवास बीकानेर था। सेठ हजारीमल राजस्थान से आकर तामिलनाडु में बसने वाले प्रथम

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रवासियों में से थे। इनका साहूकार पेठ में बैंकिंग व जवाहरात का व्यवसाय होता है। श्री चम्पालालजी सावन सुखा ने जूना जैन मंदिर एवं दादाबाड़ी को सार्थक आर्थिक आवदान दिए। आपकी वसीयत के अनुसार आपकी समस्त बची हुई सम्पत्ति जनहितकारी कार्यों में खर्च की जा रही है।

इस गोत्र के शिलालेख बीकानेर, जैसलमेर, मेड़ता रोड, मेड़ता सिटी, भामरा, देशनोक, सरदारशहर, पेथापुर, अहमदाबाद, बड़ौदा, खेड़ा, खंभात आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

अजीमगंज (मुर्शिदाबाद) में बसे शामसुखा परिवार में श्री पूरणचन्दजी नामांकित व्यक्ति हुए। आप साहित्य साधना के क्षेत्र में अग्रणी थे। बंगला भाषाभाषियों को जैनदर्शन से सर्वप्रथम परिचित कराने का श्रेय पूरणचन्द जी को है। आपका जन्म संवत् १९३९ में हुआ। अठारह वर्ष की आयु में लिखना प्रारम्भ कर जीवनपर्यंत साहित्य-साधना में लीन रहे। उत्तराध्ययन सूत्र का बंगला में अनुवाद एवं सम्पादन कर आपने एक कीर्तिमान स्थापित किया। "जैन दर्शनेर रूपरेखा" एवं 'जैन धर्मेर परिचय' ग्रंथों में उन्होंने बहुत सरल बंगला में जैन तत्त्व-दर्शन का सांगोपांग निरूपण किया है। "जैन तीर्थंकर महावीर" नामक भगवान् की प्रामाणिक जीवनी लिख कर बंगला साहित्य की एक कमी पूरी कर दी। इस ग्रंथ का अंग्रेजी अनुवाद भी हुआ। संवत् २०२४ में इस साहित्य साधक का देहावसान हुआ।

गूगलिया/गुलगुलिया

सावणसुखा/शामसुखा गोत्र की ही शाखाऐं गूगलिया और गुलगुलिया गोत्र है। महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार कुवंरजी के वंशजों में आगे चलकर गुलराज जी हुए जो गुड़ के गुलगुले बना कर बच्चों को खिलाया करते थे। अतः उन्हें गुलगुला सेठ कहा जाने लगा। इनके वंशज गुलगुलिया कहलाने लगे। इसी ग्रंथ के अनुसार कालांतर में कुवंरजी के वंशज पाली में गूगल का व्यापार करने लगे थे अतः लोग उन्हें गूगलिया नाम से पुकारने लगे। देशनोक के सेठ रावतमल प्रेमसुख के खानदान का मूल निवास नाल था। वहां से संवत् १९२५ में यह परिवार देशनोक आ बसा।

नांदेचा

मुनि ज्ञान सुन्दरजी के अनुसार नांदेचा सावणसुखा गोत्र की ही एक शाखा है।

मुल्थान (मालवा) के सेठ उंकारजी लालचन्द जी का मूल गोत्र नांदेचा है। इनके पूर्वज खेताजी हुए तब से इनके वंशज खेतपालिया कहलाने लगे। इन्होंने मुख्यतः अफीम का व्यवसाय प्रारम्भ किया। मोचिया लोगों से अधिक काम पड़ने के कारण ये मोचियावाले भी कहे जाते हैं। इस खानदान में सेठ स्वरूपचन्द जी मुल्थान स्टेट के खजांची थे। अनेक ठिकानों से इनको रुक्के इनायत हुए। धार स्टेट से इस परिवार को सेठ की पदवी मिली। इनका खाचरोद, मुल्थान आदि स्थानों पर बैंकिंग व्यवसाय भी है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बुच्चा

भैंसाशाह के तीसरे पुत्र बुच्चाशाह थे। उनके वंशज बुच्चा कहलाए। बीकानेर में इस खानदान के श्रेष्ठि लखमण का संवत् १६०६ का शिलालेख उपलब्ध हैं।

संखलेचा गोत्र की एक उपशाखा भी बूचा या बूंटा कहलाती है।

पारख/साधु

चंदेरी नगरी के राजा खरहत्थसिंह के पुत्र भैसाशाह थे जिनके चौथे पुत्र पाशु थे। आहड़ नरेश चन्द्रसेन ने पाशुजी को रत्न आदि की परीक्षा करने व खरीदने के लिए दरबार में रखा। एक बार एक जौहरी राजा के पास हीरा बेचने आया। राजा ने राज्य के जौहरियों को बुला कर हीरा दिखलाया— सबने हीरे की प्रशंसा की। अंत में पाशु जी से भी परीक्षा करवाई गई। उन्होंने कहा— हीरा है तो कीमती, परन्तु इसमें एक ऐब है, जिस घर में रहेगा उसकी स्त्रियों के लिए अमंगलकारी है। राजा ने जौहरी से पूछा। उसने कान पकड़ लिया और कहा— मैने ऐसा पारखी नहीं देखा। "मेरे घर में भी दो स्त्रियां मर चुकी है।" महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार राजा ने पाशु जी की परीक्षा से प्रसन्न हो उन्हें पारखी की पदवी दी। आगे चलकर यहीं पदवी पारख गोत्र के रूप में परिणत हो गई। जैन सम्प्रदाय शिक्षा से भी उक्त कथानक की पुष्टि होती है।

"साधु" उप जाति भी इसी पारख गोत्र की एक शाखा है— संवत् १५४९ के शिलालेख से ऐसा प्रतीत होता है।

पारख गोत्र के अनेक शिलालेख जैसलमेर, अमर सागर, केकड़ी, भिनाय, शत्रुञ्जय, बीकानेर, राजलदेसर, खाखर, बम्बई आदि स्थानों पर मिलते हैं।

इस खानदान के अनेक परिवार देहली, त्रिचनापली, रायपुर, लोहापर, किशनगढ़, सिंगरनी, चेवला, बीकानेर, चुरू आदि स्थानों पर निवास करते हैं।

दिल्ली का लाला दिलेराम जी पारख का परिवार पंजाब से आकर यहाँ बसा है। महाराजा रणजीतसिंह जी के वे खास जौहरी थे। ये लाहोरी नाम से भी मशहूर हैं। आपके पुत्र दुलचन्द जी बादशाह अकबर (द्वितीय) के खास जौहरी थे। त्रिचनापली एवं सिंगनेरी के पारख परिवारो का मूल स्थान पांचला (मारवाड़) या लोहावर था। ये यहां के रिजीमेंटल बेंकर्स हैं। ये फलोदी व लोहावट में भी व्यवसाय करते हैं। किशनगढ़ का सेठ अमरचन्द रतनचन्द का परिवार बीकानेर से आकर बसा है। नासिक के पारख परिवारों का मूल निवास तिवंदी गांव था। इन खानदानों का कलकत्ता आदि विभिन्न नगरों में बैंकिंग कपड़ा आदि का व्यवसाय होता है।

आसाणी/ओसतवाल/सराफ

विक्रम की १२ वीं शताब्दी में हुए चन्देरी के राठौड़ राजा खरहत्थ जी के चौथे पुत्र का नाम आसपाल जी था। उनके दो पुत्र थे आसाणी और ओसतवाल। उनके वंशज कालान्तर में इन्हीं नामों से जाने जाने लगी। सराफ ओसतवाल गोत्र की एक शाखा है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जोधपुर के शाह गणेशमल जी सराफ के खानदान का मूल निवास नागौर था। वे वहां चौधरी कहलाते थे। संवत् १६०० के आसपास इनके पूर्व पुरुष नगराज जी जोधपुर आकर बसे। सराफ का व्यवसाय करने से वे सराफ भी कहलाने लगे। जो मुहल्ला अब सराफों की पोल कहलाता है वह पहले नगराज जी के पुत्र मन जी के नाम पर मनजी की ग्वाल के नाम से प्रसिद्ध था। संवत् १९०० में इस परिवार का बैंकिंग व्यवसाय जोरों पर था। संवत् १८८० में इस परिवार में चन्दनमल जी हुए जिनकी महाराज कुमार से दोस्ती थी। कहा जाता है कि एक बार राजकुमार इनसे कुश्ती के दावं-पेंच में हार गए। राजकुमार ने नाराज होकर परिवार के समस्त वहीखाते जब्त करवा दिए। इससे संवत् १९२५ में चन्दनमल जी कुछ वर्षों के लिए रतलाम चले गए। इसी परिवार के श्री गणेशमल जी सराफ ने राज्य सेवारत रह कर संवत् १९७७ में काश्तकारों के ६०/७० लाख रुपये बकाया कर माफ करवाये। ओसतवाल गोत्र के अनेक परिवार भारत के विभिन्न नगरों में निवास एवं व्यवसाय करते हैं। अहमदाबाद का सेठ चन्दनमल जसराज का परिवार मूलतः बीरावड़ लाडोली (मारवाड़) से संवत् १९३० में यहाँ आकर बसा। इस परिवार की यहां जीनिंग फैक्टरी हैं तथा आढ़त व रूई का व्यापार होता है। उमराणा (नासिक) के सेठ धोड़ीराम हेमराज के परिवार का मूल निवास बड़ले (मारवाड़) था। वे यहां साहुकारी का व्यापार करते हैं।

मुहणोत/पींचा

मारवाड़ के राठोड़ सामंत राव रायपाल जी के १३ पुत्र थे। रायपाल जी की मृत्यु के बाद ज्येष्ठ पुत्र कनकपाल ने सं. १३०१ में कार्य भार सम्भाला। रायपालजी के चतुर्थ पुत्र मोहन जी महनोत कुल के आदि पुरुष माने जाते हैं। शिकार में एक गर्भवती हिरनी को घायल कर देने की वेदना से द्रवित हो श्वेताम्बर तपागच्छीय जैन यति शिवसेन जी से प्रतिबोध ले वे सं. १३५१ में जैनी बने एवं ओसवाल वंश में सम्मिलित हुए।

"महणोतों की ख्यात" के अनुसार एकबार मोहन जी शिकार खेलने गए। उनकी गोली से एक गर्भवती हिरणी मर गई। मरते-मरते उसके गर्भ से बच्चा पैदा हुआ जो मृत मां का स्तन चूसने लगा। मोहन जी का हृदय यह दृश्य देखकर विदीर्ण हो गया। दैवयोग से जैन यति शिव-सेन जी उधर से निकले। उनके चमत्कार से हिरणी जीवित हो उठी। मोहन जी के हर्ष का पार न रहा। उन्होंने यति जी को अपना गुरु माना, जैन बने और ओसवाल मोहनोत कुल की नींव पड़ी।

भाटों की बहियों (विरूदावली) में भी शिकार की इस घटना को उनके जैनधर्म अंगीकार करने का कारण बताया जाता है किन्तु इस घटना का समय संवत् १३६६ दिया है।

रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के अनुसार महणोत अपनी वंश परम्परा राठौड़ राव सीहोजी से शुरू करते हैं। सीहो जी का पुत्र असपाल था। जिसने संवत् १२३७ में मारवाड़ के गांव खेड़ में अपना राज्य स्थापित किया। डा. कृष्णा महनोत ने अपने ग्रंथ "मोहनोत वंश प्रकाश" में इनका नाम "आस्थान" जी लिखा हैं। उनके पुत्र धुहड़ थे। धुहड़ के पुत्र रायपाल वि. सं. १२८५ में सिंहासनारूढ़ हुए। रायपाल के चौथे पुत्र मोहन जी थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार खेड़ (किशनगढ़) के राव राजा राठौड़ रायपाल के १२ पुत्र थे। इनमें से दो मोहनसिंह जी और पाचीसिंह जी अन्य भाइयों से अनबन के कारण जैसलमेर चले गए। वहां के रावल राजा ने उनकी बहुत खातिर की। वहीं बस गए। एक समय आ. जिनचन्द्र सूरि वहां पधारे। उनके उपदेश से प्रभावित हो उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया। यतिं जी ने इस धर्म परिवर्तन का समय संवत् १५९५ दिया है।

मोहनोत वंश जनक मोहन जी

मोहन जी का पहला विवाह भाटी राजपूत कुल की कन्या से हुआ था। जैसलमेर में श्री श्रीमाल (कहीं कहीं श्रीमाल) जाति के दीवान की कन्या पर मोहन जी आसक्त हो गए। उसी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से मोहन जी ने दूसरा विवाह सं. १३९१ में किया। उनकी पहली राजपूत पत्नी की संतानों से मोहनिया राठौड़ वंश परम्परा चली। श्री श्रीमाल पत्नी से एक पुत्र हुआ जिसका नाम सुभटसेन था। उन्हीं से ओसवाल वंश परम्परा चली जो मुहणोत कहलाए। "राठौड़ों री ख्यात" के अनुसार रायपालजी ने मांगा भाटी का विवाह एक चारण की पुत्री से करवा दिया था अतः जेसलमेंर के रावल ने बदला लेने की भावना से मोहन जी की शादी अपने कामदार श्री श्रीमाल महाजन छाजूजी जीवणोत की पुत्री से कर दी। उनके पुत्र सुभटसेन (सपट सेण) से मोहनोत ओसवालों की उत्पत्ति हुई।

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार मोहन सिहंजी के भाई पांची सिंह ने भी मिथ्यात्व त्याग कर जैन धर्म अंगीकार किया। पांचीसिंह से सं. १५७५ में पींचा गोत्र की उत्पत्ति मानी जाती हैं। गोत्र उत्पत्ति का यह समय भी संदिग्ध है।

एक समय महनोत वंश के ओसवाल श्वेताम्बर तपागच्छ के अनुयायी थे। कालांतर में अनेक परिवारों ने वैष्णव धर्म अंगीकार कर लिया। वे आज भी वैष्णव हैं। मुहणोतों की कुलदेवी नागणेचिया देवी मानी जाती है जिनका मन्दिर जोधपुर दुर्ग में विद्यमान हैं। देवी का मूल मन्दिर "नागाणा" गाँव में हैं जो जोधपुर से ९० कि. मी. दूर स्थित है। एक ख्यात के अनुसार राव धूहड कन्नौज से आते हुए देवी चक्रेश्वरी की प्रतिमा साथ लाए थे जिन्हें नागाणा में प्रतिष्ठा-- उपरान्त 'नागणेचिया' कहा जाने लगा। इनके उपासक नीम की लकड़ी नहीं जलाते, काली भैंस या बकरी नहीं रखते, काली जूती नहीं पहनते। मुहणोतों की ख्यात के अनुसार मोहन जी के पुत्र सुभट सेन जी जोधपुर नरेश कन्हपाल जी (सं. १३७१) द्वारा प्रधान बनाए गए थे एवं राव जोधाजी के समय इसी वंश के मेघराज जी (सं. १५२६) राज्य के प्रधान रहे।

इस कुल के १९ वें वंशधर जयमल जी बड़े प्रतापी थे। जयमल जी के पिता का नाम जेसा और माता का नाम जसमादे था। आपका जन्म वि. सं. १६३८ में हुआ। ये बड़े होनहार थे। आपका प्रथम विवाह वैद मूंथा लालचन्द जी की पुत्री स्वरुपदे से हुआ। नेणसी उन्हीं के पुत्र थे।

संवत् १६७२ में महाराजा सूरसिंह ने फलौदी जीतकर जयमल जी को वहाँ का शासक बना दिया। संवत् १६७६ में वे सांचोर के शासक नियुक्त हुए। १६७७ में जब जालौर का परगना महाराजा गजसिंह को मिला तो जयमल जी वहाँ के शासक नियुक्त हुए। संवत् १६७८ में सांचोर का परगना भी उसी से मिला दिया गया। जयमल जी ने उनका प्रबंध बड़ी दक्षता से किया। संवत् १६८३ में उन्हें नागौर का हाकिम बनाया गया। जब कच्छियों ने सांचोर पर आक्रमण किया तो जयमल जी ने बड़ी वीरता से उनका सामना किया एवं विजयश्री उन्हीं को मिली। संवत् १६८४ में बाड़मेर के बागी जागीरदारों को दबाने के लिए आपको भेजा गया। जयमलजी ने उनके विद्रोह को दबा कर दंड सहित बकाया महसूल वसूल किया। संवत् १६८६ में महाराज गजसिंह ने इन्हें जोधपुर का दीवान नियुक्त किया। ये शासन संचालन में बड़े कुशल थे। इन्होंने अनेक मन्दिरों का निर्माण व जीर्णोद्धार करवाया। शत्रुञ्जय एवं गिरनार धर्म संघ ले गए। आप

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बड़े दानशील एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे। संवत् १६८१ में इन्होंने जालौर के चौमुखा मन्दिर में प्रतिमाऐं प्रस्थापित करवाई। संवत् १६८३ में जालौर दुर्ग स्थित जैन मंदिर में भी प्रतिमा प्रतिष्ठापन करवाया। संवत् १६८७ में मारवाड़ गुजरात में भयंकर अकाल पड़ा— उस वक्त जयमल जी ने अनेक असहाय गरीब लोगों को एक वर्ष तक अन्न वस्त्र प्रदान किया। आपने मन्दिरों का जीर्णोद्वार करवाया। सांचोर, जोधपुर, नाडोल, शत्रुञ्जय आदि स्थानों पर भी आपने मन्दिर बनवाए एवं भगवान् के बिम्ब प्रतिष्ठित करवाए। जालौर में आपने तपागच्छ का उपाश्रय भी बनवाया।

मुणोत सुन्दरसी

जयमलजी के पाँच पुत्र थे— नैणसी, सुन्दरदास, आसकरण, नरसिंहदास, जगमल। इनके पुत्र नैणसी जी मारवाड़ राज्य के बड़े प्रसिद्ध दीवान हुए जिनका इतिहास ग्रंथ "नैणसी री ख्यात" बहुत प्रसिद्ध हैं। इसमें वि. सं. १३०० से १७२७ तक का समस्त राजपूतों का इतिहास सुरक्षित है। आपके भाई सुन्दरसी (सुन्दरदास) जी ने भी राज्य की बड़ी सेवा की। अनेक युद्धों में राज्य की ओर से लड़े। महाराजा ने आपको तन दिवानगी का पद प्रदान किया। परंतु अंत समय में दोनों भाइयों को महाराज जसवंत सिंह की नाराजगी के कारण पेट में कटार भोंक कर आत्महत्या करनी पड़ी। मुहणोत नैणसी का सम्पूर्ण जीवनवृत्त ग्रन्थ के प्रथमखण्ड में अन्यत्र दिया जा रहा है। नैणसी के तीन पुत्र करमसी, वैरसी और समरसी भी पिता के साथ ही बन्दी बना लिए गए थे। नैणसी एवं सुन्दरसी की आत्मघात का समाचार सुनकर महाराज ने उन्हें छोड़ दिया। ये लोग राज्य छोड़कर नागौर राव राजा रामसिंह के पास चले गए। वहां करमसी जी को राजा ने दिवानगी का पद दिया। विं. सं. १७३२ में रामसिंह की अकस्मात मृत्यु हो गई। उनके सेवकों को करमसी द्वारा विष दिये जाने का सन्देह होने पर उन्होंने करमसी को जीवित दीवार में चुनवा दिया। करमसी के पुत्र संग्राम सिंह भागकर कृष्णगढ़ और वहां से बीकानेर जाकर रहे। महाराजा अजीतसिंह ने उन्हें पुनः मारवाड़ बुलाकर राज्य सेवा में दाखिल किया। महाराज अभयसिंह ने सं. १७८२ में पुनः उन्हें जब्त किए गए घर, बाग आदि इनायत किए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ये साहित्य प्रेमी एवं विद्वान् थे। फारसी के राजशिक्षा ग्रंथ का राजस्थानी भाषा में तर्जुमा कर आपने "नीति-प्रकाश" नामक ग्रंथ लिखा जो बहुत प्रसिद्ध है। इस ग्रंथ के अदालती न्याय सम्बंधी अंश विश्वविद्यालय की एम.ए. परीक्षा के पाठ्यक्रम में शामिल है। महाराजा द्वारा दी गई १६० बीघा जमीन पर लगाया गया बाग आज भी "मुहणोतों का बाग" के नाम से विद्यमान है।

इसी खानदान के राव सुरतराम जी राज्य के बड़े प्रभावशाली प्रधान सेनापति, दीवान व प्रधान आदि पदों पर कार्य करते रहें। महाराजा बखतसिंह के समय वि. सं. १८०८ में वे राज्य के फौज बख्शी पद पर रहे। सं. १८२० में महाराजा विजयसिंह ने उन्हें अपना दीवान बनाया। अनेक लड़ाईयां लड़कर आपने राज्य के विद्रोहियों से दण्ड वसूल किया। सं. १८३० में इन्हें जागीर, राव की पदवी, सिरोपाव, हाथी, पालकी आदि इनायत हुए। सं. १८३१ में इनकी मृत्यु पर इनकी धर्मपत्नि और एक खवास सती हुए जिनकी छत्रियाँ अभी भी विद्यमान हैं।

उनके पुत्र मुहणोत ज्ञानमल जी कुशल फौज बख्शी (कमांडर) व दीवान थे। इनका विवाह बिकानेर के दीवान मूलचन्द जी बरड़िया की पुत्री से हुआ। इन्होंने सं. १८४७ से १८६३ के बीच राज्य के लिए बड़ी-बड़ी लड़ाईयाँ जीती। केवल १५ वर्ष की वय में उन्हें नागौर की हुकुमत सौंपी गई। कृष्णगढ़ के महाराजा प्रतापसिंह से लगातार ७ महीने युद्ध कर तीस हजार रूपये दण्ड स्वरूप वसूलने का श्रेय दीवान ज्ञानमल जी को ही है। महाराजा मानसिंह के समय संवत् १८६० में इन्हें दीवान बनाया गया। संवत् १८६१ में महाराजा भीमसिंह के जाली वारिस धोकलसिंह ने विद्रोह कर डीडवाना पर अधिकार कर लिया तो दीवान ज्ञानमल जी ने विद्रोहियों का दमन कर महाराजा की सत्ता स्थापित की। संवत् १८६३ में ठाकुर संवाईसिंह के बहकाने से जयपुर, बीकानेर एवं खेतड़ी की सम्मिलित सेनाओं ने जोधपुर राज्य पर चढ़ाई कर दी। परवतसर की गीगोती घाटी में युद्धरत १९ ठाकुर भी दुश्मनों से जा मिले। तब दीवान ज्ञानमल जी ने दूरदर्शिता से संघवी इन्द्रराज जी एवं भंडारी गंगाराम जी को जोधपुर की कैद से मुक्त करवाया। उनके सहयोग एवं चातुरी से जोधपुर दुर्ग बच पाया। किन्तु इस बीच राज्य में षड़यंत्रों का बोलबाला हो गया। इस कारण दीवान ज्ञानमल जी ने सक्रिय शासन से संन्यास ले लेना ही उचित समझा।

इनके पौत्र ठाकुर प्रातापमल जी सोजत पाली एवं नागौर के हाकिम रहे। इन्हीं के समय से सदर अदालतों में कार्यवाही लिपिबद्ध करने की प्रथा शुरू हुई।

इस परिवार के लोग जोधपुर, किशनगढ़, उदयपुर, अजमेर, व्यावर, इटारसी, अमरावती, अहमदनगर, राले गाँव आदि स्थानों पर बसे हुए हैं। मुहणोत ढोला जी की सन्तानें ढोलावत नाम से जानी जाती हैं जो पूना बस गए और वहां पेशवाओं के खजांची बने।

बिदासर के सेठ थानमल जी मुहणोत के परिवार का पूर्व निवास तोसीणा था। वहां से सं. १८९० में इनके पूर्व पुरुष मंगलचन्द जी यहाँ आकर बसे। जूट, बैंकिग व अन्यान्य कारोबारों में इस परिवार ने खूब समृद्धि अर्जित की। बीकानेर दरबार ने संवत् १९८९ में सेठ थानमल जी को सोना बख्शा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

किशनगढ़ के मुणोत खानदान में रायचन्द जी बड़े प्रसिद्ध व्यक्ति हुए। आप महाराज कृष्णसिंह जी के समय राज्य के दीवान (मुख्यमंत्री) थे। सं. १७०२ में आपने किशनगढ़ में पार्श्वनाथ मंदिर बनवाया। इसी खानदान में मेहता विजयसिंह जी बड़े प्रतापी हुए। उन्हें संवत् १८८७ में जोधपुर महाराजा मानसिंह ने अपनी सेवा में रख लिया और १९०८ में दीवानगी सौंपी। संवत् १९३४ में अंग्रेज सरकार ने उन्हें रायबहादुर की पदवी से सम्मानित किया।

इन्होंने रामानुज सम्प्रदाय का अवलम्बन किया एवं फतह सागर के पास वेंकटेश्वर के भव्य मन्दिर का निर्माण करवाया। इनके पुत्र मेहता सरदारसिंह भी जोधपुर राज्य के दीवान रहे। सरदार स्कूल की स्थापना आप ही की प्रेरणा से हुई। सरकार ने आपको रायबहादुर की पदवी से सम्मानित किया। मेहता विजयसिंह जीकी मृत्यु के बाद मेहता सरदार सिंह जी को सं. १९४९ में राज्य का दीवान बनाया गया। आप जोधपुर राज्य के अन्तिम ओसवाल दीवान थे। आपका स्वर्गवास सं. १९५८ में हुआ। आपके पौत्र डा. गोपाल सिंह मेहता ने भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में बहुत ख्याति अर्जित की। वे इंग्लैण्ड व अमेरिका की विज्ञान परिषदों के मानद सदस्य थे। भारत सरकार के कई उच्च आयोगों व परिषदों से वे सम्बद्ध थे। साहित्य, कला एवं शिक्षा में उन्हें गहरी रुचि थी।

मुणोत खानदान के ठाकुर प्रतापमल जी के प्रपौत्र डा. सरदारमल जी ने प्राचीन दुर्लभ ग्रन्थों, सिक्कों एवं दस्तावेजों का अभूतपूर्व संग्रह किया था। आप द्वारा रचित "वृहद सूक्ति कोश" ने मूर्धन्य विद्वानों की प्रशंसा अर्जित की। महनोत वंश प्रकाश की लेखिका— डा. कृष्णा महनोत आपकी पुत्रवधू हैं।

महनोत खानदान के ही श्री ज्ञानचन्द जी मेहता की प्रमुख विधिवेत्ताओं में गिनती की जाती है। आप राजस्थान उच्च न्यायालय के वरिष्ठ एडवोकेट स्वीकृत हुए एवं पांच बार बार-एसोसिएशन के अध्यक्ष चुने गए। वे जोधपुर नगर महापालिका के भी अध्यक्ष रह चुके हैं। आपके ही सत्प्रयत्नों से ओसवाल हितकारिणी सभा की स्थापना हुई। अन्तर्राष्ट्रीय रोटरी फाउन्डेशन ने भी आपको सम्मानित किया। आपने जन हितकारी कार्यों में दिल खोल कर अवदान दिए एवं चार पंजीबद्ध न्यास स्थापित किए जिनसे सार्वजनिक प्रवृत्तियों का संचालन होता है। समाज ने आपको "महणोत कुलभूषण" की उपाधि से सम्मानित किया।

महणोत खानदान भारत के विभन्न प्रदेशों में बसा हुआ है। जोधपुर के महणोत परिवार के रोहीदास जी किशनगढ़ जाकर बस गए। उनके पुत्र मेहता रामचन्द्र जी की सं. १९५४ में बादशाह अकबर के दरबार तक पहुंच थी। बादशाह ने उन्हें प्रसन्न होकर सात परगने प्रदान किए। महाराजा कृष्णसिंह जी ने आपको कृष्णगढ़ का दीवान नियुक्त किया। किशनगढ़ का पार्श्वनाथ मन्दिर आप ही का सं. १७०२ में बनवाया हुआ है। इसी खानदान के कृष्णदास जी भी राज्य के मुख्यमंत्री रहे। मेहता आसकरण जी सं. १७६५ में दीवान बनाए गए। इनके पुत्र रामचन्द्र जी सं १७८१ में दीवान नियुक्त हुए। उनके ज्येष्ठ पुत्र हठीसिंह जी सं. १८३१ में दीवान बने। इनके वंशज हठीसिंहोत कहलाते हैं। उनके पुत्र जागीदासजी और शिवदास जी भी राज्य

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सेठ लछ्मणदास मुहणोत रीयाँ वाले

के दीवान बनाए गए। दिवानगी के अलावा इस खानदान के व्यक्ति राज्य के अन्य अनेक उच्च पदों पर रहे। मेहता बाघसिंह महाराजा बहादुर सिंह द्वारा फौज बख्शी (कमाण्डर-इन-चीफ) बनाए गए।

इसी खानदान के मेहता उम्मेदसिंह जी सं. १८६२ में उदयपुर आए। वहां भी इनके वंशज महाराणा एवं राज्य की सेवारत रहे।

महणोत खानदान के मेहता ढोलाजी की सन्तानें ढोलावत मुणोत कहलाई। अजमेर के सेठ हमीरमल नोरतनमल के पूर्वज सेठ जीवनदास जी संवत् १८०० में रीयां (पीपाड़) जाकर बसे। वे दक्षिण गए एवं पेशवाओं के खजांची नियुक्त हुए। पूना में इन्होंने अपनी दूकान स्थापित की एवं खूब सम्पत्ति अर्जित की। जोधपुर महाराज विजयसिंह जी ने सं. १८२९ में उन्हें नगर सेठ की उपाधि, ताजीम, सिरोपाव एवं एक मास तक किसी को कैद में रखने का अधिकार बख्शा था। इनकी अपार सम्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक दन्तकथाएं प्रचलित हैं। एक बार जोधपुर दरबार को द्रव्य की आवश्यकता हुई तो रीयां गए। रीयां के सेठ ने रीयां से लगाकर जोधपुर तक रूपयों से लदे ऊंटो की कतार लगा दी। इस तरह यह नगर "सेठों की रीयां" नाम से प्रसिद्ध हो गया। पेशवा राज्य में भी वे करोड़पति श्रीमंत माने जाते थे। इनके खानदान के सेठ धीरजमलजी लश्कर जाकर बसे। इस परिवार के सेठ हमीरमलजी ने अजमेर, जबलपुर, सागर, दमोह, लश्कर, उज्जैन आदि स्थानों पर दुकान की शाखाऐं खोली। संवत् १९१२ में आपका स्वर्गवास हुआ। आपके पुत्र सेठ चांदमल जी बड़े लोकप्रिय हुए। सं. १९२१ में जोधपुर दरबार ने उन्हें सेठ की पदवी दी। उनके समय अनेक जगहों के ब्रिटिश खजाने इनकी फर्म के अधिकार में थे। अनेक नगरों में इनकी दुकानें एवं जमींदारी थी। राजपूताने में सं. १९२५ एवं १९३४ के घोर दुष्काल के समय उन्होंने प्रजा की बहुत सहायता की। स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स के आप जन्मदाता, मंत्री एवं प्रमुख रहे। सं. १९३४ में देहली दरबार के समय लार्ड लिटन ने आपको राय साहब की पदवी से सम्मानित किया। वे आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। आपके द्वितीय पुत्र सेठ छगनमलजी को भारत सरकार ने रायबहादुर का खिताब दिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इसी खानदान के मुहणोत लछ्मणदास जी रीयां से सं. १८६९ में कुचामन आकर बस गए। उन्हें जोधपुर दरबार से अनेक रुक्के इनायत हुए एवं समय-समय पर सिरोपाव, पालकी आदि बख्शे गए। अजमेर, जयपुर, सांभर, हिंगनघाट, बम्बई आदि अनेक जगहों पर ये परिवार बोहरागत एवं अन्य व्यवसायों में संलग्न हैं।

मुहणोत खानदान के अनेक परिवार उज्जैन, जोधपुर, व्यावर, इटारसी अमरावती, अह-मदनगर, बरार आदि जगहों में निवास करते हैं।

मुणोत खानदान के शिलालेख जालौर पाली नाडोल, फलौदी, सांचोर आदि स्थानों पर मिले हैं।

पींचा

पींचा गोत्र की उत्पत्ति भी राठौड़ राजपूतों से हुई। किशनगढ़ के राव राजा रायपालजी की १२ संतानों में से दो मोहनसिंह जी और पांची सिंहजी आपसी भाईयों की अनबन के कारण जैसलमेर जाकर बस गए। संवत् १५९५ में आ. जिनचन्द्र सूरि के उपदेश से प्रभावित होकर दोनों भाईयों ने जैनधर्म अंगीकार किया। इन्हीं पांची सिंह जी की संन्तानों का पींचा गोत्र बना।

छाजेड़

सवीयाणगढ़ के राठौड़ राजपूत अस्थान, तत्पुत्र, धांधल तत्पुत्र रामदेव के पुत्र काजल का चमत्कारों में विश्वास नहीं था। एक बार वि. सं. १२१५ में आ. जिनचन्द्र सूरि ने उन्हें चमत्कार दिखाया। उन्हें ऐसा वासक्षेप चूर्ण दिया जिसे दीपमालिका की रात जहां ढाला जाय वह स्थान सोने का हो जाय। इन्होंने उस चूर्ण को मन्दिर के कंगूरों एवं अपने घर के छज्जों पर डाला। सुबह सब छज्जे सोने के हुए मिले। यह चमत्कार देखकर उसने सूरिजी से जैनधर्म स्वीकार किया। तब ही से उनके वंशज छजहेड़ कहलाए जो कालान्तर में छाजेड़ हो गया। प्रसिद्ध पुरा-तत्त्वज्ञ श्री अगरचन्द भंवरलाल नाहटा ने अपने ग्रंथ "खरतर गच्छ प्रतिबोधित गोत्र और जातियाँ" में इससे मिलता-जुलता कथानक दिया है।

"राजस्थान की जातियां" ग्रन्थ के लेखक के अनुसार राठौड़ रामदेव के पुत्र ने जैनधर्म स्वीकार करने पर मन्दिर में एक सोने का छज्जा बनवाया। इसी से उनके वंशजों का नाम छाजेड़ हो गया। एक अन्य किंवदन्ती में मंत्रीश्वर उद्धरण की पत्नी के जिनालय जाते समय स्वधर्मी बहनों में वितरणार्थ छाव भरकर साड़ियाँ ले जाने को गोत्र के नामकरण का हेतु माना है।

एक अन्य कथानक के अनुसार राठौड़ अधिपति क्षेतराम के ज्येष्ठ पुत्र सियोजी संवत् १२१२ में पाली आ बसे। सियाजी के पुत्र अस्थानजी हुए। अस्थानजी के तीन पुत्र थे— धांध-लसिंह, उदयसिंह और रामसिंह। रामसिंह पाली छोड़ कर संवत् १२४२ में खेडगढ़ आए एवं वहां राज्य स्थापित किया। उस समय नगर सेठ सोमा शाह बड़े वैभवशाली थे। वे बरड़िया गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठि थे। उनकी दुकान सिद्धपुर पाटण में थी। भवालमाता उनकी इष्ट देवी थी। पाटण नरेश ने सोमाशाह की मार्फत अपनी कन्या के विवाह का प्रस्ताव खेडगढ़ के राजा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रामसिंह के पास भेजा। विवाह के समय त्याग की रश्म अदायगी में सेठ सोमाशाह ने राजा रामसिंह की द्रव्य से खूब मदद की। राजा रामसिंह को जब पुत्र उत्पन्न हुआ तो भवाल माता ने स्वप्न में वह पुत्र बरड़िया सेठ को उपकार के बदले दे देने को कहा। ऐसा ही स्वप्न— बरड़िया सेठ को भी हुआ। वह जब रामसिंह के पास महल में पहुँचा तो वहाँ रामसिंह की पत्नी पुत्र को स्नान करा कर आँखों में काजल आँज रही थी। बरड़िया सेठ पुत्र को लेकर घर आए और उसे काजल नाम से पुकारने लगे। बड़े होने पर काजल का विवाह श्रीमाल श्रेष्ठि जगमाल शाह की पुत्री से हुआ। उनके चार पुत्र— उद्धरण जी, एशवजी, मानकजी एवं भदोजी और एक पुत्री- फूलकँवर हुई। काजल जी पाटण में गुड़ का व्यवसाय करते थे। किसी आपसी अनवन में उनकी हत्या कर दी गई। उनके पुत्रों ने भी उन हत्यारे व्यापारियों की हत्या करवा कर अपने पिता की हत्या का बदला तो लिया पर वे पाटण छोड़ खेडगढ़ आ गए। चारों ही पुत्र भवालमाता के अनन्य भक्त थे। माता ने प्रसन्न होकर उनसे मन्दिर में तीन छज्जे लगा देने को कहा। ये छज्जे लगाने से ही इनका संवत् १२८१ में छाजेड़ गोत्र बना। कहते हैं उनकी बहन फूल कँवर चारों भाईयों द्वारा जैन होकर भी बदले की भावना से व्यापारियों की हत्या करवाने से क्षुब्ध हो कर संवत् १२९२ में खेडगढ़ तालाब के किनारे सती हो गई। भाईयों ने प्रायश्चित्त स्वरूप अनेक जैन मंदिरों एवं उपाश्रयों का निर्माण करवाया।

प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता श्री भँवरलाल जी नाहटा के अनुसार लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व संवत् १५४७ में लिखित 'कल्पसूत्र प्रशस्ति' से ऊकेश वंश के छाजेहड़ गोत्र से सम्बन्धित अनेक तथ्य उजागर होते हैं। इस प्रशस्ति की एक सचित्र स्वर्ण-रौप्याक्षरी प्रति सूरतनगर के श्री मोहनलाल जी महाराज के ज्ञान भंडार में थी। इस प्रशस्ति में छाजेहड़ गोत्र का सम्बन्ध राष्ट्रकूट (राठौड़) क्षत्रिय राजा जयचन्द्र से जोड़ा है। उनकी वंश परम्परा में आस्थान जी हुए। प्रशस्ति के अनुसार उनका वंश वृक्ष इस प्रकार बनता है—

आस्थान जी
।
धांधल
।
ऊदल
।
रामदेव
।
ठाकुरसिंह (अन्यत्र 'काजल' नाम का उल्लेख मिलता है।)
।
ब्रह्म
।
उद्धरण शाह
।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

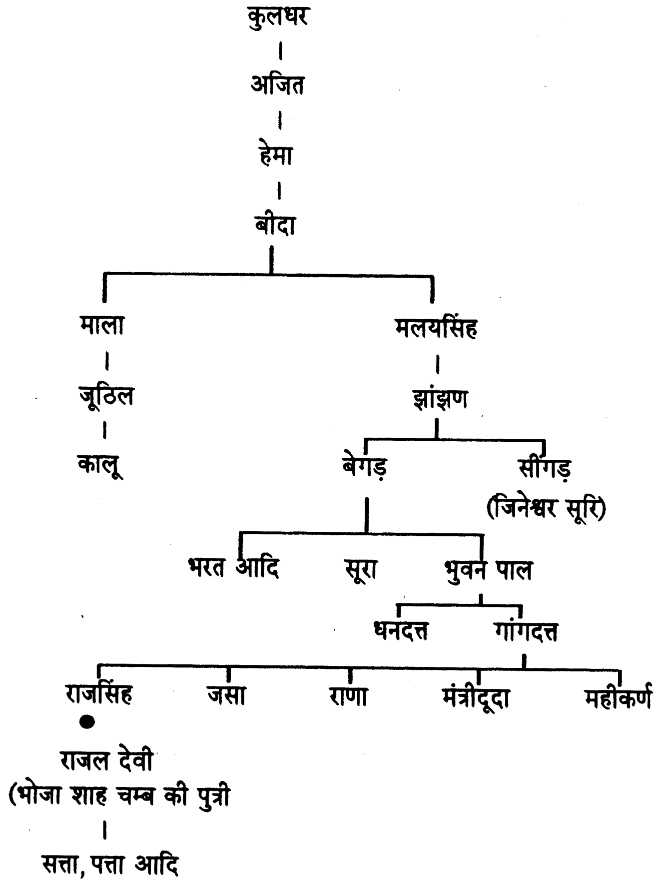

प्रशस्ति के अनुसार खेड़ नगर के श्रेष्ठि उद्धरण ने विपुल सम्पदा अर्जित की। उन्होंने चित्तौड़ नगर के पार्श्वनाथ— भवन पर स्वर्णिम छज्जों का निर्माण कराया जिससे वे 'छाजेहड़' कहलाने लगे। इन्होंने खेड़ में शांतिनाथ जिनालय बनवाया, जिसमें आचार्य श्री जिनपति सूरि ने बिम्ब प्रतिष्ठा कराई। उद्धरण के पुत्र कुलधर भी बड़े प्रतापी हुए। इन्होंने जाबालिपुर (जालौर) भिन्नमाल आदि नगरों में प्रासाद बनवाए। इसी वंश में मंत्रीश्वर झांझणजी हुए जिनके पुत्र बेगड़ सत्यपुर (सांचौर) में श्रेष्ठ थे एवं वहां के चौहान वंशीय राजा भीम की राज्य धुरा के वाहक थे। इन्होंने शत्रुञ्जय महातीर्थ के लिए संघ समायोजन किया एवं अपने दान से कल्पवृक्ष को भी मात कर दिया। इन्हीं के भ्राता सिंगड़ कालोपरांत श्री जिनेश्वर सूरि के नाम से प्रसिद्ध हुए। इसी वंश में विक्रम की सोलहवीं शदी में मंत्रीश्वर राजसिंह हुए। इनकी भार्या राजलदेवी चम्ब गोत्रीय भोजा शाह की पुत्री थी। इन्हीं राजसिंह ने कल्पसूत्र की यह स्वर्णाक्षरी प्रति आचार्य श्री जिनचन्द्र सूरि के उपदेश से प्रभावित होकर लिखवाई।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नाहर लेख संग्रह (क्रमांक—२५०५) में उद्धृत जैसलमेर स्थित स्तूप पर अंकित प्रशस्ति लेख के अनुसार छाजेहड़ गोत्रीय श्रेष्ठि जूठिल के पुत्र कालू चौहान राजा घड़सी के मंत्रीश्वर थे। उनके पाँच पुत्रों में सोनपाल ने बड़ी ख्याति अर्जित की। उनका विवाह शाह थाहरु की पुत्री सहजल दे से हुआ। इसी वंश के श्रेष्ठि तेजपाल के परिवार ने संवत् १६६३ में उक्त स्तूप की प्रतिष्ठा करवाई। इस प्रशस्ति से श्रेष्ठि कालू का वंश वृक्ष इस प्रकार बनता है—

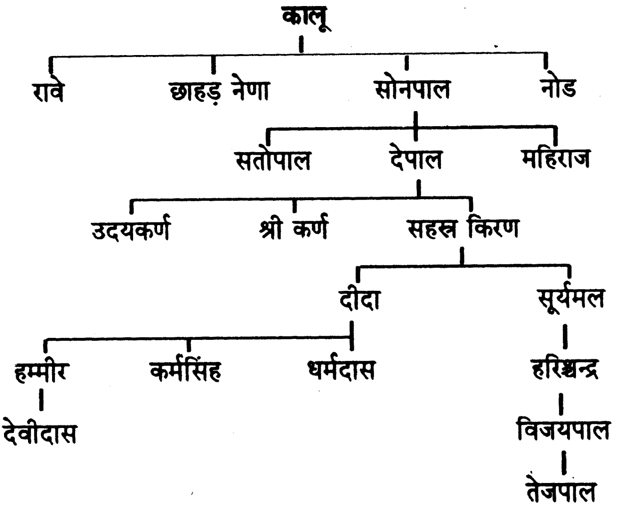

बैगड़ शाखा के आचार्य जिन समुद्र सूरि (संवत् १६८०-१७४१) द्वारा रचित महेवा स्तवन में नैणा (नयणा) को जूठिल का पुत्र बताया है। इसी नैणा के पुत्र सीहा ने संवत् १५६४ में नाकोड़ा स्थित पार्श्वनाथ मंदिर का जीर्णोद्धार कराया था।

छाजेहड़ गोत्र के जैन आचार्य

श्री जिनचन्द्रसूरि— खरतर गच्छ के प्रभावी आचार्यों में श्री जिनचन्द्र सूरि सीवाणा (समियाणा) के ओसवाल वंश के छाजेहड़ गोत्रीय श्रेष्ठि देवराज के पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १३२४ में हुआ। आचार्य जिन प्रबंध सूरि से दीक्षित होकर संवत् १३४३ में आप सूरि पदासीन हुए। दिल्ली सम्राट् कुतुबुद्दीन आपके सद् प्रभाव से चमत्कृत था। अनेक राजा आपके परम भक्त थे। आपने कलिकाल केवली विरुद पाया। संवत १३७६ में आप स्वर्गस्थ हुए।

दादा श्री जिन कुशल सूरि— खरतर गच्छ के तीसरे दादा आचार्य जिन कुशल सूरि शिवाना (समयाणा) के छाजेहड़ गोत्रीय राजमंत्री जैसल (जिल्हा) के पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १३३७ में हुआ। दस वर्ष की लघुवय में दीक्षित होकर सं. १३७७ में आप सूरि पदासीन हुए। आपने धर्म प्रभावना के लिए जैनधर्म अंगीकार करवा कर ओसवालों के २१ नए गोत्र निर्धारित किए। आप 'युग प्रधान' की पदवी से विभूषित हुए। संवत् १३८९ में आप स्वर्गस्थ हुए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री जिनपद्मसूरि— सरस्वती के वरद पुत्र श्री जिन पद्म सूरि का जन्म छाजेहड़ गोत्रीय श्रेष्ठि अम्बदेव के घर हुआ। धर्म प्रभावना करते हुए संवत् १४०० में आपका स्वर्गवास हुआ।

श्री जिनचन्द्र सूरि— मारवाड़ के कुसुमाण गाँव में छाजेहड़ श्रेष्ठि केल्हा की भार्या सरस्वती की कुक्षि से आपका जन्म हुआ। संवत् १४०६ में आप सूरि पदासीन हुए। संवत् १४१४ में आप स्वर्गस्थ हुए।

श्री जिनभद्र सूरि— आप मेवाड़ के देउलपुर ग्राम के छाजेहड़ श्रेष्ठि धीणिग एवं उनकी भार्या खेतल देवी के पुत्र थे। आप संवत् १४७५ में सूरि पदासीन हुए। आपने अनेक स्थानों पर ज्ञान भण्डार स्थापित किए। संवत् १५१४ में कुंभलमेर में आपका देहांत हुआ।

श्री जिनेश्वर सूरि— आप खरतर गच्छ की बेगड़ शाखा के प्रथम आचार्य थे। बेगड़ शाखा में भट्टारक पद छाजेहड़ गौत्रीय को ही दिया जाता है। आप छाजेहड़ गोत्रीय श्रेष्ठि झांझण के पुत्र थे। संवत् १४१४ में आपने सूरिपद पाया। संवत् १४३० में आप स्वर्ग सिधारे।

श्री जिन गुणप्रभ सूरि— आप छाजेहड़ गोत्रीय श्रेष्ठि जूठिल कुल श्रृंगार नगराज के पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १५६५ में हुआ। ये बड़े चमत्कारी एवं प्रभावक आचार्य हुए। संवत् १६५५ में आप स्वर्गस्थ हुए।

इस गोत्र के अनेक शिलालेख मिलते हैं जिनमें अजमेर, रेनपुर, लखनऊ, जसोल, खंडप, नाकोड़ा, जैसलमेर, मालपुरा, नागौर जयपुर, सांगांनेर, सवाईमाधोपुर, बीकानेर, आबू, खंभात, भरूच, बड़नगर, शत्रुंजय आदि स्थानों के शिलालेख मुख्य हैं।

किशनगढ़ के सेठ लखमीचन्द्र जी छाजेड़ के परिवार के लोग अनेक स्थानों के खजांची रहे। सेठ लखमीचन्द्र जी सं. १९३४ से डेरा इस्माइल खां एवं डेरा गाजी खां के खजांची नियुक्त हुए। वे २१ साल तक डेरा इस्माइल खां के आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। किशनगढ़ दरबार ने आपको "शाह" की पदवी दी। सं. १९६३ में भारत सरकार ने आपको राय साहब का खिताब दिया। दिल्ली दरबार के समय सं. १९६८ में उन्हें राय बहादुर के सम्मान से विभूषित किया गया। आपने किशनगढ़ स्टेशन पर एक धर्मशाला बनवाई। आपके पुत्र गोपीचन्द जी भी आनरेरी मजिस्ट्रेट एवं अनेक जगहों के खजांची रहे। भारत सरकार ने सं. १९७९ में आपको राय साहब का खिताब इनायत किया।

जोधपुर के प्रतापमल जी छाजेड़ के खानदान की ओसवाल समाज में अच्छी प्रतिष्ठा है। वह यहां के प्रसिद्ध वकील थे। शाहपुरा के सरदारमल जी छाजेड़ के खानदान का मूल निवास मालपुरा (जयपुर) था। इन्दौर के छाजेड़ खानदान में सेठ बालचन्द जी बड़े नामांकित हुए। इन्होंने इन्दौर में आदिनाथ जी का सुन्दर मन्दिर बनवाया एवं करीब एक लाख की लागत से यहां सुन्दरबाई ओसवाल महिलाश्रम की स्थापना की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

भड़गतिया/गडवाणी

महाजनवंश मुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार अजमेर परगने के गांव भरवरी में गडवा राठौड़ को श्री जिनदत्त सूरि ने प्रतिबोध देकर जैन बनाया। उनकी धन कामना पूर्ण की। उनका गडवाणी गोत्र बना।

इसी गोत्र के पूरसिंह जी मजाक करने से भड़क जाते थे— लोग उन्हें भड़किया कहने लगे, इससे उनकी संतानों का भड़गतिया गोत्र बना।

इस गोत्र के सेठ फतेहमलजी भड़गतिया परम भक्त एवं प्रसिद्ध श्रावक हो गये हैं। इन्होंने मेड़ता में दादाबाड़ी का निर्माण कराया।

मुरड़िया

मंडोवर के राठौड़ राजा चम्पकसेन बड़े मशहूर हुए हैं। आप ठाकुर गोत्र के थे। आपने जैनाचार्य कनकसेन जी से प्रतिबोध पाकर जैनधर्म अंगीकार किया। इसी खानदान में आगे चलकर सींगल जी अजयपाल जी एवं आभाजी हुए जिन्होंने लाखों रूपए लगा कर शत्रुञ्जय, गिरनार आदि तीर्थों के संघ निकाले। इस परिवार में अजयपाल जी की भार्या लूणा दे सती हुई जिनका चबूतरा भीनमाल में तालाब के किनारे बना हुआ है। आभाजी हाथी दांत का व्यापार करते थे। वे सौदा करते वक्त बड़ी मरोड़ से बात करते थे। एक बार दो लाख का नुकसान सह कर भी दांत नहीं बेचे। इस कारण लोग उन्हें मरोड़िया कहने लगे। आगे चल कर इनका निवास भीनमाल हुआ एवं वहां से सं.१६३४ में इस खानदान के प्रसिद्ध पुरुष हीरा जी, राणाप्रताप एवं भामाशाह के आग्रह पर उदयपुर आकर बसें। उनके पुत्र बच्छराज जी ने यहां ८५ हजार की लागत से "बावन जिनालय" बनवाये। इन परिवारों ने अनेक मन्दिरों की प्रतिष्ठा करवाई। इसी खानदान के मुरड़िया अम्बाव जी प्रसिद्ध इन्जीनियर हुए। उदयपुर के सुप्रसिद्ध शम्भू निवास महल, शम्भू प्रकाश महल, जगन निवास आदि आपकी निगरानी में बने। सं.१९३६ में महाराणा ने आपको बेलाण घोड़ा का सम्मान बख्शा। महाराणा आपको अम्बाव राजा के नाम से सम्बोधित करते थे। इनके दत्तक पुत्र हीरालाल जी राज्य सेवारत रहे। इनकी देख-रेख में कुम्भलगढ़ के महल, उदयपुर का मिंटो हाल, सहेलियों की बाड़ी आदि सुन्दर भवन निर्मित हुए जिनमें लाखों रूपए खर्च हुए। राज्य की कई जीनिंग फैक्टरियां एवं तालाब भी आपकी निगरानी में निर्मित हुए। महाराणा ने सं. १९८९ में आपको बैठक का सम्मान बख्शा।

घलूण्डिया

ऐसा कहा जाता है कि राठौड़ वंशीय राजपूतों की घड़या शाखा में राजा चन्द्रसेन हुए। उन्होंने सं.७३५ में कन्नौज में भट्टारक शान्ति सूर्य जी से प्रतिबोध पाकर जैनधर्म अंगीकार किया। इसी वंश के शाह कल्लौजी ने गलूंड़ गांव में एक मन्दिर बनवाया— इससे वे गलूंड़िया कहलाने लगे।

शाह कल्लो जी के वंश में सूरोजी हुए। एक समय बादशाह ने मण्डोर के प्रधान समरोजी भन्डारी को कैद कर लिया तो सूरोजी ने बादशाह को १८ लाख रूपए दण्ड स्वरूप देकर समरोजी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

को छुड़वाया। आप सं. १६६७ में उदयपुर आए। इनके पौत्र ठाकुरसिंह जी को सं. १७४० में महाराणा जयसिंह ने सिरोपाव बख्शा एवं गांव जागीर में दिया। आपके पुत्र वर्धमान जी ने युद्ध में हाड़ा को मारा जिससे प्रभावित होकर महाराणा ने उन्हें सिरोपाव प्रदान किया। आपके पौत्र शिवलाल जी को महाराणा भीमसिंह ने प्रधान नियुक्त किया। आप बड़े पराक्रमी थे। आपके परिवार को राजा ने पांव में सोना बख्शा एवं सात गाँव जागीर में देकर सम्मानित किया।

उदयपुर के शाह हरिसिंह जी घलूण्डिया के खानदान का मूल निवास बेगूं (मेवाड़) था। वहां दिवानगिरी करते थे। शाह चम्पालाल जी बेगूं से कोठारिया आए। कोठारिया के ठाकुर ने आपका बहुत सम्मान किया एवं जागीर इनायत की। आपका परिवार ठिकानों की वकालत करता था। कोठारिया से यह परिवार उदयपुर आकर बसा। शाह मोड़ीलाल जी राज्य के प्रथम श्रेणी के हाकिम रहे।

पोकरणा

गाँव हरसौर के राठौड़ सकतसिंह एक बार परिवार सहित पुष्कर तीर्थ पर स्नान करने आए। वहां एक विधवा स्त्री अपने चार पुत्रों सहित नहा रही थी। इतने में "गोह" ने आ कर उस स्त्री के पावों में तंतु डाला। सकतसिंह उसे बचाने के लिए कूद पड़ा। उसे भी "गोह ने तंतु से खींच लिया।" उसी समय श्री जिनदत्त सूरि के शिष्य देवगणि उधर से निकले। उन्होंने जल निस्तारणी अमोघ विद्या का स्मरण किया। दोनों बच गए। इस चमत्कार से सकतसिंह बहुत प्रभावित हुआ। उसने अजमेर जाकर आ. जिनदत्त सूरि से जैनधर्म अंगीकार किया। उक्त घटना पुष्कर में घटने से उनका पुष्करणा गोत्र निर्धारित हुआ। वे कालान्तर में पोकरणा कहलाने लगे।

घेमावत

आचार्य बलभद्र द्वारा देशना पाकर सं. ९७३ में बीजापुर (गोडवाड) के पास हस्तीकुण्डी के राजा दिगवत राठौड़ ने जैनधर्म अंगीकार किया। इन्हीं के वंशज भांडाजी हुए जिन्होंने शत्रुञ्जय का संघ निकाला। भांडा जी के वंश में कई पीढ़ी बाद सं. १८०० में घेमा जी और ओटाजी ने बाली में पार्श्वनाथ का मन्दिर बनवाया। तभी से इनके वंशज घेमावत और ओटावत कहलाने लगे।

(५). "बोहरा" गोत्र

१. भीलड्या	५. पातावत
२. सिंघवी	६. कोठारी
३. नीबजिया	७. सालेचा
४. सिंघवी	८. अन्य

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बोहरा

सामान्यतः 'बोहरा' शब्द 'व्यवसायी' का पर्याय है। ये विश्व की प्रायः सभी जातियों में होते हैं। पारसियों में बोहरा शब्द एक गोत्र की भाँति ही व्यवहृत होता है। ओसवालों की उत्पत्ति क्षत्रियों से हुई है किन्तु अनेक वैश्य जातियाँ भी जैनधर्म अंगीकार कर इसकी मूल धारा में सम्मिलित हुई है।

भीलड्या

इसका प्रचीनतम उल्लेख जोधपुर के श्री कुंथुनाथ जी के मन्दिर में स्थित ग्रंथ भण्डार के हस्तलिखित गुटका न. ५/१०७ में मिलता है जिसके अनुसार संवत् ५३५ में भट्टारक श्री चन्द्र सूरि द्वारा प्रतिबोध पाकर 'भीलड्या बोहरा' से महाजन बने। गुटके में श्रेष्ठि आसधवल जी से उनकी बयालीस पीढ़ियों की विगत दी है जो इस प्रकार है—

१. आसधवलजी
२. पुनपालजी
३. बीजानन्द जी
४. कंवरपाल जी
५. जसपाल जी
६. देवीचन्द जी
७. राजपाल जी
८. कान जी
९. कीलाल जी
१०. रूपजी
११. गांगोजी
१२. सतीदास जी
१३. वीर जी
१४. आसराज जी
१५. धन जी
१६. माणक जी
१७. हरचन्द जी
१८. कौट जी
१९. चाहड़ जी
२०. आसचन्द जी
२१. सहसकरण जी
२२. दुलौजी
२३. पुनौजी
२४. रामणजी
२५. कौड़ोजी
२६. तवणचन्दजी
२७. दैदोजी
२८. चाहजी
२९. धरणौजी
३०. गुन्दोजी
३१. पुपचजी
३२. लाखौजी
३३. सोनोजी (संवत् १३६५)
३४. सीभर जी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

३५. सीधोजी
३६. पारसजी
३७. पदमोजी
३८. सुभोजी
३९. रीडमलजी
४० चुहड़मलजी
४१. रूपसिंहजी
४२. दौलतसिंहजी

सिंघवी

तैंतीसवीं पीढ़ी में हुए श्रेष्ठि सोनोजी बड़े प्रतापी हुए। उन्होंने संवत् १३६५ में गिरनार एवं शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए बृहद संघ समायोजन किया। संघ में २५०० बैल गाड़ियाँ, १५० घुड़सवार, ११०० महात्मा (मुनि) नगाड़ा जोड़ी ७ एवं तीस हजार यात्री थे। इस उपलक्ष में भट्टारक भावचन्द सूरि ने श्रेष्ठि सोनोजी को सिंघवी विरुद से विभूषित किया।

नीबजिया/सिंघवी

कालिन्द्री में बसे सेठ फूलचन्द हीराचन्द के खानदान का मूल निवास सिद्धपुर पाटन (गुजरात) था। पाटन से इनके पूर्वज सिरोही स्टेट के नीबज नामक स्थान पर आकर बसे। नीबज में सिरोही दरबार के छोटे भ्राता निवास करते थे। नीबज ठिकाने का सम्पूर्ण राजकाज इसी परिवार के सुपुर्द था। सदियों तक इस खानदान ने बड़ी ईमानदारी और बहादुरी से राज-काज संभाला। किसी कारण दरबार से अनबन हो गई और सारा परिवार नीबज छोड़कर कालिन्द्री आदि स्थानों पर जा बसा। इसीलिए वे नीबजिया कहलाते हैं। इस खानदान के सेठ फूलचन्द संवत् १९३३ में गोकाक पहुँचे एवं अपने अध्यवसाय के कारण मशहूर फारबस कम्पनी के सूत के एजेंट नियुक्त हुए। सूत की एजेंसी ने आपको खूब चमकाया। इन्होंने बम्बई आदि अन्य स्थानों पर भी दुकानें खोली। आप गोकाक म्युनिसिपलिटी के अनेक वर्षों तक मेम्बर चेयरमेन रहे। संवत् १९५६ के अकाल में जनता की अन्न-धन से खूब सहायता की। संवत् १९५९ में आपने कालिन्द्री के जैन मन्दिर में चार देहरियाँ बनवाई एवं चांदी का रथ भेंट किया। संवत् १९६३ में आपने शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ समायोजन किया जिसमें ८०० श्रावक शामिल हुए। इस उपलक्ष में समाज ने आपको सिंघवी पद से विभूषित किया। इन्होंने अपने पुत्र हीराचन्द की पाँच साल की उम्र में उनके वजन के बराबर १९ रतल केशर एवं एक सहस्र रुपये भी केशरिया नाथ जी के मन्दिर में चढ़ाए।

सेठ हीराचन्द अपने पिता की योग्य सन्तान थे। आपने सम्मेद शिखर तीर्थ की यात्रा की, शत्रुञ्जय तीर्थ में उपध्यान करवाया, अनेक जगह धर्मशालाऐं बनवाई। कालिन्द्री के जैन मन्दिर में भगवान् की चाँदी की अंगी व देवियों के लिए अंगिया बनवाकर भेंट की, केशरिया जी में चाँदी-सोने के इन्द्र बनवाए। सिरोही के राज दरबार में आपका बहुत सम्मान था। संवत् १९८८ में दरबार ने आपको 'सेठ' की उपाधि से विभूषित किया। संवत् १९८३ में आपको सिरोपाव, लवजमा एवं नगारा निशान बख्शा गया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पातावत/ कोठारी

आहोर निवासी पातावत खानदान की उत्पत्ति नवाणा (नन्दवाणा) बोहरा जाति से हुई, बतलाई जाती है। इनके पूर्वज ढ़ीलड़ी (भीलड़ी) गांव के बोहरा आसधवल जी थे। इनको जैनाचार्य श्री चन्द्रप्रभसूरि ने जैनधर्म अंगीकार करवाया। इनके खानदान के श्री कुंवरपाल जी नें संघ निकाला जिससे सिंघवी कहलाए। इनके खानदान के पूर्व पुरुष पाता जी के नाम पर इन्हें पातावत कहा जाता है। इस परिवार के लोग कोटा आदि स्थानों पर भी निवास करते हैं। इस खानदान के कल्याण जी आहोर ठिकाने में कोठार संभालते थे, इसलिए कोठारी कहलाए।

सालेचा

विक्रम संवत् १२१७ में आचार्य जिन चन्द्रसूरि द्वारा प्रबोध पाकर सालमसिंह दईया का परिवार जैन श्रावक बना। वे सालेचा कहलाए। एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार स्यालकोट में बोहरागत व्यवसाय करने से वे सालेचा बोहरा कहलाने लगे।

अन्य

बोहरा गत व्यवसाय करने से अनेक गोत्रों में बोहरा उपशाखा हुई है जैसे रत्नपुरा/कटारिया बोहरा, मीठड़िया बोहरा, काँधल बोहरा, ढ़ेलड़िया बोहरा, राखड़िया बोहरा आदि।

आगरा के सेठ अचलसिंह का परिवार बोहरा गोत्रीय है। आपके पूर्वज सेठ सवाईरामजी थे। कोई पुत्र न होने से आपने चोरड़िया परिवार के पीतमलजी को गोद लिया। इस समय तक खानदान साधारण स्थिति में था। पीतमल जी ने धौलपुर में फर्म खोली एवं अपनी व्यवसाय कुशलता से लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। धोलपुर दरबार ने आपको सेठ की पदवी से सम्मानित किया। आपके ज्येष्ठ पुत्र जसवंत सिंह जी २८ वर्ष तक आगरा म्यूनिसिपलिटी के सदस्य रहे। आप आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। आपको इमारतें बनवाने का बड़ा शौक था। पीतम मार्केट और जसवंत होस्टल आपका ही बनवाया हुआ है। सेठ पीतमलजी के कनिष्ठ पुत्र अचलसिंह जी बड़ी तीक्ष्ण बुद्धि वाले थे। आपका जीवन देश और समाज की सेवा में बीता। ये कांग्रेस कमिटी के पदाधिकारी थे। उत्तर प्रदेश की तात्कालीन राज्य कौंसिल में आप स्वराज्य पार्टी की ओर से सदस्य निर्वाचित हुए। ये स्त्री-शिक्षा एवं अन्य सामाजिक सुधारों के लिए सदा प्रयत्नशील रहे। इनके जीवन प्रसंग ग्रंथ में अन्यत्र दिए जा रहे हैं।

लोणार के सेठ बुधमल कालूराम बोहरा के खानदान का पूर्व निवास बड़ था। १५० वर्ष पूर्व यह खानदान लोणार आकर बसा। सेठ बुधमलजी स्थानीय जैन मन्दिर के निर्माण में अग्रणी थे। आपके पुत्र कालूराम जी ने पंच पंचायती में बहुत इज्जत पाई। संवत् १९७९ में बड़ ठाकुर साहब ने आपको 'सेठ' की पदवी दी। ये सर्राफा, बैंकिंग एवं कृषि व्यवसाय में रत हैं।

विल्लीपुरम (मद्रास) का सेठ पेमराज गणपतराज बोहरा के कुटुम्ब का पूर्व निवास जेतारण के पास पीपरिया ग्राम था। बोहरा पेमराजजी संवत् १९७३ में विल्लीपुरम आए और व्याज

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

का धन्धा शुरू किया। आप सुधरे हुए विचारों के धर्मप्रेमी सज्जन थे। प्रेमाश्रम पिपलिया में आपने बड़ी सहायता दी।

बम्बई के सेठ रघुनाथमल रिधकरण बोहरा के खानदान का पूर्व निवास जोधां की पालड़ी (नागौर) था। सेठ रघुनाथमलजी (रतनंपुरा-बोहरा) कुचेरा होते हुए जोधपुर आए। आपके पुत्र रिधकरणजी संवत् १९४४ में हैदराबाद गए और वहाँ से बम्बई आए। आपने आढ़त के काम में खूब उन्नति की। आप १४ सालों तक नेटिव मर्चेंट्स एशोसिएशन के मंत्री रहे।

अजमेर के श्री मूलचन्द जी बोहरा ने 'ओसवाल जाति की उन्नत्ति' विषयक लेख पर प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था।

घोड़ नदी (पूना) के सेठ मेघराज जी के खानदान का मूल निवास बराथड़ (खींवसर) था। व्यापार निमित्त आकर घोड़नदी में आपने किराने की दूकान की। फौज के रिसालों में लेन-देन का काम भी होता था। इसी वंश के सेठ ताराचन्द बोहरा की अगवानी से यहाँ पार्श्वनाथ मंदिर का निर्माण हुआ।

अनेक शिलालेखों में बोहरा लिखा होने से इनके मूल गोत्र का पता नहीं चलता। इस गोत्र के शिलालेख कलकत्ता, दिल्ली, अजमेर, बालोतरा, मेड़ता, लखनऊ, जैसलमेर, मालपुरा, जूनिया, सांगानेर, गोविन्दगढ़, जयपुर, नागौर, बीकानेर, हनुमानगढ़, अमरावती, थराद, बीसनगर पेथापुर आदि अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं।

(६) पड़िहार राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. चोपड़ा
२. कुकड़ चोपड़ा
३. चींपड़
४. सांड
५. सियाल
६. कोठारी
७. हाकीम
८. बूबकिया
९. धूपिया
१०. बडेर
११. जोगिया
१२. गणधर चोपड़ा
१३. गाँधी
१४. मोदी
१५. मंत्री (महेश्वरी)
१६. कोठारी
१७. ऋषभ कोठारी
१८. कांकरिया
१९. बन्दा मेहता

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चोपड़ा/कूकड़/गणधर/परिहार/गांधी/सियाल/सांड/चींपड़

इस गोत्र की उत्पत्ति मंडोर के परिहार राजपूतों से मानी जाती है। किंवदन्ती है कि मंडोर के परिहार राजा नाहड़राव की कोई संतान न थी। वि. संवत्. ११५६ में जैनाचार्य जिनबल्लभ सूरि वहां पधारे। राजा ने अपना दुःख गुरुदेव से प्रकट किया। आचार्य ने अपना वासचूर्ण उन पति-पत्नि के सिर पर डाल कर चार पुत्र होने का आर्शीवाद दिया। पुत्र हुए परन्तु राजा ने जैनधर्म अंगीकार नहीं किया। थोड़े समय पश्चात् नाहड़राव का पुत्र कुक्कड़देव साँप का विष खा लेने से रोग ग्रसित हो गया। राजा के चतुर दीवान गुणधर जी ('ओंसवाल वंश' के अनुसार-कायस्थ-माथुर) ने जैनाचार्य के साथ किए धोखे को इसका कारण बताया। तब राजा ने आग्रहपूर्वक जैनाचार्य जिनदत्तसूरि को सोजत से मंडोवर बुलाया। जैनाचार्य ने कुक्कड़देव के शरीर पर मक्खन चुपड़ने की राय दी। इससे कुक्कड़ देव को लाभ हुआ। वि. संवत्. ११६९ में आचार्य ने राजा के समस्त परिवार को महाजन वंश में सम्मिलित किया और उनके चोपड़ा, कुक्कड़ चोपड़ा, गणधर चोपड़ा, आदि विभिन्न गोत्र स्थापित किए। कालांतर में इस गोत्र की अनेक शाखायें हुई। इन शाखा गोत्रों की उत्पत्ति की विभिन्न कथाएँ भाटों एवं यतियों द्वारा कही जाती हैं। नाहड़राव के पश्चात् उनकी पीढ़ी में दीपचन्द जी हुए जिन्होंने आ. जिन कुशलसूरि के उपदेश से ओंसवाल समाज में अपने परिवार के विवाह सम्बन्ध स्थापित किये।

यति श्रीपालचन्द्र जी (जैन सम्प्रदाय शिक्षा) के अनुसार संवत् ११५२ में आचार्य श्री जिनवल्लभ सूरि मण्डोर पधारे। उस समय मंडोर के राजा नानूदे पड़िहार का पुत्र धवलचन्द कुष्ट रोग से महादुःखी था। राजा की प्रार्थना पर गुरु जी ने कुकड़ी गाय का घी मंत्रित कर रोगी के शरीर में चुपडवाया। इससे धवलचन्द स्वस्थ हो गया। राजा ने महाजन वंश में शामिल हो जैनधर्म अंगीकार किया एवं उनका कुकड़ चोपड़ा गोत्र निर्धारित हुआ एवं उनके मंत्री का गणधर चोपड़ा गोत्र बना।

यति रामलाल जी के अनुसार ग्राम का नाम मंदोदर और राजा का नाम नानूदे पडिहार था। संवत्. ११७६ में श्री जिन बल्लभ सूरि वहाँ पधारे। अपनी निःसंतान होने की व्यथा राजा ने कही तब सूरि जी ने पहली संतान को दीक्षित करा देने की शर्त से संतान का वरदान दिया। चार संतानें हुई परन्तु राजा ने पहली संतान धर्मार्पण नहीं की। कर्मवशात् बड़े पुत्र कुकड़देव के साँप की गरल खाने में आ गई और शरीर में विष फैल गया। तब दीवान गुणधर जी हंसारिया कायस्थ के कहने से राजा ने आ. जिनवल्लभ सूरि जी के पट्टधर जिनदत्त सूरि जी से माफी मांगी। सूरि जी के कहने पर घावों पर कूकड़ी गाय का मक्खन चोपड़ा गया— लाभ हुआ और नानू दे जैनी बन गया। इससे उनका चोपड़ा/कूकड़ चोपड़ा और दीवान का गणधर चोपड़ा गोत्र हुआ। राजा के अन्य पुत्रों के नाम पर चींपड़, सांड, सियाल गोत्र बने।

कायस्थ दीवान गुणधर जी हंसारिया के गणधर चोपड़ा कुल में कालांतर में गंधी पेशा अपनाने से इन्हीं में गांधी शाखा उत्पन्न हुई। जालोर में बसे मोदी खानदान का मूल गोत्र गणधर चोपड़ा है। जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह पर विपत्ति पड़ी और जब वे पहाड़ों में भटक रहे

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

थे तो इसी खानदान के श्रेष्ठियों ने उनके भोजन आदि की व्यवस्था कर सहायता पहुँचाई थी। इसीलिए महाराजा ने इन्हें वंश परम्परागत 'मोदी' की उपाधि देकर सम्मानित किया।

नानू दे की ५वीं पीढ़ी में दीपचन्दजी (दीपसी) हुए। इसी समय से ओसवालों के साथ इस कुल के विवाह सम्बंध शुरू हुए। दीपचन्द जी की ११वीं पीढ़ी में सोनपाल जी हुए जिन्होंने शत्रुञ्जय का संघ निकाला एवं लाखों रूपए धर्म-कार्यों में खर्च किए। सोनपाल जी के पौत्र ठाकुरसी जी बड़े शूरवीर एवं बुद्धिमान थे। राव चूंड़ा जी राठौड़ ने अपने कोठार का काम उनके सुपुर्द किया अतः ठाकुरसी जी का खानदान कालान्तर में कोठारी कहलाया। राव बीका जी के समय उन्हें हाकिमी दी गई— जिससे बाद में हाकम-कोठारी कहलाने लग। इस तरह इनकी १२ शाखायें मानी जाती हैं— कूकड़, कोठारी, हाकिम कोठारी, चोंपड़ा, मोदी, सांड, बूबकिया, धूपिया, जोगिया, बडेर, गणधर और गांधी— जिनका भाईपा कहा जाता है।

नाहर ग्रंथागार में उपलब्ध हस्तलिखित गुटका "अथ महाजनां री जाता रौ छंद-मथेन (महतियाण) अमीचन्द रौ कयौ" (संवत् १९४० में गोरधन व्यास लिखित) के अनुसार इस जाति की उत्पत्ति पड़िहार राजपूतों से हुई। पडिहारों के पूर्वजों का सम्बंध ब्रह्मा- स्वयंभू-मरीच-कुहक-सींगीं रिसी- भागीरथ-सगर-वेणचक और बच्छराज से जोड़ा गया है। मंडोवर के पड़िहार सामंत नाहड़राव के पौत्र धवलचन्द का शरीर कोढ़ग्रस्त था। उन्हीं दिनों आ. जिन बल्लभ सूरि जी वहां पधारे। उन्हें करामाती संत जान कर नाहड़राव ने पौत्र को रोगमुक्त करने की विनती की। सूरि जी की आज्ञानुसार रोगी के शरीर पर कूकड़वर्णी गाय के दूध का मक्खन निकाल कर चुपड़ा गया जिससे रोग का शमन हुआ। वि. संवत्. ११११२ में सूरि जी ने उन्हें महाजन वंश में सम्मिलित किया— उनका गोत्र कूकड़ चोपड़ा कहलाया। राजा धवलचन्द के पुत्र चित्रांगद हुए— उनके पुत्र राघव जी एवं राघवजी के पुत्र दीपचन्द हुए। दीपचन्द में पागलपन के लक्षण थे। संवत् ११७० में आचार्य जिनदत्त सूरि के प्रताप से वे रोग मुक्त हुए। इस तरह राघवजी के वंशज जैन धर्मानुरागी रहे।

केशरिया नाथ जी के मंदिर स्थित ग्रंथागार में उपलब्ध हस्तलिखित गुटका नं. २२ 'ओसवालों' के गोत्रों की उत्पत्ति से भी इस गोत्र की उक्त उत्पत्ति कथा की पुष्टि होती है। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर के ग्रंथ भंडार में भी संवत् १९१३ में लिपिबद्ध एक वृहद् हस्तलिखित ग्रंथ 'इतिहास-ओसवंश' (क्रमांक २७० ३३) उपलब्ध है जिसमें उपरोक्त कथा में सचिया माता के आराधन एवं देवी द्वारा वरदान स्वरूप उक्त औषध के प्रयोग करने की बात जोड़ दी गई है। इस तरह गुरु एवं देवी-दोनों की महिमा का संयुक्त बखान है।

चोपड़ा परिवार ने समय-समय पर मंदिरों का निर्माण करवाया एवं शास्त्र भंडार स्थापित कराये— अनेक शिलालेखों में इस तरह के उल्लेख मिलते हैं। संवत्. १४९४ में जैसलमेर में संभवनाथ जी का मंदिर चोपड़ा वंशी साह हेमराज आदि श्रेष्ठियों का ही बनवाया हुआ है। इसमें ६०४ मूर्तियां हैं। इसके भूमि गृह में वृहद् ताड़पत्रीय ग्रन्थ भंडार है जिसकी सूचि

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बड़ौदा सेन्ट्रल लाइब्रेरी ने प्रकाशित करवाई हैं। जैसलमेर के अष्टापद जी के मंदिर का निर्माण चोपड़ा साह पांचा ने संवत्. १५३६ में कराया। इसमें ४४४ प्रतिमाएं हैं।

गंगाशहर के चोपड़ा परिवार का गोत्र कुकड़-चोपड़ा है। इनके पूर्वज मारवाड़ से दुस्सारण आकर बसे। वहां से संवत्. १८०० के करीब सेठ अमीचन्द जी गुसाईसर आकर बसे। उनके पौत्र सेठ मेघराज जी गंगाशहर आकर बसे। इनके पुत्र सेठ भैरूदान जी बहुत प्रतिभा सम्पन्न थे। आप सिराजगंज गए और वहां बंगाल की मशहूर फर्म हरिसिंह निहालचन्द में संवत् १९५३ में मुनीम बन गए। यहीं से आपके भाग्य ने पलटा खाया, जोरो से तरक्की की और अन्ततः संवत्. १९६० में फर्म में साझेदार बन गए। आपने रंगपुर के जूट केन्द्रों में भैरूदान ईसरचन्द नाम से अपना स्वतंत्र व्यवसाय भी कायम किया। आप बड़े निरभिमानी और धार्मिक वृति के थे। इनके भ्राता सेठ ईसरचन्द जी भी बड़े प्रतिभा सम्पन्न थे। वे भी हरिसिंह निहाल चन्द में सेवारत रहे। सारे व्यापार का संचालन आपके ही हाथों में था। आप भी बड़े उदार चित्त थे। बीकानेर दरबार से आपको रुक्का प्रदान किया गया। इस परिवार ने अनेक स्थानों पर जमीदारी एवं व्यापार शाखाएं कायम की। सार्वजनिक एवं धार्मिक कार्यों में भी इस परिवार का बहुत सहयोग रहा है।

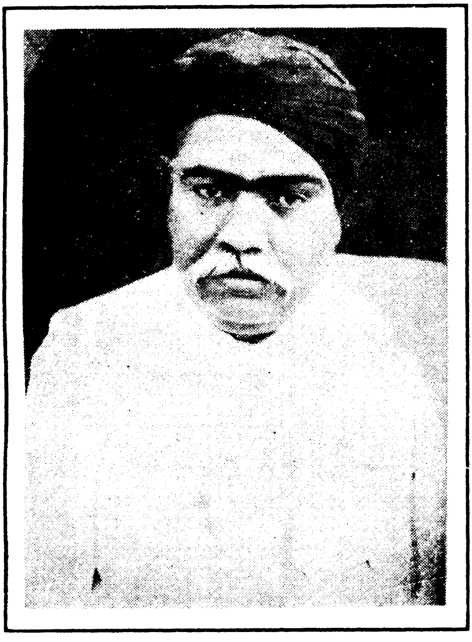

श्री. सेठ भैरोंदानजी चौपड़ा, गंगाशहर

गंगाशहर के राजरूप जी चोपड़ा के खानदान का मूल निवास मण्डोवर था। संवत् १९६७ में श्री छोगमल जी चोपड़ा यहां आकर बसे। ये ओसवाल समाज के नामी वकील थे एवं अनेक संस्थाओं के सभापति-मंत्री रहे। आप समाज-भूषण की उपाधि से विभूषित किए गए। आपके सुपुत्र गोपीचन्द जी उच्चकोटि के विद्वान् एवं समाजसेवी थे। लाड़नूं की जैन विश्व भारती के संस्थापन में आपका पूरा योगदान रहा।

गंगाशहर के सेठ पूरनचन्द छगनमल चोपड़ा का खानदान भी संवत् १९६३ से १९९० तक मेसर्स हरिसिंह निहालचन्द के साझे में व्यवसाय रत रहा। संवत् १९७१ में इन्होंने कलकत्ते में अपना स्वतंत्र व्यवसाय आसकरण लूणकरण नाम से प्रारम्भ किया। जूट बेलिंग-शिपिंग एवं खरीद फरोख्त में इन्हें अपार सफलता मिली। गंगानगर में इस परिवार की जमींदारियाँ है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रामनगर ग्राम तो इसी फर्म की जमीन पर बसा हुआ है। इस परिवार से अनेक सार्वजनिक कार्यों में उदारता से सहयोग दिया— हिन्दू युनिवर्सिटी बनारस को बीस हजार की राशि प्रदान की एवं गुसाईसर में एक कुंआ बनवाया।

रायपुर के सेठ बालचन्द रामलाल चोपड़ा का खानदान कुकड़ चोपड़ा गोत्र का है। इनके पूर्वज संतरावा रहते थे— वहाँ से लोहावट आकर बसे। सेठ गेंदमल २०० वर्ष पूर्व नागपुर आए। धीरे-धीरे छत्तीसगढ़ प्रांत में इनकी फर्म रघुनाथदास बालचन्द नामी फर्म मानी जाने लगी एवं कलकत्ता, बम्बई आदि अनेक स्थानों में फैल गई। इनके सहयोग से लोहावट, खिंचंद, फलौदी आदि गाँवों के अनेक परिवार मध्य प्रदेश में आकर बसे। इस परिवार ने संवत् १९५७ में लोहावट में चन्द्रप्रभु का एक मंदिर और धर्मशाला बनवाई। इसी परिवार के सेठ रामलालजी बड़े दयालु और धर्मात्मा थे। आपने राजनंद गाँव में पिंजरापोल स्थापित की। इसी खानदान के सेठ आसकरण जी ने व्याबर गुरुकुल को आर्थिक सहायता दी एवं लोहावट में कन्या पाठशाला एवं डिस्पेंसरी खुलवाई।

मजीठा (पंजाब) के डा. रामजीदास चोपड़ा का खानदान लाला काकूशाह के वंशज हैं। इनके पौत्र लाला रामजीदास ने संवत् १९५२ में डाक्टरी पास की थी एवं मेयो होस्पिटल, अजमेर में हाउस सर्जन नियुक्त हुए। संवत् १९८० में भारत सरकार ने आपको राय साहब की पदवी से सम्मानित किया। आप संवत् १९९० तक डंडलोद के ठाकुर साहब के कुमारों के गार्जियन रहे। कालांतर में मजीठा में अपनी डिस्पेंसरी खोल ली एवं जनता में खूब लोक-प्रिय हुए।

सुजानगढ़ का चोपड़ा खानदान मूलतः बीकानेर के निवासी थे। वहाँ से आसोप आकर बसे। संवत् १९०० के लगभग इस वंश के सेठ पूनमचन्द जी डीडवाना आए। वे राज्य में सेवा रत रहे। वहां से यह खानदान सुजानगढ़ आकर बसा। इस खानदान के सेठ घेवरचन्द जी बड़े प्रतिभाशाली थे। आपने संवत् १९३५ में ग्वालंदो में जूट का व्यवसाय शुरू किया जिसमें आपको अपार सफलता मिली। संवत्. १९६३ में कलकत्ता में फर्म स्थापित की एवं जल्दी ही आपकी गिनती लखपतियों में होने लगी। आप धार्मिक कार्यों में भी रुचि रखते थे। इनके पुत्र सेठ दानचन्द जी ओसवाल समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति माने जाते थे। उन्होंने ग्वालंदो में अस्पताल का निर्माण करवाया। तात्कालीन भारत सरकार ने ग्वालंदो स्टेशन का नाम 'घेवर बाजार" रख कर इस परिवार को सम्मानित किया। बीकानेर दरबार ने आपको आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किया था। सुजानगढ़ में आपने निजी पुस्तकालय बनवाया।

जोधपुर का चोपड़ा खानदान गणधर चोपड़ा गोत्र का है। इन्हें राज्य की ओर से "मोदी" की उपाधि मिली अतः ये "मोदी" नाम से ही प्रसिद्ध है। इस खानदान के पूर्व पुरुष पीथा जी ने जोधपुर के महाराजा अजित सिंह की संकट के समय अन्न-धन से बहुत मदद की थी। संवत्. १७६३ में महाराजा ने गद्दीनसीन होकर आपका बड़ा सत्कार किया एवं मोदी की उपाधि प्रदान की। सरकार ने "आण जठे थांकों डाण" कहकर आपको सायर महसूल की माफी दी।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पीथा जी के पौत्र मोदी मालचन्द जी संवत् १८७२ में राज्य के दीवान सिंघवी इन्द्रराज जी के साथ मीरखां के सिपाहियों द्वारा घायल हुए थे। इनके परिवार के अनेक योद्धा राज्य के लिए युद्ध करते हुए खेत रहे। इनके पुत्र मोदी इन्द्रनाथ जी राजस्थान हाई कोर्ट के जज और अन्ततः चीफ जज बने। यह परिवार ओसवाल समाज में बड़ी प्रतिष्ठा रखता है।

चोपड़ा खानदान के अनेक परिवार रायपुर, नागपुर, महाराजगंज, राजनन्द गांव, कलकत्ता, बम्बई मजीठा (पंजाब) आदि नगरों में निवास करते हैं।

इस गोत्र के श्रेष्ठियों के सर्वाधिक शिलालेख मिलते हैं। अनेक शिलालेख जोधपुर, मेड़ता, चेलपुर, जैसलमेर, पाली, लखनऊ, जयपुर, बूँदी, रतलाम, बीकानेर, तारानगर, लूण करणसर, कालू, उदरामसर, बम्बई, पाली, बीजापुर, बड़नगर, अहमदाबाद, खंभात आदि स्थानों पर प्राप्त हुए हैं जो प्रायः १५वीं से १७वीं शताब्दी के बीच के हैं।

सांड

सांड उपगोत्र में एक आध्यात्म योगी हुए जिनका नाम ज्ञान सागर था। जांगलू प्रदेश के जंगलेवास ग्राम में संवत् १८०१ में श्री उदयचन्द जी सांड के घर इनका जन्म हुआ। इन्होंने खरतर गच्छीय मुनि रत्नराज जी से दीक्षा संवत् १८१२ में ग्रहण की। ये बड़े मस्त फकीर थे। बीकानेर, जयपुर, जैसलमेर आदि के राजघराने इनके भक्त थे। ये "नारायणी बाबा" के नाम से प्रसिद्ध थे। वैद्यक व बाजीकरण पर राजस्थानी में लिखे इनके ग्रंथ बहुत लोकप्रिय हुए। संवत् १८९९ में इनका स्वर्गवास हुआ।

मंत्री (महेश्वरी)

ओसवालों के अनेक गोत्र महेश्वरी परिवार के जैनधर्म अंगीकार कर लेने से बने हैं। परन्तु मध्यकाल में किसी ओसवाल श्रेष्ठि द्वारा जैनधर्म छोड़ कर वैष्णव धर्म अंगीकार कर लेने एवं महेश्वरी कुल में शामिल होने के उदाहरण कम हैं। श्री शिवकरण रामरतन दरक ने अपने ग्रंथ 'इतिहास कल्पद्रुम' (विक्रम संवत् १८९२ में प्रकाशित) में ओसवाल 'चोपड़ा' गोत्र से बने महेश्वरी 'मंत्री' गोत्र का विस्तार से वर्णन किया है। दरक जी के अनुसार संवत् ४२५ में महेश्वरी श्रेष्ठि राठी गोत्रीय साह चोथजी ने ओसिया नगर में एक विराट वैश्य यज्ञ का आयोजन किया। इस उत्सव पर उन्होंने अपने मित्र मारवाड़ के रहण ग्राम निवासी चोपड़ा गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठि श्री धर्मपाल को भी आमंत्रित किया। धर्मपाल जी उस यज्ञ समायोजन की भव्यता और भोजन में स्वच्छता देख कर बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने तत्काल अपने मित्र से महेश्वरी कुल में प्रविष्ठ होने एवं वैष्णव धर्म अंगीकार करने की आकांक्षा प्रकट की। पंचायत बैठी और उन्होंने सहर्ष वैष्णव धर्म अंगीकार कर लिया। इस तरह मित्रों के मिलने से बने नये 'मंत्री' गोत्र की स्थापना हुई।

कोठारी (चोपड़ा)

मंडोर के परिहार राजा नाहरदेव की संतानों से संवत् ११५६ में चोपड़ा गोत्र व अन्य गोत्रों की उत्पत्ति हुई। नाहरदेव से कई पीढ़ियों बाद इस बंश में सोनपाल जी हुए जिनके पौत्र

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ठाकुरसी जी बड़े प्रतापी और बुद्धिमान थे। वे राव चुंडा जी के यहां कोठार (खजाने) का काम देखते थे, इसलिए कालांतर में कोठारी कहलाए। इस खानदान के कुछ लोग बीकानेर और कुछ नागौर जाकर बस गए। नागौर खानदान में सावंतराम जी और गंगारामजी दो भाई हुए। सावं-तराम जी अजमेर में व्यापार करने लगे। गंगाराम जी के इन्दौर जाकर होल्कर सरकार की सेवा रहने का अंग्रेज इतिहासकारों ने वर्णन किया है। आपको छत्र, चवँर आदि सम्मान प्राप्त थे।

सावंतराम जी के पुत्र भवानीराम जी भी होल्कर दरबार की खिदमत में रहने लगे। उन्हें सन् १८३१ में रामपुरा जिले का जिम्मा दिया गया एवं सारे जिले में अमन कर देने के उपलक्ष में पालकी बख्शी गई। उनके पुत्र शिवचन्द जी बड़े प्रतापी हुए। वे सन् १८४३ में भानपुरा जिले के प्रबन्धक नियुक्त हुए। उनकी सुचारु सेवा के उपलक्ष में सरकार ने उन्हें खिल्लत बख्शी। सन् १८५७ के गदर में आपने उस इलाके में बागियों के पाँव नहीं जमने दिये। इनके वंशज होल्कर राज्य के खजांची, कौसिंल के मेम्बर, दीवान आदि अनेक पदो पर कार्यरत रहे। इस परिवार के कोठारी हीराचन्द जी इन्दौर राज्य के दीवान रहे। वे होल्कर दरबार की कौंसिल के सदस्य भी थे। सन् १९१४ में आप अंग्रेज सरकार द्वारा राय बहादुर के खिताब से सम्मानित किये गए। होल्कर सरकार ने आपको मुन्तजिम-ए-खास की पदवी दी।

ब्यावर के "कुन्दनमल लालचन्द" फर्म के सेठ कुन्दनमल जी ने संवत् १९३४ में यहाँ ऊन का व्यवसाय प्रारम्भ किया। वे बड़े कुशल व्यापारी थे। उन्होंने विलायत से संवत् १९७७ में व्यापार सम्बन्ध स्थापित कर खूब सम्पत्ति अर्जित की। उन्हें सरकार ने राय साहब की पदवी दी। वे आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। "महालक्ष्मी मिल" की स्थापना कर आपने शेयरों का समस्त मुनाफा शुभ कार्यों में लगाने का संकल्प किया। मिल में चर्बी का व्यवहार बन्द कर दिया एवं ऊन उद्योग में कई तकनीकी सुधार किए। संवत् १९८४ में सरकार ने उन्हें रायबहादुर की पदवी से सम्मानित किया। आपने लाखों रूपए दान में दिए, धर्मशाला एवं औषधालय का निर्माण कराया। संवत् १९८७ में आपका देहांत हुआ। आपकी स्मृति में आप द्वारा निर्मित भव्य एवं विशाल 'कुन्दन भवन' सार्वजनिक कार्यों के लिए प्रदान कर दिया गया।

बीकानेर में बसे कोठारी परिवार के लोगों ने व्यापार में अच्छी उन्नति की। इसी परिवार के कोठारी करमचन्द जी १५० वर्ष पूर्व धार गए। धार से भानपुरा एवं सम्वत् १९३४ में कोठारी नेमीचन्द जी भोपाल जाकर बस गए। इस परिवार ने धार, इन्दौर, भोपाल, आदि केन्द्रों में भी अपनी दुकाने खोली। इस परिवार के अनेक लोग बीकानेर राज्य में सेवारत रहे। सेठ भैरूदान ने कलकत्ते में रावतमल भैरूदान फर्म की स्थापना की और लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। आपने हजारों रूपये दान में दिए। आपके पास सोने-चांदी की कलामय वस्तुओं का बहुमूल्य संग्रह था। बीकानेर स्थित आपका मकान दर्शनीय है। मकान के किवाड़ों की एक जोड़ी जो दो साल तक दो कारीगरों के परिश्रम एवं शिल्प कौशल से तैयार हुई थी, देखते ही बनती है। इनके पूर्वज हाकिम के ओहदे पर थे, अतः उनके परिवार को हाकिम कोठारी भी कहते हैं एवं अन्य शाह कोठारी कहलाते हैं। बीकानेर के कोठारी खानदान के सेठ प्रेमसुखदास संवत् १९४४

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में रंगून गए एवं वहां 'प्रेम सुखदास पूनमचन्द' फर्म स्थापित की। सेठ पूनमचन्द रंगून चेम्बर आफ कामर्स के पंच थे। आप बीकानेर के आनरेरी मजिस्ट्रेट मनोनीत हुए।

इसी कुल के मुर्शिदाबाद के सेठ महासिंह राय मेघराज बहादुर के खानदान के पूर्वज जैसलमेर— जोधपुर राज्यों के दीवानगी पद पर रह चुके हैं। संवत् १८१८ में ग्वालपाड़ा, गोहाटी, तेजपुर आदि जगहों पर इस खानदान ने बैंकिंग, रबर व चाय बगानों में रसद देने का काम आरम्भ किया। सेठ मेघराज जी बड़े चतुर पुरुष थे। आपकी गजशाला में पाँच-पाँच हाथी रहते थे। ये कस्तूरी के नामी व्यापारी थे। सन् १९२४ में आपको भारत सरकार ने राय साहब का खिताब दिया। आपके पौत्र फतेह चन्द जी सेवाभावी थे— निःशुल्क दवा वितरण करते थे।

इनका परिवार भारत के अनेक नगरों में जमींदारी, जूट व बैंकिंग व्यवसाय में रत हैं।

ऋषभ कोठारी (रणधीरोत)

विक्रम संवत् १००१ में मथुरा के राजा पांडुसेन (मेड़त्या राठौड़) राज्य करते थे। भट्टारक धनेश्वर सूरि ने प्रतिबोध देकर उन्हें जैन धर्मावलम्बी बनाया। राजा ने नेणखेड़ा गांव में ऋषभ देव का विशाल मन्दिर बनवाया। इससे उनका ऋषभ गोत्र निर्धारित कर उनका परिवार ओसवाल वंश में शामिल किया गया। इन्होंने जगह-जगह कोठार बनवाने शुरू किये— इससे कोठारी कहलाए। कालांतर में २४/२५ पुश्त बाद इनके वंशज रणधीर जी बड़े प्रतापी हुए— उनके वंशज रणधीरोत कोठारी कहलाने लगे। रणधीरजी का मेवाड़ एवं मारवाड़ के राजघराने में बड़ा सम्मान था। रियासत की बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियाँ इनके सुपुर्द थीं। मुगल दरबार में भी आपकी पहुँच थी। इनका खानदान उदयपुर राज्य की सेवा में रत है। कहते हैं, रणधीर जी की १३वीं पीढ़ी में कोठारी चोलाजी हुए जिनके पुत्र मांडण जी राठोड़ केया जी की बेटी के साथ जो वि. संवत् १६१३ में महाराणा उदयसिंह को ब्याही थी, दहेज में आए थे। तभी से इनके वंशज मेवांड़ मे रहने लगे। इनके वंशजों को सिरोपाव सोना आदि प्रदान किए गए।

इसी गोत्र के श्रेष्ठि तोलाशाह और कर्माशाह अनेक वर्षों तक उदयपुर राज्य के प्रधान रहे। इन्हीं के वंशजों में कोठारी भीमसी जी हुए जो वीर शिरोमणि थे। मेवाड़ के महाराणा संग्राम सिंह जी (द्वितीय) इन्हें भाई के समान मानते थे। इन्होंने राज्य के लिए अपना बलिदान दिया। इसी परिवार में कोठारी छगनलाल जी बड़े प्रतिभा सम्पन्न हुए। वे अनेक स्थानों के हाकिम रहे। सन् १९३२ में भारत सरकार ने आपको "राय" की पदवी से सम्मानित किया एवं महाराणा ने सिरोपाव, सोना व बाग-बगीचा बख्शा। आपके दत्तक पुत्र मोतीसिंह जी भी हाकिम नियुक्त हुए एवं दलपतसिंह जी सिरोही राज्य के मुख्यमंत्री बने। अंग्रेज सरकार ने उन्हें फौज में लेफ्टिनेंट का कमीशन बख्शा। इसी खानदान के कोठारी केशरी सिंह जी उदयपुर के दीवान बने। इनके दत्तक पुत्र बलवंत सिंह जी संवत् १९२८ में देवस्थान के हाकिम नियुक्त हुए। महाराणा फतेहसिंह जी ने उन्हें महद्राज सभा (हाई-कोर्ट) का सदस्य बनाया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मसदे के कोठारी परिवारों का सम्बन्ध भी इसी वंश से है। वे मेडता राज की सेवा में रहे और अब विभिन्न स्थानों पर निवास करते हैं। इसी वंश के कोठारी जालिमसिंह जी बांसवाड़ा स्टेट के दीवान भी रह चुके हैं।

कामठी के सेठ उदयराज हीरालाल कोठारी के खानदान का मूल निवास डीडवाणा के पास दौलतपुरा था। ये रणधीरोत गोत्र के हैं। इस खानदान में सेठ गुलराज जी दौलतपुरा से सवासौ वर्ष पूर्व व्यापार के निमित्त कामठी आकर बसे। इस परिवार के सेठ हीरालाल जी ने सार्वजनिक हित के कार्यों में खूब दिलचस्पी ली। वे श्वेताम्बर तेरापंथी सम्प्रदाय का होते हुए भी सनातनधर्मी सभा के उप सभापति चुने गए— यह आपकी धार्मिक सहिष्णुता का परिचायक है।

रेंठी (भोपाल) के सेठ मिश्रीमल सुगनचन्द के खानदान का मूल निवास मेड़ता था। इनके पूर्वज सेठ उम्मेदमल जी व्यवसाय निमित्त रेंठी आकर बसे। इस खानदान के सेठ मिश्रीमल जी को भोपाल के नवाब ने राय का खिताब इनायत किया। रियासत की तरफ से आपको जागीर बख्शी गई। सन् १९३५ में किसी सिरफिरे ने आपका खून कर दिया। भोपाल के नवाब मातमपुर्सी के लिए आपके घर पधारे।

रणधीरोत कोठारी (रवींचिया) परिवार के अनेक लोग घणेराव एवं शिवगंज निवास करते हैं एवं भारत के विभिन्न नगरों में कारोबार करते हैं। यवतमाल के कोठारी परिवार भी इसी वंश से हैं।

चुरू (राजस्थान) का कोठारी परिवार पहले बीकानेर निवास करता था। करीब ३५० वर्ष पहले वे चुरू आकर बसे। ब्रिटिश सरकार से इस परिवार को सर्टिफिकेट आफ आनर मिल चुका है एवं राज्य सरकार से सिरोपाव एवं कुर्सी का सम्मान मिल चुका है। इस खानदान के पूर्व पुरुष सेठ कुशलचन्द जी ने राज्य सेवा में वीरता और साहस का प्रदर्शन किया एवं दरबार ने प्रसन्न होकर आपको नोहर गाँव जागीर में दिया। इस परिवार का ईस्ट इंडिया कम्पनी से व्यापारिक सम्बंध था। सेठ लाभचन्द जी ने गदर के समय अनेक अंग्रेजों की जान बचाई थी। आपके पुत्र केसरीचन्द जी कुशल व्यापारी थे। उन्होंने वारफंड के लिए लाखों रूपए एकत्रित करवाए। भारत सरकार ने आपको सर्टीफिकेट आफ ऑनर प्रदान किया। आपने सन् १९२१ की मर्दुमशुमारी में तेरापंथी सम्प्रदाय की पृथक गणना के लिए अथक प्रयास किया। आपको राज्य सरकार से सिरोपाव एवं कुर्सी का सम्मान प्राप्त हैं। उदयपुर एवं सिरोही दरबारों ने भी आपको सिरोपाव का सम्मान दिया। चुरू के सेठ हजारीमल जी कोठारी बड़े प्रतिष्ठित एवं व्यापार कुशल थे। इस परिवार के सेठ मालचन्द जी बीकानेर स्टेट एसेम्बली के सदस्य थे। दरबार ने आपको सम्मान बख्शा एवं आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किया। सेठ सरदार मल जी के समय इस परिवार ने बहुत उन्नति की। उन्होंने संवत् १९७१ में चुरू स्टेशन पर एक धर्मशाला बनवाई। फर्म हजारीमल सरदारमल विलायती कपड़े के आयात में अग्रणी थी।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सुजानगढ़ का सेठ हजारीमल जी का परिवार उक्त खानदान का ही एक अंग है। करीब १३० वर्ष पूर्व सेठ धरमचन्द जी सुजानगढ़ जाकर बसे।

सिकन्दराबाद में बसे कोठारी परिवार का मूल स्थान बगड़ी (मारवाड़) था— जहाँ से इनके पूर्व पुरूष सेठ थानमल जी ने बोलारम जाकर व्यापार किया। स्थान-स्थान पर अनेक सिनेमा घर स्थापित कर इस परिवार के श्री मोतीलाल जी कोठारी ने नये आयामों का सूत्रपात किया। शिक्षित समाज में आपका बहुत सम्मान था। आपने शिक्षाप्रद फिल्मों एवं ड्रामों द्वारा सदुपदेशों के प्रचारार्थ एक कंपनी संस्थापित की। आपने हैदराबाद से एक दैनिक समाचार पत्र का प्रकाशन शुरू किया।

जयपुर का कोठारी परिवार मूलतः बीकानेर के परिवार का ही एक अंग है। सेठ देवीचन्द जी संवत् १८६० में जयपुर जाकर बसे। आपकी विभिन्न नगरों में ५४ दुकानें थी। बैंकिंग व्यवसाय कोठारी कुल का मूल व्यवसाय है। सेठ चुन्नीलाल मूलचन्द का जवाहरात का व्यवसाय है। अनेक रजवाड़ों से उनके अच्छे सम्बंध थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि कोठारी कोई मूल गोत्र नहीं हैं। यह एक शाखा है जो कई गोत्रों में पाई जाती है। दूगड़, कटारिया, धाड़ीवाल, बावेला आदि गोत्रों के लोग भी कोठारों का कार्य सम्भालने के कारण कोठारी कहलाने लगे।

कोठारी श्रेष्ठियों के शिलालेख चम्पापुरी, जीरावाला, सेंथिया, मथुरा, रोहिड़ा, बीकानेर खजवाना आदि स्थानों पर प्राप्त हुए हैं।

कांकरिया

इस गोत्र की उत्पत्ति ककंरावत निवासी पड़िहार राजपूत खेमट राव जी के पुत्र भीमसी जी से हुई हैं। राव भीमसी जी उदयपुर के महाराणा के नामांकित सामन्त थे। कहते हैं कि विक्रम संवत् ११४२ में आ. जिन बल्लभ सूरि के उपदेश से प्रभावित हो आपने जैनधर्म अंगीकार किया। इनके वंशज कंकरावत गाँव के निवासी होने से कांकरिया कहलाये। महाजन वंश मुक्तावली में इस गोत्र की उत्पत्ति की कथा इस प्रकार बताई है— महाराणा ने भीमसिंह को चित्तौड़ बुलाया। उनके न आने पर उन्हें पकड़ने के लिए सेना भेजी। भीमसिंह ने आचार्य जिन बल्लभ सूरि की शरण ली। गुरुदेव ने कहा— श्रावक बनो, सब ठीक होगा। उनके सम्यक्त्व लेने पर आचार्य ने कुछ कंकड़ मंगवाये और उनको, मंत्रित किया और कहा— सेना पर इनका प्रयोग करना। सेना के अस्त्र-शस्त्र कुंठित हो जायेंगे। भीमसिंह ने वैसा ही किया। राणा की सेना के हथियार कुंठित हो गये। उन्होंने भीमसिंह से समझौता कर लिया। भीमसिंह ने आचार्य का उपकार मान कर जैनधर्म ग्रहण किया। कंकड़ों के महत्व के कारण भीमसिंह का गोत्र कांकरिया हुआ। "ओसवंश" के लेखक सोहन राजजी भंसाली ने भी उपरोक्त कथा का उल्लेख किया है।

इस गोत्र के शिलालेख कलकत्ता, जैसलमेर, पटना, अलवर, लखनऊ, मालपुरा, बीकानेर, उदासर, बम्बई, आबू, बीस नगर, अहमदाबाद आदि स्थानों पर प्राप्त हुए हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इस खानदान के अनेक परिवार जोधपुर, गोगोलाव, नागौर, व्यावर, वाघली आदि स्थानों पर निवास करते हैं एवं व्यवसाय करते हैं। इस खानदान में मेहता जसरूप जी बड़े नामांकित हुए। उस समय जोधपुर के महाराजा मानसिंह पर नाथों के तात्कालीन गुरु देवनाथ जी का बड़ा प्रभाव था। जसरूप जी इन्हीं नाथ जी के कामदार थे। संवत् १८९६ में नाथ जी का प्रभाव कम करने के लिए ब्रिटिश सरकार के दबाव पर जसरूप जी को व्यावर भेज दिया गया तब राज्य के दस प्रमुख सरदारों ने आपके आश्वासन पर एक रुक्का लिखा। संवत् १९०९ में महाराज ने उन्हें वापिस जोधपुर बुलाया किन्तु पहुँचते-पहुँचते वे स्वर्गवासी हो गये। उन्होंने ओसवाल जाति के याचकों और भोजकों को "लाख पसाव" दान (शादी विवाह के समय त्याग में हाथी-घोड़े के बदले हजारो रूपयों का दान) दिये जिसकी कीर्ति का बखान सेवक अपने कविता में बड़े उत्साह से करते हैं। इसी खानदान के मेहता जसवंतसिंह जी बड़े प्रतिभाशाली हुए। मजिस्ट्रेट के पद से शुरू कर संवत् १९८८ में आप महाराजा के फोरेन एंड पालीटिकल सेक्रेटरी नियुक्त हुए। आप जाति सुधार एवं विद्या प्रसार के कामों में सदैव अग्रणी रहे।

गोगोलाव के सेठ छनूमल मुलतानमल कांकरिया का परिवार मूलतः घबूकड़ा (जोधपुर) के रहने वाले हैं— वहां से सेठ भैरूदान जी २५० वर्ष पहले गोगोलाव आकर बसे। ये परिवार कलकत्ता व बंगाल के अन्य अनेक स्थानों पर जूट, गल्ला व व्याज का व्यवसाय करते रहे हैं। व्यावर के सेठ धूलचन्द कालूराम प्रसिद्ध बैंकर रहे। उनके खानदान का मूल निवास बिराठिया था जहाँ से संवत् १८८५ में यहाँ आकर बसे। इन्होंने गल्ले एवं ऊन के व्यापार में लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। बाघली के सेठ मोतीलाल अमोलकचन्द के परिवार का मूल निवास बड़लू (जोधपुर) था। बाघली में इनका साहूकारी लेनदेन का व्यवसाय है।

बन्दा मेहता

संवत् ७३५ में पीपाड़ के पड़िहार राजा कान्हजी के पौत्र राजसिंह ने आचार्य विमलचन्द सूरि के उपदेश से जैनधर्म अंगीकार किया। तब से इनका खानदान ओसवाल वंश में शामिल किया गया। तब इनका गोत्र पूर्ण-भड़ कहलाता था। राजसिंह की १२ वीं पीढ़ी में बासण जी हुए जो अनहिलपट्टण के राजा पाल जी के दीवान थे। इन्होंने वहां ऋषभदेव भगवान् का मन्दिर बनवाया। इन्हें संघपति एवं "धीया मेहता" की पदवी मिली। इनकी २४वीं पीढ़ी में आसदत्त जी हुए जो दिल्ली के बादशाह द्वारा "बन्दा मेहता" की पदवी से सम्मानित हुए। तभी से इनका गोत्र बन्दा मेहता कहलाता है।

इसी खानदान के मेहता अखेचन्द जी बड़े पराक्रमी हुए। जोधपुर के राजनैतिक इतिहास में उनका बड़ा महत्व है। जब संवत् १८४९ में मानसिंह जी को जालौर दुर्ग में आश्रय लेना पड़ा उस समय मेहता अखेचन्द जी ने अन्न द्रव्य से उनकी बड़ी मदद की। जब महाराजा मानसिंह गद्दीनसीन हुए तो उन्होंने अखेचन्द जी को मोतियों की कंठी, सिरोपाव एवं जागीरें बख्शी। इन्होंने लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। जालौर गढ़ की तलहटी में पार्श्वनाथ का मंदिर बनवाया। जब संवत् १८६३ में धोकलसिंह जयपुर एवं बीकानेर के राजघरानों की मदद से महाराजा के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

खिलाफ बागी हुए एवं संकट खड़ा किया तब भी मेहता अखेचन्द जी ने राज्य की बहुत आर्थिक मदद की। महाराजा ने उन्हें रुक्के बख्शे। संवत् १८६६ में इन्हें पालकी इनायत हुई। संवत् १८६७ में इनके पुत्र लक्ष्मीचन्द के विवाह में दरबार इनकी हवेली पर पधारे एवं इन्हें कड़ा, दुशाला, सिरेपेंच, कण्ठी एवं बीस हजार रूपए प्रदान किए।

इस समय जोधपुर राज्य में ओसवाल मुत्सद्दियों का सितारा बुलन्दी पर था। सिंघवी इन्द्रराज जी, भण्डारी गंगाराम जी, मुणोत ज्ञानमल जी एवं मेहता अखेचन्द जी शासन पर पूर्णतः छाए हुए थे। संवत् १८७२ में मीरखाँ के सिपाहियों ने सिंघवी इन्द्रराज जी का कत्ल कर दिया। उस समय राज्य की ओर से पौने पाँच लाख रूपए मेहता अखेचन्द जी ने अपने पास से देकर उससे पिंड छुड़ाया। राज्य का सारा भार मेहता अखेचन्द जी पर आ पड़ा। संवत् १८७३ में कई सरदारों के प्रयत्न से राजकुमार छत्रसिंह राजगद्दी पर बिठाए गए। मेहता अखेचन्द जी उनके दीवान नियुक्त हुए। किन्तु संवत् १८७४ में ही छत्रसिंह जी का देहांत हो गया। उसी साल अखेचन्द जी की जगह उनके पुत्र लक्ष्मीचन्द दीवान बनाए गए। अखेचन्द जी तब भी राज्य की सेवारत रहे एवं वि. संवत् १८७५ में राज्य के सब ठिकानों से एक एक गाँव पट्टे से छुड़ा लाये— इससे राज्य के खजाने की आमदनी ३ लाख बढ़ गई। उस समय महाराजा मानसिंह ने कहा— "हमारा हुक्म अखेचन्द पर और अखेचन्द का हुक्म सब पर।" इससे पता चलता है राज्य में उस वक्त अखेचन्द जी का कितना प्रभाव था।

किन्तु विरोधी राजपूत सरदारों की संख्या भी दिनों दिन बढ़ती जा रही थी। परिणाम स्वरूप संवत् १८७६ में वे एकाएक गिरफ्तार कर लिए गए, उनके पुत्र एवं पूरा खानदान ही जेल में डाल दिया गया एवं हवेली लूट ली गई। अन्ततः उन्हें विष का प्याला पेश किया गया। अपने आठ साथियों सहित हलाहल पी कर वे इस लोक से विदा हुए। संवत् १८८० में अखेचन्द जी के पुत्र लखमीचन्द जी और उनके पुत्र को ३० हजार रूपए लेकर कैद से छोड़ा गया।

इनके पुत्र लक्ष्मीचन्द जी संवत् १८७४ और १९०७ के बीच कई बार राज्य के दीवान बनाए गए। उन्हें हाथी, पालकी, सिरोपाव व सोना इनायत था। उनके पुत्र मुकुंदचन्द्र जी भी संवत् १९०७ और १९१९ के बीच ७ वर्षों तक राज्य के दीवान रहे। उन्हें भी पालकी, हाथी, सीरोपाव व सोना इनायत किया गया। महाराजा साहब तीन बार हवेली पर पधारे। आपने संवत् १९१७ में पार्श्वनाथ भगवान् का मन्दिर बनवाया। इनके भाई कुंदनमल जी भी राज्य की सेवा में रत रहे। संवत् १९३८ में भयंकर वृष्टि की वजह से महाराजा तख्तसिंह एक मास तक आपकी हवेली में जनाने समेत रहे। महाराजा ने उनकी दोनों पत्नियों को सोना इनायत किया। मेहता कुन्दनमल जी शिल्प व संगीत के बड़े प्रेमी थे। आपने संवत् १९३६ में ओसिया मन्दिर का जीर्णोद्वार कराया। इनके पश्चात् भी आपके परिवार के अनेक लोगों को राज्य की ओर से पालकी सिरोपाव आदि समय-समय पर बख्शे गए।

इस खानदान के अनेक परिवार जालौर, कोयम्बटूर आदि स्थानों पर निवास करते हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

(७) शिशोदिया राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. शिशोदिया

२. सुरपुरिया

३. जौहरी

शिशोदिया/सुरपुरिया

मेवाड़ के शिशोदिया वंशीय राजपूत महाराणा कर्णसिंह जी के पुत्र श्रवण जी से इस गोत्र की उत्पत्ति मानी जाती है। विक्रम की १३वीं शदी में यति यशोभद्र जी (शांतिसूरि जी) से उपदेश ग्रहण कर श्रवण जी ने जैनधर्म अंगीकार किया। यति जी ने ओसवाल कुल में शामिल कर आपका शिशोदिया गोत्र निर्धारित किया। इसी खानदान के डूंगरसी महाराणा लाखा के कोठार के काम पर नियुक्त थे। राणाजी ने उन्हें सिरोपाव एवं सुरपुर गाँव जागीर में दिया। इस कारण आप सुर-पुरिया नाम से मशहूर हुए। "पुर" के पास अब भी सुरपुरिया जागीरदारों के महल के खंडहर विद्यमान है। डूंगरसी ने रामपुरा (इन्दौर) के पास आदिनाथ भगवान का एक मन्दिर बनवाया। इनके वंशज उदयपुर में निवास करते हैं। संघवी दयालदास जी इसी खानदान के थे। उदयपुर महाराणा राजसिंह ने आपको प्रधानगी का उच्च पद (संवत् १७०९-१७३७तक) दिया। ओसवाल समाज के इतिहास पुरुषों में आपका नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है, एवं उनके जीवन प्रसंग ग्रंथ के प्रथम खण्ड में अन्यत्र दिए जा रहे हैं। इसी परिवार में एकलिंग दास जी बड़े नामांकित व्यक्ति हुए। आपके द्वारा बनाई हुई तितरड़ी के पास डाकन कोटना की सराय, तोरन वाली बावड़ी एवं उदयपुर में सरूपरियों के घर के सामने वाला मन्दिर आपकी कीर्ति के द्योतक हैं।

इस खानदान के रंगाजी के परिवार बेगूं निवास करते हैं। इनके वंशज भी राणा की सेवारत रहे। इनके वंशज शिशोदिया प्रह्लाद जी बड़े वीर एवं प्रभावशाली पुरुष थे। आपने प्रह्लाद पुरा नाम का गाँव बसाया जो अब दौलतपुरा के नाम से मशहूर है। इस गाँव में आपकी छत्री बनी हुई है। आपकी सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा ने संवत् १७७२ में आपको ३९ बीघा जमीन एवं कुआं प्रदान किया एवं नगरसेठ के पद से सम्मानित किया। इनके पुत्र बरखासिंह जी ने इन्दौर नरेश मल्हार राव होल्कर की खूब सेवा की। इन्दौर नरेश होल्कर ने आपको रामपुरा में जागीर एवं अन्य कई सम्मान इनायत किए। इनके महलों के खण्डहर आज भी रामपुरा में "शिशोदिया के खण्डहर" नाम से मशहूर है। आपके पुत्र शिवलाल जी को बून्दी रियासत की ओर से बागी मीनों को दबाने के उपलक्ष में दो गाँव जागीर में मिले एवं बेगूं ठिकाने की ओर से भी एक गाँव जागीर में मिला।

श्रवण जी के तृतीय पुत्र सरीपत जी का खानदान ड्योढ़ी वाले मेहता के नाम से मशहूर है। महाराणा ने उन्हें ड्योढ़ी का काम सोंपा था एवं सात गाँवों की जागीर एवं 'मेहता' की पदवी इनायत की थी। तब से इनके वंशज शिशोदिया मेहता कहलाने लगे। जनानी ड्योढ़ी का काम अनेक पुश्तों तक इसी परिवार के सुपुर्द रहा। इनकी तीसरी पीढ़ी में हरीसिंह जी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एवं चतुर्भुज जी नामक नामांकित व्यक्ति हुए जिन्हें पाँच गाँव के पट्टे इनायत हुए। इनके वंशज मेहता मेघराज जी महाराणा उदयसिंह के बड़े विश्वासपात्र थे। एक लड़ाई में आपका सारा परिवार वीरता से लड़ता हुआ मारा गया। मेघराज जी ने विक्रम संवत् १६२४ में उदयपुर में मेहतों का टिम्बा बसाया एवं शीतलनाथजी का एक मन्दिर बनवाया। मेहता मेंघराज जी के पुत्र बेरी साल से खानदान की दो शाखाऐं हुई। ज्येष्ठ पुत्र अन्नाजी की सन्तति टिम्बे वाले ओर कनिष्ठ पुत्र सोना जी की सन्तति ड्योढ़ी वाले मेहता नाम से प्रसिद्ध हुए। इसी खानदान में मेहता पूरनमल जी हुए जिनके परिवार ने लक्ष्मीनारायण जी का मन्दिर बनवाया। इसी परिवार के मेहता जबरचन्द जी को महाराणा ने समय-समय पर बलेणा घोड़ा, बैठक, कुरूब आदि अनेक सम्मान बख्शे। आपकी पत्नि आपके साथ सती हुई थी। कालांतर में मेहता देवीचन्द जी और प्यारचन्द जी की सेवाओं से प्रसन्न होकर महाराणा शम्भूसिंह जी ने जागीर, बलेणा घोड़ा, तुर्रा एवं पवित्रा रुपहरा इन्हें इनायत किया। महाराणा फत्तेसिंह ने आपको सोने का लंगर, हीरे की कण्ठी आदि सम्मान बख्शे। मेहता पन्नालाल जी रूघलाल जी और गिरधारी सिंह जी को राज्य की ओर से इसी तरह के सम्मान इनायत हुए। मेहता बिहारी लाल जी डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए। महाराणा ने उन्हें बैठक, सोने का पवित्रा एवं सवारी के लिए घोड़ा रखने का सम्मान बख्शा।

मेहता मालदास जी इसी खानदान के थे। महाराणा भीमसिंह के समय आप मेवाड़ राज्य के प्रधान रहे थे। संवत् १८४४ में मेहता मालदास को मरहठों के विरुद्ध कोटा एवं उदयपुर की संयुक्त सेना का सेनापति बनाया गया। जावद नामक स्थान पर आपने मरहठा सेनापति सदाशिव राव को भागने पर मजबूर कर दिया। जब यह समाचार इन्दौर की राजमाता अहिल्याबाई के पास पहुँचा तो उन्होंने बुलाजी सिंधिया की अधीनता में ५००० फौज सदाशिवराव के सहायतार्थ भेजी। हरकियाढ़ाल नामक स्थान पर दोनों सेनाओं में जमकर लड़ाई हुई। इस युद्ध में मेहता मालदास एवं अन्य अनेक वीर खेत रहे। कर्नल टाड ने "एनाल्स आफ मेवाड़" ग्रंथ में आपकी प्रशंसा की है।

जौहरी

मेवाड़ के शिशोदिया वंशीय क्षत्रिय राजपूतों से विक्रम की १५वीं शताब्दी में निःसृत एक परिवार जैनधर्म अंगीकार कर ओसवाल कुल में सम्मिलित हुआ वे कालान्तर में जौहरी कहलाए। अहमदाबाद के सेठ शांतिदास के वंशज सेठ कस्तूर भाई लालभाई का खानदान इसी जौहरी कुल का है। श्रीमद् बुद्धिसागर विरचित जैन ऐतिहासिक रासमाला, श्री एम. एस. कामिसारियत के शोधग्रंथ 'स्टडीज इन दी हिस्ट्री आफ गुजरात' (सन् १९३५) आदि ग्रंथों से इस तथ्य की पुष्टि होती है। त्रिपुरी महाराज के अभिनव ग्रंथ 'जैन परम्परा नो इतिहास' में उन्हें बीसा ओसवाल बताया है। कामिसारियत ने सेठ शांति दास के पूर्वजों की वंशावली देते हुए उन्हें उकेश वंशी लिखा है। त्रिपुरी महाराज ने उनके वंश का 'कुंकुम रोला' गोत्र लिखा है, कहीं-कहीं 'काकोला' शाखा का बताया है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ठाकुर पद्मसिंह मेवाड़ के जागीरदारों में से एक थे। वे शिशोदिया क्षत्रिय थे। एक बार एक मृग शावक का शिकार कर उन्हें अत्यंत ग्लानि हुई। सौभाग्य से राह में एक जैन मुनि मिले। मुनिराज ने उन्हें निरपराध जीवों की घात से होने वाले अधर्म एवं असहायों के रक्षक क्षात्रधर्म की वास्तविकता से परिचित कराया। ठाकुर पद्मसिंह ने अहिंसा धर्म स्वीकार किया। यह घटना अनुमानतः विक्रम संवत् १४७२ के आसपास की है।

ठाकुर पद्मसिंह की पाँच पीढ़ियाँ (पद्मसिंह-क्षमाधर-साहुलवा-हरपत-वाछा) मेवाड़ में अपने ग्राम में सुख से रही। छठी पीढ़ीं में सहस्रकिरण (सेंस्करण) हुए। उनका समय विक्रम संवत् १६२५ के लगभग होना चाहिए। सहस्रकिरण के समय मुस्लिमों के आक्रमण से जागीरदारी छिन्न-भिन्न हो गई। वे मेवाड़ छोड़कर अहमदाबाद आ बसे। उस समय उसकी उम्र करीब २० वर्ष थी। वे काम की तलाश में एक मारवाड़ी जौहरी की दूकान पर पहुँचे। जौहरीं हीरों का ही पारखी नहीं था अपितु ईमानदार मनुष्यों की भी उन्हें पहचान थी। सहस्रीकिरण को विवेकशील एवं चतुर जान कर अपनी सेवा में रख लिया एवं अपने व्यवसाय, हीरा माणिक, नीलम की परीक्षा में भी उसे पारगंत कर दिया। थोड़े ही समय में सहस्रकिरण ने अपनी ईमानदारी से जौहरी का मन जीत लिया। सेठ को कोई पुत्र न था— एक मात्र पुत्री थी, जिसका विवाह सहस्रकिरण से कर दिया। इस पत्नी से उन्हें एक पुत्र हुआ— वर्धमान। सहस्रकिरण की दूसरी पत्नी सौभाग्य दे थी जिनसे— विक्रम संवत् १६४२ के आसपास में सेठ शांतिदास का जन्म हुआ। ये बड़े प्रतापशाली हुए। मुगल सम्राट अकबर की राजपूत बेगम महाराणी जोधाबाई राखी बाँध कर इनकी धर्म बहन बनी। सम्राट अकबर ने इन्हें सिरोपाव बख्शा एवं अहमदाबाद का नगर सेठ बनाया। ओसवाल कुल की इस विभूति की जीवन सरणी अन्यत्र ग्रंथ में दी जा रही है। इन्होंनें १६६५ में शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ निकाला, अहमदाबाद में ५२ भव्य जिनालयं बनवाए। शाहजादा औरंगजेब ने वि. संवत् १७०२ में मन्दिरों को बलात् तोड़-फोड़ कर मस्जिद में तब्दील कर दिया तब सेठ शान्तिदास बादशाह शाहजहां से मिलकर फिर से उन्हें मन्दिर बनाने का फर्मान लाए। वे तीर्थ रक्षक के नाम से इतिहास में अमर हैं। उनके पुत्र सेठ लक्ष्मीचन्द ने भी जैन तीर्थों की रक्षा के लिए बादशाह से अनेक फर्मान प्राप्त किए। उन्होंने शाहजादा मुराद को साढ़े पांच लाख रूपए कर्ज दिए— परन्तु मुराद कैद कर लिया गया और औरंगजेब बादशाह बना। सेठ शान्तिदास की अदूरदर्शिता से धर्मान्ध और स्वार्थी औरंगजेब ने भी वि. संवत् १७१७ में तीर्थ रक्षा के फर्मान जारी किए। उन्होंने लक्ष्मीचन्द को भी नगर सेठ की पदवी दी। बहादुर शाह जफर की भी सेठ लक्ष्मीचन्द पर सदा कृपा दृष्टि रही— उन्हें प्रथम श्रेणी का अमीर घोषित कर पालकी छत्री मशाल आदि का सम्मान बख्शा। उनके बाद जहांदारशाह और फर्रूखसियार की बादशाहत के समय भी सेठ लक्ष्मीचन्द का दरबार में बड़ा सम्मान था।

उनके पुत्र सेठ खुशालचन्द ने जैनधर्म के अभ्युदय में अद्भुत भक्ति दिखाई। उन्होंने शत्रुञ्जय के लिए संघ निकाला। उनके समय में सूबेदार दिलावर खां से ठन गई थी— सेठ की अरबी फौज मुगल फौज के सामने तन गई। उस समय दिल्ली दरबार में सैयद बन्धुओं का बोलबाला था। सेठ साहब के उन पर कई उपकार थे। आखिर बादशाह के हुक्म से सूबेदार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

को मुंह की खानी पड़ी। फर्रूखसियार जो नाम मात्र का बादशाह था, सैयद बन्धुओं के नाश की योजना बनाने लगा। तभी मराठों की सहायता से सैयद बन्धुओं ने वि. संवत् १७७६ में उसे मरवा डाला। मराठों का आतंक गुजरात में भी बढ़ा— वे अहमदाबाद लूटने पर उतारू हो गए। तब शाह खुशालचन्द जान हथेली पर लेकर मराठों के खेमे में गए और विपुल धन देकर अहमदाबाद को लुटने से बचाया। इसके एवज में अहमदाबाद के व्यापारियों ने सेठ को चार आने सैंकड़ा वंश परम्परागत कर देना मन्जूर किया जो अंग्रेजों के समय भी लागू था।

सेठ खुशालचन्द के बाद उसके पुत्र बखतशाह नगर सेठ बने। गायकवाड़ राज्य में उन्हें छत्र मशाल व पालकी का सम्मान प्राप्त था। उन्होंने पालीताणा गिरनार आबू तीर्थों के संघ निकाले जिन्हे सरकारी संरक्षण प्राप्त था। उस समय सम्पूर्ण गुजरात में जौहरी—नगर सेठ ही सबसे बड़े सर्राफ थे। इनके पुत्र हेमाभाई भी नगर सेठ की पदवी से विभूषित हुए। इस समय तक जवाहरात का व्यापार गौण होकर सर्राफा व लेनदेन का काम प्रधान हो गया। ये राजाओं तथा जागीरदारों को गांव रेहन रख कर कर्ज दिया करते थे। पूरे भारत में उनकी शाखाएं थी। हुण्डियों से लेनदेन होता था। इनके परिवार की एकता आदर्श थी— कहते हैं भोजन करने पंक्ति में डेढ़ सौ व्यक्ति एक साथ बैठते। उस समय तक अंग्रेजों की सत्ता स्थापित हो चुकी थी। इन्होंने अनेक मन्दिरों का निर्माण कराया जिनमें सिद्धांचल की हेमावसी टोकं प्रसिद्ध हैं।

सेठ बखतशाह के पुत्र मोतीचन्द के पौत्र भगूभाई हुए— उनके पुत्र दलपत भाई और दलपत भाई के पुत्र लालभाई हुए। इन्होंने परम्परागत व्यवसाय से हट कर कपड़ा उद्योग को अपनाया जिसे इनके पुत्र कस्तूर भाई ने चरमोत्कर्स पर पहुँचा दिया। भारत में कपड़ा मिलों की शुरूआत वि. संवत् १९१० में जेम्स लेंडन के भरूच काटन मिल की स्थापना से हुई। लालभाई ने वि. संवत् १९५४ में सरसपुर मिल शुरू की एवं १९६० में रायपुर मिल लगाई। थोड़े से समय में बहुत बड़ी सफलता अर्जित की। वे आनन्द जी कल्याण जी की पेढ़ी के अध्यक्ष चुने गए। उन्हीं के समय रणकपुर और गिरनार तीर्थों की व्यवस्था आनन्दजी कल्याण जी पेढ़ी के सुपुर्द की गई। वि. संवत् १९६५ में आबू के जैन मन्दिरों को सरकार के आर्कियोलोजिकल विभाग के मातहत जाने से रोकने का श्रेय लालभाई को ही है, इसके लिए उन्हें बहुत द्रव्य खर्च करना पड़ा। श्वेताम्बर जैन कान्फ्रेन्स की स्थापना में भी उनका प्रमुख हाथ था। वे इसके महामंत्री बने। जीवन के अन्तिम समय में संयुक्त परिवार का बंटवारा बड़े प्रेम से हो गया। उनकी पत्नी (कस्तूर भाई की माता जी) मोहिनी देवी बड़ी तेजस्वी और समझदार महिला थीं। वे घर खर्च के पैसे पैसे का हिसाब रोज लिखती थी।

इनके पुत्र कस्तूर भाई का भारत के आधुनिक औद्योगिकरण में प्रमुख हाथ था। वे ओसवाल कुल की विभूति थे— उनके जीवन प्रसंग ग्रन्थ के अन्यत्र दिए जा रहे हैं।

वस्तुतः 'जौहरी' नामकरण जवाहरात का व्यापार करने से ही हुआ है। अतः जौहरी नाम से जाने वाले सभी खानदानों का समान गोत्र रहा हो— यह आवश्यक नहीं है। किन्तु मूल गोत्र सम्बन्धी उल्लेखों के अभाव में 'जौहरी' एक गोत्र— नाम की तरह प्रचलित हो गया है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जयपुर के "मोनशी अमोलक" के नाम से जवाहरात व्यवसाय रत छगनलाल भाई के खानदान का मूल निवास मोरबी (काठियावाड़) था। इन्होंने खादी के प्रचार एवं आन्दोलन में बहुत सहयोग दिया। दुर्लभजी त्रिभुवनदास के खानदान का मूल निवास भी मोरबी था। इन्होंने जवाहरात व्यवसाय में खूब नाम कमाया। रंगून एवं रांची में इनके फर्म की शाखाऐं थी। राजा-महाराजा उनकी जवाहरात सम्बंधी परख की बड़ी कद्र करते थे। वे प्रसिद्ध समाज सेवी थे। वे अखिल भारतीय जैन कान्फ्रेंस के संस्थापक ट्रस्टी थे। उनका जयपुर में प्रस्थापित हॉस्पीटल भारत के उच्चस्तरीय अस्पतालों में एक हैं।

(८). खींची राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. नखत

२. कुचेरिया

३. धाड़ीवाल/धाड़ेवा

४. कोठारी धाड़ीवाल

५. टांटिया

६. गेहलड़ा/गेलड़ा

७. पींपाड़ा

नखत/कुचेरिया—

डा. टैसीटरी के राजस्थान ग्रन्थ-सर्वेक्षण (बीकानेर अनूप संस्कृत लाईब्रेरी में उपलब्ध) ग्रन्थांक २५ "ओसवालां री पीढ़ियां" के अनुसार नखत गोत्र की स्थापना लखमणराय के घराने के तीन खींची भाईयों रायमल, देवीसिंह और चाकू द्वारा संवत् १३६६ में जैन धर्म अंगीकार कर लेने से की गई।

कलकत्ते के मुकीम फूलचन्द जी नखत का खानदान जैसलमेर का है। इस परिवार के श्री फूलचन्द जी ने कलकत्ता आकर जवाहरात का व्यापार शुरू किया। संवत् १८८० में लार्ड रिपन द्वारा वे कोर्ट ज्वेलर नियुक्त हुए। आपके सुपुत्र मोतीचन्द जी ने यहां सुन्दर धर्मशाला बनवाई। धार्मिक एवं शैक्षणिक कार्यों में सहयोग के लिए यह परिवार सदा तत्पर रहा। राजनंद गांव एवं जालना में भी अनेक नखत परिवार निवास एवं व्यवसाय करते हैं। जालना के सेठ मयकरण मगनीराम का खानदान कुचेरा से उठा होने के कारण कुचेरिया गोत्र से भी जाना जाता है। जालना में इस परिवार का आढ़त व रूई का व्यापार होता है।

धाड़ीवाल/धाड़ेवा/कोठारी/टाँटिया

पाटन नगर में डेडू जी नामक उरमी वंशीय राजपूत रहते थे। वे इधर-उधर धाड़े मार कर आजीविका चलाते थे। एक बार उहड़ खींची राजपूत अपनी लड़की का डोला लेकर सिसो-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिया राणा रणधीर के पास जा रहा था। रास्ते में डेडू जी ने उन्हें लूट लिया और उहड़ की लड़की बदन कुंवर को घर ले आया। वदन कुंवर से उन्हें सोहड़ नामक पुत्र हुआ। इन्हीं सोहड़ ने संवत् ११६९ में आ. जिनदत्त सूरि से प्रतिबोध पाकर जैनधर्म अंगीकार किया। 'ओसवाल वंश' के लेखक श्री सोहनराज भंसाली के अनुसार— माँ धाड़े से लाई गई थी। अतः उनके वंशज धाड़ेवा कहलाने लगे— कालांतर में यही धाड़ीवाल कहे जाने लगे।

इस गोत्र की उत्पत्ति के संबंध में एक और किंवदन्ती प्रचलित है— महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार गुजरात में खींची राजपूत डीडोजी धाड़ा मारता था। राजा जयसिंह ने उसे पकड़ने के लिए सेना भेजी मगर काबू न पा सका। डीडो जी ने खजाना लूट लिया। सिद्धराज जयसिंह ने २० हजार घुड़सवार भेजे। इस बीच आ. जिनबल्लभ सूरिजी का उधर पधारना हुआ। सूरि जी से उपदेश सुन डीडो जी ने धाड़ा मारने का परित्याग कर दिया। सूरि जी से प्राप्त चूर्ण के प्रभाव से जयसिंह के सैनिक डीडो जी का बाल बांका न कर सके। डीडो जी और उनके साथी जैन बन गए— उनका धाड़ेवा एवं धाड़ीवाल गोत्र बना। राजा कुमारपाल ने भी डीडो जी के पुत्र सूजा को कोठार का काम दिया। जिससे उनका परिवार कोठारी कहलाया। श्री सोहनराजजी भंसाली के अनुसार डेडूजी के प्रपौत्र बाकरसी को राव चूंडा जी ने खजाने का प्रभारी बनाया। फलतः उनके वंशज कोठारी कहलाने लगे। आगे चलकर इनकी ६ठी पीढ़ी में सेड़ो जी तिवरी ग्राम जा कर बसे और सर को टाट से ढकने की वजह से टांटिया कहलाए।

यति श्रीपालचन्द्र जी के अनुसार गुजरात के खींचीं राजपूत डीडो जी धाड़ा मारा करते थे। उन्हें संवत् ११५५ में आ. जिनबल्लभ सूरि ने महाजन वंश में शामिल कर धाड़ीवाल गोत्र स्थापित किया। डीडो जी की ७वीं पीढ़ी में शांवल जी हुए। जिन्होंने राज्य का कोठार सम्भाला। अतः उनके वंशज कोठारी कहलाने लगे।

नागौर निवासी सेठ हंसराज धाड़ीवाल ग्वालियर जा कर बसे। तभी से सिंधिया महाराजा से सेठ धाड़ीवाल का अच्छा संम्पर्क रहा। इसी वंश के सेठ रिधराज जी के पुत्र सूरज राज जी धाड़ीवाल साहित्यानुरागी एवं कला प्रेमी हैं। उन्होंने प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथों का दुर्लभ संग्रह सन् १९६३ में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग को शोधार्थ अर्पित कर दिया। सम्मेलन ने इस बहुमूल्य संग्रह के लिए अलग सूरज-सुभद्रा कक्ष का निर्माण कराया है। संग्रह में संस्कृत, पाकृत, अपभ्रंश और हिन्दी के अनेक प्राचीन (१२वीं शताब्दी तक) ग्रंथ है।

एक अन्य उल्लेख के अनुसार धाड़ीवाल गोत्र की दो शाखाएँ हुई— डेडू जी के प्रपौत्र थाकरसी राव चूँडा जी के खजाने के कोठारी नियुक्त हुए इसलिए उनके वंशज कोठारी धाड़ीवाल कहलाने लगे। डेडू जी की ६ठी पीढ़ी में सांवल जी हुए— उनसे टांटिया गोत्र का सूत्रपात हुआ।

इस खानदान के अनेक परिवार, नागौर से रायपुर, ग्वालियर, भीलवाड़ा, अजमेर, कोलार, गोल्ड फील्ड आदि स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते हैं। रायपुर के परिवार का मूल निवास बगड़ी था जहाँ से संवत् १९२४ में सेठ मुलतानचन्द जी जबलपुर गए एवं कपड़े का व्यवसाय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

किया, संवत् १९३५ में रायपुर की दुकान की। इन्होंने लाखों की संम्पत्ति अर्जित की। अजमेर के परिवार में गोपीचन्द जी धाड़ीवाल ने बहुत नाम कमाया।

धाड़ीवाल गोत्र के शिलालेख पावापुरी, जयपुर, विकरी, मुरार आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

गेहलड़ा/ गेलड़ा

मारवाड़ के खजवाणा गांव में खींची गहलोत गिरधरसिंह (गिरधारी) रहता था। यह पहले बड़ा धनवान परिवार था। फिर बिना सोचे अधिक खर्च करने से एक दिन कंगाल हो गया। संवत् १५५२ में आचार्य जिनहंस सूरि खजवाणा पधारे। गिरधर सिंह प्रतिदिन गुरू जी के पास आने लगा। उनसे प्रतिबोध पाकर उसने जैनधर्म अंगीकार किया। कहते हैं उस पर गुरुजी ने मंत्रित वासक्षेप डाला। इससे उसके दिन सुधरने लगे और फिर से श्रीमंत हो गया।

यति रामलालजी द्वारा महाजन वंश मुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार गिरधरसिंह को आचार्य जी ने वास मंत्रित कर चूर्ण दिया कि "आज रात्रि को कुम्हार के ईंट के फनावे पर ये डाल देना।" भाग्य योग से बाहिर पाँच हजार ईंटो का फनावा था। वास चूर्ण डाल दिया। वो सोने की हो गई। चाँद की चाँदनी में रातों रात घर पर उठा लाया। कुम्हार को दूना मोल दे के खुश कर दिया। उनके पुत्र गेला जी हुए। वे भोले थे— लोगों के उकसाने पर एक दिन घोड़ी के आगे मेवा (यति रामलाल जी के अनुसार— मोहरों से भरे तोवरे) खाने को रख दिया। लोग उनके वंशजों को मजाक में गेलड़ा कहने लगे। मजाक से नाम न भी पड़ा हो किन्तु गेला जी के वंशज होने से उनके नाम पर गोत्र का नाम गेलड़ा हो गया हो— यह संभव है।

कालांतर में यह खानदान नागौर आकर बस गया। उनकी ६ठीं पीढ़ीं में सेठ हीरानन्द जी हुए। सेठ जी की आर्थिक दशा शोचनीय थी। सारा धन खत्म हो गया था अतः दुखी थे। व्यापार हेतु परदेश जाने की सोची। यति से मुहूर्त निकलवाने गए। यति जी ने मुहूर्त दिया— इसी समय पूर्व देश चले जाओ, निहाल हो जाओगे। हीरानंद जी ७ कोस गए तो रास्ते में एक फण वाला साँप मिला— अपशकुन समझ कर लौट आए। यति को पूरी बात बताई। यति ने कहा— "उस समय चले जाते तो क्षत्रपति बनते, अब भी चले जाओ— जगत्पति जरूर बनोगे।" हीरानन्द जी चल पड़े। हीरानन्द संवत् १७०९ में पटना पहुँचे। उस समय यह वाणिज्य की दृष्टि से महत्वपूर्ण नगर था। यहाँ की छींट दूर-दूर तक प्रसिद्ध थी, भूटान से कस्तूरी और तिब्बत से सुहागा यहीं आकर बिकता था। विदेशी व्यापारी शोरे (बारूद बनाने के लिए आवश्यक) वस्तुओं की खरीददारी पटने में ही करते थे। हीरानन्द के अपनी उम्र के ६० वर्ष पटने में ही व्यतीत हुए। संवत् १७६८ में उनकी मृत्यु हुई।

उस समय दिल्ली के तख्त पर औरंगजेब का पुत्र बहादुरशाह था— अगले साल उसकी भी मृत्यु हो गई। हीरानन्द के पाँचवें पुत्र मानिकचन्द पहले ढाका और फिर मुर्शिदाबाद (बंगाल) रहने लगे थे। भाग्य ने ऐसा पलटा खाया कि जल्द ही वे भारत के राजनैतिक क्षितिज पर तेजस्वी नक्षत्र की तरह चमकने लगे। दिल्ली के बादशाह ने संवत् १७२० में उन्हें 'जगत सेठ' के अलं-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

करण से सम्मानित किया। हीरानन्द जी के सात पुत्र और एक पुत्री हुई थी। पुत्री आगरा के राय उदयचन्द गोखरू को व्याही थी। इन्हीं के पुत्र फतहचन्द कालांतर में जगत् सेठ मानिकचन्द के गोद गए एवं वे भी 'जगत् सेठ' की उपाधि से सम्मानित हुए।

सेठ माणकचंद अतुल सम्पत्ति के स्वामी थे। नवाब, दीवान एवं अंग्रेज भी उनकी कृपा के लिए लालायित रहते थे। इनकी सहायता से सैंकड़ों ओसवाल परिवार बंगाल जा कर बसे एवं व्यापार में लगे। इन्होंने मूल्यवान कसौटी पत्थर का एक भव्य जैन मंदिर बनवाया। इनके दत्तक पुत्र जगत् सेठ फतहचन्द के समय बंगाल, बिहार और उड़ीसा-तीनों प्रदेशों में जगतसेठ की टकसाल में बने सिक्के ही चलते थे। इनके पुत्र महताबचन्द भी जगतसेठ की उपाधि से सम्मानित हुए। नवाब सिराजुदौला ने प्रसिद्ध जैन तीर्थ सम्मेद शिखर पहाड़ का पूर्ण स्वामित्व शाही फर्मान द्वारा जगत् सेठ महताबचन्द एवं उनके भाई को सौंप दिया था। सम्मेद शिखर स्थित अनेक मंदिरों के जीर्णोद्धार का श्रेय इसी परिवार को है। इतिहासकारों के अनुसार जगतसेठ खानदान के पास इतना चाँदी-सोना था कि गंगा नदी पर उसका पुल बन सकता था। कई बार जगत् सेठ का भंडार लूटा गया पर उनकी समृद्धि और यश अटल रहे। जगत् सेठ महताबचन्द के पुत्र सेठ खुशालचन्द को भी बादशाह शाह आलम ने जगतसेठ की पदवी दी। इस समय तक बंगाल में अंग्रेजों का दबदबा बढ़ गया था। लार्ड क्लाईब और उनके बाद वारेन हेस्टिंग्ज जगत् सेठ के साथ बड़ी क्रूरता से पेश आए। तभी से इस खानदान की श्री शेष होने लगी। इनके परिवार का विस्तृत विवरण ग्रंथ में अन्यत्र दिया जा चुका है। राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द और प्रसिद्ध कवियत्री रत्न कुवंर बीबी इसी खानदान से सम्बंधित थी।

गेहलड़ा गोत्र के अनेक परिवार कुचेरा गांव के चारों तरफ बसे हुए हैं। मद्रास के सेठ पूनमचंद ताराचंद गेलड़ा का मूल निवास नागौर था। वहाँ से उठ कर ४०० वर्ष पूर्व कुचेरा आ बसे। इस खानदान के सेठ अमरचंद जी २०० वर्ष पूर्व जालना होते हुए मद्रास आए, रेजीमेंटल बैंकर्स का काम शुरू किया एवं सफल हुए। धार्मिक और सामाजिक प्रवृत्तियों में यह खानदान बराबर सहयोग देता रहता है।

इस खानदान के शिलालेख चंपापुरी, राजगृह, जयपुर, नागौर, कोटा आदि स्थानों पर उपलब्ध है।

पीपाड़ा

गहलोत राजपूत पीपाड़ नगर के राजा कर्मचन्द को आ. वर्धमान सूरी जी ने विं. संवत् १०७२ में प्रतिबोध देकर महाजन बनाया। उनका पीपाड़ा गोत्र बना।

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान बीकानेर के ग्रंथागार में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रंथ 'इतिहास ओसवंश' (क्रमांक— २७०३३) के अनुसार गहलोत वंशीय सामंत करमसिंह को प्रतिबोध देने वाले जैनाचार्य श्री जयशेखर सूरि थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

(९) . कछवाहा- राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. नोलखा/नवलखा

२. भूतोड़िया

३. प्रियदर्शी

नौलखा (नवलखा)

नौलखा गोत्रीय श्रेष्ठियों के उल्लेख अनेक ग्रंथों में मलते हैं। वस्तुतः यह गोत्र है या उपाधि, यह संदिग्ध है। किन्तु जनश्रुति के अनुसार भूतोड़िया और नौलखा भाई-भाई माने जाते हैं। मुनि ज्ञान सुन्दर जी ने भी नौलखा खानदान को नागपुरिया तपागच्छ-उपासक मानते हुए इस तथ्य की पुष्टि की है। भूतोड़िया गोत्र कछवाहा राजपूतों से निःसृत माना जाता है। अतः नौलखा गोत्र उन्हीं से निःसृत हो- यह संभाव्य है।

अजीमगंज का नौलखा परिवार वि. सं. १८०७ में आकर यहां बसा। इस वंश के श्री हरकचन्द जी ने अनेक स्थानों पर अपनी बैंकिंग फर्मे खोली एवं जमींदारी में पूँजी लगाई। आपके पुत्र गुलाबचन्द जी लाल बाग के आनरेरी मजिस्ट्रेट रहे। आपने अजीमगंज का प्रसिद्ध 'राजे विला' नामक उद्यान बनवाया। आपके पुत्र धनपति सिंह नौलखा बड़े उदार हृदय थे। आपने अस्पताल का निर्माण कराया। सं. १९६७ में भारत सरकार ने आपको रायसाहब की पदवी प्रदान की। आपके पुत्र निर्मलकुमार सिंह राष्ट्रीय विचारों के बड़े उदार हृदय व्यक्ति थे। अनेक सार्वजनिक संस्थाओं एवं धार्मिक प्रतिष्ठानों को दान देकर सहायता की। आपको पुरातत्व से भी प्रेम था। आपके बगीचे— नवलखा बाग में पुरानी वस्तुओं का अच्छा संग्रह था। आप जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेंस के सभापति चुने गए।

सीतामऊ के नौलेखा खानदान के पूर्व पुरुष सेठ धन्ना जी के पुत्र हरीराम जी १७५ वर्ष पूर्व सीतामऊ आए एवं आजीवन स्टेट के हाउस होल्ड आफीसर रहे।

मेवाड़ के श्रेष्ठि रामदेव नवलखा का परिवार महाराणा खेता के समय (विक्रम संवत् १४३१-३९) से ही प्रसिद्ध रहा है। नागदा-मंदिर स्थित अद्भुतजी की मूर्ति के संवत् १४९४ के प्रशस्ति लेख में इस परिवार की वंश परम्परा दी है। श्रेष्ठि रामदेव महाराणा खेता और महाराणा लाखा के समय प्रधान थे। रामदेव के दो पुत्र— सहण और सारंग महाराणा कुम्भा और महाराणा मोकल के समय मंत्री रहे। यह परिवार मूलतः देलवाड़े का है। श्रेष्ठि रामदेव की एक पुत्री का विवाह ईडर के राजा रणमल के मंत्री-पुत्र बिसल से हुआ। बिसल के पूर्वजों ने आचार्य सोम सुन्दर के काल में अनेक मन्दिरों में प्रतिमाऐं प्रतिष्ठित करवाई, ग्रंथ लिखवाए एवं चित्तौड़ में श्रेयांसनाथ का मन्दिर बनवाया।

भूतोड़िया/भूतेड़िया

"जांगल देश के सरसापट्टन नामक नगर में संवत् १०७६ में कछबाहा राजपूत दुर्जनसिंह नाम के राजा राज्य करते थे। उस समय धूम, बीज, कौल व कांचलिया सम्प्रदाय के अनेक कुंडा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पंथी (वाम मार्गी) ब्राह्मणों को आश्विन कृष्णा चतुर्दशी (काली चवदस) के दिन तांत्रिक वाममार्गी क्रियाओं में लीन देख कर राजा ने उन्हें मरवा डाला। मर कर वे भूत हो गए और राज्य में उपद्रव करने लगे। रुद्रपल्ली-खरतर गच्छ के आचार्य तरुण भद्र सूरि ने मंत्र-विद्या से राज्य को भूतों से मुक्त कर दिया। इससे प्रभावित हो राजा ने जैनधर्म अंगीकार किया। भूतों को भगाने के उपलक्ष में इस गोत्र का भूतोड़िया नामकरण हुआ।"

'महाजन वंश मुक्तावली' में उक्त कथा बड़े विस्तार से दी गई है। यह कथा कई दृष्टियों से विचारणीय है। मध्यकाल में वर्तमान बीकानेर राज्य की उत्तरी सीमा से लगा पंजाब व सिंध प्रदेश 'जांगल देश' के नाम से विख्यात था। इसमें भटनेर (वर्तमान हनुमान गढ़) एवं सरसा का इलाका भी शामिल था। वर्तमान बीकानेर के शासकों द्वारा इस प्रदेश को विजित करने के उपलक्ष में ही उन्हें "जय जंगलधर बादशाह" की पदवी मिली। उक्त कथा का 'सरसा पट्टन' सम्भवतः वर्तमान सरसा (पंजाब) ही हो। इस क्षेत्र में जैनधर्म के प्रसार से पूर्व शैव मतावलम्बी ब्राह्मणों का प्रभाव इतिहास सिद्ध है। वाममार्गी तांत्रिक साधना भी उनके धार्मिक क्रिया-कांडों का अंग रही हो— यह भी सम्भव है। यति रामलालजी ने किंचित् व्यंग पूर्वक इन्हीं क्रियाओं के वीभत्स पक्ष की ओर इंगित किया है, किन्तु कथा का सन्दर्भ-स्रोत नहीं दिया। अतः यह भाटों का अतिशयोक्ति पूर्ण काल्पनिक कथानक या यतियों की जोड़-तोड़ से सनी चमत्कारपूर्ण किस्सा-कहानी सा लगता है।

मुनि ज्ञान सुन्दरजी ने भूतोड़िया गोत्र का उल्लेख नागपुरिया तपा गच्छ- उपासकों में 'नौलखा' गोत्र के साथ किया है। वैसे भी भूतोड़िया—नौलखा भाई-भाई माने जाते हैं। आम जनश्रुति यही है कि इनके पूर्वजों ने भूतों को भगाया या भूतों का सामना किया, अतः भूतोड़िया कहलाए।

मारवाड़ में 'भूति' नामक एक ग्राम है। वहाँ से उठ कर अन्यत्र बसने के कारण उन्हें भूतोड़िया कहा जाने लगा हो— यह भी सम्भव है।

भूतोड़ियों का मूल व्यवसाय स्थल बंगाल रहा है। कहते हैं इनके पूर्वज श्री गंगारामजी नें बंगाल आकर पाट व्यवसाय का सूत्रपात किया। कुछ समय बाद बर्दवान में बैंकिंग ('महा-जनी'— गहने गिरवी रख कर सूद पर रकम उधार देना) व्यवसाय शुरू किया। बंगला में इसके लिए 'भूति' शब्द प्रचलित है। जिस तरह काठ का व्यवसाय करने वाले यहां काठुड़िया कहलाते हैं, उसी तरह भूति—व्यवसाय में संलग्न 'भूतेड़िया' कहलाने लगे।

वर्तमान में भूतोड़िया परिवार राजस्थान के 'थली' क्षेत्र तक ही सीमित हैं और यहाँ भी लाडनूँ, छापर, चाड़वास सुजानगढ़ आदि गाँवों तक ही। लाडनूँ में बसे भूतोड़िया परिवार सेठ गंगारामजी के वंशज है। उनका पूर्व निवास 'आडसर' था। आडसर जंगल देश का ही एक ग्राम है। वर्तमान में सेठ गंगारामजी की ११वीं पीढ़ी चल रही है। अतः अनुमानतः सेठ गंगाराम विक्रम संवत् १८०० के आसपास लाडनूँ आकर बसे। सेठ गंगाराम ने बर्दवान में जूट व बैंकिंग व्यवसाय के अतिरिक्त अच्छी जमींदारी कायम की। उनके हाथ के दस्तावेज उपलब्ध हैं। उस

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

समय के बर्दवान स्थित सम्पत्ति के क्रयनामें में उनके पिता का नाम राजरूप जी दिया है। राजरूपजी के पिता का नाम देवचन्द जी था। परन्तु उनके परिवारों के अन्य विवरण नहीं मिलते। गंगारामजी की मूल दूकान (आवास) अभी भी भूतोड़िया परिवार (श्री बच्छराज भूतोड़िया) के आधिपत्य में हैं।

गंगाराम जी जब राजस्थान से चलकर बंगाल आए तो सर्वप्रथम मुर्शिदाबाद के जगत सेठ (गेहलड़ा) के आश्रय में गये। उस समय जगत सेठ का घराना परदेश आए ओसवाल बंधुओं का आश्रय दाता ही नहीं था— व्यापार के निमित्त उनकी अनेक प्रकार से सहायता भी करता था। जगत् सेठ की माँ के कहने से जगत् सेठ ने एक नौका पटसन की लदवा दी। गंगाराम जी उसके साथ हुगली के रास्ते 'कलिकता' की ओर रवाना हुए। रास्ते में नौका डूब गई। गंगाराम जी हताश मुर्शिदाबाद लौटे। जगत् सेठ ने उन्हें हिम्मत बंधाई और फिर एक नौका लदवा दी। दुर्भाग्य से इस बार भी नौका डूब गई। गंगाराम जी मुँह लटकाए मुर्शिदाबाद आए। सेठानी ने ज्योतिषी को बुलवा कर उनका हाथ दिखवाया। ज्योतिषी ने यह सब हाथ के एक तिल का दुष्प्रभाव बताया। तत्काल उनकी सहमति से तिल डाम (जला) दिया गया। एक बार फिर जगत् सेठ की मेहरवानी से पटसन की नौका ले वे रवाना हुए। इस बार भाग्य श्री ने उनका साथ दिया। धीरे-धीरे गंगाराम जी इस व्यवसाय में सफल होते गए। अन्ततः बर्दवान में बस गए।

सेठ पूनमचन्द जी ने अपने संस्मरण "स्मृति-यात्रा" (सन् १९७९) में गंगाराम जी का समय करीब दो सौ वर्ष पूर्व बताया है। मुर्शिदाबाद में उनके आश्रयदाता को भुवा का लड़का भाई बताया है जबकि उपरोक्त अनुश्रुति के अनुसार वे जगत् सेठ थे। 'स्मृति यात्रा' के अनुसार वर्धमान में गंगाराम जी की भेंट एक साधु से हुई जिसने हथेली के तिल को बाधक बताया। इससे पूर्व वे मय तीसरी नौका के सुरक्षित पहुँच चुके थे। तिल हटवा देंने के बाद गंगाराम जी ने बर्धमान में मणिहारी का व्यापार किया। १८ वर्षों की पहली मुसाफरी में उन्होंने यथेष्ठ धन अर्जन किया। उधर राजस्थान में उनकी बहनों को चिंता हुई। उन्होंने पैरों के कड़े बेचकर यथेष्ठ खर्ची का जुगाड़ किया और हरकजी सेवग को गंगारामजी का पता लगाने के लिए बंगाल भेजा। पाँच महीने की कठिन यात्रा कर हरकजी ने आखिर गंगाराम जी को ढूँढ़ लिया। गंगाराम जी अपने मुनीम विशनचन्द जी सिपानी (बीकानेर निवासी) को कार्यभार सौंप कर देश लौटे।

'स्मृति यात्रा' के अनुसार गंगारामजी का राजस्थान में पूर्व निवास 'सांडवा' था। जब कि अन्य लोग बीकानेर के पास 'आडसर' को पूर्व निवास स्थान बताते हैं।

कहते हैं सांडवे के ठाकुर साहब ने गंगाराम जी को परदेश से आया जान कर गढ़ में बुलाया और चौथ देने की हिदायत दी। गंगारामजी ने साफ ना कर दी। इस पर ठाकुर साहब ने हुक्म दिया— इसकी अंगुलियों में रूई तेल बाँध कर आग लगा दी जाय। जब यह बात बहन को मालूम हुई तो उन्होंने अनुनय विनय की। आखिर पाँच सौ रुपए देकर पिंड छुड़ाया गया। इस घटना से गंगाराम जी का मन खराब हो गया। उन्होंने सांडवा छोड़ने की ठान ली। बैलगाड़ियों पर माल लाद कर चल दिये— रात बासा सुजानगढ़ में किया— मन अशांत रहा। आखिर हरकूजी सेवग की सलाह मान कर लाडनूँ में बसने का निश्चय किया— वहाँ से 'मारवाड़'

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की सीमा शुरू होती है। लाडनूँ आकर बस गए। बंगाल की दूसरी मुसाफिरी में ज्येष्ठ पुत्र तिलोकचन्दजी साथ थे। धीरे-धीरे उन्होंने काम काज संभाल लिया। ये बड़े दिलावर थे। अपने अध्यवसाय से उन्होंने समृद्धि हासिल की। कहते हैं जब गंगाराम जी का स्वर्गवास हुआ तो उनके पीछे स्वर्ण पुष्पों की उछाल की गई। ईर्षा वश गाँव में आलोचना हुई— उस सामंतशाही काल में सोना पहनना तक वर्जित था— सिर्फ विशेषाधिकार प्राप्त लोग ही उसका प्रयोग कर सकते थे। आखिर तिलोकचन्द जी की माता जी ने ठकुरानी साहब को कह कर बात परोटी। इस घटना के संदर्भ में एक कवि का छन्द प्रसिद्ध है— "गंग के पूत सपूत भये जो कंचन के हर फूल उछाले"। कहते हैं औसर के अवसर पर भी पंचों ने ईर्षा वश कम 'दूहा' कह कर मिठाई कम बनवाई ताकि बदनामी हो। परन्तु तिलोक चन्दजी ने अदूरदर्शितापूर्वक कोठ्यार के अलावा भी मिठाई छुपा कर रख दी। सारी बिरादरी ने आनन्दपूर्वक भोजन किया। पंचों को मुँह की खानी पड़ी।

गंगाराम जी के तीन पुत्र— तिलोक चन्द जी, छोटूलाल जी एवं बीजंराज जी हुए। इनके परिवार बंगाल-आसाम में विभिन्न स्थानों पर बैंकिंग, जूट एवं जमींदारी का काम करते रहे। कालान्तर में तीनों भाई अलग-अलग हो कर स्वतंत्र व्यापार करने लगे। तिलोकचन्द जी के

श्री तिलोक चन्द भीतोड़िया

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दूसरे पुत्र सेठ हजारीमल जी बड़े व्यापार कुशल व्यक्ति थे। आपने लाखों रूपए की सम्पत्ति उपार्जित की। लाडनूँ नगर की पंच पंचायती में आप अग्रणी थे। उनके दो पुत्र जसकरण जी एवं मालचन्द जी जन्म से गूंगे एवं बहरे थे। बर्धमान में आपकी फर्म "गंगाराम तिलोक चन्द" नाम से थी। वर्तमान में जसकरणजी के पुत्र झूमरमल जी और सम्पतराज जी एवं मालचन्द जी के पुत्र बच्छराज जी और रतनलाल जी पुश्तैनी कारोबार रत हैं। तिलोक चन्द जी के तीसरे पुत्र मोहनलाल जी ने भी पैत्रिक कारोबार में वृद्धि की। आपका बर्धमान में "तिलोकचन्द मोहनलाल" एवं राजशाही में "मोहनलाल जयचन्द लाल" नाम से कारोबार था। आप के ज्येष्ठ पुत्र जयचन्दलाल जी बड़े रईस प्रकृति के थे। उनके एक मात्र पुत्र रावतमल का अल्पायु में देहावसान हो गया। जयचन्द लालजी के भाई खेमचन्द जी के पुत्र विजय चन्दजी एवं मालचन्द जी ने पुश्तैनी कारोबार के अतिरिक्त कलकत्ते एवं अन्य स्थानों पर भी व्यापार शुरू किया एवं समृद्धि अर्जित की। मालचन्द जी ने लाडनूँ नगर के एक मात्र ओसवाल मिडिल स्कूल को एक लाख रूपया प्रदान कर हाईस्कूल का दर्जा दिलाया, जो अब उच्च माध्यमिक विद्यालय बन गया है। नगर की अन्य रचनात्मक प्रवृत्तियों में भी आप का सहयोग सदा मिलता रहता है। सेठ तिलोक चन्द जी के बड़े पुत्र नेमीचन्द जी बड़े सरल प्रकृति के थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र भेरूदान जी ने सेंथिया (वीर भूम) में कारोबार स्थापित किया। अन्य भाई मूलचन्द जी, भूरामल जी, जेठमल जी एवं आसकरण जी ने स्वतंत्र व्यवसायों में सफलता हासिल की।

सेठ छोटूलालजी के चार पुत्र हुए— हरखचन्द जी जुहारमलजी चाँदमल जी और शोभाचन्द जी। इनमें सेठ जुहारमलजी बड़े व्यापार कुशल थे। आपने कलकत्ता में "छोटूलाल जुहारमल" के नाम से फर्म स्थापित की। संवत् १९८८ में आप का स्वर्गवास हुआ। आप के दो पुत्र सूरजमल जी और कुन्दनमल जी थे। दोनों भाई अपना अलग व्यापार करने लगे। सूरजमल जी के तीन पुत्र- पूनमचन्द जी, बुधमल जी और लालचन्द जी हुए। इनमें पूनमचन्द जी बड़े कुशल व्यापारी सिद्ध हुए। उन्होंने समय की नब्ज पहचान कर ओसवाल समाज में सर्व प्रथम बड़े उद्योगों की शुरूआत की। आपने संवत् १९९२ में सल्किया (हाबड़ा) में भूतोड़िया जूट मिल की स्थापना की एवं प्रथम उद्योगपति होने का श्रेय प्राप्त किया। कोल्ड स्टोरेज बनाने वाले भी आप प्रथम ओसवाल व्यवसायी थे। आपने लाडनूँ नगर की समाज हितकारी प्रवृत्तियों को भी कई आर्थिक अवदान दे कर पल्लवित किया। आपने गर्ल्स स्कूल एवं महिला शिक्षण केन्द्र की स्थापना की। आप के ३ पुत्र हुए— भंवरलाल जी, सुमेरमल जी एवं मानमल जी। भंवरलाल जी सदैव जनहितकारी प्रवृत्तियों से जुड़े रहे। नेहरू उद्यान आप ही के प्रयासों का सुफल था। इसे अब "जैन विश्व भारती" को सौंप दिया गया है। कनिष्ठ पुत्र मानमल जी सामाजिक कार्यों में बड़ी रूचि लेते हैं। आप के द्वारा संस्थापित ट्रस्ट से असहाय व्यक्तियों को अवदान दिया जाता है एवं हरवर्ष साहित्य एवं संस्कृति के रचना धर्मी लेखकों को पुरस्कृत किया जाता है। इस परिवार ने पटसन के अतिरिक्त अन्य इंजीनियरिंग उद्योगों की स्थापना की हैं।

पूनमचन्द जी के छोटे भाई बुधमलजी ने बहुत जल्द व्यापार से सन्यास ले लिया। आप बड़े मिलनसार हैं एवं समाज के विकास के लिए हर सम्भव प्रयास करते रहे हैं। एक समय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपका मकान धार्मिक एवं राजनैतिक क्रांतिकारियों का आश्रय स्थल था। आपके चार पुत्र हैं— चन्दनमलजी, मदनचन्दजी, छात्रसिंह एवं निर्मल कुमार। चन्दनमल जी को शहरवाली समाज के अग्रणी बंगाल के भूतपूर्व उप मुख्यमंत्री श्री विजयसिंह जी नाहर की कन्या ब्याही है। मदनचन्द जी को लाडनूँ के प्रसिद्ध कांग्रेसी कार्यकर्त्ता (अब सर्वोदयी) मालचन्दजी बोथरा की ज्येष्ठ कन्या ब्याही है।

सेठ चांदमलजी नें 'छोटूलाल चाँदमल' के नाम से कलकत्ता में फर्म स्थापित की। आपने धन और यश अर्जित किया। समाज में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। आपके तीन पुत्र हुए तोलारामजी, जीवनमलजी और धनराजजी। बर्धमान में आपका काम 'गंगाराम छोटूलाल' नाम से होता रहा। इन्होंने हुण्डी एवं ब्याज के कारोबार के अलावा बड़ी जमींदारी स्थापित की। सेठ तोलारामजी अल्पायु में निःसन्तान कालकवलित हो गए। सेठ चाँदमलजी ने पंच पंचायती में बड़ा यश कमाया। कहते हैं मृत्यु के कुछ घंटे पूर्व उन्हें अपने अवसान का पूर्वाभास हो गया था। सेठ जीवनमलजी ने अपने पिताश्री की स्मृति में 'सेठ चांदमल रीलिजियस ट्रस्ट' की स्थापना की। सन् १९५२ में उन्होंने जन कल्याण हेतु लाडनूँ में 'चांद सागर' कुऐं का निर्माण कराया। उन दिनों पेय जल का शहर में अभाव रहता था। इस कुऐं से जनता को बहुत राहत मिली। सेठ साहब शिवभक्त थे— 'शिव मन्दिर' की स्थापना कर वहाँ दैनिक पूजा अर्चना की व्यवस्था की। ब्रिटिश सरकार की भी उन पर महती कृपा थी। वे 'बाबू' की सम्मानित उपाधि से सम्मानित हुए। कहते हैं द्वितीय विश्व-युद्ध के समय उन्हें 'कमांडर इन चीफ' की मानद जिम्मेवारी सौंपी गई एवं सात खून माफ कर दिए गए। ब्रिटिश राज्य में उनपर फौजदारी नहीं चल सकती थी। इस अधिकार का प्रयोग सेठ साहब ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम के समय देशहित में किया। अनेक राष्ट्रीय स्तर के नेता इनके निवास में पनाह लेते थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र बहादुर सिंहजी को आंग्ल भाषा में महारत हासिल थी। बर्धमान युनिवर्सिटी के प्रथम वाइसचांसलर उन्हें बहुत मानते थे। लाडनूँ के जन-हितकारी कार्यों में इस परिवार का हमेशा सहयोग रहा।

सेठ शोभाचन्दजी रत्न व्यवसाय में संलग्न रहे। आपके चार पुत्र थे। जयचन्दलालजी, कन्हैयालालजी, मदनचन्दजी एवं चन्दनमलजी। कनिष्ठ पुत्र चन्दनमलजी रत्न व्यवसाय रत रहे।

सेठ बींजसज जी के दो पुत्र थे— भोपतरामजी और पन्नालालजी। वे शुरू से स्वतंत्र व्यवसायों में रत रहे। भोपतरामजी के चार पुत्र हुए— महालचन्दजी, जीवराजजी, उम्मेदमलजी और तोलारामजी। पन्नालाल जी के तीन पुत्र थे— मूलचन्दजी, श्रीचन्दजी और नानूलालजी। ये सभी परिवार लाडनूँ में ही वास करते हैं एवं भारत के विभिन्न नगरों में व्यवसाय रत हैं।

लाडनूँ के अतिरिक्त चूरू जिले के सुजानगढ़ चाड़वास एवं छापर शहरों में भी भूतोड़िया गोत्र के अनेक परिवार वास करते हैं। छापर के परिवार सेठ मोतीलालजी के वंशज हैं जो चाड़वास से यहाँ आकर बसे। उनके ३ पुत्र थे— उमचन्दजी, सूरजमलजी, दुलीचन्दजी। उमचन्दजी के दो पुत्र हुए गोरुलालजी और हजारीमलजी। दुलीचन्दजी के चार पुत्र हुए— नगराज जी, उदयचन्दजी गणेशमलजी और घनराजजी। इन परिवारों का सुजानगढ़ के भूतोड़िया परिवारों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से गोद के सम्बन्ध हैं। चाड़वास में भी पूनमचन्द जी सुपुत्र चिमनीरामजी प्रभृति ३ परिवार वास करते हैं।

प्रियदर्शी

भूतोड़िया गोत्र का नन्हा-सा नवांकुर है उसका उपगोत्र 'प्रियदर्शी'। जब मैं (लेखक) कानून का स्नातक बन कर वकालत प्रारम्भ करने के लिए कलकत्ता आया तो सेठ गंगाराम जी की आठवीं पीढ़ी जन्म ले चुकी थी। परम्परागत व्यवसाय कानपुर में 'आढ़त' (कमीशन एजेन्सी) का था। पिता तखतमल जी अपने सफल व्यवसायी जीवन से निवृत्त हो गए थे। स्कूली जीवन के समय से ही मेरे नाम में 'जैन' शब्द जुड़ गया था। कदाचित् यह देश की जन-गणना में 'जैन' धर्मावलम्बियों की घटती हुई संख्या के संदर्भ में अपने को "जैन" लिखाने के अभियान का ही एक अंग था। जीवन-विकास के क्रम में धार्मिक एवं जातिगत अहमन्यता खो गई। कलकत्ता में बच्चों के स्कूली-दाखिले की समस्या के साथ नाम के साथ पारिवारिक परिचायक (सर नेम) क्या लिखाया जाय— यह भी सवाल उठा। तब तक मैं 'कुमार प्रियदर्शी' उपनाम से लेखन कर्म प्रारम्भ कर चुका था। मेरे लेख एवं कविताऐं इसी उपनाम से अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके थे। जैसे 'जैन' शब्द एक धार्मिक कटघरे का द्योतक था वैसे ही 'भूतोड़िया' शब्द वणिक परम्परा का वाहक लगा। सम्भवतः मेरी साहित्यिक रुचि एवं काव्य-प्रेम भी इसे स्वीकारने को राजी न हुए या फिर यथा स्थिति के प्रति विद्रोह मेरे रक्त में ही था। अस्तु, बच्चों के नामों के साथ संवत् २०१९ में प्रियदर्शी शब्द लिखवा दिया गया। शनैः शनैः यह एक उपगोत्र की मानिन्द प्रचलित हो गया। अब तो बच्चों ने इसी नाम से अपनी पहचान बना ली है। बड़ी लड़की निर्मला थली प्रान्तीय महिला ओसवाल समाज में प्रथम इंजीनियर हैं,उसने इलेक्ट्रोनिक्स में डिप्लोमा लिया है। ज्येष्ठ पुत्र सुभाष रसायन शास्त्र के स्नातक हैं एवं सम्प्रति व्यवसाय रत हैं। बड़ी पुत्र-वधू अर्चना (श्री मधुपकुमार सुराणा की सुपुत्री) कला-स्नातक हैं। द्वितीय पुत्र संदीप ने स्नातकोत्तर परीक्षा (M. Sc.) उच्चतम श्रेणी में पास करने के उपरान्त साईटोजेनेटिक्स में डाक्टरेट (पी. एच. डी) के लिए शोध की हैं। द्वितीय पुत्र वधू संगीता (श्री रूपचन्द पारख की सुपुत्री) कला स्नातक हैं। कनिष्ठ पुत्र शिवम् डाक्टर (एम.बी.बी.एस) हैं। बचपन से ही खेलकूद, चित्रकारी एवं संगीत में अनेक शील्ड व मेडल जीत चुके हैं। तृतीय पुत्र वधू वर्षा (श्री चन्द्रसिंह जी कोठारी की सुपुत्री) भी डाक्टर (एम.बी.बी.एस) हैं। दोनों एम.एस/एम.डी. में अध्ययन रत हैं। प्रियंक, तन्मय एवं चैतन्य से प्रियदर्शी गोत्र की तीसरी पीढ़ी प्रारम्भ हो चुकी है।

१०. "ब्राह्मण" वर्ण से निःसृत गोत्र

१. कठोतिया	५. गोलिया
२. पगारिया	६. सेठ
३. खेतसी	७. सेठिया
४. मेड़तवाल	८. सिंघी/संघवी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कठोतिया

यति रामलाल जी के अनुसार कठोती गांव के अजमेरा नामक ब्राह्मण को भगंदर का रोग था। उसे सं. ११७६ में आचार्य जिनदत्त सूरि ने रोगमुक्त किया, इससे उसने जैनधर्म अंगीकार किया। उसके वंशज कठोतिया कहलाने लगे। अनुश्रुति यह है कि इस जाति का मूल गोत्र सोनी है। ये लोग पहले जायलनगर के निकट कठोती ग्राम में रहते थे। वहाँ से स्थानान्तर होने पर कठोतिया कहलाने लगे। मिर्जापुर, लखनऊ आदि स्थानों पर इस गोत्र के १५वीं/१६वीं शदी के शिलालेख मिले हैं। वर्तमान में अनेक कठोतिया परिवार थली प्रदेश में निवास करते हैं। सुजानगढ़ के सेठ परसराम जी का पुत्र लाडनूं से संवत् १८७९ में आकर यहां बसा। वर्तमान परिवार सेठ पदमचन्द जी का है। बंगाल प्रान्त में अनेक जगह इस परिवार का जूट एवं बैंकिंग का कारोबार होता है।

पगारिया/खेतसी/मेड़तवाल/गोलिया

भीनमाल के सनाढ्य ब्राह्मण शंकरदास आचार्य अभयदेव सूरि से प्रतिबोध ग्रहण कर शैवधर्म त्याग कर वि. सं. ११११ में जैन बने। इनके खानदान में आगे चलकर पगारसिंह नामक प्रतापी पुरुष हुए। इनका संवत् १५५५ का एक शिलालेख नागौर में है। इनके वंशज पगारिया कहलाए। श्री बलवंत सिंह मेहता के अनुसार-सम्भवतः वेतन (पगार) चुकाने वाले मुत्सद्दी होने के कारण इनके वंशजों का 'पगारिया' गोत्र बना। इस गोत्र की दो और शाखाएं हैं: मेड़तवाल और खेतसी। गोलिया भी पगारिया गोत्र की ही एक उपशाखा है।

इस गोत्र के १६वीं सदी के शिलालेख उदयपुर, नागौर आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

सेठ/सेठिया

"भगवान् पार्श्वनाथ परम्परा का इतिहास" के अनुसार सेठ गोत्र की उत्पत्ति भीनमाल के प्राग्वाट ब्राह्मणों से मानी जाती है। वि. सं. ७९५ में २४ प्राग्वाट ब्राह्मण दुःखों से मुक्त होने के लिए काशी में करवट लेकर मोक्ष प्राप्त करने जा रहे थे। रास्ते में शंखेश्वर गच्छ के आचार्य उदयप्रभ सूरि से प्रतिबोध पाकर वे जैनी बने। इनमें "सोम" नामक ब्राह्मण श्रेष्ठि प्रमुख थे। उन्होंने व्यापार में बहुत उन्नति की और राज्य के दीवान बने। उन्होंने जैन तीर्थों का एक संघ निकाला। राजा की ओर से उन्हें "सेठ" की पदवी दी गई। कालान्तर में उनकी सन्तानें "सेठ" कहलाने लगीं। गुजरात में सेठ को सेठिया कहते थे, अतः उनका सेठिया गोत्र हो गया।

श्री भंवरलाल जी सेठिया ने "भीनमाल दर्शन" में सेठ गोत्र के अनेक पूर्वज श्रेष्ठियों एवं उनके धार्मिक अवदानों का विवरण दिया है। उक्त विवरण के अनुसार उनके विभिन्न उप गोत्र थे, जैसे— कमल, रत्न, वत्स, पद्म, नन्द, लक्ष्मी, गौतम, अम्बा, चन्द्र, निधान, जाजा, मीठड़िया, माढ़र, कारस, हरियाणा, भडशाली, लोडियाणा, पापा, काश्यप, पीपलिया। इन श्रेष्ठियों ने भीनमाल, पाटवा, चित्तौड़ आदि नगरों में अनेक जैनमन्दिरों का निर्माण करवाया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संघवी/सिंघवी/सिंघी

ओसवाल जाति के इतिहास में सिंघवी बड़े प्रतापी हुए। मूलतः सिंघवी कोई गोत्र नहीं है। यह एक उपाधि है, जो जैनतीर्थों के संघ समायोजक को आचार्यों अथवा समाज द्वारा दी जाती थी। कालान्तर में यह उनका गोत्र ही समझा जाने लगा। भिन्न-भिन्न जातियों से आए श्रेष्ठियों के अनेक सिंघवी खानदान हो गए, जो सभी जाने तो सिंघवी/सिंघी नाम से जाते हैं, पर उनकी मूल या पूर्व जाति एवं पुरुष भिन्न-भिन्न हैं।

ननवाणा सिंघी

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार सिरोही (गोडवाड) के निनवाणा (ब्राह्मण) बोहरा-व्यवसायरत श्रेष्ठि सोनपाल के पुत्र को सांप ने डस लिया। आचार्य जिनवल्लभ सूरि ने वासक्षेप से वि. सं. ११६४ में उसका जहर उतारा। सोनपाल जी जैनी बने। उन्होंने शत्रुञ्जय का संघ निकाला, जिससे संघवी कहलाए। इनकी ४ उपशाखाएं-नवलखा, ननवाणा, फरसला, पलीवाल है।

सिंघियों की ख्यात के अनुसार सिरोही के ननवाणा बोहरा (ब्राह्मण) जाति में देवजी बड़े प्रतापी पुरुष हुए। उनके पुत्र को नाग ने काट खाया एवं एक जैन मुनि ने उसे जीवित कर दिया। इस समय से इनका इष्टदेव पुण्डरीक नागदेव हुआ। इनकी २३वीं पीढ़ी बाद सं. ११२१ में बोहरा विजयानन्द जी ने जिनवल्लभ सूरि से जैनधर्म स्वीकारा। श्री सुख सम्पतजी भंडारी ने "ओसवाल जाति का इतिहास" में उक्त कथानक एवं समय उद्धृत किया। श्री सोहनराजजी भंसाली ने अपने ग्रंथ 'ओसवंश' में उक्त कथानक का समय संवत् ११६४ दिया हैं। विजयानन्द जी की १६वीं पीढ़ी में इनके वंशज सोनपाल जी सं. १४८४ में शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ ले गए, जिससे सिंघवी कहलाए। इनके ३ पुत्र सिंहाजी, जसाजी व राणोजी जोधपुर रहे और ३ पुत्र भगाजी, सदाजी और जोगाजी गुजरात जाकर बसे। बड़े पुत्र सिंहा जी के ५ पुत्र थे, जिनसे सिंघवी खानदान की अलग-अलग खांपे निकलीं।

१. चांपसी जी से— भीवंराजोत, धनराजोत, गाढ़मलोत, महादसोत

२. पछाण जी से— बागमलोत

३. पारस जी से— सुखमलोत, रायमलोत, रिढ़मलोत, प्रतापमलोत, जोरावरमलोत, मूलचन्दोत, हिन्दूमलोत, धनरूपमलोत, हरचन्दोत

४. गोपीनाथजी से— भागमलोत

५. मोडण जी से— मोडणोत

भीबराजोत, धनराजोत, गाढ़मलोत, महादसोत, आदि शाखाएँ जोधपुर, चंडावल, खेरवा आदि जगहों, बागमलोत पर्वतसर में सुखमलोत आदि सोजत, नागौर, लाडनूं, कालू, जोधपुर, मेड़ता, पीपाड़, डीडवाना, पाली, सियारी, चाणोद आदि स्थानों पर, भागमलोत गुजरात में तथा मोडण जी का परिवार कुचेरा में बसा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इस सिंघी खानदान का इतिहास बड़ा गौरवपूर्ण है। राजपूताना के देशी राज्यों के शासन में इस खानदान ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है। ये महारथी राजनीति-कुशल ही नहीं थे, अद्भुत शौर्य के धनी एवं गजब के स्वामिभक्त थे। धार्मिक क्षेत्र में भी सिंघी खानदान हमेशा अग्रणी रहा। 'सिंघवी' नाम-गोत्र उनकी धर्म प्रभावना का ही द्योतक है। जोधपुर में सिंघियों के चौक स्थित पार्श्वनाथ भगवान् का मंदिर इसी परिवार द्वारा संवत् १५१६ में निर्मित है। नवाब नाहरबेग द्वारा संवत् १७३७ में नष्ट किए जाने के बाद सिंघवी पदमा पारसोत द्वारा इसका पुनः निर्माण कराया गया। मूंथा नैणसी ने अपने विख्यात ग्रंथ 'मारवाड़ रे परगना री विगत' में इसका उल्लेख किया है। जालोर स्थित भांडव तीर्थ का प्रसिद्ध कलापूर्ण मंदिर भी सिंघवी श्रेष्ठियों द्वारा बनवाया हुआ है।

जोधपुर राज्य के इतिहास में सिंघवी खानदान के दीवान, प्रधान एवं सेनापतियों (फौज-बख्शी) का अभूतपूर्व स्थान रहा है। विक्रम की सतरहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शदी के मध्य तक वे राज्य के शासन पर एकछत्र छाए रहे। उनका सम्पूर्ण ब्यौरा ओसवाल शासकों की तालिका में अन्यत्र दिया जा रहा है। इसी तरह सिरोही राज्य पर भी सिंघी खानदान के दीवानों नें अपनी अमिट छाप छोड़ी। महाराजा सुल्तान सिह जी के समय से सिंघी श्रीवंत जी, श्यामजी, सुन्दर जी, अमर सिंह जी, हेमराजजी, कानजी, पोमाजी, जोरजी, कस्तूरचन्दजी, जवाहर चन्दजी आदि सूरमाओं ने राज्य के दीवान पद को सुशोभित किया।

भीवंराजोत वंश के सिंघी इन्द्रराज जी ने महाराजा मानसिंह के समय जोधपुर राज्य की बहुत सेवा की। यहां तक कि अपने प्राण भी होम दिए। इस वंश के लोग राज्य के दीवान, फौज, बख्शी, हाकिम आदि अनेक पदों पर रहे। सिंघवी फतहराज जी कुल ७ बार राज्य के दीवान नियुक्त हुए। संवत् १७६३ से १९०० तक सिंघवी दीवानों का एक छत्र राज्य रहा। इसी तरह संवत् १८२४ से १९३५ के बीच सिंघवी प्रधान सेनापतियों का बाहुल्य रहा।

स्वर्गीय श्री सिंघी फतेहराजजी (इन्द्रराजजी के पुत्र) दीवान, राज मारवाड़ जोधपुर।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सिंघी जेठमल जी महाराजा विजयसिंह के समय प्रसिद्ध हुए। संवत् १८११ में वे मेड़ता में मरहठों से लड़े। इस पर महाराजा की ओर से उन्हें प्रशस्ति पत्र मिला। संवत् १८१७ में चांपावत सरदार के बिलाड़ा ग्राम पर आक्रमण करने से आपने घमासान युद्ध किया। चांपावत सरदार मारा गया। आप भी जूझार हुए। बिलाड़ा के तालाब पर एक छत्री में आपकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। सिंघी भींवराज जी को महाराजा विजयसिंह ने सं. १८२४ में जोधपुर का कमांडर-इन-चीफ बनाया। सं. १८३४ में मराठों की सेना का सामना करने के लिए आपको जयपुर भेजा गया। मराठे खदेड़ दिए गए। महाराजा ने आपको जागीर बख्शी। दिल्ली के बादशाह ने भी आपको तख्त का पाया कह कर सम्मानित किया।

सिंघी सुखराज जी भींवराज जी के वंशज थे। संवत् १८९८ में आप जोधपुर के दीवान पद पर नियुक्त हुए। राज्य की ओर से आपको पालकी और सिरोपाव इनायत हुए।

सिंघी बच्छराज जी जोधपुर राज्य के संवत् १९४६-५६ तक कमांडर-इन-चीफ रहे। सं. १९५६ में उदयपुर आए। संवत् १९६८ में वापिस जोधपुर जाते समय उदयपुर के महाराजा फतहसिंह ने इन्हें पावों में सोने के कड़े इनायत किए। आपके पुत्र हंसराज जी (जन्म संवत् १९४७) मारोठ व सोजत में हाकिम रहे, फिर जोधपुर में मजिस्ट्रेट हुए। आपको हाथी और पालकी का सम्मान मिला।

भींवरोजात खानदाम के अनेक सिंघवी पुरुषों को राज्य-सेवा के लिए समय-समय पर सिरोपाव, सोना, पालकी, जागीरें इनायत हुई। भींवराज जी के पाँचवे पुत्र गुलराज जी को सं. १८७२ में फौजबख्शी बनाया। महाराजा मानसिंह की मृत्यु के बाद उत्तराधिकार सम्बन्धी षड्यंत्र में सं. १८७३ में आपका कत्ल कर दिया गया। उनके पुत्र फौजराज संवत् १८८१ में दीवान बनाए गए। संवत् १८८२ से १८९१ तक मृत्यु पर्यन्त फौज बख्शी रहे।

जोधपुर के सिंघवी रायमल जी महाराजा गजसिंह के समय राज्य के दीवान रहे। उनके नाम पर वंश की रायमलोत शाखा निकली। इनके पुत्र जीतमल जी संवत् १६८१ में जोधपुर राज्य के प्रधान सेनापति नियुक्त हुए एवं दूसरे ही साल राज्य की ओर से लड़ते हुए मारे गए। जब संवत् १७८१ में नागौर के राजावखतसिंह जी गद्दीनशीन हुए तो सिंघवी जीतमल जी के पुत्र सरूपमल जी दीवान नियुक्त हुए। उनके पुत्र फतहचन्द भी १७९३ से १८०७ तक नागौर के दीवान बने रहे। आपके छोटे भाई सावंतराम जी भी नागौर के दीवान नियुक्त हुए। संवत् १८०८ में जोधपुर दरबार से आपको दिवानगिरी, पालकी, सिरोपाव का सम्मान मिला। संवत् १८२३ में फतहचन्द जी के पुत्र ज्ञानमल जी को जोधपुर की हुकूमत सौंपी गई, एवं फतहचन्द जी को जीवनपर्यन्त दीवानगी बख्शी गई। संवत् १८४७ तक ज्ञानमल जी राज्य के दीवान रहे।

हैदराबाद के जी. रघुनाथमल बैंकर्स का खानदान भी रायमलोत शाखा का है। इस खानदान के पुनमचन्द जी सर्व प्रथम हैदराबाद गए। इनके पुत्र गणेशराम जी बड़े उदार हृदय थे एवं उन्होंने अछूतोद्धार के लिए बहुत काम किया। आपके पुत्र रघुनाथ मल जी ने इंगलिश पद्धति पर बैंक की स्थापना की। मेड़ता के कस्तूरमल जी सिंघवी का परिवार भी रायमलोत

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

है। कोलार गोल्ड फील्ड का शिवराज सिंघवी का परिवार संवत् १९५९ में कालू से बंगलौर आकर व्यापार किया। रायमलोत खानदान के अनेक परिवार दारवा (बरार) मेड़ता आदि जगहों पर बसे हुए हैं।

सोनपाल जी सिंघवी के खानदान की तीसरी पीढ़ी में मूलचन्द जी के परिवार वाले मूलचन्दोत कहलाए। इनके पुत्र जेटमल जी राज्य की ओर से संवत् १८११ से १८१७ तक अनेक लड़ाइयों में सफलता से लड़े। अन्त में बिलाड़ा के चांपावल सरदार के विरूद्ध लड़ते हुए जूझार हुए। इनके पुत्र जोरावरमल जी पाली जा कर बसे। वे जोरदार योद्धा थे। उनके समय यह कहावत प्रसिद्ध थी कि "पाली जोरां की"। उनकी सन्ताने जोरावरमलोत कहलाई। उनके भतीजे खूबचन्द जी बड़े मानी थे। अन्ततः वे संवत् १८४८ में एक षड्यन्त्र के शिकार हुए। जोरावर-मल जी के पुत्र जीतमलजी एवं उनके भ्राता बन्धुओं ने जोधपुर राज्य की अनूठी रीति से सेवा की। महाराजा विजय सिंह की मृत्यु के बाद गद्दी के असली हकदार मान-सिंह जी नाबालिग थे। कुवंर भींव-सिंह ने जोधपुर पर अनाधिकार आधिपत्य जमा रखा था। उस वक्त महाराजा की पासवन जी ने महा-राजा कुमार मानसिंह को सिंघवी जीतमल जी के संरक्षण में जालौर दुर्ग भेज दिया। दो दिन बाद ही कुंवर भीवसिंह ने सिंधवी जीतमल जी की जोधपुर स्थित हवेली लुटवा दी और पासवान जी को मार डाला। महाराजा मानसिंह ने सिंधवी जीतमल जी को अपना दीवान बनाया। कुंवर भींवसिंह ने जालौर के ईर्दगिर्द सेना का घेरा डाल दिया। परन्तु सिंघवी बन्धु किसी तरह दुर्ग में रसद आदि पहुँचाते रहे और भींवसिंह की सेना से लड़ते रहे। भ्राता शंभूमल जी के बारे में मानसिंह जी ने एक पद कहा था "जोरावर सुत पांच शंभू तामे घणो सपूत"। जब संवत् १८६० में मानसिंह जी गद्दीनशीन हुए तब उन्होंने सिंघवी बंधुओं को रुक्के, जागीरें बख्शी एवं खूब सम्मान दिया।

स्व. सिंघी जेठमलजी दीवान राज मारवाड़, जोधपुर

सिंघवी जोरावरमल जी के प्रथम पुत्र फतेमल जी के पुत्र गम्भीरमल जी भी संवत् १८८८ और १९०३ के मध्य ४ बार दीवान नियुक्त हुए। जीतमल जी के पुत्र इन्द्रमल जी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

भी संवत् १८८२ और १८९७ में दीवान बनाए गए। ये सभी परिवार वैष्णव धर्मी थे। सिंघवी गम्भीरमल जी ने रघुनाथ जी का मन्दिर और एक रामद्वारा बनवाया।

सिंघवी भींवराज के छोटे भाई धनराज जी संवत् १८४४ में जोधपुर महाराजा विजयसिंह जी द्वारा अजमेर के शासक बनाए गए थे। जब मरहठों ने अजमेर पर हमला किया तो महाराजा की इजाजत के बावजूद धनराज जी ने जीते दम किला नहीं छोड़ा एवं अन्ततः हीरे की कणी खाकर प्राणों की आहुति दी। इनके वंशज धनराजोत कहलाए। इनके पुत्र जोधराज जी संवत् १८५६ में राज्य के दीवान रहे। विद्वेष रखने वाले राजपूत ठाकुर सरदारों ने षड़यंत्रपूर्वक आपका सर काट दिया। इनके पुत्र नवलराज जी भी राज्य के दीवान बनाए गए। इनके अनेक वंशज बगड़ी, खेरवापाली, परभणी जालना आदि जगहों पर बस गए।

चापसी जी के खानदान में गणपत जी के दो पुत्र थेः गाढ़मल जी और मेसदास जी। मेसदास जी सोजत जाकर बसे। कालान्तर में इनके वंशज दक्षिण गए एवं गुलवर्ण (निजाम) में बसे। गाढ़मल जी के खानदान के लोग बखतसर, बाड़मेर जोधपुर में व्यापार रत हैं।

सिंहा जी के पुत्र पारस जी, तत्पुत्र पद्मसी और उनके पुत्र शोभाचन्दजी संवत् १९४७ में जोधपुर राज्य के दीवान रहे। इन्होंने पार्श्वनाथ जी का मन्दिर बनवाया। इनके पुत्र सुखमल जी को संवत् १६९० में दीवानगी बख्शी गई। उनके पुत्र पृथ्वीमल जी के पौत्र बख्तावर मल जी और तखतमल जी को दरबार ने बीकानेर से बुला कर संवत् १७९३ में दीवान का ओहदा दिया।

सुजानगढ़ का सिंघी परिवार

राव बीकाजी जब जोधपुर से नये राज्य की टोह में बीकानेर की तरफ आए तो सिंघी परिवार भी उनके साथ आए। वे चुरु, छापर आदि अनेक स्थानों पर वास करते रहे। चुरू में राजरूप जी सिंघी के दूसरे पुत्र कन्हीराम जी संवत् १८८९ में हरासर से सुजानगढ़ में आकर बसे। हरासर में इस परिवार का बनवाया हुआ तालाब और कूआं आज भी विद्यमान है। सुजानगढ़ बसने के बाद इनके पूर्व पुरुष पूर्णचन्द जी मुर्शिदाबाद गये। वहां मुनीमी की। सं. १९०५ से अपना स्वतन्त्र व्यापार करने लगे। इस परिवार की कलकत्ता, गोहाटी व अनेक अन्य स्थान पर फर्में जूट व अन्य व्यापारों में संलग्न हैं। इस परिवार में श्री जेसराजजी नामांकित व्यक्ति हुए। वे धारा प्रवाह अंग्रेजी बोलने वालों में से थे। उस जमाने में यह बहुत बड़ी बात थी। श्री संघ-विलायती विवाद में अपने धड़े के अग्रणी के रूप में उनकी अहम भूमिका रही। वे चालीस वर्ष की अल्पायु में स्वर्गस्थ हुए। उनकी अंतिम इच्छा से प्रेरित हो उनके अनुज श्री पनेचन्द जी ने संयुक्त परिवार से चार लाख रुपए खर्च कर संवत् १९६१ में सुजानगढ़ में पार्श्वनाथ भगवान् के भव्य मंदिर का निर्माण प्रारम्भ किया। संवत् १९७१ में मंदिर की प्रतिष्ठा और ध्वजारोह के अवसर पर अखिल भारतीय जैन श्वेताम्बर कांफ्रेंस का नवम अधिवेशन सुजानगढ़ में आयोजित हुआ। उक्त मन्दिर में सोने व काँच की पच्चीकारी दर्शनीय है। सेठ पनेचन्दजी बीकानेर स्टेट कौंसिल के मेम्बर रहे। जेसराज जी के सुपुत्र सेठ बच्छराज जी वैचारिक क्रांति के वाहक

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

थे। जिस समय समाज "नौ हाथ की काकड़ी और तेरह हाथ को बीज" को "तैत" (हाँ)। कहते नहीं अघाता था, सिंघी जी ने "जैनशास्त्रों की असंगत बातों" को वैज्ञानिक आधार पर चुनौती दी। 'तरुण जैन' में संवत् १९९८-९९ में इस शीर्षक से उनकी लेखमाला प्रकाशित हुई। ये लेख उनके अगाध शास्त्रज्ञान एवं वैज्ञानिक सूझबूझ के द्योतक हैं। सिंघीजी स्त्री-शिक्षा, विधवा-विवाह, हरिजनोंद्धार एवं आर्थिक समाजवाद के प्रबल समर्थक थे। विश्वबंधुत्व सम्बंधी उनके विचार प्रेरणास्पद थे। उनकी सेक्स सम्बन्धी धारणाऐं अधुनातन वैज्ञानिक विश्लेषण से अनुप्रेरित थी। संवत् २०३२ में उनका देहावसान हुआ।

सरदार शहर का सिंघी परिवार

सेठ भीखमचन्द मालचन्द का खानदान मूलतः जोगड़ गोत्रीय है। संघ निकालने से सिंघी कहलाए। इनका पूर्व निवास नाथूसर था। सरदार शहर बसने के समय यहां आकर बसे। इनके पूर्वज गुलाबचन्द जी पहले सेठ चैनरूप सम्पतराम के यहां मुनीम थे, सं. १९६६ में स्वतन्त्र कपड़े का काम किया। ये विदेशों से भी कपड़ा इम्पोर्ट करने लगे।

नोहर का सिंघी परिवार

सेठ संतोषचन्द सदासुख के खानदान का सम्बन्ध जोधपुर के सिंघी परिवार से बताया जाता है। वहां से करीब २२५ वर्ष पूर्व वे छापर आकर बसे। वहां से "सवाई" और सवाई से सुजानगढ़, सरदार शहर, नोहर आदि शहरों में जाकर बसा। इस परिवार के खेतसीदास जी १७५ वर्ष पूर्व जोरहाट गए। कहते हैं आपकी होशियारी से ख़ुश होकर जोरहाट के तत्कालीन अधिपति ने आपको अपना दीवान बनाया। वहां से १८ वर्ष बाद लाखों रूपयों का जवाहरात लेकर नौहर लौटे। यहां सर्राफे का व्यवसाय किया। इसी कुल के सिंघी रामचन्द्र जी ने लन्दन से चार्टर्ड एकाउन्टेन्सी का अध्ययन कर कलकत्ता में अपनी प्रसिद्ध फर्म सिंघी एण्ड कम्पनी की स्थापना की।

सिंघी गोत्र के अनेक शिलालेख जेसलमेर, मांडवी, देलवाड़ा, शत्रुञ्जय, अजमेर, मेड़ता, बीकानेर आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं। इस खानदान के अनेक परिवार जोधपुर हैदराबाद, मेड़ता, कोलार दारवा, जालना, सोजत सिरोही, मेड़ता, नागौर आदि भारत के विभिन्न नगरों में निवास करते हैं।

(११). 'सोलंकी' राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. श्रीपति	५. आभू
२. तिलेरा	६. लूंकड़/ठाकुर/कवाड़िया
३. ढ़ढ़ा	७. सेठिया
४. भणसाली	८. नागसेठिया

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्रीपति/ढ़ढ़ा/तिलेरा/तलेरा

इस गोत्र की उत्पत्ति राजपूतों के सोलंकी वंश से बताई जाती है। इनके वंशज कुमारपाल ने संवत् १२१७ में जैनधर्म अंगीकार किया। इनके पौत्र राजा नरवाण के पुत्र-प्राप्ति के लिए भट्टारक धनेश्वर सूरि ने अम्बा देवी का स्मरण कर आशीर्वाद दिया। इसी से इनकी कुल देवी अम्बा हुई और पुत्र प्राप्ति हुई। तब से इनका गोत्र श्रीपति कहलाने लगा। इस कुल में तेलपाद जी नामक राजा हुए। उन्होंने सोलह गाँवों में भगवान् महावीर एवं कृष्णदेव जी के मन्दिर बनवाए। उनकी नीवें तेल और घी से सींची गई। जिससे इनके वंशज तिलेरा कहलाए। इनकी २९वीं पीढ़ी में सारंगदास जी हुए। वे संवत् १६५५ में जैसलमेर छोड़कर फलौदी आ बसे। ये बड़े बहादुर और दृढ़ कद काठी के थे। व्यापार के निमित्त सिंध भी गए। वहां के अमीर ने इनको ढढ (बहादुर) कह कर बहुत सम्मान किया। तब से ढ़ढ़ कहे जाने लगे जो कालान्तर में ढढा बन गया। संवत् १७१७ से इनके वंशजों ने लुंकागच्छ अंगीकार किया था।

महाजन वंश मुक्तावली के अनुसार संवत् ११०१ में गोड़वाड़ देश के नाणावेड़ा नगर के सोलंकी क्षत्रिय राजा सिद्धराज जयसिंह के पुत्र गोविन्द चन्द ने, आचार्य जिनेश्वर सूरि के उपदेश से जैनधर्म ग्रहण किया और उसीसे श्रीपति गोत्र की उत्पत्ति हुई। इनके वंशजों का तेल का व्यापार होने से तिलेरा कहलाए। इनकी तीसरी पीढ़ी में झांझणसी जी हुए जिन्होंने शत्रुञ्जय की यात्रा की। इनकी ६ठीं पीढ़ी में विमलसी हुए जिन्होंने नाडोल, फलौदी, नागौर, बाड़मेर, अजमेर आदि क्षेत्रों में जैन मन्दिर बनवाए। वि. सं. १२०० में इस वंश के भांडा जी ने शास्त्र भण्डार बनाने में बहुत द्रव्य से मदद की। उनके पुत्र धर्मसी जी ने शत्रुञ्जय, समेद शिखर, गिरनार पर सोने के कलश चढ़ाए। इनकी ९वीं पीढ़ी में कुमारपाल हुए जो सिंध देश जा बसे। वहां शान्तिनाथ जी का मन्दिर बनवाया। कुमारपाल की ३०वीं पीढ़ी में वि. सं. १६१५ में बाढ़ा जी हुए, जो कद काठी से दृढ़ थे। सिंध देश के अमीर द्वारा "ढंढ" कहे जाने पर इसी नाम से जाने जाने लगे, जो कालान्तर में ढढा हो गया। बाढ़ जी की ४थी पीढ़ी में सच्चावदास जी हुए। उनके पुत्र सारंग दास के वंशज ढढा कहलाए। ओसवाल जाति का इतिहास के लेखक श्री सुखसम्पतराज भंडारी के अनुसार तेलपाद की २९वीं पीढ़ी में सारंग जी हुए। ये सिंध देश में व्यापार करने लगे। इनका शरीर बड़ा गठीला था। सिंध का अमीर इसीलिए उन्हें 'ढढ़' नाम से पुकारता था। धीरे-धीरे उनकी संतानें भी 'ढढ़ा' नाम से पुकारी जाने लगी। ये सिंध देश छोड़ फलौदी आ कर बसे। इनके वंशज तिलोकसी जी ने होल्कर दरबार की मदद की और लड़ाई में अपार धन मिला। ये बीकानेर आ कर बसे।

इनके परिवार वाले फलौदी के अतिरिक्त बीकानेर, जयपुर जोधपुर एवं अजमेर में निवास करते हैं। बैंकिंग के व्यापार में इन्होंने बहुत समृद्धि हासिल की। अनेक रियासतों से उन्हें रुक्के प्राप्त हुए। तिलोकसी जी के तीसरे पुत्र अमरसी ने हैदराबाद जाकर व्यापार शुरु किया। जवाहरात के आप विशेषज्ञ थे एवं रियासत की ओर से आपके जवाहरातों के सुरक्षार्थ फौज तैनात रहती थी। आपकी फर्म अमरसी सुजानमल ने खूब तरक्की की। इस खानदान को निजाम हैद-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

राबाद से बहुत सम्मान प्राप्त हुआ। इनके मुकदमें के लिए स्पेशल कोर्ट, मजलिसे, साहवान नियत था। इस खानदान में सेठ चांदमल जी बड़े नामांकित व्यक्ति हुए। आपने अनेक नगरों में फर्म की शाखाएं खोलीं। सेठ चांदमल जी को ब्रिटिश सरकार ने सी. आई. ई. की उपाधि दी। देशनोक के करणी माता के मन्दिर का प्रथम द्वार आपने साढ़े तीन लाख रूपए की लागत से बनवा कर प्रस्थापित करवाया जिसे देखने लार्ड मिण्टो देशनोक आए थे। आपको सिरोपांव, ताजीम हाथी की सवारी प्राप्त थी। आप ओसवाल समाज के प्रथम श्रेणी के रईसों में गिने जाते थे।

उपरोक्त सारंगदास जी के पुत्र रघुनाथदास जी का खानदान फलौदी में वास करता है। वे संवत् १६९५ में जैसलमेर से फलौदी आकर बसे। इस परिवार ने संवत् १९५७ में मद्रास में बैंकिंग व्यवसाय शुरू किया। इस परिवार के लक्ष्मीचन्द जी ढ़ढ़ा ने वहां संवत् १९७० में केमिस्ट की फर्म स्थापित की। इस समय यह फर्म सारे भारत में मशहूर है और इस व्यवसाय में अग्रगण्य है। रघुनाथदास जी के भाई नेतसी जी थे। इनके पौत्र तिलोकसी जी बड़े बहादुर व प्रतिभाशाली थे। वे रियासत से अनबन होने के कारण संवत् १७२४ में फलौदी से बीकानेर जाकर बस गए। इस परिवार ने बनारस में "तिलोकसी अमरसी" फर्म स्थापित की। तिलोकसी के पुत्र अमरसी ने इन्दौर में शाखा खोली। आप राजमाता अहिल्याबाई के राखी बन्द भाई थे। इसी परिवार के सदासुख जी ढ़ढ़ा ने जयपुर में सांगानेरी गेट पर पचहत्तर हजार रूपयों की लागत से एक विष्णु मन्दिर और बाग का निर्माण करवाया। इनके पुत्र नैनसी जी ने इन्दौर में "पदमसी नैनसी" फर्म स्थापित की। इस फर्म की दूर-दूर तक बड़ी शाख थी एवं अनेक नरेशों के रूक्के प्राप्त थे। इस परिवार के सोभागमल जी ढढ़ा भी नामांकित व्यक्ति हुए। आपने पुष्कर के रास्ते पर एक सुन्दर बगीचा बनवाया। आप कई रेसीडेंसियों के बैंकर थे। सं. १९५२ में भारत सरकार ने आपको रायबहादुर के खिताब से सम्मानित किया।

जयपुर के सेठ गुलाबचन्दजी ढ़ढ़ा का खानदान तिलोकसी के द्वितीय पुत्र धरमसी जी के वंशज हैं। गुलाबचन्द जी ने उस समय एम. ए. पास किया था। वे ओसराल समाज में प्रथम एम. ए. थे। आपने अखिल भारतीय ओसवाल महा सम्मेलन के कलकत्ता अधिवेशन की अध्यक्षता की थी। आप समाजसुधारक एवं बड़ें सुलझे हुए विचारों के प्रतिष्ठित पुरुष थे। आपके पुत्र श्री सिद्धराज जी ढ़ढा को समाज में नए विचार, सुधार एवं नए सामाजिक आयाम लाने का श्रेय प्राप्त है। आप अखिल भारतीय सर्वसेवासंघ के अध्यक्ष रह चुके हैं। आप लोकनायक जयप्रकाश नारायण के प्रमुख सहयोगी रहे हैं। आपकी सेवाओं से समाज लाभान्वित होता रहेगा।

तिलोकसी जी के कनिष्ठ पुत्र टीकमसी जी का खानदान भी बीकानेर के प्रतिष्ठित परिवारों में से एक हैं। इस परिवार में सेठ मंगलचन्द जी नामांकित हुए। उन्होंने नए व्यवसायों का संचालन किया जिनमें कपड़ा, मूंगा और साबुन मुख्य हैं। मद्रास, रंगपुर, कलकत्ता में आपका बहुत बड़ा कारोबार है। कलकत्ता स्थित साबुन का कारखाना भारत में सबसे बड़ा है। यह २० बीघा में फैला है। आपके दत्तक पुत्र प्रतापसिंह जी सुधरे विचारों के देशभक्त सज्जन थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इस गोत्र के शिलालेख बीकानेर, देशनोक, नोखा, उदयपुर, जूनागढ़ आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

पूना के तलेरा खानदान का मूल निवास राजस्थान के जेतारण परगना का चावंडिया गांव था। संवत् १९७९ में सेठ मोतीलाल जी पूना आए एवं कपड़ा, किराणा कोयला वगैरह का व्यापार प्रारम्भ किया जिसमें आपको व्यापक सफलता मिली। तदुपरान्त आपने साहूकारी व जमीन क्रय-विक्रय के व्यवसाय में भरपूर सम्पत्ति अर्जित की। आपने होटल एवं सिनेमा व्यवसाय में भी पदार्पण किया एवं पूना के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में गिने जाने लगे। संवत् १९९८ में आप पूना सबर्वन नगर पालिका के सदस्य चुने गए एवं पाँच वर्षों तक उसकी स्टेंडिंग कमिटी के सभासद एवं फिर चेयरमैन रहे। उपाध्यक्ष रहने के उपरान्त संवत् २००३ में आप नगरपालिका के अध्यक्ष चुने गए। आप बड़े प्रतिभासम्पन्न एवं मिलनसार व्यक्ति थे। आप धार्मिक एवं सुलझे हुए विचारों के थे। प्रति वर्ष लाखों रूपए धार्मिक कार्यों में खर्च करते थे। चिंचवड़ में आपने "तालेड़ा भवन" नाम से एक छात्रावास का निर्माण कराया। पर्दाप्रथा के विरोध एवं अन्य समाज-सुधार के कामों में आप सदा अग्रणी रहे। सं. २०३१ में पूना में आपका देहान्त हुआ। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती इन्दुमती भी बड़ी धर्मपरायण महिला थीं। इस परिवार ने एक लाख रूपए का धर्मार्थ ट्रस्ट कायम किया है। इनके सुपुत्रों सर्वश्री कन्हैयालाल, चन्दुलाल एवं सुरेशचन्द ने अत्यन्त कर्तव्यनिष्ठा से अपने माता-पिता की परम्परा को आगे बढ़ाया है एवं होटल व्यवसाय में अग्रणी माने जाते हैं।

भणसाली/सोलंकी/आभू

महाजनवंशमुक्तावली में दिए कथानक के अनुसार आभूगढ़ में सोलंकी राजा आभडदे राज्य करते थे। उनके जो भी सन्तान होती, मर जाती। राजा बड़े व्यथित थे। तभी संवत् ११६८ में श्री जिनवल्लभ सूरि उधर पधारे। राजा के जैनधर्म धारण करने का वचन देने पर सूरि जी ने आशीष दी और सात रानियों से सात पुत्र हुए। राजा-रानी ने भंडसाल में वासक्षेप लिया अतः भणसाली कहलाने लगे। पुत्रों के पिता के नाम पर आभू शाखा प्रसिद्ध हुई। कालांतर में गुरु महाराज की व्यथा शान्ति के लिए पूरा परिवार बलिदान करने पर उन्हें खरा भंसाली कहा जाने लगा। यति रामलालजी ने इस सन्दर्भ में भी अणहिल पाटन के भणसाली गोत्रीय श्रेष्ठि अंबड़ की कथा दी है। यह कथा विभिन्न सम्प्रदायों के वैमनस्य की प्रतीक है एवं इसकी सत्यता संदिग्ध है।

लूंकड़/कवाड़िया/ठाकुर/हंस

मथुरा के नरवाहन सोलंकी ने जैनधर्म अंगीकार किया। कहते हैं संवत् १००१ में नाणवेड़ा में धनेश्वर सूरि ने उसे ओस वंश में शामिल किया। उस समय वहाँ बारह प्रमुख व्यक्ति थे। उनसे बारह गोत्र हुए: लूंकड़, वग, हंस, ठाकुर, कवाडिया, तोलेसरा, सोलंकी, सेठिया, नाग सेठिया, रिखब आदि। ये धनेश्वर सूरि किस गच्छ के थे, इसका उल्लेख नहीं मिलता।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इन गोत्रों के शिलालेख बीकानेर, पालीताणा, गुडा, कोडमदेसर, संगरिया, पाटण, सादड़ी आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

सोलंकी सेठीया/नाग सेठिया

इस गोत्र की उत्पत्ति सोलंकी राजपूतों से मानी जाती है। मथुरा के राजा नरवाहन सोलंकी ने किन्हीं जैनाचार्य से प्रतिबोध पा जैनधर्म अंगीकार किया। संवत् १००१ में नाणवेडा (गोड़वाड प्रान्त) नामक स्थान पर भट्टारक धनेश्वर सूरि ने राजा नरवाहन एवं १२ अन्य राजाओं को ओसवाल कुल में शामिल कर उनके १२ गोत्र स्थापित किए: ठाकुर, हंस, वग, लूंकड, कवाड़िया, सोलंकी, धर्म, तोलेसरा, सेठिया, रिखब आदि।

कहा जाता है कि संवत् १४७२ में इस सोलंकी सेठिया गोत्र में उधमाण गांव में सेठ अर्जुन जी हुए। आपके घर एक दिन तेले के पारणे के लिए जल्दी चूल्हा जलाया गया। चूल्हे में एक नाग बैठा था, वह बड़ा कुपित हुआ। उसी समय सेठ की पुत्रबधू दूध लेकर आ रही थी। उसने नाग की यह हालत देखकर दूध डाल कर अग्नि बुझा दी इससे नाग देवता बड़े प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दिया। तभी से यह गोत्र नाग सेठिया नाम से प्रसिद्ध हुआ। कोई-कोई अपने को नागदा सेठिया या सोलंकी सेठिया भी कहने लगे। तभी से इस कुल में लड़की के ब्याह के समय नाग नागिनी को फूल पहराने की प्रथा चालू हुई।

कई पीढ़ियों पश्चात् इस कुल में उदा जी हुए। वे बगड़ी में रहते थे। संवत् १७०७ में यह परिवार बलूंदा चला आया। संवत् १८७५ में इस परिवार के सेठ गुलाबचन्द जी ने जालना में अपनी फर्म स्थापित की। कालान्तर में इस परिवार ने मद्रास में व्यवसाय (बैंकिंग) शुरू किया एवं बिरादरी के अनेक भाइयों का वहां व्यवसाय शुरू करवाया। इसी परिवार के हिम्मतराम जी को बलूंदे ठाकुर ने नगरसेठ की पदवी दी।

(१२). 'गौड़' राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. छजलाणी/घोड़ावत	४. सेठी
२. गोठी	५. रांका/बांका
३. सेठिया	६. दक

छजलाणी/घोड़ावत

इस गोत्र की उत्पत्ति जावलनगर के राजपूत राजा रावत बीरसिंह से मानी जाती है। राजा को शिकार का बड़ा शौक था। उन दिनों रुद्रपल्ली गच्छ के आचार्य श्री जयप्रभ सूरि जावल नगर पधारे। उन्होंने निरपराध जीवों की हिंसा न करने का उपदेश दिया। राजा महाजन बन गया। परन्तु उनकी कुलदेवी नवरतों में भैंसा/बकरा बलि न मिलने से उत्पात करने लगी। सूरि जी ने उत्पात शान्त करवाया। राजा ने पुत्र छजुकुमार को देवी की मूर्ति जलपारण करने का हुक्म दिया। पुत्र ने वैसा ही किया। छाजू जी के वंशज छजलाणी कहलाने लगे। वे देवी की

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पूजा नहीं करते। इनके वंशजों में शेरसिंह नाम का पुत्र नागौर जा बसा। वह घोड़ों का बहुत शौकीन था। इसलिए उनके वंशज घोड़ावत कहलाने लगे।

घोड़ावतों की ख्यात में इनकी उत्पत्ति गौड़ राजपूत रावत वीर सिंह से मानी जाती है। वीर सिंह के पुत्र छाजू जी के वंशज छजलाणी हुए और दूसरे पुत्र वैरीसाल के वंशज पहले गौड़ राजपूत होने से गोडावत कहलाने लगे। गोडावत का रूपान्तर ही घोड़ावत बन गया। छजुकुमार कवि थे- उनका बनाया एक कवित्त बड़ा प्रसिद्ध है:—

नंदन की नथ रही, वीसल की बीस रही
रावण की सब रही, पीछे पछताओगे
उततें न लाये आथ इतते न चले साथ
इतहीं की जोरी तोरी इतहीं गमाओगे
हेम वीर घोड़ा काडू के न चल साथी
वाट के बटाऊ जैसे कल ही उठ जाओगे
कहत हैं छजुकुमार सुण हो माया के यार
बंधी मुठी आये हो, पसार हाथ जाओगे।

गोठी

संवत् ११५२ में मेघा सार्थवाह नामक एक किराने के व्यापारी ने अणहिल पट्टन के यवन शासक से ५०० मुहर देकर एक जैन प्रतिमा खरीदी। उसने गोड़वाड़ प्रदेश में एक सुन्दर मन्दिर का निर्माण करवाया एवं आचार्य जिनदत्त सूरि से उसकी प्रतिष्ठा करवाई। उसने जैनधर्म अंगीकार किया। इनके पुत्र का नाम गौड़ी था। गुजरात में वे गौड़ी श्रावक कहलाने लगे। कालान्तर में उनका गोठी गोत्र बन गया। गुजरात में देव पुजारियों को गोठी भी कहते हैं। सम्भवतः उनके वंशज गोठी कहलाने लगे। इस गोत्र के शिलालेख, अजमेर, सिरपुर, ओरग्राम, ग्वालियर आदि स्थानों पर प्राप्त हुए हैं।

इस खानदान के परिवार थली, परभनी, वतूल, पलणी, नासिक, सरदारशहर, भरतपुर आदि स्थानों में निवास करते हैं। वतूल वाले सेठ प्रतापमल लखमीचन्द गोठी के खानदान का मूल निवास वाक्स (जोधपुर) था। सेठ प्रतापचन्द्र जी यहां के आनरेरी मजिस्ट्रेट थे। इस परिवार की यहां बहुत बड़ी जमींदारी है। महायुद्ध के बाद कोयले की खदानी का संचालन शुरू किया। इस परिवार के श्री दीपचन्द जी गोठी राष्ट्रीय आन्दोलन में शरीक हुए एवं जेल गए। जमींदारी के अलावा यह परिवार चांदी-सोने एवं बैंकिंग का व्यवसाय करता है। इटारसी, जुनरदेव आदि अनेक स्थानों पर इनकी दूकानें है। परभनी के सेठ बालचन्द गंभीरमल का खानदान करीब २०० वर्ष पूर्व जिलाड़ा से आया है। नासिक के श्री मनोहरमल जी गोठी का परिवार महामन्दिर (जोधपुर) से आया है। आप बम्बई के ओसवाल मित्र-मंडल के मंत्री रहे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सरदार शहर के गोठी परिवार के सेठ चिमनीराम जी ने जलपाईगुड़ी में जमींदारी स्थापित की। इस परिवार का कलकत्ते में जूट का व्यवसाय भी होता है।

भरतपुर के सेठ रतनचन्द के खानदान का मूल निवास देवीकोट (जैसलमेर) था, जो करीब १५० वर्ष पूर्व आकर भरतपुर बसा। फौज में लेन-देन के मुख्य व्यवसाय के अतिरिक्त यह परिवार साधारण बैंकिंग एवं गिरवी के व्यवसाय में संलग्न रहा। इस खानदान के सेठ हजारीमल जी गणमान्य व्यक्ति थे। वे म्यूनिसिपल कमिश्नर, कोर्ट अशेसर एवं आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए।

सेठिया (सेठी, रांका)

वल्लभी (सौराष्ट्र) में काकू और पाताक नामक दो गौड़ क्षत्रिय गरीब भाई रहते थे। यति रामलाल जी की "महाजनवंशमुक्तावली" में दिए कथानक के अनुसार जैनाचार्य नेमिचन्द सूरि से दोनों भाईयों ने सम्यकत्व ग्रहण किया। वृद्धावस्था में राजा ने उन्हें धन छीन कर देश से निकाल दिया। तब दोनों भाईयों ने यवनों की फौज लाकर वल्लभी नगर का विध्वंस कराया। वल्लभी के नाश होने पर ये लोग मरु प्रदेश की ओर आकर बस गए। इनकी ५वीं पीढ़ी में पाली नगर के पास एक गांव में रांका और बांका नामक दो राजपूत कृषि से गुजारा करते थे। आचार्य जिनवल्लभ सूरि के उपदेश से उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया। एक बार खेत से लौटते समय रास्ते में सर्प ने आ घेरा। तब इन्होंने चामुंडा देवी के मन्दिर में शरण ली। देवी की प्रेरणा से इन्होंने मदिरा, मांस का त्याग किया एवं खेती छोड़ कर व्यवसाय शुरू किया। वि.सं. ११८५ में आचार्य जिनदत्त सूरि के उपदेश से श्रावक के बारह व्रत ग्रहण किए। एक बार एक योगी ने एक तूंबी इन्हें दी, जिससे टपके रस की की बूंद तवे पर पड़ते ही स्वर्ण बन गई। इन्होंने उस तूंबी से असंख्य द्रव्य अर्जित किया और व्यापार बढ़ाया। इन्हीं में से रांका की सन्तानें सेठी और बांका की सन्तानें सेठिया गोत्र से प्रसिद्ध हुई। एक बार सिद्धपुर पाट्टण के राजा को युद्ध के लिए धन की जरूरत पड़ी। रांका बांका ने ५६ लाख रूपएं दिए। राजा ने प्रसन्न होकर सुवर्ण पट्ट मस्तक पर रखने की आज्ञा दी। कालान्तर में इस गोत्र की भी अनेक शाखाएं हुई यथा— काला, गोरा, दक आदि।

श्री सोहन राज जी भंसाली ने अपने ग्रंथ 'ओसवंश' में जैसलमेर की एक ख्यात का जिक्र किया है। जिसके अनुसार बादशाह के यहाँ मोदीखाना का कार्य करने से इन्हें सेठ की पदवी मिली। इस वंश के श्रेष्ठियों ने धार्मिक कार्यों में लाखों रूपए खर्च किए। जैसलमेर के रांका श्रेष्ठि जयसिंह नरसिंह ने संवत् १४५९ में जैसलमेर दुर्ग में पार्श्वनाथ स्वामी का भव्य कलापूर्ण मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर में १२५२ जिन बिम्ब प्रतिष्ठित किए गए, जो आज भी विद्यमान हैं।

श्री बलवंत सिंह मेहता के अनुसार सम्भवतः ऊन के व्यापारी होने से इनका खानदान रांका कहलाने लगा। पंजाब में 'रंक' जाति की बकरी की ऊन बड़ी पसंद की जाती थी। पाणिनी कालीन भारत में भी रांका ऊन का व्यवसाय प्रचलित था।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वर्तमान में सेठिया खानदान का निवास बीकानेर, सरदारशहर, सुजानगढ़, रिणी आदि स्थानों पर है। सेठी परिवार मुल्तान, नागपुर आदि स्थानों पर निवास करते हैं। रांका कुल के परिवार नागपुर, मद्रास, नासिक, पूना, चिंचवड़ आदि स्थानों पर रहते हैं। इनके अलावा व्यवसाय के सिलसिले में भी वे भारत के विभिन्न प्रान्तों में फैले हुए हैं।

यति श्रीपालचन्द्रजी के अनुसार पाली नगर के दो राजपूत काकू और पाताक ने वि. सं. ११८५ में आचार्य जिनदत्त सूरि से जैनधर्म अंगीकार किया। काकू बहुत दुर्बल था। अतः लोग उसे रांका नाम से पुकारने लगे। पाताक के दो पुत्र काला और बांका थे। जिनकी औलाद काला और बांका कहलाए। रांका को नगरसेठ का पद मिला अतः उसकी औलाद सेठिया कहलाने लगे।

स्व. चम्पालाल जी सेठिया की डायरी में दर्ज चांदमल जी सेठिया से प्राप्त सेठिया परिवार (तालाब वाला) सुजानगढ़ की १९८६ में प्रकाशित डाईरेक्टरी में दिए कथानक के अनुसार देईदान जी परमार (क्षत्रिय) दिल्ली में व्यापार करते थे। वि. सं. १४२० में आचार्य जिनदत्त सूरि जी के उपदेश से जैनधर्म अंगीकार किया। उनके दो पुत्र थेः — बांकीदास और रांका। संवत् १४५५ में बादशाह अकबर की "दिल्ली के व्यापारियों में सबसे धनाढ्य कौन" जानने की इच्छा हुई। सब साहूकार इकट्ठे हुए। बादशाह ने कहाः "पहले साह पीछे बादशाह" कहावत गलत है। महाजनों ने तर्क रखा कि बादशाह का प्रभाव सिर्फ अपने राज्य में ही हैं, लेकिन व्यापारी हर मुल्क में इज्जत पाता है। साह शब्द का अर्थ है सच्चा व्यापारी जो क्रय-विक्रय में पूर्ण सत्यता बरतता है। अपने मुल्क की पैदायशी वस्तु को दूसरे मुल्क में ले जाकर बेचता एवं दूसरे मुल्क से वस्तु को खरीद करके अपने मुल्क की जरूरत को पूरी करना। वक्त पर बादशाह की जरूरत को शाह पूरी कर सकता है। बिना शाह के बादशाह भी शोभा नहीं पाता इसीलिए "पहले साह और पीछे बादशाह" कहावत का प्रचलन हुआ। बादशाह ने कहा: "अगर तुम लोग मेरी फौज का खर्च ६ महीने तक दो तो" "पहले साह पीछे बादशाह" मानूंगा। वरना तुम लोगों को "पहले बादशाह पीछे साह" मानना होगा। दूसरे दिन सब महाजन इकट्ठे हुए, चिट्ठा करने के लिए। उस वक्त बांकीदासजी ने कहा "यदि पंच हुक्म दें तो बादशाह की फौज का ६ महीने का खर्च मैं अकेला दे दूं। पंचों को ले जाकर बांकीदास जी ने अपना धन-भण्डार दिखाया। दूसरे दिन बांकीदास जी ने ५ खच्चरों पर ९० हजार अशर्फियां लाद कर बादशाह के नजराने की भेज दी। बादशाह ने अपने वजीर टोडरमल को भेजकर बांकीदास जी को बुलवाया। बांकीदास जी ने अर्ज किया "बादशाह सलामत हुक्म करें तो मैं अकेला १२ महीने का खर्च दे सकता हूँ।" सुनकर बादशाह बहुत खुश हुए, कहाः "पहले साह पीछे बादशाह" बिल्कुल सही है। और बांकीदास जी को वि. सं. १४५५ फाल्गुन सुदि ११ में "सेठ" की पदवी व घोड़ा सिरोपाव बक्सीस किया। उसी रोज सें वे सेठ कहलाने लगे। बांकीदास जी का व्यापार गुजरात में भी था। गुजराती लोग धनाढ्य को सेठिया कहते हैं। इसी से बांकीदास जी का खानदान "सेठिया" हुआ और रांकाजी का "रांका" कहलाने लगा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बांकीदास जी के ३ पुत्र हुए: हेमराज, बीरभाण और संगतसिंह। हेमराज और संगतसिंह के परिवार जांगलू गांव में आबाद हुए। बीरभाण के पुत्र गोयनदास बीकानेर जाकर बसे। गोयनदास के ५ पुत्र हुए: पृथ्वीराज, थावरचन्द (थिरवाल) गुमानसिंह, चोथमल और पिचाणदास। इनके थावरचन्द के वंशज बीकानेर में अब भी मौजूद हैं। इसी परिवार के सेठ उदयचन्द जी का स्वर्गवास हो गया तब उनके पुत्र मगनीराम अल्प वयस्क थे। परिवार बीकानेर में सर्राफा का धन्धा करता था। वे राज के बोहरा थे। दरबार को जब रूपयों की जरूरत पड़ी तो मगनीराम के परिवार से रूपया मांगा। उन्होंने देने से इन्कार कर दिया। इसलिए दरबार साहब ने कर्ता खानदान को अटक कर दिया। मगनीराम की माता को भय हुआ। इसलिए वे अपने लड़के को साथ लेकर अपने पीहर गोहरत (मारवाड़) चली गई।

सुजानगढ़ का सेठिया खानदान

सुजानगढ बसे हुए सेठिया परिवार का सम्बन्ध उक्त बांकीदास जी के पुत्र वीरभाण से है। इस खानदान के उदयचन्द जी बीकानेर में सर्राफा का धन्धा करते थे। इनके पुत्र मगनीराम जी अपनी माता के साथ सं. १८१३ में ननिहाल गोहरता (मारवाड़) चले गए। उनके पुत्र ज्ञानचन्द जी सुजानगढ़ आकर बसे। एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार इस खानदान का मूल निवास मूंडवा तथा जीली था। जीलीमें सेठ ज्ञानचन्द मात्र पच्चीस रूपए लेकर सिराजगंज गए एवं वहां अच्छा धन कमाया। आपके तीन पुत्र थे: रतनचन्दजी, बालचन्द जी एवं हनूतमल जी। वि. सं. १८९६ में ज्ञानचन्द जी का देहान्त हो गया। सेठ हनूतमल बीकानेर राज्य के मुत्सद्दी रहे। उन्होंने जसवन्तगढ़ नगर बसाया। रतनचन्द जी के चार पुत्र हुए: हजारीमल जी, हरखचन्दजी, लूणकरण जी एवं रूपचन्द जी। इनमें रूपचन्द जी बड़े प्रतापी हुए। इनका जन्म संवत् १९२३ में हुआ। तेरापंथ श्वेताम्बर सम्प्रदाय के वे बड़े सम्मानित श्रावक थे। उनकी जीवनी ग्रन्थ में अन्यत्र दी जा रही है। आपके ३ पुत्र हुए: माणकचन्द जी, कुन्दनमल जी, छगनमलजी। इनमें कुन्दनमल जी ने सामाजिक हित की अनेक योजनाओं को साकार किया। छगनमल जी बड़े निर्मल स्वभाव के व्यक्ति थे। उनके कनिष्ठ पुत्र कन्हैयालाल जी भारत के स्वतन्त्रता सेनानियों में अग्रगण्य रहे। वे हिन्दी एवं राज-

सेठ भैरोंदानजी सेठिया (अ. भ्रे. सेठिया) बीकानेर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

स्थानी भाषा के साहित्य मनीषी, कवि एवं चिन्तक हैं। सेठ हनूतमल जी का जन्म संवत् १८८३ में एवं मृत्यु १९५५ में हुई। उनके तीन पुत्र हुए: चुन्नीलाल, तोलामल, दौलतराम। सेठ तोलामल जी के तीन पुत्र हुए: चांदमल, मूलचन्द और खूबचन्द। मूलचन्द जी समाज के अग्रगण्य नेता थे। खूबचन्द जी ने परिवार में विलायत जाने का मार्ग खोला और तब से अनेक पारिवारिक जन वहां जाकर बस गये। मूलचन्द जी के तीन पुत्र हुए: डालमचन्द, सोहनलाल, बाबूलाल। डालमचन्द जी विलायत में बैरिस्टर बन कर भारत लौटे। ओसवाल समाज के प्रथम बैरिस्टर होने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती फूलकुमारी सेठिया समाज की अग्रगण्य महिला नेत्रियों में से हैं।

बीकानेर के सेठ अगरचन्द भेरूदान सेठिया का खानदान बड़ा प्रसिद्ध रहा है। सेठ भेरूदान जी की जीवनी ग्रंथ में अन्यत्र दे रहे हैं। संवत् १९४८ में मात्र तीन हजार की पूँजी से कलकत्ते में रंग व मनिहारी की दूकान खोली। धीरे-धीरे आपने बेल्जियम, आस्ट्रिया एवं स्वीट्जरलैंड से रंग व सामान की सोल एजेन्सी हासिल कर ली। इससे आपने बहुत सम्पत्ति अर्जित की। भारत में पहला रंग का कारखाना लगाने का श्रेय इस परिवार को है। बम्बई, मद्रास, कानपुर, दिल्ली, अमृतसर, करांची, अहमदाबाद आदि प्रमुख व्यापारिक केन्द्रों में फर्मे स्थापित कर इस परिवार ने वायुवेग से उन्नति की। संवत् १९७२ में आप बीमार पड़े और बीकानेर चले गए। होमियोपैथी दवा से लाभ होने पर आपने घर बैठे होमियोपैथी दवाओं का मुफ्त वितरण शुरू कर दिया। धार्मिक एवं साहित्यिक रुचि के कारण आपने शास्त्र प्रकाशन का काम शुरू किया। आपने अनेक लोकोपकारी, शैक्षणिक धर्म प्रभावक संस्थाएं स्थापित की। सरदार शहर के श्री खुशालचन्द जी सेठिया का खानदान भी उक्त परिवार का ही एक अंग है। संवत् १८७८ में पैदल सफर कर इस परिवार ने रंगपुर, कूंचबिहार आदि स्थानों पर कपड़े का व्यापार आरम्भ किया एवं अद्भुत सफलता अर्जित की।

इस परिवार के सेठ श्रीचन्द जी सरदार शहर में आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किए गए थे। तौल्या सर से १५० वर्ष पूर्व आकर सरदार शहर में बसे सेठ ताराचन्द जी गरीबों के बड़े पृष्टपोषक थे।

रिणी का सेठ गुलाबचन्द धनराज सेठिया का खानदान बहुत समय से वहीं निवास करता है। कलकत्ते में कपड़े और जूट के व्यवसाय करते हैं।

नागपुर बसे सेठ नथमल बख्तावरचन्द सेठी परिवारों का मूल स्थान बीकानेर हैं। करीब २०० वर्ष पूर्व सेठ बख्तावर ने यहां आकर बड़ी प्रतिष्ठा अर्जित की। मुल्तान (पंजाब) बसे सेठ प्रेमचन्द धरमचन्द सेठी के खानदान का मूल निवास भी बीकानेर था। आपका वहां जवाहराती का व्यापार था, फिर हाथी-दांत और कपड़े का व्यवसाय शुरू किया। इस परिवार ने मुल्तान में एक विशाल जैन मन्दिर बनवाया। पार्टीशन के बाद ये परिवार भारत आकर बस गए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रांका खानदान के अनेक परिवार जामनेर, नागपुर, मद्रास, नासिक, पूना, चिंचवड, कलकत्ता आदि स्थानों पर निवास करते हैं जो जोधपुर के निकट के विभिन्न गावों से उठे हैं। मद्रास के श्री सोभागमल जी के खानदान का मूल निवास नागौर था। नागौर से हैदराबाद और संवत् १९६७ में मद्रास आकर बस गए। मद्रास में बैंकिंग व्यवसाय किया। सेठ कोडामल बीरीदास रांका का परिवार बगड़ी से उठ कर आया है। इस परिवार ने आशातीत उन्नति की। धर्मशालाएं बनवाई। नासिक का सेठ सूरजमल हंसराज रांका का परिवार १५६ वर्ष पूर्व नासिक आया। किराने का काम शुरू किया और खूब सम्पत्ति अर्जित की। चिंचवड स्थित सेठ कीरतमल पन्नालाल रांका के परिवार का मूल निवास भावी (जोधपुर) था। यहां आकर कपड़े व अनाज के व्यापार में खूब सफलता पाई। कलकत्ते का जौहरी लाभचन्द जी रांका के खानदान का पूर्व निवास जयपुर था। सेठ लाभचन्द जी ने १३० वर्ष पूर्व कलकत्ता आकर जवाहरात का काम किया। आप कोर्ट ज्वेलर थे। इनके परिवार विभक्त होकर मुख्यतः इसी व्यवसाय में रत हैं।

सेठिया— रांका खानदान के अनेक शिलालेख १५वीं से १९वीं शताब्दी के बीच अलवर, उदयपुर, नागौर, जैसलमेर, मिर्जापुर, राजगृह. दिल्ली, अयोध्या, ऊंझा, बीकानेर आमेर, जूनिया, सवाई माधोपुर, जयपुर, चाडसू, रतलाम, किशनगढ़, आगरा, बम्बई, थराद, अजीमगंज, अहमदाबाद, शत्रुञ्जय आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

१३. (अ) माहेश्वरी जाति से बने गोत्र

१. कोचर
२. लूणिया
३. लोढ़ा
४. मालू
५. भाभू
६. लूंकड़
७. डागा
८. बांभ
९. रीहड़

(ब) खंडेलवाल जाति से बने गोत्र

१. ओसवाल खंडेलवाल
२. कोठारी
३. गांधी
४. जौहरी

कोचर

राजा विक्रमादित्य और भोज (विक्रमात ७२१ वर्ष) के वंश में राजा महिपाल जी नामक प्रसिद्ध राजा हुए। आपने तप गच्छ के आचार्य महात्मा पोसालिया से जैनधर्म अंगीकार किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उनके कोचर जी नामक पुत्र थे। वे बड़े पराक्रमी तथा साहसी पुरुष थे। उनकी सन्तानें कोचर कहलाई।

महाजन वंश मुक्तावली में यति रामलाल जी ने कोचर गोत्र के बारे में विस्तार से लिखा है। उनके अनुसार इनके पूर्वज पहले जैनधर्मी थे। फिर माहेश्वरी बने और वहां से निकल कर ओसवालों में सम्मिलित हुए। मालवा देश की सीमा पर खण्डप्रस्थ नगर था जिसे अब खण्डेला कहा जाता है। वहां का राजा दिगम्बर जैन था। उसके कोई पुत्र न था। नानाविध पूजन करने से चक्रेश्वरी देवी ने पुत्र का वरदान दिया। पुत्र हुआ: सुजाणकंवर, बड़ा प्रतापी और धर्मानुरागी। यज्ञ, कर्म काण्ड आदि का पोषक न होने के कारण ब्राह्मण समाज परेशान हो गया। उन्होंने षडयन्त्र किया। सुजाणकंवर की जागीर के चार पुत्र राजपूतों को फांट कर आबू पर्वत पर यज्ञ का आयोजन किया। भीलों की सहायता से सुजाण कुंवर यज्ञ का विध्वंश करने आए। ब्राह्मणों ने सुजाणकंवर व उसके ७३ सामन्तों को विष धूम से बेहोश कर दिया। फिर भील-भीलणी को महेश-पार्वती का स्वांग रचा कर उन्हें सचेत किया। सुजाण कुंवर व उसके ७३ सामन्तों को शैव धर्म अंगीकार करवाया। ये माहेश्वरी कहलाए।

राज्य पर चारों राजपूतों जो पड़िहार, परमार, चौहान और सोलंकी कहलाए, का अधिकार हो गया। सुजाण कुंवर के वंशज मालवा छोड़ डीडवाना आ बसे तब से माहेश्वरी डीडवाणिये कहलाए। कालान्तर में उन्हें डीडू माहेश्वरी कहा जाने लगा। संवत् ९५८ में सिरोही के पवार वंशीराज ने डीडू माहेश्वरी वंश के मोहता डोडा जी को दीवान नियुक्त किया। 'महेश्वर-कल्पद्रुम' के अनुसार वे राठी कहलाते थे। वि. सं. ९५८ में हरिभद्र सूरि के उपदेश से डोडा जी ने जैनधर्म अंगीकार किया। इनके पौत्र श्यामदेव जी शैवमत वालों की संगत में थे। वि. सं. १००९ में श्रीनेमिचन्द्र सूरि ने पुनः उनका मिथ्यात्व छुड़वाया। श्यामदेव जी के पुत्र रामदेव पालनपुर (गुजरात) जा बसे और बोहरा कहलाने लगे। वि. सं. १३८५ में इनके वंशज मण्डोर आ बसे। संवत् १४४५ में इनके वंशज महीपाल जी को मारवाड़ के राव चूंडा जी ने मुहंता पद दिया। उनके कोई पुत्र न था। इन्हीं दिनों तपा गच्छ के महात्मा वहां पधारे। उन्होंने वरदान दिया: "वीसलदेवी मनाओ, पुत्र होगा, तब देवी कोचरी के रूप में बोलेगी सो कोचर नाम देणा।" वैसा ही हुआ। पुत्र हुआ, उसका नाम कोचर दिया। पीछे कोचरजी सं. १५१५ में फलौदी जा बसे। वि.सं. १६७३ में महाराजा सूरसिंह के संग उरझा जी कोचर अपने ४ पुत्रों के साथ बीकानेर आए। उन्हें लेखण की खजमत इनायत की। उन्हीं उरझा जी के वंशज वर्तमान में बीकानेर में हैं। कालान्तर में इस खानदान के लोग सायर मंडी, रतनगढ़, बीदासर, राजगढ़ जा बसे। फलौदी रहे परिवारों में से अनेक जोधपुर, मारवाड़ जा बसे। फलौदी के अनेक कोचर कानूगा कहलाते हैं।

इसी वंश में आगे चलकर जियाजी रूपा जी आदि नामांकित व्यक्ति हुए जिनकी सन्तानें, रूपाणी आदि नामों से मशहूर हुई। इस खानदान के लोग पालनपुर, मण्डोर, फलौदी, जोधपुर, सोन, बीकानेर, अमृतसर, हिंगनघाट, सिकन्दराबाद, हैदराबाद, नरसिंहपुर, बेलगांव, त्रिचनापल्ली, करंगी आदि भारत के विभिन्न नगरों में निवास एवं व्यवसाय करते हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सोजत का कोचर परिवार पालनपुर से पुगंल, मण्डोर, फलौदी, जोधपुर होता हुआ यहां आकर बसा। इनका वंश आदि पुरुष कोचर जी की ९वीं पीढ़ी के कुशालचन्द जी से शुरू होता है। उनके पुत्र कोचर मेहता सूरजमल जी को संवत् १८६२ में जोधपुर महाराजा मानसिंह जी ने मारवाड़ राज्य की दीवानगी का सम्मान दिया। आपके भाई बहादुरमल जी राज्य की ओर से लड़ते हुए संवत् १८६६ में भीनमाल की लड़ाई में काम आए थे। इसी परिवार के मेहता जीतमल जी फलौदी और पाली के हाकिम रहे। उन्होंने भी राज्य की ओंर से कई लड़ाइयां लड़ी। मेहता बुधमल जी को संवत् १८७८ में जोधपुर की दीवानगी प्राप्त हुई। राज्य की ओर से इस परिवार को कई रूक्के एवं सम्मान मिले।

जोधपुर का कोचर मेहता खानदान आदि पुरूष कोचरजी की ५वीं पीढ़ी में हुए झांझण जी के पुत्र बेलाजी से शुरू होता है। संवत् १६६४ में जोधपुर दरबार सूरसिंह जी ने बेला जी को दीवानगी एवं सिरोपांव बख्शा। पहले यह परिवार गुजरात और फलौदी में रहता था। सं. १६६१ में बेला जी की योग्यता और परिश्रम से बादशाह ने जोधपुर दरबार को मेड़ता की जागीर दी। इनके पुत्र जगन्नाथ जी संवत् १६९२ में फलौदी के हाकिम थे। उनके पुत्र सांवलदास जी सीवाणा के हाकिम रहे। उनके भाई मेहता गोपालदास जी सीवाण, तोड़ा और जोधपुर के हाकिम रहे। दरबार ने उन्हें जागीर एवं पालकी, सिरोपाव इनायत किया। उनके पुत्र सम्पत्ति-शाली व्यक्ति हुए। आपको संवत् १८१३ में जागीर एवं ४०० बीघा जमीन इनायत हुई। इनके पुत्र भाईदासजी को संवत् १८८२ में जोधपुर दरबार की ओर से गांव जागीर में मिले। कुंभलगढ़ खाली कराने के एवज में दरबार ने उन्हें दुशाला एवं सिरोपाव दिया। परिवार के अन्य अनेक सदस्यों को भी जागीरें प्राप्त हुई।

हिंगनघाट के सेठ रायमल मगनलाल का कोचर मूथा का मूल निवास हस्मोरा (जोधपुर) था। सेठ रायमल संवत् १९१६ में नागपुर आए एवं कपड़े का व्यवसाय किया। इस परिवार के पुखराज जी कोचर बड़े देशभक्त एवं समाजसेवी थे। आप म्यूनिसिपल बोर्ड के सदस्य एवं भद्रावती जैन गुरूकुल के सभापति रहे। सिकन्दराबाद का रूपाणी कोचर मूंथा खानदान संवत् १८९८ में फलौदी से आकर यहां बसा। इनके पूर्वज सेंठ धीरजी बड़े बहादुर थे। वे फौज के साथ रसद सप्लाई करते हुए काबुल तक हो आए थे। आपने बैंकिंग व्यवसाय शुरू किया। इस परिवार ने पावापुरी में एक धर्मशाला बनवाई। फलौदी का सेठ माणकलाल अमरचन्द का कोचर खानदान कोचर जी के पुत्र जीया जी के वंशज थे। इन्होंने मुल्तान, अहमदपुर, हैदराबाद, भागलपुर आदि स्थानों पर दूकानें खोलीं। सेठ मोतीलाल जी ने फलौदी में सराय बनवाई। सेठ अमरचन्द कोचर ने राणीसर के तालाब के पास एक जैन मन्दिर बनवाया। इस समय आपके यहां बैंकिंग व्यवसाय होता है। हैदराबाद स्थित सेठ मदनचन्द रूपचन्द कोचर का खानदान मूलतः बीकानेर का है एवं बैंकिंग एवं जवाहरात का कारोबार करता है। फलौदी स्थित सेठ मगनमल पूनमचन्द के खानदान का मूल निवास फलौदी था। आपको जोधपुर राज्य की ओर से कानूनगो की पदवी मिली है। इस परिवार ने हैदराबाद,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

टिंडीवरम, पनरोटी, माथावरसम आदि अनेक स्थानों पर अपनी दूकानें खोली। सेठ पूनमचन्द जी धार्मिक और परोपकारी पुरूष थे। आपने फलौदी में दो स्वामी वत्सल किए।

नरसिंहपुर में निवास करने वाला कोचर खानदान मूलतः फलौदी निवासी है। वहां से संवत् १८६३ में व्यापार निमित्त मुंजासर गए तथा वहां से नरसिंहपुर आकर बस गए। इस खानदान में कोचर माणकलाल जी ओसवाल सम्मेलन मालेगांव एवं यतवमाल के सभापति चुने गए थे। आप अनेक संस्थाओं से जुड़े थे एवं गांधी जी के असहयोग आन्दोलन के समय आपने वकालत छोड़ दी थी। आप अनेक शैक्षणिक व सार्वजनिक बोर्डों के सदस्य रहे।

बेलगांव के सेठ मूलचन्द बीसलाल कोचर परिवार मूलतः सोजत निवासी हैं। सेठ मंगनीराम जी के पुत्र मूलचन्द जी वगैरह संवत् १९३० में बेलगांव आए एवं कपड़े का व्यवसाय शुरू किया।

त्रिचनापल्ली का सेठ सुजानमल चांदमल कोचर खानदान मूलतः फलौदी निवासी है। इनके पूर्वज सेठ सुजानमल पल्टन के साथ त्रिचनापल्ली आए। ये रिजिमेन्टल बैंकर्स बोले जाते थे क्योंकि अधिकांश व्यवसाय पल्टन के लोगों से था। आप लोगों का अंग्रेज अफसरों से अच्छा मेल था। व्यापार में खूब सम्पत्ति एवं प्रतिष्ठा अर्जित की। मेहता चांदमल जी फलौदी म्यूनिसिपलिटी के सदस्य रहे।

अमृतसर में बसा सेठ शिवचन्द रोशनलाल कोचर का खानदान करीब १२५ वर्ष पहले बीकानेर से यहां आया। इनके यहां पश्मीने एवं आढ़त का काम होता है।

कटंगी का सेठ उदयचन्द गुलाबचन्द कोचर खानदान मूलतः नागोर वासी है। इनके यहां सोने-चांदी एवं कपड़े साहूकारी का काम होता है।

बीकानेर का कोचर खानदान कोचर जी के वंशज उरझाजी से शुरू होता है। संवत् १६७२ में महाराजा सूरसिंह के आग्रह पर उरझा जी अपने चार पुत्रों के साथ बीकानेर आ कर बसे। चारों भाई एवं उनकी संतानें राज्य के ऊंचे ओहदों पर सेवारत रहे इसीलिए वे मेहता नाम से सम्मानित हुए। मेहता रामसिंह को महाराजा सूरसिंह ने चांदी की कलम दावात बख्शी जिससे उनका परिवार 'लेखणिया' कहलाने लगा। उन्हें स्टेट की ओर से 'वीमलू' गाँव जागीर में दिया गया। इस परिवार में मेहता मेहरचन्द जी विशेष प्रतिभावान् हुए। संवत् १९७० में जयपुर, जोधपुर, बीकानेर रियासतों के सरहदी विवादों को निपटाने आपको सुजानगढ़ भेजा गया। महाराजा गंगासिंह जी ने आपको शाह की पदवी दी। भारत सरकार ने १९७५ में आपको रायबहादुर का खिताब दिया। इस खानदान के मेहता बहादुरमल जी भी नामी व्यक्ति थे। मेहता शाहमल जी को संवत् १८६७ में महाराजा सरदार सिंह जी ने दीवानगी का सम्मान बख्शा। शाह नेमीचन्द जी संवत् १९८९ तक स्टेट के प्राईवेट जवाहरात के खजाने के इन्चार्ज थे। सेठ राजमल रोशनलाल कोचर के खानदान ने भी बीकानेर राज्य की बहुत सेवाएं की। इस खानदान के मेंहता जेठमल जी कोचर भादरा और सुजानगढ़ के डिस्ट्रिक्ट मजीस्ट्रेट रहे। आपके पुत्र लूण करणजी राज्य में नायब तहसीलदार, नाजिम आदि पदों पर संवत् १९८७ तक कार्य करते रहे। इसी परिवार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के मेहता राजमल जी बड़े कुशल व्यापारी थे। आपने कलकत्ते में संवत् १९८७ में कपड़े के इम्पोर्ट का काम शुरू किया।

लूणियां

ओसवालों के इस गोत्र की उत्पत्ति माहेश्वरी जाति से मानी जाती है। यति श्रीपालचन्द्र के अनुसार संवत् ११९२ में माहेश्वरी हाथीशाह (कुछ वंशावलियों में नाम "धीगेड़मल" मिलता है एवं बाद में धींगेड़मल को "हाथीशाह" का भाई बताया है) मूंदड़ा मुल्तान (सिन्धु देश) के राजा के दीवान थे। प्रजा उनका बड़ा सम्मान करती थी। उनके पुत्र लूणा जी को सांप डंस गया। आचार्य जिनदत्त सूरि इस समय वहां विराजमान थे। उन्होंने लूणा जी को जीवनदान दिया और जैनधर्म अंगीकार करवाया।

यति रामलाल जी ने महाजन वंश मुक्तावली में इस जीवनदान को लूणा के पूर्वभव से जोड़कर एक मनोरंजक कथानक दिया है। उनके अनुसार हाथीशाह की विनती पर मृतवत् पड़े लूणा को लक्ष्य कर आचार्य ने उस सांप का आह्वान किया। सांप प्रस्तुत हुआ और मनुष्य की भाषा में बोलने लगाः "मेरे इसके पूर्व जन्म का वैर है। इसने जन्मेजय राजा के यज्ञ में ब्राह्मण पणे में वेद का मन्त्र पढ़ कर मेरे को होम डाला। यज्ञ-स्तम्भ के नीचे शान्तिनाथ तीर्थंकर की मूर्ति इन ब्राह्मणों ने शान्ति के निमित्त गाड़ी। उस मूर्ति को मैंने गाड़ते देखा तब जातिस्मरण ज्ञान मुझको पैदा भया। मैं पूर्वभव में जैनधर्म का साधु था। तपस्या के पारणे भिक्षा को गया, बालकों ने चिढ़ाया, क्रोध कर के मारा, सो सांप भया आदि। "आचार्य बोले": तेरा बदला तैनें लिया अब ये हमारा श्रावक है। इसका जहर खींच ले। "तत्काल नागदेव ने डंक का जहर उतार डाला"।

नाहर ग्रन्थागार में उपलब्ध मथेन अमीचन्द रचित "अथ महाजना री जातां रौ छन्द" जो संवत् १९४० की प्रति कृति हैं, के अनुसार मुल्तान राज्य के मंत्री हाथीशाह बड़े प्रतापी थे। उनकी जाति माहेश्वरी थी। उनके पुत्र लूणां को नींद में सर्प ने डस लिया। उसे मृत जानकर चारों ओर हाहाकार मच गया। उन दिनों वहाँ आ. जिनदत्त सूरि का चतुर्मास था। श्रावकों के आग्रह पर हाथी शाह आचार्य जी के पास गए। आचार्य जी ने धर्म की प्रभावना जान मंत्र पढ़ा और लूणा उठ बैठा। हाथी शाह ने कृतज्ञ होकर जैनधर्म अंगीकार किया। छन्द के अनुसार यह घटना संवत् ११९२ की है। आचार्य ने उन्हें ओसवाल वंश में शामिल कर उनका लूणिया गोत्र स्थापित किया। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान के ग्रंथागार में उपलब्ध 'इतिहास ओसवंश' (ग्रंथ क्रमांकः२७०३३) से भी उक्त कथा की पुष्टि होती है।

कालान्तर में इस परिवार के कुछ लोग मुल्तान से फलौदी व अन्यत्र आकर बसे। अट्ठारहवीं शताब्दी में महान् संत एवं आगम साहित्य के प्रकांड विद्वान् श्रीमद् देवचन्द्र लूणिया गोत्रीय थे। इसी खानदान के सेठ तिलोकचन्द जी ने शत्रुञ्जय तीर्थ का संघ निकाला। उस समय शत्रुञ्जय पहाड़ पर अंगारशाह नामक पीर के उपद्रव के कारण यात्राएं बन्द हो गई थी। इन्हें पुनः चालू करवाने का श्रेय सेठ लूणिया जी को ही है। ये संवत् १८५० में फलौदी से ग्वालियर जाकर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बसे। सिंधिया सरकार ने आपको खजाने का पोद्दार बनाया। आपने शत्रुञ्जय तीर्थपर मंदिर और धर्मशाला बनवाई।

उनके पुत्र सेठ थानमल जी लूणिया संवत् १९३३ में हैदराबाद जाकर बसे एवं जवाहरात का व्यापार किया। इस व्यवसाय में आपने अतुल सम्पत्ति अर्जित की। निजाम सरकार ने वि. सं. १९७० में उन्हें "राजा बहादुर" का खिताब बख्शा। भारत सरकार ने आपको रायबहादुर एवं दीवान बहादुर की पदवियां दी। बीकानेर दरबार ने आपको सोना. हाथी, पालकी आदि सम्मान दिए। बड़ी-बड़ी रियासतों में आपका बेहद सम्मान था एवं नामी रईसों में गिने जाते थे। आप बड़े धार्मिक व्यक्ति थे। आपने मंदिर, मूर्तियों, दादाबाड़ी एवं धर्मशाला आदि के निर्माण में लाखों रूपए खर्च किए। इनके पौत्र श्री इन्दरमल जी लूणिया विशिष्ट गुण सम्पन्न व्यक्ति थे। आपने लूणिया चैरिटेबल ट्रस्ट की स्थापना की। हैदराबाद की हिन्दीसेवी हिन्दी प्रचारसभा की स्थापना का श्रेय आपको ही है। आपने फिल्म वितरण व्यवसाय की पहल की। आपकी धार्मिक क्षेत्र में बहुमूल्य उपलब्धियां रही हैं। कुलपाक जैन मन्दिर के ट्रस्ट बोर्ड के आप अनेक वर्षों तक अध्यक्ष रहे। हैदराबाद के प्रसिद्ध महावीर हास्पिटल के निर्माण और विकास में आपका प्रमुख हाथ रहा है। सन् १९८५ में ७८ वर्ष की आयु में आपके देहावसान पर आपके सुपुत्र श्री सुरेन्द्र लूणिया ने ७८ हजार रूपए के दान की घोषणा की। हैदराबाद में मारवाड़ी लोगों के लिए एक विशाल धर्मशाला बनवाई। इसी परिवार के लोग ग्वालियर जाकर बसे।

अजमेर के लूणिया खानदान का मूल निवास फलौदी था। यह परिवार फलौदी से बड़ (मारवाड़) गया। बड़ से हेमराज जी लूणिया अजमेर आकर बसे। इन्हीं के परिवार में जीतमल जी लूणिया बड़े साहित्य प्रेमी थे। उन्होंनें "हिन्दी साहित्य मन्दिर" नाम से प्रकाशन का कार्य शुरू किया। अजमेर की अनेक लोकोपकारी संस्थाओं से आपके सम्बन्ध थे। अंग्रेजों के विरुद्ध राष्ट्रीय संग्राम में आप सं. १९८७ में प्रथम बार जेल गए। इसके बाद तो अनेक बार सहर्ष जेलयात्रा की। आपकी पत्नी सरदार बाई लूणिया भी राष्ट्रीय आन्दोलन में गिरफ्तार कर ली गई थी।

फलौदी के लूणिया परिवार ने एक बार राजा की तरफ से फलौदी ग्राम पर हुए जुर्माने का पूरा भुगतान अकेले ही कर दिया था। इसीलिए जोधपुर दरबार ने इस परिवार के सेठ शिवजीराम को नगरसेठ की पदवी दी थी।

इस गोत्र के शिलालेख अजीमगंज, अजमेर, जैसलमेर, मालपरा, बीकानेर, विक्रमपुर, सरदारशहर, शत्रुंजय आदि अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं।

लोढ़ा

माहेश्वरी जाति में लढ़ा उपजाति के एक श्रेष्ठि को संवत् १०७२ में आ. वर्धमान सूरि ने प्रतिबोध देकर जैन बनाया एवं ओसवाल कुल में शामिल किया। कालांतर में वे लोढ़ा कहलाए। मेड़ता और सोजत में इनके परिवार निवास करते हैं। ("लोढ़ा" गोत्र चौहान राजपूतों से भी बना है जिसका विवरण अन्यत्र दिया गया है।) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, बीकानेर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में उपलब्ध 'इतिहास ओसवंश' ग्रंथ (क्रमांक:२७० ३३) के अनुसार लखोटिया माहेश्वरी लाखणसी को संवत् ७०१ में श्री रविप्रभ सूरि ने प्रतिबोध देकर जैन धर्म अंगीकार करवाया एवं ओसवाल कुल में शामिल किया। उनके 'कंठे स्वर्णमय लोढ़कस्याभरण' होने से उनका लोढ़ा गोत्र निर्धारित किया।

उक्त ग्रंथ में ही अन्यत्र एक उल्लेखानुसार 'सवालक्ष देसे' भंडाणा ग्रामे माहेश्वरी श्रेष्ठि लोढ़ा निवास करते थे। संवत् १११३ में श्री कीर्तिशेखर सूरि ने उन्हें प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। वट वृक्ष की तरह उनके वंश की वृद्धि हुई। उनके वंशज लोढ़ा कहलाए। उनके पुत्र साह पासू, रामा और कालू बड़े पुण्यवान थे।

मालू

इस गोत्र की उत्पत्ति रतनपुरा के राजा रतनसिंह के दीवान माहेश्वरी वैश्य जाति के राठी गोत्रीय माल्हदेव से मानी जाती है। माल्हदेव के पुत्र को आचार्य जिनदत्त सूरि के आशीर्वाद से स्वास्थ्य लाभ हुआ। उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया एवं उनका मालू गोत्र प्रसिद्ध हुआ। मणिधारी जिनचन्द्र सूरि के पट्टधर आ. जिनपतिसूरि मालू गोत्रीय थे।

इस गोत्र के अनेक परिवार राजस्थान के विभिन्न स्थानों में निवास करते हैं। सिवनी (छपरा) में बसा हुआ सेठ गणेशदास केशरीचन्द मालू का परिवार गजरूपदेसर (बीकानेर) से आया है एवं सर्राफ व्यवसाय में संलग्न है इनका चांदी-सोने के जेवर बनाने का एक कारखाना है। मद्रास के सेठ कालूराम रतनलाल मालू के खानदान का मूल निवास फलौदी था। संवत् १८९० में कालूराम जी मद्रास आए। वहां चन्द्र प्रभु स्वामी का एक बड़ा मन्दिर इन्हीं का बनवाया हुआ है।

ओसवालों के इस गोत्र के शिलालेख भागलपुर, पटना, जोधपुर, बीकानेर, ग्वालियर, मद्रास, रायपुर, जयपुर, नागौर, पाटण आदि स्थानों पर विद्यमान हैं।

कहते हैं जिनदत्त सूरि ने माहेश्वरी जाति के विभिन्न गोत्रों के लोगों को जैन बनाकर ओसवालों के ५२ गोत्रों की स्थापना की, जिनमें प्रमुख हैं: मालू, भाभू, पारख, डागा, भोरा, छोरिया, सेलोत, रीहड़ आदि।

भाभू

रतनपुरा के राजा ने माहेश्वरी वैश्य समाज के राठी गोत्रीय भाभू जी नामक सज्जन को राज्य का खजांची बनाया। जब राजा ने जैनाचार्य जिनदत्त सूरि से प्रभावित हो जैनधर्म अंगीकार किया तो खजांची भाभूजी जैन बने एवं ओसवाल कुल में शामिल हुए। उनके वंशज पूर्व पुरुष के नाम पर भाभू कहलाए। इस खानदान के लोग पंजाब व हरियाणा के विभिन्न स्थानों में निवास करते हैं। इस गोत्र के शिलालेख बीकानेर, मुल्तान आदि स्थानों पर प्राप्त हुए हैं।

अम्बाला का लाला जगतूमल जी भाभू का परिवार धनोर गांव का है अतः वे धनोरिया कहलाते हैं। ये धार्मिक एवं सामाजिक हित की संस्थाओं और कार्यों में बड़ा सहयोग करते

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हैं। लाला दौलतराम जी के खानदान की यहां बड़ी प्रतिष्ठा है। होशियारपुर का लाला बाबूलाल वंशीलाल का खानदान टांडा से यहां आकर बसा। ये बैंकिंग व्यवसाय करते हैं। मलेर कोटला का लाला शिब्बूमल वजीरामल के खानदान वाले बिरादरी के चौधरी माने जाते हैं।

लूंकड़

लूंकड़ गोत्र भी माहेश्वरी जाति से आया है। अहमदाबाद के लोदी सुल्तान रूस्तम के यहां खेताजी नामक बाहेती गोत्रीय श्रेष्ठि वि.सं.१५८८ में खजाने का काम देखते थे। इन्होंने करोड़ों रूपए खजाने से ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा में बांट दिए। किसी ने नवाब से शिकायत कर दी। तत्काल इन्हें कैद कर जेल में डाल दिया गया। एक दिन वे जेल से निकल भागे। नवाब के सैनिकों ने पीछा किया। भागते-भागते रवेता जी ने गोडवाड इलाके के एक तपागच्छीय उपाश्रय में शरण ली। वहां के यति ने उन्हें लुका कर (छिपाकर) किसी तरह बचाया। तबसे उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया। महाजन कुल में शामिल कर उनका लूंकड़ गोत्र बना। इनके वंशज जोधपुर, फलौदी क्षेत्र में अधिक हैं। श्री सोहनराज जी भंसाली के ओसवंश में दिए विवरण के अनुसार लूंकड़, हंस, ठाकुर आदि गोत्रों की उत्पत्ति सोलंकी राजपूतों से हुई।

लूंकड़ गोत्र के अनेक परिवार आगरा, जलगांव, थली प्रान्त, फलौदी, बेलारी, चिंचवड (पूना) आदि स्थानों पर बसे हुए हैं। मूलतः इन परिवारों का पूर्व निवास फलौदी था। आगरा के सेठ रेखचन्द जी का परिवार संवत् १९०५ से कपड़े का व्यवसाय करता आ रहा है। जलगांव के सेठ सागरमल नथमल का परिवार मूलतः खैजडली का है एवं यहां सूत और कपड़े का व्यवसाय करता है। फलौदी के सेठ रेखचन्द शिवराज के खानदान के परिवार बड़ोदा, पनसेरी, मायावरम आदि स्थानों पर बैंकिंग व्यवसाय करते हैं। शखी से उठकर बेलारी गया सेठ चन्नाजी डूंगरचन्द का परिवार बैंकिंग व्यवसाय के लिए प्रतिष्ठित है। चिंचवड़ (पूना) रहने वाला सेठ मालचन्द पूनमचन्द का खानदान पीपाड़ से जाकर वहां बसा है एवं अच्छी प्रतिष्ठा अर्जित की है।

डागा

मूंदड़ा माहेश्वरी के डागा जातीय परिवार को आचार्य जिनदत्त सूरि ने प्रतिबोध देकर ओसवाल डागा गोत्र का निर्माण किया। इनके अलावा नाडोल के चौहान वंशीय क्षत्रियों से आचार्य जिन कुशल सूरि ने भी ओसवालों के डागा गोत्र की स्थापना की।

बांभ

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान बीकानेर के ग्रंथागार में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रंथ 'इतिहास ओसवंश' (क्रमांकः २७० ३३) के अनुसार नागपुर के मूंधड़ा गोत्र के माहेश्वरी श्रेष्ठि स्योनरायण को "वीर निर्वाणात् ७१९ वर्ष गतेषु" (विक्रम संवत् २४९) ब्रह्मर्षि सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। उनके चार पुत्र थेः बांभ, घांघा, पाल्हा, थिरा। प्रथम पुत्र के नाम पर उनका बांभ गोत्र निर्धारित हुआ। इनकी कुल देवी सच्चिका है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रीहड़

रतनपुर निवासी राठी गोत्रीय माहेश्वरी परिवार खरतर गच्छीय आचार्य जिनचन्द्र सूरि के उपदेश से जैन बने, उनका रीहड़ गोत्र निर्धारित हुआ। चतुर्थ दादा आचार्य खेतासर के रीहड़ गोत्रीय ओसवाल कुल में उत्पन्न हुए थे।

इस गोत्र के शिलालेख जैसलमेर, बीकानेर, नाल, सरदारशहर आदि स्थानों पर उपलब्ध हैं।

खंडेलवाल

एक अनुश्रुति के अनुसार विक्रम संवत् १ में खंडेला के क्षत्रिय चौहान राजा एवं अन्य सामन्त परिवारों को जैन दिगम्बर सम्प्रदाय के जिनसेन आचार्य ने प्रतिबोध देकर जैन बनाया। खंडेला के होने से वे खण्डेलवाल और जैन श्रावक होने से सरावगीः इन दोनों नामों से पहचाने जाने लगे।

इस जाति के लोग विक्रम के चौदहवीं शदी में शराब का व्यवसाय करने लगे थे। संवत् १३४४ में जांगल प्रदेश (श्री सोहनलाल जी भंसाली के अनुसार अजमेर के आसपास का क्षेत्र, परन्तु बीकानेर का इलाका भी जांगल प्रदेश ही कहलाता था) के खंडेलवाल जाति के कुछ परिवारों को खरतर गच्छ के आचार्य जिनप्रभसूरि ने प्रतिबोध देकर 'ओसवाल' कुल में शामिल किया। पहले इन लोगों के साथ रोटी-व्यवहार शुरू हुआ, कालान्तर में बेटी-व्यवहार भी शुरू हो गया। जोधपुर आदि अनेक स्थानों पर ये विवाह सम्बंध निरन्तर हो रहे हैं। इनमें भी कोठारी, गांधी, जौहरी आदि उपगोत्र हैं।

१४. 'सोढ़ा' राजपूतों से निसृत गोत्र

१. समदड़िया २. भांडावत ३. रूणवाल

समदडिया

पद्मावती नगर के समीप सोढ़ा राजपूत समंदसी रहता था। उसके ८ पुत्र थे। खेती से गुजारा न होता था। अधिकांश ऋण लेकर काम चलाना पड़ता था। उसने एवं उनके परिवार ने आचार्य जिनवल्लभ सूरि से प्रतिबोध ले जैनधर्म अंगीकार किया। उनके वंशज समदडिया कहलाए। एक अनुश्रुति के अनुसार वे सेठ धन्नासा जोंखल के साझीदार बने एवं व्यापार के लिए समुद्र पार यात्राएं कीं। इससे इनका समदडिया गोत्र प्रसिद्ध हुआ। जैन जाति महोदय के लेखक मुनि ज्ञानसुन्दरजी ने इन्हें मूल गोत्र भद्र की एक शाखा माना है। इस खानदान के लोग जोधपुर, उज्जैन, मद्रास आदि स्थानों पर रहते एवं व्यवसाय करते हैं। मेहता सुकनमल जी मोहनलाल जी का खानदान जोधपुर राज्य की सेवारत रहा। मद्रास सेठ भेरबख्श जी का परिवार मूलतः नागौर से आया था एवं मद्रास में व्यवसाय रत रहा है। उज्जैन के मुनीम भंवरलाल जी का परिवार मेड़ता से उठ कर उज्जैन बसा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मंचर (पूना) के सेठ मानमल जी समदड़िया के खानदान का मूल निवास बुचकलां (पीपाड़) था। करीब २०० वर्ष पूर्व यह परिवार दक्षिण में मंचर आकर बसा। इस खानदान के सेठ आनन्दराम जी एवं सेठ राजमलजी महाराष्ट्र के जैन समाज में बड़े प्रतिष्ठित पुरुष थे। सेठ आनन्दरामजी संवत् १९९८ में जुन्नार में हुए मारवाड़ी सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष चुने गए थे। आप स्थानीय ओसवाल पंचायत के सरपंच एवं स्थानीय बोर्ड के सदस्य थे।

भांडावत

'जैन जाति महोदय' के लेखक मुनि ज्ञान सुन्दर जी के अनुसार भांडावत 'समदड़िया' की तरह मूल गोत्र भद्र का ही नख (शाखा) है।

जोधपुर के शाह नोरतनमल जी भांडावत का खानदान मूलतः अजमेर का है। आपके पितामह गुनेचन्दजी अजमेर के साधारण व्यवसायी थे। नोरतनमलजी ने अपनी योग्यता, बुद्धिमानी एवं कार्य कुशलता से समाज में बड़ी प्रतिष्ठा पाई। आप संवत्१९५५ में एल. एल. बी. की परीक्षा में सर्वप्रथम रहे— युनिवर्सिटी ने आपको स्वर्णपदक प्रदान किया। आप प्रोफेसर बनकर जोधपुर आए और यहीं बस गए। संवत् १९५७ में आपने राज्य की न्यायिक सेवा ग्रहण की, संवत् १९८४ में सेशन जज एवं १९९० में चीफ कोर्ट के जज नियुक्त हुए। आप समाज में बड़े लोकप्रिय थे। सामाजिक सुधारों के आप हामी थे। जोधपुर के सरदार हाईस्कूल की उन्नति का श्रेय आपको ही है। जोधपुर दरबार की ओर से आपको पाँव में सोना इनायत हुआ। आपने एक कन्या पाठशाला का निर्माण करवाया।

रूणवाल

सवालख (सपादलक्ष) देश के रूणाग्राम में सोढ़ा राजपूत ठाकुर बेगा जी निवास करते थे। उनके पुत्र न था। अकस्मात् आ. जिनदत्त सूरि वहां पधारे। आचार्य जी ने उन्हें उपसर्ग हरस्तोत्र का कल्प साधन बताया। उससे उन्हें लाभ हुआ।

वि. सं. १२१० में उन्होंने जैनधर्म अंगीकार किया। उनके वंशज रूणवाल कहलाए।

(१५) . 'श्रीमाल' वंश के उपगोत्र

१. सीधंड़	८. धांधिया
२. राक्यान	९. खरड़
३. फाफू	१०. जूनीवाल
४. नागर	११. बदालिया
५. फोफलिया	१२. टांक
६. संघवी	१३. जरगड़
७. माड़िया	१४. मेहमवार

Ac. Gunratnasuri MS		Jin Gun Aradhak Trust

१५. पटोलिया
१६. मूसल
१७. ढ़ोर
१८. चंडालिया
१९. श्रीश्रीमाल

सींधड

इस गोत्र का मूलनिवास राजस्थान था। कालांतर में कुछ परिवार देहली चले आये। ये जैन श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी आम्नाय के हैं। प्राचीन समय से इस खानदान में रत्नों का व्यापार होता है। इनके पूर्वज लाला देवीसिंह दिल्ली के प्रसिद्ध जौहरी थे। उनके पुत्र विजयसिंह एवं बुद्धसिंह अवध के नवाब के आग्रह पर लखनऊ जा बसे। नवाब के पुत्रोत्पत्ति के जश्न में सवा लाख रूपये का अश्व शृंगार अल्प समय में तैयार करवा कर नवाब को भेंट दिया। इससे खुश होकर नवाब ने उन्हें विपुल द्रव्य एवं सम्मान दिया। विजयसिंह जी के पुत्र कालकादास जी का अल्पवय में ही देहांत हो गया, किन्तु उनके पुत्र बद्रीदास जी बड़े प्रतापी हुए। वे संवत् १९१० में कलकत्ते जाकर बस गए एवं वहां अथाह समृद्धि हासिल की। वहां जैन मन्दिर की स्थापना एक अविस्मरणीय घटना है। आज भी वह विश्व के दर्शनीय स्थलों में से एक माना जाता है।

जयपुर के सेठ चम्पालाल फर्जनलाल सींधड के परिवार का मूल स्थान हट्टुपुरा था। ये तेरापंथी श्वेताम्बर सम्प्रदाय के मानने वाले हैं। इस परिवार का मद्रास, कलकत्ता, नागपुर, हैदराबाद आदि अनेक जगहों पर जवाहरात और बैंकिंग का व्यवसाय है। समाज में इस खानदान की बड़ी इज्जत है। हुण्डी के लेनदेन में जयपुर में पक्की और कच्ची मिति की प्रथा इसी परिवार की देन है।

राक्यान

देहली के लाला नवलकिशोर खेरातीलाल के खानदान का मूल स्थान वैराट (जयपुर के निकट) है। इनके पूर्व पुरूष राजा भारमल मुगल सम्राट अकबर के खजांची थे एवं उनके पुत्र राजा इन्द्रजीत वैराट के शासक। राजा इन्द्रजीत का वैराट में एक जैन मन्दिर की प्रतिष्ठा सम्बंधी शिलालेख अब भी विद्यमान है।

मुगल सम्राट् औरंगजेब के अप्रसन्न होने से वैराट के तात्कालीन शासक हुकमचन्द जी श्याना (यू.पी.) चले आए। करीब २०० वर्ष पूर्व इस परिवार के श्री डालचन्द जी देहली आकर बसे। यहाँ उन्होंने गोटे किनारी का व्यापार किया। आज वे इस व्यवसाय में प्रमुख हैं। इसी खानदान के लाला नवलकिशोर ने जवाहारात का व्यापार शुरू किया एवं लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। आपने धर्मशालाओं का निर्माण कराया। इनके पुत्र खैरातीलालजी (वि. सं. १९३४-९३) ने भी जवाहरात के व्यवसाय से समृद्धि हासिल की। उन्होंने मोठ की मस्जिद के पास एक जैन मन्दिर एवं धर्मशाला का निर्माण कराया एवं अनेक मन्दिरों का संचालन किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

फाफू

भागलपुर के फाफू गोत्रीय राय सुखराज जी के खानदान का मूल निवास राजस्थान ही था। वे लोग हिन्दू सम्राट् पृथ्वीराज चौहान के समय देहली आकर बसे। ये श्वेताम्बर मन्दिर मार्गीय हैं। इस परिवार के राय मोहन जी सम्राट् अकबर और शाहजहाँ के शासन काल में राज्य के उच्च पदों पर थे। आप पाँच हजारी सेना के नायक थे। सम्राट् जहाँगीर के समय आपको "राय" का खिताब मिला, जो पुश्तदरपुश्त चला आ रहा है। आपको जागीर भी इनायत हुई।

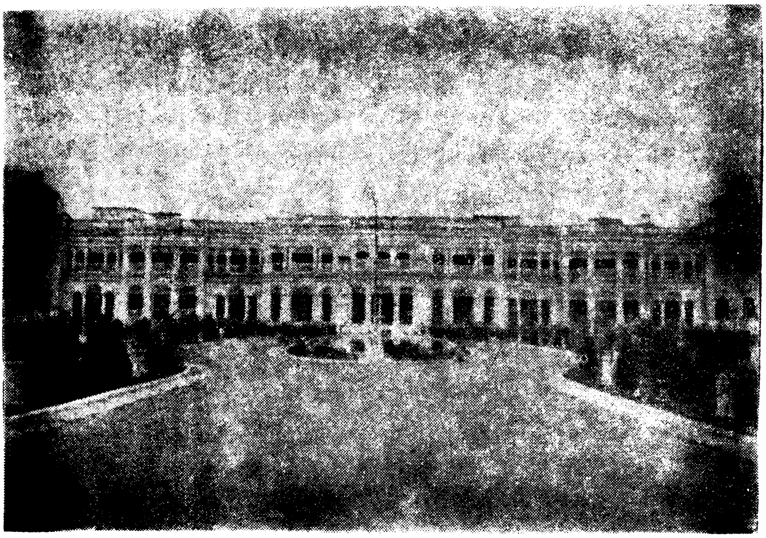

सुख भवन, भागलपुर (रायबहादुर राय सुखराज फाफू)

जब मुगल साम्राज्य आपस के क्लेशों से त्रस्त हो रहा था, तब इस परिवार के राय हरदेव जी सन् १८४८ में पूर्णिया आकर बसे। यहाँ इस परिवार की बड़ी जमींदारी है। इस खानदान के राय सुखराज जी ने सन् १८९७ में स्टेट का कार्यभार सम्भाला। ये भागलपुर आकर बसे एवं वहाँ एक दर्शनीय बंगले का निर्माण कराया। आप म्यूनिसीपलिटी, जिला परिषद, एवं प्रांतीय कौंसिल सदस्य के रहे। आपने शिक्षा हेतु अनेक अवदान दिए। ब्रिटिश सरकार ने आपको राय बहादुर की पदवी से विभूषित किया। आप वायसराय की कौंसिल के सदस्य भी रहे। आपने एक भव्य बंगला बनवाया। आपका बनवाया हुआ काँच का मन्दिर भागलपुर के दर्शनीय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

स्थलों में से है। कालांतर में इस परिवार को महाराजा ईडर एवं भोपाल के नबाव के खास जौहरी होने का सम्मान मिला।

नागर

रिंगणोद के ठाकुर प्रेमा जी का नागर गोत्रीय खानदान पवार जगदेव जी को अपना पूर्वज मानता है। प्रेमाजी के पितामह बेनाजी ने संवत् १४१४ में मन्दसोर जिले का निनोर कोटड़ी गांव बसाया। रिंगणोद के भीलों ने जब उपद्रव शुरू किया तो प्रेमाजी को सेना सहित उन पर काबू पाने के लिए भेजा गया। प्रेमाजी ने भील सरदार को परास्त कर के मार डाला। प्रेमाजी को बादशाह ने रिंगणोद के ९ गाँवों की जागीर बख्शी। तभी से यह खानदान यहीं निवास करता है। प्रेमाजी के ज्येष्ठ पुत्र दीपचन्द जी के वंशज रावले वाले एवं लालचन्द जी के वंशज छोटे रावले वाले के नाम से मशहूर हैं। संवत् १७३२ से यहां देवास नरेश का राज्य स्थापित हो गया। देवास नरेश से इस खानदान को कई सम्मान प्राप्त हुए हैं। छोटे रावले के श्री हीरा सिंह जी बड़े पराक्रमी हुए। उन्हें सिंधिया सरकार से भी परवाने प्राप्त हुए। इसी खानदान के रघुनाथ सिंह जी भी बड़े साहसी थे। रिंगणोद में एक समय पड़े धाड़े का साहसपूर्वक सामना करने के उपलक्ष में देवास नरेश से उन्हें खिलअत प्राप्त हुई। इस खानदान के वंशजों के स्मारक स्वरूप बनी छत्रियां एवं सती स्मारक अब भी विद्यमान हैं।

कानपुर का सेठ गुलाबसिंह जी नागर का खानदान १५० वर्षों से वहीं निवास कर रहा है। गुलाबसिंह की बस्ती एवं चित्रा सिनेमा इसी खानदान का है। इसके अतिरिक्त बैंकिंग व्यवसाय भी करते हैं। ये जैन श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी आम्नाय के हैं।

फोफलिया

जयपुर वाले सेठ रतनलाल जी फोफलिया के खानदान के पूर्व पुरुष देहली में जवाहरात का व्यवसाय करते थे। सवाई जयसिंह जी इस खानदान के सेठ खूबचन्द जी को अपने साथ जयपुर ले आए। तब से यह खानदान जयपुर में बस गया। सेठ रतनलाल जी (संवत् १९१७-१९९२) जवाहरात के व्यापार में बड़े निपुण थे। उन्होंने खूब सम्पत्ति अर्जित की। जयपुर नरेश आपका बहुत सम्मान करते थे। जयपुर के जौहरी समाज में इस खानदान की बहुत प्रतिष्ठा है।

लखनऊ के लालाशिखरचन्द जी का खानदान भी जवाहरात के व्यापार में अग्रणी है। इस खानदान के लाला शिखरचन्द जी को मोती के गुण-दोष की अच्छी परख थी।

संघवी

दिल्ली के देवीदास जी जौहरी का बादशाह तक सम्मान करते थे। आपके पुत्र गोवर्धनदास जी को जयपुर नरेश रामसिंह जी ने सं. १७१२ में पगड़ी बदल भाई बनाया एवं संवत् १७२४ में जयपुर लाकर बसाया। राज्य की ओर से आपको खास पोशाक व अन्य सम्मान बख्शे गए। जवाहरात के व्यापार में आपकी फर्म को हांसल (कर) माफ था। आपके खानदान

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

को राज्य की ओर से "मुकीम" का खिताब प्रदान किया गया। इसी वंश के श्री नथमल जी को राज्य की ओर से संवत् १८४२ में कई परगनों की चौधरायत बख्शी गई। जयपुर के जैन समाज में इस खानदान की बड़ी प्रतिष्ठा है।

भांडिया

लखनऊ के श्री बुधासिंह जी भांडिया का खानदान मूलतः जयपुर का है। जैन श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी आम्नाय के भांडिया खानदान के पूर्वज लाला पन्नालाल जी संवत् १९११ में लख-नऊ आकर बसे एवं जवाहरात के व्यापार में अच्छा नाम कमाया।

कलकत्ता के भांडिया गोत्रीय बुधसिंह जी का खानदान २०० वर्ष पूर्व मारवाड़ से कल-कत्ता आकर बसा। आप जवाहरात के व्यापार में निपुण तो थे ही, विलायत में जवाहरात का एक्सपोर्ट शुरू किया। आपके खानदान को भी राज्य की ओर से "मुकीम" की पदवी हासिल है।

भागलपुर के बाबू खड़गसिंह जी का खानदान मूलतः यू. पी. का है, जो करीब १५० वर्ष पूर्व भागलपुर आ कर बसा।

धांधिया

जयपुर के फूलचन्द जी धांधिया का खानदान लखनऊ से यहां आकर बसा। इनके पूर्वज सेठ बलदेवदास जी जवाहरात का व्यापार करते थे। २०० वर्ष पूर्व उन्होंने जयपुर आकर जवा-हरात का व्यवसाय शुरू किया। सेठ फूलचन्द ने संवत् १९७१ में जयपुर से सर्वप्रथम जवाहरात विदेश एक्सपोर्ट करने शुरू किए थे।

खारड़

कलकत्ता के खेड़सिंह जी खारड़ के खानदान का मूल निवास महिम (रोहतक) था। ये जैन श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी आम्नाय के हैं। इनके वंशज जसवंत राय जी संवत् १९१९ में कलकत्ता आए। यहां जवाहरात के व्यापार में उन्होंने बड़ी प्रतिष्ठा हासिल की।

जयपुर का सेठ सुजानमल जी खारड़ का खानदान भी मेहम से आकर यहां बसा। इस खानदान ने जवाहरात के व्यापार में बड़ा नाम कमाया। ये तेरापंथी आम्नाय के हैं। इसी खानदान के सेठ माणकचन्द जी बड़े तीक्ष्णबुद्धि थे। उन्होंने सं. १९३८ में लाडनूं में दीक्षा ली एवं तेरापंथ धर्मसंघ के छठे आचार्य बने।

जूनीवाल

जयपुर के जौहरी गुलाबचन्द जी राजमल जी का मूल निवास दिल्ली था। इनके पूर्व पुरूष भवानीसिंहजी ने यहां आकर जवाहरात का व्यवसाय किया। आप वैष्णवधर्मी थे। आपने एक मन्दिर एवं बगीचे का निर्माण करवाया। इस खानदान के सेठ फूलचन्द जी ने तेरापंथ धर्म अंगीकार किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बदलिया

मन्दसौर के चौधरी दशरथसेन जी का खानदान वैष्णवधर्मी है। इनका मूल निवास दिल्ली था। करीब ३०० वर्ष पूर्व इनके पूर्वज मजलिसराय ज़ी दिल्ली आकर बसे। दिल्ली के बादशाह ने आपको ६० गाँव बसाने के एवज में जमींदारी व सनद इनायत की। जब उक्त ६० गांव ग्वालियर राज्य में मिलाए गए, तब भी व्यवस्था इस खानदान के हाथों में रही। इस खानदान को चौधरी का खिताब मिला हुआ था।

पटना के लाला मुन्नीलाल जी सिताबचन्द्र जी जौहरी के खानदान का मूल निवास बसई ग्राम (शेखावाटी) था। करीब २०० वर्ष पहले इनके पूर्वज बिहार आए और तदन्तर पटना व भागलपुर जा बसे। इनके वहां जवाहरात व जमींदारी का काम होता है।

टांक

दिल्ली के लाला उमरावसिंह जी टांक का खानदान मूलतः भूरसर का हैं। वहाँ से चाटसू और फिर दिल्ली आकर बस गए। इनके पूर्वज हुक्मचन्द जी (सं. १७२८-८६) प्रसिद्ध जौहरी थे। वे लखनऊ के नवाब शुजाउद्दौला और आसफउद्दौला के राज्य काल में अवध के राजकीय जौहरी रहे। आपको "राय" का खिताब इनायत हुआ। इनके पुत्र टेकचन्द जी (संवत् १८३४) पुनः दिल्ली आ गए एवं मुगल सम्राट् के कोर्ट जौहरी बने। उन्हें भी "राय" का "खिताब" मिला। इसी खानदान के लाला हीरालाल जी (संवत् १८०५-७६) लार्ड डलहौजी के विश्वसनीय जौहरी थे। इसी परिवार के लाला रिक्खामल (सं. १८५६-१९०८) जवाहरात के व्यापार में बड़े निपुण थे। सन् १८८७ में आप वायसराय द्वारा कोर्ट जौहरी नियुक्त हुए। बड़े-बड़े राजा महाराजा, व कमाण्डर आपका बड़ा सम्मान करते थे। आपके दत्तक पुत्र उमरावसिंह जी बड़े तीक्ष्ण बुद्धि थे। आप प्रतिष्ठित वकील थे। टेहरी नरेश एवं उदयपुर के महाराणा की ओर से आपको खिल-अतें प्राप्त हुई। आपने ओसवाल जाति के इतिहास पुरुषों पर अंग्रेजी में अनेक निबंध व पुस्तकें लिखी।

जयपुर के हीरालाल जी छगनलाल जी टांक का मूल निवास चाटसू था। संवत् १९४० में ये बम्बई गए। वहां जवाहरात के व्यापार में लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। संवत् १९५३ में ये जयपुर आकर यहीं बस गए। आप दोनों ही धार्मिकवृत्ति के थे। छगनलाल जी के पुत्र राजरूप जी ने जवाहरात के व्यवसाय में खूब नाम कमाया। आप श्रीयाल जाति एवं जैन समाज की बहुविध हितकारी प्रवृत्तियों से जुड़े। आपका जीवन-चरित्र ग्रंथ में अन्यत्र दिया जा रहा है। आपके सुपुत्र दुलीचन्द जी जवाहरात के व्यापार में संलग्न हैं।

जरगड़

जयपुर के जौहरी के पुत्र कस्तूरचन्द जी के खानदान का मूल निवास दिल्ली था। वहां के नामी एवं शाही जौहरियों में से एक थे। करीब २५० वर्ष पूर्व इनका खानदान जयपुर नरेश के आग्रह पर यहां आकर बसा। इस खानदान के लाला मेहरचन्द जी व्यापारकुशल तो थे ही,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

साथ ही बड़े मिलनसार एवं असहायों के प्रति हमदर्दी रखने वाले थे। आपने एक "हिन्दू अनाथालय" खोला। जयपुर स्थित दादावाड़ी में आपने स्वर्ण चित्रकारी करवाई थी। इसी खानदान के दोलतचन्द जी ईडर के महाराज और भोपाल के नवाब के खास जौहरी थे।

जयपुर के सगनचन्द जी सौभागचन्द जी जौहरी के खानदान का मूल निवास दिल्ली था। जवाहरात के व्यवसाय में इस खानदान ने भी खूब नाम कमाया। तत्कालीन वायसराय की ओर से आपको प्रशंसा पत्र मिला।

मेहमवार

लखनऊ के लाला जवाहरलाल मोतीलाल के खानदान का मूल निवास झुंझनूं था। इनके पूर्वज चुन्नीलाल जी लखनऊ आ कर बसे। इनके पुत्र जवाहरलाल जी ने जवाहरात के व्यवसाय में खूब सम्पत्ति अर्जित की। लखनऊ में एक मंन्दिर बनवाया।

दिल्ली के लाला जवाहरलाल जी सरदार सिंह जी के खानदान का मूल निवास झुंझनूं था। जवाहरात के व्यापार में इस खानदान नें भी अच्छा नाम कमाया।

जयपुर के चन्दनमल जी गणेशीलाल जी का परिवार बेराठ से उठकर यहां बसा। अतः ये "बैराठी" नाम से जाने जाते हैं। जवाहरात के व्यापार में अच्छा नाम कमाया एवं यहां के प्रसिद्ध जौहरियों में से एक हैं।

पटोलिया

जयपुर के जवाहरलाल जी चुन्नीलाल जी पटोलिया के खानदान का मूल निवास लखनऊ था। इनके पिता बुद्धमल जी २०० वर्ष पूर्व आकर यहां बसे एवं जवाहरात का व्यापार शुरू किया। इस खानदान के जौहरी भूरामल जी राज्यसेवा में रहे। आपकी व्यवस्थापिका शक्ति की अंग्रेज अधिकारियों ने खूब प्रशंसा की। ये तेरापंथी आम्नाय के हैं।

मूसल

जयपुर के जौहरी केशरीचन्द भंवरलाल जी के खानदान का मूल निवास मालपुरा (जयपुर) था, जो २०० वर्ष पूर्व यहां आकर बसे। सेठ केशरीचन्द जी को जवाहरात की अच्छी परख थी। वे "मूसलनी" नाम से प्रसिद्ध थे। ये स्थानकवासी आम्नाय के थे।

ढोर

जयपुर के जौहरी सरदारमलजी पूनमचन्द जी के खानदान का मूल निवास जौनपुर था। करीब २५० वर्ष पूर्व-पूर्व पुरुष सेठ दांतराय जी सांगानेर आए। इन्होंने अनेक बिम्बों की प्रतिष्ठा करवाई। जवाहरात के व्यापार में खूब उन्नति की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चंडालिया

श्री लक्ष्मीचन्दजी चंडालिया का खानदान श्रीमाल गोत्रीय है। वह दिल्ली से कालातंर में कानपुर, शुजालपुर, सारंगपुर होता हुआ रिंगणोद जाकर बसा। श्री लक्ष्मीचन्द जी पंचायत बोर्ड के सदस्य रहे। आपके पुत्र राजमलजी जयपुर जाकर बसे।

श्री श्रीमाल (महतियाण)

एक समय दिल्ली में महतियाण जाति के श्रीमंत साह श्रीमल्ल बादशाह के खजांची रहे। वे शैव धर्मानुयायी थे। बादशाह हमेशा उनके धर्म की मजाक उड़ाया करता था। लाखों देवताओं, पुराणों की कपोल कल्पित लगने वाली कथाओं, असंगत बातों, शास्त्रसम्मत मांस-भक्षण, पशुबलि आदि को लक्ष्य कर व्यंग्य कसा करता था। उन्हीं दिनों जिनचन्द्र सूरि का दिल्ली पधारना हुआ। बादशाह श्रीमल्ल को लेकर दर्शनार्थ गया। सूरि जी के उपदेश से प्रभावित हो श्रीमल्ल ने जैनधर्म अंगीकार किया। बादशाह ने भी उन्हें चवर-छत्र आदि प्रदान किए। श्री मल्ल के वंशज श्री श्रीमाल कहलाए। उक्त कथानक यति रामलाल जी ने महाजनवंशमुक्तावली में दिया है। श्री श्रीमालों की ख्यात में इन्हें श्रीमालों के महतियाण गोत्र का ही रूपान्तर माना है।

दिल्ली के लाला हजारीमल जी श्री श्रीमाल के खानदान का मूल स्थान अनहिलपट्टण (गुजरात) था। वहां से अहमदाबाद और करीब ४०० वर्ष पूर्व दिल्ली आकर यहीं बस गए। इनके पूर्वज सेठ रायचन्द्रजी को बादशाह शाहजहाँ ने जवाहरात की अच्छी परख होने के कारण आग्रह पूर्वक दिल्ली लाकर बसाया। इसी खानदान के लाला हजारीमल जी बड़े यशस्वी हुए। आपने लाखों की सम्पत्ति ही अर्जित नहीं की, पंजाब व दिल्ली के जैन-समाज में बड़ी प्रतिष्ठा हासिल की। दादा बाड़ी का ४० वर्षों तक प्रबन्ध आपके हाथों में रहा।

मंगरोल (कोटा) के सेठ गुलाबचन्द का खानदान मूलतः गुणायचा श्री श्रीमाल गोत्र का है। सेठ गुलाबचन्दजी वैद्यकी में बड़े कुशल थे। सरकार ने आपकी वैद्यकीय प्रतिभा का सम्मान करते हुए बहुत सी जमीन आपको पुरस्कार में दी। आज तक आपका खानदान वैद्य नाम से प्रसिद्ध है यद्यपि अब वैद्यकी परिवार में कोई नहीं करता।

वरणगाँव (भुसावल) के सेठ राजमल जी के खानदान का मूल निवास रूपनगढ़ (किशनगढ़) था। करीब २५० वर्ष पूर्व इस खानदान के सेठ जालमचन्द जी व्यापार निमित्त लखनऊ गए। वहाँ से मिर्जापुर और फिर करीब १२५ वर्ष पूर्व जबलपुर आकर बस गए। संवत् १९६६ में यह परिवार वरणगाँव आया। यहाँ सींगदाणा का व्यवसाय प्रारम्भ किया। यह मध्यप्रदेश का प्रतिष्ठित खानदान है।

(१६) 'भाटी' राजपूतों से निःसृत गोत्र

१. आर्य/आयरिया
२. लूणावत
३. भंसाली/भण्डसाली
४. राय भंसाली

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

५. चण्डालिया	९. राखेचा
६. भूरा	१०. पूगलिया
७. पूगलिया भंसाली	११. जड़िया
८. चील मेहता	१२. आग्रहिया/आगरिया

आर्य/आयरिया

इस गोत्र की उत्पत्ति सिंध देश के भाटी राजपूतों से मानी जाती है। वि. सं. ६९४ में उपकेश गच्छ के जैनाचार्य कक्क सूरि ने भाटी राव गौशल को प्रतिबोध देकर जैनी बनाया। उनसे आर्य गोत्र की स्थापना हुई जो बोलचाल की भाषा में "आयरिया" हो गया। नाहर ग्रन्थागार में उपलब्ध "अथ महाजना री जांतां रो छंद मथेन (महतियाण) अमीचन्द रो कहयो" (संवत् १९४० में गोरधन व्यास लिखित) के अनुसार सिंध देश के भाटी राजा गोसल के पुत्र देवधर बड़े प्रतापी हुए। उन्होंने आ. जिनदत्त सूरि से प्रतिबोध पाकर जैनधर्म अंगीकार किया और आचार्य ने उनका आयरिया गोत्र निर्धारित किया। राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में उपलब्ध 'इतिहास ओसवंश' (क्रमांक २७०३३) एवं केशरियानाथ मंदिर ग्रंथागार के 'ओसवालों' के गोत्रों की उत्पत्ति (गुटका न. २२) में भी गोसल पुत्र देवधर से ही आयरिया की उत्पत्ति मानी गई है। ये समूचे सिंध प्रदेश में प्रसिद्ध थे। सिंध नरेश ने उन्हें 'शाह' की पदवी से विभूषित किया।

महाजनवंशमुक्तावली के अनुसार सं. ११९८ में भाटी राजा अभयसिंह आचार्य जिनदत्त सूरि के प्रतिबोध से जैनी बने। पहले राजा ने आचार्य के शिष्य मुनि को अपशब्द कहे और गोली मार दी। शासन देवी के प्रभाव से गोली फूल बन कर नीचे गिर पड़ी। इस चमत्कार को देख कर राजा ने आचार्य के दर्शन किए। इतने में सिंधु नदी में वेग चढ़ता दिखायी दिया। मानो वह गांव को बहा ले जायगा। राजा मुनि के चरणों में गिर पड़ा और गाँव को बचाने की प्रार्थना करने लगा। मुनि जी के चमत्कार से वेग रुक गया। तब राजा ने क्षमायाचना की और उनका अनुयायी हो गया। मुनि जी बोले— "आय रहया"। तब से उनका आयरिया गोत्र हुआ।

यति श्रीपालचन्द्र जी ने अपने ग्रन्थ "जैनसम्प्रदायदीक्षा" में सिंध देश के भाटी राजपूत राजा अभयसिंह के विक्रम संवत् ११७५ में जैनाचार्य जिनदत्त सूरि से प्रतिबोध पाकर जैन धर्म अंगीकार करने का उल्लेख किया है। आचार्य ने उन्हें महाजन वंश में शामिल किया। उनका आयरिया गोत्र बना।

लूणावत

आगे चलकर उक्त 'आयरिया' वंश की १७वीं पीढ़ी में विक्रम की १४वीं शताब्दी में लूणा शाह नामक धनाढ्य पुरुष हुए। ये सिंध से गुड़ा (मारवाड) जाकर बस गए। इन्होंने एक महेश्वरी कन्या से विवाह किया। इस पर ओसवाल पंचों ने उन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उन्हीं दिनों नागौर के सारंगशाह चोरड़िया उस नगर में आए। लूणा शाह की ख्याति सुन वे उससे मिलने गए। लूणा शाह ने उन्हें भोजन पर आमंत्रित किया। जब सारंगशाह को जाति-बहिष्कार की बात मालूम हुई तो उन्होंने ओसवाल पंचायत बुलायी और पंचों को समझाया। महेश्वरी भी मूलतः क्षत्रिय जाति से ही उत्पन्न हैं। परन्तु पंच नहीं माने। सारंगशाह ने अपनी कन्या की शादी लूणा शाह से कर दी।

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान में उपलब्ध 'इतिहास ओसवंश' (क्रमांक २७०३३) के अनुसार कोल्हा के पुत्र लखमसी कल्पतरु के समान दातार थे। वे संवत् 'तेरे से चवदोतरा' बरस मरु प्रदेश के बहिलवै ग्राम आ बसे। वहाँ जिन प्रसाद निर्मित करवा कर बिम्ब प्रतिष्ठा करवाई। लखमसी के पुत्र बाहड़ तत्पुत्र घणदत्त, तत्पुत्र पासदत्त, तत्पुत्र टोटो हुए। टोटो के पुत्र लूणोजी बड़े प्रतापी हुए। उन्होंने जैनतीर्थों के संघ समायोजन कर संघपति का विरुद पाया। साह सारंग ने उन्हें अपनी कन्या परणाई।

नाहर ग्रन्थागार में उपलब्ध "महाजना की जांता को छंद" के अनुसार गोसलसुत देवधर के पुत्र गोला हुए। गोला के पुत्र कोल्हा और कोल्हा के पुत्र लखमसी हुए, जो संवत् १३७४ में सिंध छोड़ मरूधरा (मारवाड़) के गांव बहलवां में बस गए। यहां उन्होंने एक जिन मंदिर बनवाया। लखमसी के पुत्र छाहड़ हुए, छाहड़ के घणदत्त और उनके पुत्र पासदत्त हुए। पासदत्त के पुत्र टोटो हुए। टोटो के पुत्र लूणा शाह बहुत प्रसिद्ध हुए। लूणाशाह को शाह सारंग ने अपनी कन्या परणाई। लगता है लूणाशाह महेश्वरी कन्या से विवाह और बिरादरी के चक्कर में वैदिक धर्म की ओर झुक गए थे, जो महेश्वरियों का धर्म था। तब आचार्य देवगुप्त सूरि के प्रभाव से बिरादरी ने इनके साथ व्यवहार खोला एवं आचार्य देवगुप्त सूरि ने फिर से उन्हें ओसवाल वंश में शामिल किया और इनकी संतानों का लूणावत गोत्र निर्धारित किया।

इनके वंशज धामक गांव, फलौदी, सेदरजना, जयपुर, बुलढ़ाणा, नरसिंहपुर, लोनावला आदि स्थानों पर निवास एवं व्यवसाय करते हैं। इस परिवार के पूर्व पुरुषों ने तीर्थसंघ निकाले। मंदिर व धर्मशाला बनवाई। इस गोत्र के शिलालेख नागौर, कोटा, टूंक, हनुमानगढ़ आदि स्थानों पर विद्यमान हैं।

धामक के सेठ बुधमल जी के खानदान का मूलनिवास नान्द (अजमेर) था। करीब १५० वर्ष पूर्व सेठ वुधमल जी धामक आकर बसे। आपका प्रभाव वहां इतना बढ़ा कि सारा गांव "बुधमल जी का धामक" नाम से प्रसिद्ध हो गया। उसी परिवार के सुगनचन्द जी लूणावत प्रसिद्ध समाजसुधारक थे। आप शुद्ध खद्दर का व्यवहार करते थे। आपने देश और समाज की सेवा के लिए अनेक रचनात्मक प्रवृत्तियों को सहयोग एवं अर्थ दान दिया।

कस्तला (हापुड़) के सेठ कन्हैयालाल जी लूनावत के खानदान का पूर्व निवास रूपसियाँ (जैसलमेर) ग्राम था। करीब २०० वर्ष पूर्व इनके पूर्वज श्री जीवनमलजी ने यहाँ आकर जमींदारी स्थापित की एवं अच्छा नाम कमाया। इस परिवार के सेठ कन्हैयालालजी साहित्यिक रुचि के लिए प्रसिद्ध थे। उनके लेख व कविताऐं हिन्दी की प्रमुख पत्रिकाओं— सरस्वती, चाँद, हंस

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में प्रकाशित होती रहती थी। आपने हिन्दी में अनेक ग्रंथों का सृजन किया। सरकार ने आपको आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त कर सम्मानित किया।

भरतपुर के सेठ मोतीलाल जी लूनावत का खानदान भी रुपसियाँ से उठकर करीब १५० वर्ष पूर्व भरतपुर आकर बसा।

भंसाली/भण्डसाली

भंसाली गोत्र ओसवालों के महिमामंडित गौरवशाली गोत्रों में से एक हैं। भंसाली गोत्रीय श्रेष्ठियों ने अपनी शूरवीरता, दान शीलता एवं धर्मपरायणता से समाज के प्रभा मंडल को समृद्ध किया है।

भाटों और कुलगुरुओं की बहियों के अनुसार इस गोत्र की उत्पत्ति यादव कुल के भाटी राजपूतों से मानी जाती है। संवत् ११९६ में लोद्रपुरपट्टन (जैसलमेर से १४ किलो मीटर दूर) में भाटी राजा सगर राज्य करते थे। उनके ३ पुत्र थे। कुलधर, श्रीधर व राजधर। आचार्य जिनदत्त सूरि से प्रतिबोध लेकर राजा ने जैनधर्म ग्रहण किया। उनके पुत्रों ने वहां पार्श्वनाथ का मन्दिर बनवाया। भंडार की साल में रहने के कारण उनका भंडसाली गोत्र निर्धारित हुआ। शिलालेखों एव प्राचीन ग्रंथप्रशस्तियों में इस गोत्र का नाम भंडशाली ही मिलता है जो अपभ्रंश होकर भण-शाली और फिर भंसाली हो गया। नाहर जैनलेखसंग्रह के एक अभिलेख के अनुसार जेसलमेर में भणसाल के रावल सागर के दो राजकुमार श्रीधर और राजेन्द्र को जिनदत्त सूरि ने वासक्षेप दिया। फलतः उनके उत्तराधिकारी भणसाली कहलाने लगे।

जोधपुर के मुनिसुव्रत स्वामी के जैन मन्दिर के तलघर में सुरक्षित हस्तलिखित ग्रंथभण्डार से एक प्राचीन पत्र मिला है जिसमें भंसाली गोत्र की उत्पत्ति कथा विस्तार से दी है। उक्त कथा के अनुसार भाटी भादो जी भणसोल नगरी के राजा थे। मुसलमानों के आक्रमण से उबरने के लिये जिन दत्त सूरि जी का आश्रय लिया। उनके चमत्कार ने बचाया। तभी राजा एवं उनके भाई रिडमल जी ने जैनधर्म अंगीकार किया एवं एक पुत्र हरिकिशन को दीक्षा समर्पित किया। इस पत्र में भादोंजी के वंशजों का भी विस्तार से वर्णन है। ये परिवार कोटड़े, राजारी ढाणी, उमरकोट (सिंध), मेवानगर, अहमदाबाद, गुड़ा, करमावास, जालौर सिरयारी, जैतारण, मंडोर, बालो-तरा, समदडी, जोधपुर आदि स्थानों पर बस गए।

बाबू पूर्णचन्द्र नाहर के जैनलेखसंग्रह (खण्ड ३) में भी बीकानेर निवासी उपाध्याय जय-चन्द्र गणि के प्राचीन संग्रह से प्राप्त एक पत्र प्रकाशित किया गया है। उसमें भी भणसाली गोत्र की उत्पत्ति कथा दी है, जिसमें यादव कुल के भाटी राजा सगर का संवत् १०९१ में लोद्रवा में राज्य करने का उल्लेख है। राजा के ११ पुत्रों में से ८ बीमारी से मर गये। तब राजा जिनेश्वर सूरि जी की शरण गया। सूरि जी ने राजा के दो पुत्रों को श्रावक बनाने की शर्त पर उसे आश्वासन दिया। उन पुत्रों ने पार्श्वनाथ जी का मंदिर बनवाया एवं भंडार की साल में वासक्षेप किया। इससे उनके परिवार भण्डसाली कहलाए। इस पत्र में उनकी वंशावली भी दी है। जिसके अनुसार उनकी १९वीं पीढ़ी में थाहरू शाह हुए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नाहर ग्रंथागार में उपलब्ध "अथ महाजना री जातां रौ छन्द मथेन अमीचन्द रौ कयौ" (संवत् १९४० में गोरधन व्यास लिखित) एवं राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान बीकानेर के ग्रंथ-भंडार में उपलब्ध हस्तलिखित ग्रंथ 'इतिहास ओसवंश' (क्रमांक २७०३३ संवत् १९१३ में लिपिबद्ध) के अनुसार वि. सं. १०९१ में लोद्रवपुरपट्टण में यादव कुल के भाटी गोत्र में सागर नामक रावल राजा हुए। उनके ११ पुत्र थे। ८ पुत्रों की मृगी रोग से अकाल मृत्यु हो गई। इससे राजा बहुत चिंतित थे। उन्हीं दिनो आ. वर्धमान सूरि के शिष्य जिनेश्वर सूरि वहां पधारे। उन्होंने भंडार की साल में उन पर वासक्षेप किया। दो पुत्र श्रीधर और राजधर सूरि जी के श्रावक बने। उनका गोत्र इससे भण्डसाली कहलाया।

उन्होंने भगवान पार्श्वनाथ का मन्दिर (देहरा) निर्मित कराया। श्री सोहनराज जी भंसाली ने 'ओसवंश' में भंसाली गोत्रोत्पत्ति के सम्बन्ध में उक्त कथानक ही उद्धृत किया है। लोद्रवा मन्दिर में उत्कीर्णित शतदल पद्म यंत्र से भी उक्त कथानक की पुष्टि होती है।

श्रीधर के पुत्र खीमसी हुए। उनके उत्तराधिकारी कुलचन्द, फिर क्रमशः देव, धनपाल, साधारण, पुण्यपाल, सजू, देहु, गजमाल, जयतौ, खेतसी, वस्तो, पुंजौ, आसकरण, यशोधमल, पुन्यसी और श्रीमल हुए। १८वीं पीढ़ी में थाहरू शाह बड़े प्रतापी हुए। थाहरुशाह ने लोद्रवा में नये मन्दिर बनवाए एवं प्राचीन मंदिरों का जीर्णोद्धार कराया। उन्होंने चिंतामणि पार्श्वनाथ की प्रतिमा स्थापित करवाई। उनके वंशज क्रमशः मेघराज, हरराज, मूलचन्द, लालचन्द, हरकिशन, जेठमल, गोड़ीदास और २६वीं पीढ़ी में ऋषभदास हुए।

महाजन वंश मुक्तावली में एक अलग कहानी दी है। यति रामलालजी के अनुसार लोद्र-वपुर के यदुवंशी राजा धीराजी भाटी के पुत्र सगर थे। उनके दो पुत्र थे। श्रीधर और राजधर। राजा सगर की माता को ब्रह्मराक्षस लगा हुआ था, जिसके कारण वेद पढ़ती, संध्या तर्पण करती, पवित्रता में मग्न कई दिनों तक भोजन नहीं करती, करती तो मनों खा जाती। सं. ११९६ में जिनदत्त सूरि लोद्रवा पधारे। राजा उनकी शरण गया। गुरु को देखते ही ब्रह्मराक्षस माता का शरीर छोड़ अपनी निकाय में चला गया। जाते-जाते उसने चमत्कार के लिए राजा के गढ का दरवाजा उत्तर से पूरब कर दिया। यह चमत्कार देख राजा ने जैनधर्म अंगीकार किया एवं सप-रिवार भडंसाल में वासक्षेप लिया। इस तरह उनका गोत्र भण्डसाली कहलाने लगा।

यति श्रीपाल चन्द्रजी (जैन सम्प्रदाय शिक्षा) के अनुसार लोद्रवा पट्टन के भाटी राजपूत राजा सगर के दो पुत्रों श्रीधर और राजधर को विक्रम संवत् ११७३ में जैनाचार्य जिनदत्त सूरि ने प्रतिबोध देकर महाजन वंश में शामिल किया एवं भण्डशाल में वासक्षेप देने से उनका भण्ड-शाली गोत्र निर्धारित किया।

इस खानदान में श्रीधर जी की १८वीं पीढ़ी में विक्रम की सतरहवी शदी में भंसाली थाहरू शाह बड़े प्रतापी हुए। थाहरू शाह ने श्रीधर जी द्वारा बनवाए पार्श्वनाथ मंदिर, जो मुहम्मद खिलजी ने नष्ट कर दिया था, का जीर्णोद्धार करवाया एवं अपने वासस्थान में देरासर बनवा कर शास्त्रभंडार का संग्रह कराया। उन्होंने शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ निकाला एवं सिद्धांचल में संवत् १६८२

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में २४ तीर्थंकरों व १४५२ गणधरों की पादुका श्री जिनराज सूरि द्वारा प्रतिष्ठित करवाई। उक्त तथ्य लोद्रवा मंदिर के शतदल पद्मयंत्र नामक शिलालेख से ज्ञातव्य हैं। मुनि जिन विजय जी ने अपने ग्रंथ 'प्राचीन जैनलेखसंग्रह' में उक्त शिलालेख 'एपिग्राफिका इंडिका' से उद्धृत कर प्रकाशित किया है।

श्री समय सुन्दर उपाध्याय ने शत्रुञ्जय रास की रचना इसी संघ समायोजन में की थी। थाहरू शाह के बारे में एक किंवदन्ती प्रसिद्ध है— वे लोद्रवा में घी का व्यापार करते थे। एक दीन रूपसिंया ग्राम की एक स्त्री चित्रावेल की एंडुरनी पर रखकर घी का मटका बेचने के लिए आई। थाहरू शाह ने घी खरीदा और तौलने के लिए घी निकालने लगे पर मटकी खाली ही नहीं होती थी। इसे उन्होंने एंडुरनी का कमाल समझा और स्त्री को समझा बुझा कर वह एंडुरनी रख ली। तब से उनके पास असंख्यात द्रव्य हुआ। चित्रावेल के बारे में लोगों का ऐसा विश्वास माना जाता है कि इस बेल के ऊपर कोई भी भरा हुआ बर्तन रख देने से, वस्तु निकालते जाने पर भी बर्तन कभी रिक्त नहीं होता। इन्हीं थाहरू शाह को बादशाह अकबर ने दिल्ली बुलाकर सम्मानित किया। थाहरू शाह ने बादशाह को ९ हाथी ५०० घोड़े नजर किए। बादशाह ने उन्हें रायजादा का खिताब बख्शा। तब से इनके वंशज राय भणसाली कहलाने लगे। आगरे का जैन मंदिर इन्हीं थाहरू शाह का बनवाया हुआ है।

भंसाली गोत्र के खानदान जोधपुर थली प्रांत, छापर, रानीसर, कलकत्ता, आदि विभिन्न जगहों पर निवास करते हैं। जोधपुर के मेहता किशनराजजी एवं कुशलराजजी के खानदान के पूर्व पुरुष भंसाली बीसाजी जैसलमेर के दीवान थे। ये संवत्१४५१ में राव चूंडाजी के समय में जोधपुर (मंडोर) आए। इन्होंने बीसेलाव तालाब बनवाया। इस परिवार के बेरीसाल जी राज्य के लिए युद्ध करते हुए बालसमंद के पास जुझार हुए। उनकी धर्मपत्नी रीया दे सती हुई। इस स्थान पर सती माता की प्रतिमा स्थापित की गई, जिसके नीचे एक लेख अंकित है। संवत् १८९२ में मुहता हमीर मल हीरचन्दोत ने स्थान का जीर्णोद्धार कराया।

अभी भी इस खानदान के बच्चों का वहां मुडंन कराते हैं।

छापर के सेठ हनूतमल हरकचन्द्र भंसाली के खानदान के पूर्व पुरुष सेठ खेतसी जी १५० साल पहले छापर आकर बसे। इस परिवार का कलकत्ता एवं अन्य अनेक स्थानों पर कारोबार है। कलकत्ता के सेठ प्रतापमल गोविन्द राम के खानदान के पूर्व पुरुष मारवाड़ से रानीसर आकर बसे। सेठ देवचन्द जी ने सिराजगंज के पास एलंगी में कपड़े का कारोबार शुरू किया। सफलता भी मिली, पर दुर्योग से आग लग गई और सारी मेहनत पर पानी फिर गया। उनके पुत्र गोविन्दरामजी हुए, जिन्होंने संवत् १९६३ में अपने चाचा जी प्रतापमल जी के साझें में स्वतंत्र व्यवसाय आरम्भ किया। इस खानदान के परिवार बीकानेर एवं डूंगरगढ़ में निवास करते हैं।

देहली के लाला जटमल भंसाली के खानदान का मूल निवास नागौर था। करीब ३०० वर्ष पूर्व लाला जटमल दिल्ली आकर बसे एवं जवाहरात का व्यापार किया। इस परिवार में लाला शुभकरण नामांकित व्यक्ति हुए। उनसे होली के दिन एक मुसलमान का खून हो गया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपने बादशाह से स्वयं जिक्र कर इस अपराध का पश्चाताप करना चाहा तो बादशाह के कहने पर मालीवाड़ा में अपने मकान के आगे एक मस्जिद बनवा दी। इनके यहाँ ठप्पे का काम होने से कालांतर में ये 'ठप्पे वाले' नाम से मशहूर हो गए। लाला मोतीलाल ने सूरत के गोटे का काम शुरू किया। लाला कन्हैयालाल तो 'कन्नूजी किनारी वाले' के नाम से जाने जाने लगे। इसी परिवार के लाला मीठूमल ने संवत् १९६५ में प्रिंटिग प्रेस खोला। यहीं से सर्वप्रथम "दिल्ली केपिटल डाईरेक्टरी" छपी। आपने 'हिन्द समाचार' नामक साप्ताहिक पत्र निकालना शुरू किया। पर सरकार की क्रूर दृष्टि के कारण अन्ततः छापाखाना और अखबार दोनों ही बन्द कर देने पड़े। संवत् १९७१ में प्रथम महायुद्ध के समय आपने जर्मनी के मुकाबिले का कलाबत्तू बनाया था, जिस पर उन्हें स्वर्ण पदक प्राप्त हुआ। आपने बंगलौर में भी अपने व्यापार की शाखा खोली।

दिल्ली के लाला मुकन्दीलाल भंसाली का खानदान मूलतः मारवाड़ से आकर बसा है। लालाजी ने सन् १९२१ एवं १९३१ के राष्ट्रीय आन्दोलनों में भाग लिया। वे तीन बार जेल गए। सन् १९३५ में उन्होंने जवाहर लाइब्रेरी की स्थापना की, जिसका उद्घाटन प्रसिद्ध राष्ट्रीय नेत्री कमला देवी चट्टोपाध्याय ने किया।

भंसाली गोत्र में जेसलमेर के कुछ परिवार कच्छवाहे कहलाते हैं। भंसाली सुल्तानचन्द्र जी को जेसलमेर नरेश द्वारा कछवाहा पदवी दी गई थी। भंसाली पुण्यपाल को चित्तोड़ के महाराणा हमीरसिंह जी की ओर से मुहता विरुद मिला, अतः वे मुहता कहलाए। जोधपुर और जालौर के भंसाली चौधरी कहलाते हैं। इस गोत्र के बद्धा जी भंसाली की संतानें बद्धाणी कहलाती हैं।

भंसाली गोत्र के शिलालेख अजिमगंज, ग्वालियर, लोद्रवा, जेसलमेर, कलकत्ता, सोमालिया, मालपुरा, मेड़ता, मसूदा, रतलाम, जयपुर, बीकानेर, मुल्तान, पालीताणा, अहमदाबाद, शत्रुञ्जय पाटण, बीसनगर आदि अनेक स्थानों पर उपलब्ध हैं।

राय भंसाली

बादशाह अकबर द्वारा श्रेष्ठि थाहरु शाह को रायजादा का खिताब दिए जाने के कारण उनके वंशजों के 'राय भंसाली' कहलाए जाने का उल्लेख ऊपर हो चुका है।

केशरियानाथ जी के मन्दिर स्थित ग्रंथागार में उपलब्ध 'ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति' (गुटका न. २२) ग्रंथ के अनुसार सोलंकी राजा घुटनराव को संवत् १०११ में श्री वर्धमान सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। उन्हीं के वंशज रतनपाल पुण्यपाल ने गोत्रजा की आराधना की, इससे उनके वंशज 'राय भंसाली' कहलाने लगे।

चंडालिया

राय भंसाली गोत्र की ही एक शाखा "चंडालिया" है। जयपुर के श्री लक्ष्मीचन्द जी के परिवार का मूल निवास दिल्ली था। ये स्थानकवासी सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। यह परिवार

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिल्ली से कानपुर, शुजालपुर, सारंगपुर, रिंगणोद होता हुआ जयपुर आया। लक्ष्मीचन्द जी बड़े साहसी व्यक्ति थे। वे रिंगणोद की पंचायत बोर्ड के सदस्य थे। जापरा नवास से नदी में मछली का शिकार न करने की प्रार्थना कर आपने साहस का परिचय दिया था। आपके पुत्र राजमल जी जयपुर आकर बस गए। ये अपने खानदान को श्रीमाल वंश की एक शाखा मानते हैं।

सरदार शहर के जसकरण जी चंडालिया के परिवार का पूर्व निवास "सवाई" था। संवत् १८९६/७ में जब सरदार शहर बसा तो बीकानेर महाराजा ने यह कार्य माणकचन्द्रजी के सुपुर्द किया था। उन्होंने सुहाई (सवाई) ग्राम सेठ जयकृष्णदास चण्डालिया को रुक्का भेजा। सुहाई के निकट ५ मील दूर राजा बास गाँव था, वही पसन्द किया गया। राज्य की ओर से मुफ्त जमीन और इग्यारह रुपए इनायत करने की घोषणा हुई। जयकृष्णदास जी के पुत्र अमेदमल और इन्द्रचन्द्रजी ने इस कार्य में बहुत सहयोग दिया। कुछ समय पश्चात् सरदार शहर माजी साहब राणावतजी के तालुक में कर दिया गया और इन्द्रचन्द जी को कामदार बना दिया गया। सेठ जयकृष्णदास जी स्वयं यहां आकर बसे। इनके पुत्रों ने कलकत्ते में कपड़े का व्यवसाय स्थापित किया। इन्हीं इन्द्रचन्द्रजी के सुपुत्र शोभाचन्द्र नें सरदार शहर की रक्षा हेतु अपने प्राणों का बलिदान दिया। उनकी छतरी एवं मकान अब भी विद्यमान हैं। पंच एवं पंचायती में इस परिवार का बहुत सम्मान है। सेठ शिवजीराम खूबचन्द चंडालिया के परिवार का मूल निवास किशनगढ़ था। सेठ गंगाराम जी सरदार शहर आकर बसे। इस परिवार का भी कलकत्ते में कपड़ा व जूट का व्यवसाय हैं। सेठ जसकरण सुजानमल के परिवार का भी मूल निवास सवाई था।

जालना के सेठ आनन्द रूप कस्तूरचन्द चंडालिया के खानदान का मूल निवास गंठिया (जोधपुर) था। करीब २०० वर्ष पूर्व वे दक्षिण गए एवं जालना में दुकान खोली। इस खानदान के सेठ आनन्द रूप जी बड़े विद्वान् थे, उन्होंने सैकड़ों शास्त्रों का संग्रह किया।

भूरा

भंसाली भूरे जी की संतानें कालान्तर में भूरा कहलाने लगी। यति श्रीपालचन्द्र जी के अनुसार भण्डशाली गोत्र का एक परिवार देशनोक जाकर बसा। उनमें एक व्यक्ति देखने में अत्यन्त भूरा था। अतः उसकी औलाद भूरा कहलाने लगी।

भणसाली पूगलिया

पूगल में जा बसे भणसाली परिवार भणसाली पूगलिया कहे जाने लगे।

चीलमेहता

यह गोत्र भंसाली गोत्र की एक शाखा है।

उदयपुर के मेहता रामसिंह जी के खानदान का इतिहास बहुत प्राचीन है। अलाउद्दीन खिलजी द्वारा मेवाड़ का राज्य हस्तगत किए जाने पर जब महाराणा हमीर ने अपना पैतृक राज्य वापिस पाने के प्रयत्न शुरू किए तो इस खानदान के मेहता जालसी जी उनके सहायक थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उनके पुत्र चीलजी भी बड़े पराक्रमी हुए। उन्हीं के नाम पर उनके वंशज चील मेहता कहलाए। जालसी एवं चीलजी के जीवन प्रसंग अन्यत्र दिए जा रहे हैं।

१९वीं सदी में इस खानदान में मेहता ऋषभदासजी के पुत्र मेहता रामसिंह जी बड़े चतुर राजनीतिज्ञ हुए। वे मेवाड़ राज्य के कई बार प्रधान बनाए गए। सर्वप्रथम वे राज्य के दीवान बनाए गए । संवत् १८७५ में महाराणा ने उन्हें जागीर प्रदान की। संवत् १८८१ में वे प्रधान बनाए गए। आपके सुप्रबंध से राज्य की आर्थिक स्थिति सुधरी। ब्रिटिश सरकार के खिराज के चात लाख रूपए एवं अन्य फर्ज अदा कर दिए गए। संवत् १८८३ में महाराणा ने उन्हें चार गाँव जागीर में दिए। महाराणा जवानसिंह के समय फिजूलखर्ची की वजह से खिराज के सात लाख रूपए बकाया हो गया। मेहता रामसिंह फिर प्रधान बनाए.गए। उन्होंने खिराज ही नहीं चुका दिया, पहाड़ी प्रदेशों के विकास के लिए दो लाख रूपए ब्रिटिश सरकार से दिलाए। महाराणा ने उन्हें सिरोपाव प्रदान किया। संवत् १९०३ में एक षड़यंत्र का संदेह कर महाराणा ने उनकी सारी जायदाद जब्त कर ली। मेहता रामसिंह अजमेर चले गए। बीकानेर दरबार ने उन्हें आग्रहपूर्वक बीकानेर बुलाना चाहा पर वे नहीं गए। इससे मेवाड़ राज्य के प्रति उनकी स्वामी भक्ति का परिचय मिलता है।

मेहता रामसिंह जी के तृतीय पुत्र मेहता जालिमसिंह को संवत् १९१८ में महाराणा शंभूसिंह ने उदयपुर बुला लिया एवं चतुर्थ पुत्र इन्द्रसिंह को बीकानेर महाराजा ने बुला लिया। मेहता जालिम सिंह ने जालिमपुरा गाँव बसाया। संवत् १९२५ में वे सादड़ी के हाकिम रहे। आपके पुत्र अक्षय सिंह को महाराणा ने कुम्भलगढ़ और मगरे का हाकिम बनाया। संवत् १९५६ के अकाल में आपने गरीब लोगों की बहुत सहायता की। डा. मोहन सिंह मेहता जिनकी जीवनी अन्यत्र दी जा रही है, इसी खानदान के हैं।

चीलजी मेहता के खानदान में १८वीं सदी के अंत में मेहता नाथजी बहुत प्रसिद्ध हुए। वे संवत् १८०७ में माण्डलगढ़ आए और फौज में अफसर बन गए। आपने लक्ष्मीनारायण का मन्दिर बनवाया। आपका परिवार पुष्टिमार्गी वैष्णव सम्प्रदाय का हैं। किले के नजदीक पहाड़ी पर विजासन माता का मंदिर भी आपका बनाया हुआ है।

मेहता रामसिंहजी के द्वितीय पुत्र मेहता गोविन्द सिंहजी का खानदान ब्यावर में निवास करता हैं। ब्यावर के कमिश्नर कर्नल डिक्सन ने आपको जैठाणा गाँव में एक हजार बीघा जमीन इनायत की एवं यहाँ स्थित ग्वालियर राज्य का गढ़ भी इनके सुपुर्द किया। वह जमीन और गढ़ आपके पौत्र मेहता चिमन सिंहजी के अधिकार में रही। मेहता चिंमनसिंहजी २४ सालों तक ब्यावर म्युनिसिपलिटी के सदस्य रहे।

राखेचा/पूंगलिया

लौद्रपुर (जेसलमेर) में संवत् ११८७ में भाटी राजा रावल जेतसी राज्य करते थे। उनका ९ वर्षीय पुत्र केलणदे कुष्ठ रोगग्रसित था। राजा के आग्रह पर आ. जिनदत्त सूरि लौद्रपुर पधारे। उनके आर्शीवाद से राजपुत्र स्वस्थ हो गया। कुमार केलणदे ने दीक्षा की चाह प्रकट की। आचार्य

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ने उन्हें श्रावक व्रत दिलाया। यति रामलाल जी के अनुसार दीक्षा की चाह रखने के कारण उनका गोत्र "राखेचाह" यानि राखेचा निर्धारित हुआ। जब कुछ परिवार अपने निवास पुंगल से उठकर अन्य जगह गए तो पुंगलिया-राखेचा कहलाने लगे। कालांतर में उनका स्वतंत्र पूंगलिया गोत्र बन गया।

कर्नल टाड ने भाटी जाति के सम्बन्ध में लिखा है कि भाटी राजा केहर (कल्हण) के वंश में आलून हुआ। उसके चार पुत्र— देवसी, त्रिपाल, भवानी और राखेचा थे। राखेचा के वंशजों ने कृषि कार्य छोड़कर व्यवसाय आरम्भ किया और ये लोग औसवाल कहलाए।

यति श्रीपालचन्द के अनुसार पूंगल का राजा भाटी राजपूत सोनपाल था। उसके पुत्र केलणदे को कोढ़ रोग हुआ। विक्रम संवत् ११८७ में आचार्य जिनदत्त सूरि पधारे। आचार्य द्वारा मंत्रित गाय का घी लगाने से केलणदे को आराम हुआ। राजा सोनपाल ने जैनधर्म अंगीकार किया। उसके वंशजों का राखेचाह गोत्र हुआ। पूंगल से अन्यत्र बसने पर वे पूंगलिया कहलाने लगे।

बीकानेर के राखेचा खानदान में इनके पूर्वज लच्छीरामजी बड़े प्रतापी पुरुष थे। आप संवत् १८५२-५३ में बीकानेर के दीवान रहे। आपने अंतिम समय में संन्यासवृत्ति धारण कर ली एवं एक अलख मठ की स्थापना की और 'अलख सागर' नामक प्रसिद्ध विशाल कूप बनवाया। इसी परिवार के राखेचा मंगलचन्दजी बड़े प्रभावशाली व्यक्ति थे। वे महाराजा गंगासिंह जी की रिजेंसी कौंसिल के मेम्बर रहे।

पूंगलिया खानदान के अनेक परिवार डूंगरगढ़, नागपुर, चांदा आदि स्थानों पर निवास करते हैं। डूंगरगढ़ के सेठ ताराचन्द बीजराज एवं सेठ गोकुलचन्द कस्तूरचन्द के परिवारों का मूल निवास संमदसर था। वहां से संवत् १९५३ में डूंगरगढ़ आ कर बसे। ये परिवार भागलपुर, साहिबगंज आदि जगहों में गल्ला तथा फारबिसगंज कलकत्ता आदि स्थानों पर जूट का व्यापार करते हैं। नागपुर के सेठ नेमीचन्द सरदारमल के परिवार का मूल निवास बीकानेर था। यहां सोने चांदी एवं सर्राफा का व्यवसाय करते हैं। चांदा के सेठ केसरीमल पीरूदान का पूर्व निवास खारा (बीकानेर) था। इन्होंने संवत् १९६४ में यहां चांदी-सोने का व्यवसाय शुरू किया।

बुरहानपुर (सी. पी.) के सेठ अमरचन्द जी पूंगलिया का खानदान बीकानेर से उठकर बुरहानपुर, नागपुर, अमरावती आदि स्थानों पर जा बसा। सेठ अमरचंदजी १९२५ में तत्कालीन सी. पी/बरार ओसवाल महासभा के तीन साल तक प्रधानमंत्री रहे। आप राष्ट्रीय विचारों के देशभक्त थे। आप शुद्ध खद्दरधारी थे। सामाजिक कुरीतियों के खिलाफ हमेशा संघर्षरत रहे। अपनी प्रथम पत्नी के देहावसान के बाद आपने एक गुजराती विधवा से विवाह किया था।

जयपुर के सेठ सौभागमलजी का खानदान पूगल से उठ कर बीकानेर होता हुआ जयपुर जा बसा। इनका जवाहरात का मुख्य व्यवसाय था। आपने रंगून में भी शाखा स्थापित की। धार्मिक कार्यों में भी आप रुचि लेतें थे। आपने एक धर्मशाला का निर्माण कराया।

राखेचा गोत्र के अनेक शिलालेख जयपुर एवं बीकानेर में उपलब्ध हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जड़िया

सवालख देश (सपादलक्ष) मेड़ता नागोर के पास कुंभारी नगर में यादव भाटी राजा कुलधर का राज्य था। उसके ३२ रानियां थीं, पर पुत्र एक भी नहीं। राजा चिंतातुर थे। आ. जिन कुशल सूरि का वहां पधारना हुआ। दीवान ने गुरु जी का चरण प्रक्षालन कर उचित द्रव्यों से नव अंग की पूजा करने की सलाह दी। राजा ने वैसा ही किंया। गुरू जी का चरणामृत ३२ रानियों को भेजा। उनमें से २१ रानियों ने भक्ति भाव से पी लिया। ग्यारह ने नहीं पीया। उन २१ रानियों ने पुत्रों को जन्म दिया। महाजनवंशमुक्तावली के अनुसार इस चमत्कार को अतिशय जानकर बादशाह अकबर ने चरण प्रक्षालन कर नवांग पूजा और श्रावकों द्वारा धन अर्पण करने की परम्परा फर्मान निकाल कर शुरू करवाई। पुत्र-प्राप्ति पर राजा २१ पुत्रों को पद्म सूरि जी महाराज के पास लाया। गुरू जी ने उनके सर पर झडोला रखा। उससे जडिया गोत्र प्रकट हुआ। बाद में इनकी अनेक शाखाएं हो गई।

राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान बीकानेर के ग्रंथागार में उपलब्ध 'इतिहास-ओस वंश' ग्रंथ में उक्त कथा इसी तरह है, किन्तु यादव नरेश का नाम 'जलधर' दिया है एवं पुत्र के सर पर जटा अधिक होने से 'जटिया' गोत्र बना लिखा है जो कालांतर में जडिया हो गया।

आग्रहिया/आगरिया

अग्ररोहा (सिंध) के राजा गोशल सिंह भाटी को वि.सं. १२१४ में यवन सेना ने घेर लिया। पन्द्रह राजपूतों सहित वे बन्दी बना लिए गए। उस समय आ. जिनचन्द्र सूरि अग्ररोहा में थे। राजा के प्रधान ने आचार्य जी से प्रार्थना की। उनके चमत्कार से बेड़ियां टूट गई। यवन सेनापति ने चमत्कार को नमस्कार कर उन्हें मुक्त कर दिया। राजा ने जैनधर्म अंगीकार किया। उनके वंशज आग्रहिया कहलाने लगे, जो कालांतर में आघरिया/आगरिया हो गया।

(१७). गुजरात में बसे ओसवाल गोत्र

१. गाल्हा
२. नागड़ा
३. मीठड़िया
४. वडहरा/वडेर
५. लालन
६. गांधी (सहसगुणा)
७. देवाणंदसखा
८. गौतम
९. कांटीया (गोखरू)
१०. हरिया
११. देढ़िया
१२. स्याल
१३. बोरीचार
१४. विषापहार
१५. काश्यप
१६. कटारिया
१७. चहुआन
१८. बहुड़ (बहुल)—

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

१९. हथुड़ीया
२०. पड़ाइया
२१. वाहणी/वहाणी
२२. जासल
२३. करणीया (केनिया)

गाल्हा

श्री जैन गोत्र संग्रह के अनुसार श्री कृष्ण के यदुवंश में राजा रायभट्टी ने भटनेर नगर बसाया। इसी वंश के राव जेसलजी ने जेसलमेर एवं शिवराज ने शिव कोटडा बसाया। उन्हीं के वंश में सोमचन्द्र हुए। ये लूटपाट करते थे। एक समय अंचल गच्छ के आचार्य जयसिंह सूरि इस प्रदेश में पधारे। सोमचन्द्र ने उनके शिष्यों को लूट लिया। आचार्य ने मंत्र बल से उसे स्तम्भित कर दिया। सोम की माता सरूप दे ने गुरु से क्षमा मांगी और वि. सं. १२११ में जैन धर्म अंगीकार कर लिया। सोम के पुत्र का नाम गाल्हा था। मुगलों के आक्रमण के समय वह सिंध जाकर बस गया। उसके वंशज उसी के नाम से जाने जाते हैं। कालान्तर में ये कच्छ एवं सौराष्ट्र के विभिन्न प्रदेशों यथा— चोखाड़, देसलपुर, बड़ाला, खाखर, डुमरा, चेला, तुबंड़ी, कटारिया, जोगावड गाँवों में जा बसे। आथा, समरखी, बुहड़, बहंद, कटारिया, अघोदूया, भूगतरिवा, घलइया आदि इसी गोत्र की शाखाऐं हैं एवं हापाणी, नागार्जुनाणी, बाघाणी, वीसाणी, सिवाणी, वागड़ेचा आदि खांपें हैं। इनकी कुलदेवी विसल माता है।

नागड़ा

इस गोत्र की उत्पत्ति का श्रेय भी अंचल गच्छीय आचार्य जयसिंह सूरि को है। उन्होंने उमरकोट में वि. सं. १२२८ में परमार जाति के मोहणसिंह को प्रति बोध दिया। वे उनके भक्त बन गए। आचार्य के वरदान से मोहण सिंह पाँच पुत्रों के पिता बने, जिनमें से एक नागपुत्र था। श्री जैनगोत्रसंग्रह में दी हुई जनश्रुति के अनुसार नागपुत्र को बेटी ने चूल्हे में झोंक कर मार डाला। वह मर कर व्यतंर देव हुआ एवं परिवार को दुख देने लगा। आराधना करने पर उसने गोत्र स्थापित कर सर्वदा नाग पूजा करने का श्राप दिया। इसीलिए इनके वंशजों का नागडा गोत्र हुआ। इनका कुल देव नाग है। इसी गोत्र में लखराज हुए जो चोरवाड़ जाकर बसे। उनके वंशज चोखेड़िया कहलाने लगे। कुछ परिवार कच्छ में जा बसे। इस तरह गुजर नागड़ा, कच्छी महाजन नागड़ा आदि शाखाऐं हुई। इनमें भी दसा बीसा है। ठाकराणी, लालाणी, मेलाणी, गेलाणी, आसराणी आदि इस गोत्र की खापें हैं। इनके वंशज मोरबी, नवाशहर, सूरत, अंजार, गुडा, भुज, मांडवी, पोरबंदर, पाटण, वीरमगाम, चोर वाड़, दीव, खजुरडा, पीपली, दुमरा आदि स्थानों में वास करते हैं।

नागड़ा गोत्रीय नलिया (कच्छ) के ओसवाल श्रेष्ठि नरशी नाथ बड़े प्रतापी हुए। इन्होंने वि. सं. १८९७ में एक विशाल शिखरबंद जिनालय का निर्माण कराया एवं उसमें चन्द्रप्रभु स्वामी की प्रतिमा प्रतिष्ठित की। इस मंगल अवसर पर सम्पूर्ण ओसवाल जाति में प्रभावना की। इन्हीं नरशी ने शत्रुञ्जय तीर्थ पर भी एक भव्य मन्दिर बनवा कर उसमें चन्द्रप्रभु स्वामी का बिम्ब प्रति-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ष्ठित करवाया। पालीताणा के गौड़ी पार्श्वनाथ जिनालय के पास एक उपाश्रय बनवाया। मांडवी में धर्मशाला एवं जिनालय का निर्माण कराया। इनके वंशज सेठ वीरजी ने इनकी स्मृति में पाली-ताणा में एक धर्मशाला का निर्माण कराया।

मीठडीया

वि. सं. ११७२ में परमार जाति के राजा महीपाल सुरपाटण नगर में राज्य करते थे। आचार्य आर्य रक्षित नगर में पधारे। उस समय नगर में महामारी फैली हुई थी। आचार्य श्री के प्रभाव से रोग शांत हो गया। राजा उनके उपदेशों से प्रभावित हो जैनी बन गया। उसका पुत्र धर्मदास चंदेरी का राजा हुआ। उसका वंशज रायमल्ल मुस्लिम आक्रांताओं के डर से भाग कर नागौर जा बसा। उसने सुलतान अलाउद्दीन खिलजी को ८४ प्रकार की मिठाई भेंट की। सुलतान ने उसे ८४ गाँवों की जागीर दी। इसी रायमल्ल ने मीठड़ी गाँव बसाया। उसके वंशज मीठड़िया कहलाने लगे। किसी समय लड़के की बारात में जाते हुए खारे पानी के कुऐं में १०० मन खांड डलवाई- इसलिए इन्हें शुद्ध मीठड़िया भी कहते हैं। कालान्तर में इनके वंशजों की सोनी, देवाणी, तालाणी, सखाणी, बहोरा आदि खांपें हुई। इनके वंशज सूरत, खडकी, पाटण, अहमदाबाद, नगोर, दीव, खंभात, नवानगर, जेसलमेर आदि स्थानों में वास करते हैं।

वडहरा (वडोरा/वडेरा/वडेर)

श्रीजैनगोत्रसंग्रह के अनुसार भिन्नमाल के परमार राजा सोम आचार्य जयप्रभ सूरि से बोध पाकर जैन बने। मुसलमानों के आक्रमण से त्रस्त होकर इनके वंशज गंगा वाडमेर जा बसे। वि.सं.१२१६ में आचार्य जयसिंह सूरि से प्रतिबोध पाकर यह परिवार ओसवाल कुल में शामिल हुए। इसी वंश के आल्हा बड़े धनी थे। वृद्ध हो जाने से लोग उन्हें वडेरा कहने लगे।

कालांतर में उनके वंशजों का यही गोत्र-नाम हो गया। इनमें भी दसा बीसा हैं। सेल्होत, दोशी, पीपलिया, पारेख, छकलसीया, गांधी आदि इनकी खापें हैं। इनके वंशज मोरवी, राज-कोट, भुज, अंजार नवानगर, वाडमेर, जैसलमेर, मांडवी, नागौर, पाटण, जूनागढ़, खम्भात में निवास करते हैं।

लालन

झालोर (जालोर) में वि. सं. ७१३ में सोनगीरा सोढ़ा राजपूत वंश के कान्हड़ दे नामक सोलंकी राजा राज्य करते थे। उनके वंश में रावजी नामक ठाकुर हुए। उनके पुत्र लालन को कोढ़ हो गया। मुनि कलाप्रभ सागर जी ने श्री आर्य कल्याण गौतम स्मृतिग्रंथ में इस गोत्र के परिचय में रावजी को सिंध के पीलुड़ा ग्राम का ठाकुर बताया हैं एवं उनके दूसरे पुत्र लालन को कंठ रोग हुआ लिखा है। आ. जयसिंह सूरि ने मंत्रबल से बालक को स्वस्थ कर दिया। उन्होंने वि. सं. १२२९ में जैनधर्म अंगीकार किया एवं ओसवाल कुल में शामिल हुए। लालन के वंशज लालन नाम से पहचाने जाने लगे। इसी वंश में जेसाजी बड़े प्रतापी हुए। इसी गोत्र के अनेक परिवार नवानगर, अंजार, भुज, अमरकोट, जैसलमेर, मांडवी, कोटडीया, वाधनपुर,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

लोद्राणी, वाडमेर आदि स्थानों में निवास करते हैं। पावेचा इन्हीं की एक शाखा गोत्र है। इसी वंश में वि. सं. १६३० में कच्छ के आरीखणा ग्राम में अमरसिंह सेठ हुआ। जिसके दो पुत्र वर्धमान शाह और पद्म सिंह शाह बड़े प्रतापी हुए। इनका रेशम एवं इलायची आदि का व्यापार सुदूर चीन तक होता था। ओसवालों के इतिहास-पुरूष माने जाने वाले इन दोनों भाईयों के विस्तृत विवरण प्रथम खण्ड में अंकित किए जा चुके हैं।

गांधी (सहसगुणा)

विक्रम संवत् १२१० में भिन्नमाल के पास रतनपुर नगर में परमार राजा हमीर राज्य करते थे। इनके पुत्र जैसिंह का विवाह राणा भारमल की पुत्री नवलखी से हुआ। एक समय इनके पुत्र को गोठ नगर की बलोचणी स्त्री मंत्र-बल से बिलाव बन कर उठा ले गई। उस समय आचार्य आर्य रक्षित सूरि का नगर में पधारना हुआ। उन्होंने महाकाली देवी की आराधना की, जिससे प्रसन्न होकर देवी ने पुत्र से मिला दिया। यह पुत्र सख्तसिंह बड़ा गुणवान निकला, जिससे उसके वंशज सहसगुणा कहलाने लगे। ये मेवाड़, चित्तौड़, किशनगढ़, बागड़, भुज, अमरकोट, बाड़मेर, बीकानेर, पाटण, अहमदाबाद, गोलकुंडा, थराद, अंजार, साचोर, नागौर, कालू, उदयपुर आदि स्थानों में निवास करते हैं।

देवाणंदसखा

इनके पूर्वज गढ़ मुक्तेसर के गौतम गोत्रीय ब्राह्मण थे। इनके कुल में पंडित दिनकर भट्ट हुए। इन्होंने भहावपुर में आचार्य धर्म घोष सूरि (वि. सं. १२३४-१२९८) के चमत्कारपूर्ण योगासनों (अधर आकाश में आसन) का अवलोकन किया एवं उनके उपदेशों से प्रभावित होकर जैनधर्म अंगीकार कर लिया। इस पर ब्राह्मणों ने उन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया। तब इनके परिवार को ओसवाल कुल में शामिल किया गया। उनके वंश में देवाणंद हुए। इनके इग्यारह पुत्र थे, जो कालांतर में दिल्ली जा कर बसे एवं देवाणंद सखा नाम से पुकारे जाने लगे। दिल्ली से अन्य जगहों में स्थानांतरित हुए। गोसलीआ, गोठी आदि इन्हीं की शाखाऐं हैं। इन्हीं से चोथाणी, बीसलाणी, देसलाणी, हीराणी, भुंवाणी, कोकलिया, मूलाणी, थावराणी आदि खांपे निकली। इनमें भी दसा-न्बीसा हैं। इनके वंशज सिरोही, भिन्नमाल, पोकरण, जैसलमेर, पाटण आदि स्थानों में निवास करते हैं।

गौतम

भिन्नमाल नगर में वि. सं. ७९५ में शंखेश्वर गच्छ के श्री उदयप्रभ सूरि ने श्रीमालीजाति के विजय सेठ को प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। संवत् ११११ के आसपास उनके वंशज मुसलमान आक्रांताओं से त्रस्त होकर चापांनेर के पास भालेज नगर में आ बसे। वे ३६ प्रकार के किराणा का व्यवसाय करते थे; अतः भणशाली कहलाने लगे। इनके वंशजों की कालान्तर में अनेक शाखाएँ- खापें हुईं यथा-महोता, यशोधन, वीसरीया, शंखेश्वरीया, पुराणी, धुरीयाणी, भरकीयाणी, घट्टा, छेवड्डाणी, पबाणी, मालाणी, घेलाणी आदि। कुछ रईस तबियत के लोगों ने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पुनर्लग्न किया, इससे उनकी संतानें दसा कही जाने लगी। इनके वंशज मांडल, उजेबी, कच्छ, रणपुर, वडाला, नवानगर, कटारिया आदि स्थानों पर वास करतते हैं।

कांटीया (गोखरु)

रणथम्भौर के समीप आछबू गाँव में डीडू (महेश्वरी) जाति के धांधल सेठ रहते थे। उन्होंने वि. सं. १०४५ में आ. रत्न सिंह सूरि से प्रतिबोध पाकर जैन धर्म अंगीकार किया। उन्हें ओसवाल कुल में शामिल किया गया। स्वप्न में देवी ने गोखरु की डाली पर वंश का नाम रखने की हिदायत दी। अतः गोखरु नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके वंशज श्री सोमा सेठ वैद्य थे, उनकी मृत्यु औषधि के लिए लीबड़ा वृक्ष के नीचे लींबोड़ी बीनते हुई। अतः इनकी संतानें लींबड़िया कहलाने लगी। एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार लींबड़ी ग्राम से स्थानान्तरित होने से लींबड़िया नाम पड़ा। इसी कुल की सोनी एवं झवेरी शाखाऐं हैं, जो सोने एवं जवाहरात का व्यापार करने से बनी। इनके वंशज अहमदाबाद, खंभात, सिंधुवास, बीकानेर, जोधपुर, मेड़ता, नागपुर, पाली, नवानगर आदि स्थानों में वास करते हैं।

हरिया

झालोर (जालोर) के समीप लाखणा भालणी गाँव में तातोला परमार वंशी राजपूत रणमल रहते थे। उनके पुत्र हरिया को साँप ने डस लिया। अभी-अभी उसका विवाह हुआ था। चारों तरफ कुहराम मच गया। उन्हीं दिनों चमत्कारी संत आ. धर्मघोष सूरि गाँव में पधारे हुए थे। उन्होंने मंत्र-बल से विष उतार कर हरिया को स्वस्थ कर दिया। उनके पूरे परिवार ने जैनधर्म अंगीकार किया। वे ओसवाल कुल में शामिल हुए। उनकी संतानों का हरिया गोत्र बना। कालांतर में इस गोत्र की अनेक शाखा/प्रशाखाऐं हुई, यथा- सहसगणा, कका, सांइया, ग्रंथलिया, मरुथलिया, वीजल, पांचारीया, सरवण, नपाणी, साइया, कपाइया, दिन्नाणी, कोराणी, बकीयाणी, नकीयाणी, पंचायाणी माणकाणी, खेतलाणी, सोमगाणी, सधराणी, कायाणी, हरियाणी, हरगणाणी, पेथडाणी, सायाणी, पेथाणी, आसराणी, अभराणी, ढ़ासरिया आदि। इनमें भी दसा-बीसा हैं। इनके वंशज मेमाणा, अमरकोट, द्रोणीया, डुमरा, भुज, देसलपुर स्थानों पर निवास करते है।

देढ़ीया

जैसलमेर के देवड़ा चावड़ा (चौहान) राजपूत को वि.स. १२५५ में श्री देवेन्द्र सिंह सूरि या जय सिंह सूरि ने प्रतिबोध देकर जैन धर्म अंगीकार करवाया एवं ओसवाल कुल में शामिल किया। इनके वंशज देढ़ीया से इनका गोत्र देढ़िया प्रसिद्ध हुआ। कालातंर में इनकी अनेक शाखाऐं हुई यथा-करणाणी, डूंगराणी, माणाकाणी, नोद्राणी, पीम सीयाणी, सध्याणी, गागाणी, तेजपालाणी, मेलाणी, राजाणी, राणाणी, देपालाणी, मेघाजलाणी, देयाणी आदि। इनमें दसा-बीसा भी हैं। इनके वंशज फरादीया, तीथ, सांभराई, पीपरीआ, सोनारडी, भुजपुर, वडाला आदि स्थानों में निवास करते हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

स्याल

दहिया राजपूत खेमराज सायला आकर बसे। उनके पुत्र सामंतसिंह को सर्प ने डस लिया। उस समय जैन संत जय केसरी सूरि पधारे हुए थे, उन्होंने मंत्र-बल से उसे स्वस्थ कर दिया। सामंतसिंह का परिवार जैन-धर्म अंगीकार कर ओसवाल कुल में शामिल हुआ। उनकी संतानों का स्याल गोत्र प्रसिद्ध हुआ। सायलेचा, सचीया, सांड, वहोरा आदि इस गोत्र की शाखाएँ हैं। इनके वंशज पाली, हिंगोल, नाडोल, सोजत, सादड़ी आदि स्थानों में निवास करते हैं।

बोरीचा

पारकर नगर के क्षत्रिय उदैपाल को वि. सं. १२२६ में आ. पुण्य तिलक सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया एवं ओसवाल कुल में शामिल किया। इनके वंशज तेजपुर, पारकर, रणपुर, अमर कोट, कानमेर, खम्भात, मोरबी आदि स्थानों में निवास करते हैं।

विषापहार

घालती ग्राम के सहसा नामक ओसवाल सेठ के घर जीमनवार था। पकवान न जाने कैसे विषैले हो गए। अनेक लोग पकवान खाकर बीमार हो गए। आ. जयकीर्ति सूरि ने उपचार बता कर सबको स्वस्थ कर दिया। तभी से सेठ के वंशजों का विषापहार गोत्र बन गया। यह वि. सं. १४४७ की घटना है। इनके वंशज कोटड़ा, पोकरण, फलोदी, साचोर, सिरोही, मोरसीम आदि स्थानों में वास करते हैं।

काश्यप

वि. सं. ७९५ में श्रीमाली जाति के कश्यप गोत्रीय सेठ झुना भिन्नमाल नगर में शंखेश्वर गच्छीय आचार्य उदयप्रभ सूरि से प्रतिबोध पाकर जैनी बने। उनके वंशज वि. सं. ११११ में मुसलिम आक्रांताओं के भय से अचवाड़ी ग्राम में जा बसे। कालांतर में इस कुल के अमरा नामक श्रेष्ठि ने ओसवाल कन्या से विवाह किया। तब से यह गोत्र ओसवाल कुल में शामिल हो गया। इनके अनेक उपगोत्र/शाखाएँ हुई यथा— लाछी, गटा, संघवी, आभाणी, गदा, साहुला, गुगलिया, साचोरी आदि। इनके वंशज मोरसीम, इडर, भिन्नमाल, सालवी, राणपुर, सादड़ी, थलवाड़ा आदि स्थानों में वास करते हैं।

कटारिया

पुजवाड़ा नगर में सीसोदिया राजपूतों का राज था। नगर में चौहान कटारमल का बड़ा सम्मान था। वह राजा को जरूरत पड़ने पर धन उधार देता था। वह नगर का प्रसिद्ध बोहरा था। संवत् १२४४ में आ. जयसिंह सूरि के उपदेश से प्रभावित होकर उसने जैन धर्म अंगीकार कर लिया। ओसवाल कुल में शामिल कर उसका कटारिया गोत्र निर्धारित हुआ। हस्तीकुंड में निर्मित महावीर जिनालय इसी गोत्र के श्रेष्ठियों का बनाया हुआ है। इनके वंशज रोहड़, पाली, सिरोही, नाडलाई आदि गाँवों में बसे हुए हैं।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चहुआन

झालोर (जालोर) नगर में चौहान राजपूत भीम को आचार्य धर्मघोष सूरि ने वि. सं. १२६५ में प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। ओसवालों के साथ रोटी-बेटी व्यवहार शुरु होने से वे ओसवाल कुल में शामिल हो गए। इन्होंने डोड गाँवों में एक जिन मन्दिर बनवाया। इनके वंशज जालोर, डोड, गुंदालिया, राडबरा गाँवों में निवास करते हैं।

बहुड़ (बहुल)

वि. सं. १२४६ में आ. धर्म घोष सूरि के उपदेश से प्रतिबोध पाकर डोडिया राजपूत श्री बाहोल जैनधर्म अंगीकार कर ओसवाल बने। उनका बहुल गोत्र बना, जो कालांतर में बहुड़ कहा जाने लगा। इनके वंशज मोहल, घणही, खीमली स्थानों में निवास करते हैं। इसी कुल में भूंभच बड़े प्रतापी हुए, जिन्हें सोजत के राजा ने संवत् १३८५ में अपनी कंवरी (पुत्री) परणा कर कामसा गाँव दहेज में दिया। इनके वंशजों का कामसा गोत्र प्रसिद्ध हुआ। ये परिवार नाडलाई सिरीयारी आदि स्थानों पर भी वास करते हैं।

हथुड़ीया

वि. सं. १२०८ में हस्ततुंड नगर के राठोड़ क्षत्री राउत अनन्तसिंह को आ. जयसिंह सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। इनके वंशज हथुडीया कहलाते हैं। चंदेरी, नाडलाई, चुडली, नार गाम में इनके परिवार निवास करते हैं।

पडाइया

वि. सं. १२२४ में लोलाडा नगर के राठोड़ फणगर को आ. जयसिंह सूरि ने उपदेश देकर जैनी बनाया। इनके वंशज वाडमेर, जैसलमेर, बीलाड़ा में हैं। तिलाणी, मुमणीया इस गोत्र की शाखाऐं हैं।

वाहणी (वहाणी)

वि. सं. १२२१ में आ. पुण्य तिलक सूरि ने विणयनगर के परमार डोडिया राजपूत नगराज को प्रतिबोध देकर जैनी ओसवाल बनाया। वाहनों का व्यापार करने से वे वाहणी कहलाने लगे। इनके वंशज साचोर, भिन्नमाल, खंभात, जालोर आदि स्थानों में निवास करते हैं।

जासल

वि. सं. ११४४ में हस्ति तुंड नगर के चौहान वंशीय राजा श्रवणवीर के पुत्र कुमार का व्यंतरदेव जासल द्वारा छले जाने पर आ. पुण्य तिलक सूरि ने उद्धार किया। उनके वंशज जासल नाम से प्रसिद्ध हुए। ये पाटण, सांचोर, भीलडी, वडनगर, सहसपुर आदि स्थानों में वास करते हैं। इनमें भी दसा-बीसा प्रभेद है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

करणीया (केनिया)

विक्रम संवत् ११७५ में सिंध प्रदेश के परमार वंशीय राजा गदाधर बड़े प्रसिद्ध हुए। उन्हें संवत् १२०० में आचार्य जिनदत्त सूरि ने प्रतिबोध देकर जैनधर्म अंगीकार करवाया। "कच्छ विकास" (नवम्बर १९७८) में प्रकाशित आलेखानुसार राजा गदाधर के वंशज ओसवाल कुल में शामिल किए गये एवं उनका 'गदा' गोत्र निर्धारित हुआ। ये 'गादवाना जैन' नाम से भी पहचाने जाते हैं। कालातंर में ये सिंध व पारकर प्रदेश छोड़कर कच्छ के कंथकोट नगर में आ बसे। इस गोत्र में बजपार शाह बड़े नामांकित व्यक्ति हुए। उनके पुत्र कुरणार शाह ने कंथकोट से पालीताना शत्रुञ्जय तीर्थ के लिए संघ समायोजन किया। पालीताना में भगवान् पार्श्वनाथ का मन्दिर बनवा कर स्वर्ण कलश चढ़ाया। यह गोत्र कच्छी बीसा ओसवालों का मुख्य गोत्र है। इसकी अनेक खापें पूरे कच्छ प्रदेश में फैली हुई है। 'करणीया' एवं केनिया गोत्र इसी की शाखाऐं हैं। इस गोत्र में दीयों, केलण, सींवरा आदि अनेक प्रसिद्ध पुरुष हुए। कच्छ के मोटी खाखर व छसरा में इनकी घनी बस्ती है। नागौर में इस गोत्र के श्रेष्ठि लखमण का संवत् १५३४ का एक शिलालेख है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय

पंचदश

ओसवाल संस्कृति

भाषा एवं लिपि

ओसवालों का मूल निवास राजस्थान होने से उनकी मुख्य भाषा राजस्थानी है। प्रसिद्ध भाषा शास्त्री डा. सुनीति कुमार चटर्जी के अनुसार राजस्थानी नागर-अपभ्रंश का रूप है। इसमें साहित्य सृजन तो विक्रम संवत् १००० के बाद ही हुआ। इससे पूर्व साहित्य की भाषा प्राकृत एवं तदनन्तर अपभ्रंश रही। डा. तेस्सीतोरी के अनुसार प्राचीन राजस्थानी का क्षेत्र बहुत विस्तृत था—गुजरात, सिंध, पंजाब एवं शूरसैन प्रदेशों की वह प्रतिष्ठित भाषा थी। कबीर की रचनाऐं इसकी साक्ष्य हैं। जब राजस्थान में यह साहित्य की भाषा बनी तब तक इसने पिंगल का रूप अखतियार कर लिया था, जिसमें शूरसैनी एवं ब्रज भाषा के शब्दों का मेल हो गया था। यही आधुनिक 'मारवाड़ी' के रूप में विकसित हुई। ओसवाल समाज में भाषा का प्रचलन इसी के अनुरूप बदलता रहा। वैसे बोलचाल की भाषा का स्वरूप हर दस कोस पर बदलता रहता है। इन्हें बोली कहा जाता है। सर जार्ज ग्रियर्सन ने राजस्थान में बोली जाने वाली बोलियों का वर्गीकरण पश्चिमी, उत्तरपूर्वी, मध्यपूर्वी, दक्षिणपूर्वी, एवं दक्षिणी प्रदेशों के आधार पर किया था। इन

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रदेशों में बसे ओसवाल परिवारों के बोलचाल की भाषा उनके अनुरूप मारवाड़ी, मेवाड़ी, बागड़ी, ढूंढ़ाड़ी, मालवी, रांगडी कहलाती थी। मारवाड़ी के भी विभिन्न स्वरूप प्रदेशान्तर से पाए जाते हैं। जैसे जोधपुरी और बीकानेरी बोली में शब्दों का स्वरुप ही बदल जाता है। भारत के अन्य प्रदेशों में बसे ओसवालों ने उन प्रदेशों की भाषा अपना ली। पंजाब में बसे भावड़ा व अन्य ओसवालों के घरेलू बोलचाल की भाषा ही पंजाबी बन गई। गुजरात में प्रवसन कर बसे ओस-वालों की भाषा ही नहीं, पहनावा खान-पान सभी कुछ गुजराती हो गया। यहाँ तक कि वे अपने मूल गोत्र को ही भूल गए। इसी तरह मुर्शिदाबाद में बसे ओसवालों ने बंगला भाषा ही नहीं अपनाई, वहाँ की संस्कृति भी अपना ली। दक्षिण में बसे ओसवालों के घरेलू बोलचाल की भाषा मारवाड़ी बनी रही। परन्तु कामकाज में उन्होंने प्रादेशिक भाषाओं तमिल तेलगू और कन्नड़ को अपना लिया। हिन्दी प्रदेशों में बसे ओसवालों ने भी हिन्दी को पूर्णतः आत्मसात् कर लिया।

भारत की प्राचीनतम लिपि ब्राह्मी मानी जाती हैं। विक्रम संवत् के ३०० वर्ष पूर्व ब्राह्मी लिपि का ही चलन था। राजस्थान में अजमेर जिले के बरली ग्राम में प्राप्त वीर संवत् ८४ के शिलालेख की लिपि ब्राह्मी है। पुरातत्त्ववेत्ता विक्रम की ७वीं शताब्दी तक भारत में ब्राह्मी लिपि का प्रचलन स्वीकार करते हैं। उस समय तक कागज का आविष्कार नहीं हुआ था एवं आम आदमी के लिए लिपि ज्ञान आवश्यक भी नहीं था। ज्यों ज्यों आवश्यकताऐं बढ़ी-लिपि ज्ञान भी आवश्यक हो चला। अशोक के शिलालेखों में जहाँ एक ओर ब्राह्मी लिपि का प्रयोग है वहाँ अनेक लेखों में "कुटिल" लिपि का भी। सम्राट हर्ष वर्धन के वि. संवत् ६८५ के शिलालेख इसी लिपि में है। समवयांग एवं प्रज्ञापना सूत्र में १८ लिपियों का उल्लेख है। प्रतिहार राजा बहुक का जोधपुर का वि. संवत् ८९४ का शिलालेख भी कुटिल लिपि में है। परन्तु उस समय भी आम आदमी को संयुक्ताक्षरों एवं स्वरों की मात्राओं का ज्ञान कम था। अतः मात्र व्यञ्जनों को बिना स्वर मात्रा के लिखा जाने लगा—यह लिखावट 'केवला' कहलाती थी। मात्र व्यञ्जनों से अक्षरों का संकेत भर रहता था। इसका लेखन वैश्य समाज में बहुत प्रचलित था। १९ वीं/२० वीं शदी में इसे मोडिया भी कहा जाने लगा। इसके अक्षरों का स्वरूप शुरू में 'कुटिल' लिपि से मिलता था। इसे पढ़ने में आपसी समझ का सहारा आवश्यक हो जाता था। "काकाजी अजमेर गया" को "काकाजी आज मर गया" पढ़ा जाना भी सम्भव था। यह मात्र लोकोक्ति नहीं, अनेक दुख प्रद घटनाओं के लिए भी यह लिपि उत्तरदायी थी। राजस्थान से प्रवसन कर अन्य प्रदेशों में बसे ओसवालों ने आंचलिक लिपियाँ अपना ली।

शिक्षा

प्राचीन भारत में विद्याध्ययन के लिए विद्यार्थी गुरुकुलों में भेजे जाते थे जो शहर से दूर एकांत स्थानों पर स्थित होते थे। मध्य युग में नगर या गाँव स्थित गुरु कुल बन गए जहाँ संस्कृत-विज्ञ ब्राह्मण गुरु नियत समय पर पढ़ाते थे, जिन्हें महाराज या महाराज जी कहते थे। ये लघु कौमुदी, संस्कृत चन्द्रिका आदि के माध्यम से संस्कृत भाषा का ज्ञान कराते एवं विद्यार्थी की रुचि के अनुसार उच्च शिक्षा दी जाती। ऐसे विद्यार्थियों की संख्या बहुत ही कम होती थी। ज्योतिष एवं चरक संहिता आदि वैद्यक साहित्य का अध्ययन भी कराया जाता था। उपाश्रयों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एवं मन्दिरों में भी विद्याध्ययन होता था। वैश्य विद्यार्थी अधिकाशंतः दूसरे तरह के गुरुकुलों में जाते जो पोशाल या पाठशाला कहलाते थे। ये एक तरह के महाजनी विद्यालय थे। यहाँ उन्हें संख्या, पहाड़े, जोड़-बाकी, हिसाब, हिन्दी एवं मोडिया (मुडिया) लिपि का ज्ञान एवं अभ्यास कराया जाता। अभ्यास के लिए स्लेट या काठ की पाटी होती थी जिस पर खड़िया मिट्टी के घोल से 'डोके' की कलम बनाकर लिखते थे। भाषा 'कक्को कोडको' से शुरु होती, फिर पूरी 'बारखड़ी' सिखाई जाती। स्लेट पर लिखने के लिए 'बरते' होते थे एवं हर पन्द्रह दिन बाद उसे 'कोयले' से 'पोता' (रंगा) जाता। उच्च श्रेणी के लिए सरकंड़े की कलम से काजल को दूध में फेंट कर बनाई गई स्याही से पतले कागजों पर लिखा जाता था। शाम को छुट्टी से पहले 'म्हारणी' व पहाड़े उच्च स्वर से सामूहिक रूप में दोहराये जाते। हिसाब में अनेक तरह के 'गुर' (फार्मुला) सिखाए जाते जिनसे जटिल सवाल तुरंत हल कर लिये जाते। 'डंडा' का इस्तेमाल आम था। 'गुरु की चोट' को 'विद्या की पोट' माना जाता था।

आमोद प्रमोद के लिए चौक जाँदनी (चतड़ा-चौथ) सबसे बड़ा त्योहार था। कुछ बच्चे मुखौटे लगाकर पौशाला में आते। सभी बढ़िया कपड़े, सलमा-सितारा जड़ी टोपियाँ ओढ़े, पाँवों में घुंघरु बाँधे हाथों में चाँदी की पोलकी जड़े डंडे लिए, गले में 'खाटा' भरा बटुआ लटकाए होते। साथ में पोशाल का नगाड़ा होता जिसकी चोट और धुन पर नाचते गाते हर बालक के घर जाते। सुबह से शाम तक पूरे शहर या गाँव की परिक्रमा हो जाती। हर घर में श्रद्धानुसार गुरुजी को नारियल व नगद सवा (या अधिक) रुपए की भेंट दी जाती। इसी दरम्यान बालकों द्वारा भिन्न भिन्न खेल खेले जाते।

बीसवीं शदी में फारसी व अंग्रेजी सिखाने वाले मदरसे खुलने लगे। स्कूलों की शुरुआत हुई। चौथा दशक आते-आते नगरों में मिडिल व हाईस्कूलों की स्थापना होने लगी।

व्योपार

मूलतः क्षत्रियों से निसृत ओसवाल जाति कालांतर में यौद्धेय न रहकर वैश्य सदृश हो गई। हाँलाकि कुछ गोत्र एवं परिवार उन्नीसवीं शदी तक शासन से जुड़े रहे एवं क्षत्रिय कर्म उनका मुख्य पेशा रहा किन्तु अधिकांश ने युद्ध जनित हिंसा से मुँह फेर कर प्रथमतः कृषि कर्म अपनाया एवं शनै-शनै वैश्य-कर्म व्योपार उनका मुख्य पेशा बन गया। वस्तुतः 'महाजन' शब्द की व्युत्पत्ति ही इस गौरव शाली जाति को लक्ष्य कर ही हुई एवं उन्होंने इसे सार्थक भी किया।

'व्यापार' का समूचा विचार बहुत बाद में उत्पन्न हुआ। पाणिनि कालीन भारत में वस्तु विनिमय का प्रचलन अधिक था। बीसवीं शदी के शुरु तक राजस्थान में यह प्रथा जीवित थी। निश्चित मात्रा में उधार ली गई वस्तु एक निश्चित समय बाद लौटाई जा सकती थी या उसके बदले अन्य वस्तु दी जा सकती थी। मालिनें अनाज के बदलें सब्जियाँ देती देखी जा सकती थी। 'बिसायती' पुराने गोटे किनारी के बदले खिलौने मूंगफली आदि घर-घर घूम कर दे जाते थे। बड़ी चीजों की खरीद में 'साई' (एडवांस) देने की प्रथा थी। 'अडाना' (रहन) रख कर रुपए लेने की प्रथा भी बहुत पुरानी है। गाँवों में 'बारी' की प्रथा थी जिसमें एक एक कर (टर्न से)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हर एक व्यक्ति को पशुओं के लिए चारे का प्रबंध करना पड़ता या कुऐं से पानी निकाल कर हर घर में पहुँचाना पड़ता था। गाँव के लोग खेत पर जाकर निःशुल्क काम कर देते थे, बदले में मालिक को उन्हें एक जून भर-पेट खाना खिलाना पड़ता था—इसे 'ल्हास' कहते थे। या फिर वह भी उनके खेत में जरूरत पड़ने पर काम कर देता था—इसे 'बड़सी' कहते थे।

मुद्रा

विनिमय युग के बाद मुद्रा का चलन हुआ किन्तु इसके रूप बदलते रहे। वैदिक युग में 'गाय' का उपयोग मुद्रा के रूप में होता था। रामायण काल में भी 'गाय' को विक्रय हेतु माप दण्ड बनाया गया। बाल्मीकि रामायण में ऐसा उल्लेख है कि राजा अम्बरीष ने ऋचीक मुनि से एक लाख गायें लेकर अपने एक पुत्र को बलि-पशु बनाने हेतु बेचने का प्रस्ताव किया था। पाणिनी कालीन भारत में भी 'गाय' को वस्तुविक्रय का साधन बनाया गया। कालातंर में धातु की मुद्रा का प्रचलन हुआ। महाभारत में कीचक, द्रौपदी से दैनिक व्यय के लिए प्रतिदिन एक सौ निष्क देने का वादा करता है। 'निष्क' एक स्वर्ण आभूषण था जो शनै शनै मुद्रा बन गया। प्राचीन भारत में चाँदी का सिक्का 'कार्षापण' कहलाता था। विक्रम की चौहदहीं शदी में श्रीमाल वंशीय ओसवाल श्रेष्ठि शाह "ठक्कर फेरू" महान मुद्रा-विशेषज्ञ हुए। वे बादशाह अलाउद्दीन खिलजी, कुतुबुद्दीन मुबारक शाह (संवत् १३७३-७७) एवं गयासुद्दीन तुगलक (संवत् १३७७-८२) के खजानों एवं टकसाल के मुख्याधिकारी थे। तात्कालीन मुद्राओं के डिजाईन तैयार करने का श्रेय ठक्कर फेरू को ही है। उन्होंनें 'द्रव्य परीक्षा' नामक बेजोड़ ग्रंथ की रचना की जिसमें प्राचीन काल से व्यवहृत २६० प्रकार की स्वर्ण रौप्य व अन्य धातु की मुद्राओं की सही माप, तोल एवं मोल का विशद वर्णन है। मुहम्मद तुगलक ने चमड़े के सिक्कों का प्रणयन किया। द्वितीय महायुद्ध के समय गत्तों की 'रेजगारी' चली। किसी समय महान ओसवाल गेहलड़ा गोत्रीय जगत् सेठ की टकसाल में ढले सिक्के बिहार, बंगाल व उड़ीसा राज्यों की राजमुद्रा थी। मध्ययुग में सबसे कम मूल्य का सिक्का 'कौड़ी' होता था। छदाम व दमड़ी जो क्रमशः पैसे की चौथाई व अष्ट भाग थी, को लेकर कंजूसी की अनेक कहावतें बनी।

महाजनी लेन देन

ओसवाल जाति का मुख्य व्यवसाय बैंकिंग रहा है। यह मुद्राऐं (रुपए) उधार देने की प्रथा काफी प्राचीन है। पाणिनि ने न्याय 'सूद' को वृद्धि एवं कड़ी दर को 'कसी' कहा है। 'अर्थशास्त्र' के रचयिता 'कौटिल्य' नें एक सौ पण (सिक्का) पर एक महीने का सवापण व्याज उचित माना है। न्याय शास्त्र प्रणेता गौतम ने छः प्रकार के ब्याज का उल्लेख किया है—चक्रवृद्धि, कालवृद्धि, कारित वृद्धि, कायिकवृद्धि, शिखा वृद्धि (प्रति दिन), अधिभोग वृद्धि। कायिक में अपने आपको बंधक रखने की प्रथा थी। ब्याज की दर समयानुसार घटती बढ़ती रहती है। यह एक सम्पूर्ण व्यवसाय था। ऋणपत्र सादे कागज पर लिखे जाते थे किन्तु उनमें 'साख' (गवाह) भी रहती थी। दूर का लेनदेन 'हुण्डी' की मार्फत होता था। यह एक ऐसी श्रृंखला थी जो देश-विदेश में व्यापार का सहज आधार बन गई। मात्र कागज के टुकड़े पर लाखों रुपए का लेन देन हो

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जाता था। मुद्दती हुण्डी में बट्टा (कमीशन) काट लिया जाता था। किसी समय जगत सेठ घराने की बड़ी साख थी। उनकी हुण्डियाँ दिल्ली से मुर्शिदाबाद तक चलती थी।

सुरक्षा और बहियाँ

महाजन धन उधार देते ही नहीं थे, सुरक्षा के लिए साधारण जन उनके पास धन जमा भी रखते थे। प्राचीन काल में सुरक्षा के लिए धन को गाड़ कर रखने की प्रथा थी— रामायण एवं अर्थशास्त्र में ऐसे उल्लेख हैं। 'हुण्डी' चलन से पूर्व एक जगह से दूसरी जगह जाते वक्त धन को कमर की 'नौली' में बाध लेते थे। महाजन समस्त लेन-देनका पूरा ब्यौरा अपनी बहियों में दर्ज करते थे। दिवाली पर इन बही बसनों का पूजन होता था। आमतौर पर रामनवमी के दिन नई बही डाली जाती थी। बहियों में मुख्य बाजार भाव लिखने का रिवाज था। पूजन के समय बहीं में कुंकुम-रोली से साखिया (स्वस्तिक) बनाया जाता। संवत् १८४४ की एक बही के अनुसार राजस्थान में एक रुपए का गुड़ २५ सेर एवं गेहूँ ४० सेर मिलता था।

वेशभूषा

ओसवालों का उद्भव क्षत्रियों के जैन धर्म अनुगमन से सम्बद्ध है अतः उनका पहनावा शुरु में क्षत्रियों के समान ही रहा हो यह सम्भव है। "पार्श्वनाथ चरित" में वादिराज सूरि ने तात्कालीन वेशभूषा पर प्रकाश डाला है। इनका समय विक्रम संवत् १०८२ माना जाता है। महाकवि के अनुसार वेशभूषा में सामान्यतः अधोवस्त्र और ऊर्ध्ववस्त्र के रूप में दो वस्त्रों का उपयोग होता था जिन्हें दुकूल और उत्तरच्छद् कहा जाता था। चिक्कण (रेशमी) वस्त्रों का भी उल्लेख मिलता है। वादिराज सूरि दक्षिणात्य द्रविड़ संघ के विद्वान थे। अतः उनके उल्लेखों में दक्षिणी समाज का प्रभाव स्वाभाविक है। उत्तर भारत में उत्तरीय और धोती प्राचीन वेश थे। महाकवि बाण ने धोती की जगह स्वस्थान (सूथन) का भी उल्लेख किया है जो बच्चों के पहनावे में मुख्य थी। उष्णीष (पगड़ी) का प्रयोग तो रामायण काल में भी होता था। प्रस्तर फलकों में इस क्षत्रियोचित पोशाक के प्रथम दर्शन मथुरा के कंकाली टीले के उत्खनन में प्राप्त विक्रम की पहली शदी की मूर्तियों में होते हैं जिनमें स्त्रियों को लहंगा और ऊपर उत्तरीय पहने दिखाया गया है, पुरुषों के कमर तक अंगरखा है। लहंगे में नाड़े का प्रयोग होता था। स्तनों पर कंचुली पहनी जाती थी एवं उत्तरीय आधा पहना एवं आधा औढ़ा जाता था। पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा के अनुसार ये राजपूत रमणियों एवं पुरुषों की पोशाक के ही बिम्ब है।

पुरुषों के पहनावे में धोती और पाग का प्रयोग भी प्राचीन काल से चला आ रहा है। विक्रम की ७वीं/८वीं शताब्दी में हुए संस्कृत महाकाव्य "शिशुपालवधम्" के रचयिता ओसवाल-श्रीमाल वैश्य महाकवि माघ की एक पाषाण मूर्ति भीनमाल के एक बगीचे में प्रस्थापित है जिसमें उन्हें धोती पहने एवं पगड़ी बाँधे दिखाया गया है। पगड़ी का स्वरूप काल-क्षेत्र के अनुरूप बदलता रहा है—आज उसके सैकड़ों रूप प्रचलित हैं। इसी तरह पाग की लम्बाई भी बदलती रही है। मध्य युगीन पगड़ियाँ १८ गज से भी अधिक लम्बी होती थी। मारवाड़ में लम्बाई चौड़ाई के सन्दर्भ में इसे विभिन्न नामों से पुकारा जाता है—बड़े आकार वाली—पगड़ी,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

तनिक संकुचित-पेचा एवं कम उम्र वालों के पहनने लायक मोलिया कहलाते हैं। अनेक रंगो की पाग पंचरंग पाग कही जाती है। आमतौर पर पागों का रंग पीला होता है। युद्धों के समय वीरों की केसरिया पाग की अलग ही शान होती थी। श्री जगदीश सिंह गहलोत ने 'मारवाड़ राज्य का इतिहास' (१९२५) में मध्ययुगीन पुरुषों की पोशाक धोती, बंडिया, अंगरखा, फतुई एवं पाग माना है। कहीं कहीं कुरते-चोले का भी प्रयोग होता था। दाढ़ी पर 'जड़िये' बाँधने का रिवाज था।

मध्ययुगीन स्त्रियों की पोशाक थी— लहंगा या घाघरा, कांचली (जिससे छाती मात्र आगे से ढंकी जाती थी और नंगी पीठ पर तनियों से बांधी जाती थी) शर्दी की मौसम में अंगरखी,

१९वी शदी की मुत्सद्दी परिवार की ओसवाल नारी आभूषणों से सजी क्षत्राणी का तेज

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एवं ओढ़नी (अढ़ाई गज लम्बी एवं डेढ़ गज चौड़ी, जो बायें पल्ले में चुन्नट करके सामने लहंगे में खोंसी जाती थी और दायें पल्ले को पीछे से कंधे पर डाल लिया जाता था) यही पल्ला मुगल काल में घूंघट निकालने में काम आने लगा।

"चूरू मंडल के शोध पूर्ण इतिहास" (१९७४) में श्री गोविन्द अग्रवाल ने राजस्थान में स्त्रियों द्वारा ओढ़ी जाने वाली अनेक तरह की ओढ़नियों का जिक्र किया है। पीला विशेषतः बच्चे के जन्म पर माताऐं ओढ़ती हैं। श्रृंगारिक ओढ़नों में चूनड़ी पोमचा, लहरिया, धनक मुख्य है। उनमें गोटा किनारी, तारा- सलमा एवं बंधेज का काम होता था। अब तो उनमें हीरे जवाहारात भी टांगे जाने लगे हैं। लहंगों और काँचली में शीशे की टिकुलियाँ जड़ने का प्रचलन गाँवों में बहुत था। लहंगों में घेर दार लहंगे राजस्थान की अपनी विशेषता है। नवयौवनाऐं ६४ कली का घाघरा पहनती है। उर्ध्व वस्त्र को काँचली या अंगिया कहा जाता है। बालकों के वस्त्रों में झुगला व खोसला होते थे।

ओसवाल मुत्सद्धियों की वेशभूषा में अंगरखा, कमरबन्द कटार (या तलवार) धोती एवं पगड़ी मुख्य थी। चूड़ीदार पाजामा, बन्द गलें का कोट (या अचकन) और साफा—शासन से सम्बन्धित ओसवाल दीवानों की खास पोशाक थी। आम आदमी धोती अंगरखा, कंधे पर अंगोछा या चादर एवं पगड़ी रखता था यह वणिक या जमीदांर ओसवालों की पोशाक थी। पगड़ी बाँधने के तरीके एंव रंगों में वैविध्य था।

ओसवाल स्त्रियों के पहनावे पर भी सामन्ती प्रभाव था। ओढ़नी छपाई एवं बंधेज की होने के अतिरिक्त बारीक कलाबूत एवं तारे सुलमे जड़ित होती थी। समृद्ध परिवारों की स्त्रियों की ओढ़नी का वस्त्र बारीक एवं रेशम वा होता था। अब ओढ़नी का प्रचलन प्रायः बन्द हो गया है-उसका स्थान साड़ी ने ले लिया है एवं उस पर भी कीमती सुलमे के बारीक काम का अधिक्य होने लगा है। अधोवस्त्र घाघरा या लहंगा कहलाता था, ओढ़नी उसे पूर्णतः ढ़कती नही थी। उस पर भी कलाबूत तारा व सुलमा का काम किया रहता था। अब उसका स्थान साये ने ले लिया है। ओसवाल स्त्रियों में राजपूत स्त्रियों की तरह काँचली पहनने का रिवाज था जो पीठ पर तनियों से बांधी जाती थी। अब उसका स्थान ब्लाउज ने ले लिया है।

मुर्शिदाबादी ओसवाल परिवारों में जातीय संस्कार, धर्म खानपान आदि तो अपरिवर्तित रहे परन्तु पहनावे पर मुर्शिदाबादी रंग चढ़े बिना न रहा। यहाँ मुस्लिम और बगंला संस्कृति घुल मिल रही थी। ओसवालों की पगड़ी भी नबावी पगड़ी के अनुरुप ढ़ल गयी वस्त्रों की बनात और कनात बंगाली ढ़ब पर हो गई। कालंतर में वे अपने राजस्थानी मूल गाँव तक को भूल गए। भाषा बंगला क्या हुई, वे सर्वदा के लिए अपनी जन्मभूमि से कट गए। बंगाल के जमींदार घरानों की रईसी और लकब आ गई। उसका एक सुपरिणाम यह हुआ कि ये मुर्शिदाबादी ओसवाल इतिहास, कला, अनुसंधान, साहित्य—संग्रह, शोध, संगीत आदि सभी क्षेत्रों में आगे बढ़े और यहाँ तक कि बंगाली उच्च घरानों से भी होड़ लेने लगे। उनकी जीवन शैली ही बदल गई।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्रृगांर-आभूषण

ओसवाल रमणियों एवं पुरुषों के श्रृंगार प्रसाधन क्षत्रिय राजवंशों से मिलते जुलते रहे है। ओसवाल शासक, दीवान, मुत्सद्दी, सेनापति, नगर सेठ एवं महाजन नाना रुपों में सदा समाज में अग्रगण्य रहे, राज्य में उनका दब दबा एवं सम्मान सर्वोपरि था, अतः श्रृंगार प्रसाधन भी राजोचित थे।

वादिराज सूरि के "पार्श्वनाथ चरित" में स्त्री पुरुषों के आभूषणों में कांचीं, मणिहार, कुण्डल किंकिणी, मुकुट, अवतंस, मणि पुर नुपुर, मुक्ताहार, कंकण एवं अगंद का उल्लेख मिलता है। प्रसाधनों में चन्दन लेप, केसर लेप, आम्रपल्लव, केसर पत्र एवं दर्पण को प्रमुख माना गया है।

मध्ययुगीन आभूषणों में सामन्तशाही झलक साफ नजर आती है। आभूषण मात्र श्रृंगार नहीं रहें वे ऐश्वर्य के प्रतीक बन गए। स्त्रियों के श्रृंगार में भारी भरकम आभूषण अधिक हो गए—जैसे बोरला फीणी, सरी, सांकली, खेंचा, मांग टीका, टी बी, सुरलिया, बाली, हार, झालर, हेमल, अणद, टड्डा, बंगडी, छड़, पौचा, तागड़ी, बिछिया, जोड़, पाजेब आदि। यह भारीपन इतना बढ़ाकि कष्टदायी हो गया। बोरले का आकार ५ सेंटीमीटर से ५ इंच हो गया। बंगडी तागड़ी व जोड़ के वजन सेरों में होने लगे।

श्रृंगार की अवधारणाऐं भी मौसम एवं धरती के सन्दर्भ में अलग-अलग होती है। मारवाड़ में तो पानी का अभाव सदैव बना रहता था। फूलों की बहुतायत न थी अतः कुसुम मालाओं का श्रृंगार तो अलभ्य था। स्नान के लिए भी कम से कम पानी का प्रयोग किया जाता था। अतः बालों को रोज धोने के बजाय गूंथ कर रखने का रिवाज चला। बिखर न जाय इस डर से मोम का प्रयोग कर उन्हें चिपकाया जाता था।

मुगल कालीन सभ्यता के प्रभाव से राजस्थान की श्रृंगार प्रसाधन की सामग्रियों एवं आभूषणों की तालिका बहुत लम्बी हो गई। वर्तमान में प्रचलित आभूषणों में स्त्रियों के आभूषण के अलावा, पुरुषों के आभूषण अपनी विशेषता रखते हैं। राजघरानों में राजा महाराजा एवं राजकुमारों के आभूषण पहनने का रिवाज भारत में सर्वत्र था किन्तु आम आदमी द्वारा ये आभूषण पहनना राजस्थान की सामन्ती सभ्यता का ही प्रतीक है। पुरुषों द्वारा ये आभूषण २० वीं सदी के मध्य तक पहनना आम बात थी। इनमें मुख्य थे कर्ण कुण्डल या लौंग, गलहार, मुकुट, करधनी, कलाई बंध, बाजू बंद, सिरपेच, कलंगी, कंठी, कंठा, डोरा, कड़ा मोती चोकड़ा, मुरकी, विरबला, गुड़दा, अणद आदि।

स्त्रियों के नखशिख श्रृगांर में आभूषणों का महत्व बहुत बढ़ गया। श्री गोविन्द अगरवाल ने अपने "चूरू मंडल का शोध पूर्ण इतिहास" में इन गहनों का नखशिख वार उल्लेख किया है—

सर के आभूषण— बोर, मेमद, रखड़ी, टीका, मोर मींडी सांकली, फीणी, डोरा, पात, तागा सिणगार पट्टी, सीसफूल, चोटी, खांचा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नाक के आभूषण— नथ, डांडला, कांटा, नकबेसर, बुलाक

दांत के आभूषण— चूंप, मासा, मिस्सी।

कान के आभूषण— कर्णफूल, सुरलिया, कनौती, बाली, बाला, लूंग, झूमरला, झूमरिया, कुंडल, झूंठणां, ओगणिया।

गले के आभूषण— तीमणिया, तेवटा, हमेल, गलसरी, नौसर हार, गलपटिया, पंचलड़ी, सतलड़ी, दुलड़ी, तिलड़ी, अठलड़ी, नौलड़ी, मादलिया, कंठला, झालरा, जंतर, हंसली, आड़, चन्दरहार, तखती, तायनिया, धुगधुगी, गलसांकली, नौलखाहार मोहनमाला।

हाथ के आभूषण— अणद, टड्डा, चूड़ा, कड़ा, कंगण, नोगरी, नखिया, पूंचा, पूंची, बाजूबंद, कलई बन्द, बंगडी, खंजरी, पछेली, रायफूल, गजरा, सूतड़ा हथ सांकला, चूडछैलकड़ा, छाप, छल्ला, बेल, बींटी, अंगूठी, मुंदड़ी, आरसी, अंगूरड़ी।

कमर के आभूषण— तागड़ी,

पैर के आभूषण— तांती, कड़ी, सूतड़ा, तोड़िया पेंजनी, पायल, पाजेब, बिछिया जीभी, छड़, रमझोल, पोला, नखलिया।

रीति-रिवाज

ओसवालों के रीति रिवाज मूलतः राजपूत संस्कृति एवं परम्परा से संचालित रहें हैं। हिन्दुओं की रुढ़िगत प्रथाओं से प्रभावित तो वे हैं ही, मुस्लिम काल में कुछ नई प्रथाऐं भी आ जुड़ी। मुस्लिम काल का सर्वाधिक दबाव राज्य शासन से संलग्न व्यक्तियों एंव उनके परिवारों पर आया। जैन धर्म अंगीकार कर लेंने एवं अहिंसा के सिद्धान्त अपना लेने के फलस्वरुप भी उनके आचार विचार में परिवर्तन हुआ।

संयुक्त परिवार की प्रथा भारतीय संस्कृति की मूल है- ओसवाल समाज में अभी भी संयुक्त परिवार कायम है जबकि अन्य अनेक जातियों ने पश्चिमी-सभ्यता के प्रभाव में इसे नकार दिया है। घर में सबसे बड़े पुरूष (उम्र एवं पद में) की आज्ञा का पालन एवं बिना किसी भेदभाव के कि कौन कितना कमाता है, परिवार के सब सदस्यों का समान पालन-पोषण-व्यवहार एवं यथोचित अधिकार अब भी कायम है। शिक्षा के आलोक ने कहीं-कहीं इसे अवश्य तोड़ा है परन्तु साधारणतः अब भी ओसवालों में संयुक्त व्यवसाय, संयुक्त रहन-सहन, संयुक्त खान-पान एवं सबसे बड़े व्यक्ति का सम्मान अब भी पूर्ववत है।

पर्दा प्रथा मुस्लिम काल में एक आवश्यकता की तरह उभरी। राजपूत कौमों प्रधानतः युद्धरत रहती थी अतः मुस्लिम आक्रमणों का सर्वाधिक दबाव उन्हीं पर आया। इसीलिए मध्यकाल में अनेक राजपूत कौमोंने जैन आचार्यों के उद्बोधन से क्षत्रिय-कर्म छोड़कर वणिक-कर्म अपनाया। ओसवालों के अधिकांश गोत्र इसी काल में संस्थापित हुए। मुस्लिम लुटेरों एवं शासकों के अत्याचार युद्ध तक ही सीमित नहीं थे—बहू-बेटियों को उठा कर ले जाना एवं उनसे

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जबरन निकाह कर लेना आम बात हो गई थी। इसी अत्याचार स्वरुप महिलाओं में पर्दा प्रथा का चलन हुआ। परन्तु कालान्तर में यह प्रथा इतनी रुढ़ और बेहूदी हो गई कि समाज उससे छुटकारा पाने के लिए कसमसाने लगा। ओसवाल समाज में शिक्षा के आलोक के साथ ही बीसवीं सदी के शुरू में एक आन्दोलन उठा-अनेक कठिनाईयों एवं संघर्षों के बाद समाज अब इस प्रथा के चंगुल से प्रायः मुक्त हो गया है। कहीं कहीं गाँव और अशिक्षित पुरानी पीढ़ी अब भी इस रोग से ग्रसित है पर उसका दंश निश्चित ही समाप्त हो गया है।

हिन्दू धर्म एवं ब्राह्मण संस्कृति के प्रभाव से ओसवाल समाज में भी देवी देवताओं की मान्यता और पूजा प्रचलित रहीं। हालाँकि ओसवालों के मूल देव ब्रह्मा-विष्णु-कृष्ण न होकर आंचलिक देवों तक ही सीमित रहे जैसें भेंरू, भोमिया, पीतर आदि। इनकी पूजा सम्बंधी लोक गीत भी ओसवाल समाज की लोक संस्कृति का अंग बन गये। यह पूजा उपासना अब बहुत कम हो गई है।

बहु विवाह, वृद्ध विवाह और बाल विवाह मध्यकाल में ओसवाल संस्कृति के भी अंग थे। इनकी वीभत्सता सर्वग्राही थी। अनेक आन्दोलन बीसवीं सदी के तीसरे-चौथे दशक में इन प्रथाओं के विरूद्ध उठे। शिक्षा के आलोक के साथ वे अब समाप्त प्रायः हैं। विधवा विवाह निषेध और दहेज जो प्राचीन काल से हर भारतीय समाज का कलंक रही है, अब भी ज्यों के त्यों विद्यमान हैं। बल्कि कहना चाहिए-दहेज तो अपने विभिन्न नये रूपों में प्रश्रय ही पाता रहा है। यह व्यवसायी वृति का परिचायक है जिससे जल्द छुटकारा सम्भव नहीं।

मृत्यु भोज (मोसर) समाज से प्रायः तिरोहित हो गया है। ब्राह्मण-भोजन भी आंशिक एवं ऐच्छिक हो गया है। मूलतः कदाग्रह एवं घर बार बेचकर या कर्ज ले कर मोसर करने की पंचायत या ब्राह्मण समाज के दबाव में जो अनिवार्यता थी वह अब समाप्त हो गई है। मृतक के पीछे केश कटवाने की प्रथा (भद्र होना) अब ओसवाल समाज में नहीं है। विधवा स्त्रियों के काले कपड़े पहनने एवं महीनों तक एक कोने में सिकुड़ कर मातम मनाने की प्रथा को ओसवाल समाज ने तिलाञ्जली दे दी है। शोक प्रदर्शन के समय स्त्रियों के रोने की प्रथा गाँवों में अब भी विद्यमान है। मृतक के फूल चुनने एवं गंगा में प्रवाहित करने की प्रथा का भी पालन होता हैं। बच्चों के शव मुसलमानों की तरह जमीन में गाड़ने की प्रथा भी है। मध्य काल में ओसवाल विधवाओं के सती होने के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं परन्तु अब सती प्रथा ओसवाल समाज से पूर्णतः विदा ले चुकी है।

वैवाहिक रीति रिवाजों का पालन अब भी होता है। उन पर आंचलिक राजपूती प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। तोरण मारने की रस्म को अब भी विवाह पद्धति का आवश्यक अंग माना जाता है। यह राजपूती शौर्य भी दरसाती है (तोरण आया राईवर थर-थर कांप्या राज)। तोरण नीचे से चौकोर और ऊपर से त्रिकोण काष्ठ फलक होता है जिस पर सात चिड़ियाँ और मध्य में सुग्गा या मोर रुपांकित होते हैं एवं जिसे घोड़े पर चढ़ा वर हरी डाली से छूता है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वस्तुतः 'सोन चिड़ी' मांगलिक शकुन हैं एवं सुग्गा वर-वधु के मिलन—उल्लास का प्रतीक। लोक गीतों में बड़े मार्मिक ढ़ंग से इसे रूपायित किया गया है।—

'आयो सगेजी रो सुवटियो

बो लेग्यो टोली मां स्यूँ टाल।

कोयल बाई सिध चाली—

पूजन के बाद कन्या की माता द्वारा वर के वक्ष का अपने अंचल से नाप जोख भी राजपूती शौर्य का प्रतीकात्मक आकलन है। वस्तुतः वर की वेश भूषा, बागा कमरबंध, तरवार, घोड़े की सवारी आदि सभी पर राजपूती प्रभाव है।

सुहागिनों एंव पुत्रवती माताओं के सम्मान सूचक अनेक रीति रिवाजों का समाज में प्रचलन था। प्रसव से पूर्व 'साध पुराने' एवं बाद में दशोटन के प्रीति भोज आयोजित किए जाते थे। जच्चा नया चूड़ा पहनती एवं दसवे दिन 'नहावण' (नाम संस्कार) होता था।

त्यौहार

ओसवालों के मुख्य त्यौहार हिन्दुओं से प्रभावित रहे है। उन पर आंचलिक प्रभाव भी है। वसंत पंचमी, होली, दिवाली, रक्षा बंधन, दशहरा आदि त्यौहार सर्व मान्य अखिल भारतवर्षीय परम्परा के अंग हैं। आखा तीज (अक्षय तृतीया) शीतलाष्टमी, घुड़ला, श्रावणी तीज, गणगौर आदि त्यौहार आंचलिक तो हैं ही कहीं-कहीं उन पर धार्मिक रंग भी चढ़ गया है। राजस्थान में होली के अवसर पर डफ या चंग पर पुरुषों द्वारा गीत गाने का रिवाज सर्वथा अनोखा है। इसी तरह पुरूषों में घींदड़ एवं स्त्रियों में लूर गाने की भी अपनी विशिष्टता है। श्रावणी तीज के अवसर पर हिंडोलों की बहार राजस्थान के रेगिस्तान में उल्लास की भरपूर बरसात ला देती है।

ओसवालों में दिवाली के अवसर पर लक्ष्मी पूजन को बहुत महत्व दिया जाता है। उस अवसर पर नये बही खाते डाले जाते हैं। घर की सम्पूर्ण सफाई इस त्यौहार का एक अंग है। आतिश बाजी में भी प्रचुर धन व्यय किया जाता है।

गणगौर का त्यौहार राजस्थान में बड़े उल्लास से मनाया जाता है। इस अवसर पर गाँव-गाँव मेले लगते हैं जिसमें स्त्रियां और बच्चे प्रायः बहेली पर सवार होकर जाते है। बहेली का स्वरुप भी परिवार की समृद्धि के अनुरूप बदलता है। अब तो बहेली का प्रचलन बन्द हो गया है। गणगौर सुहागन स्त्रियों का प्रिय त्यौहार है। इस अवसर पर स्त्रियां घूमर नृत्य करती है एवं कुमारियां दूब या तृण से पूजा करती हैं।

ओसवालों का एक त्यौहार चैत्रशुक्ला शीतलाष्टमी के दिन सेडल माता (शीतला) की पूजा करना है। इस अवसर पर ठंडा खाना (एक दिन पूर्व बनाया हुआ) खाया जाता है। ऐसी मान्यता है कि इससे शीलता (चेचक) का प्रकोप नहीं होता। इसी दिन 'घुडला' फिराने का भी रिवाज है। चारों ओर छेद किए हुए छोटे घड़े में जलता दीपक रख कर लड़कियां गीत गाती हुई घर घर जाती है। बाद में उसे तालाब में बहा दिया जाता है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

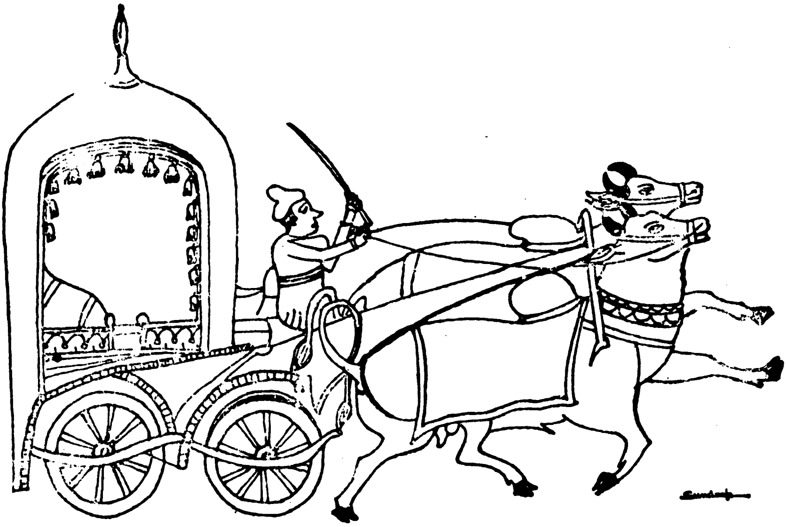

बहेली

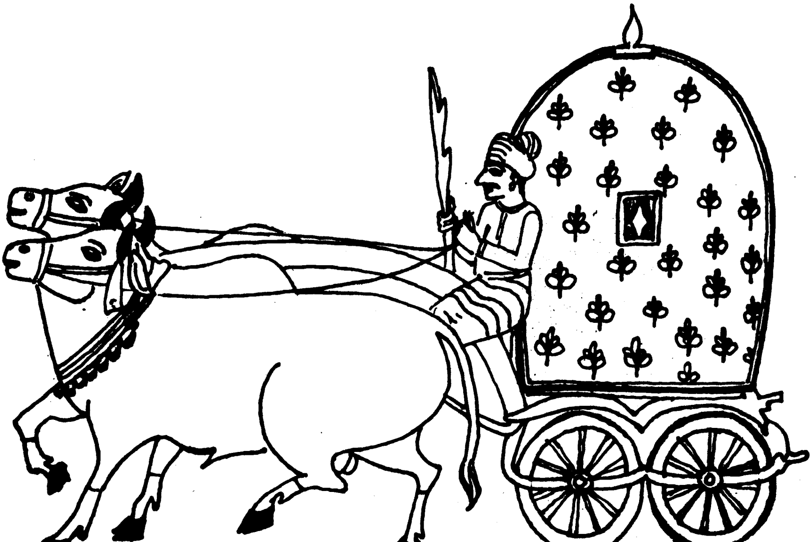

महिलाओं के लिए बहेली का सुसज्जित रूप

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

खान-पान

हर दस कोस के अन्तर पर जिस तरह बोल चाल की भाषा में परिवर्तन देखा जा सकता है, उसी तरह लोगों के खान-पान में भी अन्तर परिलक्षित होता है। यह अन्तर प्रादेशिक उपज पर ही निर्भर नहीं होता, उनकी आर्थिक, धार्मिक एवं सामाजिक स्थिति से भी प्रभावित होता है। किसी समय शैव मतावलम्बी क्षत्रियों में मांसाहार की प्रवृति अवश्य रही होगी किन्तु जैन धर्म अंगीकार करने से ओसवाल समाज शनै-शनै पूर्णतः शाकाहारी बन गया। आर्थिक सम्पन्नता से सुरूचि उत्पन्न हुई जो समाज के खान-पान में भी परिलक्षित होती है मध्ययुगीन ओसवाल समाज भी जब तक राजस्थान की धरती तक सीमित रहा प्रादेशिक खाद्यान्नों को हीं प्रमुखता देता था। घर-घर गाय भैस का 'धीणा' रखने का रिवाज था जिससे दूध, दही, छाछ, रबड़ी, कढ़ी, रायता आदि खान पान के मुख्य अंग थे। मोठ बाजरा के अलावा गेहूँ बाहर से मंगाया जाता था। भोजन में खीचड़ा (बाजरे या गेहूँ का) खीचड़ी (दालों से बनी हुई) घाट (चावल से बना) मुख्य रुप से रहते। भात चावल दाल एवं पापड़ ओसवाल रसोई के दैनिक खाद्य हैं। सब्जियां अधिकांश सूखी रहती थी यह इस धार्मिक अन्धविश्वास का परिणाम था कि हरी सब्जियां खाने से हिंसा होती है।

आम तौर पर सब्जियां सांगरी, ग्वारफली, चौला की फली, खेलरा, सीरावडी, बड़ी फोगला, फोफलिया आदि होती। भोजन के बाद पान सुपारी, इलायची लौंग व खाटा की मुनहार होती। विशिष्ट दिनों के भोजन में खीर, मालपुआ, लापसी, सीरा (हलवा) लड्डू घेवर, साबुनी, जलेबी, चूरमा, बाटी, पेठा, पेड़ा, सत्तू, सकरपारा, गुलगुला आदि मिष्ठान्न एवं पेठा पकोड़ी सुहाल आदि नमकीन रहते। इनमें मालपुआ सबसे प्राचीन मिष्ठान्न प्रतीत होता है। मालपुआ का प्रयोग ऋग्वेद कालीन, खीर एवं मोदक (लड्डू) का प्रयोग रामायण कालीन एवं लापसी का प्रयोग पाणिनी कालीन भारत में भी होने के उल्लेख मिलते हैं। मिठाईयों पर चाँदी एंव सोने के वर्क चढ़ाए जाते। अनेक तरह के मेवे खाने का भी घरों में आम रिवाज था।

खेल-मनोरंजन

जिस धरती पर मनुष्य जन्म लेता है उस माटी की तासीर उसकी धमनियों में प्रवाहित होती रहती है। आज हम इस माटी से क्यों न कितनी दूर चले गये हों पर हमारे चरित्र में उसका आंचलिक प्रभाव भी कम नहीं होता। जिस तरह हर दस कोस के अंतर पर लोक भाषा (बोली) में परिवर्तन हो जाता है उसी तरह लोक कलाओं एवं मनोरंजन के पारम्परिक साधनों में भी बदलाव अवश्यम्भावी है। ये संसाधन अंचल की प्राकृतिक सम्पदा के अनुरूप एवं सांस्कृतिक विरासत के प्रतीक होते है।

ओसवाल जाति सदा से समृद्ध रही। मध्ययुगीन राजकीय शासन से संलग्न मुत्सद्दी परिवारों में राजा-महाराजाओं की सी ठसक थी। वे राजस्थान की लोक-कलाओं के आश्रय दाता थे। मनोरंजनार्थ हवेलियों में खेलों के आयोजनों की धूम रहती थी जहाँ परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त बिना भेदभाव सभी नागरिक आमंत्रित रहते थे। ये खेल रात-रात भर चलते। ऐसे खेलों में मुख्य थे—**नट-नटी, कच्ची घोड़ी, कठपुतली, रामलीला, रास भग्तणों के नाच (मह-**

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

फिल) , **स्वांग, तेजो, घूमर, तमाशा डूगर जी-जुहार जी, लैला मजनू** आदि । **ग्रामीण अंचलों से विभिन्न** कलाओं के प्रदर्शक अपने हुनर का प्रदर्शन करने आते रहते थे । **काल बेलिया, भोपा, भांड मदारी, बाजीगर** आदि के खेल बच्चों बूढ़ों सभी का मनोरंजन करते थे । विशेष खुशी के मौकों पर शहर के बाहर किसी बगीची में **गोठ** (भोज) का आयोजन किया जाता । बरसात की मौसम में जब तालाब पानी से भर जाते उनकी मेड़ (किनारों) पर **मेले** लगाए जाते । **होली** के त्योहार पर अनेक दिन पूर्व से डफ (चंग) पर गीत गाये जाते । रंग और अबीर मौसम को ही गुलाबी कर देता । मनोवांछित काम पूर्ण हो जाने पर इष्ट देव को **'सिरणी'** चढ़ाने का आम रिवाज था । श्रावन के महीने में बागों में **हिंडोला** (झूला) डाला जाता जहाँ लड़कियाँ गीत गाती हुई हँसती खेलती ।

बन्द स्थानों में खेले जाने वाले भारतीय खेलों में **जुआ** (द्यूत क्रीड़ा) सर्वप्रदेशीय एवं सार्वभौमिक है । ऋग्वेद एवं पाणिनी कालीन भारत में इसका प्रचलन था । रामायण एवं महाभारत काल में पासों का सर्व ग्राही प्रभाव परिलक्षित होता है । मध्ययुगीन राजस्थान में यह विभिन्न रूपों में खेला जाता था । ओसवाल समाज भी इससे अछूता न था । यहाँ तक कि वर-वधू को वैवाहिक रश्म के बाद प्रतीक रूप में 'जुआ-जुई' खिलाने की प्रथा आज भी कायम है । दिपावली के अवसर पर विशेष आयोजन होते थे । समृद्ध शासकीय घरानों में **'शतरंज'** बड़े शौक से खेला जाता था । यह विश्व के अन्यतम खेलों में से हैं । अमीर खुसरों के अनुसार इसका आविष्कार भारत में हुआ । एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार रावण की पट्टमहिषी मन्दोदरी इसकी आविष्कारक थी । हर्षचरित के अनुसार भारत के स्वर्णकाल (छठी शदी) में यह एक लोकप्रिय खेल था । मध्य युग में स्त्रियों के इस खेल में प्रवीण होने के उल्लेख भी ग्रंथों में मिलते हैं । बीकानेर राज्य के प्रधान मंत्रीश्वर कर्मचन्द बछावत शतरंज के खेल में इतने प्रवीण थे कि बादशाह अकबर भी उनका सम्मान करते थे ।

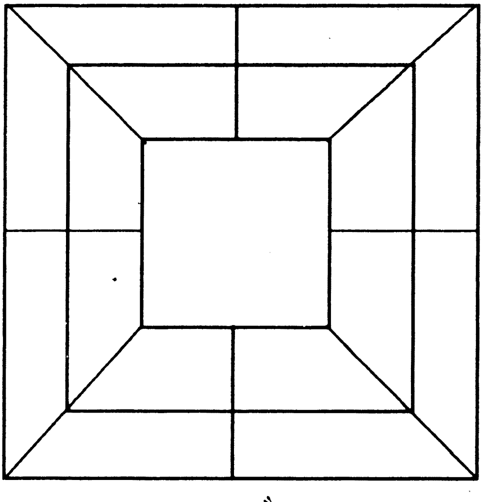

श्मशान-चौपड़

एक ओर खेल चौपड़ था जो हर समृद्ध घर में प्रेम का प्रतीक मान कर खेला जाता था । डा. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार पाणिनि युग में भी इस खेल का प्रचलन था । मध्य युग में गोटे किनारी से सजे वस्त्र फलक पर चाँदी मढ़ी काष्ठ गोटों से चौपड़ खेलते प्रेमी युगल अनेक लोक गीतों एवं भित्ती चित्रों के आलम्बन बने । जो खेल सर्व साधारण में अधिक लोकप्रिय हुआ वह था **श्मशान चौपड़** । क्रीड़ा कौशल्यम् में इसका उल्लेख है । आम बोल चाल की भाषा में इसे चर भर कहा जाता

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

था। दो रंगों की कंकरियों मात्र से किसी भी चबूतरे पर कोयले से चन्द लकीरें बना कर इसे खेला जा सकता है। इस खेल में दो खिलाड़ी बारी-बारी संधि स्थानों पर एक-एक कंकरी रखते है। एक लाईन में जब तीन कंकरी रख देने से 'भर' बन जाती है तब दूसरे खिलाड़ी की एक कंकरी 'चर' ली जाती है। दूसरे खिलाड़ी की कोशिश रहती है कि वह भर न बनने दें। होशियार खिलाड़ी दो लाईनों में 'भर' का 'उकास' खोल कर दुभरिया बना लेता है तब सामने वाला खिलाड़ी हार मान लेता है। यह खेल ९ या १२ या १६ कंकरियों से खेला जा सकता है। वर्तमान काल में इसकी नकल पर अनेक खेल चल पड़े हैं।

शारीरिक विकास के लिए अखाड़े होते था जहाँ बच्चे एवं युवा मिट्टी से एकमेक होकर जोर आजमाईश करते थे। मध्य युग में पाश्चात्य शिक्षा के साथ ही व्यायामशालाऐं खुल गई थी जहाँ यौगिक क्रियाऐं सिखाने का विशेष प्रबन्ध होता था। अधिकांश खेल ऐसे थे जिनके लिए किसी विशेष संसाधन की आवश्यकता ही नही होती थी। बच्चों के खेलों में प्रमुख थे— **हड़दड़ो**—बालू के ढ़ेर पर गाड़ी गई लाठी को कुछ दूरी से गेंद मारकर गिराना (क्रिकेट का ही एक प्रारूप), **सूरज कुंडालों**—झड़बेरी से बने गेडिए (स्टिक) से गेंद को मारना और अन्य खिलाड़ियों द्वारा उसे लपकना, **गुल्ली डंडा**—लकडी की चार/छ अंगुल की किनारों पर नुकीली की गई गुल्ली (मोई) को डंडे से मार कर दूर फेंकना, *मारदडी*-चिथड़ो से बनी गेंद को उछाल कर मारना, **कुर कांय**-वृक्ष के नीचे एक खिलाड़ी चोर बनकर अन्य वृक्षों पर चढ़े खिलाड़ियों को छूता है, **टीडीलो पीडीलों**—एक खिलाड़ी निर्दिष्ट स्थान पर थप्पी लगाने दौड़ता है बाकी खिलाड़ी छुप कर एवं बीच-बीच में बोलकर अपने स्थान का संकेत देते रहते है और वह उन्हें खोजता है, **छीयां-तावड़ो**-एक पूज कर चोर बनता है अन्य खिलाड़ी धूप में खड़े हो जाते हैं एवं चोर को छकाने के लिए छीयां (छाया) में आते रहते हैं, **आंधों भेंसो**—चोर की आँख पर पट्टी बांध कर अन्य खिलाड़ी एक सीमा में भागते रहते हैं, **कांजी कोरड़ो**—तौलिये (अंगोछे) को बंट देकर कोडा बना लिया जाता है, चोर सबके पीछे घूम कर जिसके पीछे वह रख देता है वही उठ कर उसे कोड़े से मारने दौड़ता है, भेसा कूदणी—एक तरह की लम्बी कूद जिसमें बाधा के तौर पर जमीन पर बैठे अन्य खिलाड़ी के ऊपर से कूदना होता है, **लूण क्यारी**— मैदान में बालू से गोल घेरा बना कर मध्य में लूण के प्रतीक स्वरूप बालू का ढ़ेर लगा दिया जाता है, एक खिलाड़ी उसकी रखवाली करता है अन्य खिलाड़ी उसका अंश लेकर घेरे से बाहर निकलते हैं। इनके अलावा **कबड्डी** तो सर्वाधिक प्रिय खेल था ही जो अब अन्तर्राष्ट्रीय खेल बन गया है। लड़कियों के खेल भी कम न थे। **सात-ताली**-पूज कर चोर द्वारा छूआ जाना, **डाईंलो, लुक मींचणी** (आँख मिचौली), **कांजी कोरड़ा, छियां-तावडो, आंधो भेंसो** आदि खेल बड़े चाव से खेले जाते थे। छोटी लड़कियां अक्सर गुड्डे गुड्डी का ब्याह रचाने में मशगूल रहती।

चित्र कला

प्रकृति में उभरे रंग मन को आह्लादित करते हैं। उनकी स्मृति को अक्षुण्ण बना लेने के लिए मनुष्य ने चित्रकला का सहारा लिया। आदि कालीन चित्रों के फलक गुफाऐं होती थी जहाँ लोक शैली में रेखाओं से बिम्ब उत्कीर्णित किए जाते थे। फिर गृह, आंगन, द्वार और भित्ति-चित्रों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की परम्परा शुरू हुई। ज्यों-ज्यों मनुष्य का बोद्धिक विकास हुआ तूलिका और रंग विन्यास में उन्नयन हुआ। जैन कथाओं में जाति स्मरण ज्ञान द्वारा चित्रपट आलेखन के अनेक उदाहरण बिखरे पड़े हैं। मंखली पुत्र गोशालक जिस जाति का था वे चित्रपटों द्वारा ही अपनी आजीविका चलाते थे। ज्ञाता सूत्र एवं वृहत्कल्प भाष्य में अनेक ऐसे निष्णात चित्रकारों का वर्णन है। राज-महलों एवं नगर वधूओं की चित्र-शालाऐं तात्कालीन समृद्धि की परिचायक थी। जैन चित्रकला का पुरा कालीन दर्शन मद्रास से २५० मील दूर स्थित सित्तनवासल के गुफा मन्दिरों में होता है जिनका निर्माण प्रथम पल्लव वंशीय राजा महेन्द्र वर्मा ने सातवीं शदी में करवाया था। नवमी शदी में उनका पुनरुद्धार हुआ। एलोरा की गुफाओं के भित्ति चित्र नवमी/दशवी शदी के हैं। वहाँ जैन ग्रन्थों के चित्रांकनों की अनुकृतियों का मनोरम अंकन हुआ है। ताड़ पत्रीय चित्र फलकों में इग्यारहवी शदी की होयसल कालीन पाण्डुलिपियां प्राचीनतम मानी जाती हैं। ताड़ पत्रीय ग्रंथों में चित्र फलक की लम्बाई-चौड़ाई सीमित होती थी। मूडाबिद्री भंडार में प्राचीनतम कृति संवत ११९३ की है जिसमें लाल व हरे रंगों का उन्मुक्त प्रयोग हुआ है। चौहदवीं शदी के विजयनगर एवं कांचीपुरम् के मन्दिरों में अगणित चित्रों में जैन कथावस्तु का भरपूर अंकन हुआ है।

उत्तर भारत में भित्तिचित्रों, काष्ठ एवं ताड़पत्रीय चित्रों में अनेक शैलियाँ परिलक्षित होती है जिनमें गुजराती एवं राजस्थानी प्रमुख हैं। इनमें ईरान एवं पर्सिया से आए कलाकारों का भी योगदान रहा है। परन्तु उन्हें गुफाओं की सी सुरक्षा न उपलब्ध होने से अनेकानेक भित्ति चित्र तिरोहित हो गये। महलों एवं हवेलियों की दिवारों, गवाक्षों कपाटों पर निर्मित अनेक चित्र या तो घिस गये हैं या धुंधले पड़ गये हैं। वस्त्रपटों पर अंकित चित्र स्क्रॉल (Scroll) रूप में उपलब्ध है। श्री अगरचन्द भँवरलाल नाहटा के बीकानेर स्थित 'अभय ग्रन्थालय' में ओसवाल वंश के विभिन्न गोत्रों की वंशावालियों के फलक सुरक्षित हैं। बारहवी शदी के चित्रों के काष्ठ फलक जैसलमेर के ज्ञान भंडार में उपलब्ध हैं। वहाँ कल्पसुत्र की एक ताड़पत्रीय प्रति भी उपलब्ध है जिसमें भगवान पार्श्वनाथ के जीवन प्रसंगों के बीस चित्र हैं। अनेक प्रतियों में स्वर्ण रंगों का प्रयोग अपनी सानी नही रखता। पाटण के भण्डारों में भी ताड़ पत्रीय सचित्र ग्रंथ उपलब्ध है।

कागज पर चित्रों की परम्परा चौदहवी शदी के पश्चात शुरू हुई। इससे चित्र फलक का क्षेत्र विस्तृत हुआ एवं चित्रकला का आश्चर्यजनक विकास हुआ। धर्मानुरागी ओसवाल श्रेष्ठियों श्रावकों ने करोड़ो रूपए खर्चकर धर्म सूत्रों की सचित्र स्वर्णाक्षरी रुपाक्षरी प्रतियाँ लिखवाई। देवसापडे के कल्पसूत्र के एक-एक पन्ने का मूल्य आज दस-दस हजार रुपये से कम नहीं है। कलकत्ता के नाहर संग्रहालय में कल्पसूत्र की संवत् १५११ में लिखी सचित्र प्रति है। बीकानेर के नाहटा ग्रंथागार में त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित्र की अनमोल सचित्र प्रति है। श्री बहादुरसिंह जी सिंघी के अमूल्य संग्रह में शालिभद्र चौपाई की एक प्रति बादशाह जहाँगीर के राजकीय चित्रकार उस्ताद शलिवाहन द्वारा चित्रित है। हर जैन सम्प्रदाय के साधु-साध्वी के पुठ्ठे में शास्त्र विहित औपदेशिक भावों के चित्र मिल जाऐंगे जिनमें नारकीय यातनाओं के चित्र बड़े लोकप्रिय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हैं। तेरापंथी सम्प्रदाय के कलाकार मुनि कुन्दनमल जी एवं मुनि दुलीचन्द जी इस कला में बड़े प्रवीण थे।

आधुनिक युग में चित्रकला ने अपने विभिन्न आयामों में उत्कृष्ठतम उँचाईयां छुई। ओसवाल जाति के विशिष्ट कलाकारों में मुर्शिदाबाद के श्री हीराचन्द्र दूगड का नाम कला जगत में बड़े सम्मान से लिया जाता है। उन्होंनें शान्ति निकेतन में श्री नन्दलाल वसु के निरीक्षण में चित्रांकन शुरु किया। उन्होंने अपनी निजी भाव शैली स्थापित की। उनके सुपुत्र श्री इन्द्र दूगड ने मिश्रित शैली के अनेक चित्र बनाए एवं देश के विख्यात चित्रकारों में अपना स्थान बनाया। श्री गोकुलदास कपाडिया ने भगवान महावीर की जीवनी पर अनेक प्रशंसनीय चित्र बनाए। सर्वश्री जसवन्त सिंह बोथरा, जवरचन्द दसाणी एंव गणेश ललवानी प्रभृति कलाकारों की चित्र-शैली में आध्यात्म-दर्शन परिलक्षित होता है।

भित्ति चित्र (Frescoes)

दिवारों और पत्थरों पर आकृतियाँ एवं चित्र बनाने की परम्परा प्रागैतिहासिक काल से चली आ रही है. १५वी शताब्दी के सांस्कृतिक पुनरुत्थान से भित्तिचित्र बनाने की कला पुनः प्रचलित हुई। समृद्ध ओसवाल श्रेष्ठियों एवं सामन्तों ने अपनी हवेलियों में इसका उपयोग कर इनके सर्जकों (चितेरों) को भरपूर प्रश्रय दिया। ये फ्रेस्कों एवं म्यूरल दोनों ही शैलियों में पाये जाते है। दिवारों पर रंगों से बनाए गए चित्र आज सैकड़ों वर्षों के बाद भी अपनी चमक से नए से लगते है। इन चित्रों के लिए आधार भूमि चूने से पोती जाती थी। रसायन प्रकिया से पक्के रंग बनाने में मुख्यतः काजल, नील, हरभाटा, गेरू, हिरमिच, केसर, पेवडी एवं गौमुत्र का प्रयोग होता था। उदयपुर, जयपुर, बीकानेर, जोधपुर, चुरु, सरदाशहर, फतहपुर, राजलदेसर आदि नगरों में हवेलियों के चित्र मानव आकृति, पोशाक, आभूषण आदि की विविधता एवं कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए प्रसिद्ध हैं। विभिन्न प्रदेशों के कलाकारों की शैली-विभिन्नता भी दर्शनीय है। सरदाशहर के जम्मड़ भवन में २५० वर्ष पूर्व निर्मित भित्ति चित्र ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित है। साहित्य का नायिका भेद भी उन भित्ति चित्रों में उजागर है। कृष्ण लीला के सजीव चित्रों से भवन की दिवारे अलंकृत है। कोटा और बूंदी में २२फीट लम्बे भित्ति चित्रों के पेनल देखे जा सकते है।

प्रसिद्ध पाश्चात्य विशेषज्ञ श्री फ्रांसिस वर्गिज (Francis Wacziarg) ने राजस्थान के विभिन्न अंचलों में घूम कर "दी पेंटेड वाल्स आफ शेखावटी" नामक भित्ति चित्रों का बहुमूल्य एलबम प्रकाशित किया है। चुरु के सेठ हजारीमल जी कोठारी, चिड़ावा के श्री मनोहरलाल जी बेद मुकुंदगढ़ के सुखदेवदास गणेशमल की हवेलियों के भित्ति चित्र अनुपम हैं। विभिन्न रंगों के नायाब पत्थरों को सजाकर बीच-बीच में शीशे के विभिन्न आकार के टुकड़ों से हवेली के विशेष कमरे (रंग महल) की दिवालों एवं छतों पर बनाए गए म्यूरल भी दर्शनीय हैं। समृद्ध परिवारों की विशाल हवेलियों के रंग महल की चित्रकारी में असली सोने के रंग का प्रयोग होता था।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

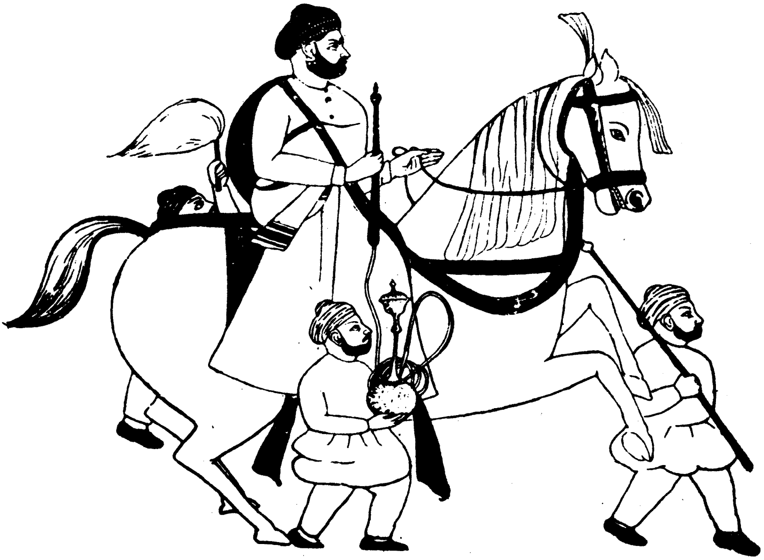

अध्याय

षोडश

शासनः योग-सहयोग-कौशल

(१) मुस्लिम शासकों पर ओसवाल प्रभाव

भारतीय वाङ्मय में इतिहास लेखन की परम्परा के दर्शन नहीं होते। प्राचीन भाषाओं एवं संस्कृत में अन्य विषयों पर प्रचुर साहित्य लेखन हुआ परन्तु इतिहास को गौण माना गया। वस्तुतः जीवन के प्रेरणादायी श्रोत धर्म, दर्शन, साहित्य और कला हैं। राजा-महाराजाओं की युद्ध जनित उठा पठक जीवन का आदर्श नहीं बन सकती। भारतीय मनीषियों के चिन्तन का यह हार्द्र सम्पूर्ण उपलब्ध साहित्य में परिलक्षित होता हैं। किन्तु इतिहास की भी एक उपयोगिता है। किसी भी जाति या समुदाय का भविष्य पथ निर्धारित करने में उसके विगत का बड़ा हाथ होता है। विगत को समझ लेने से भविष्य प्रशस्त होता है। पाश्चात्य मनीषियों ने इस तथ्य को रेखांकित करते हुए इतिहास को साहित्य का एक आवश्यक अंग माना। किन्तु जो इतिहास

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

लिखा गया वह मूलतः राजा-महाराजाओं एवं उनकी युद्ध जनित उठा पटक तक ही सीमित रहा। उसमे जन साधारण के योग का कोई उल्लेख नहीं।

प्रसिद्ध पुरातत्त्व वेता एवं इतिहासकार डा. रघुवीर सिंह ने "मध्यकालीन इतिहास में वणिक वर्ग का महत्व" (जैमिनी कौशिक बरुआ द्वारा सम्पादित "मै अपने मारवाड़ी समाज को प्यार करता हूँ" ग्रंथ के ८वे खण्ड में प्रकाशित) प्रबंध में इस सत्य की ओर चिंतकों का ध्यान आकृष्ट किया है। राजनीति के अलावा सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक परिर्वतन भी इतिहास बनाते है, आर्थिक संरचना भी परिवर्तन का महत्वपूर्ण पहलू है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में राज्य की समृद्धि मूलतः वाणिज्य एवं व्यापारियों के सहयोग पर निर्भर होती है। अतः व्यापारी वर्ग के शासन के साथ ऐसे अटूट सम्बंध होते हैं कि उन्हें धार्मिक या सांस्कृतिक भिन्नता भी विच्छिन्न नहीं कर पाती। किसी भी राज्य के नवीन विजेता सबसे पहले स्थानीय व्यापारी वर्ग का सहयोग प्राप्त करने के लिए आतुर रहते।

जब आनार्यों के आक्रमण भारत भूमि पर होने आरम्भ हुए तभी से जैनों मुख्यतः ओसवाल जाति का सीधा या प्रच्छन्न प्रभाव आक्रमण कारियों पर रहा है। इस ऐतिहासिक तथ्य की पृष्ठभूमि मे जैन धर्म का विशेष संयोग रहा है। कारण ओसवालों की उत्पत्ति ही जैन धर्म की प्रभावना के उद्देश्य से हुई। अतः ओसवालों के मुस्लिम शासकों पर प्रभाव के इतिहास को जैन धर्म के सन्दर्भ में देखना अधिक उचित होगा। यह ऐतिहासिक संयोग है कि ओसवालों का इतिहास विक्रम संवत् से ५०० वर्ष पूर्व आरम्भ होता है—यही समय भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेशों एवं अनार्यों के परस्पर सम्बन्धों की शुरूआत का है।

पश्चिमोत्तर प्रदेशों से अनार्यों के भारत पर आक्रमण की एक रोचक कथा का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है। विक्रम संवत् से १७ वर्ष पूर्व महेन्द्रादित्य गर्दभिल्ल उज्जयिनी का स्वामी था। कालक द्वितीय उस समय के प्रसिद्ध जैनाचार्य थे जो साधुत्व अंगींकार करने के पूर्व राज-कुमार थे। उनकी बहन सरस्वती भी जैन साध्वी थी वह अनिंद्य सुन्दरी थी। राजा गर्दभिल्ल साध्वी सरस्वती पर आसक्त हो गया एवं उसका अपहरण कर राजमहल ले गया। आचार्य कालक ने अनेक तरीकों से राजा को समझाया, उसने तात्कालीन अड़ोस पड़ोस के नरेशों से भी सहायता मांगी। अन्त में सब ओर से निराश होकर कालक सिंधुकूल अवस्थित शक स्थान के शाहियों के शरण में गए। विक्रम संवत् से कुछ वर्ष पूर्व शाहियों ने उज्जयिनी पर आक्रमण किया एवं अन्ततः गर्दभिल्ल को परास्त कर सरस्वती का उद्धार किया। गर्दभिल्ल को देश से निर्वासित होना पड़ा। पर शाही उज्जयिनी में जम गए। इन्होनें शक संवत् चलाया। कुछ काल उपरान्त गर्दभिल्ल के सुयोग्य पुत्र विक्रमादित्य ने पुनः मालवा का उद्धार किया। इसी उपलक्ष्य में विक्रम संवत् का प्रचलन हुआ।

विक्रम की ६ठी शताब्दी में श्वेत हूणों ने राजस्थान के अनेक प्रदेश जीत कर भिन्न माल नगर को अपनी राजधानी बनाया। हूण शासक तोरमाण कालान्तर में आचार्य हरिदत्त सूरि का भक्त बन गया। उसके उपदेशो से प्रभावित हो तोरमाण ने ऋषभदेव भगवान का एक मन्दिर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बनवाया। तोरमाण की मृत्योपरांत उसका उत्तराधिकारी मिहिरकुल बड़ा अत्याचारी निकला। उसने जैनियों पर बहुत जुल्म किए। इन्ही से उत्पीड़ित हो उपकेश वंशीय जैन श्रावकों को मरू-भूमि छोड़कर गुर्जर देस चले जाना पड़ा। विक्रम की ९वी. शताब्दी में उद्योतन सूरि द्वारा रचित प्राकृत ग्रंथ "कुवलयमाला" में विस्तार से उन घटनाओं के उल्लेख हैं।

दिल्ली के सुल्तान अल्तमिश (सन् १२११-१२३६) के समय में नागौर निवासी जैन साधु पूनड का उल्लेख आ. राजशेखर सूरि ने 'प्रबंध कोश' में किया है। इनकी दरबार में बड़ी मान्यता थी।

मुहम्मद तुगलक (सन् १३२५-१३५१) के समय शासन में जैन धर्माचार्यों का प्रभाव बहुत बढ़ गया था। सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक के समय सीहा श्रीमाल दिल्ली की एकमात्र टकसाल का प्रमुख अधिकारी था। फिरोज शाह तुगलक के समय सन् १३७१ तक गूजर शाह राज्य की टकसाल का प्रमुख अधिकारी था

खंभात और भड़ौच के व्यापारी वर्ग अनिवार्य रूप से मुसलमान शासकों के कृपा पात्र रहे। ये तटीय केन्द्र मालवा, गुजरात के भीतरी केन्द्रों विदिशा, उज्जयिनी आदि से जुड़े होने के कारण बहुत महत्व रखते थे। राजस्व सल्तनत की आय का प्रमुख साधन होता था और उसकी वसूली निश्चित समय पर ही होती थी। अतः शासन को वांछित धन सदैव साहूकारों से उधार लेना पड़ता था। अधिकांश राज्यों में राज्य के खजाने इसी कारण वणिक श्रेष्ठियों के ही सुपुर्द रहते थे। उनकी ईमानदारी एवं विशेषज्ञता सुज्ञात थी। मालवा के सुल्तान होशंगशाह ने नरदेव सोनी को अपना भाण्डागारिक एवं शासन समिति का मान्य सदस्य नियुक्त किया था। वह अपने पुण्य कार्यों के लिए विख्यात था। इसी तरह होशंगशाह ने माण्डू निवासी श्रीमाल वंश सोनगारा गोत्र के धनपति मंडन को समादृत किया था। सुलतान महमूद खिलजी ने भी होशंगशाह की नीति का अनुसरण करते हुए नरदेव सोनी के पुत्र संग्राम सिंह सोनी को अपना भाण्डागारिक नियुक्त किया। मुनि बुद्धि सागर जी रचित 'संग्रामसिंह सोनी रास' में ऐसे अनेक उल्लेख है।

महमूद खिलजी के शासन काल में संघेश्वर जसवीर का उल्लेख मिलता है जो दिल्ली के श्रीमाल श्रेष्ठि सीहा के छोटे भाई सौम के प्रपौत्र थे। ये जसवीर शाहज़ादे गयासुद्दीन के विश्वस्त सहयोगी थे। सन् १४५४-५५ में उन्होंने कुंभलमेर एवं आबू तीर्थ के संघ निकाले एवं राणा कुम्भा ने उन्हें समादृत किया। गयासुद्दीन जब सुलतान बना तो उसने संग्राम सिंह सोनी को अपना कोषाध्यक्ष (नक्द-उल-मुल्क) बनाया। जसवीर की छोटी बहन सहगू का विवाह तपा-गच्छीय श्रीमाल वंशी श्रेष्ठी राजमल के साथ हुआ था। उनका पुत्र संघपति जावड़ सुल्तान गया-सुद्दीन का गंजाधिकारी एवं मंत्री था। गयासुद्दीन के बाद उसके उत्तराधिकारी नसीरशाह ने भी संग्रामसिंह सोनी को अपना कोषाध्यक्ष बनाया। बाद में सेनापतियों के आपसी झगड़ों के कारण उन्हें माण्डू से निर्वासित कर दिया।

विक्रम की १४वीं सदी में दिल्ली के खिलजी वंशीय सुल्तानों पर ओसवाल श्रेष्ठियों एवं जैन आचार्यों का बहुत प्रभाव था। यह सर्व विदित है कि खिलजी सल्तनत के जनक उला-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उद्दीन खिलजी के अत्याचारों से देश की प्रजत्राहि त्राहि कर उठी थी। उसने अनेक जैन तीर्थों को नष्ट किया। शत्रुञ्जय तीर्थ के अनेक मन्दिर ध्वस्त कर दिए एवं जावड़शाह द्वारा प्रस्थापित प्रतिमाऐं नष्ट कर दी। उनकी जगह मस्जिदों ने ले ली। तभी पाटण में ओसवाल श्रेष्ठि समर सिंह (समरा शाह) का उदय हुआ। इन्हीं के उद्योग से विक्रम संवत् १३७१ में शत्रुञ्जय तीर्थ का पूर्णोद्धार हुआ। उन्होंने पाटण के मुसलमान अधिकारी अलपखान को समझा बुझा कर वहां नई प्रतिमाओं की स्थापना करवाई। दिल्ली का तात्कालीन बादशाह सुल्तान कुतुबुद्दीन आपका बहुत सम्मान करता था। कुतुबुद्दींन के मरणोपरांत सुल्तान गयासुद्दीन तुगलक तो उन्हें पुत्रवत् मानता था। आपके अनुरोध पर सुल्तान गयासुद्दीन ने पाडु देश के स्वामी वीर वल्लभ को मुक्त कर दिया था। गयासुद्दीन के मरणोपरांत मुहम्मद तुगलक (विक्रम संवत् १३८२-१४०८) दिल्ली के सुल्तान हुए। वे भी समराशाह को भाई जैसा मानते थे। उन्होंने समराशाह को तेलंगाना का सूबेदार-शासक बना दिया। ये ओसवाल चरित्र नायक विक्रम संवत् १३९३ में स्वर्गस्थ हुए। उपकेश गच्छीय आचार्य सिद्ध सूरि इनके गुरु थे। उनके पट्टधर श्री कक्क सूरि ने समरा शाह की प्रशस्ति में "नाभिनन्दन जिनोद्धार" प्रबन्ध की रचना की जो जैन वांगमय का प्रसिद्ध ऐतिहासिक ग्रंथ है।

दिल्ली के सुल्तान मुहम्मद तुगलक पर आचार्य जिनप्रभ सूरि एवं उनके शिष्य जिनदेव सूरि का भी बहुत प्रभाव था। ये जिनप्रभ सूरि मोहिलवाड़ी, लाडनू के श्रीमाल ताम्बी गोत्रीय श्रावक रत्नपाल के पुत्र थे। मुहम्मद तुगलक ने उन्हें "सुरतान सराई" भेंट की एवं विक्रम संवत् १३८५ में जैन तीर्थो की रक्षार्थ उपयुक्त फरमान निकाले।

सोलहवीं शताब्दी में मुगल साम्राज्य अपने चरमोत्कर्ष पर था। बादशाह अकबर एक धर्मानुरागी सम्राट थे। उन पर ओसवाल श्रेष्ठियों एवं ओसवाल-जैन-आचार्यों का बहुत प्रभाव था। बीकानेर के श्री करमचन्द जी बछावत शाही दरबार में अपने महान व्यक्तित्व एवं राजनैतिक योग्यता के लिए मशहूर थे। बादशाह अकबर राजनीति के गूढतम प्रश्नों को सुलझाने में करमचन्द जी की सलाह लिया करते थे। इन प्रिय सम्बन्धों की शुरूआत की बड़ी दिलचस्प कथा है। बीकानेर की राजगद्दी पर तब राव कल्याणसिंह जी विराजमान थे एवं करमचन्द जी उनके मंत्री थे। राजा साहब की बड़ी इच्छा थी "किसी तरह एक दिन के लिए ही सही, जोधपुर राज-सिंहासन पर बैठ जाऊं।" मंत्रीश्वर करमचन्द जी को इस इच्छा पूर्ति के लिए दिल्ली दरबार में भेजा गया। जिस समय बादशाह से भेंट करने मंत्रीश्वर पहुँचे उस समय बादशाह शतरंज खेलने में मशगूल थे एवं मात पर मात खाए जा रहे थे। करमचन्द जी ने बादशाह को ऐसी चाल बताई कि बाजी ही पलट गई। बादशाह इस विजय से बहुत खुश हुए एवं करमचन्द जी बतौर इनाम मुहमांगा परवाना लेकर लौटे। कल्याण सिंह जी के बाद राव रायसिंह जी बीकानेर के स्वामी हुए। करमचन्द जी ने बादशाह अकबर से उन्हें 'राजा' का खिताब दिलाया। मिर्जा इब्राहिम के दिल्ली आक्रमण के समय करमचन्द जी ने कुशल सैन्य संचालन कर उसे युद्ध में हराया। बादशाह की ओर से गुजरात पर चढ़ाई कर मिर्जा मुहम्मद हुसैन को हराकर विजय प्राप्त की। साम्राज्य की इन महती

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सेवाओं से खुश होकर बादशाह ने करमचन्द जी के परिवार की स्त्रियों को सोने के नुपुर बख्शे (उस समय किसी को पाँवों में सोना पहनने का अधिकार न था)।

बादशाह अकबर का जैनधर्म से परिचय करमचन्द जी ने ही करवाया। जैनाचार्य श्री जिनचन्द्र सूरि को खम्भात् से बुलाकर बादशाह के सम्मुख व्याख्यान करवाए। ये जिन चन्द्र सूरि खेतसर के ओसवाल वंशीय रोहड़ गोत्रीय श्रीवंत साह के पुत्र थे। ये बड़े तपोनिष्ठ आचार्य थे। बीकानेर में यतियों के शिथिलाचार के विरुद्ध विक्रम संवत् १६१४ में इन्होंने बड़े क्रान्तिकारी कदम उठाए, उन्हें संघ से बहिष्कृत कर दिया। अन्ततः संयम में असमर्थ यतियों का अलग मत्थेरण सम्प्रदाय बना। जब तप गच्छ के कलह प्रिय धर्मसागर उपाध्याय ने "अभयदेव सूरि, जो सर्व गच्छ प्रिय थे, खरतर गच्छ में नहीं हुए"—कहकर विवाद सृष्टि की तो जिन चन्द्र सूरि के उद्योग से ८४ गच्छ-प्रतिनिधियों की उपस्थिति में मत पत्र लिखवाकर "धर्मसागर" को जैन संघ से बहिष्कृत किया गया।

इन्हीं जिन चन्द्रसूरि ने करमचन्द जी के आमंत्रण पर खम्भात से नागौर, राजलदेसर, सरसा होते हुए लाहौर पधारकर बादशाह अकबर से भेंट की। शाहजादा सलीम के मूल नक्षत्र में पुत्री उत्पन्न होने पर ज्योतिषियों ने अनिष्टकारी बताते हुए उसे नदी में प्रवाहित कर देने की सलाह दी थी। बादशाह इससे बहुत घबड़ाए हुए थे। जिनचन्द्र सूरि के उपदेशों से बादशाह का मन शांत हो गया। मंत्रीश्वर करमचन्द की मार्फत जैन विधि से ग्रह-शांति अनुष्ठान करवाया गया। अकबर के दरबार में इन्हीं जिनचन्द्र सूरि के चमत्कारों की अनेक कथाऐं प्रचलित हैं जैसे काजी की टोपी को आकाश से रजोहरण से पीटते हुए वापिस लाना, अमावस्या की रात में चन्द्रोदय का भान करवाना आदि। इन किंवदन्तियों की सत्यता संदिग्ध भी हो सकती है पर इतिहास इस बात का गवाह है कि बादशाह अकबर उनसे बहुत प्रभावित हुए। बादशाह ने फर्मान निकाल कर जैन तीर्थों पर होने वाले अत्याचारों को बन्द करवा दिया, जीव हिंसा कतिपय दिनों में एकदम बन्द करवा दी। श्री जिनचन्द्र सूरि को "युग-प्रधान" घोषित किया। उस अवसर पर मंत्रीश्वर करमचन्द ने भी सवा करोड़ रुपए दान में दिए। कहते हैं शाहजादा जहांगीर ने एक बार किसी यति के अनाचार से क्षुब्ध होकर आदेश दिया कि समस्त यति गृहस्थ बन जाय अन्यथा गिरफ्तार कर लिए जाऐंगे। श्री जिनचन्द्र सूरि तक जब बात पहुँची तो वे तत्काल आगरा जाकर बादशाह अकबर से मिले एवं उनके हुक्म से जहांगीर का फर्मान रद्द करवाया। यहाँ बादशाह ने सूरि जी को "वाई युग प्रधान भट्टारक" के विरुद से सम्मानित किया।

बादशाह अकबर सूरि जी एवं जैन धर्म के सिद्धान्तों से इतना प्रभावित था कि अपने जीवन के उत्तरार्ध में वह जैन विधियां पालन करने लग गया था। विन्सेट स्मिथ (Akbar, the Great Moghul) प्रभृति पाश्चात्य इतिहासकारों के अनुसार बादशाह ने विक्रम संवत् १६३७-३८ के आसपास जैन धर्म अंगीकार कर लिया था। वह गौ-मांस छूता तक न था, पशु-पक्षी की हिंसा के लिए राज्य में मृत्यु-दंड घोषित कर दिया था। पुर्तगाली पादरी पिन्हेरों ने सन् १५९५ (संवत् १६५२) में लाहौर से अपने सम्राट को लिखे पत्र में लिखा था कि —

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

"अकबर ने जैन धर्म धारण कर लिया है। (He follows the seat of the Vertie Jains)। वह जैन विधि से चिंतन करता है"। कहते हैं उसने अपने बाल तक लुंचन करवा लिए थे। यह धारणा सभी तात्कालीन राजनैतिक हलकों में जाहिर थी। यह बात सर्व विदित है कि अनेक मुसलमान सरदार इस बात से असन्तुष्ट थे। यहां तक कहा जाता है कि शाहजादा जहांगीर के इतिहास प्रसिद्ध विद्रोह के पीछे उन्हीं असन्तुष्ट सरदारों की प्रेरणा एवं बल था।

आ. जिनचन्द्र सूरि के अलावा जैन श्रमण भावदेव सूरि के शिष्य शीलदेव, आचार्य हीर विजय सूरि (पालनपुर के कुराँ गोत्रीय ओसवाल) विजय सेन गणि यति भानुचन्द्र, मुनि शांति चन्द्र आदि जैन श्रमणों ने भी अकबर को बहुत प्रभावित किया था। उन्हीं की प्रेरणा से संवत् १६३४ में बादशाह ने एक जिन मन्दिर के स्थान पर बनी मस्जिद को तुड़वा कर फिर से जैन मन्दिर बनवाने की आज्ञा दी। आ. हीरविजय सूरि को संवत् १६५९ में आगरा (फतहपुर सिकरी) निमंत्रित कर "जगत् गुरु" की उपाधि से विभूषित किया। उनके सम्मान में स्वयं बादशाह एवं समस्त सभासदों ने खड़े होकर श्रद्धा व्यक्त की। आईने अकबरी के प्रसिद्ध इतिहास लेखक अब्दुल फजल उनसे बहुत प्रभावित थे। उक्त बातों की पुष्टि शत्रुञ्जय तीर्थ में आदिनाथ मन्दिर के वि. स. १६५० में उत्कीर्णित शिलालेख से भी होती है। विजय सेन गणि ने शास्त्रार्थ में ३६३ हिन्दू पंडितों को परास्त कर "सवाई" की उपाधि पाई थी। ये बादशाह अकबर के निमत्रंण पर लाहौर गए। अकबर उनसे इतना प्रभावित हुआ कि तत्काल "कलि सरस्वती" उपाधि देकर उनका सम्मान किया। बादशाह जहाँगीर को प्रभावित करने वाले गणि विजयदेव इन्हीं के शिष्य थे। यति भानुचन्द्र को मुगल बादशाह अकबर ने फारसी ज्ञान के लिए "खुशफहम" पदवी दी थी। कहते हैं बादशाह एक दिन सिर-शूल से ग्रस्त थे। अनेक वैद्यों-हकीमों की दवाओं को नकारते हुए बादशाह ने यति जी को बुलवा कर उन पर अपनी आस्था प्रकट की एवं यति जी के सर पर हाथ रखते ही उन्हें लाभ हुआ। यति भानुचन्द्र बादशाह अकबर के अंतिम समय तक उसके पास थे। जैन मुनि शांतिचन्द्र ने वि. सं. १६४४ में मुगल दरबार में "कुरान" के हवालों से यह सिद्ध कर दिया कि "कुर्बानी खुदा तक नहीं पहुँचती" तत्काल बादशाह ने ईद के जश्न पर होने वाला पशु-बध बन्द करवा दिया। इनके प्रभाव से बादशाह ने जजिया कर समाप्त किया व द्यूत क्रीड़ा एवं मद्य-पान निषेध के फर्मान जारी किए।

इन वर्णनों के गवाह पाटन, मेड़ता एवं अन्य स्थानों पर उपलब्ध अनेकों शिलालेखों के अलावा बादशाह अकबर के दरबारी इतिहास लेखक अबुल फजल द्वारा लिखित "आईने अकबरी" एवं प्रसिद्ध फारसी इतिहास लेखक बदाउनी द्वारा लिखित "अल बदाउनी" के विवरण हैं। बदाउनी के अनुसार बादशाह अकबर ने इसलाम धर्म का परित्याग कर दिया था। पैगम्बर की दंत कथा—कयामत के दिन सम्बन्धी कुरान की आयतों-हुक्मों पर उसकी श्रद्धा नहीं रही थी। पुनर्जन्म के सिद्धांत पर उसका दृढ़ विश्वास हो गया था। उपाध्याय मुनि भानुचन्द्र संवत् १६३५ से अकबर की मृत्यु (संवत् १६६२) पर्यंत उसके दरबार में आते रहते थे। संवत् १६३६ में अकबर ने जिस नये धर्म "दीन इलाही" का प्रचलन किया उसके पीछे मूल आस्था जैन आचार्यों की थी। आईने अकबरी में जैन संतों की खुलकर प्रशंसा की गई है। बदाउनी के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अन्य ग्रंथ "अकबरनामा" में भी जैन धर्म संबंधी अनेक उद्धरण हैं। विडम्बना यह है कि भारतीय इतिहास लेखक या तो कभी इन तथ्यों को पचा नहीं पाए या आम पाश्चात्य इतिहास लेखकों एलफिस्टोन, वाननोअर और मोलिस आदि की नकल करने में ही मशगूल रहे, कभी शोधखोज करनी आवश्यक ही नहीं मानी। इसीलिए देश की प्रचलित इतिहास पुस्तकों में इन तथ्यों का कोई उल्लेख नहीं। अबुलफजल ने आईने अकबरी में उन १४० विद्वानों की सूचि दी है जिनको अकबर बहुत मानता था और जो उसकी नजर में दुनिया के रहस्य समझते थें, उनमें हीर विजय सूरि, विजयसेन सूरि और भानुचन्द्र उपाध्याय मुख्य हैं।

बादशाह अकबर की मृत्यु पर सम्पूर्ण साम्राज्य में शोक छा गया था। हिन्दू प्रजा भी कम दुखी नहीं हुई। जैन कवि बनारसीदास तो मृत्यु से इतने विचलित हुए कि उन्होंने अपना 'श्रृगांर' शतक नामक प्रिय ग्रंथ ही यमुना में बहा दिया। प्रजा में छाए शोक की उत्तप्तता "बनारसी विलास" के एक छन्द से आंकी जा सकती है—

घर घर दर दर दिए कपाट। हटवानी नहिं बैठें हाट॥
भले वस्त्र अरु भूषन भले। ते सब गाढ़े धरती तले।
ऊँच नीच कोउ न पहिचान। धनी दरिद्री भये समान।
लोगन पहिरे मोटे वस्त्र। नारिन पहिरे मोटे बेस।

बादशाह जहाँगीर भी गद्दीनशीन होने से पूर्व ही जैन आचार्यों एवं मुनियों के प्रति श्रद्धा रखने लगे थे। उन्होंने भी फरमान जारी कर समस्त राज्य में पर्युषण के दिनों जीव हिंसा की मनाही करवा दी। एक अन्य फरमान द्वारा उन्होंने सौराष्ट्र में जजिया कर व मृत्यु कर, शत्रुञ्जय एवं अन्य तीर्थों पर लिया जाने वाला कर लेने की मनाही कर दी। बादशाह शाहजहाँ ने भी उपरोक्त फर्मानों को बहाल रखा एवं जैनाचार्यों का सदैव आदर किया। लेकिन उस समय तक कट्टर पंथी मुल्ला शासन पर हावी हो चुके थे। धर्मान्ध सूबेदारों ने एक बार फिर मन्दिरों को नष्ट भ्रष्ट करना शुरु कर दिया था। शाहजादा औरंगजेव अन्य धर्मों के प्रति विद्वेष से भरा था। संवत् १७०२ में वह अहमदाबाद का सूबेदार नियुक्त हुआ। उसने सभी मन्दिर ढहा कर मस्जिदों में तब्दील कर दिए- इनमें जैन मन्दिर भी थे। उसके हुक्म से जिनालयों पर सेना ने जबरदस्ती कब्जा कर लिया। उस समय तक अहमदाबाद में जौहरी खानदान के ओसवाल श्रेष्ठि शांतिदास का मुगल शासन में सम्मान कायम था। बादशाह जहाँगीर ने भी सेठ शांतिदास को अहमदाबाद में नौ लाख रुपए खर्च कर ५२ भव्य जिनालयों के निर्माण कराने की इजाजत दे दी थी। औरंगजेब के कहर से दुखी होकर सेठ शांतिदास शाहजहाँ के दरबार में पहुँचे। बादशाह ने तुरंत फर्मान (संवत् १७०५) द्वारा सारे जैन मन्दिर और जिनालय समाज को लौटा ही नहीं दिए, औरंगजेब का भी दक्षिणा में तबादला कर दिया। शाहजहाँ ने छ करोड़ रुपये खर्च कर जो मयूरासन बनवाया था, उसमें जड़ित मूल्यवान रत्न उपलब्ध करानें में सेठ शांतिदास का मुख्य हाथ था। अनेक लड़ाईयों के निमित्त बादशाह को कर्ज देने वाले सेठ शांतिदास ही थे। बादशाह ने संवत् १७१३-१४ के एक फर्मान द्वारा पालीताना गाँव एवं शत्रुञ्जय का परगना सेठ शांतिदास की कायमी वंश परम्परा में माना जाने का हुक्म दिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संवत् १७१५ में शाहजहाँ की वृद्धावस्था के कारण उसके पुत्रों-दारा, मुराद और औरंगजेब में दिल्ली तख्त के लिए झगड़े शुरु हो गए। मुराद ने इस हेतु सेठ शांतिदास के पुत्र लक्ष्मीचन्द्र से साढ़े पाँच लाख रुपए कर्ज लिए। वह औरंगजेब के छंलांवे में आ गया और अन्ततः औरंगजेब ने शाहजहाँ और मुराद को कैद कर लिया। औरंगजेब बादशाह बना। सेठ शांतिदास उसकी क्रूरता से परिचित थे। फिर भी वे पुत्र के अनुनय विनय पर वृद्ध होते हुए भी दिल्ली गए और बादशाह को नजराना पेश किया। उन्होंने अपनी चतुराई और दूरदर्शिता से न सिर्फ मुराद को दिए कर्जे की वसूली के फर्मान प्राप्त किए बल्कि बादशाह औरगंजेब से जैन तीर्थों की रक्षा के फर्मान निकलवाए। औरंगजेब जैसे मजहबी, धर्मान्ध एवं असहिष्णु बादशाह से पालीताणां, गिरनार एवं आबू तीर्थों के अधिकार प्राप्त कर लेना सेठ शांतिदास की बहुत बड़ी उपलब्धि थी।

सेठ शांतिदास के पुत्र लक्ष्मीचन्द्र को बादशाह औरंगजेब ने 'नगर सेठ' घोषित किया। संवत् १७९४ में उसकी मृत्योपरांत बादशाह बहादुरशाह ने भी उन्हें प्रथम श्रेणी का अमीर घोषित किया और पालकी व छत्री का सम्मान बख्शा। बहादुर शाह के बाद बादशाह जहाँदारशाह (संवत् १७६९) के समय भी सेठ लक्ष्मीचन्द्र ने स्थिति को पहचान उसकी आर्थिक मदद की। फर्रुखसियार ने भी दिल्ली का बादशाह बनने पर सेठ लक्ष्मीचन्द को खूब सम्मान दिया। संवत् १७७५ में सेठ खुशालचन्द के कारोबार सम्भाल ने पर बादशाह ने उन्हें भी 'नगर सेठ' का खिताब दिया। इसी साल महावीर स्वामी के महोत्सव पर निकलने वाले जुलुस के प्रश्न पर अहमदाबाद के सूबेदार से ठन गयी। बात इतनी बढ़ी कि सूबेदार की फौज और नगरसेठ के अरबी पहरेदार आमने-सामने जम गये। तोपों में गोले भरे जाने लगे। तभी दिल्ली से परवाना पहुँचा। सूबेदार को दिल्ली बुला लिया गया। सेठ खुशालचन्द का दिल्ली दरबार में सम्मान अक्षुण्ण रहा।

श्रीमाल जाति के नर पुंगव राजा भारमल राक्यान विक्रम की १७वीं शताब्दी में मुगल शासन पर छाए रहे। वे बादशाह अकबर के दरबार के मान्य अधिकारी थे। उनके अतुल ऐश्वर्य से प्रभावित होकर बादशाह ने उन्हें 'राजा' की पदवी दी। आपको सुरक्षा के लिए चतुरंग सेना रखने का अधिकार प्राप्त था। कहते हैं शाहजादा सलीम आपके यहाँ मिलने आते थे।

भंसाली गोत्रीय महा प्रतापी श्रेष्ठि थाहरु शाह भी सतरहवीं शदी के मुस्लिम शासकों द्वारा सम्मानित हुए। बादशाह अकबर ने उन्हें 'रायजादा' का खिताब दिया। लालन गोत्रीय मंत्रीश्वर वर्धमान शाह एवं उनके भ्राता पद्मसिंह शाह जामनगर के जामसाहब द्वारा सम्मानित हुए।

दिल्ली के मुगल बादशाह फर्रूखसियार जोधपुर के ओसवाल प्रधान भंडारी खींवसी से बहुत प्रभावित थे। महाराजा अजीतसिंह ने इसका भरपूर लाभ उठाया। संवत् १७७१ में गुजरात की सूबेदारी खींवसी जी के प्रयत्नों से ही हस्तगत हुई। महाराजा को राजराजेश्वर की पदवी दिलाने का श्रेय भी खींवसी जी को है। आप महीनों दिल्ली दरबार में ही रहते थे। बादशाह मुहम्मदशाह को सैय्यद बंधुओं की मदद से तख्तनशीन करने में भी उनका प्रमुख हाथ था। बादशाह ने उनकी प्रार्थना पर हिन्दुओं पर लगाया गया जजिया कर माफ कर दिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अठारहवीं सदी के मुस्लिम शासकों पर जगत सेठ घराने का विपुल प्रभाव रहा। जगत् सेठ माणकचन्द बंगाल एवं दिल्ली के राजतंत्र में नक्षत्र की तरह चमके। बड़े-बड़े सरदार, दीवान एवं अधिकारीगण इनकी कृपा के लिए लालायित रहते थे। संवत्१७६१ में माणकचन्दजी ढाका आए। उस समय प्रदेश की राजधानी ढाका थी। वे जल्द ही शहर के प्रसिद्ध श्रेष्ठियों में गिने जाने लगे। दिवान मुंर्शीद कुली खाँ और माणकचन्द जी में भाईयों का सा प्रेम हो गया। माणकचन्द जी की राय पर ही मुर्शीद कुली खाँ ने भागीरथी के तट पर मुर्शीदाबाद शहर आबाद किया। राज्य का अधिकांश काम काज माणिकचन्द जी की राय से चलने लगा। वहीं महिमापुर में सेठ माणकचन्द ने भी अपनी शानदार कोठी बनवाई। मुर्शीद कुली खाँ से उन्होंने टकसाल बनाने की इजाजत ले ली। सेठ माणकचन्द की टकसाल में ढले सिक्के पूरे राज्य में चलने लगे। राजस्व की उगाही भी उनके हाथ में थी। रियाज के लेखक के अनुसार संवत् १७७० में बादशाह फर्रुखसियार ने उन्हें जगत सेठ की उपाधि दी। एक समय तो बादशाह ने मुर्शीदकुली खाँ से नाराज हो कर राज्य की दिवानगी भी उन्हें सौंप दी। सेठ जी के लिखने पर ही दिवानगी पुनः मुर्शीद कुली खाँ को मिली। कर्नल टाड के अनुसार जगतसेठ के पास इतना सोना चाँदी था कि गंगा पर उनसे पुल बनवाया जा सकता था। बादशाह ने उन्हें कुण्डल, पालकी एवं हाथी की सवारी बख्शी।

संवत् १७७१ में सेठ माणकचन्द की मृत्यु के बाद सेठ फतहचन्द उनके उत्तराधिकारी हुए। वे बड़े कुशल व्यापारी एवं चतुर राजनीतिज्ञ थे। संवत् १७७६ की राज्य क्रांति में फर्रुखसियार मारा गया एवं मुहम्मदशाह दिल्ली का बादशाह बना। राजनैतिक अस्थिरता के कारण देश मुद्रास्फीति से त्रस्त था। सेठ फतहचन्द की राय से बादशाह ने अनेक ऐसे कदम उठाए जिनसे मुद्रास्फीति रुक गई। अनाज के अभाव को दूर करने में भी उन्होंने राज्य की बहुत मदद की। संवत् १७८० में बादशाह ने उन्हें जगत सेठ की पदवी से सम्मानित किया। संवत् १७९६ में नादिर शाह ने भारत पर आक्रमण किया तो बंगाल के छोटे मोटे जमींदार-शासक भय से त्रस्त हो गये। जगतसेठ की टकसाल में ढले एक लाख सोने के सिक्के नादिरशाह को नजर किए गए और इस तरह बंगाल उसके आतंक से बच गया। परन्तु जब बंगाल पर मरहठों के हमले होने लगे तो राज्य उन्हें सुरक्षा देने में नाकामयाब रहा। दो बार जगत सेठ की कोठी लूटी गई। अन्ततः नवाब अलीवर्दी खाँ ने मरहठा सरदार को कत्ल कर लूट का बदला लिया। सेठ फतहचन्द की मृत्यु के बाद उनके पौत्र महताबचन्द उनकी गद्दी पर बैठे। दिल्ली के बादशाह-अहमदशाह ने उन्हें भी जगतसेठ की पदवी दी। उस समय तक जगत् सेठ के वैभव की कोई सीमा न थी। किन्तु तत्पश्चात् शनै शनै वह घटने लगा।

संवत् १८१३ में सिराजुद्दौला बंगाल का नवाब बना। वह बड़ा विलासी एवं स्वेच्छाचारी था। उसने जगतसेठ के खानदान की अस्मत पर भी डाका डालने की चेष्टा की। जगत् सेठ कैद कर लिए गए। दिवान मीरजाफर ने उन्हें छुड़ाया। संवत् १८१४ में हुए प्लासी के मैदान में अंग्रेजों के साथ हुए युद्ध में सिराजुद्दौला मारा गया। इधर बंगाल में अंग्रेजों का दबदबा बढ़ने लगा था। मीरजाफर के नवाब बनते ही खजाना अंग्रेजों की जेब में जाने लगा। उसकी जगह

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मीर कासिम नवाब बना। जगतसेठ के प्रभाव की दहशत और अंग्रेजों के साथ उनके अच्छे सम्बन्ध उसे खलते थे। संवत् १८२० में मीर कासिम ने जगत सेठ को गंगा में डुबा कर उनकी नृशंस हत्या करवा दी। उनके पुत्र खुशालचन्द को दिल्ली के बादशाह शाह आलम ने जगतसेठ की उपाधि से सम्मानित किया। तब तक अंग्रेजों को सेना रखने एवं माल गुजारी उगाहने का अधिकार प्राप्त हो चुका था। मुद्रा पर भी अंग्रेजों का एकाधिपत्य हो गया। सहसा संवत् १८३९ में खुशालचन्द की मृत्यु हो गई। इसके साथ ही जगत सेठ घराने का वैभव सूर्य अस्त हो गया।

(२) ओसवालों का शासन में योग

मूलतः क्षत्रियों की संन्तान होने के कारण यह स्वाभाविक था कि ओसवाल श्रेष्ठि राजकाज में सहायक बनते। जैनधर्म अंगीकार कर लेने के बावजूद इस जाति के शूरमाओं ने बड़ी-बड़ी लड़ाईयों में भाग लिया। अनेक राज्यों के दिवान और प्रधान ओसवाल मुत्सद्धी ही नियुक्त किए जाते थे। राज्य का कोष्ठागार और खजाना भी उन्हीं के सुपुर्द रहा। इतिहास संजोकर रखने की परम्परा न होने के कारण उन सभी शूरमा-श्रेष्ठि ओसवालों की सम्पूर्ण सूचि देना सम्भव नहीं है। अनेक काल के गर्भ में विलुप्त हो गए। श्री सुख सम्पत राजजी भण्डारी ने "ओसवाल जाति के इतिहास" में पट्टावलियों, वंशावलियों, व्यक्तिगत सम्पर्क और राजकीय आलेखों के आधार पर जो सूचि दी है, वह अपूर्ण अवश्य है परन्तु उल्लेखनीय भी है।

वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ओसवालों को मारवाड़ी या वणिक जाति मात्र मानकर उन पर राजनैतिक अक्षमता एवं सैन्य-अयोग्यता का आरोप भी लगाया जाता है। इस आरोप का मूल कारण जैनों के "अहिंसा" सिद्धान्त को माना जाता है। परन्तु, ऐतिहासिक तथ्य ठीक इसके विपरीत है। अहिंसा किसी को कायर नहीं बनाती। वह तो मनुष्य को निर्भय बनाती है। इसका प्रमाण है, उन ओसवाल श्रेष्ठियों की लम्बी सूचि जिन्होंने विभिन्न राज्यों का समय समय पर शासन संचालन किया। उन नर पुगंवों ने देश और जाति के लिए हंसते हंसते बलिदान दिए। उनका पावन स्मरण सभी के लिए प्रेरणास्पद होगा। इतिहास में इन शुरमाओं के नाम स्वर्णक्षरों में अंकित है।

पन्द्रहवीं शताब्दी से पूर्व जिन ओसवाल श्रेष्ठियों का राज्य संचालन में योगदान रहा, उनके विवरण ग्रन्थ में यत्र-तत्र उपलब्ध है। उनका क्रमवार इतिहास उपलब्ध न होने से उनकी क्रमवार सूचि भी बनाई नहीं जा सकी। पन्द्रहवीं शताब्दी के बाद से विभिन्न राज्यों में नियुक्त प्रधान, दिवान एवं फौजबख्शी (सेनापति) ओसवाल मुत्सद्धियों की सूचि भी इतनी लम्बी है कि तात्कालीन राजनीति पर उनके प्रभाव का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

जोधपुर राज्य के ओसवाल प्रधान (मुख्य मंत्री)

१. श्री नराजी भण्डारी (समराजी के पुत्र)— संवत् १५१५ से ३१ तक

२. श्री नाथाजी भण्डारी (नराजी के पुत्र)— संवत् १५४४ से ४५ तक

३. श्री ऊदाजी भण्डारी (नाथाजी के पुत्र)— संवत् १५४८

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री तेजा गदहिया (सहसमल के पुत्र)—संवत् १६०० में राव मालदेव के समय

४. श्री गोरोजी भण्डारी (ऊदाजी के पुत्र)— राव गंगाजी के समय

५. श्री लूणाजी भण्डारी (गोरोजी के पुत्र)—संवत् १६५१ से ५४ तक, संवत् १६६५ से ७० तक, संवत् १६७६ स् ८१ तक।

६. श्री मानाजी भण्डारी (डाबर जी के पुत्र)—संवत् १६५४ से ६५ तक

७. श्री बिट्ठलदास जी भण्डारी— संवत् १६६६

८. श्री खीवंसी जी भण्डारी— संवत् १९७०

९. श्री भानाजी भण्डारी (मानाजी के पुत्र)— संवत् १६७१ से ७५ तक

१०. श्री पृथ्वीराज जी भण्डारी— संवत् १९७५ से ७६ तक

जोधपुर राज्य के ओसवाल दिवान (मंत्री)

१. भंडारी नराजी (समराजी के पुत्र) — संवत् १५१६

२. मुहणोत महाराज जी (अमरसी के पुत्र)— राव जोधाजी के समय

३. भण्डारी ऊदाजी (नाथाजी के पुत्र) दीवानगी और प्रधानगी— संवत् १५४८ में।

४. भण्डारी गोरोजी (ऊदाजी के पुत्र)—राव गाङ्गाजी के समय दीवानगी तथा प्रधानगी।

५. भण्डारी धनोजी (डावरजी के पुत्र)—राव चन्द्रसेनजी के समय में।

६. भण्डारी मनाजी (डावरजी के पुत्र)—मोटा राजा उदयसिंहजी के समय में।

७. भण्डारी हमीरजी—मोटा राजा उदयसिंह जी के समय में।

८. भण्डारी रायचंदजी (जोधाजी के पुत्र) मोटा राजा उदयसिंहजी के समय में।

९. कोचर मूथा बेलाजी (जांजरजी के पुत्र)—महाराजा सूरिसिंहजी के समय में।

१०. भण्डारी ईसरदासजी—महाराणा सूर सिंहजी के समय में।

११. भण्डारी भानाजी—सम्वत् १६७६ में

१२. सिंघवी शहामलजी—महाराजा गजसिंहजी के समय में

१३. मुहणोत जयमलजी (नैनसीजी के पिता)—संवत् १६८६ से

१४. सिंघवी सुखमलजी—सम्वत् १६९० से सम्वत् १६९७ तक

१५. भण्डारी रायमलजी (लूणाजी के पुत्र)—संवत् १६९४ से १६९७ तक

१६. संघवी रायमलजी (शोभाचन्दजी के पुत्र)—सम्वत् १६९७

१७. भण्डारी ताराचन्दजी (नारायणोत) देश दीवानगी—सम्वत् १७१४ से

१८. मुहणोत नेणसीजी (जयमलजी के पुत्र) देश दीवानगी—

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मुहणोत सुन्दरसी (नेणसीजी के छोटे भाई) तन दीवानगी
संवत् १७१४ से १७२३ तक

१९. भंडारी विट्ठलदासजी (भगवानदासजी के पुत्र)—संवत् १७६२ से

२०. सिंघवी बख्तारमलजी और तख्तमलजी (सुखमलजी के पुत्र)— संवत् १७६३ से

२१. भण्डारी विट्ठलदासजी (भगवानदास के पुत्र) १७६५ से १७६६

२२. भण्डारी माईदासजी (देवराजजी के पुत्र तन दीवानगी)
भण्डारी खींवसीजी (रासाजी के पुत्र)—देश दीवानगी १७६६ से संवत् १७६७ तक

२३. राय रायन भण्डारी रघुनाथसिंहजी (रायचन्दजी के पुत्र)—
देश दीवानगी सम्वत् १७६७ से

२४. भण्डारी खींवसीजी (रासाजी के पुत्र)—
संवत् १७६७ के आसोज से १७६९ के फागुन तक

२५. भण्डारी माईदासजी (देवराजजी के पुत्र)—संवत् १७६९

२६. समदड़िया मूथा गोकुलदासजी—संवत् १७६९

२७. भण्डारी खींवसीजी (रासाजी के पुत्र) तन दीवानगी१—७७० से १७८१

२८. समदड़िया मूथा गोकुलदासजी— संवत् १७८१

२९. भंडारी रघुनाथ सिंह जी— संवत् १७८२ से १७८५ तक

३०. भण्डारी अमरसिंहजी (खींवसीजी के पुत्र)— संवत् १७८५ से १७८८ तक

३१. सिंघवीं अमरचन्दजी (सायमलजी के पुत्र) संवत् १७९३ से १७९४ तक

३२. भण्डारी अमरसिंहजी (खींवसीजी के पुत्र) संवत् १७९९ से १८०१ तक

३३. भण्डारी गिरधरदासजी (रतनसिंहजी के भाई)— संवत् १८०१ १८०४ तक

३४. भण्डारी मनरूपजी (पोमसीजी के पुत्र)—संवत् १८०४ से १८०६ तक

३५. भण्डारी सूरतरामजी (मनरूपजी के पुत्र)—संवत् १८०६

३६. भण्डारी दौलतरामजी (थानसीजी के पुत्र)

३७. भण्डारी सूरतरामजी (मनरूपजी के पुत्र)—संवत् १८०६ से १८०७ तक

३८. भण्डारी सवाईरामजी (रतनसिंहोत)—संवत् १८०७ से १८०८ तक

३९. सिंघवी फतेचन्दजी (सरूपमलोत)—संवत् १८०८ से १८१८ तक

४०. भण्डारी नरसिंहदासजी (मेसदासोत)—संवत् १८१९ से १८२० तक

४१. मुहणोत सूरतरामजी (भगवतसिंहोत)—संवत् १८२० से संवत् १८२३ तक

४२. सिंघवी फतेहचन्दजी (सरूपमलजी के पुत्र)— सम्वत् १८२३ से १८३७ जीवन पर्यन्त

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

४३. खालसे (औपचारिक नामजगदी नहीं हुई किन्तु काम सिंघवी फतेचन्द जी के पुत्र ज्ञानमलजी देखते थे।—संवत् १८३७ से १८४७ तक

४४. सिंघवी ज्ञानमलजी (फतेचन्द जी के पुत्र) संवत् १८४७

४५. भण्डारी भवानीदासजी (जीवनदासजी के पुत्र)— संवत् १८४७ से १८५१ तक

४६. भण्डारी शिवचन्दजी (शोभाचन्दोत)—संवत् १८५१ से १८५४ तक

४७. खालसे (काम सिंघवी नवलराजजी देखते थे)—संवत् १८५४ से १८५५

४८. सिंघवी नवलराजजी (जोधराजजी के पुत्र)—संवत् १८५५ तक

४९. भण्डारी शिवचन्दजी (शोभाचन्दोत)—संवत् १८५५ से १८५६ तक

५०. मुहणोत सरदारमलजी (सवाईरामोत)—संवत् १८५६ से १८५८ तक

५१. खालसे (काम सिंघवी जोधराजजी देखते थे)— संवत् १८५८ से १८५९ तक

५२. भण्डारी गङ्गारामजी (जसराजजी के पुत्र)—संवत् १८६० तक

५३. मुहणोत ज्ञानमलजी (सूरतरामजी के पुत्र)—संवत् १८६० से १८६२ तक

५४. कोचर मेहता सूरजमलजी (सोजतके)—संवत् १८६२ से १८६४ तक

५५. सिंघवी इन्द्रराजजी (भींवराजोत)—संवत् १८६४ से १८७२ तक

५६. खालसे (काम मेहता अखेचन्दजी देखते थे)—संवत् १८७२ से तक

५७. सिंघवी फतेराजजी (इन्दराजजी के पुत्र)—संवत् १८७२ से १८७३ तक

सिंघी फतहराज जी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

५८. सिंघवी फतेराजजी (इन्द्राजजी के पुत्र)—संवत् १८७३ तक

५९. मेहता अखेचन्दजी (खींवसीजी के पुत्र)—संवत् १८७३ से १८७४ तक

६०. मेहता लक्ष्मीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र)—संवत् १८७४ से १८७६ तक

६१. खालसे (काम सोजत के मेहता सूरजमलजी करते थे)—संवत् १८७६

६२. सिंघवी फतेराजजी (इन्द्राजजी के पुत्र)—संवत् १८७६ से १८८१ तक

६३. खालसे (काम सिंघवी फोजराजजी देखते थे)— संवत् १८८१ से १८८२ तक

६४. सिंघवी इन्द्रमलजी (जोरावरमलजी के पुत्र)— संवत् १८८२ से १८८५ तक

६५. सिंघवी फतेराजजी (इन्द्राजजी के पुत्र)—संवत् १८८५ से १८८६ तक

६६. खालसे (खाम सिंघवी गुलराजजी के पुत्र फोजराजजी देखते थे)—
संवत् १८८६ से १८८७ तक

६७. सिंघवी फतेराजजी (इन्द्राजजी के पुत्र)—संवत् १८८७ से १८८८ तक

६८. सिंघवी गंभीरमलजी (फतेमलजी के पुत्र)—संवत् १८८८ से १८८९ तक

६९. मेहता जसरूपजी (नाथजी के कामदार)—संवत् १८८९ से १८९० तक

७०. खालसे (भण्डारी लखमीचन्दजी काम देखते थे)— संवत् १८९० से १८९१ तक

७१. भण्डारी लखमीचन्दजी (कस्तूरचन्दजी के पुत्र)— संवत् १८९१ से १८९२ तक

७२. सिंघवी फतेराजजी (इन्द्राजजी के पुत्र)—संवत् १८९२ तक

७३. सिंघवी गंभीरमलजी (फतेचन्दजी के पुत्र)—संवत १८९२ से १८९४ तक

७४. भण्डारी लखमीचन्दजी (कस्तूरचन्दजी के पुत्र)— संवत् १८९४ से १८९५ तक

७५. सिंघवी फतेराजजी (इन्द्राजजी के पुत्र)—संवत् १८९४ से १८९५ तक

७६. सिंघवी गंभीरमलजी (फतेचन्दजी के पुत्र)—संवत् १८९५ से १८९७ तक

७७. सिंघवी इन्द्रमलजी (जीतमलजी के पुत्र)—संवत् १८९७

७८. भण्डारी लखमीचन्दजी (कस्तुरचन्दजी के पुत्र)— संवत् १८९७ से १८९९ तक

७९. कोचर बुधमलजी (सोजत के मेहता सूरजमलजी के पुत्र)— संवत् १८९८ से १८९९

८०. सिंघवी सुखराजजी (बनराजजी के पुत्र)—संवत् १८९९

८१. मेहता लखमीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र)— संवत् १८९९ से १९०० तक

८२. सिंघवी गंभीरमलजी (फतेमलजी के पुत्र)—सम्वत् १९००

८३. मेहता लखमीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र)— सम्वत् १९०० से १९०२ तक

८४. खालसे (काम सिंघवी फौजराजजी, भण्डारी शिवचंदजी, मेहता गोपाल दासजी तथा २ अन्य जातीय सज्जन देखते थे)।—संवत् १९०२

८५. भण्डारी शिवचन्दजी (लखमीचन्दजी के पुत्र)— संवत् १९०२ से १९०३ तक

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

८६. मेहता लखमीचन्दजी (अखेचन्दजी के पुत्र)— संवत् १९०३ से १९०७ तक

८७. मेहता मुकुन्दचन्दजी (लखमीचन्दजी के पुत्र)— संवत् १९०७

८८. राव राजमलजी लोढ़ा (रावरिधमलजी के पुत्र)— संवत् १९०७ से १९०८ तक

८९. खालसे (काम मेहता मुकुन्दचन्दजी, सिंघवी फौजराजजी और मेहता विजयसिंहजी आदि ५ व्यक्तियों की कमेटी के द्वारा होता था)— संवत् १९०८

९०. मेहता विजयसिंहजी (कृष्णगढ़ के मेहता करणमलजी के पुत्र)— संवत् १९०८ से १९०९

९१. मेहता मुकुन्दचन्दजी (लक्ष्मीचन्दजी के पुत्र)— संवत् १९०९ से १९१० तक

९२. खालसे— (काम मेहता गोपाललालजी, मेहता हरजीवनजी गुजराती तथा मेहता शंकरलालजी देखते थे)— संवत् १९१० तक

९३. खालसे (काम मेहता विजयसिंहजी, राव राजमलजी लोढ़ा, और मेहता हरजीवनजी गुजराती देखते थे)— संवत् १९१३ तक

९४. मेहता विजयसिंहजी—संवत् १९१३ से संवत् १९१५ तक

९५. मेहता गोपाललालजी और मेहता हरजीवनदासजी गुजरात वाले— संवत् १९१५ तक

९६. मेहता मुकुन्दचन्दजी (लक्ष्मीचन्दजी के पुत्र)— संवत् १९१६ से १९१९ तक

९७. खालसे (काम मेहता हरजीवनदासजी गुजराती, सिंघवी रतनराजजी तथा दो अन्य जातीय सज्जन देखते थे)— संवत् १९१९

९८. मेहता मुकुन्दचन्दजी (लखमीचन्दजी के पुत्र)— संवत् १९१९ से १९२२ तक

९९. खालसे (वेद मेहता सेठ प्रतापमलजी अजमेर वाले (गम्भीरमलजी के पुत्र) मेहता मुकुन्दचन्दजी, मेहता गोपाललालजी तथा भण्डारी पचानदासजी (बहादुरमलजी के भाई) काम करते थे)— संवत् १९२३ से १९२४ तक

१००. मेहता विजयसिंहजी (मेहता करणमलजी के पुत्र)— संवत् १९२५

१०१. खालसे—(काम मेहता विजयमलजी देखते थे)— संवत् १९२५ से १९२६ तक

१०२. खालसे (मेहता हरजीवनदासजी गुजराती मेहता विजयसिंहजी, सिंघवी समरथराजजी, मेहता हरजीवनदासजी एवं दो अन्य जातीय सज्जनों द्वारा राज्य व्यवस्था होती थी)— संवत् १९२९ की कार्तिक सुदी १४ तक

१०३. रायबहादुर मेहता विजयसिंहजी—संवत् १९२९ से १९३१

१०४. मेहता हरजीवनदासजी गुजरातवाले—संवत् १९३१

१०५. रावराजा बहादुर लोढ़ा सिरदारमलजी—संवत् १९३३ तक

१०६. रायबहादुर मेहता विजयसिंहजी— संवत् १९३३ से १९४९ तक

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

१०७. मेहता सरदारसिंहजी (विजयसिंहजी के पुत्र) – संवत् १९४९ से १९५८ तक

जोधपुर राज्य के ओसवाल फौजबख्शी

१. मुहणोत सूरतरामजी— संवत् १८०८ से १८१३ तक

२. भंडारी दौलतरामजी (थानसिंहजी के पुत्र) संवत् १८१३ से १८१९ तक

३. सिंघवी भींवराजजी (लखमीचन्दजी के पुत्र) १८२४ से १८३० तक

४. सिंघवी हिन्दूमलजी (चन्द्रभाणजी के पुत्र) संवत् १८३० से १८३२ तक

५. सिंघवी भींवराजजी—(लखमीचंदजी के पुत्र) १८३२ से १८४७ तक

६. सिंघवी अखेराजजी (भींवराजजी के पुत्र) संवत् १८४७ से १८५१ तक

७. भंडारी शिवचन्दजी—संवत् १८५१ से १८५५ तक

८. भंडारी भवानीरामजी (दौलतरामजी के पुत्र)—१८५५ से १८५६ तक

९. सिंघवी अखेराजजी (भींवराजोत)—संवत् १८५६ से १८५७ तक

१०. सिंघवी मेघराजजी (अखेराजजी के पुत्र)—१८५७ से १८७२ तक

११. भंडारी चतुर्भुजजी (सुखरामजी के पुत्र)—१८७२ से १८७४ तक

१२. भंडारी अगरचन्द (शिवचन्द जी के पुत्र)—१९७४ से १८७६ तक

१३. सिंघवी मेवराजजी (अखेराजोत)—१८७६ से १८८२ तक

१४. सिंघवी फोजराजजी (गुलराजजी के पुत्र)—१८९३ से १९१२ तक

१५. सिंघवी देवराजजी सं. १९१२

१६. खालसे (काम सिंघवी देवराजजी की ओर से उनके कामदार बापना कालूरामजी के पुत्र मेहता रामलाल जी बापना देखते थे)— सम्वत् १९१९ से १९१९ तक

१७. सिंघवी देवराजजी (फौजराजजी के पुत्र)—सं. १९१९ से १९२८ तक

१८. सिंघवी समरथराजजी (सुखराजजी के पुत्र)—१९२९ से १९३१ तक

१९. सिंघवी करणराज जी (सूरजारजजी के पुत्र)—१९३१ से १९३४ तक

२०. सिंघवी किशनराजजी (करणराज जी के पुत्र)—१९३४ से १९३५ तक

२१. सिंघवी बच्छराजजी (भींवराजजी के वंशज)— सं. १९४५ से सं. १९५६ तक

उदयपुर (मेवाड) के "ओसवाल" प्रधान, दीवान एंव फौज बख्शी

१. नवलखा रामदेव—महाराणा क्षेत्रसिंह (वि. सं. १४२१-३९) एवं महाराणा लक्षासिंह (वि. सं. १४३९-५४) के समय प्रधान

२. नवलखा सहणपाल—महाराणा मोकल (वि. सं. १४५४-९०) एवं महाराणा कुम्भा (वि. सं. १४९०-१५२५) के समय प्रधान

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

३. कोठारी तोलाशाह— महाराणा सांगा (वि. सं. १५६६-८४) के समय प्रधान

४. कोठारी कर्माशाह— राणा रतनसिंह के समय में प्रधानगी के पद पर काम किया

५. निहाल चन्द जी बोलिया— सम्वत् १६१० में चितौड़ में महाराणा उदयसिंहजी के समय प्रधान रहे।

६. रंगाजी बोलिया— बड़े महाराणा अमरसिंह तथा महाराणा कर्णसिंहजी के समय प्रधान रहे।

७. भामाशाह कावड़िया—महाराणा प्रतापसिंह जी के राजत्व काल में आरंभ से अंत तक एवं उनके पुत्र अमरसिंह जी के समय में संवत् १६५६ तक प्रधान

८. कावड़िया जीवाशाह— (भामाशाह के पुत्र) अपने पिता के बाद महाराणा अमरसिंहजी के समय में प्रधान रहे

९. कावड़िया अक्षयराजजी— (जीवाशाह के पुत्र) प्रधान महाराणा कर्णसिंहजी के राज्य-काल में प्रधान।

१०. शाह देवकरण— महाराज जगत सिंह (द्वितीय-वि.सं.१७९०-१८०८ के समय प्रधान

११. सिंघवी दयालदास जी सीसोदिया— महाराणा राजसिंहजी के समय में प्रधान।

१२. मेहता अगरचन्दजी वच्छावत— महाराणा अरिसिंहजी, हमीरसिंहजी तथा भीमसिं-हजी के समय में प्रधान

१३. मोतीराजजी बोलिया—महाराणा अरिसिंहजी के राज्यकाल में सं. १८१९ से २६ तक प्रधान।

१४. एकलिंगदासजी बोलिया (मोतीरामजी बोलिया के पुत्र—एकलिंगदासजी की वय छोटी होने से इनके काका मोजीरामजी काम देखते थे)—महाराजा अरिसिंह के समय प्रधान।

१५. सोमजी गाँधी— महाराणा भीमसिंहजी के समय में प्रधान।

१६. सतीदासजी गाँधी (सोमजी के भाई)—महाराणा भीमसिंहजी के समय में प्रधान।

१७. शिवदासजी गाँधी (सोमजी के भाई)—महाराणा भीमसिंहजी के समय में प्रधान।

१८. मेहता देवीचन्दजी वच्छावत (अगरचन्द जी के पौत्र)—महाराणा भीमसिंहजी के समय में प्रधान।

१९. मेहता रामसिंहजी एवं शेरसिंह जी वच्छावत (मेहता अगरचन्दजी के पौत्र)—महाराणा भीमसिंहजी के समय बारी बारी से तीन चार बार दीवान और प्रधान रहे।

२०. मेहता गोकुलचन्दजी वच्छावत (मेहता देवीचन्दजी के पौत्र)—महाराणा सरुपसिंहजी के समय में प्रधान।

२१. कोठारी केसरीसिंहजी महाराणा सरुपसिंहजी के समय में—सं. १९१६ से २६ तक प्रधान।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

२२. मेहता गोकुलचन्दजी— महाराणा सरूपसिंहजी के समय में संवत् १९२६ से प्रधानगी की।

२३. मेहता पन्नालालजी वच्छावत्, सी. आई. ई.— महाराणा शंभूसिंहजी के समय में प्रधान।

२४. कोठारी बलवन्तसिंहजी —महाराजा फतेहसिंहजी के समय में प्रधान।

२५. मेहता फतहलाल—महाराणा भूपालसिंह के समय में प्रधान।

२६. कटारिया मेहता भोपालसिंह जी—महाराणा फतेहसिंहजी के समय में प्रधान।

२७. मेहता जगन्नाथसिंहजी (भोपालसिंहजी के पुत्र)—महाराणा फतेहसिंहजी के समय में प्रधान।

२८. मेहता तेजसिंह—मेवाड राज्य के दीवान नियुक्त हुए।

२९. मेहता चीलसी—महाराणा उदयसिंह के समय में फौजबख्शी।

३०. मेहता मालदास—महाराणा भीमसिंह के समय में फौजबख्शी।

३१. मेहता श्रीनाथ—महाराणा भीमसिंह के समय में फौजबख्शी।

३२. बोलिया रुद्रमान—फौजबख्शी

३३. बोलिया सरदार सिंह—फौजबख्शी।

बीकानेर स्टेट के ओसवाल दीवान

१. वच्छराजजी वच्छावत—संवत् १४८९ से रावबीकाजी के साथ बीकानेर राज्य स्थापना में सहयोगी रहे एवं संवत् १५१५ में दीवान बनाए गए।

२. मेहता राव लाखनसी—बीकानेर राज्य के आरंभ काल में राज्य के दीवान

३. मेहता करमसी वच्छावत (वच्छराजजी के पुत्र)—संवत् १५५१ से राव लूकणरणजी क़े समय में दीवान।

४. मेहता वरसिंहजी वच्छावत (करमसी के छोटे भाई)—राव जेतसिंहजी के समय में दीवान।

५. मेहता नगराजजी वच्छावत (वरसिंहजी के पुत्र)—राव जेतसिंहजी के समय में दीवान।

६. मेहता संग्रामसिंहजी वच्छावत (नगरराजजी के पुत्र) र—व कल्याणसिंहजी के समय में दीवान।

७. मेहता करमचन्दजी वच्छावत (संग्रामसिंहजी के पुत्र)—राव रायसिंहजी के समय में दीवान।

८. वेद मेहता ठाकुरसीजी (रावलाखनसी की ५वी पीढ़ी में)—राव रायसिंहजी के समय में दीवान।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

९. मेहता भीगचन्दजी तथा लक्ष्मीचन्दजी वच्छावत करमचन्दजी के पुत्र)— राव सूरसिंहजी के समय में दीवान।

१०. वेद् मेहता महाराव हिन्दूमलजी— महाराजा रतनसिंहजी के समय में संवत् १८८५ में दीवान।

११. मेहता किशनसिंहजी— १९३५ से एक साल तक दीवान रहे।

१२. अमरचन्दजी सुराणा— महाराजा सूरजसिंहजी के समय में १८८३ से दीवान रहे।

१३. राखेचा मानमलजी— संवत् १८५२-५३ में दीवान रहे।

१४. कोचर मेहता शाहमलजी— महराजा सरदारसिंहजी के समय में संवत् १८६८ मे दीवान रहे।

किशनगढ़ स्टेट के ओसवाल दीवान

१. मुहणोत रायचन्दजी— आपने महराज कृष्णसिंहजी के साथ किशनगढ़ राज्य की स्थापना से पूर्व १६५८ में किशनगढ़ शहर बसाने में बहुत अधिक सहयोग दिया एवं प्रथम दीवान बने आप सं. १७१० तक इस पद पर रहे।

२. मेहता कृष्णसिंहजी मुहणोत— महाराजा मानसिंहजी के समय में राज्य के मुख्यमंत्री रहे।

३. मेहता आसकरणजी मुहणोत— महाराजा राजसिंहजी ने १७६५ में दीवान पद इनायत किया।

४. मेहता चेनसिंहजी— महाराजा प्रतापसिंहजी के समय में दीवान रहे।

५. मेहता रामचन्द्रजी मुहणोत—महाराज बहादुरसिंहजी ने संवत् १७८१ में दीवान बनाया।

६. मेहता हठीसिंहजी मुहणोत—महाराजा बहादुरसिंहजी ने संवत्१८३१ में दीवान पद दिया।

७. मुहणोत हिन्दूसिंहजी—महाराज बहादुरसिंहजी के समय में माईदासजी के साथ दीवानगी की।

८. मेहता जोगीदासजी मुहणोत—महाराजा विरदसिंहजी तथा प्रतापसिंहजी के समय में दीवान रहे।

९. मेहता शिवदासजी मुहणोत—महाराज कल्याणसिंहजी के समय में संवत् १८८७ में दीवान रहे।

१०. मेहता करणसिंहजी मुहणोत—संवत् १८७० से १८९६ तक दीवान रहे। आपके द्वितीय पुत्र मेहता विजयसिंहजी तथा पौत्र सरदारसिंहजी जोधपुर राज्यके ख्याति प्राप्त दीवान रहे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

११. मेहता मोखमसिंहजी (मेहता करणमलजी के ज्येष्ठ पुत्र)—संवत् १८९६ से १९०८ तक दीवान रहे।

जयपुर के ओसवाल दीवान

१. गोलेच्छा माणिकचन्दजी— संवत् १९०६ से १२ तक प्रधानमंत्री के पद पर रहे।

२. गोलेच्छा नथमलजी—संवत् १९३७ से १९५८ तक दीवान पद पर कार्य किया।

३. बैद कन्हीं रामजी—संवत् १८०७ से १८२० तक राज्य के दीवान रहे।

काश्मीर के ओसवाल दीवान

१. मेजर जरनल विशनदासजी दूगड़।

सिरोही- स्टेट के ओसवाल दीवान

१. सिंघी श्रीवंतजी

२. सिंघी श्यामजी

३. सिंघी सुन्दरजी

४. सिंघी अमरसिंहजी

(महाराजा सुलतानसिंहजी, अखेराजजी, वेरीसालजी, दरजनसिंहजी, तथा मानसिंहजी, के समय में उक्त सिंघी बंधुओं ने दीवान के पदों पर काम किया।)

५. सिंघी हेमराजजी

६. सिंघी कानजी

७. सिंघी पोमाजी

(ये तीनों बन्धु ईडर के दीवान सिंघी लालजी के पुत्र थे। इन्होंने सिरोही स्टेट के दीवन पद पर काम किया था। इनमें कानजी ३ बार दीवान हुए)।

८. सिंघी जोरजी— आप संवत् १९१६ में दीवान रहे।

९. बापना चिमनमलजी (दबानी वाले)— आपने भी स्टेट में दीवान के पद पर कार्य किया था।

१०. सिंघी कस्तूरचन्दजी— आप संवत् १९१९, २५ तथा ३२ में तीन बार दीवान हुए।

११. राय बहादुर सिंघी जवाहरचन्दजी— आप संवत् १९४८, ५५ तथा ५९ में तीन बार दीवान हुए।

इन्दौर स्टेट के ओसवाल दीवान

१. राय बहादुर सिरेमलजी बापना, बी.एस.सी. एल.एल.बी. एतमाद— वजीर-उद्दौला- आप सन् १९२६ से इन्दौर स्टेट के प्राइम मिनिस्टर एवं प्रेसिडेंट कौंसिलर के पद पर अधिष्ठित थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

२. रा. ब. हीराचन्दजी कोठारी— आप भी कुछ मास तक प्रेसीडेंट कौंसिलर तथा दावान रहे थे।

रतलाम स्टेट के ओसवाल दीवान

१. कोठारी जव्हारसिंहजी दूगड़, नामली- आपने कुछ वर्षों तक स्टेट के दीवान पद पर काम किया था।

सीतामऊ के ओसवाल दीवान

१. मेहता नाथाजी— महाराजा रामसिंहजी के समय में १७३१ में।

२. मेहता हीराचन्दजी— महाराजा केशोदासजी के समय में।

३. मेहता भिखारीदासजी— महाराजा केशोदासजी के समय में १७६९ में।

४. बांठिया जसवंत सिंहजी— महाराजा रघुवीर सिंहजी समय में ।

बांसवाड़ा राज्य के ओसवाल दीवान

१. जालिमचन्दजी कोठारी

झाबुआ के ओसवाल दीवान

१. श्री गुलाबचन्दजी ढ़ढ़ा एम. ए. जयपुर— आप इस स्टेट के दीवान पद पर कार्य्य कर चुके हैं।

प्रतापगढ़ के ओसवाल दीवान

१. श्री सुजानमलजी बांठिया—आप कई वर्षों तक इस स्टेट के दीवान रह चुके हैं।

झालावाड़ स्टेट के फौजबख्शी

१. सुराणा गंगाप्रसादजी— आपको महाराज पृथ्वीसिंहजी ने फौजबख्शी का पद इनायत किया था।

२. सुराणा नरसिंहदासजी (गंगाप्रसादजी के पुत्र)—अपने पिताजी की जगह फौजवख्शी मुकर्रर हुए।

(३) क्षात्र-तेज की झलकियाँ

सेनापति आभू

विक्रम की तेरहवीं शदी में गुजरात (अनहिलपुर) के अंतिम सोलंकी राजा भीमदेव (द्वितीय) के सेनाध्यक्ष—दण्डनायक थे थराट के श्रीमाल वंशीय जैन श्रेष्ठि आभू जी। जब मुसलमानों का आक्रमण हुआ, भीमदेव अणहिलपुर में न थे। मुसलमानों से मुकाबला करने लायक सेना भी न थी। राणी बड़ी चिंतातुर हुई। उन्होंने नव-नियुक्त दण्डनायक आभूजी को बुलाया एवं अपनी चिंता प्रकट की। सेना की कमान आभूजी को सौंप दी गई। आभूजी बड़े धर्माचारी थे। उन्होंने उपलब्ध सेना की व्यवस्था बड़ी चतुराई से की। लड़ते लड़ते संध्या हो गई— प्रति-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

क्रमण का समय हो गया। आभूजी नियमानुसार प्रतिक्रमण के लिए जगह की तलाश में थे। अतः उन्होंने रणभूमि में ही हाथी के हौदे पर प्रतिक्रमण किया। सैनिक यह देख कर बड़े हैरान हुए। आभूजी की शिकायत राणी तक पहुँच गई— रणभूमि में प्रतिक्रमण कर क्षमा चाहने वाला जैनी क्या लड़ेगा। राणी चिंतित तो हुई पर अन्य कोई उपाय न था। दूसरे दिन का युद्ध प्रारम्भ हुआ तो सब देखते रह गए। आभूजी इस पराक्रम और शौर्य से लड़े एवं अपनी सेना की व्यवस्था इस चतुराई से की कि शत्रु सेना पस्त हो गई। विजयश्री आभूजी के हाथ रही। अणहिलपुर की प्रजा ने आभूजी का जयकार किया। राणी ने आभूजी का समुचित सम्मान किया। सच ही है— अहिंसा का सम्बधं आत्मा से है— कर्त्तव्य एवं न्याय-रक्षा के लिए लड़ना मनुष्य का परम धर्म है। इस अपरिहार्य हिंसा से आत्मा कलुषित नहीं, उज्ज्वलतर होती है। आभूजी उदार श्रीमंत थे— उन्होंने तीर्थ यात्रा में १२ करोड़ स्वर्ण मोहर व्यय की। उन्होंने सर्व आगम सूत्रों की प्रतियाँ लिखवा कर धर्म क्षेत्रों में वितरित की एवं इस हेतु प्रचुर द्रव्य व्यय किया।

मेहता जालसीजी

विक्रम की दसवीं शदी सें ही मेवाड़ के ओसवाल मेहता खानदान ने राज्य की अपार सेवा की। विक्रम की चौहदवीं शदी में इतिहास का एक मोड़ ऐसा भी आया जब मेवाड़ पर शिशोदिया वंश के राणाओं का शासन समाप्त हो गया। तब एक ओसवाल नर पुंगव ने ही अपनी राजनैतिक दूरदर्शिता से मेवाड़ पर राणाओं का शासन फिर से बहाल करवाया जो भारत की आजादी और रियासतों के विलय तक कायम रहा।

संवत् १३६० में दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन खिलजी ने समूचे मेवाड़ का अधिग्रहण कर लिया था। महारानी पद्मिनी अपनी सहेलियों के साथ जौहर की ज्वाला में सती हो गई एवं हजारों राजपूत वीर केसरिया बाना पहन कर कुर्बान हो गए। बादशाह सोनगरा राजपूत सरदार मालदेव को चित्तौड़ का शासक नियुक्त कर दिल्ली चला गया। शिशोदिया कुल तिलक हमीर मात्र एक केलवाड़ा गाँव के स्वामी रह गए। उस समय भणसाली गोत्रीय जालसीजी मेहता सम्पूर्ण राज्य के मुत्सद्दी दिवान थे। वास्तविक शासन प्रबधं उन्हीं के हाथ में था। वे बड़े चतुर राजनीतिज्ञ थे। सरदार मालदेव की पुत्री विवाह योग्य थी। जब वर की तलाश हुई तो मेहता जालसीजी ने केलवाड़ा में रह रहे महाराणा हमीर से सम्बंध करने की सलाह दी। उनकी सलाह से मालदेव ने टीका भिजवा दिया। नियत समय पर महाराणा से मालदेव की पुत्री का विवाह हो गया। महाराणी को जब हमीर के हृदय में छुपी मेवाड़-उद्धार की कसक का पता चला तो महाराणी ने पिता से दहेज में मेहता जालसीजी को मांग लेने की सलाह दी। मालदेव ने मंजूरी दे दी। प्रसिद्ध पाश्चात्य इतिहासकार कर्नल टॉड के अनुसार तभी से पासा पलटना शुरु हुआ। चतुर जालसीजी ने मेवाड़ के अनेक सरदारों से सम्पर्क कर उन्हें अपने पक्ष में कर लिया। कुछ अर्से बाद क्षेत्रपाल की पूजा के बहाने महाराणी अपने नवजात शिशु और जालसाजी के साथ चित्तौड़ आई। राजा मालदेव का तब तक देहांत हो चुका था और उसका पुत्र 'जेसा' मेवाड़ का स्वामी था। जालसीजी ने उपयुक्त समय जान कर महाराणा हमीर को खबर भिजवा दी। जब महाराणा हमीर अपनी सेना लेकर चित्तौड़ आए तो गढ़ के फाटक उनके स्वागत को खुले

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हुए थे। इस तरह संवत् १३८३ में फिर से मेवाड़ पर शिशोदिया वंशी महाराणा हमीर का कब्जा हो गया। सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ पं. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने भी स्वीकार किया है कि महाराणा हमीर को पुनः गद्दीनशीन करने में जालसीजी का ही प्रमुख हाथ था। महाराणा ने इस उपलक्ष में उन्हें जागीर बख्शी। अगर ओसवाल श्रेष्ठि मेहता जालसीजी ने महाराणा का सहयोग न किया होता तो मेवाड़ का इतिहास ही कुछ ओर होता।

आशा शाह

ये देपरा गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठि कोमलमेर (कुम्भलगढ़) राज्य के दिवान थे। मेवाड़ की राजगद्दी पर उस समय राणा सांगा के पौत्र महाराणा विक्रमादित्य आसीन थे। सरदारों से अनबन के कारण उन्हें राज गद्दी छोड़नी पड़ी एवं इनके भाई दासी-पुत्र बनबीर ने षड़यंत्रों से मेवाड़ की राजगद्दी हथियाली। भावी राणा उदयसिंह बालवस्था में थे। कुटिल बनवीर ने रास्ते का काँटा हटाने के विचार से बालक की हत्या करनी चाही। धाय पन्ना एवं राजकीय नाई ने बड़ी चतुरता से भावी राणा की प्राण रक्षा की। धाय पन्ना के अपने पुत्र का बलिदान इतिहास में अमर हो गया। परन्तु उसके बाद मेवाड़ की राजगद्दी उसके असली हकदार को दिलाने में सहयोगी एक ओसवाल श्रेष्ठि की शौर्य गाथा का उल्लेख इतिहास में बहुत कम मिलता है। धाय पन्ना बालक राणा को लेकर जगह-जगह सरदारों से आश्रय की भीख मांगती भटकती रही पर किसी ने बनवीर के भय से आश्रय नहीं दिया।

अन्ततः वह कोमलमेर के ओसवाल श्रेष्ठि आसा शाह के द्वार पर गई। उन्होंने एक बार तो झंझट में न पड़ने के विचार से इन्कार कर दिया परन्तु अपनी माँ की वीर-रमणीयोचित ललकार से प्रेरित हो भावी राणा को शरण दे दी— उन्हें अपना भतीजा कह कर प्रसिद्ध किया। जब कुमार उदयसिंह युवा हुए, आसा शाह ने मेवाड़ के विभिन्न सरदारों से सम्पर्क साधा और अन्ततः विक्रम संवत् १५९७ में उन्हें राज सिंहासन दिलाने में सफल हुए।

'वीर विनोद' के लेखक कवि राजा श्यामलदास के अनुसार "पन्ना धाय सर्व प्रथम रावत रायसिंह के पास गई, वहाँ से निराश होकर डूंगरपुर के रावल आशकरण के पास गई। वहाँ भी शरण न मिली तो कुंभलमेर के आसा देपुरा के पास आई- वह जाति का महाजन था। राणा सांगा ने उसे कुंभलमेर का किलेदार बनाया। उसने राणा उदयसिंह को शरण दी और भानजा जाहिर किया। विक्रम संवत् १५९४ में अनेक सरदारों की उपस्थिति में उनका गद्दी-उत्सव हुआ। फिर आसा शाह बनवीर के तात्कालीन प्रधान चील मेहता से मिले। सुयोग से वे भी ओसवाल नर पुंगव थे। वे विक्रम संवत् १५९७ में राणा को मेवाड़ की गद्दी पर बैठाने में कामयाब हुएं।"

चीलजी मेहता

जिस समय राणा सांगा के पौत्र विक्रमादित्य को गद्दी से उतार कर दासी पुत्र बनवीर मेवाड़ के सिंहासन पर बैठा, उस समय चित्तौड़ का किला ओसवाल मुत्सद्दी चीलजी मेहता की देखरेख में था। वे बड़े स्वामी भक्त एवं वीर पुरुष थे। उन्हें बनवीर की अधीनता हमेशा खटकती थीं, किन्तु अन्य सरदार बनवीर से मिले हुए थे इसलिए वे भी चुप थे। जब अरावली की घाटी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में युवा उदयसिंह के लिए सेना संगठित की जा रही थी तो आसा शाह ने इन्हीं चीलजी मेहता से सम्पर्क साधा एवं स्वामीभक्ति के लिए ललकारा। चीलजी मेहता भी अवसर की प्रतीक्षा में ही थे। उन्होंने बड़ी चतुराई से काम लिया। बनवीर से खाद्यान्न लाने का बहाना बना कर किले में घुस गए। घमासान लड़ाई छिड़ गई। बनवीर को चोर दरवाजे से भागना पड़ा। महाराणा उदयसिंह सिंहसनारूढ़ हुए। मेवाड़ का इतिहास ही पलट गया।

श्री तेजा गधैया

"अनेकान्त" में प्रकाशित 'ओसवाल वंशावली' के अनुसार तेजा गधैया जोधपुर के महाराजा मालदेव के प्रधान मुत्सद्दी थे। संवत् १५९८ में शेरशाह ने जोधपुर पर आक्रमण कर दिया। उसकी सैन्य शक्ति और चालाकी के आगे राठौड़ सरदार नहीं ठहर सके। वे हार गए। शेरशाह ने अपने सेना नायक 'हमजा' को जोधपुर का शासक नियुक्त किया। उस समय तेजा गधैया की बहादुरी और चतुराई से ही हमजा का नाश हुआ और जोधपुर पुनः मालदेव के अधिकार में आया।

कोठारी भीमसीजी

रणधीरोत कोठारी खानदान के कोठारी मांडबाजी मेवाड़ बस गए थे। उन्हीं के वंशज भीमसीजी थे। महाराणा संग्राम सिंह (द्वितीय) उन्हें भाई की तरह मानते थे। उस समय राज्य के दीवान थे देवीसिंह जी मेघावत। उनका भी भीमसीजी से सगे भाई का सा सम्बन्ध था। वे हर समस्या में भीमसीजी की राय लिया करते थे। उस वक्त दिल्ली में मुगल बादशाह औरंगजेब की मृत्यु हो गई थी और शाहजादा अजीमुश्शान हिन्दू राजाओं का कट्टर विरोधी था। शाही सेनापति रणबाज खाँ ने तभी असंख्य सैन्यदल लेकर एकाएक मेवाड़ पर आक्रमण कर दिया। इस समस्या से महाराणा बड़े चिन्तित हुए उस समय दीवान देवी सिंह जी को हठात् ज्वर चढ़ गया। प्रातः युद्ध में जाना था। देवी सिंहजी ने कोठारी भीमसीजी को बुला भेजा और उन्हें युद्ध का भार सौंप दिया। कोठारीजी उन्हें ढ़ाढ़स देकर तत्काल युद्ध के लिए तैयार हो गए। राजपूत सरदारों ने उनका उपहास किया। कहा भी— "कोठारीजी युद्ध में आटा नहीं तोलना है।" वीर शिरोमणि ने जबाब दिया।— "चिंता मत करो इतने दिन एक हाथ से तोलता था, आज दोनों हाथों से तौलूँगा।" घमासान युद्ध हुआ। भीमसीजी ने दोनों हाथों से तलवार के जौहर दिखाने शुरु किए। गाजर मूली की तरह यवन कटने लगे। अचानक एक तीर भीमसीजी की छाती में लगा और हँसते-हँसते वह वीर शिरोमणी राज्य के लिए कुर्बान हो गया। ऐसे ही नर रत्नों से ओसवाल धन्य हुए।

रायभंडारी रघुनाथसिंह

जोधपुर महाराजा अजीतसिंह के समय भंडारी रघुनाथ सिंह दीवान के उच्च पद पर प्रतिष्ठित थे। भंडारी खींवसी के समान ये भी बड़े पराक्रमी एवं शासन कुशल थे। गुजरात के सूबे का शासन प्रबंध आपके हाथ में था। इन्होंने गुजरात में अनेक युद्धों में महाराजा की ओर से सेनापतित्व किया। महाराजा ने उन्हें प्रसन्न होकर अनेक रुक्के बख्शे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जब महाराजा और खींवसीजी संवत् १७७६ में दिल्ली की सल्तनत को बनाने-बिगाड़ने में व्यस्त थे तो जोधपुर का शासन रघुनाथजी के ही सुपुर्द था। अंग्रेज इतिहासकार कर्नल वाल्टर ने रघुनाथ जी के शासन की प्रशंसा की है। इस सन्दर्भ में एक लोकप्रिय दोहा इस प्रकार है—

करोड़ां द्रव्य लुटायो, हौदा ऊपर हाथ।

अजे दिल्ली रो पातशा, राजा तो रघुनाथ॥

महाराजा ने उन्हें राज्य की सर्वोच्च उपाधि 'राय' से विभूषित किया एवं हाथी और पालकी का सम्मान बख्शा।

श्री रत्नसिंह भंडारी

जोधपुर महाराजा अभयसिंह के समय उनके एक बड़े सेनानायक रत्नसिंह भंडारी थे। संवत् १७८७ में महाराजा ने उन्हें अजमेर का शासक नियुक्त किया। रत्नसिंह बड़े खेरख्वाह और बहादुर थे। निजी जीवन में बड़ी साधु प्रकृति के थे। सभी कौमें उनका बड़ा आदर करती थीं। संवत् १७९० में जब गुजरात का प्रदेश महाराजा अभय सिंह के सुपुर्द हुआ तो महाराजा ने भंडारी रत्नसिंह को वहाँ का शासक बना कर गुजरात भेजा। इस घटना का वर्णन कविराजा करणीदान एवं वीरभान रतनू रचित 'सूरज प्रकाश' और 'राज रुपक' में विस्तार से किया गया है। दिल्ली के बादशाह मुहम्मद शाह के विरुद्ध गुजरात के सूबेदार सर बुलन्द ने बगावत कर दी और स्वतंत्र शासक बन बैठा। बादशाह के आग्रह पर महाराजा अभयसिंह ने उसे परास्त करने का बीड़ा उठाया और भंडारी रत्नसिंह को यह भार दिया। अहमदाबाद के पास तीन दिन तक घमासान लड़ाई हुई। प्रसिद्ध इतिहासकार गौरीशंकर हीराचन्द ओझा ने कविवर बांकीदास के हवाले से लिखा है कि अहमदाबाद नगर और भद्र के किले पर पाँच मोर्चे लगाए गये जिनके सभी नायक ओसवाल फौज बख्शी थे। उनमें रत्नसिंह भंडारी, विजराज भंडारी, अमरसिंह भंडारी आदि प्रमुख थे। अन्ततः सर बुलन्द ने आत्म समर्पण कर दिया। प्रसिद्ध पाश्चात्य लेखक केम्पबेल कृत "गजेटियर ऑफ दी बॉम्बे प्रेसीडेंसी" के अनुसार अहमदाबाद फतह करने के बाद महाराजा ने भंडारी रत्नसिंह को यहाँ का नायब मुकर्रर किया। 'जोधपुर राज्य की ख्यात' से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है।

इन्होंने मराठा सरदारों से अनेक लड़ाईयाँ लड़ कर महाराजा के हितों की रक्षा की। संवत् १७९४ मैं बादशाह मुहम्मद शाह अभयसिंह से नाखुश हो गया। बादशाह ने मामिन खाँ को गुजरात का शासक बना दिया। महाराजा के इशारे पर रत्नसिंह उससे भिड़ गये। दिल्ली की पूरी फौज उन्हें डिगा नहीं सकी। मामिन खाँ ने मराठा सरदारों की मदद लेनी चाही। पर रत्नसिंह ने बड़ी चतुराई से उन्हें मिलने ही नहीं दिया। अन्ततः मामिन खाँ को एक बड़ी रकम लेकर वापिस लौट जाना पड़ा। संवत् १८०४ में युद्ध में लड़ते लड़ते ही इस वीर शिरोमणि का देहांत हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सोमजी गांधी

मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह (द्वितीय) के समय मेवाड़ को बाहरी विपत्तियों के साथ ही आंतरिक कलह का भी सामना करना पड़ा था। मेवाड़ का अधिकांश भाग हाथ से जाता रहा था। राज कोश लगभग समाप्त था। सामान्य प्रबंध तक में धनाभाव के कारण कठिनाईयाँ आ रही थी। ऐसे समय में राजमाता ने चूंडावत सरदारों से ऋण लेकर राज्य का काम चलाया। पर साथ ही उनके एहसानों तले भी दब गए। महाराणा के जन्मोत्सव के लिए धन मांगने पर चूंडावत सरदार ने टालमटोल कर दिया। यह जानकर सोमजी गांधी ने राजमाता के पास सन्देश भिजवाया कि उन्हें राज्य की प्रधानगी सौंपी जाय तो वे ऐच्छित धन का प्रबंध कर सकते हैं। महाराणा ने उन्हें प्रधान नियुक्त कर लिया। सोमजी गांधी बड़े अदूरदर्शी थे। उन्होंने अनेक असंतुष्ट सरदारों को सम्मान दिला कर अपने पक्ष में कर लिया। शक्तावत सरदारों के सहयोग से राज्य के लिए धन एकत्रित किया। भिंडर के शक्तावत सरदार मोकम सिंह को निमंत्रण भेजकर महाराणा से उनकी २० वर्षों से चली आ रही अनबन समाप्त करवाई। जोधपुर एवं जयपुर नरेशों से सम्पर्क साध कर मराठों को राजपूताने की धरती पर से मार भगाने की योजना बनाई। संवत् १८४४ में लालसोट के मैदान में घमासान युद्ध हुआ। मराठों को पराजित होकर भागना पड़ा। किन्तु होनी को कुछ और ही मंजूर था। चूंडावत सरदार इर्षा से जल रहे थे। एक दिन कुछ सरदार मिलने के बहाने सोमजी के घर पहुँचे एवं सलाह करने के बहाने उन्हें एक ओर बुला सीने में कटार भोंक कर उनकी इहलीला समाप्त कर दी। महाराणा ने सोमजी के भाई सतीदास और शिवदास को राज्य का प्रधान और उपप्रधान नियुक्त किया। सतीदास जी बड़े वीर पुरुष थे। उन्होंने भिंडर के शक्तावत सरदार की सहायता से सेना एकत्र कर चूंडावतों के विरुद्ध जिहाद बोल दिया। अकोला में भयानक युद्ध हुआ। चूंडावत सरदार मारागया। सतीदास की जीत हुई। इस तरह उन्होंने अपने भाई सोमजी गांधी की हत्या का बदला लिया।

मेहता मालदास

मेवाड़ के प्रधान सोमजी गांधी ने संवत् १८४४ में जब जयपुर जोधपुर व अन्य नरेशों की मदद से मराठों के विरुद्ध अभियान छेड़ा तो इसमें उनके मुख्य सहयोगी थे मेहता मालदास। वे उस समय मेवाड़ के सेनापति थे। उन्हें मेवाड़ एवं कोटा की सेना का संयुक्त सेनापति नियुक्त किया गया। मालदास जी उदयपुर से प्रयाण कर निम्बाहेड़ा,नकुम्प,जीरण आदि गाँवों पर अधिकार करते हुए जावेद तक जा पहुँचे। यहाँ मराठा सदाशिव राव से उनका युद्ध हुआ। सदाशिव राव कुछ शर्तों पर जावेद छोड़ कर चला गया। परन्तु ग्वालियर की महारानी अहिल्याबाई को जब यह सूचना मिली तो उसने बुलाजी सिंधिया के नेतृत्व में पाँच हजार सैनिकों को सदाशिव राव की मदद के लिए भेजा। इधर मालदास के नेतृत्व में महाराणा की सेना युद्ध के लिए तैयार थी। हरकिया खाल के मैदान में घमासान युद्ध हुआ। मालदास जी इस युद्ध में खेत रहे।

श्री धनराज सिंघी

वि. सं. १८४४ में जोधपुर के महाराजा विजयसिंह ने अजमेर को पुनः मरहठा सरदारों से जीत लिया। ओसवाल श्रेष्ठि धनराज सिंघी अजमेर के गवर्नर (शासक) बनाए गए। उन्होंने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अजमेर का बड़ा सुव्यवस्थित प्रबंध किया। चार वर्ष बाद मरहठों ने फिर मारवाड़ पर आक्रमण किया। मेड़ता और पाटण के युद्ध में मरहठों की विजय हुई। अजमेर महाराजा विजय सिंह के आधीन होने से अजमेर पर भी मरहठा सेना ने आक्रमण किया। अजमेर चारों ओर से घेर लिया गया। धनराज ने अनेक दिन तक बड़ी वीरता से शत्रु सेना का सामना किया। हार निश्चित थी। पाटण की पराजय के बाद जोधपुर से महाराजा ने सन्देश भिजवाया कि मरहठों को अजमेर सौंप कर जोधपुर चले आओ। परन्तु वीर शिरोमणि धनराज को यह गवारा न था। उन्होंने घोषणा की कि मरहठे मेरी मृत्यु पर ही अजमेर में प्रवेश कर सकते हैं। अन्ततः जब जूझना बेकार हो गया तो अपने हाथ की अंगूठी का हीरा खा कर उन्होंने आत्महत्या कर ली। इस तरह वीर धनराज सिंघी अपनी आन पर बलिदान हो गया।

मेहता अखेचन्द

जोधपुर की राजगद्दी पर वि.सं.१८५० में महाराजा भीमसिंह बिराजे। उनके कोई संतान न थी। भतीजे मान सिंह उनके एक मात्र उत्तराधिकारी थे। वे जालोर के शासक बनाए गए थे। महाराणा उनसे नाखुश थे। सं.१८५७ में महाराजा की सेना ने जालौर का किला घेर लिया। उस समय मानसिंह जी का साथ देने वालों में प्रमुख मेहता अखेचन्द जी थे। उन्होंने महाराजा की नाराजगी की परवाह न कर मान सिंह जी की सहायता की। जब अन्न और धन शेष हो गया तो गुप्त मार्गों से किलों में रसद और धन पहुँचाना अखेचन्द जी के ही बलबूते का काम था। इसी सहायता के बल पर मानसिंह टिके रह सके। जब १८६० में भीमसिंहजी का स्वर्गवास हुआ तो मानसिंह जी को जोधपुर की राजगद्दी पर बिठाने में अखेचन्द जी अग्रणी थे। महाराज ने उन्हें सिरोपाव व जागीर बख्शी। इसी तरह जयपुर और बीकानेर की फौजों ने जब जोधपुर दखल कर लिया और महाराजा का अधिकार मात्र किले पर रह गया तो एक बार फिर अखेचन्द जी ने आर्थिक सेवा की। महाराजा ने चार लाख रुपए का रुक्का एवं अन्य सम्मान दिये। जब संवत् १८६४ में अमीर खाँ ने महाराजा से २ लाख रुपये का हर्जाना मांगा तो महाराजा ने अखे-राज जी से ही सहायता लेकर उसे चुकता किया। कर्नल टाड ने इस विषय में लिखा है "अखेचन्द जी का सामर्थ्य बहुत बढ़ा हुआ था। दरबार को वे ही वे दिखते थे।" संवत् १८६६ में महाराजा ने आपकी सेवाओं के एवज में सिरोपांव व पालकी बख्शी।

मेहता रामसिंह

महाराणा हम्मीर को मेवाड़ की राजगद्दी पर बैठाने वाले मेहता जालसी जी का खानदान राज्य की सेवा में सदा तत्पर रहा। उनके पुत्र चीलजी मेहता बड़े पराक्रमी हुए। उन्हीं के नाम पर उनके वंशज चील मेहता कहलाऐ। इन्हीं के खानदान में १९वीं सदी में मेहता रामसिंह हुए। महाराणा भीम सिंह ने मेहता देवीचन्द की सलाह पर वि.सं.१८७५ में उन्हें अपना प्रधान नियुक्त किया। रामसिंह के प्रयत्नों से राज्य की आर्थिक स्थिति काफी सुधर गई। ब्रिटिश शासन की ओर से नियुक्त राजनैतिक एजेंट कप्तान काउ ने इनके शासन की प्रशंसा की है। संवत् १८८३ में महाराणा ने इनके सुप्रबंध से प्रसन्न होकर उन्हें जागीरें बख्शी। महाराणा भीमसिंह की मृत्यु

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के बाद महाराणा जवानसिंह राजगद्दी पर बैठे। उन्होंने रामसिंह से प्रधानगी छीन ली। जब उनसे राज्य शासन न संभला तो मेहता रामसिंह को फिर प्रधान बनाया गया। रामसिंह ने ब्रिटिश शासन से लिखा पढ़ी कर राज्य के लिए २ लाख रुपए की माफी प्राप्त की एवं अनेक पुराने विवाद समाप्त करवाए। संवत् १९०३ में महाराणा ने फिर षड़यंत्र का आरोप लगा कर उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली एवं मेवाड़ से निकाल दिया। बीकानेर नरेश सरदारसिंह ने आग्रह कर उन्हें बुलाना चाहा पर रामसिंह ने यह कह कर इन्कार कर दिया कि महाराणा किसी गलतफहमी के कारण उनसे अप्रसन्न हैं किन्तु कभी न कभी सच्चाई का पता चलने पर वे उन्हें फिर बुला लेंगे। और हुआ भी यही। महाराणा जवान सिंह के बाद महाराणा सरूपसिंह गद्दी पर बैठे। उन्होंने सच्चाई जान कर रामसिंह को बुलावा भेजा। परन्तु बुलावा पहुँचने से पहले ही उनका देहावसान हो गया।

मुणोत मेहता विजयसिंह

किशन गढ़ राज्य में मुहणोत वंशीय ओसवाल मुत्सद्दी अनेक वर्षों तक राज्य के दिवान रहे। दिवान मेहता मोखमसिंह के मंझले पुत्र विजयसिंह का जन्म संवत् १८६३ में हुआ। वे जोधपुर महाराजा की सेवा में रहे। उन्होंने अनेक विद्रोही ठाकुरों का दमन किया। संवत् १८८८ में ठाकुर जैत सिंह और शिवनाथ एवं संवत् १९०३ में कणवाई और धनकोई के विद्रोहियों को परास्त करने का श्रेय उन्हें ही जाता है। इसी समय आगरे की कैद से भागे हुए खूंखार डाकू डूंगरजी जुहारजी को पकड़ने के अभियान में वे अंग्रेज कप्तान केसल के दाहिने हाथ थे। केसल ने आपकी वीरता की खूब प्रशंसा की है। संवत् १९०४ में विजयसिंह जी उक्त डाकुओं के आश्रयदाता सीकर के ठाकुर को परास्त करने में कामयाब हुए। संवत् १९०८ में वे जोधपुर के दिवान नियुक्त हुए। राज्य की ओर से आपने अनेक लड़ाईयाँ लड़ी। संवत् १९२० में जोधपुर महाराजा ने उन्हें हाथी की सवारी, पालकी, सिरोपाव एवं जागीरें देकर सम्मानित किया। संवत् १९२८ में जब राजकुमार जोरावर सिंह ने कुछ ठाकुरों के बहकावे में आकर नागौर में बलवा किया तो विजयसिंह जी ने नागौर घेर लिया। राजकुमार को समझा बुझा कर शांत किया। संवत् १९३४ में ब्रिटिश सरकार ने उन्हें राय बहादुर की उपाधि दी। आप वैष्णव धर्मावलम्बी थे। संवत् १९३४ तक वे राज्य के दिवान बने रहे। आपने अनेक जनहितकारी कार्य किए। असहायों की मदद करने के लिए आप सदा तत्पर रहते थे। फतह सागर के जिर्णोद्धार का श्रेय आपको ही है। आपने रामानुज मन्दिर एवं बावड़ी का निर्माण कराया। संवत् १९४९ में इस नर श्रेष्ठ का देहावसान हुआ।

श्री गंगाराम कोठारी

नागौर के ओसवाल श्रेष्ठि गंगारामजी कोठारी इन्दौर के राजा तुकोजीराव के समय इन्दौर गए और वहाँ सेना में भर्ती हो गए। थोड़े ही समय में आप अपने शौर्य और बुद्धि कौशल से सेना नायक बन गए। महाराजा होल्कर के समय उन्होंने अनेक युद्धों में वीरता पूर्वक भाग लिया। वे जावरा के शासक बना दिए गए। राजा जसवंतराव होल्कर के समय रामपुरा भी उनके सुपुर्द कर दिया गया। वे हर लड़ाई में होल्कर नरेश के साथ रहते थे। उदयपुर पर चढ़ाई के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

समय गंगाराम जी बहुत बहादुरी से लड़े। आपकी सेवा से प्रसन्न होकर महाराजा ने आपको पालकी, छत्री, चँवर आदि का सम्मान बख्शा एवं जागीरें भेंट की। अंग्रेज इतिहासकारों ने उनकी वीरता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। आपके भाई शिवचन्द जी भी बड़े पराक्रमी थे। गंगाराम जी की मृत्यु के बाद उन्होंने रामपुरा, भानपुरा, मरोठ आदि का शासन संभाला। मीणों, सोधींयों एव पिंडरियों के उत्पात शांत कराने में उनका प्रमुख हाथ था। कर्नल टॉड ने उनकी वीरता की खूब प्रशंसा की है। उत्पातकारी उनके नाम से काँपते थे। होल्कर नरेश ने उन्हें जागीरें प्रदान की एवं छत्र पालकी चँवर आदि का सम्मान बख्शा। संवत् १९१४ में आपका देहांत हुआ। आपके पुत्र सांवतराम जी बड़े दयालु प्रकृति और कलात्मक अभिरुचि के थे। आपने सदा किसानों के हितों का समर्थन किया। आप भी उक्त प्रदेशों के शासक बने। प्रजा उन्हें पितृवत मानती थी। दूर-दूर के गायक, कवि एवं कलाकार आपके सामने अपनी कला का प्रदर्शन कर पुरस्कार पाते थे। संवत्२०१४ में जब आपका शरीरांत हुआ तो राज्य की प्रजा बिलख बिलख कर रोई।

श्री अमृतकुमार दूगड़

ओसवाल वंश वणिक जातियों में शुमार अवश्य हैं किन्तु अपने पुरखाओं के क्षात्र तेज को भूला नहीं है। जैन धर्म की अहिंसा वीरोचित भावनाओं की प्रेरक भी हो सकती है— यह वर्तमान युग के सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ओर भी सम्भव नहीं लगता। पर इसे सम्भव बनाया दिल्ली के श्री हीरालाल दूगड़ (शास्त्री) के सुपुत्र श्री अमृतकुमार दुगड़ ने। सन् १९४१ में जन्में अमृतकुमार स्वतंत्र भारत में युवा हुए। वे १८ वर्ष की आयु में ही भारतीय वायु सेना में भरती हो गए। जल्दी ही जौहर दिखाने का अवसर भी मिल गया। सन् १९६५ और १९७१ में पाकिस्तान ने जब भारत पर हमले किए तो अमृतकुमार भारतीय सेना के साथ मोर्चों पर लड़े। लद्दाख, जम्मू और पश्चिमोत्तर सीमा पर हुई घमासान लड़ाई में भारत को विजय श्री दिलाने में अमृतकुमार का भी यथोचित योगदान था। लद्दाख के पर्वतीय एवं बर्फीले स्थानों पर भी आप शुद्ध शाकाहारी बने रहे व मदिरा, धूम्रपान, मांसाहार को छूआ तक नहीं। कमांडिंग आफीसर आपके लिए यथोचित खानपान की सहर्ष व्यवस्था करते थे। १५ साल की सेवा के बाद आपने १९७४ में वायुसेना में पेंशन ग्रहण की। मिलिटरी के वातावरण में भी आपने अपने धार्मिक संस्कारों व नियमों का यथावत् पालन किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय

सप्तदश

ओसवालों की सहजातियाँ

महाजन जातियाँ

विक्रम संवत् १९५० में शाह शिवकरण रामरतन दरक ने पचास वर्षों (संवत् १८९८ से १९५०) के अनथक श्रम एवं शोध के बाद महेश्वरी जाति का इतिहास प्रकाशित किया। यह यति रामलाल जी द्वारा प्रकाशित 'महाजन वंश मुक्तावली' (संवत् १९६७) एवं यति श्रीपालजी रचित "जैन सम्प्रदाय शिक्षा" से निश्चय ही पूर्व प्रकाशित ग्रंथ है। यति श्रीपाल जी रचित 'जैन सम्प्रदाय शिक्षा' (संवत् १९६७) का पंजीयन संवत् १९२४ में हुआ था। अतः ओसवालों के इतिहास का वह प्रकाशन प्रथम ग्रंथ माना जाना चाहिए। किन्तु 'महेश्वरी कुल शुद्ध दर्पण' के लेखकानुसार उनका शोधकार्य संवत् १८९८ में ही शुरु हो गया था। अतः मूल पाठों के सन्दर्भ में इस ग्रंथ को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

क्षत्रियोत्पन्न जातियों के इतिहास पर सर्वप्रथम प्रकाश डालने का श्रेय 'माहेश्वरी कुल शुद्ध दर्पण' को ही है। "आभू (आबू) पर्वत पर ऋषि वशिष्ठ द्वारा यज्ञ करने एवं बौद्ध या जैन बन

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

गए क्षत्रियों को पुनः उपदेश देकर वेदोक्त धर्म में प्रवृत्त करने की" कथा सर्व प्रथम इसी ग्रंथ से उपलब्ध होती है। लेखक के अनुसार "अग्निकुंड में से निकाल कर वेदोपनिषदों के मंत्र देकर पुन संस्कारित कर जिन्हें क्षत्रिय-धर्म धारण करवाया— उनकी चार नई क्षत्रिय जातियाँ हुईं— पड़िहार, सौलंखी, पवाँर (परमार) और चौहान।

इस तरह मूलतः इक्ष्वाकु वंशीय इन क्षत्रियों के वंश में एक "वैश्य धन्वा" बड़ा विवेकी और चतुर हुआ। वह संसार-व्यवहार में प्रवीण एवं राज-कार्य में विचक्षण था। इसे राजा ने 'महाजन' पद दिया। इसी के वंशजों से कालातंर में साढ़े-बारह 'महाजन' न्यातें हुई। आगे चलकर ये और विभक्त हो गए। एक समय 'खंडेला' नगर के खण्ड प्रस्थ राजा ने एक यज्ञ किया एवं अन्य प्रदेशों की सभी न्यातों को न्योता भेजा। खंडेला में मिली 'वैश्य' कर्मियों की ये साढ़े बारह न्यातें थी—

१. श्रीमाल नगर के 'श्रीमाल'
२. ओसिया के 'ओसवाल'
३. मेड़ता के 'मेड़तवाल'
४. जायल के 'जायसवाल'
५. बघेरा के 'बघेरवाल'
६. पाली के 'पल्लीवाल'
७. खंडेला के 'खण्डेलवाल'
८. डीडवाणा के 'डीडू महेश्वरी'
९. पोकर जी के पोकरा
१०. टीटौरगढ़ के टीटोड़ा
११. खाटूगढ़ के काठाड़ा और
१२. राजपुर के राजपुरा।

मालवा (मध्यप्रदेश) में इन बारह न्यातों के नामों में कुछ भेद किया जाता है— वहाँ 'मेड़-तवाल' की जगह अग्रोहा के 'अगरवाल' एवं क्रमशः पोकरा, टीटोड़ा, काठाड़ा एवं राजपुरा की जगह पौरवाल, श्रीश्रीमाल, हूमड़ एवं चोरड़िया माने जाते हैं। गोड़वाड़ एवं गुजरात के प्रदेशों में वैश्यों की बारह न्यातों में 'अग्रवाल' की जगह चित्रवाल नाम आता है एवं जयसवाल, हूमड़ व चोरड़िया की जगह क्रमशः मेड़तवाल, ठंडवाल और हसौरा गिने जाते हैं।

महाजन वंश मुक्तावली में उक्त बारह न्यातों को क्षत्रियोंत्पन्न 'महाजन' जातियाँ माना है। यति रामलाल जी के अनुसार 'खंडेला में जो सम्मेलन राजा खण्डप्रस्थ के संयोजन से हुआ उसमें यह तय हुआ कि "शादी विवाह अपनी-अपनी न्यात में हो पर रोटी व्यवहार में बारहों न्यातें शामिल हैं।"

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कालान्तर में जब इनकी ओर विभक्तियाँ हुई तो महाजन जातियों की कुल संख्या ८४ मानी जाने लगी। एक जनश्रुति के अनुसार "पद्मावती नगरीं में पौरवाल श्रेष्ठियों ने एक वैश्य सम्मेलन में ८४ न्यातों के महाजनों को न्योता भेजा।" इन ८४ न्यातों के नामों में प्रदेशानुसार भिन्नता पाई जाती है। गौड़वाड़ देश में मान्य इन ८४ न्यातों में प्रमुख हैं— श्रीमाल, श्रीश्रीमाल, अगरवाल, ओसवाल, कांकरिया, खण्डेलवाल, चीतोड़ा, चोरड़िया, जायसवाल, डूसर, धाकड़, पलीवाल, महेश्वरी, पोरवार, बघेरवाल, माथुरिया, मोढ़, लवेचू, हूमड़, हरसौरा, मेड़तवाल, राजपुरा आदि।

मध्यप्रदेश, गुजरात एवं दक्षिण के प्रांतों में उक्त ८४ न्यातों के नामों में काफी भेद हैं। इसका एक कारण तो भाषा की भिन्नता ही है जिससे कितने ही नामों के रूप बदल जाते हैं। ऐसा लगता है कि मूल १२ न्यातों की कालांतर में बनी मुख्य खांपो को भी इन ८४ न्यातों में गिन लिया गया है। माहेश्वरी कुल शुद्ध दर्पण, महाजन वंश मुक्तावली, जैन सम्प्रदाय शिक्षा एवं जैन जाति महोदय आदि ग्रंथों में विस्तार से इन न्यातों की प्रदेशानुसार नामावलियाँ दी गई हैं।

अस्तु, मूलतः क्षत्रियों से बनी ओसवालों की चन्द मुख्य सहजातियों का विश्लेषण यहाँ अभिप्रेय है।

पोरवाल

सामवेद में पाच्य नामक गायन शाखा के प्रस्तोता हिरण्यनाम के 'पुरुवार' वंशीय कृत नामक शिष्य का उल्लेख है। इससे इस जाति की प्राचीनता स्वयं सिद्ध है। इतिहासकारों के अनुसार 'पोरवाल' संज्ञा प्राचीन काल में क्षत्रिय गण-नायक की थी, कालान्तर में वे वैश्य हो गये।

प्राचीनतम् शास्त्रीय मान्यता के अनुसार पद्मावती नगरी (पारेवा) में भगवान महावीर के पंचम पट्टधर यशोभद्र सूरि ने विक्रम पूर्व २७५ वर्षे राजपूतों के सवालाख परिवारों को उपदेश देकर जैन धर्म अंगीकार कराया। वे लोग पारेवा वासी होने से पोरवाल कहलाए। विक्रम पूर्व ३२१ में सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य द्वारा भिन्नमाल से पोरवालों को मगध ले जाकर उन्हें अमात्य, दण्डनायक एवं दुर्गनायक पदों पर नियुक्त करने के ऐतिहासिक उल्लेख मिलते हैं। सम्राट अशोक की पट्टमहिषी 'महादेवी' विदिशा के एक पोरवाल श्रेष्ठिकी कन्या थी। उसी की प्रेरणा से अशोक हिंसा से विरत हुए। महेन्द्र एवं संघमित्रा उसी की सन्तानें थी। सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की सभा के नव रत्नों में वैद्यराज धन्वन्तरी पोरवाल थे। सम्राट ने मधुमती नगर का समुद्र मंडल पोरवाल श्रेष्ठि भावड़ शाह के सुपुर्द कर रखा था। इस कुल के श्री जावड़ शाह ने विक्रम संवत् १०८ में अरबों रुपए खर्च कर अनेक जिन मन्दिरों का निर्माण कराया, भग्न मन्दिरों का जीर्णोद्धार कराया एवं संघ समायोजन किए। शत्रुञ्जय तीर्थ का उद्धार इन्हीं जावड़ शाह ने कराया। श्री समय सुन्दर जी कृत 'शत्रुञ्जय रास' में पोरवाल श्रेष्ठि जावड़ शाह को तीर्थ का तेरहवाँ उद्धारक माना गया है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एक अन्य अनुश्रुति के अनुसार प्राग्वाटपुर से पद्मावती नगरी में आकर बसे ब्राह्मण प्राग्वाट कहलाते थे। भगवान पार्श्वनाथ के पांचवे पट्टधर श्री स्वयंप्रभ सूरि ने उपदेश देकर अन्यान्य क्षत्रियों के साथ उनके गुरु प्राग्वाट ब्राह्मणों को भी जैन धर्म अंगीकार करवाया। उनके वंशज 'प्राग्वाट' कहलाए जो कालांतर में पोरवाड़ (पोरवाल) में रूपान्तरित हो गया।

कुछ इतिहास कार श्री हरिभद्र सूरि (विक्रम संवत् ५८५) को भी इस जाति का उद्बोधक एवं संस्थापक मानते हैं। हरिभद्र सूरि द्वारा उद्बोधित इस गोत्र की तीन प्रमुख शाखाओं— शुद्धा, सोरठीया, कपोल का उल्लेख शास्त्रों में मिलता है।

पंडित हीरालाल हंसराज लिखित प्रसिद्ध गुजराती ग्रंथ 'जैन गोत्र संग्रह' के अनुसार जैनाचार्य उदयप्रभसूरिने विक्रम संवत् ७९५ में भिन्नमाल की प्राग्वाट जाति के आठ ब्राह्मण श्रेष्ठियों को उपदेश देकर जैन धर्म अंगीकार कराया। उनके वंशज 'प्राग्वाट' (पोरवाड़) कहलाए। इनके आठ मुख्य गोत्र थे— काश्यप पुष्पायन, आग्नेय, बच्छस, पारायण, कारिस, वैश्यक, माढ़र। इनके अतिरिक्त जिन अन्य गोत्रों का उल्लेख शास्त्रों में उपलब्ध हैं वे हैं— झूलर, मंहलीया, लींबा, मांडलिया, कुणगिरा, पटेल, नखत, लोलाणीया, पोरुआ आदि।

इस जाति का प्राचीनतम शिलालेख विक्रम संवत् ७६७ का इन्दरगढ़ में प्राप्त हुआ है जिसके लेखानुसार प्राग्वाट जाति के कुमार श्रेष्ठि की देडल्लिका, तक्षुल्लिका एवं भोगिनिका नाम की पुत्रियों द्वारा वहाँ के गुहेश्वर मन्दिर को दान देने का उल्लेख है (एपिग्राफिका इन्डिका-३२)।

विक्रम की आठवीं शदी में प्राग्वाट वीर जिन्नक एवं उनके पुत्र लेहरी हुए जो पाटण के राजा वनराज चावडा के क्रमशः महामात्य और सेनापति रहे। उन्हीं के कुटुम्ब में विक्रम की ग्यारहवी शदी में प्रसिद्ध प्राग्वाट श्रेष्ठि विमल शाह हुए। इतिहासकारों के अनुसार विमलकुमार पाटण के सोलंकी क्षत्रिय राजा चौलुक्यराज भीमदेव के मंत्रीश्वर प्राग्वाट श्रेष्ठि वीर के पुत्र थे। विमलकुमार ने चन्द्रावती के परमार वंशीय राजा धन्धक को हराया था। कालान्तर में राजा भीमदेव ने उन्हें अपना मंत्री नियुक्त किया। विविध तीर्थ कल्प के अनुसार विमल शाह परमार नरेश के दण्डनायक थे। इन्होने आचार्य वर्धमान सूरि के उपदेश से प्रभावित होकर संवत् १०८८ में आबू पर्वत स्थित देलवाड़ा में आदिनाथ भगवान के मन्दिर एवं विमलवसहि प्रासाद का निर्माण करवाया जिसपर १८ करोड़ ५३ लाख रूपये खर्च हुए। शिल्प की दृष्टि से यह मन्दिर अद्वितीय है। मन्दिर के सम्मुख हस्तिशाला बनी हुई है जिसके द्वार पर अश्वारूढ़ विमलशाह की मूर्ति स्थापित है। महादानी विमलशाह ने कुंभारिया जी में भी जैन मन्दिरों का निर्माण कराया। इनकी प्रशस्ति में अनेक महाकाव्य एवं प्रबंध रचे गए।

विक्रम की तेरहवी शदी में प्राग्वाट कुल में दो अनन्य वीरों— वस्तुपाल एवं तेजपाल का जन्म हुआ। अनुश्रुति के अनुसार ये अश्वराज की वीर पत्नि कुमार देवी के पुत्र थे। कथा यह भी है कि आचार्य हेमचन्द्र की भविष्यवाणी पर अश्वराज ने विधवा कुमार देवी का अपहरण कर उससे विवाह किया। उनके दो पुत्र हुए। बड़े होकर दोनो भाई राजनीति में प्रकांड विद्वान,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अद्भुत पराक्रमी, सरस्वती के उपासक और धर्म प्रेमी निकले। गुजरात के धोलका प्रदेश के बघेल वंशीय राजा वीरधवल ने वस्तुपाल और तेजपाल को महामात्य (सेनापति) नियुक्त किया। विक्रम संवत् १२६९ से ७६ तक राज्य पर देहली के बादशाह अल्तमश का दबाव रहा। दोनों भाईयों ने प्रदेश के हिन्दू राजाओं को संगठित कर राज्य पर सभी आक्रमण बेकार कर दिए। इन दोनों भाईयों ने करोड़ों की सम्पत्ति अर्जित की एवं धर्म की प्रभावना में खर्च की। आबू पर्वत पर देलवाड़ा का प्रसिद्ध लूणावसहि नेमिनाथ मन्दिर विक्रम संवत् १२८८ में इन्हीं भाईयों द्वारा बनवाया गया था। इन्होंने अनेक वैष्णव मन्दिरों का भी जीर्णोद्धार कराया।

महाराणा हम्मीर के सेन्याधिकारी कालूशाह पोरवाल वंश के थे। उन्होंने संवत् १३५७ मे बादशाह अलाउद्दीन की सेना से लोहा लिया एवं सेनापति समरखाँ को मार कर विजय श्री प्राप्त की। परन्तु दूसरे आक्रमण में यह वीर श्रेष्ठि खेत रहा।

जैन तीर्थों में अद्वितीय रणकपुर के मंदिर बनवाने का श्रेय भी घाणेराव के पोरवाड़ श्रेष्ठि धन्ना शाह को है। उन्होंने विक्रम संवत् १४३३ में १८ सहस्त्र स्वर्ण सिक्कों की लागत से ४८ हजार वर्ग फीट में फैले आदिनाथ भगवान के इस अपूर्व मंदिर का निर्माण कराया। एक अन्य उल्लेख के अनुसार उसका निर्माण संवत् १४४९ में हुआ एवं निर्माण में कुल ९९ लाख रुपये खर्च हुए।

पोरवाड़ (पोरवाल) जाति २४ गोत्रों में विभक्त है। दक्षिणी मारवाड़ (गोड़वाड़) गुजरात एवं मध्य प्रदेश में इनकी घनी बस्तियाँ है। इनमें भी दस्सा-बीसा हैं। ये अधिकाशं जैन धर्मावलम्बी हैं जिन्हें जांगड़ा कहा जाता है। रामपुरा, मन्दसौर, मालवा, होल्कर प्रदेशों में वैष्णव धर्मावलम्बी पोरवाल अधिक हैं। ओसवालों के साथ इनके विवाह सम्बन्ध नहीं होते किन्तु भोजन-व्यवहार सदा ही रहा है।

माहेश्वरी

जयपुर जिला स्थित खंडेला ग्राम के राजा खड़गल सेन के पुत्र सुजान कुँवर माहेश्वरी समाज के आदि पुरुष माने जाते हैं। कहते हैं सुजानकुँवर अपने ७२ साथियों (उमरावों) के साथ आखेट पर निकले। रास्ते में उन्होंने ब्राह्मण पुरोहितों, ऋषियों को बलि देते देखा। इससे उनको क्रोध चढ़ आया और उन्होंने यज्ञों को नष्ट कर दिया। ब्राह्मण भी कुपित हुए। उन्होंने सबको श्राप देकर पाषाण बना दिया। जब राजा को यह खबर लगी तो उन्होंने इस दुखः में प्राण त्याग दिए। किन्तु सुजान कुवँर की पत्नि युवरानी चन्द्रावती अत्यंत विदुषी थी। उन्होंने जाकर ब्रह्मऋषियों से युवराज एवं अन्य उमरावों की मुक्ति की प्रार्थना की। इस पर ऋषियों ने भगवान महेश की उपासना करने को कहा। युवरानी महेश एवं पार्वती की उपासना में जुट गई। अन्ततः भगवान महेश ने प्रसन्न होकर पाषाणों में प्राण संचार किया। महेश की कृपा से आभारी सुजान कुवँर एवं बहत्तर उमरावों के पारिवारिक महेश्वरी कहलाने लगे। कहते हैं सभी ने समीपस्थ कुंड में स्नान किया एवं शस्त्रों को तिलाञ्जली दी। तब से उन्होंने तराजू धारण किया एवं वणिक हो गए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

"माहेश्वरी कुल शुद्ध दर्पण" के लेखक श्री शिवचरण दरक के अनुसार उक्त घटना विक्रम की आठवीं/दसवीं शदी के मध्य हुई। प्रसिद्ध पुरात्ववेत्ता "नाहटा बंधु" (बीकानेर के श्री अगरचन्द जी भंवरलाल जी नाहटा) भी महेश्वरी जाति की उत्पति दसवीं शताब्दी के आसपास मानते हैं। किंवदन्ती यह भी है कि महेश्वरी जाति महाभारत काल में यानि ४८०० वर्ष पूर्व उत्पन्न हुई थी। सूरजमल मुकुन्दलाल जागा की बही में कुल की उत्पत्ति ४७०० वर्ष पूर्व हुई दर्ज है। बरसल पुर के मोतीराम गंगाराम की बही के अनुसार इस जाति की उत्पत्ति संवत् ३७७ में हुई।

श्री सुखसम्पत राज जी एवं अन्य भंडारी बंधुओं द्वारा लिखित 'महेश्वरी समाज का इतिहास' (१९४०) में भंडारी जी ने महेश्वरी जाति की उत्पत्ति चौहान कुल के क्षत्रियों से मानी है। भंडारी जी ने महेश्वरी जाति की उत्पत्ति सम्बन्धी कथानक यति श्रीपाल जी रचित जैन सम्प्रदाय शिक्षा (१९१०) ग्रंथ से उद्धृत किया प्रतीत होती है। इस ग्रन्थ में दिए विवरण के अनुसार खंडेला नगर में सूर्यवंशी चौहान राजा खड़गल सेन राज्य करते थे। उनके कोई संतान न थी। अनेक ब्राह्मण पंडितों ने उन्हें शिव की आराधना करने की सलाह दी। राजा ने शिव और शक्ति की मनोयोग पूर्वक उपासना की। उन्हें पुत्र प्राप्ति का वरदान मिला किन्तु पुत्र के सोलह वर्ष तक उत्तर दिशा में न जाने एवं सूर्य कुंड में स्नान न करने की चेतावनी दी। राजा के चौबीस रानियाँ थी। उनमें से रानी चम्पावती की कुक्षि से सुजान कुवँर का जन्म हुआ। उस समय जैन एवं बौद्ध धर्म का प्रचार जोरों पर था। सुजान कुवँर बड़े होकर बौद्ध हो गये। एकदा वे उक्त चेतावनी का उलंघन कर बहत्तर उमरावों के साथ उत्तर दिशा में आखेट के लिए गये। लोहार्गल के सूर्यकुंड पर ऋषि हवन कर रहे थे। सुजान कुवँर ने हवन में बाधा दी, इससे ऋषियों ने कुपुत होकर श्राप बल से उन्हें पाषाणवत कर दिया। राजा पुत्र वियोग में स्वर्ग सिधार गये, १६ रानियाँ उनके साथ-साथ सती हो गयी। किन्तु कुवँरानी बहत्तर उमरावों की पत्नियों के साथ ऋषियों के समक्ष गई एवं क्षमा याचना की। उन्होंने योग साधने की सलाह दी। योग साधना से शिव पार्वती प्रकट हुए। पार्वती ने करुणा कर सब कुमारों को श्राप मुक्त करवा दिया। सुजान कुवँर भगवती पार्वती के दर्शन कर उनके रुप लावण्य से मोहित हो गए। पार्वती ने सुजान कुवँर के वंशजों तक को "मांगते रहने" का श्राप दे दिया। भगवान शिव के आदेश से सुजान कुवँर एवं बहत्तर उमरावों ने क्षत्रिय कर्म छोड़ वैश्य कर्म अपना लिया एवं माहेश्वर-वैश्य कहलाने लगे।

ऋषि जैमिनी कौशिक बरुआ ने महेश्वरी जाति की उत्पत्ति सम्बन्धी उक्त कथाओं को कपोल कल्पित, अशुद्ध एवं बुद्धि का प्रमाद माना है। भंडारी बंधुओं ने तीसरी शदी में महेश्वरी-उत्पत्ति को भ्रमपूर्ण ठहराते हुए यह मत व्यक्त किया है कि हिन्दू धर्म उन्नायक शंकराचार्य का समय विक्रम की आठवीं/नवमीं शदी में माना जाता है। उनके प्रभाव से अनेक जैन व बौद्ध धर्म परिवर्तन कर शैव बनाए गए। अतः शैव धर्मावलम्बी महेश्वरी जाति की उत्पत्ति आठवीं शदी के बाद ही हुई होगी। बरुआ जी के अनुसार यह बात ऐतिहासिक तथ्यों से कोसों दूर हैं। वे मानते हैं कि महेश्वरी जाति का उद्भव तो तीसरी शदी में हीं हुआ, आठवीं शदी में कुछ राजपूतों का जाति में प्रवेश सम्भव है हुआ हो, पर इससे वे महेश्वरी जाति के जनक नहीं है। यह युद्धोंपजीवी जीवन से पलायन एवं मुस्लिम आक्रमणों की परिणति भी हो सकता है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उत्पत्ति कथा एवं काल के सम्बन्ध में शंका एवं विवाद शोध का विषय है। परन्तु कुछ सर्वमान्य तथ्य ध्यान देने योग्य हैं। प्रथमतः महेश्वरी क्षत्रियों की सन्तान हैं। द्वितीयतः अन्य हिन्दू सम्प्रदायों के विपरीत वे यज्ञ विरोधी हैं। तृतीयतः वे शस्त्र त्याग कर अहिंसक बने। चतुर्थतः उन्होंने तराजू ग्रहण किया और वणिक बने। ये चारों ही बातें ओसवालों के उत्पत्ति क्रम से मिलती हैं। ओसवालों का शैव से अधिकांशतः जैनधर्मावलम्बी होना और महेश्वरियों का शैव या वैष्णव धर्मी होना ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में उन्हें एक दूसरे के निकट लाता है। प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता मुनि जिन विजयजी ने तात्कालीन समाज व्यवस्था पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि उस समय अनेक प्रतिष्ठित कुटुम्बों में जैन और शैव दोनों धर्मों का पालन किया जाता था। किसी गृहस्थी का पितृकुल जैन था तो मातृकुल शैव और किसी का मातृकुल जैन था तो पितृकुल शैव। इस तरह वैश्य जाति के कुलों में प्रायः दोनो धर्मों के अनुयायी थे। शैव एवं जैनों की कोई अलग-अलग समाज रचना नहीं थी। दोनो के सामाजिक विधि विधान, पूजा-अर्चना, आदि ब्राह्मणों द्वारा ही सम्पन्न कराए जाते थे एवं दोनो की कुल देवी भी महिषासुर मर्दिनी एक ही थी।

एक स्रोत से निसृत दोनों जातियों में पीढ़ियों तक आवागमन चलता रहा। अनेक महेश्वरी गोत्र समय-समय पर जैन धर्म ग्रहण कर ओसवाल जाति में सम्मिलित होते रहे। बारहवीं शदी में मूंदड़ा गोत्रीय सेठ हाथी शाह एवं उनके पुत्र लूणाजी से ओसवालों का लूणिया गोत्र बना। राठी गोत्रीय भाभू जी के वंशजों से ओसवालों का भाभू गोत्र बना। इस तरह के अनेक अन्य उदाहरण ग्रंथ के प्रथम खण्ड के पंचम अध्ययाय 'गोत्र विकास' में दिए जा चुके है। इन सबके विपरीत चोपड़ा गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठि धर्मपाल के वैष्णव धर्म अंगीकर कर लेने से महेश्वरी जातीय 'मंत्री' गोत्र की उत्पत्ति का उल्लेख भी शिवकरण रामरतन दरक ने अपने ग्रंथ "महेश्वरी कुल शुद्व दर्पण" (इतिहास कल्प द्रुम) में किया है।

महेश्वरी एवं ओसवालों के अनेक गोत्रों के समान नाम करण उनके परस्पर सौहार्द्र एवं सम्बन्ध की कहानी कहते है। गदइया, गेलड़ा, गट्टाणी, खटवड़ पूंगलिया, पटवा, सुखानी, गाँधी, सिंगी, सोनी, कोठारी, नौलखा, नागौरी, चौधरी, फोफलिया, भंडारी, भंसाली, भूतड़ा, मंडोवरा, घीया मोजी, सेठ, मूथा, सेठी आदि गोत्र दोनो ही जातियों में पाए जाते है।

खंडेला से जो लोग डीडवाना जाकर बस गए वे डीडू महेश्वरी कहलाने लगे। जैसलमेर वाले जेसलमेरिया और इसी प्रकार कालांतर में बोहरा, कोलवार, धाकड़ गुजराती, कच्छी, पंजाबी, मालवी, मेवाड़ी महेश्वरी बने। यति श्रीपाल जी के अनुसार महेश्वरियों की करीब ७५० खांपे है।

प्रसिद्ध गांधी वादी देशभक्त श्री कृष्णदास जाजू एवं उद्योगपति श्री घनश्याम दास बिड़ला के राष्ट्र-विकास में अमूल्य अवदान से महेश्वरी जाति गौरवान्वित हुई है।

अग्रवाल

हिस्सार से करीब २२ किलोमीटर पर 'अग्रोहा' नाम का एक गाँव है। उसके उत्तर पश्चिम में ६५० एकड़ भूमि घेरे विशद प्राचीन खंडहर है। अनेक छोटे बड़े टीलों के उत्खनन से वहाँ

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एक प्राचीन सभ्यता के प्रतीक चिन्ह उभर आए हैं। वहाँ प्राप्त मुद्राओं पर 'अगोदक' नाम मिलता है। पुरातत्व एवं मुद्रा विशेषज्ञों ने इनका समय ईसवी पूर्व २०० माना है। प्रसिद्ध इतिहासकार डा. बर्नेट के अनुसार यह नगर ईसा पूर्व पांचवी/छठीं शताब्दी में बसा होगा। यह नगर 'अग्र' नामक राजा या जाति ने बसाया होगा। यूनानी इतिहासकारों के अनुसार सिकन्दर जब भारत से वापिस लौट रहा था तो मार्ग में 'अगल्लसोई गण' की सेना से उसकी मुठभेड़ हुई। उन्होंने सिकन्दर के छक्के छुड़ा दिए पर अन्ततः पराजित हुए। अगल्लसोई गण के बीस हजार आबादी वाले इस नगर के लोगों ने स्वयं अपने घरों में आग लगा दी, स्त्रियां और नन्हें बच्चें जल कर मर गए, ताकि उन्हें यूनानी दासता न भोगनी पड़े।

प्रचलित जनश्रुतियों के अनुसार यही 'अग्रोहा' अग्रवाल जाति की जन्मभूमि है एवं महाराजा अग्रसेन इनके पूर्व पुरुष। 'महेश्वरी कुल शुद्ध दर्पण' के अनुसार राज्यऋषि वंश के 'धनपाल' नामक राजा बड़े प्रतापी हुए। उनकी पांचवी पीढ़ी में महीधर के पुत्र अग्रसेन हुए। इन्होने 'अग्रोहा' नगर बसाया। अग्रसेन ने अठारह विवाह किए, सत्रह नाग कन्याओं से एवं एक अप्सरा से। राजा ने सत्रह पूर्ण और एक अर्धपूर्ण यज्ञ भी किये जिसके फलस्वरूप उन्हें पुत्र प्राप्त हुए। इन्हीं के वंशजों से अग्रवालों के साढ़े सत्रह गोत्रों की स्थापना हुई। इनकी कुलदेवी 'महालक्ष्मी' है। यह घटना ग्रंथ के अनुसार त्रेतायुग के प्रथम चरण की है। अग्रसेन के पौत्र दिवाकर ने वैष्णव धर्म छोड़ कर जैन धर्म अंगीकार किया। इस तरह अग्रवालों में वैष्णव और जैन दोनों है।

यति रामलाल जी ने अपने ग्रंथ महाजन वंश मुक्तावली में महीधर को रावण का सेनापति/सामंत बताया है " जो विभीषण के साथ अयोध्या आ गया। अनेक पीढ़ियों बाद महीधर के कुल वाले राजा हो गए। वे जैन धर्म छोड़कर वैदिक धर्म मानने लगे। इसी कुल में आग्रायण (अग्रसेन) हुए जिन्होने हांसी-हिसार के पास अग्रोहा नगर बसाया। यह जमाना विक्रम राजा के कुछ पहले का था। इस वक्त वैताढ़ पर्वत पर इन्द्र वंशी राजा सुरेन्द्र का शासन था। दक्षिणी प्रदेश के कोल्हापुर नगर में नागवंशी राजा अभंग सेन राज्य करते थे। उनकी पुत्रियों की सुन्दरता का बखान चारों दिशाओं में फैल रहा था। राजा सुरेन्द्र ने अभंगसेन की पुत्री से विवाह करना चाहा। अभंग सेन ने कहला भेजा—पुत्रियां अग्रसेन को दे दी। सुरेन्द्र अग्रसेन पर चढ़ आया। अग्रसेन भाग कर काशी गया। वहाँ महालक्ष्मी मंत्र की साधना की। शक्ति प्राप्त कर उन्होंने अग्रोहा फिर से जीता एवं कोल्हापुर जाकर नाग कन्याओं से विवाह किया। तदनन्तर अश्वमेध यज्ञ किया। उन्हें सतरह पुत्रों की प्राप्ति हुई जिनके वंशज अग्रवाल कहलाए एवं उनके सतरह गोत्र हुए। लोहाचार्य के उपदेश से इन्होनें हिंसा का त्याग कर जैनधर्म अंगीकार किया।"

हिन्दी साहित्य के प्रेरणा स्रोत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जो स्वयं अग्रवाल थे ने भी "अग्रवालों की उत्पत्ति" (श्री वेकट्श्वर प्रेस बम्बई से संवत् १९५० में प्रकाशित) नामक छोटे से ग्रन्थ में उक्त कथानकों से मिलता जुलता ही उत्पत्ति—कथानक दिया है। उनके अनुसार राजा वल्लभ के पुत्र अग्रनाथ (अग्रसेन) बड़े प्रतापी थे। उन्होंने दक्षिण देश में प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। इन्हीं दिनों नागलोक के राजा अपनी कन्या माधवी को लेकर भूलोक में आए। स्वंय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इन्द्र इस कन्या के रुप लावण्य पर मोहित हो गये। परन्तु नाग राजा ने उसका विवाह अग्र नाथ से कर दिया। यही माधवी (नागकन्या) सब अग्रवालों की जननी है। इसीलिए अग्रवाल सर्पों की पूजा करते है। अग्र राजा को देवी महालक्ष्मी का वरदान मिला था। इसी से वह अग्रवालों की कुल देवी कही जाती है। अग्र राजा ने अपना नया राज्य पंजाब की नदियों और गंगा यमुना के बीच मैदान में बसाया और अग्रोहा को अपनी राजधानी बनाया। इनके सत्रह रानियां और एक उपरानी थी जिनकी संतानों से साढ़े सत्रह गोत्र बने—ये सब अग्रवाल कहलाये। इनकी मुख्य बस्तियां है आगरा, दिल्ली, गुड़गाँव, मेरठ, रोहतक, हासी, पानीपत, करनाल, कांगड़ा, मंडी गढ़वाल, नाभा, नारलोई आदि।

लगता है उक्त सभी कथाओं का मुख्य स्रोत प्रचलित जनश्रुतियां है। प्रतीकों के विश्लेषण से जो सर्वमान्य तथ्य उभरते है उनका सार यह है कि अग्रवालों के मूल पूर्वज क्षत्रिय थे। नागवंशी क्षत्रियों का मूल स्थान तक्षशिला था। अग्रवालों के जनक महाराजा अग्र थे जिन्होंने नागवंशी कन्या से विवाह किया। उन्होने अग्रोहा बसाया। उनकी सन्तानें अग्रवाल कहलाई एवं उनके अठारह गोत्र बने।

प्रसिद्ध इतिहास ग्रंथ "भगवान पार्श्वनात की परम्परा का इतिहास" में जैन पट्टावलियों के उद्धरण से इस तथ्य की पुष्टि की गई है कि जैन आचार्य लोहिताचार्य ने अग्रवालों और उनके राजा दिवाकर को जैन धर्म अंगीकार करवाया। वल्लभी वाचना प्रमुख देवर्धिगणी के अग्रज लोहिताचार्य का समय विक्रम संवत् ४८० माना जाता है। अग्रवालों के गोयल, गर्ग, सिंघल, बंसल आदि गोत्रों के अभिलेख उपलब्ध हैं।

श्री बालचन्द मोदी ने "अग्रवाल इतिहास परिचय" में उत्पत्ति के अन्य स्रोत भी दिए है। सम्भवतः 'अगर' बेचने वाले वैश्य 'अगरवाल' कहलाने लगे या फिर अग्रोहा के निवासी होने के कारण ही उन्हें लोग अग्रवाल कहने लगे। मूलतः क्षत्रिय होकर भी वैश्य कर्म अपना लेने के कारण की मीमांसा करते हुए मोदी जी का कहना है कि सम्भवतः यज्ञों में दी जाने वाली पशु बलि और हिंसा से उत्पन्न ग्लानि के फलस्वंरुप अग्रवालों ने हिंसा त्याग कर वैश्य कर्म अपना लिया। मोदी जी मानते है कि जैन धर्म के प्रभाव में अग्रवाल जैन बने हों—यह संभव है। कविवर जगन्नाथदास रत्नाकर के अनुसार 'सेना के अग्र भाग के रक्षक' होने से अग्रवाल शब्द बना है। भारतीय नृवंश पर वृहद् अनुसंधान कर्त्ता तात्कालीन सेन्सस कमिश्नर कर्नल ब्रुक का मत है कि 'अग्र' नामक सुगन्धित लकड़ी का व्यापार करने से ये अग्रवाल कहलाए। एग्गलिंक ने 'एपिग्राफिया इण्डिका' में अग्रवालों का सम्बध आगरा से जोड़ा है। मौनियर विलियम के अनुसार अग्रोहा निवासी होने से अग्रवाल शब्द बना है।

सर हेनरी इलियट के अनुसार मुस्लिम आक्रांता शहाबुद्दीन ने विक्रम संवत् १०५४ के आसपास अगरोहा पर चढ़ाई कर नगर का विध्वंश कर दिया तो वहाँ के निवासी भाग कर मारवाड़ एवं पूर्वी देशों में जा बसे। यह भी एक ऐतिहासिक तथ्य है कि अगरोहा के विध्वंसक मुस्लिम आक्रांता ही थे। श्री अयोध्याप्रसाद गोयलीय (जैन वीरों का इतिहास) के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अनुसार विक्रम संवत् ७७९ में अरब देश सीरिया के शासक खलीफा वलीद की आज्ञा से मुहम्मद अब्दुल कासिम ने अग्रोहे पर आक्रमण किया। अग्रवाल स्वधर्म रक्षार्थ बड़ी वीरता से लड़े। लगभग चालीस हजार अग्रोहा वासी हताहत हुए एवं बारह हजार से अधिक नारियों ने शील रक्षार्थ अग्नि में प्रवेश किया।

प्रसिद्ध मुस्लिम इतिहासकारों (सिराज और बरनी) के अनुसार चौहदवीं शदी में अग्रोहा एक समृद्ध नगर था। इसके बाद इसका विनाश हुआ। मुस्लिम यात्री तवारीख कार इब्नबतूता के अनुसार मुस्लिम बादशाह फिरोजशाह तुगलक ने अग्रोहा के समस्त मन्दिरों का विध्वंश कर वहाँ मस्जिदें बनवा दी। इतना तो साफ है कि इस नगर ने बड़े उतार चढ़ाव देखे। विध्वंस और निर्माण इसकी नियति रहा है। वर्तमान खण्डहरों में सबसे उँचे टीले पर पटियाला के महाराजा अमरसिंह (संवत् १८२२-१८३८) के दीवान नन्नूमल अग्रवाल द्वारा निर्मित दुर्ग के अवशेष अब भी देखे जा सकते हैं।

अग्रवालों के अठारह गोत्रों के नाम हैं— गर्ग, गोयल, गोयन, बंसल, कंसल, सिंहल, मंगल, जिंदल, तिंगल, एरण, धारण, मधुकूल, बिन्दल, मित्तल, तायल, मन्दल, नागल और कुच्छल। इन गोत्र-नामों का देश-काल सन्दर्भ में रूपान्तरण होता रहा है। इनकी एक शाखा राजवंशी भी है जो 'दस्सा' माने जाते हैं। मूल अग्रवालों में इनके विवाह-सम्बंध नहीं होते।

जनश्रुतियों के अतिरिक्त उत्पत्ति कथानक का मूल स्रोत 'भविष्य पुराण' का 'महालक्ष्मी व्रत कथा' (अग्रवंश वैश्यानुकीर्त्तनम्) नामक १६ वाँ अध्याय बताया जाता है। किन्तु 'अग्रवाल शोध संस्थान' के निर्देशक डा. परमेश्वरीलाल गुप्त, सत्यकेतु विद्यालंकार, परमानन्द जैन शास्त्री प्रभृति विद्वानों ने इस कथा को अप्रमाणिक एवं कपोल कल्पित माना है। आधुनिक इतिहासकारों के अनुसार अग्रसेन नामक कोई ऐतिहासिक नृपति नहीं हुए। 'अग्रसेन' की सृष्टि भाटों की कल्पना है। मूलतः इस जाति की उत्पत्ति 'अग्र' गण से हुई। डा. वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार अग्रगण के साढ़े सतरह गणकुलपतियों से जाति के साढ़े सतरह गौत्र बनें। डा. परमेश्वरीलाल गुप्त ने पुरातात्त्विक सामग्री, शिलालेख, मुद्रा एवं प्राचीन ग्रंथों एवं अभिलेखों के आधार पर वैज्ञानिक दृष्टि से 'अग्रवाल जाति का विकास' ग्रंथ लिख कर एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति कर दी है।

समूचे देश को प्रभावित करने वाले अनेक प्रमुख व्यक्ति अग्रवाल जाति में हुए हैं। सर सीताराम, बाबू भगवानदास, लाला लाजपतराय, सर शादी लाल, सर गंगाराम, राम मनोहर लोहिया, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जगन्नाथ दास रत्नाकर, रायकृष्णदास, हनुमानप्रसाद पोद्दार प्रभिति नर-श्रेष्ठ इसी जाति की देन हैं। संवत् १९७५ में सेठ जमुनालाल बजाज ने "अग्रवाल महासभा" की स्थापना की थी। शनै शनै यह संगठन सम्पूर्ण मारवाड़ी समाज की प्रतिनिधि संस्था बन गई। संवत् २०३३ में अग्रोहा के पुनर्निर्माण एवं विकास हेतु दिल्ली में अग्रवाल महा सम्मेलन की स्थापना हुई जिसने 'अग्रोहा' को अग्रवालों का एक अधुनातन तीर्थ बना दिया है

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

खंडेलवाल

क्षत्रिय कुल के खंडेलवालों की उत्पत्ति विक्रम संवत् १ में राजस्थान के सीकर जिलान्तर्गत खण्डेला ग्राम से मानी जाती है। उस समय सूर्यवंशी चौहान राजा मंडलीक खंडेल गिर पर राज्य करते थे। राज्य के अन्तर्गत ८४ ग्राम थे। राज्य में महामारी का प्रकोप हुआ। प्रजा में त्राहि-त्राहि मच गई। ब्राह्मणों ने उपद्रव शांति के लिए नरमेंध यज्ञ करने की सलाह दी। राजा ने यज्ञ करने की अनुमति दे दी। ब्राह्मण बलि के लिए एक ध्यानस्थ जैन मुनि को पकड़ लाए और यज्ञ की विधि के अनुसार उसे हवन कुंड में होम दिया। परन्तु तब भी उपद्रव शांत न हुआ। इसी समय जैनाचार्य अपराजित मुनि के शिष्य श्री जिन सेन स्वामी पाँच सौ अन्य मुनियों के साथ खंडेला पधारे। उनके प्रभाव से महामारी का प्रकोप शांत हुआ। राजा एवं प्रजा ने उनके उपदेशों से प्रभावित होकर जैन धर्म अंगीकार किया एवं जिन मन्दिर का निर्माण कराया। राजा के वंशजों का 'साह' गौत्र निर्धारित हुआ एवं अन्यान्य ८३ ग्रामों के क्षत्रियों से अन्य ८३ गोत्र बने। ये सभी खंडेलवाल कहलाने लगे। कालातंर में क्षत्रिय कुल के इन जैनधर्मावलम्बी खंडेलवालों को 'श्रावक' (सरावग) कहा जाने लगा जिससे वे सरावगी नाम से प्रसिद्ध हुए।

श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई द्वारा संवत् १९६७ में प्रकाशित श्री राज्जमल बड़जात्या लिखित 'खण्डेलवाल जैन इतिहास' के उक्त कथानक की पुष्टि जैन यति श्री पालजी लिखित 'जैन सम्प्रदाय शिक्षा' एवं यति श्री रामलालजी लिखित 'महाजन वंश मुक्तावली' आदि ग्रंथों से भी होती है। इस जाति के गोत्रों में प्रमुख हैं पाटणी, सेठी, गौधा, अजमेरा, गदय्या, सोनी, गंगवाल, बिनायक्या, बाकलीवाल, कासलीवाल, सौगाणी, बैद, बोहरा, काला, छाबड़ा, भंडशाली, चौधरी, वनमाली, मौदी, राजहंस व खेत्रपाल्या।

श्री शिक्वरण रामरतन दरक लिखित "माहेश्ववी कुल शुद्ध दर्पण" में भी सरावगी जाति की उत्पत्ति सम्बन्धीं कथानक उक्त कथानक से मिलता जुलता ही है। डा. के. सी. जैन ने अपने (जैनिज्म इन राजस्थान) ग्रंथ में यहीं कथानक उद्धृत किया है। 'जैन जातियों का उद्भव और विकास' ग्रंथ के लेखक डा. कैलाशचन्द पंत के अनुसार इस जाति की उत्पत्ति दसवीं शदी से पहले खंडेला में हुई। कालातंर में कुछ लोग मध्यप्रदेश जा बसे।

कुछ विद्वान खंडेलवालों की उत्पत्ति स्कन्द पुराण में वर्णित एक कथानक से जोड़ते हैं। ऋषि विश्वामित्र के ५० पुत्रों एवं शुनः शेप नामक धर्मपुत्र को परशुराम ने यज्ञ की सुवर्ण वेदी खण्ड खण्ड कर दान कर दी। उन खण्डों को लेने वाले खण्डेलवाल ब्राह्मण हुए, उनमें से व्यापार करने वाले खण्डेलवाल वैश्य कहलाए। कालांतर में उन्होंने लोहार्गल के समीप खण्डेला ग्राम बसाया।

'श्रीमाल' शब्द की तरह 'खंडेलवाल' शब्द शुरु शुरु में प्रदेश सूचक ही था। जिस तरह 'श्रीमाली ब्राह्मण' देश के विभिन्न भागों में निवास करते हैं, उसी तरह 'खंडेलवाल ब्राह्मण' ढूंढ़ाड़ एवं मारवाड़ के अनेक शहरों गाँवों में निवास करते हैं। वैश्य खंडेलवाल आगरा, मथुरा, देहली,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जयपुर, इन्दौर, रतलाम आदि प्रदेशों में विद्यमान हैं। शूद्र खंडेलवाल भी हैं जो भोपाल एवं जयपुर में बढ़ई या माली का काम करते हैं। किन्तु क्षत्रिय खंडेलवाल इन से सर्वथा भिन्न हैं।

बघेरवाल

इस जाति का उत्पत्ति स्थल प्राचीन अवशेषों का केन्द्र बघेरा रहा है। बघेरा बारहवीं शदी में भट्टारकों का पट्ट केन्द्र था (Indian Antiquary vol. XX)। एक अनुश्रुति के अनुसार दिगम्बर साधु रामसेन एवं नम सेन ने बघेरा के राजा और प्रजा को विक्रम की आठवीं शदी में उपदेश देकर जैन धर्म अंगीकार करवाया। 'महाजन वंश मुक्तावली' के अनुसार बघेरा के राजा व्याघ्रसिंह जैनाचार्य जिन वल्लभ सूरि आदि प्रभावी आचार्यों के उपदेश से जैन श्रावक बने। यह कथन समय संदर्भ से सही नहीं प्रतीत होता। श्री शिवचरण दरक लिखित "माहेश्वरी कुल शुद्ध दर्पण" के अनुसार बघेरा गाँव के अधिपति राजा बघ्रसेन्य के समय इस जाति की उत्पत्ति हुई एवं इनके ५२ गौत्र हैं जिनमें खटवड़, पगारया तातहड्या, पीतल्या, भूरया, सेठ्या आदि गोत्र शामिल है। इन गोत्रों का 'ओसवालों' के खटवड़ (या खटेड़), पगारिया, तातेड़, पीत-लिया, भूरा, सेठिया आदि गोत्रों से नाम साम्य उनके मूल श्रोत का परिचायक भी हो सकता है। इस सम्बन्ध में शोध अपेक्षित हैं। इस ग्रंथ के अनुसार श्री रामसेन जी महाराज ने नरसिंहपुर नगर में ज़िन लोगों को मिथ्यात्व छुड़वा कर जैन बनाया वे नरसिंहपुरा-महाजन कहलाते हैं। इनके सत्ताईस अलग गोत्र हैं। श्री कैलाशचन्द पंत ने अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "जैन जातियों का उद्भव और विकास" में बघेर वाल जाति की उत्पत्ति दसवीं शदी से पूर्व बघेला ग्राम से मानी है।

अभिलेखों एवं प्रशस्तियों में बघेरवाल जाति के विभिन्न गोत्रों का उल्लेख मिलता है जैसे— रायभण्डारी (नाहर जैन इन्सक्रिप्सन्स) शंखवाल, शानापति, थोला, कोटवा (श्री प्रशस्ति संग्रह) प्रभा, सिखाड़्या (जैनिज्म इन राजस्थान)। उज्जैन की एक जैन प्रतिमा पर बारहवीं शदी के आलेख में भी 'बघेरवाल' नाम का उल्लेख है। इसी बारहवीं शदी में उत्पन्न माण्डलगढ़ के प्रसिद्ध तत्त्व ज्ञानी पंडित आशधर इसी कुल के थे। इन्होंने मुलसमान आक्रांताओं से त्रस्त होकर मांडलगढ़ छोड़ दिया एवं धारा नगरी जाकर बस गए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

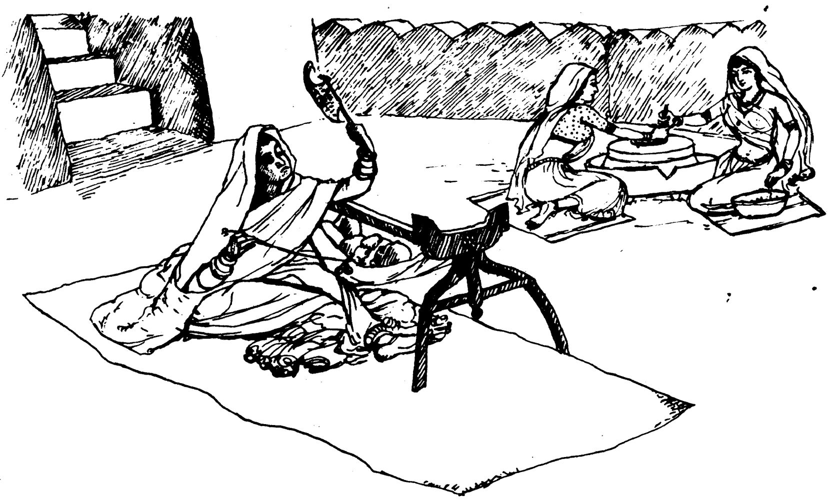

अध्याय

अष्टदश

ओसवालों के सामाजिक समीकरण

अपनी उत्पत्ति के समय ओसवाल समाज राज्य शासन से जुड़ा रहा। वे राज्य के दीवान, प्रधान एवं सेनापति रहे। कालांतर में राज्य के कोषाधिकारी बने। राज्यों के उत्थान पतन में वे भागीदार बने। जैसे-जैसे जाति का विस्तार हुआ, वे राज्य शासन के अलावा अन्य व्यवसायों से जुड़े। राजस्थान से बंगाल, आसाम, मद्रास एवं अन्य प्रदेशों की दुरूह यात्राएं की— जिनमें छः छः मास का समय उस वक्त लगता था। मूलतः क्षत्रियों के वंश से संबधित यह जाति धीरे-धीरे क्षत्रिय कर्म से एकदम विमुख होकर वैश्य-वणिक कर्म से जुड़ गई। इस आमूल चूल प्रकृति परिवर्तन में प्रमुख हाथ जैन धर्म के अहिंसा पर आधारित श्रावकाचार का भी माना जाता है। वैश्य-गुण सम्पन्न हो दक्षिण और पूर्व भारत में फैले ओसवालों का मुख्य व्यवसाय बैंकिंग (महाजनी) रहा। एक समय जूट के व्यवसाय पर भी ओसवालों का आधिपत्य था। अब तो यह वयवसाय उनके हाथ से निकल ही गया है। कपड़े के व्यवसाय में अधिकांश ओसवाल

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

परिवार अभी भी लगे हुए हैं। जैसे-जैसे शिक्षा का आलोक फैला, ओसवाल जाति ने भी बड़े-बड़े डाक्टर, इंजीनियर व्यवसायिक एवं राज्याधिकारी उत्पन्न किए। उन का व्यापार भारत के कोने-कोने में ही नहीं विदेशों में भी फैला। फिर भी आर्थिक क्षेत्र में यह जाति अगरवालों एवं महेश्वरियों की अपेक्षा से पिछड़ गई। जहां उनमें अनेक औद्योगिक घराने हैं, वैसे ओसवालों में कम हैं।

प्राचीनकाल में श्रीमाल भी महाजन वंश के ही अंग थे। ओसवालों का बारह विभिन्न न्यातों के साथ रोटी सम्बन्ध था। श्रीमाल भाइयों के साथ तो बेटी व गोद व्यवहार भी है। कहीं कहीं विशेषतः कच्छ एवं मध्य प्रदेश में पोरवाल एवं खण्डेलवाल भाइयों के साथ भी ऐसे सम्बन्ध थे। इन सब जातियों को जोड़ने वाली कड़ी थी जैन धर्म। ओसवालों में भी अनेक धर्मावलम्बी थे और अब भी हैं यथा-श्वेताम्बर मूर्तिपूजक, स्थानकवासी तेरापंथी दिगम्बर वैष्णव आदि। प्राचीनकाल में उनमें आपस में विवाह सम्बन्ध एवं रोटी व्यवहार भी था। कालान्तर में जैसे-जैसे समाज फैला धार्मिक विभेद तीव्रतर हुए, वैसे-वैसे सामाजिक वैमनस्य भी बढ़ा। परस्पर व्यवहार क्षीण होता गया।

अपनी प्रायः २४०० वर्षों की इस सतत यात्रा में इस जाति ने शीर्ष एवं निम्न दोनों ही तल देखे हैं। अनेक बाहरी जातियों से सम्बंध बनने के कारण जाति के अन्दरूनी समीकरण भी बदलते रहे। सामाजिक स्थिति को प्रभावित करने वाले इन कतिपय ऊहा पोहों की ऐतिहासिक दृष्टि से समीक्षा अभीष्ट है।

दसा-बीसा-पाचाँ-ढ़ाया प्रभेद

दसा-बीसा प्रभेद की उत्पत्ति के बारे में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं। प्रायः सब का आधार जनश्रुति रहा है। जैनेतर विद्वानों में श्री बजरंगलाल लोहिया ने अपने ग्रंथ "राजस्थान की जातियाँ" (१९५४) में ओसवालों की उत्पत्ति का कथानक देते हुए लिखा है कि संवत् २८२ में राजा की स्वीकृति से आधे ओसियां गांव ने जैन धर्म स्वीकार किया। फिर धीरे-धीरे सारी बस्ती ही जैन बन गयी। जिन्होंने पहले धर्म परिवर्तित किया, वे बीसा कहलाए। जिन्होंने बाद में धर्म स्वीकार किया, वे दसा। ये भोजन तो साथ कर लेते हैं पर विवाह नहीं करते। मूल कारण यह न भी रहा हो पर वस्तुस्थिति का अंकन सही लगता है।

ज्यों-ज्यों आबादी बढ़ी, आर्थिक एवं सामाजिक वैषम्य बढ़ा। परस्पर व्यवहार क्षीण होता गया। निमित्त चाहे कोई भी घटना बनी हो, परन्तु दसा-बीसा व पांचा-ढाया प्रभेद का मूल कारण यही वैषम्य ही है।

दसा-बीसा प्रभेद की उत्पत्ति के बारे में एक अन्य दिलचस्प कथा प्रचलित है जिससे तात्कालीन वणिक जैन-समाज के रूढ़िग्रस्त संस्कारों का पता चलता है। प्रबंध चिंतामणि के रचयिता आ. मेरूतुंग के अनुसार पाटण (अणहिलपुर) के गूर्जर (बघेल) राजा के सचिव (सेनापति) पोरवाल वंश के वणिक श्रेष्ठि अश्वराज राजकार्य एवं व्यवसाय में बड़े कुशल थे। एक समय पाटण में भट्टारिक हरिभद्र सूरि व्याख्यान कर रहे थे। वहां चालुक्य राज के दंडपति आभू की युवा बाल विधवा पुत्री कुमार देवी व्याख्यान में उपस्थित थी। कुमार देवी अत्यन्त रूपवती

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

थी। व्याख्यान सुनने वालों में मंत्रीश्वर अश्वराज भी थे। व्याख्यान के दौरान सूरिजी बार-बार कुमार देवी की ओर आश्चर्य से देख रहे थे। मंत्रीश्वर ने इसे भांप लिया एवं व्याख्यान समाप्त होते ही सूरिजी से इस तरह बार-बार कुमार देवी की ओर देखने का कारण पूछा। सूरिजी ज्योतिष एवं सामुद्रिक के अच्छे जानकार थे। उन्होंने बताया कि सामुद्रिक लक्षणों के अनुसार कुमार देवी की कोख से सूर्य और चन्द्र के समान प्रतापी बालक जन्म लेंगे। कुमार देवी तो बालविधवा थी— यही सोचकर वे आश्चर्यान्वित थे। यह भवितव्य जानकर अश्वराज मंत्रीश्वर ने बलात् कुमारदेवी का अपहरण कर लिया एवं उसे आसपली (अहमदाबाद) ले जाकर विधिवत् विवाह किया। कालान्तर में कुमार देवी ने चार पुत्रों और सात पुत्रियों को जन्म दिया। वि. सं. १२६२ में जो दो जुड़वाँ पुत्र हुए ये ही वस्तुपाल और तेजपाल नाम से विख्यात हुए। यति रामलालजी ने अपने ग्रंथ (महाजन वंश मुक्तावली — प्रकाशन सन् १९१०) में आगे की कथा का जिक्र मारवाड़ी मिश्रित खड़ी भाषा में करते हुए लिखा है कि— एक समय मध्य प्रदेश के गोडवाड जिले के पद्मावती-नगर में सर्व शक्तिमान श्रेष्ठिवर वस्तुपाल तेजपाल (पोरवाल जाति) ने सब मुल्कों में खरच भेज दयाधर्मी वणिक जाति को आमंत्रित किया— भोजन की पंक्ति जीमने लगी। उस वक्त एक बूढ़ी, पोरवाल विधवा स्त्री ने भर पंचो में आकर कहा-अहो धर्म भाइयों किसके घर जीमते हो, वस्तुपाल तेजपाल का नाना कौन है, यह भी कुछ खबर है। खबर की, तो मालूम हुआ-बाप पोरवाल, माता बाल विधवा सबूत हुई। तब जीम लिए सो दसा और नहीं जीमे सो बीसा कहलाए। यह झगड़ा बाद में बहुत जगह फैल गया।

यह तो सर्वविदित है कि उस समय समाज विधवा को बहुत हेय दृष्टि से देखता था और उसका विवाह शास्त्र सम्मत नहीं माना जाता था। विधवा से विवाह कर लेने पर जाति बहिष्कृत कर देना आम बात थी। इसी से दसा-बीसा भेद हुआ हो, यह बहुत संभव है। यह घटना संवत् १२७५ की है। जैसा कि हम ऊपर बता आए हैं, ओसवाल, पोरवाल, खण्डेलवाल, श्रीमाल आदि आदि सभी जातियाँ वृहद् महाजन (वणिक) संघ का ही अंग थी— इनका आदि श्रोत सभी का क्षत्रिय रहा है। अतः संस्कारजनित यह विष सभी में फैलना ही था। जब किसी ने विधवा से विवाह किया, उसे एवं उसके सहयोगियों को समाज से बहिष्कृत होना पड़ा। पोरवालों की देखा-देखी यह भेद ओसवालों में भी घर कर गया। प्रारंभ में सभी ओसवाल बीसा कहलाते थे।

सम्भवतः 'बीसा' शब्द राजपूतों के २० गोत्रों से आया, जिनसे ओसवाल की उत्पत्ति मानी जाती है। बहिष्कृत लोगों को छोटा समझा जाता था, अतः वे दसा कहलाने लगे।

प्रसिद्ध उपकेशगच्छीय इतिहासज्ञ मुनि ज्ञानसुन्दरजी के अनुसार विक्रम की १३वीं शताब्दी में ओसवालों के दो प्रभेद हुए— बड़े साजन (बीसा) और लघु साजन (दसा)। उन में बेटी व्यवहार ७०० वर्षों तक बन्द रहा। १३वीं शताब्दी से उनका मतलब वस्तुपाल तेजपाल के उपरोक्त कथानक से ही प्रतीत होता है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पं. हीरालाल हंसराज ने अपने ग्रंथ श्री जैनगोत्र संग्रह (प्रकाशन सन् १९२३) में लिखा है कि शुरू में तो सभी ओसवाल "बीसा" ही थे यानि एक ही कौम थे। कालांतर में ओसवाल श्रीमाल पोरवाल तीनों जातियों में लघु सजनी एवं वृद्ध सजनी विभेद हुए। कारण मात्र यह था कि जिन्होंने एक स्त्री के रहते दूसरी स्त्री से विवाह कर लिया (पुनर्लग्न) या घर घेणु (घर में घाल लिया) किया, उन्हें जाति से बहिष्कृत किया गया एवं धीरे-धीरे ऐसे लोग संख्या में अधिक हो गये तो उन्हें दसा कहा जाने लगा। अब तो यह घर घेणुं का रिवाज ही बन्द हो गया है। कच्छ में ओसवालों के प्रायः सभी मुख्य गोत्रों में दस्सा-बीसा प्रभेद पड़ गया। इनमें धीरे-धीरे बेटी एवं रोटी व्यवहार भी बंद हो गया।

दसा-बीसा प्रभेद के दूसरे केन्द्रस्थल मालवा, मध्य भारत, बरार एवं गुजरात प्रदेश हैं। वहां इन्हें बड़े व छोटे या लोड़े साजन भी कहा जाता है। मुख्यतः यह विभेद पति-पत्नि दोनों में से एक के विजातीय होने से हुआ। अधिकांशतः स्त्री के नीची जाति की होने के कारण बिरादरी वालों ने उनसे मेलजोल बन्द कर दिया, जाति बाहिर कर दिया और बेटी सम्बन्ध एवं खान-पान का व्यवहार तोड़ लिया। इस तरह बने दसों की संख्या बीसों से एक चौथाई ही है। इसी तरह "दसों" में किसी ने अपनी बिरादरी छोड़ अन्य या नीची जाति में सम्बन्ध (विवाह) कर लिया तो उससे "पांचा" बने और पांचा में से निकल कर "ढ़ाया" बने। पांचा-ढ़ाया गिनती में सैंकड़ों में ही हैं।

इस प्रभेद और जाति विच्छेद के लिए जिम्मेदार मूलतः तात्कालीन पंचायतें हैं। मध्यकाल में पंचायतों एवं पंचो का शिकन्जा इतना मजबूत था कि साधारण व्यक्ति को उनकी मनमानी एवं अत्याचार का शिकार होना पड़ता था। अजमेर के श्री मूलचन्द जी बोहरा ने अपने प्रबंध "ओसवाल समाज की परिस्थिति और उसके उत्थान के उपाय" में वि.सं. १९३० में नसीराबाद के ओसवाल समाज में घटी एक सत्य घटना का विवरण दिया है— "एक विधवा को गर्भ रह गया। पंचायत बैठी। जिस सेठ से गर्भ रहा, उसका पंचायत पर प्रभाव था। अतः विधवा को बिरादरी से पृथक कर दिया गया। इस अन्याय के विरोध में जिन परिवारों ने विधवा का साथ दिया उन्हें भी बिरादरी से बाहर कर दिया गया। बहिष्कृत व्यक्तियों ने अपनी अलग उप जाति बना ली।"

एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार— एक गाँव में राजा ने सम्पूर्ण ओसवाल समाज को भोजन के लिए न्योता दिया। जीमणबार में एक बानगी मांसाहारी थी। प्रथम पांतिये के लोगों में अधिकांश ने बिना ना नूंच भोजन कर लिया। लेकिन कुछ उठ कर चले गए। उन्होंने पंचायत बुलाई। जिन्होंने भोजन किया था उन्हें जाति बहिष्कृत कर 'छोटे साजन' करार दिया गया। जो मांसाहारी भोजन में शामिल नहीं हुए वे 'बड़े साजन' कहलाए।

मेवाड़-मालवा प्रदेश में यह प्रभेद अभी भी बना हुआ है। उनमें आपस में रोटी व्यवहार तो है परन्तु बेटी-व्यवहार नहीं। बड़े शहरों में शनै शनै यह भेद रेखा भी मिट रही है। हाल ही में डा. श्री खेमराज पिछौलिया के सम्पादन में अहमदाबाद में बसे मेवाड़ के ओसवाल (छोटे

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

साजन) समाज की एक डाईरेक्टरी प्रकाशित हुई है। सामूहिक विकास की दृष्टि से यह प्रयास श्लाघनीय है किन्तु अब इस बाड़े बन्दी की कोई यथार्थता नहीं हैं।

मध्यकाल में जाति बहिष्कार शोषण का मुख्य हथियार रहा — इसमें कोई सन्देह नहीं। ऐसा हमारे ओसवाल समाज में ही नहीं, अन्य समाजों में भी हुआ है। पोरवाल और श्रीमालों में तो दसा-बीसा प्रभेद है ही, अग्रवाल, महेश्वरी, कायस्थ और ब्राह्मण जातियों को भी इस विषधर ने डसा है— उनमें भी दसा-बीसा प्रभेद मौजूद है। सब का आदि स्रोत भी एक ही मालूम होता है— १३वीं शताब्दी की वस्तुपाल तेजपाल की शहर सारिणी का अवसर।

इस प्रभेद प्रक्रिया की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि में रक्त की शुद्धता को भी एक कारण माना जा सकता है। निमित्त या तात्कालीन घटनाएं चाहे कुछ भी रही हों। वस्तुतः मनुष्य "सर्वश्रेष्ठता" के सिद्धांत को तिलान्जलि नहीं दे पाता। सर्व प्राणियों में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ प्राणी है एवं मनुष्यों में भी कुछ नृवंश श्रेष्ठतर हैं— इस भावना की परिणति महायुद्धों में हुई है। जीव शास्त्री अनुवांशिकी को बड़ा महत्व देते हैं। इसके पक्ष विपक्ष में अनेक तर्क दिए जा सकते हैं। किन्तु दुनिया अब इतनी बड़ी हो गई है कि समाज की सभी सीमाएं टूटने लगी हैं। अब रक्त की शुद्धता का अहं बेमानी है। रक्त भी इतना घुल मिल चुका है कि कोई भी समाज रक्त शुद्धता का दावा नहीं कर सकता। फिर ओसवाल समाज तो रक्त शुद्धता के सिद्धांत पर खड़ा ही नहीं हुआ। इसकी उत्पत्ति का आधार ही धर्म बना। सभी वर्ण शुरू से ही इसमें शामिल होते रहे। अतः रक्त शुद्धता के आधार पर दसा-बीसा प्रभेद कायम रखना अनुचित एवं असम्भव है।

शिक्षा एवं समृद्धि की पैनी धार पर यह दसा-बीसा प्रभेद कायम रह भी नहीं सकेगा। हमारे जन्मना संस्कार शिक्षा के आलोक से परिष्कृत हुए हैं। समृद्धि रक्त शुद्धता की परवाह नहीं करेगी। इसके उदाहरण हाल में हुए वैवाहिक संबन्धो से लिए जा सकते हैं। अमरीका में बसे लोड़ा साजन गोत्र के समृद्ध परिवार के सुपुत्र जयपुर के बीसा गोत्रीय शिक्षित एवं समृद्ध परिवारों की कन्याओं से ब्याहे गये हैं एवं बीसा गोत्रीय लड़के दसा गोत्रीय कन्याओं से ब्याहे गए हैं। आज से पचास वर्ष पूर्व ऐसे सम्बन्ध समाज में बड़ा कहर बरपा देते थे लेकिन अब वे पूर्णतः स्वीकृत एवं सम्मान की दृष्टि से देखे जाते हैं। विधवा विवाहों एवं अन्तर्जातीय विवाहों के प्रति भी पचास वर्ष पूर्व का सा विरोध नहीं रहा है हालांकि उनकी तादाद अब भी कम है।

अखिल भारतीय ओसवाल महा सम्मेलनों में विधवा विवाह के प्रश्न पर प्रस्ताव पारित हुए हैं। अमरावती के तृतीय महा सम्मेलन में लोडे एवं बडे साजनों का प्रश्न भी उठाया गया था परन्तु वह विचारार्थ ही स्वीकार नहीं किया गया। हमारे मन में कहीं अहंमन्यता की दीवार बाधा बन रही है। युग की मांग जब अन्तर्राष्ट्रीय विवाहों को भी स्वीकार कर रही है तो लोडे और बडे साजनों का भेद कब तक टिक सकेगा।

मारवाड़ी, पंजाबी, गुजराती, पूरबी प्रभेदः

जब ओसवाल जाति की उत्पत्ति हुई तो उनका निवास मरू प्रदेश में ही था। कालातंर में जैनाचार्यों के प्रतिबोध देने से अन्य प्रदेशों के लोग भी इस जाति में शामिल हुए एवं ओसवाल

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वंश के लोग अन्य प्रदेशों में फैले। दूर दराज फैले लोगों का मिलना-जुलना भी दुरह हो कर एक प्रदेश तक सीमित हो गया। इससे भी बड़ा प्रभेद बढ़ा। मुर्शिदाबाद में बसे ओसवालों का रहन-सहन, भाषा, संस्कृति, खान-पान सभी कुछ मारवाड़ में रहने वालों से भिन्न हो गया। गुजरात में बसे लोग पंजाबी ओसवालों को भूल ही गये। धीरे-धीरे उनमें सगाई संबंध भी बंद हो गया। धार्मिक सम्प्रदायों की विषमता भी इसका एक कारण बनी। शुरू में जैन धर्म स्वीकारने से जन्मी इस जाति के लोग जब ऐसे प्रदेशों में जाकर बस गये जहां वैष्णवियों का बाहुल्य था तो उन्होंने भी वैष्णव धर्म अपना लिया। पंजाब में रहने वाले ओसवाल परिवार गुरूद्वारों में जाने लगे। वे भूल ही गये कि हम ओसवाल हैं। कहीं- कहीं तो ऐसी स्थिति में एक ही गोत्र के लड़के-लड़की का विवाह संबंध भी गया। आज भी हमारी जाति इस प्रभेद की शिकार है। राजपूताना मालवा के ओसवाल मारवाड़ी कहे जाते हैं, मुर्शिदाबाद (बंगाल) के निवासी सहरवाली कहलाते हैं, आगरा एवं बनारस आदि प्रदेशों में बसे लोग पूरबी, कच्छ-काठियावाड़ में रहने वाले गुजराती एवं दिल्ली-पंजाब प्रदेश में बसे ओसवाल पंजाबी नामों से जाने जाते हैं। इनमें आपस में रोटी-बेटी का व्यवहार सीमित है।

क्षेत्र एवं गोत्रों की सीमा संकुचित करने का एक विज्ञान सम्मत परिणाम कमजोर एवं बीमार सन्तति होता है। वैवाहिक क्षेत्र की ये सीमाएं विस्तृत होने से समाज बलशाली एवं निरोग होगा। इसलिए भी आवश्यकता है यह प्रभेद कम हो एवं आपसी मेल-जोल बढ़े।

इसी से मिली-जुली एक और समस्या भी हैं। प्राचीन काल में ओसवाल जाति में सोलह गोत (गोत्र) टालकर विवाह सम्बन्ध होते थे। नाना-नानी, दादा-दादी, मां-बाप आदि सभी की पितृ-मातृ पक्ष के गोत्रों में आपस में लड़के-लड़की की शादी नहीं करते थे। बीसवीं शदी के प्रारंभ तक यह बंधन घट कर ४ गोत्र तक सीमित हो गया। अब तो मात्र दो गोत्र ही टाले जाते हैं। कभी-कभी तो उनकी भी परवाह नहीं की जाती। कभी-कभी यह अनजाने भी हो जाता है। परन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से यह किसी भी जाति के लिए हितकारी नहीं है। ऐसे में वह जाति आनुवंशिक बीमारियों की शिकार हो जाती है। अधिक से अधिक गोत्र टाल कर एवं विभिन्न क्षेत्रों के आपस में विवाह सम्बन्ध जाति की सर्वांगीण उन्नति में सहायक होते हैं। नए खून और नई शक्ति के प्रवाहक अन्तर्जातीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय रूपान्तरणों एवं सम्बंधों को पूर्णतः समाहित कर लेने की तो हमारी परम्परा रही है।

देशी-विलायती विवाद

जहाँ दसा-बीसा एवं पांचा-ढाया प्रभेदों ने ओसवाल समाज को विभक्त कर आपसी सम्बन्धों में दरारें डाल दी थी, १९वीं शदी के अन्त में एक और तूफान उठा जिसने ओसवाल समाज की जड़ें हिला दी। अंग्रेजों के सम्पर्क से कई परिवारों के युवक उच्च शिक्षा एवं व्यापार की उन्नति के लिए इंग्लैंड (जिसे उस समय विलायत कहा जाता था) जाने लगे। धर्म एवं समाज के ठेकेदारों को यह मान्य नहीं था। सन्देह यह था कि विलायत जाने वालों का खान-पान, आचार आदि भ्रष्ट हो जाता है— मांस, मदिरा सेवन से वे बिगड़ जाते हैं, गोरी मेमों के मोह पाश में फँस जाने की भी आशंका थी। यह बिरादरी को किसी तरह ग्राह्य नहीं था। सर्व प्रथम विलायत

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जाने वाले परिवारों में मुर्शिदाबाद के दूधोड़िया एवं नाहटा परिवारों के लोग थे। इनके अलावा दूगड़, सेठिया, कोठारी गोत्रों के अनेक परिवारों को विलायती होने या विलायतियों के साथ खान-पान में शामिल होने का फतवा दिया गया।

हुआ यों कि वि. संवत् १९४६ में मुर्शिदाबाद के श्री बुधसिंह जी दूधोड़िया के सुपुत्र श्री इंदरचन्द जी दूधोड़िया एवं श्री गुलाबचन्द जी नाहटा के सुपुत्र श्री इन्दरचन्द जी नाहटा विलायत जाने को तत्पर हो कलकत्ता से बम्बई गये। जैसे ही समाज के अगुआ लोगों को यह खबर लगी तो कलकत्ता से दिए गए तार-संवाद पर बम्बई में बिरादरी के श्री पूनमचन्द जी पन्ना-लालजी जंवरी, प्रेमचन्द रायचन्द प्रभृति नुमाइन्दे उनसे मिले एवं उन्हें विलायत जाने से रोकने की कोशिश की। पर वे रुके नहीं एवं पानी के जहाज से विलायत गए। साथ कोई ब्राह्मण रसोइया एवं नौकर भी नहीं था। जहाज के अंग्रेजी होटल में ही खाना-पीना किया। तीन महीने बाद जब वे भारत लौटे तो घर वालों ने बिना पंचों से इजाजत लिए उन्हें अपनाया। इन्हीं सब आरोपों पर श्री जिनधर्म की तथाकथित मर्यादाएं कायम रखने के इरादे से समस्त समाज उनके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। विलायतियों के खिलाफ उठा आन्दोलन थली प्रान्तीय ओसवालों तक ही सीमित नहीं रहा — यह आग चारों तरफ फैली। कलकत्ते में श्री ओसवाल श्री संघ थली धड़े की स्थापना हुई। इसके अलावा जौहरी धड़ा, मारवाड़ी धड़ा, बालूचरिया (मुर्शिदाबादी) धड़े बने और विलायतियों के खिलाफ उठ खड़े हुए।

संवत् १९४६ में समस्त श्री संघ की पंचायत में कहने को तो ओसवाल भाईयों की नैतिक एवं सामाजिक उन्नति को संघ का उद्देश्य बनाया गया परन्तु मुख्य उद्देश्य था विलायत जाने वोलों को बिरादरी से बहिष्कृत करना। पंचायत ने श्री इन्द्रचन्द दूधोड़िया एवं श्री इन्दरचन्द नाहटा को विलायत जाने के कारण बिरादरी से बाहर कर दिया। इस पंचायत में बांधीं मर्यादा के अनुसार यह तय हुआ कि "विलायत जाने वालों एवं उनसे खान-पान, बिरादरी व्यवहार (विवाह आदि), सेल-भेल करने वालों के साथ खान-पान सेल-भेल बिरादरी व्यवहार नहीं करेंगें। जो कर ले वह बिरादरी से बाहर।" पंचायतों के मुख्य स्थल थे कलकत्ता स्थित तेरापन्थी महा-सभा का भवन एवं सिनेगाग स्ट्रीट तात्कालीन पाट का बाड़ा। संवत् १९४६ के श्री संघ पंचायत के इस हुक्मनामे पर दस्तखत करने वालों में मुर्शिदाबाद, जयपुर, दिल्ली, पाली, नागौर, देशनोक, बीकानेर, बीदासर, सरदारशहर, सुजानगढ़, लाडनूं, चुरू, राजलदेसर, भीनासर, नागौर, छापर, मेडता, जेसलमेर, अजमेर, कलकत्ता, रिणी, फतहपुर, चाड़वास, रतनगढ़, राजगढ़, किशनगढ़, आगरा, दादरी, जोधपुर, लखनऊ, मिरजापुर, इन्दौर, फलौदी, आदि अनेक स्थानों के संभ्रांत ओस-वाल परिवार थे।

इस हुक्मनामे की नकलें सब जगह प्रचारित एवं प्रसारित की गई। इसके साथ ही एक ओर शगूफा छोड़ा गया कि यदि विलायत गए लोगों को ओसवाल लोग शामिल रखेंगें तो अन्यान्य जातियां यथा महेश्वरी, ब्राह्मण, अगरवाल, सरावगी, खत्री एवं बंगाली आदि ओसवलों के हाथ का पानी तक नहीं पीएंगें। मुसलमान भी ऐसे लोगों के खान-पान में शामिल नहीं होते। यह भी प्रचार किया गया कि मुर्शिदाबाद में गोबिंद जी के मन्दिर में हिन्दू बंगालियों की पंचायते

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

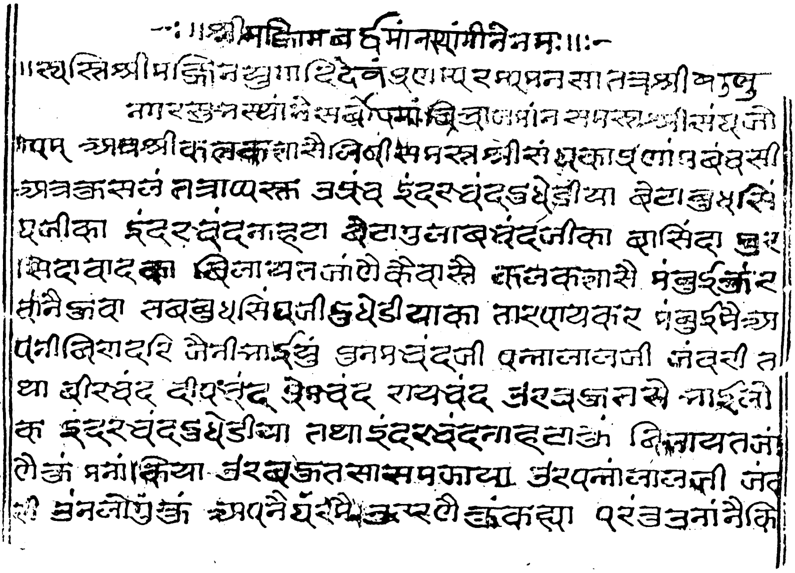
।। श्री महावीर वर्द्धमानस्वामीने नमः ।।
।। स्वस्ति श्री महावीर आदि देव [illegible] श्री गुरु
[illegible] समस्त [illegible] श्री संघ जो
[illegible] श्री संघ [illegible]
[illegible] इंदरचंद [illegible] बेटा [illegible]
[illegible] इंदरचंद नाहटा बेटा गुलाबचंदजी का वासिंदा [illegible]
[illegible] विलायत जाणे के वास्ते [illegible]
[illegible] थेडीया का [illegible]
[illegible] जौहरी [illegible]
[illegible] रायचंद [illegible]
[illegible] इंदरचंद [illegible] तथा इंदरचंद नाहटा [illegible] विलायत जा
[illegible] किया [illegible]
[illegible]

"संवत् १९४६ में श्री संघ पंचायत द्वारा प्रचादित हुक्मनामें का प्रथम पृष्ठ"

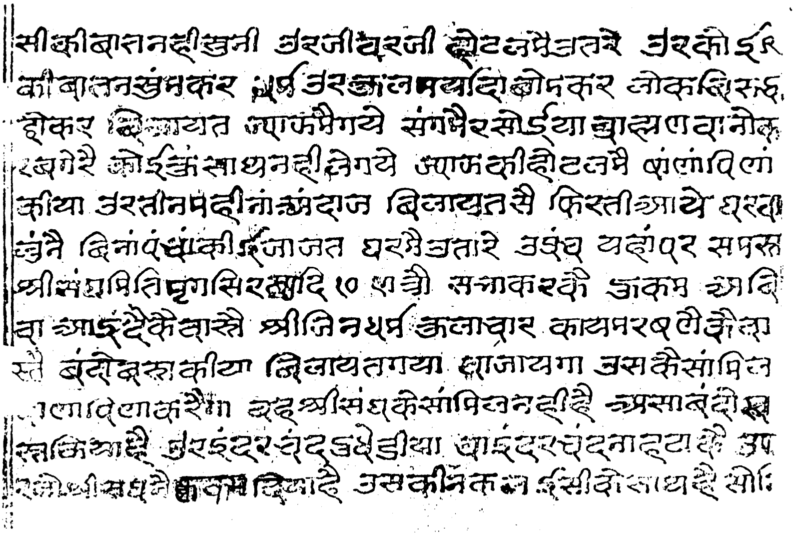
[illegible]
[illegible]
[illegible] विलायत [illegible]
[illegible]
कीया [illegible] विलायत से [illegible]
[illegible] समस्त
श्री संघ [illegible] मृगसिर सुदि १० [illegible]
[illegible] के वास्ते श्री जिन धर्म [illegible] कायम रखणे [illegible]
[illegible] कीया विलायत गया [illegible] उसके सामिल
[illegible] श्री संघ के सामिल नहीं है [illegible]
[illegible] इंदरचंद [illegible] इंदरचंद नाहटा [illegible]
[illegible] उसकी [illegible]

"हुक्मनामें का द्वितीय पृष्ठ"

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

॥ करसीजीथेगाजी उरविसेष ब्यांन निचैलीषा है सो जांनोगेजी

॥नकलका फिजाकम पंचायतका॥:–

॥ संवत् १९८४ का मृगसिर सुदि १० पंचायत जई मारवाड़ी जं
वरी बाबुवरीया देसवालीसाथ कलकत्ताका श्रीसंघ मिल
कर बंदोबस्त कीनो इणमुजब विलायत गया इंदरचंद दुधे
डीया वा इंदरचंद नाहटा अथवा कोई आगामी मुं जायगा
तीन के सांमिल षांनां पीनां बिरादरी ब्यवहार नहीं है आज
दिन असा बंदोबस्त कीया गया है सो अबे कोई इणां रे सांम
ल षांनां पीनां करेगा जो आदमी हमारे सांमल नहीं श्रीकल
कत्तामे कोई गैरमर्जाद का षांणां पिणां करेगा उसकी परवीर
साघुती जैसी सेती अपने सांमिल नहीं है जी॥:॥:– ॥॥

"हुक्मनामें का तृतीय पृष्ठ"

–:॥नकल बंबाई सै तार आया जिसका॥:–

॥ उरटेलीग्राफ बिएक बंबुई सै आया था उसका समाचार इणरे
जी दसक तांमे इहां परली व्रते है सो जांणीयेगाजी॥:–

Indro Chand Doodhori + Indro Chand Nakata
Eated Jiwarji Hotel also on steamer You Dont
Eat in his house Dont take in Cast

ईसका अर्थ यह है कि इंदरचंद दुधेडीया अर इंदरचंद नाहटा
जीवारजी होटलमे षाया है अर षि ईष्टीमरमे षाया है उनकी
के घर जीमतनां नहीं जातमे जेवो एसा बिटेलिग्राफ आया था
सो बीमालम रहैगाजी॥:–   ॥उदरजो कि देसवालीसाथ
कालीबावदीमे मीति कार्तिक सुदि ७ खुलेकर कार्तिक सुदी ८

"हुक्मनामें के साथ प्रेषित ताक की प्रतिलिपि"

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हुई जिसमें यह तय किया गया कि ओसवाल लोग अगर विलायत जाने वालों को अपने में शामिल रखते हैं तो समस्त ओसवालों के साथ बैठकर खाना पीना बन्द कर दिया जाय। यहाँ तक कहा गया कि गंगा में नाव चलाने वाले मांझियों की पंचायत ने भी इसी तरह का निर्णय लिया है।

धीरे-धीरे यह विष इस कदर फैला कि ओसवालों के अनेक गोत्र इसकी चपेट में आ गए। सरदारशहर के आंचलिया गधैया चंडालिया, चोरडिया और दूगड़, लाडनूं के बैंगानी, गोलछा, बेद और कोठारी, राजलदेसर के बोथरा, बेद और दूगड़, बीदासर के सिंघी दूगड और चोरडिया, सुजानगढ़ के सिघी, कठोतिया, रामपुरिया और सेठिया, चुरू के सुराणा, दूगड, कोठारी, बेद और पारख आदि अनेक गोत्रों ने श्री संघ की सदस्यता एवं मर्यादाएं स्वीकार कर ली। फल यह हुआ कि भाई-बहनों से जुदा हो गए, बहुएं पीहर नहीं जा सकी, आपसी प्रेम और भाई-चारा वैमनस्य और कटुता मे तब्दील हो गया। यह आपसी कलह ५०-५५ वर्ष तक चलती रही। पूरा ओसवाल समाज इससे त्रस्त हो गया।

कलकत्ते की तुलापट्टी स्थित जैन मन्दिर इस विवाद का इस कदर शिकार हुआ कि नौबत खून खराबे तक आ गई। स्वर्गीय श्री बच्छराज जी सिंघी (सुजानगढ़ निवासी) के संग्रह में एक दस्तावेज है जिसमें तात्कालीन कमिश्नर/न्यायिक अधिकरी श्री आर. जे. डेविस ने दिनांक ४-७-१८९० (संवत् १९४७) को "इन्दरचन्द नाहटा बनाम राय बहादुर बद्रीदास मुकीम एवं अन्य" मुकदमें में श्री इन्दरचन्द नाहटा के खिलाफ मन्दिर-प्रवेश-निषेध हुक्म जारी करते हुए लिखा कि "राय बद्रीदास व अन्य मेरे पास आए। उनके अनुसार इन्दरचन्द नाहटा को जो विदेश होकर आए हैं, मन्दिर में प्रवेश करने एवं वहां पूजा करने से रोका न गया तो खून खराबा हो जायगा।" यह स्थिति अनेक वर्षो तक कायम रही।

संवत् १९८३ में श्री संघ की आम पंचायत में अजीमगंज व बालूचर के सहरवाली-विलायती कहे जाने वाले ओसवलों के साथ सेलभेल-संबंध- व्यवहार कतई बन्द रखने का निर्णय एक बार फिर दोहराया गया। समाज को चेतावनी दी गई कि जो पाबंदी नही रखेगा वह बिरादरी का गुनहगार होगा। इस आम पंचायत के संयोजकों में मुख्य थे—संचेती, दूगड़, लोढ़ा, कोचर, बोथरा, नाहटा, कोठारी, पगारिया, बैद, धाडेवा, सिंघी आदि परिवारों के गणमान्य सज्जन। संवत् १९७२ में विलायतियों में शामिल अजमेर के चन्दनमल सिरेमल लोढ़ा परिवार वालों के यहां चुरु के तेजपाल वृद्धिचन्द सुराणा परिवार के श्री तोलाराम जी सुराणा के सुपुत्र श्री शुभकरणजी सुराणा की बारात ले जाने के कारण सुराणा परिवार एवं अन्य बारातियों को मर्यादा भंग करने के आरोप में बिरादरी से बहिष्कृत कर दिया गया—उनके साथ खान-पान, सेलमेल, संबंध व्यवहार सब कुछ बन्द कर दिया। इस बहिष्कृति में चुरू के श्री मूलचन्द जी कोठारी की प्रमुख भूमिका रही।

पूरा समाज बौखला गया। परिवारों के आपसी संबंध ही नहीं टूटे, लोग गाली-गलौज और तू-तू मै-मै पर उतर आए। उस समय के दस्तावेजों, पत्रों, फाईलों एवं पैम्फलेटों को देखने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से पता चलता है कि जैसे उनमें कोई पुश्तैनी दुश्मनी चल रही थी। एक दूसरे का चरित्र हनन, छींटाकशी, अनर्गल प्रलाप आम बात हो गई। अश्लील नाटकों के माध्यम से एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश की गई। भ्रम यह फैलाया गया कि "विलायतियों को समाज में शामिल कर लेगें" तो "घर-घर में मेम और क्रिश्चियनों की लड़कियां पुत्र वधुओं की जगह दिखाई पड़ेगी" और "जैन समाज में धर्म के बदले अधर्म, पुण्य के बदलें पाप, सदाचार के बदलें मिथ्यात्व की महिमा से समाज कलुषित हो जायेगा।" होली के दिन तो इस घृणित कांड की पराकाष्ठा हो गई। कलकत्ता के पांचागली (नूरमल लोहिया लेन) स्थित सुराणा एवं कोठारी परिवार कोठियों की छतों पर चढ़ गए और दोनों पक्षों मे व्यंगवाणों का घमासान युद्ध छिड़ गया। रंग ऐसा चढ़ा कि दोनों पक्ष नीचे उतरने का नाम न ले। अंततः श्री भागीरथ जी कानोड़िया ने आकर समझाया और जबरदस्ती सबकों नीचे उतारा।

मूलतः सारे विवाद की जड़ तात्कालीन धार्मिक व सामाजिक मान्यताएं थी। धर्म एवं नीति की परिभाषाएं इतनी संकुचित थी कि मुट्ठी भर अग्रणी लाखों लोगों की भावनाओं को उकसा कर अपनी अहंमन्यता की पूर्ति करनें में सफल हो सके। इनकी पृष्ठभूमि में ऐश्वर्यशाली लोगों की पारस्परिक ईर्ष्या और वैमनस्य था। भोलो-भोले साधारण लोगों के साथ जो खिलवाड़ हुआ वह ओसवाल जाति के दामन पर दसा-बीसा विवाद का सा एक और दाग सदा के लिए छोड़ गया। परन्तु ऐसा ओसवाल जाति में ही हुआ हो ऐसा नहीं है। सभी जातियां इसकी शिकार हुई। अगरवाल, महेश्वरी, ब्राह्मण आदि कौमों में भी देशी-विलायती विवाद जोरों से उठा। यही नही, बंगाल की स्थानीय बंगाली जातियों में भी यह विवाद जोरों से फैला। कलकत्ते के श्रीनाथ बाबू के लड़के को ऐसी ही बहिष्कृति का सामना करना पड़ा। समाज के ठेकेदारों ने समाज को गुमराह करने मे कोई कसर नहीं उठा छोड़ी। पर ये सभी निर्णय समय की धारा के विपरीत थे। दो चार नहीं, अनेकों वर्षों तक यह विवाद चला। जो विस्फोट की तरह उठा था, अन्त में "फिश्श" की तरह समाप्त हो गया। धीरे-धीरे समाज इस विष को नीलकंठ शिव की भाँति निगल गया। ज्यों-ज्यों शिक्षा का प्रकाश फैला समाज ने विलायत जाने को प्रगति का एक चरण मान लिया।

संवत् १९८५ में (२९ जुलाई १९२८) कुमार सिंह हाल, कलकत्ता में मुर्शिदाबाद श्री संघ धडें की तरफ से एक आम पंचायत बुलाई गई। इस पंचायत में अन्य धड़ों के प्रतिनिधि भी आमंत्रित किए गए थे। इस पंचायत ने समाज में अशांति की संभावना को मद्दे नजर रखते हुए निश्चय किया कि कोई भी ओसवाल भाई विलायत गमनागमन मर्यादा में रहकर करें तो वे लोग बिरादरी में शामिल समझे जायेंगें। पंचायत ने बिरादरी से बहिष्कृत श्री रणजीत सिंह दूधोड़िया, धन्नूलाल दूगड, श्रीपाल सिंह दूगड, उमीचन्द कोठारी, राजेन्द्र, सिंह से ठिया आदि के साथ बिरादरी व्यवहार खोल दिया। उक्त प्रस्ताव की पूरी नकल यहाँ प्रकाशित की जा रही है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री

श्री मुर्शिदाबाद श्रीसंघ धड़ा, कलकत्ता।

सं. १९८५ मिः श्रावण सुदि १२ के

पंचायती के ठहराव की नकल।

आज सं. १९८५ मिः श्रावण सुदि १२ रविवार को श्री मुर्शिदाबाद श्रीसंघ धड़े की आम पंचायती "कुमारसिंह हाल" नं. ४६ इण्डियन मिरर ष्ट्रीट में एकत्रित हुई ओर सर्व सम्मति से निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए।

१. संवत् १९४६ साल के कलकत्ता के तीनों धड़े की आम पंचायती से इन्दरचन्दजी दूधोड़िया वा इन्दरचन्दजी नाहटा का बिरादरी व्यवहार बन्द हुआ था। पश्चात उन लोगों के सन्तानादि का भी बिरादरी व्यवहार बन्द है। उन लोगों को बिरादरी में शामिल कर लेने के लिए अब रणजीतसिंह दूधोड़िया वगैरह के प्रार्थनापत्र देने पर आज दिन, सं. १९४६ साल से आज तक इस विषय पर जो कुछ काररवाई हुई है उन सब बातों को अच्छी तरह विचार करके (१) रणजीतसिंह दूधोड़िया सपरिवार (२) धन्नूलाल दूगड सपरिवार (३) श्रीपत सिंह दूगड सपरिवार (४) उमीचन्द कोठारी सपरिवार (५) राजेन्द्र सिंह सेठिया सपरिवार का बिरादरी व्यवहार खोला गया।

२. संवत् १९४६ साल के कलकत्ते के उक्त आम पंचायती के हुक्म मुताबिक आगे पर विलायत जानेवाले अपने ओसवाल भाईयों का भी बिरादरी व्यवहार बन्द का हुक्म हुआ था, लेकिन विलायत गए हुए मर्यादा से रहने वाले अपने समाज के भाईयों का बिरादरी व्यवहार कई स्थानों से खुला हुआ है। लेकिन जब तक पंचायती से इस विषय पर खुलासा नही होय तब तक भविष्य में ऐसी बातों पर परस्पर में मतभेद होंने की, और समाज में अशान्ति फैलने की सम्भावना समझकर यह निश्चय किया जाता है कि आगे पर अपने धड़े के कोई भाई विलायत आदि विदेश गमनागमन मर्यादा में रहकर करें तो उनके लौटने पर वे लोग अपने समाज में रहेगें वा आगे पर विलायत, अमेरिका वगैरह स्थानों की यात्रा भी सामाजिक बाधा नहीं समझी जायगी।

३. संवत् १९७४ साल में कलकत्ते के समस्त ओसवाल समाज की पंचायत के ठहराव मुताबिक कलकत्ते के श्रीमाल भाईयों के साथ बेटा-बेटी का सगपन तथा बेटा-बेटी का गोद लेना बन्द है परन्तु देश देशान्तर के ओसवाल समाज में उक्त पंचायत के ठहराव के अर्थ सम्बन्धी मतभेद हो रहा है ऐसा प्रतीत होता है, और इस विषय पर समय-समय में कई तरह की शंकाएं भी उठती रहती है। इन सब बातों के समाधान के लिए यह खुलासा किया जाता है कि आगे पर कलकत्ता निवासी श्रीमाल भाई लोग अपने ओसवाल भाईयों को बेटी देवें तो अपने साथ वालों को उन लोगों से बेटी लेने में कोई बाधा नही समझी जायगी और पश्चात बेटा-बेटी का लेन देन खुला रहेगा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

४. संवत् १९८० साल के मिः चैत वदि १३ के पंचायती में उपस्थित विषय की व्यवस्था और पंचायत वगैरह एकत्रित करने के लिए अजीमगंज और बालुचर के ६ प्रतिनिधि सर्व सम्मति से निर्वाचित हुए थे, तिसके पश्चात आज तक अपने धड़े में इस विषय का कोई दूसरा प्रबन्ध नहीं हुआ है परन्तु वर्तमान में मुर्शिदाबाद की सामाजिक व्यवस्था का परिवर्तन होने के साथ-साथ उक्त व्यवस्था का भी परिवर्तन होना आवश्यक है। इसीलिए यह ठहराव किया जाता है कि भविष्यत की कार्यवाही की सुगमता के लिए वर्तमान प्रतिनिधियों का पद त्याग (रेजिग्नेशन) स्वीकार करके अजीमगेज निवासी एक सज्जन वा बालुचर निवासी एक सज्जन जयेन्ट सेक्रेटरी रुप से कार्य करने के लिए नियत होगें। उक्त जयेन्ट सेक्रेटरियों का अधिकार अपने धड़े की पंचायती एकत्रित करने में वा दूसरे धड़े के साथ पत्र व्यवाहार करने में वा अपने धड़े का और २ कार्य निर्वाह करने में सम्मलित या पृथक २ तुल्यरूप रहेगा। और जब तक दूसरा निर्वाचन नहीं होय तब तक के लिए अजीमगंज निवासी बाबू भमर सिंह जी नाहर वा वालुचर निवासी बाबू श्रीपत सिंहजी दूगड़ अपने धड़े के जयेन्ट सेक्रेटरी निर्वाचित हुए।

"कुमारसिंह हाल" **श्रीपत सिंह दूगड़।** **भमर सिंह नाहर।**

नं. ४६, इण्डियन मिरर ष्ट्रीट,
कलकत्ता
ता. २९ जुलाई, सन् १९२८।

जयेन्ट सेक्रेटरी।
श्रीं मुर्शिदाबाद श्रीसंघ धड़ा,
कलकत्ता।

नोटः— रणजीतसिंह दूधोड़िया वगैरह के प्रार्थना पत्र देने पर यहां के श्रीमारवाड़ी श्रीसंघ धड़ा, श्री ओसवाल श्रीसंघ थली धड़ा, श्री श्री संघ जौहरी धड़ा और श्री ओसवाल श्री संघ जौहरी धड़ा इन चारों धड़ों को यथा समय प्रार्थना पत्रों पर विचार करने के वास्ते शामिल होने के लिए आमन्त्रण किया गया था जिसमें अपने आम पंचायती में केवल श्री श्री संघ जौहरी धड़े के पांच प्रतिनिधि उपस्थित थे, और तीनों धड़े के तरफ से न कोई प्रतिनिधि उपस्थित हुवे और न कोई सूचना मिली थी। इति

इस तरह विवाद का पटाक्षेप हुआ। किन्तु पूरा समाज इसे सहजता से तब भी ग्रहण नहीं कर पाया। अनेक वर्षों तक यह जहर देश के विभिन्न कोनों में समाज को सालता रहा। मुनि छत्रमलजी (तेरापन्थी संप्रदाय) ने अपने ग्रंथ "इतिहास के बोलते पृष्ठ" (१९६१) में विक्रम संवत् १९९९ के चुरू चतुर्मास में दिए आचार्य तुलसी के एक व्याख्यान का जिक्र किया है जिसमें उन्होने दुखी मन से कहा—"वर्षो से फैला हुआ यह देशी-विलायती का संघर्ष जिसने बाप-बेटे और मां-बेटी को बिछुड़ा कर एक प्रतिद्वन्दी के रुप में खड़ा कर दिया है न जाने इसकी अन्त्येष्ठि कब होगी।" इस आह्वान पर, कहते हैं थोड़े से प्रयत्न से चुरू में दोनों पक्षों के महारथी श्री चम्पालाल जी कोठारी एवं श्री हनूतमल जी सुराणा व्याख्यान में खड़े हुए। थली प्रदेश व्यापी जाति संघर्ष की जड़ जहां शुरू हुई, वहीं उसका अंतिम संस्कार करने का निर्णय कर के सभी ने परस्पर क्षमा याचना की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ओसवाल नवयुवक समिति, कलकत्ता ने जौहरी धड़े के उक्त प्रस्ताव का समर्थन करते हुए एक प्रीति सम्मेलन का आयोजन किया। कलकत्ता के मुख्य दैनिक 'विश्वमित्र' एवं आगरा के 'श्वेताम्बर जैन' पत्रों ने पूरे विवाद के समाधानार्थ अहम् भूमिका निभाई थी।

इस पूरे विवाद पर एक विंहगम दृष्टि डाले तो इसकी जड़ में अशुद्ध खान-पान (सामिष) भी नजर आता है। हालांकि उसे धार्मिक जिहाद का रुप दे देने से वह सामाजिक वैमनस्य का कारण बना परन्तु आज के परिप्रेक्ष्य में अशुद्ध खान-पान का यह मुद्दा एक बार फिर शोचनीय बन गया है। डा. नेमिचन्द जैन ने 'तीर्थकर' के माध्यम से शाकाहार क्रांति का बिगुल बजा कर समाज की कुंभकर्णी निद्रा तोड़ने की कोशिश की है।

मालवीय-अरुणोदय-ओसवाल विवाद

मारवाड़ एवं मेवाड के कुछ ओसवाल परिवार कभी मालवा जाकर बसे। मुख्यतः अर्णोद नगर से उठ कर जाने के कारण वे मालवा में अर्णोदय ओसवाल कहलाने लगे। धीरे-धीरे अन्य प्रदेशों में वे मालवी या मालवीय ओसवालों के नाम से पहचाने जाने लगें। मूलतः वे बीसा ओसवाल हैं। बीसवीं सदी के शुरु में उनके साथ संबंधों को लेकर विवाद उठ खड़ा हुआ। अखिल भारतीय ओसवाल महा सम्मेलन ने सन् १९३४ में इस हेतु एक कमीशन नियुक्त किया। कमीशन की रिपोर्ट से सम्मेलन ने उक्त तथ्य को मान्यता प्रदान की। इनका मूल गोत्र गुंदेचा था। गुंदेचा गोत्र की उत्पत्ति वि. सं. १३४० में लक्ष्मीधर जी ब्राह्मण के गुंदेचा नगर में जैनी हो जाने से हुई। वि. सं. १४१० में उनके अर्णोद से उठने का उल्लेख दस्तावेजों में पाया जाता है। वैसे अर्णोदयी ओसवालों के ३५ उपगोत्र हैं वे भी बीसा ओसवाल गोत्रों के समान ही है। उनके कुल गुरु भी एक ही हैं। एक बार सेवगों ने उनके ओसवाल होने के तथ्य को चुनौती देते हुए उनकी नौकरी करने से इन्कार कर दिया था। उदयपुर राज की सदर दीवानी अदालत ने अर्णोदयों के हक मे फैसला दिया और सेवगों ने उनकी नौकरी करना स्वीकार कर लिया। कतिपय लोगों द्वारा अर्णोदयों के रस्मों-रिवाज भिन्न बताते हुए एवं उनके आचरण को अशुद्ध बताते हुए सम्मेलन के इस निर्णय पर आपत्ति की गई थी। परन्तु सम्मेलन ने पूरी छानबीन के उपरान्त उन्हें बीसा ओसवाल स्वीकार किया। उक्त रिपोर्ट एवं आपत्तियां सम्मेलन के मुख पत्र "ओसवाल सुधारक" में प्रकाशित कर दी गई।

वैष्णव परम्परा के ओसवाल

जैन धर्म की प्रभावना के लिए प्रस्थापित ओसवाल समाज ने धर्म को रूढ़ अर्थों में जीवन से विमुखता या पलायन का जरिया कभी नहीं बनने दिया। सदैव सत्-चित्-आनन्दोन्मुख यह समाज सर्व धर्म समभाव का पोषक रहा। वस्तुतः ओसवालों के आदि गोत्र शैव मतावलम्बी ही थे। कालान्तर में जैन धर्म ग्रहण करने के उपरान्त भी क्षात्र धर्म निबाहते हुए इस समाज ने अहिंसा को रूढ़ार्थी बंधन से मुक्त रखा। कदाग्रह को प्रश्रय न देने एवं सत्यशोध का समर्थन करने की प्रवृति के ही फलस्वरुप समाज में जब-जब धर्म की हानि हुई, मठों चैत्यों एवं स्थानकों में केन्द्रित जीवन मूल्यों का ह्रास हुआ, एक विद्रोह का जन्म हुआ। नये-नये सम्प्रदायों की उत्पत्ति

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के मूल में सत्य शोध की यही सद्प्रवृत्ति थी। धर्म को जीवन से जोड़े रखने की अभीप्सा ने ही कालातंर में कुछ ओसवाल परिवारों को दिगम्बर एवं वैष्णव परम्परा के निकट ला दिया। यह परिवर्तन कुछेक स्थानीय ईकाईयों तक ही सीमित रहा एवं रोटी-बेटी व्यवहार की पूर्व परम्परा ज्यों की त्यों कायम रही। देश-विदेश में फैले वृहद ओसवाल समाज के ऐसे समस्त परिवारों का इतिहास संकलन सम्भव नही है किन्तु कुछेक झलकियां उनका दिग्दर्शन कराने के लिए पर्याप्त हैं।

ऐतिहासिक दस्तावेजों से यह स्पष्ट है कि गेहलड़ा गोत्रीय जगतसेठ खानदान के कतिपय परिवारों ने वैष्णव धर्म स्वीकार कर लिया था। पाश्चात्य विद्वान हंटर के बंगाल सम्बंधी विवरण में (Statical Account of Bengal-Vol-IX) जगतसेठ हरखचन्द (संवत् १८३९-७०) के वैष्णव धर्मी होने का उल्लेख है। सैरउलमुताखारीन के अनुसार एक वैष्णव संत के वरदान से जगतसेठ को पुत्र प्रप्ति हुई। उन्होंने अपनी कोठी के समीप ही भगवान कृष्ण का एक मंदिर बनवाया। हालांकि खानदान की महिलाएं तब भी जैन धर्म की मान्यताओं एवं परम्पराओं से ही जुड़ी रहीं।

बनारस के राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द का पूरा खानदान वैष्णव धर्मी है। उनके पिता ने शैव धर्म अंगीकार कर लिया था। इसके पूर्व इनके पूर्वज जैन धर्माबलम्बी थे। ये राधा-कृष्ण की उपासना करते हैं। किन्तु घर की महिलाऐं पूर्ववत् दिग्मबर या श्वेताम्बर जैन धर्मोपासना करती हैं। उनके बच्चों के विवाह सम्बंध भी जैन परिवारों में होते हैं।

राजगृह मन्दिरों से सम्बंधित विवाद में अनेक गवाहों ने ओसवाल समाज के वैष्णव परिवारों का नामोल्लेख किया है। (रायकुमार सिंह व अन्य बनाम सर सेठ हुकमचन्द व अन्य)।

बीकानेर के बच्छावत खानदान में कर्मचन्द जी के वंशज भान अपनी माँ के साथ उदयपुर बसे। उनके वंशजों में पृथ्वीराज जी राज्य की सेवा में थे। वे अन्ततः महाराणा के रसोड़े के अधिकारी बन गऐ। मेवाड़ के महाराणा एक लिंग जी के भक्त रहे हैं। महाराणा के खानदान के प्रभाव में भाण के वंशज भी शिव शक्ति के उपासक बन गए। पृथ्वीराजजी के पुत्र अगरचन्दजी बड़े पराक्रमी थे। इस समय तक वे मेहता कहलाने लगे थे। मेहता अगरचन्द जी महाराणा अरिसिंह के समय विक्रम संवत् १८१८ से १८५६ तक मेवाड़ राज्य के प्रधान रहे। उन्हें मांड़लगढ़ के किले का सत्वाधिकार प्राप्त हुआ। उनकी वैष्णव धर्म में बड़ी श्रद्धा थी। अपनी मृत्यु से पूर्व अपने वंशजों के लिए जो नसीहतनामा वे लिख कर गये उसमे ये नसीहतें भी थी—"जैन मत जात रीत कर लीजो पण जैन मत अंग मत धारजो।" "गीता बाच्या सुणीया बना ब्राह्मण भोजन कराया बना दिन मत गमाव जो।" "गोवर्धननाथ ने घड़ी भी मत भूलज्यों।"

मेहता अगरचन्दजी के ज्येष्ठ पुत्र मेहता देवी चन्दजी अगरचन्दजी की मृत्यु पर मेवाड़ राज्य के प्रधान नियुक्त हुए परन्तु उन्होंने मांडलगढ़ रह कर रचनात्मक कार्यों में अधिक रुचि ली। उन्होंने जालेसर तालाब का निर्माण करवा कर एक हजार बीघा सींचित भूमि का कर श्रीनाथ जी को समर्पित कर दिया। सिंगोली स्थित चार भुजा के मन्दिर का कार्य सुव्यवस्थित कर वहां

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एक बावड़ी का निर्माण कराया। इनका पूरा खानदान वैष्णव धर्मी था। इनके तीसरे पुत्र स्वरूपचन्दजी (वि.सं.१८४५ से १९१५) का महाराणा बहुत सम्मान करते थे— वे सच्चे वैष्णव धर्मी थे।

मेहता स्वरूपचन्दजी के पुत्र गोकुलचन्द जी बड़े प्रतिभासम्पन्न एवं आध्यात्मिक प्रकृति के थे। ये महाराणा स्वरूपसिंह के समय संवत् १९१२ से १९१६ तक मेवाड़ राज्य के प्रधान रहे। इन्होंने भगवान कृष्ण का एक भव्य मंदिर बनवाया। महाराणा एवं नाथद्वारा के गोस्वामीजी के बीच किसी कारण से मनमुटाव हो गया था। महाराणा ने मेहता गोकुलचन्दजी को गोस्वामीजी को बन्दी बनाने के लिए भेजा। इन्होंने बड़ी सूझ-बूझ से गोस्वामीजी को महाराणा के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया। इन्होंने अनेक रचनात्मक कार्य किए। फतहसागर एवं लक्ष्मी विलास महल की नीवं इन्हीं के कार्यकाल में पड़ी। उदयपुर के कुछ प्रसिद्ध दर्शनीय स्थानों में सहेलियों की बाड़ी, सज्जन निवास बाग, सज्जनगढ़ का महल, देबारी की गुफा आदि का निर्माण एवं अन्य दुर्ग एवं महलों का जीर्णोद्धार इन्हीं के समय में सम्पन्न हुआ। प्रजा इनसे बहुत प्रसन्न थी। उनकी प्रशंसा में एक दोहा प्रसिद्ध है—

मांडलगढ़ मथुरा नगरी, सागर जमना नीर।
कृष्ण ज्यों केलि करे, गोकलचन्द गम्भीर॥

इन्हीं के वंशज मेहता पन्नालालजी ने नाथद्वारा में सदाव्रत खोला। उन्होंने 'बाड़ी' नाम से उदयपुर में मशहूर बगीचा बनवाया और उसे नाथद्वारा के मन्दिर को भेंट कर दिया। उन्होंने चारों धामों की यात्रा की। भारत सरकार ने सं.१९३७ में आपकों C. I. E. (कैसरे हिन्द) की पदवी दी। अनेक अंग्रेज इतिहासकारों ने आपके शासन प्रबंध की प्रशंसा की है। मेहता गोकलचन्दजी के पौत्र मेहता अक्षयसिंहजी शिव शक्ति के सच्चे उपासक एवं वैष्णव भक्त थे। इनके पुत्र मेहता लक्ष्मणसिंहजी द्वारा प्रदत भूमि पर एक लाख रूपये की लागत का गायत्री देवी का मन्दिर निर्मित हुआ है जो आध्यात्मिक लोगों के लिए आकर्षण का केन्द्र बन गया है। आज भी ये परिवार वैष्णव धर्मी है।

"राजस्थान की जातियों" के लेखक श्री बजरंग लाल लोहिया के अनुसार महाराज विजयसिंह के शासन में महनोत गोत्र के अनेक गणमान्य श्रेष्ठि वैष्णव हो गये उनकी पहचान स्वरुप उन्हें सिंग समुदाय कहते है।

जोधपुर के महणोत खानदान के रायबहादुर मेहता विजयसिंह जी (सं.१८६३-१९४९) भी वैष्णव सम्प्रदाय की विशिष्टाद्वैत शाखा के अनुयायी थे। आपने फतहसागर के पास सं. १९४६ में रामानुज कोट का निर्माण कराया एवं वहाँ वेंकटेश्वर का भव्य मंदिर बनवाया। आपके वंशज वैष्णव धर्मानुयायी ही है।

पाली के सिंघवी जोरावरमल जी का खानदान भी वैष्णव धर्मानुयायी हैं। सिंघवी दिवान गम्भीर मलजी ने सं.१८८८ में रघुनाथजी का मन्दिर एवं एक रामद्वारा बनवाया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिगम्बर परम्परा के ओसवाल

राजगृह के श्वेतम्बर दिगम्बर मन्दिरों की व्यवस्था सम्बंधी सन् १९२४ के मुकदमें "(रायकुमार सिंह व अन्य बनाम सर सेठ हुकुमचन्द व अन्य) में हुई धुरन्धर विद्वानों एवं समाज के पुरोधाओं के बयान के मुताबिक श्वेताम्बर एवं दिगम्बर जैनों के बीच सामाजिक वैमनस्य कभी नहीं हुआ। सम्प्रदाय रुपान्तरण के बावजूद उनमें आपस में विवाह सम्बंध चालू रहे। जगत सेठ के घराने में दिगम्बर घराने की बहुऐं आईं। इसी तरह बनारस के राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द एवं उनके खानदान ने वैष्णव धर्म अंगीकार करने के बाद दिगम्बर घरानों में विवाह सम्बन्ध स्थापित किए।

बाबू काशीप्रसाद गांधीं दिगम्बर जैन थे—उनके पूर्वज कालपी में वास करते थे। उनके घराने से राजा साहब के खानदान में विवाह सम्बंध हुए। बनारस के ही श्वेताम्बर मतानुयायी पन्नालाल जी ओसवाल के परिवार के भी कालपी के गांधी गोत्रीय दिगम्बर मतानुयायी ताराचन्दजी के परिवार में विवाह सम्बंध हुए।

बनारस की श्री संघ पंचायत में सभी ओसवालों को सम्मिलित किया जाता है भले ही वे वैष्णव हों या दिगम्बर। सामाजिक व्यवस्था का यह एक कीर्तिमान है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

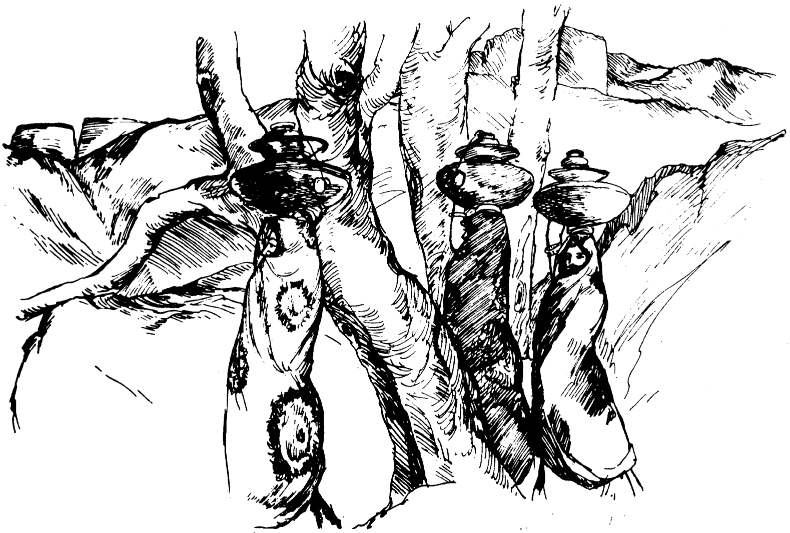

अध्याय

नव-दश

ओसवालः समस्याऐं-समाधान

ओसवाल समाज : समस्याऐं और समाधान

इतने विशाल समाज को निसन्देह समय समय पर विभिन्न समस्याओं का सामना करते रहना पड़ा है। उनकी समीक्षा रुचिकर नहीं भी हो सकती है। किन्तु वे हमारे विकास पथ के मील के पत्थर हैं। कुछ को हम छोड़ आए हैं, कुछ हमारे साथ अब भी चिपकी है। कुछ को याद कर हम लज्जित होंगे, कुछेक हमें पूर्वजों के प्रति क्रोध से भर देगी। परन्तु वे सब हमारा भविष्य पथ प्रशस्त करने में भी सहायक होंगी। समस्याओं की सम्यक समीक्षा से उनके प्रति हममें बोध जाग्रत होगा और उनके समाधान सहज ही परिलक्षित होंगे।

किसी भी रीति या नियम का जन्म किसी अपरिहार्य कारण वशात या मजबूरी से होता है। कभी-कभी ऐश्वर्य की निशानी स्वरूप भी उसका प्रचलन होता है। समय के साथ ज्यों-ज्यों परिस्थितियाँ बदलती है, बोध जाग्रत होता है रीति का औचित्य भी खत्म हो जाता है और वे भार स्वरूप बन जाती हैं। एक समय ऐसा भी आता है जब वे नासूर बन कर रिसने लगती है एवं शल्यक्रिया स्वरूप क्रांति अनिवार्य हो जाती है। सामाजिक रीतियों का भी यही इतिहास

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

क्वांरे-क्वांरियोंकी तालिका

कुँवधा राज्य-क्वांरे लड़के

	नाम	गोत्र	आयु
१	उदयचन्दजी वल्द नगराजजी	वैद	१७ वर्ष
२	हुक्मचन्दजी ,,	,,	७ ,,
३	लालचन्दजी वल्द रामलालजी	बोथरा	१३ ,,
४	मांगीलालजी वल्द रघुनाथमलजी	लूणिया	८ ,,
५	दगड़चन्दजी वल्द नगतमलजी	श्रीश्रीमाल	८ ,,
६	धर्मचन्दजी वल्द चाँदमलजी	लूणिया	१२ ,,
७	नेमिचन्दजी वल्द लूणाजी	सेठिया	१५ ,,
८	नेमिचन्दजी वल्द जोहारमलजी	लूणिया	१८ ,,

क्वांरी लड़कियां

	नाम	गोत्र	आयु
१	हीराबाईजी वल्द नगराजजी	वैद	१३ ,,
२	प्यारीबाईजी वल्द रामलालजी	बोथरा	१० ,,
३	रज्जूबाईजी वल्द रघुनाथमलजी	लूणिया	११ ,,
४	कचराबाईजी वल्द नगतमलजी	श्रीश्रीमाल	१० ,,
५	धन्नीबाईजी वल्द जोहारमलजी	लूणिया	१० ,,
६	बद्राबाईजी वल्द लक्ष्मीचन्दजी		१४ ,,
७	बद्राबाईजी वल्द ऋषभदेवजी	टाटिया	८ ,,

गुंडरदेही (द्रुग) क्वांरी लड़कियां

	नाम	गोत्र	आयु
१	जमनाबाईजी वल्द हजारीमलजी	देशलहरा	१५ ,,
२	राधाबाईजी वल्द मोतीलालजी	देशलहरा	६ ,,
३	मदनबाईजी वल्द गेंदमलजी	देशलहरा	१२ ,,
४	ताराजी उर्फ कुसमकुमारीबाईजी		८ ,,

वरकी आवश्यकता

(१) सुगनबाई, उम्र १३ सालके लिए १८ या २० सालके और (२) सरे कुँवरि उम्र ८ सालके लिए १२ या १३ सालके वरकी आवश्यकता है। लड़कियोंकी शाखायें इस प्रकार हैं:— खुद चपलोत, ननिहालवाले मकवाना गादावत, पिताके ननिहालवाले ढेलावत तथा माताके ननिहालवाले वैद मेहता। वर सदाचारी, तन्दुरुस्त, अच्छे खानदानवाला और हिन्दी, अंग्रेजी में निपुण होना चाहिए। उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी हो। पूरा विवरण जाननेके लिए निम्न पतेसे सिर्फ बीसे बड़े साथ ओसवाल ही पत्र-व्यवहार करें।

फूलचन्द नन्दलाल चपलोत.
कपड़ेके व्यापारी, निंबाहैड़ा (रियासत टोंक) बी० बी० सी० आई०

कन्याकी आवश्यकता

एक २२ वर्षके बड़े साथ नवयुवकके विवाहकेलिए एक शिक्षित व सुशील कन्याकी आवश्यकता है। कन्या किसी भी बड़े साथ जाति, जैन संप्रदाय व प्रान्तकी हो। वर शिक्षित व सुशील है। उसकी ३५) माहवारपर मऊ छावनीमें नौकरी है। पत्र-व्यवहार निम्न पते पर करें:—

श्रीयुत एस० के० जैन, सिद्धान्तविशारद,
जैन-विद्यालय, स्टेशन उदयगढ़,
शाँदला (झाबुआ राज्य)

सन १९४३ में अखिल भारतीय ओसवाल महासम्मेलन के मुख पत्र 'ओसवाल-सुधारक' में प्रकाशित तीन विज्ञापन-जो अपनी कहानी आप कहते हैं।

Ac. Gunratnasuri MS
Jin Gun Aradhak Trust

है। उदाहरण के लिए स्त्रियों के पर्दा रखने की प्रथा को लें—प्राचीन भारतीय जातियों के इतिहास में कहीं पर्दा प्रथा का उल्लेख नहीं मिलता। मुसलमानी काल में अस्मत बचाने के लिए समाज में एक सुप्रथा के रूप में इसका जन्म हुआ। धीरे-धीरे बीसवीं शदी के आलोक में यह कुप्रथा मात्र रह गई और स्वयं खत्म हो गई। मध्य युग और वर्तमान के संधिकाल में ओसवाल समाज को जिन सामाजिक समस्याओं से जूझना पड़ा उनका यहाँ संक्षिप्त विश्लेषण करना समीचीन होगा।

बाल-विवाह

हमारे समाज में भी अधिकांश बाल विवाह ही होते थे। जिन्हें अपने दादा-परदादा की छत्रछाया मिली है उन्होंने ऐसी कहानियाँ अवश्य ही सुनी होगी। कन्या ७ से १० वर्ष एवं बालक १० से १२ वर्ष की अवस्था में ब्याह दिए जाते थे। अनमेल विवाहों का प्रचलन भी आम बात थी— कन्या बड़ी और बालक कम उम्र का या कन्या छोटी और वर बहुत बड़ा। हमारे लोक गीतों में इन तथ्यों का परिहास पूर्वक उल्लेख होता था। शारदा एक्ट द्वारा बाल विवाह कानूनन निषेध कर दिए जाने के बावजूद ऐसे विवाहों का प्रचलन था। पढ़े लिखे लोग भी इस विडम्बना के शिकार थे। 'ओसवाल सुधारक' के सन् १९३० के अंको में प्रकाशित विज्ञापनों में ऐसे पर्याप्त उदाहरण मौजूद है। नई हवा चलने और शैक्षणिक चेतना से समाज में विद्रोह की आंधी उठने लगी थी। बीकानेर के एक ४५ वर्षीय श्रेष्ठि के ११ वर्षीय कन्या से शादी कर लेने पर बाल विवाह निषेधक कानून के अन्तर्गत उन पर मुकदमा चला। उन्हीं दिनों दिल्ली के एक जौहरी पर भी मुकदमा हुआ जिसमें लड़की का पिता और पुरोहित भी दण्डित किए गए। कलकत्ता हाई कोर्ट ने अजमेर के सुप्रसिद्ध लोढ़ा परिवार की कन्या के विवाह हेतु राशि मुकर्रर करने की मांग इसलिए ठुकरा दी कि कन्या नाबालिग थी। ओसवाल महा सम्मेलन के अधिवेशनों में बाल विवाह के विरोध में हर साल प्रस्ताव पारित हुए। शिक्षा के आलोक से अब यह समस्या ही खत्म हो गई है।

वृद्ध विवाह

मध्ययुग तक वृद्ध विवाह को समस्या माना ही नहीं गया। एक एक कर ६०-६५ वर्ष की उम्र तक तीन चार विवाह करना ऐश्वर्य की निशानी थी। बड़ी और लौड़ी के मनोरंजक कथानक लोक गीतों के विषय थे। उनमें व्यंग या परिहास नहीं अपितु सौतनों के प्रति प्रेम एवं सौहार्द्र दर्शाया जाता था। कच्ची उम्र या वैज्ञानिक संसाधनों के अभाव में औरतों के लिए पहले शिशु का जन्म जान लेवा होता था। अतः बहु विवाह समय की आवश्यकता भी थी। ज्यों ज्यों बाल विवाह कम हुए, वृद्ध विवाह के विरोध में भी आन्दोलन हुआ। कन्याओं के विक्रय, वर बधू की उम्र के बढ़ते हुए अन्तर और काम लोलुप धनपतियों की अन्धी हविश ने समस्या को विद्रूप कर दिया। ओसवाल महा सम्मेलन के मंच से ४० से ऊपर उम्र के पुरुष के विवाह के विरोध में प्रस्ताव पारित हुए। आश्चर्य जनक तथ्य यह है कि सन् १९३२ तक ४० वर्ष की उम्र को वृद्धायु माना गया। अब तो २० से ४० तक युवावस्था

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मानी जाती है एवं ६५ के बाद ही वृद्धावस्था शुरु होती है। पुरुषों के लिए प्रथम विवाह की आयु सीमा प्रौढ़ होने तक चली गई है। अब वृद्ध विवाह कोई समस्या नहीं रह गई है। हालाँकि यदा कदा ऐसे प्रसंग भी उठ खड़े होते हैं।

बहुपत्नित्व—

हिन्दू मैरिज एक्ट के बनने तक हमारे समाज में बहुपत्नित्व को घृणा की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। उँचे घरानों में दो पत्नियाँ रखना ऐश्वर्य की निशानी समझी जाती थी। कहीं-कहीं तीन-तीन या चार-चार पत्नियों के उदाहरण भी मिलते हैं। लोक गीतों में बड़ी जी और लौड़ी जी का परस्पर प्रेम भी दर्शाया गया है। एक से अधिक विवाह का मूल कारण सन्तान की इच्छा रहा है विशेषतः पुत्र की। परन्तु इसके अपवाद भी थे। एक समय ऐसा आया जब यह मात्र विलासिता रह गया एवं इस कारण समाज में व्यभिचार पनपने लगा। सन् १९३५ में ओसवाल महा सम्मेलन के मन्दसौर में हुए अधिवेशन में जो प्रस्ताव पारित हुआ वह इस प्रकार था—

> *"एक तरफ तो समाज के नवयुवक धनाभाव के कारण शादी नहीं कर पाते, दूसरी तरफ धनाढ्य वृद्ध पुरुष ३-३/४-४ शादियाँ कर लेते हैं जिसके फलस्वरूप समाज में विधवाओं की तादाद बढ़ रही है और व्यभिचार को तरजीह मिल रही है। अतः ऐसी शादियाँ रोकी जायें।"*

उक्त प्रस्ताव एक नहीं, अनेक समस्याओं की ओर इंगित करता है जिनसे तात्कालीन ओसवाल समाज जूझ रहा था। ओसवाल सुधारक की एक खबर के अनुसार इन्दौर के एक सज्जन नें पाँचवी शादी की और तुर्रा यह कि वे जैन स्वयं सेवक मंडल के सदस्य थे। शनै शनै शिक्षा के आलोक एवं एक से अधिक पत्नि पर कानूनी रोक के कारण यह समस्या भी समाप्त हो गई।

भगतनों के नाच—

मुस्लिम-काल में आमोद-प्रमोद एवं शान शौकत के प्रदर्शन का यह साधन बहुत प्रचारित हुआ। हिन्दू समाज में वेश्याऐं तो आदिकाल से रही किन्तु नाचने गाने वाली देव दासियाँ बड़े-बड़े मन्दिरों तक सीमित रहीं एवं राजनर्तकियाँ राज दरबारों तक। मुस्लिम काल में गणिकाओं एवं नाचने गाने वाली भगतनों की संख्या में बहुत वृद्धि हुई और नगर नगर में बड़े बड़े सामन्तों और श्रेष्ठियों की कोठियों पर महफिलें सजने लगी। उन्नीसवीं सदी के आते आते धनाढ्य ओसवाल परिवारों के वैवाहिक कार्यक्रमों में भगतनों का नाच एवं मुजरा आम बात हो गई। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक बारात के साथ बाईजी मय अपने साज-साजिन्दों के नुक्कड़ों या विशेष स्थानों पर लोकगीत/गजलें प्रस्तुत करती चलती थी। ज़िस शहर में कोई गणिका नहीं होती थी, वहाँ अन्य शहरों से नामी गणिकाऐं बुलवाई जाती थी। अनेक सामन्त अपनी रिहायशी कोठियों से कुछ दूरी पर बड़ी-बड़ी आलीशन महफिलें निर्मित करवाते थे। वहाँ समय समय पर नाच गानों के आयोजन होते थे। शिक्षा का आलोक बढ़ते ही, इस विलासिता के विरोध

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में भी आवाज उठी। ओसवाल महा सम्मेलन के मंच से प्रस्ताव पारित कर इनकी भर्त्सना की गई। सन् १९३५ में नागौर के एक विवाह में वेश्या-नृत्य पर बड़ा बावेला उठा। लाडनूँ की एक बारात जब बीकानेर गई तो साथ बाईजी भी थी, इस कारण बीकानेर में बड़ा असन्तोष फैला। लोगों में जैसे-जैसे जागरुकता बढ़ी, भगतनों के ये नाच अपने आप खत्म हो गए। किन्तु इसके साथ ही समाज के अभिजात्य वर्ग में शास्त्रीय संगीत एवं नृत्य के प्रति जो रुझान थी वह भी समाप्त हो गई।

पासवान (रखैल)

मारवाड़ी लोक गीतों में अनेक गीत पति के परनारी सम्पर्क को लेकर गाए जाते हैं। जब परदेश में सालों गुजारने पड़ते थे तो कभी-कभार पर नारी या वेश्या के पास जाने को हेय नहीं माना जाता था। उल्टे यह चुहल या परिहास का माध्यम था। परन्तु इस छूट ने एक अन्य समस्या को जन्म दिया जो गले की फांस बन गई।

सन् १९३५ में ओसवाल सुधारक में छपे समाचारों से लगता है कि ओसवाल श्रीमंत परिवारों में पासवान (रखेल) रखनें की प्रथा उनके बड़प्पन की द्योतक थी। एक या एकाधिक पत्नियों के रहते हुए भी विलासी सामंत नीचे कुल की युवा एवं सुन्दर स्त्री को घर में डाल लेते थे। उसका या उससे उत्पन्न सन्तान का सम्पत्ति में कोई कानूनी अधिकार नहीं होता था। फिर भी परिवार में कलह एवं कदाग्रह का कारण तो वह अवश्य ही बन जाती थी। कितने ही अच्छे-अच्छे परिवार इस कारण रसातल को चले गए। उनकी सौबत के कारण परिवार की बहू बेटियों पर भी खतरे के बादल हर समय मंडराते रहते थे। बीसवीं शदी के चौथे दसक में इन्दौर के एक ओसवाल श्रेष्ठि ने पासवान घर में डाल ली। उसकी ५/७ वर्ष पूर्व ब्याही कन्या जब पीहर आई तो पासवान के चंगुल में फंस गई। ससुराल वालों ने मामला पंचायत में पहुँचाया किन्तु सेठजी के रोब के आगे किसी की न चली। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक यह समस्या अपने घिनौने स्वरूप में समाज पर पूर्णतया हावी थी। सन् १९३५ के ओसवाल महासम्मेलन के मन्द-सौर अधिवेशन में जो प्रस्ताव पारित किया गया वह समस्या के कटु पहलू को उजागर करता है— "लोग स्व स्त्री के मौजूद होते हुए भी एक एक या दो दो पासवान विषयांध होकर रखने लग गये हैं। इसलिए यह महासम्मेलन प्रस्ताव करता है कि ओसवाल समाज का कोई भी व्यक्ति अपनी स्त्री के मौजूद होते पासवान नहीं रखे।" ऐसे विरोध एवं विवेक का ही फल था कि समाज इस नाग पाश से छुटकारा पा गया।

कन्या विक्रय

समय परिवर्तन शील है। आज समाज में दहेज की विभीषिका फैली हुई है। किन्तु यह कोई सोच भी नहीं सकता कि किसी समय समस्या उल्टी थी। कन्या के माँ बाप मुँह मांगी रकम लेकर कन्या का विवाह करते थे। ओसवाल सुधारक के सन् १९३४-३५ के अंकों में ऐसी अनेक घटनाओं के रोंगटे खड़े करने वाले विवरण प्रकाशित हुए थे। इस युग में वैसी बात कल्पना से भी बाहर है। "सीतामउ के एक ओसवाल श्रेष्ठि ने अपनी पन्द्रह वर्षीय कन्या

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की सगाई तय की। परन्तु इकरारनामे के अनुसार उसने दस हजार रुपये न मिलने की सूरत में कन्या का विवाह करने से इन्कार कर दिया। इसी सेठ ने अपनी बड़ी बेटी कलकत्ते के एक ६० वर्षीय वृद्ध जौहरी को रुपये लेकर व्याह दी थी। सेठ जी स्वंय उस पैसे से पासवान रख कर आराम कर रहे थे और लड़की विधवा होकर जीवन बिता रही थी।" ऐसे मामले पंचायतों तक भी पहुँचते थे परन्तु तात्कालीन पंचायतें भी ऐसे विषयांध धनाढ्य श्रेष्ठियों के कब्जे में थी। शनै शनै शिक्षा के आलोक से यह समस्या भी समाप्त हुई। यह ओर बात है कि इसके विपरीत खड़ी दहेज की समस्या अब भी समाज का नासूर बनी हुई है।

पंचायतों की ज्यादती

"ओसवाल" भारतवर्ष की प्राचीनतम सांस्कृतिक गरिमा को अक्षुण्ण रखने वाली जातियों में प्रमुख जाति है। पंच-पंचायती के माध्यम से युगों युगों तक वह एक सूत्र में बंधी रही। जो पंच फैसला कर देते वह हरएक को स्वीकार्य होता। मुस्लिम काल की अनेक बुराईयों के साथ इस संस्था को भी घुन लग गये। विक्रम की चौहदवीं शदी में समाज पर पंचायतों के शिकञ्जे की कई मिसालें उल्लेखनीय है। आर्य गोत्रीय श्रेष्ठि लूणा शाह के महेश्वरी कन्या से विवाह कर लेने पर पंचायत ने उन्हें जाति- बहिष्कृत कर दिया था। नागौर के धनाढ्य चोरड़िया गोत्रीय श्रेष्ठि सारंगशाह ने जब यह बात सुनी तो पंचों को बहुत समझाया। पर जब उन पर कोई असर नहीं हुआ तो शाह ने अपनी कन्या का रिश्ता भी लूणा शाह से कर दिया। वे संघपति थे। समाज को इसे स्वीकार करना पड़ा। बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में पंचायतों का विद्रूप ही शेष बचा था। पंच अपने स्वार्थ के लिए पूरे समाज का अहित कर देने में भी संकोच नहीं करते थे। जो भी उस शिकंजे से बाहर होने की चेष्टा करता या उनके आदेश का उलंघन करता उसे तत्काल भारी जुर्माना देना पड़ता या जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता। सन् १९३५ के ओसवाल सुधारक में प्रकाशित एक खबर के अनुसार सादड़ी में एक १८ वर्षीय ओसवाल कन्या की सगाई झाबुआ के ओसवाल परिवार के एक १५ वर्षीय बालक के साथ ब्राह्मण के माध्यम से (यानि दोनों ही परिवार वालों के परस्पर अनदेखे) तय हुई। लड़का कन्या से छोटा ही नहीं, दुबला और रोग ग्रस्त था। लड़की के माता-पिता को मालूम हुआ तो उन्होंने अनमेल शादी करने से इन्कार कर दिया। पंचायत बैठी। पंचों ने जाति बहिष्कार की धमकी देकर जबरदस्ती शादी करवा दी। अगली साल ही लड़के की मृत्यु हो गई। जामनगर की एक खबर के अनुसार ओसवाल बीसा परिवार की एक विधवा गर्भवती हो गई। पंचायत ने उन्हें जाति बहिष्कृत कर दिया। स्थानीय आर्य समाज ने उन्हें अपने में शरीक कर लिया। ऐसी सैंकड़ों बहिष्कृतियों का परिणाम अन्ततः समाज को ही भुगतना पड़ा। दसा-बीसा या पाँचा ढाया प्रभेद की जनक ये बहिष्कृतियाँ ही रही है। आपसी कलह और धड़े बाजी चरम सीमा पर थी। सन् १९३५ के ओसवाल सुधारक की एक खबर के अनुसार इस धड़े बाजी से आपस का रोटी बेटी व्यवहार टूट गया, पंचायतें मात्र सर फुटौवल और पक्षपात के अड्डे बन गई। अन्ततः यह संस्था ही समाप्त हो गई। समाज में समस्याऐं अब भी बनी हुई

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

है। अच्छी बातों के प्रसार के लिए सामाजिक संगठन की आवश्यकता भी महसूस की जा रही है। परन्तु जबरदस्ती कोई भी नियम समाज पर थोपना अब सम्भव नहीं रह गया।

यतियों का प्रभाव

जब धर्म की प्रभावना हेतु चैत्यों उपासरों एवं स्थानकों का निर्माण होने लगा तभी से वे लोक-कल्याण कारी प्रवृत्तियों का संचालन करने एवं धार्मिक क्रिया कलापों को एक दिशा देने में अग्रसर थे। वे शिक्षा और वैद्यक चिकित्सा के केन्द्र थे— इसीलिये लोक प्रिय भी थे। वे सामान्य जन को अनुप्राणित करते थे एवं ब्राह्मणों के अतिशय कर्म कांडों से समाज को बचाए हुए थे। परन्तु शनै शनै ये उपासरे भी मठ बन गए। सम्पत्ति का उपयोग विलासिता में होने लगा। स्वार्थ साधन एवं कर्म कांडों का वहाँ भी बोलबाला हो गया। परिवार के युवा पुरुष जब परदेश रहते तो लोलुपी यति स्त्रियों को अपने पंजे में फंसा कर बेजा फायदा उठाते। समाज उनके चंगुल में कसमसाने लगा। ज्यों-ज्यों शिक्षा का प्रकाश फैला, उनकी उपयोगिता ही समाप्त हो गई। ऐसे अधिकांश उपासरे बन्द हो गए।

चाँदनी

समाज में पर्दा प्रथा की शुरूआत किसी सदुद्देश्य से भले ही हुई हो किन्तु बीसवीं शदी के पूर्वार्द्ध तक उसके प्रचलन का एक कारण शिक्षा की कमी भी था। यहाँ तक कि पढ़े लिखे लोग भी पर्दे के पक्षधर थे। उनकी दलील थी कि पर्दा हटाने से स्त्री की मर्यादा का लोप होगा एवं अनाचार बढ़ेगा। स्त्री-शिक्षा के विरोध में भी यही दलील दी जाती थी। इसी कूपमण्डूकता के फलस्वरूप कई हास्यास्पद रीतियाँ चल पड़ी। उनमें से एक थी— चाँदनी। ओसवाल मुत्सद्दी घरानों की स्त्रियाँ जब घर से बाहर निकलती तो आठ फुट लम्बी, पाँच फुट चौड़ी चाँदनी (कपड़ा) से ढकी रहती। दो- दो औरते (नौकरानियाँ) उसे आगे पीछे पकड़ कर चलती। एक चलता फिरता डिब्बा सा लगता। आँखे होते हुए भी अन्धगी और तुर्रा यह कि इसे इज्जत की निशानी समझा जाता था। श्री बजरंगलाल लोहिया ने 'राजस्थान की जातियाँ' ग्रंथ में ओसवालों के मुत्सद्दी घरानों के सन्दर्भ में जो अपने आपको अन्यों से श्रेष्ठ समझते थे, पर्दा प्रथा के इस रूप का जिक्र किया है। यों तो घर से बाहर निकलना भी स्त्रियों के लिए वर्जित था। जब सामूहिक रूप से वे कनातों से घिरी गीत गाती सड़कों पर निकलती तो खासी मजाक का सबब बन जाती। सन् १९३५ के 'ओसवाल सुधारक' में श्री गणपतिचन्द्र भण्डारी का इसी सन्दर्भ में एक लेख छपा। सभ्यता एवं शिक्षा के विकास के साथ ही समाज ऐसी कुप्रथाओं से मुक्त हो सका। एक समय था जब नवविवाहिता के लिए पहुँचे से लेकर कंधे तक हाथी दाँत का भारी भरकम चूड़ा पहनना अनिवार्य था। महासम्मेलन के प्रस्तावों में इसका भी प्रतिकार करना पड़ा था। वह सामन्ती युग का ही प्रतीक चिह्न था जो स्वयं समाप्त हो गया।

मृत्यु पर रोने की प्रथा

वर्तमान पीढ़ी के लिए यह किंचित आश्चर्य की बात होगी कि हमारे समाज में किसी सम्बन्धी की मृत्यु पर कभी गला फाड़-फाड़ कर तरन्नुम से (गा गा कर) औरतों के रोने की प्रथा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

थी। मृत्यु पर शोक-संवेदना सलीके से भी प्रकट की जा सकती है। किन्तु यह उसका भोंडा प्रदर्शन मात्र होता था। गली के नुक्कड़ से ही औरतें रोना शुरु कर देती। रो रो कर थक जाती तो थोड़ी देर के लिए रुक जाती। किसी नई रोती हुई औरत के प्रवेश करते ही सब दिखावे के लिए समवेत स्वरों में रोना फिर शुरु कर देती। अधिकांश स्त्रियाँ रोने का स्वागं ही करती। यह पाखण्ड उठावने तक निरंतर चलता रहता। नए शिक्षित समाज को यह गवारा न होता। राजस्थान के अनेक गाँवों में तो यह प्रथा अब भी कायम है। किन्तु थली प्रदेश में इसे प्रथा रूप बन्द करवाने का श्रेय तेरापंथी जैन आचार्य श्री तुलसी को है जिनके 'नई मोड़' अभियान ने महिला समाज में अभूत पूर्व क्रांति का सूत्रपात किया।

मृत्यु-भोज (मोसर)

परम्परागत हिन्दू समाज में कर्मकांडों का सदा बोलबोला रहा है। ओसवाल भी इससे अछूते नहीं रहे। परिवार में बड़े बूढ़ों की मृत्यु पर उनकी आत्मा की शांति के लिए अनेक क्रियाओं का प्रथा रूप प्रचलन हमारे समाज में भी है। मोसर उन्हीं में से एक है। हिन्दू ही नहीं जैन एवं इस्लाम धर्मावलम्बी जातियाँ भी इस रोग से ग्रसित है। भरी पूरी जिन्दगी जीकर वृद्ध अभिभावक का मृत्यु वरण समस्त परिवार का अहोभाग्य हो सकता है किन्तु मरे हुए के पीछे घर, जायदाद, जेवर होम कर या गिरवी रख कर इस प्रथा का पालन करना ना समझी ही कही जायेगी। मध्य युग में एक समय ऐसा भी था जब पंचों के निर्मम निर्णय, जुर्माने एवं जाति बहिष्कार की धमकी में असहाय विधवाओं ने नन्हें बच्चों के मुँह के कोर छीनकर मोसर किए। पंचों की हठधर्मी ने प्रथा को घृणित रूप दे दिया। ओसवाल महा सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन से ही मोसर के विरोध में प्रस्ताव पारित हुए। प्रगतिशील कार्यकर्त्ताओं ने ऐसे अवसरों पर सत्याग्रह किया, पिकेटिंग की। मोसर का विभत्स रूप तो पंचायतों के साथ ही खत्म हो गया परन्तु प्रथा रूप में अब भी कहीं-कहीं लीक पीटी जाती है।

विधवा-विवाह

प्राचीन भारत में विधवा विवाह कोई समस्या न थी। आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभ का प्रथम विवाह युगल रुप में जन्मी सुमंगला से हुआ। कालांतर में उन्होंने दूसरा विवाह अपने भाई की विधवा पत्नि सुनन्दा से किया। इस तरह विधवा विवाह को शास्त्रीय स्वीकृति तो आदि युग से ही है। विधवा विवाह समस्या बनी मध्ययुगीन भारत में। स्त्री को पांव की जूती समझकर समस्त अधिकारों से वंचित कर दिया गया। शिक्षा तो उसके लिए वर्जित थी ही, घर से पाँव निकालने को भी नाजायज करार दे दिया गया। लोगों की औसत उम्र ४०-५० वर्ष थी। समाज में बाल विधवाओं की तादाद अधिक थी। पंचायतों का शिकञ्जा इतना कसा हुआ था कि किसी बाल विधवा से विवाह कर लेनें पर पूरे खानदान को जाति बहिष्कृत कर दिया जाता था। इस कारण व्यभिचार भी पनपा। बींसवीं सदी के चौथे दशक में विधवाओं के पुनर्विवाह की आवाज उठने लगी। काठियावाड़ के दसा श्रीमाली युवक सम्मेलन के सन् १९३० के अधिवेशन में इच्छा के विरुद्ध वैधव्य पालन की प्रथा को स्त्रियों पर अत्याचार बताया गया एवं उनके पुनर्विवाह

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

का समर्थन किया गया। ओसवाल महासम्मेलन के प्रथम अधिवेशन से ही बाल विधवाओं के विवाह के पक्ष में प्रस्ताव पारित हुए। किन्तु अनेक कोशिशों के बावजूद समस्या अब भी बनी हुई है। इक्के दुक्के पुनर्विवाह होते भी रहे है पर अधिकांश विधवाऐं वैधव्य का भार ढ़ोते-ढ़ोते ही जिन्दगी गुजार देती हैं।

दहेज एवं अन्य समस्याऐं

उपरोक्त समस्याओं ने समय-समय पर समाज को आतंकित किया। अधिकांश नये युग एवं शिक्षा के साथ ही समाप्त हो गई। कुछ समस्याऐं ऐसी भी थी जो कभी गम्भीर समस्या बनी ही नहीं। जैसे देहातों या कस्बों में बारात के विवाह हेतु प्रस्थान के बाद घर पर स्त्रियों द्वारा अश्लील गीत गाने की प्रथा या जँवाई के विवाहोपरांत ससुराल आने पर भोजन में अखाद्य पदार्थों का परोसा जाना, बरनोली के समय होने वाले भगतनों के नाच-गाने आदि। ये हास परिहास एवं नाच-गाने जीवन शैली के अगं थे। जब जीवन शैली ही बदल गई तो उनका अस्तित्व भी खत्म हो गया। कुछ समस्याएं ऐसी भी रही जो वृहद भारतीय परम्परा का अंग हैं— जैसे भूत प्रेत का डर, झाड़-फूँक, जंतर-मंतर, अनेक तरह के अंध विश्वास आदि। ये कुसंस्कार शिक्षा के आलोक के साथ शनै-शनै विदा हो रहे है। हमारे समाज में कभी जुए का बड़ा प्रभाव रहा है-अनेक धनपति समय के फेर से जुए के कारण कंगाल हो गए। त्योंहारों के समय लाटरियों का प्रचलन अब भी है। ताश के खेल या वायदा-बाजारों में जुआ अब भी खेला जाता है। 'केसिनो' जुए का ही आधुनिक रुप है।

एक समस्या ऐसी भी है जो अनेकानेक विरोध एवं कानूनन् वर्जित होने पर भी समाज पर हावी है। दहेज की इस शाश्वत समस्या ने आत्महत्या एवं वधू दहन जैसी विकराल विभीषिकाओं को जन्म दिया है। समस्त भारतीय समाज इससे त्रस्त हैं। आर्थिक शोषण पर टिके समाज को इसका कोई हल नजर नहीं आता। जब हर कोई इस शोषण-चक्र में लिप्त हो तो मात्र रिश्तों में प्यार एवं शुद्धता की अपेक्षा की भी कैसे जा सकती है। नारी जागरण, शिक्षा एवं स्त्रियों का आर्थिक स्वावलम्बन ही समस्या का एक मात्र हल है। वही नये युग की आशा है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय

बिंश

ओसवालः जनगणना में

सम्पूर्ण भारत और विदेशों में फैले ओसवालों की जनगणना कर पाना अब बहुत मुश्किल है। राष्ट्रीय जनगणना से भी इनका कोई अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता। फिर भी यह सत्य है कि ओसवाल आज कई करोड़ की संख्या में है। यह संख्या मूलतः वंशानुक्रम से नहीं बढ़ी। इसकी उत्पत्ति अन्य जातियों के जाति परिर्वतन से हुई। अन्य जातियों के लोगों का यह आवा-गमन निरन्तर चलता रहा एवं इसका विकास क्रम प्रभावित करता रहा।

वि. संवत् १९५८ में राजपूताने की जो मर्दुमशुमारी हुई थी उसमें ओसवालों की संख्या २,२९,१८८ बताई गई थी। उसमे बीकानेर, जोधपुर, मेवाड़ एवं अजमेर प्रांत ही मुख्यतः शामिल किए गए थे। सबसे घनी आबादी जोधपुर प्रांत की ९६,७९६ अंकित की गई थी। इनमें उस समय के सी. पी. बरार, खानदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, अहमदनगर, मद्रास, हैदराबाद, बिहार, यु.पी. आसाम, बंगाल आदि प्रांतों की आबादी शामिल नहीं थीं। एक अनुमान के अनुसार उस समय इतने ही करीब २ लाख व्यक्ति राजपूताने के बाहर निवास करते थे। उस वक्त भी ओसवालों के अनेकानेक गोत्र थे एवं जनगणना में जाति के खाने में सभी ने अपने को ओसवाल न भी लिखाया हो। अतः इन आंकड़ों पर आधारित कोई भी संख्या वास्तविक नहीं कही जा सकती।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इसी प्रसंग में तीन अन्य जनगणनाओं के उपलब्ध आंकड़ों में दी गई राजपूताना के ओसवालों की कुल आबादी पर भी एक दृष्टि समीचीन होगी।

राजपूताना की मर्दुमशुमारी में ओसवाल

विक्रम संवत्—	१९५८	१९६८	१९७८	१९८८
	२०९१८८	२०९९६५	१८०९५४	१९७४६०

इनमें १९६८ से १९७८ के बीच ओसवाल-आबादी में जो कमी हुई उसके विशेष कारण रहे होंगे। प्रमुख कारण व्यवसाय के निमित्त परदेशों में जाकर बस जाना, धर्म परिवर्तन, महामारी आदि माने जा सकते हैं। साधारणतः अन्य सालों के आंकड़ों को कसा जाय तो १९५८ और १९६८ के बीच जनसंख्या बृद्धि की दर ०.४% आती है एवं १९७८ और १९८८ के बीच यही दर ८%। अतः इन आंकड़ों को सही नहीं माना जा सकता।

सही हों, तब भी उन्हें आधार बना कर निष्कर्ष नहीं निकाले जा सकते। एक ओर कारण है इन आंकड़ों के गलत होने का। उन दिनों एक आन्दोलन शुरु हुआ— अपने को "जैन" लिखवाने का। परम्परागत रीत्यानुसार जैन अपने को "हिन्दू" के कालम में ही दर्ज करवाते थे। बड़े-बड़े धर्माचार्यो की अपील पर जैनों की वास्तविक संख्या उभारने के लिए अनेक परिवारों ने जाति के खाने में अपना वास्तविक गोत्र लिखवाने की बजाय अपने को "जैन" लिखवाया एवं आम जीवन में भी अपने नाम के आगे "जैन" लिखना शुरु कर दिया जो कालांतर में जातिवाचक बन गया। इससे जाति सम्बन्धीं सारे आंकड़े ही गड़बड़ा गए।

मारवाड़ की सन् १९२१ की मर्दुमशुमारी (जनगणना) में व्यापारी जातियों की शिक्षा के आंकड़ें द्रष्टव्य हैं:—

शिक्षित		अशिक्षित		अंग्रेजी पढ़े	
पुरूष	स्त्री	पुरूष	स्त्री	पुरूष	स्त्री
२५२१९	१०११	२१९४८	५५२३१	४३०	१

व्यापारी जातियों में ओसवाल श्रीमाल महेश्वरी पोरवाल एवं अग्रवाल शामिल हैं जिनमें अधिकांश 'ओसवाल' है। इन आंकड़ों की समीक्षा से ज्ञात होता है कि उस वक्त अंग्रेजी का प्रचलन शुरु ही हुआ था, स्त्रियों में तो वह नगण्य थी। पुरुषों से स्त्रियों की संख्या १० प्रतिशत अधिक थी परन्तु शिक्षा ९५ प्रतिशत कम यानि नगण्य। पुरुषों में भी मात्र ५५ प्रतिशत शिक्षित थे और शिक्षा का मापदण्ड भी भाषायी ज्ञान मात्र ही था, उच्च शिक्षा नहीं।

राजपूताने की १९३१ की मर्दुमशुमारी के ओसवाल जाति के विशिष्ट आंकड़े तात्कालीन सामाजिक स्थिति के परिचायक हैं:—

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रदेश	पुरूष				महिलाएँ				जोड़
	अवि-वाहित	विवा-हित	विधुर	कुल	अवि-वाहित	वि-वाहित	विधवाऐं	कुल	
मारवाड	२४००१	१६९४९	४४४५ १०%	४५३९५	१६७९५	२१५०२	११०६४ २५%	५३६१	९६७५५६
मेवाड़	१२४२०	१०११४	२६०४ १०%	२५२१८	७६६४	१०४१४	५०३९ २१%	२३०९०	४८३१५
बीका-नेर	-	-	-	११९५६	-	-	-	१५६११	२७५६८
				८२५७०				९००६९	१७२६३९

उक्त आंकड़ों में विधुरों एवं विधवाओं की संख्या चौकाने वाली हैं। विधुर कुल पुरुष आबादी के १० प्रतिशत हैं एवं विधवाएं कुल महिला आबादी की २५ प्रतिशत। इतना बड़ा विधवाओं का अनुपात, विधुरों से भी ढाई गुना अधिक, समाज की तात्कालीन शोचनीय अवस्था का गवाह है। विधुरों की इतनी बड़ी तादाद का मुख्य कारण जो समझ में आता है वह है वैज्ञानिक साधनों के अभाव में प्रसव-कालीन महिला मृत्यु। विधवाओं की उनसे भी ढाई गुनी तादाद का कारण था वृद्ध अनमेल विवाह। व्यक्ति की औसत उम्र वैसे भी कम थी। बाल विवाहों का घुन समाज को खा रहा था। अतः बाल विधवाओं की संख्या अधिक थी। ४५ की उम्र आते आते आदमी बूढ़ा हो जाता था। औरतों की औसत उम्र भी ज्यादा थी। इन्हीं कारणों से २५ प्रतिशत विधवाऐं नारकीय यातना में से गुजर रही थी। बल्कि यह कहना चाहिए कि समाज नरक बन गया था। इलाहाबाद से प्रकाशित होनेवाली चाँद पत्रिका में उस समय के मारवाड़ी समाज की दर्दनाक हालत पर अनेक कविताएं कहानियाँ एवं व्यंग प्रकाशित हुए। समाज के पढ़े लिखे प्रगतिशील विचारों वालें युवकों ने भी विधवाओं की समस्या पर आन्दोलन किया। परन्तु निहित स्वार्थों के कारण समुचित शिक्षा के अभाव में आज भी यह समस्या मुँह बाये खड़ी है— उतनी भयंकर न सही।

मारवाड़ प्रदेश के आंकड़ों से एक ओर तथ्य परिलक्षित होता है— अविवाहित पुरुषों की संख्या अविवाहित महिलाओं से ३० प्रतिशत अधिक है किन्तु विवाहित पुरुषों की संख्या विवाहित महिलाओं से ४५५३ कम। इसका मतलब है समाज में बहु पत्नि प्रथा का चलन। समाज का श्रेष्ठि वर्ग एक से अधिक पत्नियाँ रखता था जबकि गरीब परिवार के युवक के लिए उपयुक्त युवती अलभ्य थी। विधवाओं की अधिक तादाद को नजर में रखते हुए यह तथ्य भी उजागर हो उठता है कि वृद्ध विवाहों एवं बाल विवाहों का बोलबाला था। ये सभी परिस्थितियाँ महिलाओं को दयनीय स्थिति में ला खड़ा करती थी।

इस परिप्रेक्ष्य में सन् १९३१ की अखिल भारत वर्षीय जन गणना में जैनों की कुल संख्या के विभिन्न आंकडे दर्शाता एक सूचना फलक द्रष्टव्य है। यह ५५ वर्ष पूर्व ओसवाल सुधारक

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में प्रकाशित किया गया था। इसके अनुसार जैनों में ओसवालों की संख्या आधी मानी गई थी। इस फलक से समाज में व्याप्त कुरीतियों की बड़ी खौफनाक स्थिति उभरती है।

सन् १९३१ की जनगणना में जैनों की संख्या

उम्र वर्ष	कुल संख्या	पुरुष	स्त्रियां	क्वारे पुरुष	क्वांरी स्त्रियां	विवाहित पुरुष	विवाहित स्त्रियां	विधुर	विधवायें
०–१	३८१३१	१९३३३	१८७९८	१९१६३	१८६४५	१५७	१३३	७३	२०
१–२	३३५२४	१६६९०	१६८३४	१६५५९	१६६४०	१२६	१८६	५	८
२–३	३३६५६	१६४४८	१७२०८	१६३०७	१६८८५	१४४	३०७	३	१६
३–४	३२३९१	१५९९५	१६३९६	१५७९१	१५८८५	१९३	४९०	७७	२१
४–५	३३५३७	१६५३६	१७००१	१९०६२	१६०४१	४३८	८८२	३६	७८
५–१०	१४८८१४	७६८७६	७१८३८	७४२६६	६४१८१	२५७०	७३५९	१००	५९८
१०–१५	१३९३१५	७३४०७	६५९०८	६८०९३	४६५९५	५९२२	१८६७०	१९२	६५३
१५–२०	११७६४८	६१२७७	५६३७१	३७९९२	६८११	२२५३९	४७०८६	७४६	२४७४
२०–२५	११९४५५	६११५१	५८३०४	२५५३०४	१६८३	३४२७०	५२१७९	१३१६	४४४२
२५–३०	१०११९४	५२२१६	४८९७८	१०४१६	६२१	३९३४७	३९९०८	२४५२	८४५०
३०–३५	९३१३६	४९२०१	४३९३५	७४२२	४१४	३८४१६	३२६८६	३३६३	१०८३५
३५–४०	८१४६१	४२४३०	३९०३१	४८८०	३५५	३२४६९	२३२०५	५०८१	१५४७१
४०–४५	७३०२९	३८१३१	३४८९८	३९३०	२४९	३८१४०	१८०३२	६०६१	१६६१७
४५–५०	६१४५१	३२३३४	२९१२५	२८७९	१७५	३१८६०	१०९८२	७५९५	१७९६८
५०–५५	५००९८	२६२०५	२३८९३	२१०८	१०४	१६८३७	७५४१	७२६६	१६२४८
५५–६०	३५९७६	१८१०५	१७८७१	१२३४	७०	१०४३७	३६४९	६३३४	१४१५२
६०–६५	२८७९९	१३९२५	१४८७४	८२०	६७	१७६७	२३५७	५३४४	१२४५०
६५–७०	१३५३१	६७९४	६७३७	३५४	५२	३३८८	७५९	३०५१	५९२६
७० से ऊपर	१६२८६	७५५७	८७२९	३६३	७०	३२६२	५३१	३९३२	८१२८
कुल जोड़	१२५१३४०	६४४६११	६०६७२९	३२४१९८	२०५५४३	२६७५७०	२६६९४१	५२९०३	१३४२४५

ओसवाल समाज भारत के ही नहीं संसार के विभिन्न प्रदेशों में फैल गया है। वर्तमान समाज की सही तस्वीर पेश करने के लिए आंकड़े संग्रह करना असम्भव सा है। लेकिन कहते हैं न, बानगी देखने के लिए एक चावल देखना ही काफी होता है उसी तरह ओसवाल समाज की वस्तुस्थिति रोशन करने के लिए जयपुर शहर के विक्रम संवत् २०४१ के उपलब्ध आंकड़ों (जयपुर के श्री सौभाग्यमल जी श्री श्रीमाल द्वारा सम्पादित "जयपुर जैन श्वेताम्बर समाज डायरेक्ट्री, १९८४") का सहारा लिया जा सकता है। शहरों में बसे ओसवाल परिवारों का यह आईना ही है। गाँवों में फैले ओसवाल परिवारों की स्थिति अधिक भिन्न नहीं होगी क्योंकि वे भी किसी न किसी तरह शहरों से जुड़े हैं। वैसे भी गाँवों में अब शहरों की हवा पहुँच चुकी है। इन आंकड़ों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

का सम्बन्ध अनेक समस्याओं, परम्पराओं एवं धारणाओं से है। अतः वे हमें बहुत कुछ सोचने को भी मजबूर करते हैं।

जनसंख्या

जयपुर शहर में ओसवालों के करीब २३६३ परिवार बसते हैं। पुरुषों महिलाओं एवं बच्चों का योग करीब १३९९२ है। यथा:—

	विवाहित	अविवाहित	विधुर	कुल
पुरुष	३२९७	२११५	१२७	५५३९
			विधंवा	
महिलाएं	३२५०	१४२१	३७४	५०४५
नाबालिगः	बालक	बालिका		
(१२ वर्ष से कम)	१७३४	१६७४	–	३४०८
				१३९९२

उक्त आंकड़ों से अनेक चौंकाने वाले तथ्य उजागर होते हैं जिनकी ओर साधारणतया हमारा ध्यान ही नहीं जाता। खुशी की बात यह है कि एक परिवार की औसत सदस्य संख्या ५ है। माहेश्वरी समाज में यही औसत ७ माना गया है। इसका अर्थ भी है कि हम छोटे परिवारों की ओर अग्रसर है। इसका यह अर्थ भी हो सकता है कि संयुक्त परिवार धीरे-धीरे खत्म हो रहे हैं। पति, पत्नि, पुत्र, पुत्रबधू एवं एक बच्चा यह आदर्श परिवार ही कहा जायेगा। यह समीकरण भिन्न भी हो सकता है— किसी परिवार में पिता या माँ दोनों में से एक ही हों तथा पति पत्नि के दो बच्चे हों या पति पत्नि के तीन बच्चे हों— तब भी परिवार नियोजित ही कहा जायेगा।

विवाहित महिलाओं की संख्या करीब ३२५० है परन्तु अविवाहित स्त्री पुरुषों (यानि जोड़ो) की सम्मिलित संख्या ३४३६ हैं। जिसका अर्थ यह है कि वैवाहिक उम्र की सीमा ऊपर खिसकती जा रही है। इसका समर्थन उच्च शिक्षा के विभिन्न आंकड़ों से भी होता है।

अविवाहित पुरुषों की संख्या (२११५) अविवाहित महिलाओं की संख्या (१४२१) से ड्योढ़ी होने का अर्थ यह है कि पुरुष अधिक उम्र में शादी करें यह तो समाज ने आत्मसात कर लिया है किन्तु महिलाओं की अभी भी हम कम उम्र में शादी कर देना अधिक उपयुक्त समझते हैं।

पुरुषों एवं महिलाओं की कुल संख्या में अधिक फरक होने (५५३९/ ५०४५) का अर्थ यह है कि हमारा समाज पुरुषोन्मुखी है एवं लड़कियों की कमी है। पुरुषों की संख्या महिलाओं की संख्या से १०% अधिक है। इसके विपरीत महेश्वरी समाज में जहाँ विधवा विवाह का प्रचलन

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हो गया है विवाहित महिलाओं की संख्या विवाहित पुरुषों की संख्या से ०.५% अधिक है। इसका संतुलन बनाए रखने के लिये अन्तर्जातीय विवाहों को बढ़ावा मिलना चाहिए। लड़कियों की कमी उपयुक्त विधवाओं के साथ विवाह से भी हल हो सकती है।

विधवाओं की संख्या (३७४) अभी भी बहुत है यानि कुल विवाहित महिलाओं के १०% से भी अधिक एवं विधुरों की संख्या (१२७) से तीन गुनी। यह सही है कि आज से ५० वर्ष पूर्व समाज में विधवाओं की संख्या बहुत अधिक थी। परन्तु इन वर्षों में वृद्ध विवाहों एवं अनमेल विवाहों (वर-वधू की उम्र में १५-२० वर्षों का फरक) में बहुत कमी हो गई है। स्वाभाविकतया विधवाओं की संख्या उस जमाने से कम है। परन्तु विधवाओं का वर्तमान आर्धक्य (१०%) भी समाज के लिए शर्मनाक है। इन आंकड़ों से यह भी परिलक्षित होता है कि जहाँ महिलाओं की औसत उम्र पहले से अधिक हुई है एवं आधुनिक चिकित्सा सुविधा के कारण महिलाओं की प्रसव कालीन मृत्यु दर बहुत कम हो गई है, वहाँ पुरुषों की औसत उम्र उतनी नहीं बढ़ी है। इसका कारण शहरी खान पान, जर्दा, शराब, पान बहार, भागदौड़, चिंता, एक्सिडेंट आदि में पुरुषों का अधिकाधिक ग्रस्त रहना है। विधवाओं के इस आर्धक्य को मिटाना समाज के विवेक शील पुरुषों का कर्त्तव्य है। जहाँ महेश्वरी समाज में विधवा-विवाह ग्राह्य बन गया है, ओसवाल समाज के लिए यह एक चुनौती बना हुआ है।

बालकों की संख्या बालिकाओं की संख्या से २ प्रतिशत अधिक होना निसन्देह चौंकाने वाला है। आम धारणा यह है कि समाज में लड़कियों की संख्या अधिक है। परन्तु प्रस्तुत आंकड़ों के अनुसार जिस तरह अविवाहित महिलाओं की संख्या कम है उसी तरह लड़कियाँ भी कम है। स्वभावतः इसका परिणाम होना चाहिए था दहेज प्रथा का शमन। किन्तु इसके विपरीत समाज में दहेज की विभीषिका बढ़ी है जिसका कारण हमें अन्यत्र खोजना होगा। कुछ तो भौतिक उपलब्धियों की गहराती प्यास इसके लिए जिम्मेवार है और उतनी ही जिम्मेवार है हमारा धार्मिक रुढ़िवादिता और आडम्बर।

धार्मिक मान्यताऐं

जयपुर शहर का जो सर्वे किया गया वह मूलतः जैन परिवारों का था जिनमें अधिकांश ओसवाल ही थे अल्पाशं (नगण्य) इतर जातियों का था। परन्तु उतना ही अल्पाशं (नगण्य) उन ओसवाल परिवारों का जो अन्य धर्मावलम्बी है सर्वे से बाहर भी रहा। अतः उक्त सर्वे ओसवालों की धर्म-संदर्भ से सही प्रस्तुति माना जा सकता है।

कुल परिवार	श्वेताम्बर स्थानक-वासी	श्वेताम्बर मन्दिरमागी	श्वेताम्बर तेरापंथी	जैन श्वेताम्बर	जैन	जैन संगम	कोई धर्म नहीं
२३६३	७४५	५८१	३२०	१४८	५०१	२	६६
	३१%	२५%	१३%				२१/२%

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आश्चर्य की बात यह है कि जहाँ ५० वर्ष पूर्व "कोई धर्म नहीं" की बात सोच से ही बाहर थी वहाँ ६६ परिवार यानि अढ़ाई प्रतिशत ओसवालों ने साहस पूर्वक अपने को परम्परागत धर्मों के बंधन से आजाद कर लिया है— यह बहुत बड़ी बात है। दूसरी कौमों में यह प्रतिशत नगण्य है।

दूसरी बात यह है कि तेरापंथ के नवम् आचार्य श्री तुलसी धार्मिक प्रचार-प्रसार एवं प्रभावना की दृष्टि से जैन समाज में अग्रगण्य माने जाते हैं। उनके कट्टर अनुयायियों का प्रतिशत (१३%) कम ही है। इसका मतलब यह है कि परम्परागत सम्प्रदायों की अपनी अपनी संख्या में कोई फरक नहीं आया है। इस सन्दर्भ में स्थानकवासी सम्प्रदाय की विशालता श्लाघ्य है। एक बात और द्रष्टव्य है— श्वेताम्बर जैनों में मुखपत्ती रखने वाले सम्प्रदाय का जन्म १६वीं शताब्दी में लोंकां गच्छ के आविर्भाव से माना जाता है परन्तु इन ४०० वर्षों में उनका सम्मिलित प्रतिशत ४५ के करीब हो गया है। हो सकता है गुजरात व मध्यप्रदेश में यह प्रतिशत कुछ कमोबेश हो फिर भी इसे इन सम्प्रदायों की जागरूकता का ही लक्षण माना जायेगा।

पेशा

जयपुर को भारत के अन्य शहरों से भिन्न नहीं माना जाना चाहिए। परन्तु इस शहर की अपनी विशिष्टता है। जयपुर सदा से एक सांस्कृतिक नगर रहा है। व्यवसाय एवं उद्योग के क्षेत्र में अन्य नगर इससे बहुत आगे हैं। किन्तु यहाँ के लोगों ने अन्यान्य पेशों में बहुत उन्नति की। यही बात औसतवालों के पेशेवार आंकड़ों से परिलक्षित होती है।

प्रशासकीय सेवा	कलु		पुरुष	महिला		
(IAS & RAS)	२२		२१	१		
विधि (वकालत)	कुल		कार्यरत	महिलाऐं		
	३१५		५२ (१६.५%)	१५ (5%)		
डाक्टर	कुल		MBBS	Md	MS	महिलाऐं	कार्यरत
	८७		३०	२५	११	३० (३४%)	८५ (९७%)
चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट	कुल		प्रेक्टिस में	नौकरी	व्यापार	अन्य
	९१		४१ (४५%)	२५	२०	५
इंजीनियर	कुल	एमई	बीई.	एमटेक.	डिप्लोमा	महिलाएं
	१७२	९	१३८	१	२४	४
शिक्षण	कुल		पी एच डी.	एमफिल	महिलाएं	
	१६९		२८	८	८८ (५४%)	
जोड़	८५६		पुरुष ७१८	महिला १३८ (१६%)		

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

यदि बालिग स्त्री-पुरुषों की संख्या (१०५८४) में २५% छात्रों (१२ से २५ वर्ष की उम्र के) की संख्या बाद दे दें तो विभिन्न पेशों में संलग्न व्यक्तियों का प्रतिशत १० आता है। इसका अर्थ यह है कि हमारा समाज मूलतः व्यवसायरत है।

एक सुखद आश्चर्य है शैक्षणिक सेवा में बढ़ती महिलाओं की संख्या (८८) जो कुल सेवार्थियों का ५४ प्रतिशत है। उसी तरह डाक्टरी पेशे में आई महिलाओं की संख्या (३०) जो ३४% है कम आश्चर्यजनक नहीं है। यह समाज के विकासवान, सेवानिष्ट एवं उन्नत भविष्य का आश्वासन भी है। ये दोनों ही सेवाऐं जीवन गढ़ने में अति आवश्यक मानी जाती है। चार्टर्ड एकाउन्टेसी में महिलाओं का न आना एवं इंजीनियरिंग में उनकी अल्प संख्या उन पेशों के व्यवहारिक पहलुओं एवं कठोर जीवन को रेखांकित करता है, साथ ही महिलाओं के कोमल सेवाभावी सृजनात्मक एवं हृदय-पक्षी स्वभाव का सबूत है।

पुरुषों में सर्वाधिक आकर्षण इंजीनियरिंग का है उसके बाद चार्टर्ड एकाउन्टेंसी का, फिर शिक्षण सेवा का। डाक्टरी एवं वकालत समान रूप से आकर्षित करते हैं। हालांकि विधि-स्नातकों की संख्या (३१५) सर्वाधिक हैं पर अधिकांश वकालत करने की ओर उन्मुख नहीं होते— ८३.५% इसे ज्ञान वर्धक एवं व्यवसाय सहायक ही मानकर अन्य कार्य में लग जाते हैं। केवल १६.५% ही वकालत को पेशा बना पाते हैं। इसका एक अर्थ और भी है— जहाँ डाक्टरी को ९७% स्नातक पेशा बना लेते हैं वहाँ वकालत को मात्र १६.५% स्नातकों का पेशे के रूप में अपनाना इस पेशे की असुरक्षा दर्शाता है। कभी यह पेशा अधिक दिलचस्प एवं सम्माननीय रहा होगा पर अब नहीं। अधिकांश वकीलों की आय सामान्य स्तर से ऊपर नहीं उठ पाती। यह इस पेशे में बढ़ते भ्रष्टाचार की ओर भी इंगित करता है जहाँ न्याय दिला पाना कानूनी दक्षता पर कम और धप्पेबाजी पर अधिक निर्भर रहने लगा है।

एक ओर सुखद आश्चर्य महिलाओं के प्रशासनिक सेवा आई.ए.एस एवं इंजीनियरिंग के एम. टेक में अग्रगण्य स्थान पाने पर है समाज को उन पर नाज होना चाहिये।

बेरोजगारी

हमारा समाज भारत के सम्पन्न समाजों में गिना जाता है। जब तक परिवार संयुक्त थे— बेरोजगारी थी भी तो बेमानी। क्योंकि उस व्यवस्था में कोई नहीं भी कमाता हुआ तो उसके आदर में कमी नहीं होती थी, उसके बच्चे अन्य भाईयों के बच्चों के समान ही पलते थे उसकी पत्नि को महसूस ही नहीं होने दिया जाता था कि उसका पति कमाता नहीं। परन्तु समय ने करवट ली- संयुक्त परिवार टूट गए और परिणामतः समाज में बेरोजगारी भी उभर कर सामने आई। एक समय था जब समाज के अगुआ श्रेष्ठि-साहूकार गरीब व बेरोजगार काम की तलाश में आए समाज के भाईयों की हर तरह से मदद करने, उन्हें व्यापार करवाने एवं नौकरी देंने के लिए तत्पर रहते थे। परन्तु अब तो समाज इतना फैल गया है और कहीं कहीं अधिकांश गाँवों में बेरोजगारी भी इतनी अधिक है कि यथोचित सहायता नहीं मिल पाती।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जयपुर में जो सर्वे हुआ उसमें बेरोजगारी के कालम में ५० व्यक्तियों ने अपने नाम लिखवाए। २३६३ ओसवाल परिवारों के नगर में ५० व्यक्ति बेरोजगार हों, यह कोई कम दुखद बात नहीं है। हालांकि ये आंकड़े सच्ची तस्वीर पेश करते हों इसमें भी सन्देह है कारण, यह ऐसा विषय है जहाँ हम खुलकर सामने आते संकोच भी कर जाते हैं, फिर भी इन आंकड़ों से वस्तु स्थिति का अनुमान लगाना सहज है।

कुल	**पुरुष**	**महिला**	**आयु वर्ग :**	**१९ से २५ वर्ष**	**२६ से ६०**
५०	३५	१५		४०	१०

शैक्षणिक योग्यता :	**मिडिल**	**मैट्रिक**	**बी.काम**	**बीए**	**बी.एस.सी**	**एम. ए-एम.एस.सी**
	८	११	१६	६	३	७

रोजगार की तलाश और वह भी ओसवाल महिलाओं द्वारा— यह इस शदी की आश्चर्यजनक घटना मानी जायेगी। बेरोजगारी में ३० प्रतिशत महिलाओं का होना इस बात की ओर इंगित करता है कि पारिवारिक दायित्व एवं आर्थिक बोझ उठाने में महिलाऐं भी भागीदार बन रही है। इस आर्थिक स्वतंत्रता से सदा से गुलामी करती आ रही नारी अब पुरुष की भोग्या मात्र नहीं रह जायेगी। इससे दहेज की चुनौती का भी सामना किया जा सकेगा। अगर नारी अपने पैरों खड़ी हो गई, पिता या भाई की मुहताज नहीं रही तो उसे भेड़ बकरियों की तरह बेचा भी नहीं जा सकेगा, न ही विवाहोपरांत उसका शोषण किया जा सकेगा या अधिक दहेज के लिए तंग किया जा सकेगा।

लेकिन मुझे नहीं लगता कि जयपुर के इन आंकड़ों में अन्य जगहों में फैले समाज की सही तस्वीर है। जयपुर की अपनी विशिष्टता है वहाँ शैक्षणिक विकास ने समाज की महिलाओं को खड़े होने के लिए ठोस धरातल दिया है। कुछ अन्य शहरों में भी समान विकास देखा जा सकता है पर सब जगह नहीं। कलकत्ता ३०० वर्षों से ओसवाल समाज का गढ़ रहा है परन्तु महिला-शिक्षा का जयपुर का सा अनुपात वहाँ परिलक्षित नहीं होता। धनी प्रांतीय ओसवाल समाज में अब भी नारी का दायरा घर सम्भालने तक ही सीमित है।

दूसरी बात, बेरोजगारों का १४ प्रतिशत एम.ए. या एम. एस. सी पढ़े व्यक्तियों का होना यह दर्शाता है कि हमारी शिक्षा पद्धति कितनी अपूर्ण व अक्षम है। मास्टर्स या डाक्टरेट डिगरी लेने के बाद भी वह रोजगार नहीं जुटा सकती। समाज का भी दायित्व कम नहीं है। ऐसी प्रतिभाऐं बेरोजगारी के दानव से जूझने में ही शक्ति लगाती रहें यह समाज के लिए शर्म की बात है।

एक ओर तथ्य सामने आता है बी.क़ाम. पढ़े बेरोजगारों का सर्वाधिक यानि कुल बेरोजगारों का ३२ प्रतिशत होना। क्या इसका अर्थ यह है कि बी.क़ाम. की शिक्षा किसी लायक नहीं है या यह कि बी.क़ाम की कोई कीमत नहीं है। वैसे ६२ प्रतिशत बेरोजगारों का स्नातक

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

या स्नाकोत्तर होना भी यही दर्शाता है कि शिक्षा पद्धति ही खोखली है। २६ से ६० वर्ष के आयु वर्ग में भी २० प्रतिशत बेरोजगारों का होना समाज की निराशाजनक स्थिति की ओर इशारा है— जब उनके कंधों पर परिवार की जिम्मेदारी आ पड़ती है तब उसे न निबाह पाना कितना दर्दनाक होता होगा। १९ से २५ वर्ष के आयुवर्ग की ८० प्रतिशत बेरोजगारी भी युवकों की दिशाहीनता एवं भटकाव को उजागर करती हैं। समाज के अग्रगण्य नेता विचारक एवं उद्योगपति उनका मार्ग दर्शन एवं यथोचित सहायता करें— यह अपेक्षित है।

विवाह योग्य युवक युवतियाँ

अविवाहित पुरुष	१३ से १८ वर्ष आयु	विवाह योग्य (१८ से ऊपर)	१८ से २२ वर्ष आयु	२३ से २७ वर्ष अयु	२८ से अधिक आयु
२११५	८६५	१२५०	८२८	३६१	६१
			६५%	३०%	५%

अविवाहित महिलाएं	१३ से १५ वर्ष आयु	विवाहयोग्य (१५ से ऊपर)	१५ से १९ वर्ष आयु	२० से २४ वर्ष आयु	२५ वर्ष से अधिक आयु
१४२१	३८४	१०३७	७३३	२६३	४१
			७१%	२५%	४%

उक्त आंकड़ों का फलितार्थ बड़ा ही दिलचस्प एवं दिशा-सूचक है। प्रथमतः अभी भी हम शारदा-बिल की पुरानी सीमा रेखा से अधिक ऊपर नहीं उठ पाए हैं। समाज में अधिकांश लड़कियों का विवाह १८ वर्ष की उम्र से पहले ही कर देना उचित माना जाता है जबकि विवाह योग्य कानून सम्मत आयु १८ वर्ष निर्धारित हो चुकी है।

दूसरी बात विवाह योग्य युवक युवतियों की संख्या का फरक है। सौ युवकों के लिए मात्र ८० युवतियों का उपलब्ध होना २० प्रतिशत कमी दर्शाता है। भविष्य में विवाह योग्य लड़कियों की तलाश समाज को भारी पड़ सकती है। यह तथ्य इस आम धारणा को भी झुठला देता है कि कन्याओं की समाज में बहुलता है। इस मीथ का कारण लड़कियों के माता-पिता की अधीरता एवं चिंता युक्त तलाश हो सकती है। अभी भी समाज पुरुष प्रधान है अतः खोजना लड़की वालों को ही पड़ता है। युवकों की अधिक आयु बाधक नहीं होती जबकि लड़की की अधिक आयु अच्छे वर की खोज में बाधक बन सकती है।

इस दृष्टि से २८ वर्ष से अधिक आयु के विवाह योग्य युवकों की संख्या ५% होना तो समझ में आ सकता है परन्तु २५ वर्ष से अधिक आयु की ४% युवतियों के पीछे कारण उच्च शिक्षा का ही हो सकता है या फिर योग्य वर का न मिलना।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कलकत्ते में एक मीथ प्रचलित है कि लड़कियों को अधिक पढ़ाना नहीं चाहिए क्योंकि तब योग्य वर मिलना असम्भव सा हो जाता है। प्रथमतः कलकत्ता मूलतः व्यवसायिक केन्द्र है। वैसे वहां मुर्शिदाबादी, गुजराती, पंजाबी ओसवालों के व्यवसायिक प्रतिष्ठान भी हैं किन्तु अधिकांश जमघट मारवाड़ी ओसवालों का है जो प्रधानतः जूट, कपड़ा, शेयर, फाटका, मनी लेंडिंग आदि व्यवसायों में कार्यरत है। सांस्कृतिक विरासत के नाम पर मात्र भाषा ही बची है यहाँ तक कि देशी पोशाक भी वे बिसरा चुके हैं। इन व्यापारिक खानदानों में शैक्षणिक विकास नाम मात्र को हुआ दिखाई पड़ता है। अधिकांशतः बी. काम. पर शिक्षा की इतिश्री हो जाती है। वह भी मात्र डिग्री लेने तक ही सीमित है क्योंकि सांध्य कालेजों में साल भर प्राक्सी एवं परीक्षाओं में नोट्स के बल पर काम चल जाता है। बी. काम तक भी अनेक नहीं पहुंच पाते क्योंकि कपड़े शेयर, जूट, मनी लेडिगं में उस शिक्षा की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। अतः प्रादेशिक गाँवों के स्कूलों में पाई. हाईस्कूल की शिक्षा पर्याप्त समझी जाती है। परन्तु जमाने के अनुरूप स्त्री शिक्षा जैसे जैसे बढ़ी, लड़कियाँ स्नातक एवं स्नाकोत्तर डिग्रियाँ लेने लगी और आज स्थिति यह है कि उनके अनुरुप पढ़ा लिखा लड़का मिलना मुश्किल हो गया है। अन्ततः एम.ए. पढ़ी लड़की को मैट्रिक तक पढ़े लड़के के साथ भावरें लेनी पड़ती है। लड़की की शिक्षा को कम करके बताना तो आम बात हो गई है।

ऐसी स्थिति में जयपुर का यह सर्वे ओसवाल समाज के उज्जवल पक्ष को उजागर करता है। २३ से २७ वर्ष की आयु वाले विवाह योग्य युवकों की संख्या का ३० प्रतिशत होना एवं २० से २४ वर्ष की आयु वाली विवाह योग्य युवतियों का २५ प्रतिशत होना इस बात का सबूत है कि समाज बाल विवाहों के फन्दे से निकल चुका है एवं अपेक्षाकृत अधिक उम्र के विवाहों को अहमियत देने लगा है।

इस सन्दर्भ में अन्तर्जातीय एवं विधवा विवाहों को बढ़ावा देना समाज में लड़के लड़कियों का सन्तुलन बनाए रखने की दृष्टि से निहायत जरुरी है। यह मात्र विवाह योग्य लड़कियों की कम संख्या का ही हल नहीं है, समाज के सांस्कृतिक विकास का वाहक एवं सदियों पुरानी समस्या का सही निदान भी है।

शिक्षा

युवक (१८ वर्ष से ऊपर) : कुल संख्या—१२५०

मिडिल या उससे कम	हाईस्कूल/ हायर सेकेन्डरी	बी.ए. /बी.एस.सी/ बी.काम	एल.एल.बी/एम. ए/ एम.एससी/सी. ए
८६	२८०	६४४	२४०
६%	२२.५%	५१.५%	२०%
युवती (१५ से ऊपर) : कुल संख्या—१०३७			
८७	३१८	४६४	१६८
८.५%	३०.५%	४४.५%	१६.५%

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कलकत्ते के जिस मीथ का जिक्र हम ऊपर कर आए हैं, जयपुर के शिक्षा संबंधी उक्त आंकड़े उसे धत्ता बताने लिए काफी है। वस्तुतः कलकत्ते में लड़कों की कम उच्च शिक्षा एवं उच्च शिक्षा प्राप्त लड़कियों के लिए उपयुक्त वरों की कमी के पीछे समाज की आर्थिक लिप्सा है। उक्त आंकड़े यह सिद्ध करने के लिए काफी हैं कि अन्य छोटे शहरों में ओसवाल समाज ने उच्च शिक्षा को सामाजिक विकास का सोपान मान सादर ग्रहण किया है। उक्त आंकड़े विवाह योग्य युवकों एवं युवतियों के ही हैं।

स्नातक एवं स्नाकोत्तर विवाह योग्य युवकों की संख्या ७१.५ प्रतिशत होना एवं युवतियों की संख्या ६१ प्रतिशत होना हमारे सुखद एवं उन्नत सांस्कृतिक भविष्य का सूचक है। मैट्रिक से कम शिक्षा प्राप्त युवकों-युवतियों की संख्या तो नगण्य है। इस उच्च शिक्षा का सुफल दहेज के दानव का पूर्णतः विनाश हो सकता है। जैसा कि पेशेवार आंकड़ों की समालोचना में ऊपर दर्शाया जा चुका है विभिन्न क्षेत्रों में समाज के मेधाशाली युवकों युवतियों का प्रवेश समाज विकास की प्रमुख भूमिका बनेगा।

हाईस्कूल/हायर सेकेण्डरी स्तर पर २२.५ प्रतिशत युवकों एवं ३०.५ प्रतिशत युवतियों का ड्राप आउट हो जाना कई समस्याओं की ओर इंगित करता है उनमें गरीबी मुख्य है। शिक्षा के प्रति परम्परागत दृष्टिकोण भी उसका एक कारण हो सकता है, शहरों में बढ़ रही गुण्डा गर्दी, छेड़ छाड़ एवं उपयुक्त उच्च शिक्षा प्राप्त वरों की कमी आदि भी। इस प्रतिशत को कम करना हमारा लक्ष्य होना चाहिए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अध्याय

एक-बिंश

ओसवाल : सती, साध्वी, नारी रत्न

ओसवाल—सती

सती दाह की प्रथा आदिम संस्कृति की देन है। भारत, चीन, जापान, सिंथियन्स आदि प्रदेशों में भी यह प्रथा विद्यमान थी। मूलतः इसका प्रारम्भ सूर्योपासक शैव मतावलम्बियों से माना जाता है। कालान्तर में इसका विपर्यय युवा पति की अकाल मृत्यू होने पर पत्नी द्वारा प्रेमावेग में उसकी चिता पर शव को गोद में रख अग्नि दाह में हंसते हंसते प्राण न्योछावर कर देना हुआ। आगमिक साहित्य में सती प्रथा का उल्लेख मिलता है। इसी आवेग का चरमोत्कर्ष विक्रम की ६ठी—७वीं शदी में मिलता है। "हर्ष चरित" के अनुसार प्रभाकर वर्धन के बचने की कोई आशा न देखकर रानी यशोमती उसकी मृत्यु से पूर्व ही अन्तःपुर से पैदल चल कर सरस्वती के किनारे सती हो गई क्योंकि वह सधवा ही मरना चाहती थी। कालान्तर में सती प्रथा रूढ़ होकर समाज में प्रतिष्ठित हो गई। मृत व्यक्ति की पत्नि सुहागन की तरह श्रृंगार कर गाजे बाजे और जूलूस के साथ श्मशान जाती थी। वह अपने हाथ से केसर कुंकुम की छाप घर के द्वार या स्तम्भ पर लगा कर जाती थी, जिन्हें शिल्पकारों द्वारा पत्थरों पर उत्कीर्ण कर स्मारक बना दिया जाता था। मुसलमानों के शासन काल में इस प्रथा का एक नया पर्याय जौहर के रूप में प्रचलित हुआ— जब रण बांकुरे योद्धा अपना अन्तिम समय जान चिता प्रज्वलित करते

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

थे एवं अपने परिवार की समस्त स्त्रियों का उसमें झोंक देते थे या महिलाएं स्वयं चिता में कूद कर अपने प्राण दे देती थी। इसका कारण था, आक्रमणकारियों के अत्याचारों से रक्षा। मुसलमान आक्रमणकारी जीते हुए प्रदेश की स्त्रियों को जबरदस्ती पकड़ कर बांदियां बना लेते, उनके साथ व्यभिचार करते, या सुदूर मुस्लिम देशों में भेज देते थे। इस संत्रास से बचने एवं अपने शील की रक्षा के लिए उनके सामने सती होने के अलावा अन्य कोई मार्ग न था। भारत के इतिहास में एक समय ऐसा आया जब लाखों स्त्रियां इस तरह अपनी इज्जत बचाने के लिए पतियों के मौजूद रहते हुए भी जौहर की ज्वाला में जल कर सती हुई। मुसलमानों के शासन काल में यह प्रथा मांगलिक समझी जाने लगी। ओसवाल जाति की वीरांगनाओं ने भी यह विपदा हंसते हंसते झेली। इसका प्रसिद्ध उदाहरण बीकानेर में मंत्रीश्वर कर्मचन्द बछावत के खानदान की स्त्रियों का सं. १६७९ में महाराजा की फौज द्वारा घेर लिए जाने पर जौहर की ज्वाला में कूद कर प्राण होम कर देना है।

शुरू से ही ओसवालों में प्रथा रूप भी अनेक सतियां हुई हैं। जहां सती का अग्नि संस्कार होता था, वहां देवली या छतरी बना दी जाती थी। जिस कुल या परिवार में स्त्री सती होती थी, वह परिवार या कुल उसकी देवी की तरह पूजा करता था एवं अपने को गौरवशाली अनुभव करता था। हालांकि, जैन धर्म इसे मोहजनित आत्मघात की संज्ञा ही देता था और ओसवाल जो जैनधर्म के परिपालक थे, सती को मान्यता दें, यह आश्चर्य की बात थी। परम्परागत संस्कारों का मिटना महा दुष्कर है। क्षत्रिय/राजपूतों के वंशज होने से जहाँ विरोचित संस्कार उन से मिले, वहाँ यह बुराई भी थी। जब युद्धों में वीर गति प्राप्त पति का समाचार मिलता तो प्रेम भावना वश पत्नियां सती हो जाती थी। नाहटा बन्धुओं ने अपने ग्रंथ "बीकानेर जैन लेख संग्रह" में ऐसे २८ स्मारकों/शिलालेखों के लेख प्रकाशित किए हैं जिनसे ओसवाल रमणियों का १६वीं से १८वीं शदी के बीच सती होना प्रमाणित होता है। इनमें कुछ लेख तो ऐसे हैं जिनसे परिलक्षित पुत्र की मृत्यु व्यथा से दग्ध हो माता का सती होना मातृ-वात्सल्य का अनुपम उदाहरण है। इन सभी ओसवाल सतियों की तालिका नीचे दी जा रही है।

श्री पूर्णचन्द जी नाहर के जैन लेख संग्रह (प्रथम खण्ड) में सादडी का एक शिलालेख प्रकाशित हुआ है जिसमें राणाप्रताप के सहयोगी दानवीर भामाशाह कावड़िया के भाई ताराचन्द के स्वर्गवासी होने पर उनकी चार पत्नियों के एक साथ सती होने का उल्लेख है। गुजरात के अहमदाबाद नगर में दूधेश्वर की टंकी के पास विद्यमान एक शिलालेख में सम्राट जहांगीर के आमात्य लोढ़ा गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठि कुंवरपाल सोनपाल के पुत्र रूपचन्द की मृत्यू पर उसकी तीन पत्नियों के सती होने का उल्लेख है।

बीकानेर के सती स्मारक

संवत्	सती का नाम	पति का नाम	जाति/गोत्र	पिता का नाम/गोत्र
१६६९	सुजाणदे	सिचियावदास	बैद	—
१७५२	मृगासती	गिरधरदास	बैद	गोपालदास बोथरा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संवत्	सती का नाम	पति/पुत्र नाम	जाति/गोत्र	पिता/पति नाम/गोत्र
१६९६	दाडिमदे	देवीदास	धूत	—
१७०७	महिमा दे	मानसिंह	चौखेड़िया	दुर्जनमल बोथरा
१७२५	सौभाग दे	सुखमल	बहुरा अभोरा	दसूजी सुराणा
१७७७	विमला दे	भारमल	मुहता/बैद	—
१७४२	जगीशा दे	दुलीचन्द	मालू	—
१७०५	नवला दे	नारायणदास	राखेचा/ पूगलिया	रूपजी बूचां
१६८७	दुरगा दे	दीपचन्द	बहुरा	मेहाकुल पारख
१७६४	महिम	आसकरण	संघवी	—
१८५१	धाई	कानजी	सुराणा	गंगाराम मुहणोत
१७३१	पाटमदे	पारस	बहुरा/कोचर	दुर्जनमल संघवी
१७४०	अमोलकदे	ईश्वरदास	बोथरा	—
१७५३	पीवसुखदेई	विजयमल	सिंघवी	गोलछा
१७६७	सौभाग्यदेई	हनूतमल	सिंघवी	घोड़ावत
१८१०	जगीशादे	श्रीचन्द्रजी	राखेचा	—
१७२७	ऊमादे	उत्तमचन्द	कूकड़/ चोपड़ा/ कोठारी	—
१७०५	कान्हा	उत्तमचन्द	बोथरा	रांका
१८९०	गंगा	सरूपचन्द	छाजेड़	किनीराम बेगांणी
१७३७	केसरदे	केसरीचन्द	नाहटा	—
१७२४	वीरादेवी	पासदत्त	नाहटा	लुंदा राजावल
१८५१	चतरो	गिरधारीलाल	दसराणी/ मुहता	बच्छराज कावड़
१७८४	महासुखदे	मुकनदास	भण्डारी	—

कोडमदेसर

१५२९	कडतिगदे	साह कपा	बहुरा	—

मोरखणा

१७२३	लखमादे	लखजी	बोथरा/बछावत	साहपदम चोखेड़िया

मातृ सती

१८६६	सबलादेवी	चेनरूप	बीकानेर	सुराणा	सबलसिंह जी
१५५७	माणिकदे	—	बीकानेर	बैद	—
१६६४	जेठी	साहभूणा	मोहावत	लूंकड बाफणा	साह खीवा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सुसाणी सती

बीकानेर से लगभग १२ कोस व देशनोक से ६ कोस दक्षिण पूर्व की ओर मोरखणा नामक प्राचीन स्थान है। यहाँ ओसवालों के सुराणा गोत्र की कुलदेवी सुसाणी माता का मन्दिर है। प्रचलित कथा के अनुसार सुसाणी नागौर के संघपति सतीदास सुराणा की कन्या थी। उसका जन्म संवत् १२१२ के आसपास हुआ था। सुसाणी अत्यन्त रूपवती थी। नागौर के तात्कालीन नवाब को जब खबर लगी तो कामांध नवाब ने सुसाणी को लाने के लिए सिपाही भेजे। अपने वंश एवं शील की रक्षा के लिए सुसाणी घर से भाग निकली। नवाब के सिपाहियों ने पीछा किया। भागते भागते मोरखणा के निकट सुसाणी, कहते हैं, पृथ्वी में समा गई। इस कथा का उल्लेख डा. यल. पी. टैसीटरी ने भी अपने अभिलेखों में किया है। किंवदन्तियों में कथा अनेक रूप ले लेती है। कहते हैं कि कुछ ही समय पूर्व सुसाणी की सगाई दूगड़ों के यहां हो चुकी थी। जब यह घटना हुई, वह १७ वर्ष की थी। सुसाणी भागते भागते जिस स्थल पर पहुँची वहाँ महादेव का एक मन्दिर था। वहाँ उसने प्रार्थना की। वहाँ से निकल कर सुसाणी पास के केर के वृक्ष तक पहुँची कि नवाब के सिपाही आ गए। तभी केर दो भागों में विभक्त होकर धरती फटी और सुसाणी उसमें समा गई। जहाँ भूमिसात हुई उस स्थल पर संवत् १२२९ में एक देवालय का निर्माण कराया गया। आज भी मोरखणा के सुसाणी माता के मन्दिर पर आसोज की नवरात्रि के दिन हर वर्ष मेला लगता है। मन्दिर जैसलमेरी पत्थर का बना हुआ है। मन्दिर की दिवारों और छत पर देवी देवताओं व अप्सराओं की मूर्तियाँ बनी है जो बार-बार रंग पुताई करने से धुँधली पड़ गई है। मध्य के एक खम्भे पर प्रार्थना नुमा मुद्रा में आदमी की मूर्ति है जो नबाब की बताई जाती है। एक खम्भे पर चन्द लाईनों का एक प्रस्तर लेख अंकित है जो इस प्रकार है—

"सोना देवा क (—) — ह— त—" ॥
ओं सं. १२२९ ओ. देव्या सुसाणेविचेत्ये सं.—
प्राप्ती सेहलाकोट आगती मो—
इलाहिणी जाव जीव देवि अ— इतः

उक्त लेख के अनेक शब्द स्पष्ट नहीं है, किन्तु जो स्पष्ट हैं उनसे उक्त कथानक की पुष्टि होती है। मन्दिर में उक्त खम्भे से लगी दिवार पर एक अन्य वृहद लेख मार्बल प्रस्तर पर अंकित है। सतरह लाईनों का यह लेख संस्कृत पद्यों में है। प्रथम छ श्लोकों में सुसाणी की प्रशस्ति एवं उसके सुराणा वंश का उल्लेख है। तत्पश्चात् मारवाड़ के संघेश शिवराज की स्तुति है। अन्त में संवत् १५७३ में काहर पुत्र पूजा एवं उनके सम्बंधियों द्वारा श्री नन्दी वर्धन सूरि के हाथों मन्दिर में प्रतिमा प्रतिष्ठापन का उल्लेख है। सम्पूर्ण आलेख इस प्रकार है।

॥३ ॥श्री भूरिर्हर्म सूरी रसमयसमयां भोनिधेः पारदृश्वा।
विश्वेषां सश्वदाश सुरतरु सदृशस्त्याजित प्राणि हिंसा॥

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सम्यगदृष्टि - मनणुगुणगणां गोत्रदेवी गरिष्टां।

कृत्वा सूराणवंशे जिनमत निरतां या चकरात्मशक्त्या॥

तद्या-त्रां महतामहेन - विधि वहिज्ञो विधाया खिले निर्ग्गे

मार्ग्गण चात्क पृण-गुणः सभारटंकछटः जातः क्षेत्रफले

प्रहिर्मरुधरा धारा धरः ख्यातिमान् संघेशः शिवराज इत्ययमहो चित्रं न गर्ज्जिध्वजः॥

तत्पूत्रः सच्चरित्रे वचनरचनया भूमिराजः समाजलंकारः

स्फारसारो विहित निजहितो हेमराजो महोत्राः।

चंगप्रोत्तगपूटंगं भूवि भवनभिद देवयानोप-मानं।

गोत्राधिष्ठात्टदेव्याः प्रस्टभरकिरणं कारयमास भक्त्या।

संवत् १५७३ वर्षे ज्येष्ठमासे सिपक्षे पूर्णिया स्यां श्रुक्रेनुराधायां षोमकर्णे श्री सूराणवंशे सं. गोसल

तत्पुत्र सं. शिवराज तत्पुत्र हेमराज तभ्दार्या सं. हेमश्री तत्पुत्र सं. ध—आ सुं. काजा सं. नाल्हा सं. नरदेव सं. पूर्जा भार्या प्रतापदे पुत्र सं. चाइड सं. पाटमदे पुत्र सं. रणधीर सं. नाथू सं. देवा सं. रणधीर पुत्र देवीदास सं. काजाया काडतिगदे पुत्र सं. सहसमल्ल सं. रणमल सहसमल पुत्र मांडण। रणमल पुत्र धेता (षी मा/सं. नाल्हा पुत्र सं. सीहमल्ल पु (त्र) पीथा सं. नरदेव पुत्र मोकला दिसहितेन। सं. चाहडेन प्रतिष्ठा कारिता सपरिवारेण श्री श्री पद्माणंदसूरितत्पट्टे भं श्री नंदिवर्द्धन सूरीश्वरेभ्यः।

कालान्तर में सती प्रथा रूढ़ि बन गई। मध्यकाल में समस्त भारतवर्ष इस प्रथा के चंगुल में था। न्यस्त स्वार्थ वाले लोग झूठी प्रतिष्ठा के दिखावे में विधवा स्त्रियों पर जुल्म करने लगे एवं उन्हें धधकती आग में जल मरने को मजबूर करने लगे तो इस प्रथा का घिनौना रूप उभरा। प्रेम और शील रक्षा गौण हो गई। अनिच्छा होते हुए भी लोक लाजवश स्त्रियां चिता पर चढ़ने लगीं। कहीं-कहीं तो चिता की लपटों के दाह एवं भयंकर यंत्रणा से छूट कर भागती स्त्री को घर परिवार और समाज के लोग नृशंसता पूर्वक लाठियों से मार कर उसे चिता में डाल देते थे। इस दारूण दृश्य से विचलित हो सतीप्रथा को बन्द करवाने का प्रथम प्रयास किया दयालु हृदय मुगल बादशाह अकबर ने। पर्याप्त चेष्टा के बावजूद उन्हें सफलता न मिली।

जब अंग्रेजों के पांव इस धरती पर जम गए तो एक ओर प्रयास हुआ। संवत् १८४७ में कार्नवालिस जब ईस्ट इंडिया कम्पनी की ओर से गवर्नर नियुक्त हुए तो इस प्रथा को कानूनन बन्द करने की बात उठी। तत्पश्चात लार्ड मिंटो जब गवर्नर बने तो उन्होंने सन् १८१३ में एक फर्मान जारी कर सती प्रथा बन्द करने का प्रयास किया। इसी समय राजा राममोहन राय एवं द्वारकानाथ ठाकुर जैसे भारतीय मनीषियों ने सती प्रथा के खिलाफ सामाजिक चेतना जगाने के लिए बहुत प्रयत्न किए। इस समय तक सती प्रथा का विद्रूप समाज के लिए असह्य हो उठा था। दक्षिण बंगाल में उस वर्ष ६०० सतियां हुई थी। लार्ड विलियम बेंटिक ने आते ही सन्

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

१८२९ में कानूनन सती प्रथा बन्द कर दी। अन्य प्रान्तों यथा मद्रास, बीकानेर, जयपुर, बम्बई में भी इसी तरह के कानून बने। भारत में, तभी से यद्यपि कानूनन सती प्रथा बन्द है, परन्तु धर्म की आड़ में अब भी हर साल एक-न-एक सती होने की खबरें आती रहती हैं।

ओसवाल-साध्वियाँ

वैदिक युग में नारी के सन्यास या प्रवज्या लेने की परम्परा नहीं थी। वृहदकारण्य उपनिषद, रामायण, महाभारत आदि ग्रंथों में ऐसे प्रसंग तो हैं जब पति के सन्यास लेने या मृत्यु या योग्य वर न मिलने पर नारी ने सन्यास या आश्रमिक जीवन का आश्रय लिया है किन्तु वैराग्य से दीक्षा लेने का प्रसंग जैन और बौद्ध श्रमण परम्पराओं में ही मिलता है। उत्तराध्ययन एवं सूत्रकृतांग सूत्रों में पार्श्वपत्यीय श्रमण श्रमणियों के पाँच महाव्रत स्वीकार कर महावीर के संघ में सम्मिलित होने के उल्लेख हैं। स्थानांग सूत्र में स्त्रियों के प्रवज्या लेने के दस कारण बताए हैं। भगवती सूत्र आराधना गाथा, महा निशीथ, ऋषि मण्डल स्तवन, ज्ञाताधर्म कथा, उत्तराध्ययन सूत्र आदि के उल्लेखानुसार संघ में भिक्षुओं से भिक्षुणियों की संख्या सदा अधिक रही। पार्श्व एवं महावीर दोनों के ही भिक्षुणी संघ थे। श्वेताम्बर मत में स्त्रियों की मुक्ति की अवधारणा भी स्वीकृत है। मल्ली कुमारी को तो श्वेताम्बर परम्परा में तीर्थंकर (मल्लिनाथ) माना गया है।

ओसवाल जाति जैन धर्म की प्रभावना में सदा अग्रणी रही है। किसी भी श्वेताम्बर सम्प्रदाय के आचार्य पद पर ओसवाल श्रमण को ही मनोनीत करने का अलिखित विधान रहा है। इसके अपवाद भी है। ओसवाल कुल में जन्मी श्रमणियों का योगदान भी कम नहीं रहा। बारहवीं शदी में दीक्षित अनेक विदुषी साध्वियों के उल्लेख जैन साहित्य में मिलते हैं। आचार्य जिन दत्त सूरि की शिष्या गणिनि शांतिमती ने संवत् १२१५ में प्रकरण संग्रह की प्रतिलिपि की जो जैसलमेर ग्रंथ भंडार में सुरक्षित है। यहाँ उन विशिष्ट ओसवाल कुल में जन्मी श्रमणियों के विवरण अभीष्ठ हैं जिनका धर्म की प्रभावना में विशेष अवदान रहा है।

साध्वी गुण समृद्धि महत्तरा

विक्रम की १४ वीं शताब्दी में जन्मी महत्तरा गुण समृद्धि को प्राकृत भाषा की एक मात्र महिला साहित्यकार होने का श्रेय प्राप्त है। वे आचार्य जिन चन्द्र सूरि की शिष्या थी। संवत् १४०७ में जैसलमेर में उन्होंने "अंजना सुंदरी चरित" की रचना की। यह ५०४ गाथाओं का वृहद ग्रन्थ आपकी प्रतिभा का द्योतक है।

महासती सरदारां जी (संवत् १८६५-१९२७)

तेरापंथ धर्मसंघ में सर्व प्रथम साध्वी प्रमुखा मनोनीत होने का गौरव महासती सरदारां जी को प्राप्त हुआ। इनसे पूर्व साध्वी वरजूजी, साध्वी हीरांजी और साध्वी दीपां जी संघ की अन्य साध्वियों की अगुवाई एवं प्रवर्तन करती रही थी, परन्तु साध्वी प्रमुखा के पद की संरचना संघ के चतुर्थ आचार्य जीतमल जी ने संवत् १९१० में की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सरदार सतीका जन्म चुरू के धनाढ्य सेठ जेतरूप जी कोठारी के घर संवत् १८६५ में हुआ। दस वर्ष की अवस्था में आपका विवाह हो गया। मात्र पांच माह बाद आपको पति— वियोग हुआ। संवत् १८८७ के मुनि जीतमल जी के चुरू चतुर्मास में आपने धर्मसंघ की ओर आकृष्ट होकर गुरू धारणा ली— हालांकि, पीहर में उस समय संघ से बहिर्भूत मुनि चन्द्रभाण जी की मान्यता थी। आपको अनेक कष्ट सहन करने पड़े एवं १९ वर्ष के तप और त्याग की शुभ परिणति संवत् १८९७ में युवाचार्य जीतमल जी के हाथों दीक्षा में हुई। आपने स्वयं अपने हाथों केश लुंचन किया। उसी वर्ष अग्रणी बनी। संवत् १९१० में आचार्य जीतमल जी ने उन्हें प्रथम साध्वी प्रमुखा नियुक्त कर साध्वियों की व्यवस्था का भार सौपा। वे प्रखर अनुशास्ता एवं उत्कृष्ट साधिका थी। उस वक्त तक साध्वियों के सिंघाड़े अव्यवस्थित थे। जिनकी प्रेरणा से जो साध्वी दीक्षित होती वह उन्हीं के नियंत्रण में रहती। इस तरह कुछ सिंघाड़े अधिक बड़े हो जाते और कुछ में बहुत कम साध्वियाँ रह जाती। महासती जी ने बड़े धैर्य पूर्वक सभी सिंघाड़ों को आचार्य को समर्पित करवा कर उनकी संख्या में यथोचित बदलाव किया। संवत् १९२६ तक यह कार्य सम्पन्न हो गया। आप जीवन पर्यन्त जयाचार्य के साथ ही रही। संवत् १९२७ में बीदासर में आपका स्वर्गवास हुआ। पुस्तकों— उपकरणों के संघीकरण एवं साध्वियों के विकेन्द्री करण में उनका सहयोग सदा अविस्मरणीय रहेगा।

महासती गुलाबां जी (सं. १९२७-४२)

तेरापंथ धर्म संघ की द्वितीय साध्वी प्रमुखा एवं सर्वप्रथम संस्कृत अध्येता के रूप में महासती गुलाबां जी ने संघ की बहुत सेवा की। आपका जन्म संवत् १९०१ में बीदासर में श्री पूरणमल जी बैगांनी के घर हुआ। आप संघ के पंचमाचार्य मघवा गणि की लाडली बहन थी। दोनो भाई बहनों का एक सा आकार प्रत्याकार एवं सहज सौन्दर्य यौगलिक युग की याद दिलाता था। अल्प आयु में पिता का देहांत हो गया। सरदार सती से प्रेरणा पाकर माँ पुत्र और पुत्री-तीनों संवत् १९०८ में जयाचार्य से दीक्षित हुए। यह जयाचार्य के हाथों प्रथम कुमारी कन्या की दीक्षा थी। आपकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी एवं स्वर सुरीला। आपसे भजन स्तवन सुनने के लिए जनता उमड़ पड़ती। आप बाल्यावस्था से गुरू की आज्ञा पालन में बड़ी सजग थी— एक बार जयाचार्य ने "टोड़ीआला में बैठकर स्वाध्याय करो" हुक्म दे दिया। गुलाबां जी वहाँ जाकर बैठ गई और जप— स्वाध्याय करती रही— उठी ही नहीं। दोपहर भोजन के समय जयाचार्य को याद आया तब बुलाया एवं आपकी अनुशासन निष्ठा से अति प्रसन्न हुए। साध्वी समाज में सर्वप्रथम संस्कृत व व्याकरण का अध्ययन करने का श्रेय आपको ही है। आपका व्याख्यान बड़ा सरस एवं प्रभावोत्पादक होता था। संवत् १९२७ में आपको साध्वी प्रमुखा नियुक्त किया गया। सर्वप्रथम किसी साध्वी द्वारा पद्य रचना का श्रेय भी आपको ही है। आपकी लिपि बड़ी सुन्दर थी। जयाचार्य "भगवती री जोड़" व अन्यान्य रचनाये करते जाते और आप उन्हें तत्काल लिपिबद्ध करती जाती। महर्षि वेदव्यास के लिपिकार श्री गणेश की भांति इस कला में आप निष्णात थी। आपने आगम भी कंठस्थ किए। आपकी सुन्दरता अद्वितीय थी। कहते हैं जब आप जल पीती तो वह गले

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की कोमल व पारदर्शक त्वचा में से उतरता साफ नजर आता। वे साक्षात सरस्वती की प्रतिमूर्ति थी। संवत् १९४२ में जोधपुर में आपका स्वर्गवास हुआ।

साध्वी भूर सुन्दरीजी

जैन श्वेताम्बर सम्प्रदाय की स्थानकवासी परम्परा में साध्वी भूर सुन्दरीजी धर्म प्रभावना एवं साहित्य निर्माण की दृष्टि से अग्रणी मानी जाती है। उनका जन्म नागौर जिले के बुसेरी ग्राम में विक्रम संवत् १९१४ में हुआ। आपके पिता ओसवाल श्रेष्ठि रांका गोत्रीय श्री अखेचन्द जी एवं माता रामा बाई ने बड़े लाड़ प्यार से आपको पाला पोसा। ग्यारह वर्ष की अवस्था में आप दीक्षित हुई। भक्ति एवं सिद्धान्त विवेचना से ओतप्रोत आपकी रचनाऐं जन साधारण में बहुत लोक प्रिय हुई। जैन भजनोद्वार, विवेक-विलास, बोध-विनोद, आध्यात्म बोध, ज्ञान-प्रकाश, विद्या-विलास आदि अनेक कृतियां आपकी प्रतिभा की द्योतक हैं।

प्रवर्तिनी साध्वी देवश्रीजी (संवत् १९३५-२०४४)

अंबाला में बीसा ओसवाल भाभू गोत्रीय लाला देवीचन्द्र के सुपुत्र लाला नानकचन्द की धर्मपत्नि श्यामादेवी की कोख से वि. सं. १९३५ में जीवी नामक पुत्री का जन्म हुआ। आठ वर्ष की अल्प वय में माता का देहान्त हो गया। जल्दी ही दो ओर बहनों का देहान्त हो गया। पिता ने दूसरा विवाह कर लिया। वैराग्य का बीज वपन इन्हीं हालातों में हो गया था। संवत् १९४८ में जोधा गांव (लुधियाना) के लाला चम्पालाल से जीवी मात्र तेरह वर्ष की वय में ब्याह दी गई। ससुराल पहुंचने के चन्द घंटों पश्चात पति हैजे से आक्रान्त होकर स्वर्ग सिधारे। पिता उसे अम्बाला ले आए। परिवार श्वेताम्बर मूर्ति पूजक धर्म का अनुयायी था परन्तु उस समय पंजाब में ढूंढ़क मत का बोल बाला था। जीवी ढूंढ़क मत की साध्वियों के पास अध्ययन करने लगी किन्तु उसकी श्रद्धा मूर्ति में थी। संयोग से वि. सं. १९५१ में दो संवेगी साध्वियाँ पंजाब पधारी। उनकी प्रेरणा से जीवी दीक्षा के लिए तैयार हुई पर ससुराल वालों ने अनुमति नहीं दी। तीन वर्ष की साधना के पश्चात जंडियाला में आचार्य वल्लभ विजय सूरि ने उन्हें दीक्षित किया तभी से साध्वी देवश्री नाम दिया गया। वे इस युग में पंजाब की सर्वप्रथम साध्वी बनी। तदुपरान्त उन्होंने व्याकरण, संस्कृत, प्राकृत आदि का गहरा अभ्यास किया। उनके हाथों अनेक साध्वी-दीक्षाएं हुई जिनमें लुधियाना के बीसा ओसवाल लाला रलियाराम की पुत्री शान्तीदेवी (हेमश्री जी) भी थी। वि. सं. १९६४ में उन्होंने सिद्धाञ्चल आदि तीर्थों की यात्रा की। पुनः पंजाब विहार के समय आचार्य विजय वल्लभ सूरि ने आपको प्रवर्तिनी पद से विभूषित किया एवं आप इस युग की आदर्श प्रवर्तिनी बनीं। आपकी प्रेरणा से पंजाब में गुरूकुलों की प्रतिष्ठा हुई, प्रचुर दान मिला। जिस वक्त भारत को स्वतन्त्रता मिली एवं विभाजन हुआ उस समय आपका चर्तुमास गुजरानवाला (पाकिस्तान) में था। मुस्लिम आततायियों ने समाधि मन्दिर की खिड़कियों में आग लगा दी एवं जैन मन्दिर और उपाश्रय नष्ट कर दिए। यह साधु साध्वियों के दृढ़ मनोबल एवं धर्म के प्रति अटूट आस्था का ही सुफल था जो आचार्य विजयवल्लभ सूरि एवं प्रवर्तिनी जी अन्य साधु साध्वियों के साथ सकुशल अमृतसर आ पाए। कुछ अरसे बाद ही आपने यह

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नश्वर देह त्याग दी। आप महान तपस्विनी एवं विद्योपासक थीं। आपकी शिष्या प्रशिष्याओं की संख्या करीब ५०० हैं।

महत्तरा साध्वी मृगावतीजी (संवत् १९८२)

राजकोट के निकट सरधरा नगर में श्री डूंगरसी भाई संघवी की धर्म परायण पत्नि श्रीमती शिवकुंवर की कोख से वि. सं. १९८२ में एक बालिका ने जन्म लिया— नाम रखा गया भानु-मति। बालिका अभी दो वर्ष की भी न हो पाई थी कि सर से पिता का साया उठ गया। शीघ्र ही दो भाई एवं बड़ी बहन का भी देहान्त हो गया। मां-पुत्र इस आघात से क्रान्त हो गए। संसार की असारता देख कर दोनों तीर्थ यात्रा के लिए निकल पड़े। वि. सं. १९९५ में दोनों ने भगवती दीक्षा ग्रहण की। भानुमति की आयु उस समय १३ वर्ष की थी। उनका नया नाम रखा गया साध्वी मृगावती जी। आपकी लगन और बुद्धि कौशल विलक्षण था। पं. छोटेलाल शास्त्री, पं. बेचरदास दोशी, पं. सुखलाल संघवी, पं. दलसुख भाई मालवणिया एवं मुनि पुण्यविजय जी के सानिध्य में आपने भारतीय षड् दर्शनों एवं पाश्चात्य दर्शनों का गहरा अध्ययन किया। युगद्रष्टा आ. विजयवल्लभ सूरि ने आपको शासन प्रभाविका जानकर आशीर्वाद दिया। वि. सं. २०१० में कलकत्ता में हुई सर्व धर्म परिषद में आपने जैन धर्म का प्रतिनिधित्व किया एवं अपनी वक्तृता से चारो ओर धाक जमा दी। पावापुरी में आपका व्याख्यान ८०००० की जनमेदिनी द्वारा तीन मील की दूरी तक ध्वनि विस्तारक से सुना गया। श्री मोरारजी देसाई, गुलजारीलाल नन्दा आदि चोटी के नेताओं ने आपके ज्ञान गाम्भीर्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की। स्थानकवासी सम्प्रदाय के प्रधानाचार्य आत्माराम जी महाराज आपसे बहुत प्रभावित थे। दिल्ली में वल्लभ स्मारक के निर्माणार्थ आपने अभिग्रह धारण किया एवं उसे सफलता पूर्वक अंजाम दिया। आपके प्रयत्नों से वि. सं. २०३५ में प्रसिद्ध कांगड़ा तीर्थ का पुनरूद्धार हुआ। जहां पिछले ५०० वर्षों में किसी साधु साध्वी का कोई चतुर्मास नहीं हुआ, आपने साहस कर वह क्षेत्र पवित्र किया एवं जो मन्दिर सरकारी कब्जे में बिना सेवापूजा खण्डहर बन रहे थे, उन्हें मुक्त करवा कर सदा के लिए पूजा सेवा आरम्भ करवाई। एतदर्थ संघ ने आपको महत्तरा एवं कांगड़ा तीर्थोद्धारिका की पदवियों से विभूषित किया।

प्रवर्तिनी साध्वी पुण्यश्री जी

जैन श्वेताम्बर मन्दिर मार्गी सम्प्रदाय की विदुषी साध्वी पुण्य श्री जी का जन्म संवत् १९१५ में गिरासर ग्राम (जैसलमेर) के ओसवाल श्रेष्ठि जीतमल जी पारख की धर्मपत्नि कुन्दन देवी की कुक्षि से हुआ। आपका विवाह बारह वर्ष की अवस्था में ही फलौदी के श्री दौलतचन्दजी झाबक से कर दिया गया किन्तु विधि को यह मंजूर न हुआ और कुल १८ दिन बाद ही विधवा हो गई। नियति का यह क्रूर प्रहार वैराग्य का निमित्त बना। घर वालों ने अनुमति नहीं दी तो आपने अन्नजल परित्याग कर दिया। अन्ततः संवत् १९३१ में श्री सुख सागर गणि के कर कमलों से आप दीक्षित हुई। समस्त आगम साहित्य का अध्ययन आपका प्रथम लक्ष्य बना। आपके मुख पर ओज और वाणी में माधुर्य था। प्रवर्तिनी पद पर आसीन होने के उपरांत आपने अनेक

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

महिलाओं को दीक्षा दी एवं साधुओं की भी प्रेरणास्रोत बनी। संवत् १९३७ में आपने नागौर संघ के साथ जैन तीर्थ केशरियाजी की यात्रा की। संवत् १९४१ में फलौदी के जैन मंदिरों पर कलशारोपण का श्रेय आपको ही है। संवत् १९४२ में कुचेरा में शताधिक कुटुम्बों को मन्दिर मार्गी बनाया। संवत् १९४४ में नागौर संघ के साथ तीर्थराज शत्रुञ्जय की यात्रा में एक चमत्कार घटित हुआ। जंगल में एक अश्वारोही ने साध्वी श्रृंगार श्री के लावण्य से विमोहित हो उन्हें अपनी वासना का शिकार बनाना चाहा। आपने अश्वारोही के अनिष्ट का संकेत किया। कहते हैं तत्काल उसकी आँखों की रोशनी चली गई। बार-बार उसके क्षमा याचना करने पर ही उसकी रोशनी लौटी। संवत् १९४८ में उन्होंने फलौदी में आदिनाथ मन्दिर की प्रतिष्ठा करवाई। ग्वालियर नरेश के कोषाध्यक्ष सेठ श्री नथमल जी गोलेछा ने संवत् १९५१ में सिद्धांचल तीर्थ का संघ समायोजन किया। उसे आपका सान्निध्य प्राप्त हुआ। आपके सद्प्रयत्नों से कालिन्द्री में संघ के सदस्यों का आपसी वैमनस्य समाप्त हुआ। संवत् १९६५ में रतलाम के दीवान बहादुर सेठ श्री केसरीसिंह जी बापना से उद्यापन महोत्सव सम्पन्न करवाया। मक्सी तीर्थ की यात्रोंपरान्त संवत् १९६६ में इन्दौर के सेठ पूनमचन्द सामसुखा ने जब मांडवगढ़ संघ समायोजन किया तो आपका सान्निध्य उन्हें प्राप्त हुआ। संवत् १९७२ से महासती जी का शरीर व्याधिग्रस्त रहने लगा एवं संवत् १९७६ में स्वर्गारोहण तक जयपुर ही बिराजना हुआ।

प्रवर्तिनी साध्वी विचक्षणश्रीजी

जैन कोकिला विदुषी साध्वी विचक्षण श्री जी का जन्म अमरावती के ओसवाल श्रेष्ठि श्री मिश्रीमलजी मूथा की धर्मपत्नि रूपा देवी की कुक्षि से संवत् १९६९ में हुआ। एक वर्ष पश्चात् ही पिता का देहांत हो गया। शोकाकुल परिवार में बड़ी होते होते वैराग्य का बीज वपन हुआ। माता और पुत्री दोनों दीक्षित होने के लिए आतुर रहने लगीं। दादाजी ने श्री पन्नालालजी मुणोत से सगाई तय कर दी। यही समय परीक्षा का था। आपने ससुराल से आए गहने पहनने से इन्कार कर दिया। बड़ी कठिनाई से दीक्षार्थ अनुमति मिली किन्तु एन वक्त पर मोहाकुल दादाजी ने फिर इन्कार कर दिया। निम्बाज के ठाकर ने आपकी खूब कड़ी परीक्षा ली एवं खरी उतरने पर दादाजी को मनाया। संवत् १९८१ में आपकी दीक्षा बड़े आनन्द उत्साह से सम्पन्न हुई। आप महासती स्वर्ण श्री जी की शिष्या बनी। बड़ी दीक्षा के उपरांत महासती जतनश्री जी की शिष्या बनी। आप बड़ी निर्भीक प्रकृति की थी। शास्त्रों का वृहद अध्ययन होने से आपकी वाणी श्रोताओं को मुग्ध कर लेती थी। तपा गच्छ के आचार्य विजय वल्लभ सूरि जी ने आपको "जैन कोकिला" सम्बोधन दिया। आपने निरतंर भ्रमण कर धर्म की प्रभावना में अभूतपूर्व योग दिया। लोक कल्याण कारी कार्यों के लिए आपका सान्निध्य सदा उपलब्ध रहता था। अमरावती एवं जयपुर में आपके सद् प्रयासों से सुवर्ण सेवा फण्ड स्थापित हुए जिनसे गरीब महिलाओं को अवदान दिया जाता है। इसी हेतु दिल्ली में भी कल्याण केन्द्र की स्थापना करवाई। रतलाम में सुख सागर जैन गुरूकुल स्थापित करवाने का श्रेय भी आपको है। आपके हाथों पचासों दीक्षाऐं सम्पन्न हुई। आपने विपुल भजन साहित्य की रचना की। अंतिम समय में आपने साध्वी सज्जन श्री जी को प्रवर्तिनी पद देकर महा प्रयाण किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आचार्य चन्दनाजी

प्रिय नाम प्रिय काम, प्रिय दर्शन और प्रिय अभिव्यञ्जन का अभूतपूर्व संगम है उपाध्याय श्री अमरमुनि की विद्वान शिष्या आचार्य चन्दनाजी। भगवान महावीर और बुद्ध की पावन बिहार-स्थली ऐतिहासिक नगर राजगृह में अपनी साधना से वे उज्ज्वल आलोक भरे एक कल्पनातीत सुरम्य स्वप्न से सांस्कृतिक तीर्थ 'वीरायतन' की अभिनव योजना को साकार करने में लगी है।

महाराष्ट्र में भीमा नदी के तट पर बसे चास कमान गाँव के ओसवाल श्रेष्ठि श्री माणकचन्दजी कटारिया की सुपत्नि प्रेम कुँवर की कुक्षि से अहमदनगर में फूंफा के घर २६ जनवरी सन् १९३७ के दिन जन्मी प्रिय दर्शिनी बालिका 'शकुन्तला' बचपने से ही अतीन्द्रिय भगवत्ता को समर्पित रही। परिवार के अनन्य मित्र श्री कुन्दनमलजी फिरोदिया ने देखते ही बालिका के दिव्य लक्षणों की घोषणा कर दी थी। स्वामी प्रज्ञानन्दजी ने उनकी बाल सुलभ जिज्ञासाओं को सत्यान्मुख कर दिया। सन् १९५२ में शकुन्तला ने आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी के हाथों गुलाबपुरा में दीक्षित हो साध्वी श्री चन्दना नाम पाया।

महासती सुमति कुवँर जी के सान्निध्य में चन्दना जी आगम अनुशीलन में आकंठ डूब गई। पं. ईश्वरचन्द्र शर्मा के निर्देशन में इसी चिन्तन मनन ने उनकी प्रज्ञा को निखारा। उनकी आचार चर्या साधु जीवन से भी कठोर थी। दीक्षा के उपरान्त इस १२ वर्ष के साधना काल में वे पूर्णतः अध्ययन-ध्यान-साधना निमग्न रही। सन् १९७१ में चन्दनाजी ने उत्तराध्ययन सूत्र के सम्पादन का बीड़ा उठाया। एक योगीराज की तरह ४५ दिन एक कमरे में बन्द रह कर इस महत कार्य को पूर्ण किया।

सन् १९७० में आगरा की एक धर्म सभा में उपाध्याय श्री अमरमुनि नें भगवान महावीर की पच्चीसवीं परिनिर्वाण शताब्दी की स्मृति में एक उदात्त स्वप्निल संयोजना की घोषणा की और गुरु के आदेश पर साध्वी चन्दनाजी ने सम्पूर्ण निष्ठा से उसे मूर्त रूप देने का संकल्प लिया। सन् १९७१ की वीर त्रयोदशी के मंगल प्रसंग पर 'वीरायतन' नामाभिधान के साथ सम्पूर्ण योजना का प्रारूप बना। बिहार सरकार ने राजगृह के वैभार गिरि पर्वत की सुरम्य तलहटी में ३० एकड़ भूमि योजनार्थ प्रदान की। सन् १९७३ में कार्य का शुभारम्भ हुआ। सन् ७४ में एक समय ऐसा भी आया जब राजगृह में असामाजिक तत्वों का भयंकर उपद्रव हुआ जिसकी शिकार साध्वियाँ भी हुई। राजगृह के क्षेत्र पर ही प्रश्न चिह्न लग गया। किन्तु चन्दना जी अपने लक्ष्य के प्रति सर्वस्व उत्सर्ग की भावना लेकर डटी रही। इसी की निष्पत्ति है सुरम्य तीर्थं वीरायतन।

भक्त जनों एवं दर्शकों का स्वागत करता सिंह द्वार एवं स्वागतम्, वस्तु कला का अनुपम संग्रहालय 'श्री ब्राह्मी कला मन्दिरम्,' प्राच्य विद्या पीठ शिक्षा निकेतन, मुद्रणालय, क्षीरोदय (कुआँ), श्रुत सम्बोधि, चिदम्बरम् (मौन साधना कुटीर) ज्ञान मेरु एवं ध्यानमेरु (उपाश्रय) मैत्री विहार (निवास) प्रेरणा तंत्र (कार्यालय) कल्पतरु (आम्रकानन) आकाश गंगा (जल वितरण केन्द्र) अक्षय निधि भवन (भोजन व्यवस्था) आदि ने इसे एक भव्य आध्यात्मिक रूप प्रदान कर दिया है, जहाँ से भगवान का विश्व मैत्री का सन्देश निरतंर प्रवाहित होता रहता है। चन्दना जी ने इसे आध्या-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

त्मिक साधना स्थली ही न रख कर लोक कल्याण के केन्द्र रूप में ज्ञापित किया है। सन् ७४ से यहाँ नेत्र शिविरों का आयोजन निरंतर होता रहा है। सन् ८५ में यहाँ नेत्र ज्योति स्वस्तिमंडपम् की आधार शिला रखी गई। सन् ८७ में यहाँ ८ वार्ड एवं १०० बेड वाले आपरेशन केन्द्र का विधिवत उद्घाटन हुआ। इसी अवसर पर २६ जनवरी १९८७ को एक विराट् धर्म सभा में चन्दना जी आचार्य पद से विभूषित हुई। जैन धर्म के इतिहास में वे प्रथम महिला आचार्य है। ओसवाल कुल इस नारी रत्न को पाकर धन्य हुआ है।

ओसवाल नारी-रत्न

सम्पूर्ण भारत में वैदिक युग से ही स्त्री जाति की दशा बड़ी दयनीय रही है। शास्त्रों में जगद्धात्री एवं अन्नपूर्णा कहकर उसकी पूजा भले ही की जाती रही हो, सामाजिक न्याय उसे कभी उपलब्ध नहीं हुआ। उसे हमेशा भोग्या या एक वस्तु ही माना गया। ओसवाल जाति में भी नारी हमेशा शोषित रही। बीसवीं सदी के प्रारम्भ तक उसे शिक्षा के अधिकार से भी वंचित रखा गया। जैन संस्कृति की श्रमणी परम्परा इसका अपवाद थी। उल्लेखनीय है कि भगवान पार्श्वनाथ के धर्म संघ में सती पुष्पचूला के नेतृत्त्व में तीस हजार भिक्षुणियाँ थी एवं भगवान महावीर के धर्म संघ में सती चन्दन बाला के नेतृत्त्व में छत्तीस हजार भिक्षुणियाँ थी। हालाँकि धर्म संघ में भी नारी का दर्जा पुरुष से अधोतर ही माना गया परन्तु धर्म की प्रभावना में उनका सहयोग स्तुत्य रहा।

धर्म संघों के अलावा समाज में ऐसे नारी-रत्नों का अभाव नहीं रहा है। पावापुरी मन्दिर के निर्माण के समय उसमें चुनी जाने वाली हर ईंट को तालाब के पावन जल से शुद्ध करती हुई महताब बीबी को समाज कैसे भूल सकता है। मंत्रीश्वर दयालदास के साथ युद्ध में लड़ने वाली वीर रमणी सती पाटण दे, जगत् सेठ घराने से सम्बद्ध विदुषी रत्न कुवंर बीबी एवं अहमदाबाद की असाधारण नारी रत्न सेठाणी हरकौर के प्रेरणास्पद जीवन प्रसंग ग्रंथ के प्रथम खंड में दिए जा चुके हैं। अनेकानेक सामाजिक अभिषप्तताओं के बावजूद समाज में अनेक नारी प्रतिभाऐं उत्पन्न हुई हैं जिनका उल्लेख आवश्यक हैं। अब तो वे हर क्षेत्र में नाम कमा रही हैं। समाज सुधार, शिक्षा, साहित्य, तकनीकी विशेषज्ञता, उद्योग-व्यापार में भी नारियों ने नये कीर्तिमान स्थापित किए हैं। उनके जीवन प्रसंग समाज को प्रेरणा एवं नई दिशा देंगे।

गौतमी बीबी

आप राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द की बहन और बड़ी विदुषी जैन महिला थी। आपने "श्रीमद् रत्नशेखर सूरि कृत गुण स्थान क्रमारोह" नामक ग्रंथ की रचना की जिसमें मूल संस्कृत ग्रंथ का अनुवाद और व्याख्या है। यह ग्रंथ संवत् १९५४ में प्रकाशित हुआ। इनके बारे में अधिक विवरण उपलब्ध नहीं है।

श्रीमती गोविन्द देवी पटुआ

स्वतंत्रता की वेदी पर सहर्ष कष्ट झेल कर अर्घ चढ़ाने वाली वीर महिलाओं में कलकत्ता निवासी गोविन्द देवी पटुआ अग्रगण्य थीं। गाँधीजी ने जब 'असहयोग' का शंख फूंका तो

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

गोविन्द देवी ने बड़ा बाजार कलकत्ता के विदेशी वस्त्रों की दूकानों पर धरणा देने वाले जत्थों का नेतृत्व किया। सन् १९२८ में साईमन कमीशन का बहिष्कार किया गया तब भी वे आन्दोलन कारियों की प्रथम कतार में शामिल थी। सन् १९४२ के सत्याग्रह में वे गिरफ्तार हुई एवं उन्होंने सहर्ष जेल की यातनाऐं सही।

श्रीमती पुष्पादेवी कोटेचा

स्वतंत्रता आन्दोलन में ओसवाल समाज की प्रथम महिला सत्याग्रही होने का श्रेय पुष्पादेवी कोटेचा को प्राप्त है। आप ओसवाल श्रेष्ठि रतनलालजी कोटेचा की धर्मपत्नि थी। सन् १९४१ (वि. सं. १९९८) में सूरत के जन सत्याग्रह में भाग लेने के फलस्वरूप आप गिरफ्तार कर ली गई एवं दंडित हुई। आपने दण्ड स्वरूप हुआ जुर्माना न देकर जेल जाना पसन्द किया।

श्रीमती सरस्वती देवी रांका

आप कलकत्ता में राष्ट्रीय आन्दोलन में अग्रणी श्री सरदारसिंह जी महनोत की भतीजी एवं नागपुर के प्रसिद्ध कांग्रेस कर्मी पूनमचन्द जी रांका के अनुज की धर्मपत्नि थी। अतः राष्ट्रीय आन्दोलन से आप सहज ही जुड़ गई। गांधी जी के असहयोग आन्दोलन में सरकारी यातनाओं की परवाह न कर आप दो बार जेल गई। विदेशी कपड़े की दूकानों पर पिकेटिंग में आपने कई बार जत्थों का नेतृत्व किया। सन् १९३० में हुए नमक सत्याग्रह में भी आप सुप्रसिद्ध ओसवाल महिला नेत्री सज्जन देवी महनोत के साथ सक्रिय रही। नागपुर के सार्वजनिक हित की प्रवृत्तियों में आपका स्मरणीय योगदान था। आपके असामयिक निधन से समाज की अपूरणीय क्षति हुई।

श्रीमती सरदार बाई लूणिया

आप अजमेर के प्रसिद्ध समाज सेवी एवं स्वतंत्रता सेनानी जीतमल जी लूणिया की धर्म पत्नि थी। सन् १९३३ में राष्ट्रीय आन्दोलन में शरीक होकर आप जेल गई। मजिस्ट्रेट ने आपको ए. क्लास में रखना चाहा तो आपने अन्य बहिनों को दी गई सी. क्लास के विरोध में उसे स्वीकार नहीं किया और स्वयं भी अपने तीन वर्षीय पुत्र के साथ सी. क्लास में रही।

श्रीमती धनवती बाई रांका

राष्ट्रीय आन्दोलन में ओसवालों के योगदान को चार चाँद लगाने वाली थीं नागपुर के प्रसिद्ध समाज सेवक पूनमचन्दजी रांका की धर्म पत्नि श्रीमती धनबती बाई रांका। आप राष्ट्रीय आन्दोलन की महिला नेत्री थी। वे अनेक बार जेल गई। आपने खादी एवं चरखे को अपने जीवन का अंग बना कर समस्त ओसवाल समाज को गौरव प्रदान किया।

श्रीमती नन्दू बाई ओसवाल

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में महिलाओं की जिस क्रांति के दर्शन राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में हुए सामाजिक क्षेत्र भी उससे अछूता न रहा। श्रीमती नन्दू बाई ओसवाल उन अग्रगण्य महिलाओं में थी जिन पर समाज को गर्व हो सकता है। समाज सेवा और साहित्य के क्षेत्र में आपका अवदान

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

[illegible] नन्दू बाई ओसवाल

अभूतपूर्व था। आप पूना निवासी श्री घोंडीराम जी गुलाबचन्द जी खिंवसरा की सुपुत्री थीं। आपका विवाह भुसावल निवासी श्री नयनसुखजी रामचन्दजी लोढ़ा से हुआ। प्रथम महायुद्ध के बाद ब्रिटिश शासन के खिलाफ देश में क्रांति की चिन्गारियाँ सुलगने लगी तो नन्दू बाई भी आन्दोलन में कूद पड़ी। वे शुद्ध खादी पहनने लगी। संवत् १९८४ में वे माले गाँव में महाराष्ट्रीय जैन महिला परिषद की प्रमुख चुनी गईं। संवत् १९८८ में प्रकाशित 'ओसवाल नवयुवक' के महिलांक के सफल सम्पादन का श्रेय नन्दू बाई को ही है। समाज सुधार के विभिन्न पहलूओं पर आपके प्रेर[illegible] विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में छपते रहते थे। आप की भाषा एवं शैली [illegible] कहानियाँ एवं गद्य गीत भी लिखे।

[illegible] हीराकुमारी [illegible]

[illegible] के क्षेत्र की महिलाओं और विदुषी जैन साध्वियों ने अपने मौलिक [illegible] किन्तु शोध व समीक्षा के क्षेत्र पर पुरुषों का एकाधिकार रहा। [illegible] समाज की महिला रत्न हीरा कुमारी बोथरा ने। मुर्शिदाबाद के बाबू [illegible] प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। आपके पूर्वज जसरूपजी कोडमदेसर (बीकानेर) [illegible] मुर्शिदाबाद आकर बसे। इनके पुत्र दयाचन्द जी ने लाखों की सम्पत्ति अर्जित [illegible] खुलवाया एवं ३२ भरी सोने के चरण अर्पित किए। इन्हीं के पुत्र [illegible] इनके पुत्र बुधसिंह जी भी बड़े मिलनसार व्यक्ति थे। संवत् १९६२ में उनके [illegible] कुमारी [illegible] जन्म हुआ। पाणि ग्रहण के कुछ ही समय बाद वैधव्य की कारा ने उन्हें [illegible] बुद्धिमती हीरा कुमारी ने समस्त बाधाओं को पराजित कर ज्ञान [illegible]। प्रज्ञाचक्षु पण्डित सुखलालजी संघवी के निर्देशन में उन्होंने संस्कृत [illegible] अध्ययन किया। भाषा शास्त्र एवं दर्शन में निष्णात होकर व्याकरण- सांख्य-वेदान्त-तीर्थ की [illegible] हासिल की। उन्हें जैन शास्त्रों से विशेष लगाव था। शास्त्र शोध एवं

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

समीक्षा से उनका सम्बंध जीवनपर्यंत रहा। उन्होंने आचारांग सूत्र के श्रुत स्कंध का बंगला भाषा में अनुवाद कर समस्त विद्वत समाज को चमत्कृत कर दिया। उनके पास हस्तलिखित शास्त्रों को अलभ्य भंडार था जिसे उन्होंने प्राकृत जैन इन्स्टीट्यूट, वैशाली को भेंट कर दिया। संवत् १९८९ में जब ओसवाल महिला सम्मेलन का समायोजन हुआ तो समाज ने समुचित सम्मान कर हीरा कुमारी जी को उसकी सभानेत्री चुना। संवत् २०२५ में उनका देहावसान हुआ।

डा. कमला देवी दूगड़

संवत् १९९२ में इस महिला रत्न ने एक नया कीर्तिमान स्थापित कर ओसवाल समाज को गौरवान्वित किया। जयपुर की श्रीमती कमला देवी दूगड़ को समाज की प्रथम महिला डाक्टर होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। दिल्ली में आपकी डिस्पेंसरी में अनेक स्त्री-पुरुषों एवं साधु-साध्वियों का समुचित इलाज होता था।

श्रीमती मृणालिनी साराभाई

श्रीमाल ओसवाल कुल नक्षत्र एवं भारत के प्रमुख वैज्ञानिक डा. विक्रम साराभाई की पत्नि श्रीमती मृणालिनी एक उज्जवलतम नीहारिका सी भारत के सांस्कृतिक नभमंडल में चमकती रही है। भारत की पारम्परिक नृत्य शैली को आपका अवदान प्रेरणास्पद है। आपके पिता श्री स्वामीनाथन मद्रास के लब्ध प्रतिष्ठित वकील थे। माता श्रीमती अम्मु स्वामीनाथन भारतीय लोकसभा की पन्द्रह वर्ष तक सदस्य रही। बड़ी बहन डा. लक्ष्मी ने नेताजी सुभाष की विप्लवकारी आजाद हिन्द फौज में महिला ब्रिगेड की कमान संभाली। मृणालिनी जी ने प्रथम नृत्य-पाठ श्रीमती रूक्मणि देवी अरुण्डेल के मद्रास स्थित कला क्षेत्र में सीखा। परन्तु उन्हें शीघ्र ही स्वीट्जरलैंड जाना पड़ा। वहाँ मृणालिनी जी ने पाश्चात्य शैली के नृत्यों, बैलों एवं ग्रीक नृत्यों का अभ्यास किया। उस वक्त उनकी आयु मात्र बारह वर्ष थी।

संवत् १९९६ में भारत आकर गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर के सान्निध्य में शांति निकेतन में आपने भारतीय शैली के नृत्य सीखे। यहाँ रहकर भरतनाट्यम, मोहिनी अट्टम एवं कथकली में आपने महारत हासिल की। लोक्-नृत्य शैली का विशेष अध्ययन किया। जावा की पारम्परिक नृत्य शैली में पारंगत हुई। रंगमंच की विशिष्ट शिक्षा हेतु आप अमरीकी नाट्य कला अकादमी से जुड़ी। आपने इन अपरिमित अनुभवों का लाभ उठाकर अपनी स्वतंत्र कोरीयोग्राफी विकसित की। भारतीय एवं विदेशी रंगमंचों पर आपने अनेक बार नृत्य प्रदर्शन कर प्रशंसा अर्जित की।

संवत् १९९८ में बंगलौर में आपका नृत्य प्रदर्शन हुआ। तब विक्रम साराभाई डा. सी. बी. रमण के सान्निध्य में वहीं शोध-रत थे। मृणालिनी जी का एक नृत्य कार्यक्रम आपने देखा और मुग्ध हो गए। वहीं परिचय प्रगाढ़ होकर संवत् १९९९ में सदा सदा के लिए दोनों को परिणय सूत्र में बाँध गया। अहमदाबाद आकर संवत् २००५ में मृणालिनी जी ने नृत्यकला के संवर्धन हेतु "दर्पन नाट्य एवं नृत्य शिक्षण संस्थान" की स्थापना की। डा. विक्रम साराभाई के सहयोग से जल्द ही इस संस्थान ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की। रविन्द्र भारती विश्व-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ओसवाल जाति के क्षात्र तेज का सुकुमार अहिंसक स्वरूप
(डा. विक्रम साराभाई की पत्नि श्रीमती मृणालिनी एवं पुत्री मल्लिका साराभाई,
जिन्होंने भारतीय शास्त्रीय नृत्य को नये आयाम प्रदान किये है)

विद्यालय ने उन्हें 'डाक्टरेट' की मानद उपाधि से विभूषित किया। मेक्सिको एवं फ्रांस की सरकारों ने नृत्य क्षेत्र में विशिष्ट सेवा के लिए उन्हें स्वर्ण पदक प्रदान किए।

नृत्य को आपने अभिव्यक्ति का माध्यम ही नहीं बनाया अपितु उसे जीवन शैली की तरह अपनाया। उनकी सृजनात्मकता उनके नृत्यों में पूर्णतः रूपायित हुई। 'चंडालिका' नामक नृत्य-नाट्य को उन्होंने नवीन भावभूमि के साथ प्रस्तुत किया। 'मनुष्य' नृत्य नाट्य में उन्होंने वर्तमान की पीड़ा और संघर्ष के दंश को बड़ी मार्मिकता से दर्शाया। 'मेघ दूत' नृत्य नाट्य में उन्होंने प्रदूषण की समस्या को बड़ी सफलता से मुखरित किया। इन्हीं नवीन प्रयोगों ने उनके नृत्यों को कला मंचों पर लोक प्रिय बनाया। संवत् २०२२ में भारत सरकार ने उन्हें 'पद्मश्री'

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की उपाधि से सम्मानित किया। संवत् २०४३ में शांति निकेतन ने उन्हें 'देशिकोत्तम' के सम्मान से विभूषित किया।

डा. प्रो. अरुणा सिंघवी

अंतर-राष्ट्रीय क्षेत्र तक अपनी प्रतिभा की रश्मियाँ बिखरने वाली सुश्री अरुणा सिंघवी जोधपुर के ख्यातनामा क्षय-रोग विशेषज्ञ डा. अचलमलजी सिंघवी व श्रीमती उमादेवी सिंघवी की सुपुत्री हैं। आपका जन्म सन् १९४८ में हुआ। अपने छात्र जीवन से ही आप अत्यन्त प्रतिभाशाली छात्रा रहीं तथा बी.एस.सी. (१९६७) व एम.एस.सी. (प्राणीशास्त्र १९६९) में जोधपुर विश्वविद्यालय में सर्वोच्च स्थान प्राप्त करके स्वर्ण पदक से अलंकृत हुई। तत्पश्चात् आपने जोधपुर विश्वविद्यालय में ही व्याख्याता का पद ग्रहण किया और अध्यापन के साथ-साथ अपना अध्ययन और शोध-कार्य भी चालू रखा। इस अवधि में आपने नार्थ वेस्टर्न विश्वविद्यालय, (अमेरिका) से एम. एस. तथा सन् १९७८ में जोधपुर विश्वविद्यालय से ही पैरसाइटोलॉजी (परोपजीवी विज्ञान) में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। अगले वर्ष ही बंबई से इम्यूनोलॉजी (प्रतिरक्षण विज्ञान) का कोर्स किया। फिर तो अनेक विदेशी विश्वविद्यालयों ने आपको अनुसंधान के लिए शिक्षकवृत्ति (फैलोशिप) प्रदान की। आपने पाँच अंतर-राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंसों में जाकर पत्र पाठ किया तथा आपके लगभग ३६ शोधपरक लेख राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए।

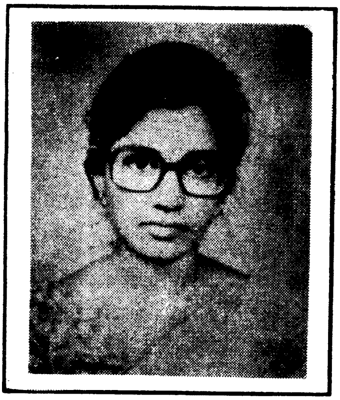

डॉ. प्रो. अरुणा सिंघवी

जिन विश्वविद्यालयों ने आपको शिक्षा-वृत्ति देकर सम्मानित किया उनमें मुख्य हैं कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय, इंग्लैंड; एकेडेमी आफ साइंसेज़ प्राग, जैकेस्लोवाकिया (यूनेस्को शिक्षा वृत्ति); इंडियाना स्टेट विश्वविद्यालय, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका; यू.जी.सी. मैरिट रिसर्च फैलोशिप; वैलकुई फाउंडेशन फैलोशिप इत्यादि। इनके अतिरिक्त १९७३ में आपको अंतर-राष्ट्रीय सद्भाव के लिए रोटेरी फाउन्डेशन फैलोशिप भी प्राप्त हुई। इन शिक्षावृत्तियों से आपने जिन विषयों में अनुसंधान किया वे हैं— न्यूट्रीशनल फीजियोलॉजी (पोषाहार शरीर-विज्ञान) टिश्शूकल्चर (ऊतकसंवर्धन) और इम्यूनो केमिस्ट्री (प्रतिरक्षण रसायन शास्त्र)।

आप इंडियन सोसाइटी आफ पैरासाइटोलॉजिस्ट्स, ब्रिटिश सोसाइटी ऑफ पैरासाइटोलॉजिस्ट्स एवं सिपिना IX संयुक्त राष्ट्र अमेरिका जैसी प्रतिष्ठित संस्थाओं की सदस्य भी हैं।

इन जाज्वल्यमान बौद्धिक उपलब्धियों के साथ आपके व्यक्तित्व का सांस्कृतिक पक्ष भी प्रबल है। भारतीय शास्त्रीय नृत्य (कत्थक) में आप विशारद हैं। चित्रकला व पर्यटन में भी आपकी गहरी रुचि है। ऐसी प्रतिभाशाली महिला वास्तव में हमारे समाज का गौरव है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आप चेकोस्लोवाकिया के इंडोलोजी विशेषज्ञ से परिणय-ग्रंथि में बंधी। संभवतः ओसवालों में यह प्रथम अन्तराष्ट्रीय विवाह है।

श्रीमती डॉ. शांता भानावत

आधुनिक जीवन की सुविधाओं से दूर एक छोटे से कस्बे में उत्पन्न होकर राजधानी जयपुर के एक महाविद्यालय के प्रिंसिपल पद को सुशोभित करनेवाली श्रीमती डॉ. शांता भानावत का जन्म ६ मार्च १९३९ को छोटी सादडी (जिला-चित्तौड़गढ़) में श्री गोटीलालजी बया के घर हुआ। जब आप नवीं कक्षा में पढ़ती थी, तभी १६ वर्ष की अवस्था में आपका विवाह हो गया। अपने पति डॉ. नरेन्द्र भानावत की प्रेरणा से आपने अपना अध्ययन जारी रखा और सन् १९६७ में राजस्थान विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. किया व सन् १९७३ में 'ढोला मारू रा दूहा' का वैज्ञानिक अध्ययन विषय पर पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की।

हिन्दी और राजस्थानी दोनों भाषाओं पर आपका समान अधिकार है। आपकी प्रकाशित मौलिक कृतियाँ हैं— हिन्दी साहित्य की प्रमुख कृतियाँ और कृतिकार, ढोला मारू रा दूहा का अर्थ वैज्ञानिक अध्ययन, तथा राजस्थानी भाषा में लिखित महावीर री ओलखाण। सम्पादित कृतियाँ हैं— समतादर्शन और व्यवहार, क्रान्तद्रष्टा श्रीमद जवाहराचार्य, जैन संस्कृति और राजस्थान आदि। आप जयपुर से प्रकाशित 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका व बीकानेर से प्रकाशित 'श्रमणोपासक' पाक्षिक की सम्पादिका हैं। आकाशवाणी जयपुर से आपकी हिन्दी व राजस्थानी में कहानियाँ तथा वार्ताएँ प्रसारित होती रहती हैं।

सन् १९७५ से आप वीर बालिका महाविद्यालय, जयपुर की प्रिंसिपल के रूप में शिक्षा क्षेत्र में अपनी सेवाएँ दे रही हैं। आप राजस्थान विश्वविद्यालय से सम्बद्ध डिग्री कॉलेजों के प्राचार्यों द्वारा राजस्थान विश्वविद्यालय की सीनेट की सदस्य निर्वाचित हुई हैं।

आप कई सामाजिक, धार्मिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं से सक्रिय रूप से जुड़ी हुई हैं। आप श्री एस. एस. जैन सुबोध बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, जयपुर की प्रबंध समिति की सदस्य व महिला जैन उद्योग मंडल, जयपुर की अध्यक्ष हैं।

डॉ. श्रीमती किरण कुचेरिया

जोधपुर के एक सामान्य मध्यम श्रेणी परिवार में जन्म लेकर अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, (A.I.I.M.S.) नई दिल्ली जैसे अन्तर-राष्ट्रीय ख्याति के चिकित्सा व अनुसंधान संस्थान में अस्थि-विज्ञान के एसोसियेट प्रोफेसर पद को सुशोभित करनेवाली डा. किरण स्व. श्री नथमलजी मेहता व रूपकंवरजी की सुपुत्री हैं। आपका जन्म १२ अप्रैल १९४४ में जोधपुर में हुआ। सन् १९६४ में आप जसवंत कॉलेज जोधपुर से प्राणिशास्त्र में एम.एस. सी. में प्रथम स्थान प्राप्त कर स्वर्णपदक विजेता बनी। उसी वर्ष आपको महारानी कॉलेज जयपुर में व्याख्याता के पद पर ले लिया गया। १९६५ में विवाह हो जाने पर आप अपने पति डॉ. पी. आर. कुचेरिया (लाडनूँ) के साथ आगे अध्ययन के लिए इंग्लैड चली गई जहाँ आपने १९६९ में लंदन विश्वविद्यालय

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

डॉ. श्रीमती किरण कुचेरिया

से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की। किसी विदेशी विश्वविद्यालय से यह उपाधि प्राप्त करनेवाली आप प्रथम राजस्थानी महिला थीं। महाविद्यालय में अध्ययन के छहों वर्ष आपको प्रतिभासम्पन्नता की छात्रवृत्ति मिलती रही और लंदन में शोधकार्य की अवधि में ब्रिटिश एम्पायर केंसर केम्पेन शिक्षावृत्ति मिलती रही। आपको डब्लू. एच. ओ रिसर्च व ट्रेनिंग शिक्षावृत्ति (फैलोशिप) भी प्राप्त हुई थी। आपका शोधकार्य बाल-रोगों से संबंधित था।

भारत लौटने पर आपने एक वर्ष तक कौंसिल ऑफ शाईटिफिक एंड इंडस्ट्रियल रिसर्च ऑफ इंडिया में पूल ऑफिसर का कार्य किया और फिरआपको ए.आई.आई.एम.एस; नई दिल्ली में अस्थि विज्ञान के व्याख्याता के पद पर नियुक्ति मिल गई। आज उसी संस्थान में आप एसोसिएट प्रोफेसर भी हैं और मानवीय कोशिकानुवंशिकी (ह्यूमन साइटोजैनिटिक लैब) प्रयोगशाला की प्रभारी अधिकारी भी हैं। भारत भर में प्रतिवर्ष लगभग ६०० कोशिकानुवंशिकी के मामले आपके पास विश्लेषण के लिए आते हैं जिनके परिणाम अंतर-राष्ट्रीय पत्रिकाओं में उद्धृत किये जाते हैं। डा. किरण के लगभग ६० शोधपरक लेख राष्ट्रीय व अंतर-राष्ट्रीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। सन् १९८२ में इंडियन जेसीज ने TOYP (टैन आउटस्टैडिंग यंग पर्सन्स) के राष्ट्रीय पुरस्कार से भी आपको सम्मानित किया है। अपने संस्थान में आपने भारत में प्रथम बार गर्भस्थ भ्रूण के लिंग निर्धारण की प्रविधि पर और अन्य रंज्यधारक नस की खराबियों पर अनुसंधान कार्य किया जिसके परिणाम १९७३ में भारत के सभी महत्त्वपूर्ण पत्रों में प्रकाशित हुए। हाल ही में इस प्रविधि का दुरुपयोग होने लगा और लोग लड़की होने पर भ्रूण की हत्या करवाने लगे तो जाग्रत महिला संगठनों ने इसके विरुद्ध कानून बनाने की माँग की। इस विषय में संगठनों ने और अनेक अंग्रेजी समाचार पत्रों ने भी आपका साक्षात्कार लिया। राष्ट्रीय शिक्षा एवं वैज्ञानिक अनुसंधान व प्रशिक्षण परिषद (NCERT) नई दिल्ली ने भी आपके लगातार शिक्षा पर भाषण कराये। उल्लेखनीय है कि आपके पति डा. पृथ्वीराज कुचेरिया, नई दिल्ली में फ्रैंड्स मैडि- कल सेंटर के नाम से अपना निजी चिकित्सालय चला रहे हैं। पति-पत्नी का ऐसा मणि-कंचन संयोग सौभाग्य से ही मिलता है। वास्तव में डा. किरण हमारे समाज के लिए गौरव करने योग्य महिला हैं।

डॉ. मिस कांति जैन

टोरंटो विश्वविद्यालय कनाडा (अमेरिका) से वनस्पति शास्त्र और कोशिका जीवन विज्ञान विषयों में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त करके वहीं ऑन्टारियो केंसर इंस्टीट्यूट में अग्नयाशयी केंसर (पेनक्रियेटिक केंसर) और मधुमेह जैसे भयंकर रोगों पर रिसर्च साइंटिस्ट के रूप में शोध

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

डॉ. मिस कांति जैन

कार्य करनेवाली सुश्री कांति जैन का जन्म फलौदी में दिनांक १० जून १९३९ को हुआ। आपके पिता श्री चम्पालालजी व माता श्रीमती केसरबाई जैन हैं।

आपने सन् १९६१ में राजस्थान विश्वविद्यालय से वनस्पति शास्त्र में एम.एस.सी. की उपाधि प्राप्त की और फिर ६ वर्ष तक महारानी सुदर्शना कॉलेज बीकानेर तथा महाराजा व महारानी कॉलेज जयपुर में व्याख्याता का कार्य किया। तत्पश्चात् १४ वर्ष तक कनाडा में रहकर शोध कार्य करती रहीं तथा सन् १९७३ में टोरंटो विश्व-विद्यालय से पीएच.डी. की उपाधि ग्रहण की। इस अवधि में आप उसी विश्वविद्यालय में अध्यापन का कार्य भी करती रहीं। आपके शोध का विषय था मलानुरागी कुकुरमुत्ते का जीवरसायनिक व शरीरवैज्ञानिक अध्ययन (बायोकेमिकल एंड फीजियोलॉजिकल स्टडीज ऑफ कोप्रोफिलस फंगी)। सन् १९७३ से १९७९ तक आपने मधुमेह नाशक द्वीपिकाओं संबंधी शोधकार्य किया। भारत व कनाडा में अनुसंधान कार्य करते समय आपको अनेक प्रकार की शिक्षा-वृत्तियाँ भी प्राप्त हुई जिनमें मुख्य हैं— भारत सरकार द्वारा अनुसंधान प्रशिक्षण छात्र-वृत्ति, टोरंटो विश्वविद्यालय की शिक्षावृत्ति व एन.आर.सी. और एम. आर. सी. की शोध शिक्षा वृत्तियाँ। आपके लगभग ४० शोधपरक लेख भारत, अमेरिका व यूरोप की प्रतिष्ठित शोध-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं।

इतना अध्ययन करने के पश्चात् भी भारत लौटने पर आपने यहाँ की अज्ञानग्रसित देहाती जनता को गंदगी के बीच रहकर बीमारियों से ग्रसित होते देखकर धनोपार्जन की अपेक्षा अपने आपको जनकल्याण में लगाना अधिक आवश्यक समझा और सरकारी नौकरी का मोह त्यागकर आपने अपनी जन्मभूमि फलौदी में अपने ही खर्चे से मानव कल्याण केंन्द्र की स्थापना की। उसके माध्यम से वे स्वास्थ्य संबंधी जनकल्याणकारी सेवाओं में आज भी संलग्न हैं। सर्वप्रथम आपने वहाँ स्वच्छता अभियान चलाया और स्थानीय प्रशासन व जनता को भी उसके प्रति सजग किया। इस समय आप प्रायः वहीं रहती है यद्पि आपका परिवार जोधपुर में बस चुका है। आप एच.वी.एस. (मानव कल्याण सेवा) ट्रस्ट जोधपुर की प्रमुख संचालिका भी है।

डा. किरण हरपावत

बालचिकित्सा विशेषज्ञ डा. किरण हरपावत जोधपुर विश्वविद्यालय में हिंदी विभाग के एसोसियेट प्रोफेसर. डा. नरपतचंद सिंघवी और श्रीमती गुलाब कँवर सिंघवी की सुपुत्री हैं। आप का जन्म जोधपुर में सन् १९४८ में हुआ। सन् १९७० में डा. सम्पूर्णानन्द आयुर्विज्ञान महा-विद्यालय जोधपुर से एम.बी.बी.एस. करने के बाद आपका विवाह उदयपुर के डा. गणेश हरपावत से हो गया जो क्षेरोक्स कॉर्पोरेशन रॉचेस्टर (सं.रा.अमेरिका) में वरिष्ठ वैज्ञानिक हैं। अतः विवाह

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के तुरन्त बाद आप भी अमेरिका चली गई और वहाँ आपने बाल चिकित्सा विशेषज्ञ की उपाधि प्राप्त की। अभी आप टैक्सास राज्य के लेविसविले में स्थित डाक्टर्स क्लीनिक में अग्रणी बाल-चिकित्सक हैं। आप पूर्णतः शाकाहारी हैं और स्वभाव की सौम्य एवम् मधुर हैं। अपने ससुराल के मूल स्थान नाई (उदयपुर) ग्राम में हरपावत दम्पति ने एक लाख से अधिक की धन राशि दान करके एक स्कूल भवन और कम्युनिटी सेंटर का निर्माण कराया है।

श्रीमती कमला सिंघवी

श्रीमती कमला सिंघवी

नारी जीवन के विभिन्न पहलुओं पर अधिकार पूर्वक लिखनेवाली और संतुलित विचार देनेवाली कृतिकार श्रीमती कमला सिंघवी का जन्म भागलपुर (बिहार) में ५ सितंबर १९३५ को श्री सूरजमलजी व श्रीमती हीरा बैदके एक प्रवासी राजस्थानी जैन परिवार में हुआ। आपकी शिक्षा कलकत्ते में हुई और विवाहोपरांत आप अपने पति ख्यातनामा विधिवेत्ता एवं सम्प्रति इंगलैडं में भारत के राजदूत डा. लक्ष्मीमल्लजी सिंघवी के साथ कुछ वर्ष जोधपुर में रहकर दिल्ली चली गई। वहीं जाकर आपने लिखना आरंभ किया और आपकी रचनाएँ देश की सभी प्रतिष्ठित पत्रिकाओं व साप्ताहिकों में छपने लगीं। अपने पति एवं उनके साहित्यिक मित्रों के प्रोत्साहन से आपने अपनी प्रथम कृति 'नारी भीतर और बाहर' सन् १९७२ में दिल्ली से प्रकाशित कराई जिसका हिन्दी जगत में भव्य स्वागत हुआ। यह पुस्तक मध्यम-वर्ग की हर गृहिणी के पढ़ने योग्य हैं। इसके बाद अब तक आपकी चार पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं:—

दाम्पत्य के दायरे, मेहंदी लगे हैं मेरे हाथ, संबंधों के घेरे. कुछ शब्द और अर्थ।

आपकी रचनाओं की सराहना हिन्दी के अनेक प्रतिष्ठित विद्वानों ने मुक्त कंठ से की है। आपकी एक कहानी 'वह कुछ भी तो नहीं कह गया' को प्रथम महिला-मंगल पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। आपके कुछ निबंध विश्वविद्यालयों की पाठ्यपुस्तकों में भी संकलित हुए हैं। हिन्दी की प्रसिद्ध लेखिका शिवानी ने आपकी रचनाओं को भारतीयता से ओतप्रोत बताकर उनकी सराहना की है।

श्रीमती विमला मेहता

श्रीमती विमला मेहता का जन्म जोधपुर के श्री हरखराजजी लोढ़ा के घर हुआ। जोधपुर के तत्कालीन राजमहल कॉलेज से बी.ए. की उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् विवाह हो जाने से आप अपने पति श्री वीरेन्द्रराजजी मेहता के साथ दिल्ली में रहने लगी, जहाँ वे रेल्वे के

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

उच्चाधिकारी थे। इसी बीच आपने साहित्य भूषण की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली और अपने पति एवम् उनके साहित्यसेवी मित्रों की प्रेरणा से लेखनकार्य आरम्भ किया। वैसे विमलाजी की लेखन में रुचि विद्यार्थी जीवन से ही थी और आप अपनी कॉलेज की पत्रिका 'शंखनाद' की सहसम्पादिका थी।हिंदुस्तान साप्ताहिक में 'पुरुषों के क्षेत्र में महिलाएँ' शीर्षक से आपकी एक लेखमाला प्रकाशित हुई जिसे पाठकों ने बहुत पसंद किया। उसी से प्रेरित होकर आपने अंतर-राष्ट्रीय महिला वर्ष के अवसर पर पुरुषों के एकाधिकार समझे जानेवाले क्षेत्रों में कीर्तिमान स्थापित करनेवाली विश्वभर की ३२ महिलाओं का जीवन परिचय प्रस्तुत करनेवाले "आज की महिलाएं" ग्रंथ का प्रणयन किया। इससे पूर्व आपकी एक कृति 'भारत की प्रसिद्ध महिलाएं' प्रकाशित हो चुकी थी।

दिल्ली में रहते समय नारी जीवन व पारिवारिक समस्याओं पर आपके लेख, सभी प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में छपते रहे। बाल साहित्य के क्षेत्र में भी आपने सुंदर कहानियाँ लिखी हैं जो 'रोचक कहानियाँ' शीर्षक पुस्तक में प्रकाशित हुई हैं। साहित्य सृजन के अतिरिक्त विमलाजी की रुचि के विषय हैं बागवानी व गृहसज्जा। आपके पति श्री वी. आर. मेहता केन्द्रीय सचिवालय में जहाजरानी विभाग में उच्चाधिकारी बन गये और फिर वे एशियन डेवेलपमेंट बैन्क के अधिकारी बनेतो आप उनके साथ मनीला चली गईं।

श्रीमती शशि मेहता

अर्थशास्त्र और सांख्यिकी जैसे रूखे विषय में सन् १९७६ में बंबई विश्वविद्यालय से प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त कर स्नातक उपाधि धारण करनेवाली श्रीमती शशि मेहता बंबई के सहायक आयकर आयुक्त श्री गोवर्धन मलजी सिंघवी की सुपुत्री हैं। आपका जन्म जोधपुर में दिनांक ८ जुलाई १९५५ को हुआ। आप अपने स्कूली जीवन से ही प्रतिभाशाली छात्रा रहीं और जितने वर्ष कॉलेज में अध्ययन किया, आपको एकाधिक प्रतिभा सम्पन्नता की छात्रवृत्तियाँ मिलती रही जैसे रमाबाई रानाडे स्कॉलरशिप, गवर्नमेंट मेरिट स्कॉलरशिप व एल्फिस्टन कॉलेज ओपन मैरिट स्कॉलरशिप। बी.ए. में प्रथम आनेपर आपको राष्ट्रीय छात्रवत्ति और पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। आप अच्छी वक्ता रहीं और अपने विद्यार्थी जीवन में वाद-विवाद के अनेक पुरस्कार जीत चुकी हैं। आपने सन् ७५ में अंतर-महाविद्यालय लोकनृत्य में भी भाग लिया और पुरस्कृत हुई।

विवाहोपरांत आप अपने पति श्री नरेश मेहता के साथ दिल्ली आकर रहने लगी और यहाँ अंग्रेजी के प्रसिद्ध राष्ट्रीय दैनिक 'इंडियन एक्सप्रेस' में संवाददाता का कार्य करने लगी। इसके साथ-साथ आप राष्ट्र व समाज की ज्वलंत समस्याओं पर निरंतर लिखती रहती है। आकाशवाणी के स्पॉट लाइट कार्यक्रम में आप अनेक बार आधुनिक जीवन की विभिन्न समस्याओं जैसे— महिलाओं पर अत्याचार, परिवार नियोजन, व्यापारी मेले और मिलावटी माल इत्यादि पर पत्र पाठ कर चुकी है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सुश्री प्रभा शाह

सुश्री प्रभा शाह

श्रवणशक्ति से सर्वथा विहीन होनेपर भी भारत में ही नहीं, विदेशों में भी अपनी चित्रकला की छाप छोड़नेवाली सुश्री प्रभा शाह का जन्म सन् १९४७ में जोधपुर में हुआ। आपका मूल निवास स्थान सिरोही है जहाँ से आपके पितामह जोधपुर आकर बसे। आपके पिता श्री लखपतराज शाह भी कुछ वर्षों तक जोधपुर के एस.एम.के. कॉलेज में व्याख्याता व उदयपुर विश्वविद्यालय के कुल सचिव रहे। आजकल आप दिल्ली में केंद्रीय सरकार में प्रौढ़ शिक्षा के उच्चाधिकारी हैं। प्रभाजी ने अपनी शिक्षा नई दिल्ली के लेडी नॉइस मूक, बधिर और अंध विद्यालय में ग्रहण की और चित्रकला का प्रशिक्षण कानोड़िया महाविद्यालय जयपुर और उदयपुर में लिया। तदनन्तर, त्रिवेणी कला संगम दिल्ली में कार्य करते हुए आपकी कला में निखार आया। आप भारत सरकार के सांस्कृतिक विभाग की सदस्य (फैलो) और राजस्थान ललितकला अकादमी की कार्यकारिणी समिति की सदस्य हैं। अभी आप दिल्ली में प्रभा इंस्टीट्यूट के नाम से विकलांगों के लिए कला, कौशल और सांस्कृतिक प्रशिक्षण का केन्द्र चला रही हैं।

प्रभाजी के चित्रों की एकल प्रदर्शनियाँ दिल्ली में ५ बार और जयपुर, बंबई, मद्रास, चंडीगढ़ और टोरंटो (कनाड़ा) में एक-एक बार लग चुकी हैं और इन्हीं शहरों में आयोजित अन्य कला-प्रदर्शनों में भी अनेक बार भाग ले चुकी हैं। एक बार लंदन में आयोजित विकलांगों की अंतर-राष्ट्रीय कला प्रदर्शनी में भी आप भाग ले चुकी हैं। आप नई दिल्ली, बंबई, मद्रास और जयपुर के प्रतिष्ठित कला-संस्थानों द्वारा आयोजित प्रदर्शनियों में भी सक्रिय सहयोग देती रही हैं।

आप अपनी कलाकृतियों के लिए अनेक संस्थानों द्वारा पुरस्कृत एवं सम्मानित की जा चुकी हैं जिनमें मुख्य हैं:—

१. बधिरों की कॉमन वैल्थ सोसाइटी, लंदन २. तूलिका कलाकार परिषद्, उदयपुर ३. अखिल भारतीय ललित कला प्रतियोगिता एक ध्वनि, नई दिल्ली ४. राजस्थान ललित कला अकादमी पुरस्कार १९७५ ५. अंतर-राष्ट्रीय महिला वर्ष पुरस्कार, बंबई १९७५ ६. महाकोशल कला परिषद, रायपुर ७. राजस्थान सरकार द्वारा १९८१ में स्वतंत्रता दिवस पुरस्कार ८. फैडरेशन ऑफ यूनेस्को ऐसोसियेशन, नई दिल्ली १९८१, राजस्थान संस्था संघ नई दिल्ली १९८१, राजस्थान संस्था संघ नई दिल्ली द्वारा सम्मान १९८२ इत्यादि। इसके अतिरिक्त भारत के अनेक संस्थानों में आपके चित्र संग्रहित है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रभाजी का मनोबल, अध्यवसाय, उत्साह और आशावाद वास्तव में सराहनीय और अनुकरणीय है।

श्रीमती ममता डाकलिया

बचपन से ही अपने विद्यालय के उत्सवों में अपने स्वरमाधुर्य और भावपूर्ण गायकी के लिए लोकप्रियता प्राप्त करनेवाली ममताजी जोधपुर के श्री रतनचंदजी कर्णावट व श्रीमती श्यामलताजी की सुपुत्री हैं। ममताजी को संगीत में अभिरुचि अपनी पारिवारिक परम्परा से विरासत में मिली। आपके पितामह स्व. हंसराज जी कर्णावट समाज सुधार के गीतों के रचयिता व लोकप्रिय गायक थे आपके माता-पिता व चाचाजी भी संगीत व अभिनय में लोकप्रियता प्राप्त कर चुके हैं। आपका जन्म जोधपुर में सन् १९५६ में हुआ वहीं आपने संगीत विषय लेकर जोधपुर विश्वविद्यालय से बी.ए. की.उपाधि ग्रहण की।

विवाहोपरांत आप अपने पति श्री पारसमलजी डाकलिया, सी.ए. के साथ कुछ वर्ष दिल्ली में रहीं और सन् १९८३ में उनके बंबई आ जानेपर बंबई रहने लगी। विवाह के बाद भी आपकी संगीत-साधना चलती रही और आपने शास्त्रीय संगीत में गांधर्व महाविद्यालय, बंबई से विशारद व अलंकार की उपाधि प्राप्त की।

ममताजी ने ८ वर्ष की आयु में कलकत्ता दूरदर्शन पर एक राष्ट्रीय गीत पेश किया था और १४ वर्ष की आयु से ही वे आकाशवाणी पर लोकगीत प्रस्तुत करती रही हैं। अध्ययनकाल में आपने मंडल स्तर की अनेक संगीत प्रतियोगिताएँ जीती और कॉलेज में पढ़ते समय संगीत नृत्य व नाट्य प्रतियोगिताओं में भाग लेती रही हैं। आपने सुगम संगीत और राजस्थानी लोकगीत प्रस्तुत करने में विशेष दक्षता प्राप्त की है और सुगम संगीत में जोधपुर विश्वविद्यालय से भी प्रथम पुरस्कार प्राप्त कर चुकी है।

आप आकाशवाणी की राजस्थानी लोकगीतों में उच्च बी श्रेणी की मान्य कलाकार हैं और आपके कुछ गीत दिल्ली टी.वी. द्वारा भी रेकार्ड किये जा चुके हैं जो जयपुर, रायपुर, अजमेर और मुज्जफरपुर टी.वी. केंन्द्रों से प्रसारित हो चुके हैं।

श्रीमती प्रीति लोढ़ा, एम. ए.

जोधपुर में अत्यंत सम्पन्न और प्रतिष्ठित मेहता परिवार में जन्म लेकर भी अपनी पारिवारिक परम्पराओं और सीमाओं के बीच संगीत साधना करके अपनी स्वरलहरी को अखिल भारतीय स्तर के सम्मेलनों तक गुंजानेवाली प्रीतिजी का जन्म जोधपुर में दिनांक ३ मई १९५९ को विज्ञान वेत्ता व साहित्य-संगीत प्रेमी डा. गोपालसिंह मेहता और श्रीमती कमला देवी के घर हुआ। कुछ वर्ष पूर्व ही आपका विवाह श्री महीपालसिंहजी लोढ़ा से हुआ। उससे आपकी संगीत साधना में कोई बाधा नहीं आई है। आपने अपने संगीत-गुरु पंडित बी.एन. क्षीरसागर ग्वालियर वालोंसे संगीत का प्रशिक्षण प्राप्त किया और राजस्थान विश्वविद्यालय से संगीत में प्रथम श्रेणी में एम.ए. की उपाधि ग्रहण की। साथ ही गांधर्व महाविद्यालय मंडल, बंबई की विशारद परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपने राजस्थान के जोधपुर, उदयपुर एवं अजमेर के अनेक संगीत प्रतिष्ठानों द्वारा आयोजित समारोहों में अपना कार्यक्रम दिया और एक बार श्री रंगम मंदिर त्रिचुरापल्ली में आयोजित अखिल भारतीय रसिकवर संगीत सम्मेलन में भी भाग लिया। आपने विशेष रूप से ख्याल, ध्रुपद, धमार, तराना एवं भजनों की गायकी में दक्षता प्राप्त की है।

श्रीमती प्रसन्न कुँवर भंडारी

यश लिप्सा से कोसों दूर, समाज कल्याण एवं सेवा को अपने जीवन का ध्येय बना लेने वाली मौन साधिका श्रीमती प्रसन्न कुँवर से ओसवाल जाति गौरवान्वित हुई है। राजस्थान के यशस्वी स्वतंत्रता सेनानी श्री केसरीसिंह बारहठ के कोटा स्थित जर्जर आवास को जोधपुर की इस प्रवासी महिला ने पुण्य स्थली बना दिया है। सन् १९५८ में समाज सेवा की उत्कट भावना से प्रेरित श्रीमती प्रसन्न कुँवर ने यहाँ अनाथ बच्चों की एक पाठशाला खोलकर अपनी रचनात्मक प्रवृत्तियों का श्री गणेश किया। जल्द ही इस हेतु उन्होंने एक नगर विकास समिति का गठन कर उसे पंजीकृत करा लिया। सेवाभावी नागरिकों एवं सरकारी समाज कल्याण विभाग ने भी सहयोग किया। परिणामतः आज यह संस्थान वट वृक्ष की तरह फैलकर विभिन्न क्षेत्रों में जनहितकारी प्रवृत्तियों का संचालन कर रहा है। पिछड़े इलाके में चल रही बालवाड़ी से ८० एवं प्राथमिक शाला से १२५ बालक-बालिकाऐं लाभान्वित होती है। सन् १९७८ से संचालित निराश्रित बाल गृह में ३१ बालक रह रहे हैं जो विभिन्न राजकीय विद्यालयों में अध्ययन रत हैं। इन्हें यहाँ वोकेशनल ट्रेनिंग भी दी जाती है एवं हीन भावना से मुक्त स्वस्थ मन वाले चरित्रवान नागरिक बनाने का प्रयत्न किया जाता है। संस्थान द्वारा संचालित संक्षिप्त पाठ्यक्रम में १८ एवं अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र में २७ बालिकाऐं शिक्षा लाभ ले रही है। परित्यक्त शिशुओं का प्रतिपालन केन्द्र संस्थान का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। अनाथ बच्चों की इस सराहनीय सेवा के लिए जिला प्रशासन ने आपको सम्मानित भी किया है। पिछड़े क्षेत्र की महिलाओं को विभिन्न प्रकार के क्राफ्ट सिखाए जाते हैं एवं उन्हें सामाजिक बुराईयों के प्रति सचेत किया जाता है। संस्थान गर्भवती महिलाओं को आश्रय देने का शुभारम्भ भी कर चुका है। कामकाजी महिलाओं के शिशुओं की दिन भर देखभाल के लिए खोले गए पालना गृह में २५ शिशुओं की देख रेख के लिए मुफ्त व्यवस्था है। संस्था द्वारा संचालित औषधालय में १३०० मरीज लाभान्वित हो चुके हैं। अपंग विधवा एवं परित्यक्त महिलाओं के लिए समाज कल्याण बोर्ड की सहायता से एक धागा रीलिंग उद्योग खोला गया है जिसमें २५ महिलाऐं लाभान्वित हो रही है। इन सभी कार्यक्रमों को श्रीमती भंडारी जिस समर्पित भाव से संचालित कर रही हैं वह सभी के लिए अनुकरणीय है। उनके इस अभियान में उनके पति श्री महावीरचन्द जी भंडारी एवं अन्य परिवारजनों का सराहनीय सहयोग है।

श्रीमती छगन बहिन

स्वतंत्रता संग्राम के वातावरण में बड़ी होनेवाली स्वभाव से ही निर्भीक और विद्रोहिणी छगन बहिनका जन्म नागपुर में श्री मोतीलालजी एवं श्रीमती चांदबाई बैद के घर सन् १९३०

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

में हुआ। आपके चाचाजी गांधीजी के नमक सत्याग्रह में भाग ले चुके थे। अतः अन्याय प्रतिरोध की क्षमता छगन बहन ने पारिवारिक परिवेश से ही प्राप्त कर ली थी। आप केवल आठवीं कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त कर पाई। उस कच्ची उम्र में भी स्कूल में जब अध्यापकों ने परीक्षा फल अच्छा रखने के लिए पर्चे आउट करा दिये तो आपने उनके विरुद्ध विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया और अध्यापकों के हड़ताल कर देने पर आपने होशियार छात्राओं की सहायता से स्कूल चलाकर दिखा दी। अंत में प्रबंधकों को सभी अध्यापकों की छुट्टी करके नया स्टाफ रखने पर बाध्य होना पड़ा। आपने नाटक व संगीत के कार्यक्रम आयोजित करके अर्जित राशि से निर्धन छात्राओं की सहायता करके उन्हें निर्भीकता पूर्वक आगे बढ़ने की प्रेरणा दी।

१६ वर्ष की आयु में आपका विवाह खींचन के श्री त्रिलोकचंदजी गोलेछा के साथ हो गया जिनका कलकत्ते में व्यवसाय था। अतः आप कलकत्ते आ गई। वहाँ उन दिनों अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन के तत्त्वाधान में सर्वश्री भंवरमलजी सिंघी, सिद्धराजजी ढड्ढा, विजयसिंहजी नाहर गणेशमलजी बैद, श्रीचंदजी मेहता आदि युवजन सामाजिक कुरीतियों के निवारण और जनचेतना जगानें का कार्य बड़े उत्साह से कर रहे थे। आप भी उन से जुड़ी और एक समारोह में सबके साथ आपने भी केसरिया बाना पहनकर दहेज व पर्दा प्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियों को तोड़ने व जातपाँत के भेदभाव से ऊपर उठने का संकल्प लिया।

सन् ५६ में आप खींचन आ गई और वहाँ हरिजनों को सवर्णों के कुए से जल दिलाने का कार्य हाथ में लिया। सन् ५७ में आप विनोबाजी की भूदान पदयात्रा में भी सम्मिलित हुई एवं रचनात्मक कार्यों में सक्रिय भाग लेने लगी। फलस्वरूप जब राजस्थान में पंचायती राज्य का प्रवर्तन हुआ तो आप प्रथम बार खींचन ग्राम की सरपंच चुनी गई और ग्रामीण जनता की सेवा में लग गईं।

सन् ६२ में आपका परिवार जोधपुर आ गया और पति-पत्नि दोनों रचनात्मक कार्यक्रमों में संलग्न हो गये। यहाँ आनेपर छगनबहिन ने स्काउट गाइड आंदोलन में सहयोग देना आरंभ किया और जोधपुर मंडल की उपाध्यक्ष बनी। सन् १९७८ में जब गोकुल भाई भट्ट के नेतृत्व में शराब बंदी आंदोलन छिड़ा तो उस में आप अग्रणी रहीं। सन् १९८० में जब दुबारा सत्याग्रह छिड़ा तो आपने उसका नेतृत्व सम्भाला। इस आंदोलन के फलस्वरूप जोधपुर पाली व बीकानेर जिले शराबमुक्त घोषित किये गये।

इस आंदोलनी माहौल के बीच भी आपने वर्षों पूर्व छोड़ा हुआ अपना अध्ययन पुनः आरम्भ किया और १९७३ में अपनी पुत्री के साथ आपने भी जोधपुर विश्वविद्यालय से हिंदी में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। हालही में आपने अपने निवासस्थान पर ही मीरा संस्थान के अंतर्गत अंगनवाड़ी कार्यकर्ता प्रशिक्षण केन्द्र कायम किया है जिसमें विभिन्न गांवों से आई ५२ महिलाएँ प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है। आपका घर ही उनका छात्रावास है और आप ही उनकी माँ हैं जिन्हें वे क्षणभर भी अपने से अलग नहीं करना चाहतीं। आप उनमें चेतना जगाने का

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

एवं मनोवैज्ञानिक तरीके से अंध विश्वासों और रूढ़ियों से मुक्त करके सुसंस्कृत बनाने का महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है।

छगन बहिन एक विद्रोहिणी नारी होनेपर भी नारीसुलभ गुणों से विभूषित हैं और एक कुशल गृहिणी का दायित्व भी भली-भाँति निभाती है। आप की आत्मीयता, सादगी व आतिथ्य किसी को भी प्रभावित किये बिना नहीं रहता। आप एक कुशल गायिका और प्रभावशाली वक्ता हैं। आप के भाषण में भावुकता उद्बोधन और साहित्यकता का सुखद और प्रेरणाप्रद समन्वय रहता है। वास्तव में छगन बहिन हमारे समाज का गौरव हैं।

श्रीमती सुशीला बोहरा

सुशीलाजी हमारे समाज की उन गिनी चुनी सुशिक्षित महिलाओं में से हैं जो अर्थोपार्जन द्वारा स्वयं को आत्म-निर्भर बनाने के साथ-साथ अपना अतिरिक्त समय पीड़ित मानवता की सेवा में समर्पित कर रही हैं। आपका जन्म जोधपुरमें श्री मूलराजजी धारीवाल के यहाँ १० अप्रेल १९४० को हुआ। आपका विवाह देवरिया (जैतारण) निवासी स्व. श्री पारसमलजी बोहरा से हुआ परन्तु युवावस्था में ही एक पुत्री के पिता बनकर वे भगवान को प्यारे हो गये। तब सुशीलाजी ने आत्मनिर्भर बनकर स्वयं को आध्यात्म साधना के साथ-साथ लोक-सेवा में लगाने का निश्चय किया। आपने जोधपुर विश्वविद्यालय से एम.ए. (राजनीतिशास्त्र) किया और फिर बी.एड. करके १९६७ में महेश शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय जोधपुर में व्याख्याता बन गई और आज भी वहीं कार्यरत हैं। यहाँ आप अपने संस्थान से निकलनेवाली शैक्षिक पत्रिका 'एज्यूकेशनल हैराल्ड' की सह-सम्पादिका भी हैं।

आप अपने जीवन का दूसरा लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अनेक आध्यात्मिक तथा मानव-कल्याणकारी सेवा संस्थानों से जुड़ी। आप नेत्रहीन विकास संस्थान, जोधपुर की अध्यक्षा हैं। साथ ही आप जोधपुर के गांधी शांति प्रतिष्ठान की अध्यक्षा और महावीर इंटरनेशनल, जोधपुर की संयुक्त सचिव भी हैं। आप जोधपुर विश्वविद्यालय की सीनेटर हैं और अखिल भारतीय महावीर जैन श्राविका संघ, मद्रास की अध्यक्षा भी। आप भोपालगढ़ के मरुधर खादी ग्रामोद्योग संस्थान की संयुक्त सचिव हैं। इनके अतिरिक्त आप अनेक संस्थाओं की कार्यसमिति की सदस्या हैं जिनमें मुख्य है- जोधपुर नागरिक एसोसियेशन, जैन विद्वत् परिषद जयपुर, महावीर विकलांग परिषद, सम्यक् ज्ञान प्रचारक मंडल जयपुर, इत्यादि।

डा. सरयू डोसी

भारत की सांस्कृतिक विरासत को अपनी अथक शोध एवं समीक्षाओं से उजागर करने वाली अपरिमित सौन्दर्य की धनी एक ओर महिला रत्न हैं जिन्हें पाकर ओसवाल समाज गौरवान्वित हुआ है। वे हैं भारत के प्रतिष्ठित उद्योगपति श्रेष्ठि वालचन्द हीराचन्द डोसी के खानदान की पुत्रवधू श्रीमती सरयू डोसी। प्रसिद्ध समीक्षक श्री खुशवंतसिंह ने विवेक, सौन्दर्य एवं सम्पत्ति के इस ऐश्वर्यशाली संगम को एक अनुपम संयोग माना है। संवत् २०१० में बम्बई यूनिवर्सिटी से कला-स्नातक होकर सरयूजी ने बम्बई के जे. जे. स्कूल आफ आर्ट में चित्रकला एवं रेखांकन

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

डॉ. सरयू डोसी

में विशेष योग्यता हासिल की। 'फिएट' मोटर कार के प्रसिद्ध निर्माता वालचन्द हीराचन्द खानदान के कुल दीपक श्री विनोद डोसी से आपका परिणय हुआ। संवत् २०१५ में सरयूजी ने अमरीका की मिचिगन यूनिवर्सिटी से आर्ट हिस्ट्री में स्नातकीय परीक्षा उत्तीर्ण की एवं तत्काल अपनी अभिनव रुचि के अनुरूप शोध कार्य में संलग्न हो गई। संवत् २०२८ में बम्बई युनिवर्सिटी ने "प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति" पर आपका शोध प्रबंध स्वीकार करते हुए आपको पीएच.डी. की उपाधि से सम्मानित किया। शिकागो युनिवर्सिटी में मुगल कालीन चित्रकला का विशेष अध्ययन कर आपने भारत की सूक्ष्म (miniature) चित्रकला के विविध आयामों एवं इतिहास पर विशेषज्ञता हासिल की। आपकी अनवरत शोध के फलस्वरुप पुरातन जैन मन्दिरों एवं ग्रंथ भंडारों से अनेक विश्व-विश्रुत कलाकृतियों का उद्धार हो सका। इसी साधना की फलश्रुति हैं "मास्टर पीसेज ऑफ जैन पेंटिंग्स" (१९८५) एवं 'ए कलेक्टर्स ड्रीम' (१९८७) जैसे ग्रंथ जो कला जगत की अमूल्य धरोहर हैं।

श्रीमती डोसी विश्व की अनेक युनिवर्सिटियों द्वारा 'विजिटिंग प्रोफेसर' के गरिमा पूर्ण पद पर आमंत्रित होकर प्राचीन भारतीय संस्कृति की यश गाथा विश्व के कोने-कोने में फैला चुकी है। संवत् २०३३ में अमरीका की मिचिगन यूनिवर्सिटी एवं संवत् २०३६ में केलिफोर्निया यूनिवर्सिटी ने आपको सम्मानित किया। यूरोप के अनेक शिक्षण एवं सांस्कृतिक संस्थानों ने वार्ताऐं आयोजित की। भारतीय आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के अतिरिक्त बी.बी.सी. लन्दन द्वारा भी ये वार्ताऐं प्रसारित की गई।

भारतीय सिनेमा के सन्दर्भ में शोध कार्य आपकी अभिनव रुचि का द्वितीय सोपान है। संवत् २०३० में आपने न्यूयार्क युनिवर्सिटी से फिल्म तकनीक एवं निर्माण में विशेषज्ञता हासिल की। भारतीय सिनेमा के सामाजिक एवं सांस्कृतिक अवदान को रेखांकित करने वाले आपके निबंध विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं। छायांकन (फोटोग्राफी) भी आपका प्रिय विषय रहा है। संवत् २०३८ से २०४३ तक आपने कला जगत की अभिनव पत्रिका 'मार्ग' का सफल सम्पादन किया। जब संवत् २०४३ में भारत सरकार द्वारा विश्व को भारत की सांस्कृतिक विरासत से परिचय कराने हेतु 'फेस्टिवल ऑफ इंडिया' का विदेशों में आयोजन किया गया तो आप उसकी मानद सदस्य मनोनीत हुई। इस सन्दर्भ में प्रकाशित "दी इंडियन वूमन" (भारतीय नारी) ग्रंथ के लेखन एवं चित्रण का श्रेय आप ही को है।

सुश्री मल्लिका साराभाई

भारतीय संस्कृति के विभिन्न आयामों को विश्व फलक पर सफलता पूर्वक रूपायित करने वाली कला जगत की विश्व विख्यात तारिका है मल्लिका साराभाई। आप विश्व विख्यात

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अणु-वैज्ञानिक डा. विक्रम साराभाई एवं विश्व विख्यात नृत्यांगना मृणालिनी साराभाई की सुपुत्री हैं। कालेजीय शिक्षा के उपरान्त आपने मेनेजमेंट कोर्स में डाक्टरेट हासिल की ताकि पैत्रिक साराभाई उद्योग साम्राज्य को दिशा दे सके। अभिनय का शौक आपको फिल्मों में भी ले गया। किन्तु न तो उद्योग की लिप्सा ही उन्हें पकड़े रख सकी, न बम्बई का फिल्मी माहौल ही उन्हें रास आया। मल्लिका जी की कलात्मक रुचि और रचना धर्मिता उन्हें नृत्य शास्त्र की ओर खींन ले गई और वे नृत्य की पारम्परिक विधा से जुड़ गई। अपनी कृतियों में उन्होंने कला को उँचाईयाँ देने वाली शैली आविष्कृत एवं विकसित की। नये क्षितिजों की तलाश नये-नये प्रयोगों में अभिव्यक्त होती रही। नारी शक्ति की अभिव्यञ्जना में मल्लिका जी ने पारम्परिक शैली के साथ बैले कोरियाग्राफी, माईम, प्रस्तर भंगिमा, संवाद आदि के सफल मिश्रण से सशक्त प्रभाव उत्पन्न कर दर्शकों को अचम्भित कर दिया। कला समीक्षकों ने उनके प्रदर्शनों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उन्होंने आधुनिक भारत में नारी शोषण एवं नारी पर होने वाले अत्याचार की दैनन्दिन घटनाओं को नृत्य नाट्य द्वारा इतने मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया कि वे विद्रोह की प्रतीक बन गई। 'श्री और शक्ति' श्रृंखला में "केरला-४" (पालघाट में आत्मघात करने वाली चार बहनों की गाथा) में सामाजिक शोषण के खिलाफ स्वर इतना बुलन्द था कि वह दर्शकों को हिला गया। इसी तरह "चिपको-आन्दोलन" से सम्बंधित नाट्य मंचन भी बड़ा प्रभाव शाली रहा। मल्लिकाजी ने पार्श्व संगीत में पाश्चात्य एवं भारतीय संगीत का मिश्रण कर एक अनोखा प्रयोग किया है।

हाल ही प्रसिद्ध फिल्मकार पीटर बुक ने जब 'महाभारत' का मंचन करने व फिल्म बनाने की ठानी तो 'द्रौपदी' के अन्यतम अभिनयार्थ उनकी एक अन्तर्राष्ट्रीय सितारे की तलाश मल्लिका जी पर जांकर खत्म हुई। विदेशों में जहाँ कहीं इस प्रसिद्ध कथा नाट्य का मंचन हुआ, सभी ने उनके अभिनय को सराहा। वैसे भी मल्लिका जी ने द्रौपदी का पात्र स्वयं जिया है। सभी मानवीय संवदनाऐं एवं स्त्रैण अभिषप्तताऐं अभिनय के द्वारा जीवंत कर देना उनकी विशेषता थी। रातों रात मल्लिका जी अन्तर्राष्ट्रीय मंच के अभिनव सितारे के रूप में स्थापित हो गई। दर्शक इस साहसी अभिनेत्री का स्वाभाविक अभिनय देख कर दंग रह गए।

सुश्री रीता नाहटा

आधुनिक युग में नारी स्वातन्त्र्य का उद्घोष सभ्यता के विकास में मील का एक पत्थर है। किसी भी क्षेत्र में पुरुष का एकाधिकार अब समाप्त हो गया है। इसका एक ज्वलंत उदाहरण हैं श्रीमती रीता नाहटा। वे पचीस वर्ष की उम्र में भारत की प्रथम महिला टैक्सी चालक बनी। इस मौलिक एवं साहसिक कदम के लिए उनका संकल्प सराहनीय है।

श्रीमती रीता जोधपुर के भूतपूर्व सांसद श्री अमृत नाहटा की सुपुत्री है। उनकी फिल्म "किस्सा कुर्सी का" बहुत चर्चित हुई थी। रीता जी को कर्मठ एवं संघर्षशील व्यक्तित्व विरासत में मिला है। वे 'किस्सा कुर्सी का' के निर्माण में भी सहयोगी रही। दिल्ली दूरदर्शन के युवा-मंच

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

प्रोग्राम की वे काम्पेयर भी रह चुकी है। वे कुछ दिनों तक एक पत्रिका का सम्पादन, एक प्राईवेट कम्पनी के लिए प्रचार कार्य एवं फ्रीलांस पत्रकारिता भी करती रही हैं। अपने आपको आत्म निर्भर बनाने के लिए अन्ततः उन्होंने 'टेक्सी' का माध्यम चुना। लीक से हटकर कुछ भी करने से लोग बातें तो बनाते ही हैं परन्तु बिना परवाह किए उन्होंने इस कठिन कार्य को सफलतापूर्वक अंजाम दिया है। दिन में बारह घंटें टैक्सी चलाने के अलावा उन्होंने अपने चाचाजी की ट्रांसपोर्ट कम्पनी के मैनेजर की जिम्मेवारी भी संभाल रखी है। उनके मातहत पाँच टैक्सियाँ हैं जिन्हें दिन भर का काम समझा कर वे स्वयं अपनी टैक्सी लेकर निकल पड़ती हैं। आत्म विश्वास से भरी रीताजी को कभी कोई परेशानी नहीं उठानी पड़ी।

श्रीमती सुशीला सिंघी

श्रीमती सुशीला सिंघी

आधुनिक युग में सामाजिक क्रांति की मशाल थाम कर सामाजिक विकास के लिए सतत संघर्ष करने वाली ओसवाल महिलाओं में सुशीलाजी ने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की है। एक सामान्य परिवार में (पिता-श्री अशर्फीलाल जैन) पली पोसी चवदह वर्षीय कन्या के अन्तर में क्रान्ति की इस छुपीं चिंगारी को महात्मा गांधी ने पहचाना एवं उनकी प्रेरणा पाकर यह बालिका सदैव के लिए सामाजिक उन्नयन के लिए समर्पित हो गई। कैशौर्य आते आते बाल विधवा हो जाने की नियति को निज के पुरुषार्थ एवं सामाजिक क्रांति के सूत्रधार श्री भंवरमल जी सिंघी के संसर्ग ने पराजित कर दिया। सुशीला जी ने सन् १९४६ नें उनकी सहधर्मिणी बन कर सामाजिक चेतना के नये युग का सूत्रपात किया।

सन् १९५२ में पर्दा एवं दहेज विरोधी अभियानों में वे सदा अग्रणी रही। मारवाड़ी सम्मेलन के मंच से सामाजिक सुधारों के लिए सदैव संघर्षरत रहते रहते ही। कलकत्ता यूनि-वर्सिटी से उन्होंने एम. ए. किया। राष्ट्रीय आन्दोलन से जुड़ कर कांग्रेस के अधिवेशनों को सम्बोधित किया। सन् १९५८ से १९७२ तक अखिल भारतवर्षीय परिवार नियोजन कौंसिल एवं कलकत्ता की महिला सेवा समिति की मानद मंत्रिणी रही। उनका कार्यक्षेत्र मारवाड़ी समाज या कलकत्ता तक ही सीमित नहीं रहा, पुरुलिया के आदिवासी अंचलों, कोयलाखानों, चाय बगानों एवं कलकत्ता के स्लम क्षेत्रों के मजदूर पारिवारों के शैक्षणिक एवं सामाजिक विकास के लिए सुशीला जी सर्वदा सेवारत रही। सन् १९६८ में उन्होंने 'परिवारिकी' की स्थापना की जहाँ २ से १६ वर्ष की उम्र के दरिद्र परिवारों के सैंकड़ों बच्चों के समुचित विकास की अभुतपूर्व व्यवस्था है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पश्चिम बंगाल की सरकार ने उन्हें जस्टिस ऑफ पीस (१९६३-७३) मनोनीत कर सम्मानित किया। सन् १९८५ में कलकत्ता के 'लेडीज स्टडी ग्रुप' द्वारा वे सर्वप्रमुख सामाजिक कार्यकत्री एवं सन् १९८७ में बम्बई के 'राजस्थान वेलफेयर एसोशियेसन' द्वारा 'सर्व प्रमुख महिला कार्यकत्री' चुनी गई। सम्प्रति वे महात्मा गांधी द्वारा स्थापित 'कस्तूरबा गांधी स्मारक निधि' की ट्रस्टी हैं। समाज सेवा के अतिरिक्त अनेक शैक्षणिक एवं कला संस्थानों को उनका निदर्शन उपलब्ध है। अनामिका, संगीत कला मन्दिर, अनामिका कला संगम, शिक्षायतन, यूनिवर्सिटी महिला एसोशियेसन, महिला समन्वय समिति, गांधी स्मारक निधि, मारवाड़ी बालिका विद्यालय, आदि अनेक संस्थाऐं सुशीला जी की सेवाओं से लाभान्वित हुई है। ओसवाल समाज इस नारी रत्न से सदैव गौरवान्वित रहेगा।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

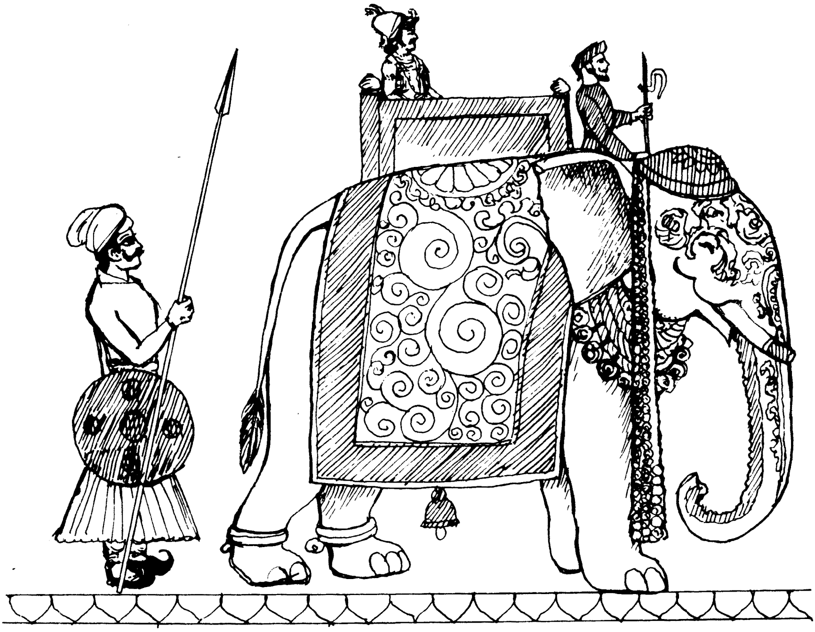

अध्याय

द्वि-बिंश

ओसवाल नर पुंगव

स्वतंत्रता सेनानी

शौर्य एवं ईमानदारी सर्वदा ही ओसवालों के प्रतीक चिन्ह रहे। इसीसे उनकी सार्वभौम साख बनी एवं इसी के कारण वे हमेशा राज्याधिपतियों द्वारा समादृत हुए। भारत के इतिहास में एक समय ऐसा आया जब शासकीय अन्याय के खिलाफ विद्रोह का बिगुल बजा। जितने भी आक्रान्ता बाहर से इस देवभूमि के ऐश्वर्य से खिंचे आए वे या तो लूट पाट कर मुँह की खा कर लौट गए या फिर इसकी संस्कृति में ही जज्ब होकर रह गए। किन्तु अंग्रेज इतने चतुर एवं वैज्ञानिक संसाधनों से लैस थे कि वे लगातार करीब दो सौ वर्षों तक यहाँ राज कर सकें। उन्होंने भारतीय संस्कृति को ही मटियामेट करने की कोशिश की। उनका सामना करना किसी एक शासक के बूते के बाहर था। उनके खिलाफ असन्तोष तो सदा ही व्याप्त रहा परन्तु विद्रोह की प्रथम चिंगारी सुलगी सन् १८५७ में। यह विद्रोह मूलतः फौज तक सीमित रहा अतः बाकी जनता इससे सम्बद्ध नहीं हो सकी। हाँलाकि ओसवाल नर पुंगव श्री अमरचन्द बांठिया का तांत्या टोपे और झांसी की रानी लक्ष्मीबाई की अंग्रेजों से लड़ती सशस्त्र सेनाओं को विपुल आर्थिक सहयोग अपनी सानी नहीं रखता। इसी सहयोग के कारण अंग्रेजों ने उन्हें फाँसी पर लटका दिया। उनका बलिदान जातीय गौरव की एक मिसाल है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

अंग्रेजी साम्राज्य के खिलाफ देश व्यापी जन जागरण का प्रारम्भ हुआ बीसवीं शदी के प्रारम्भ में जब महात्मा गाँधी ने कांग्रेस की डोर संभाली एवं अहिंसक क्रांति का बिगुल फूँका। उनके असहयोग एवं सत्याग्रह के नारों ने समस्त देश वासियों को आन्दोलित किया। ओसवालों का क्षात्र तेज इस धर्म युद्ध में भी चमका और खूब चमका परन्तु उसे कभी रेखांकित नहीं किया गया। गांधी जी की ललकार पर शत शत ओसवाल युवकों एवं नारियों ने जेलें भरी, यातनाऐं सही। अनेक ओसवाल वीर कांग्रेस के शीर्ष नेतृ वर्ग से सम्बद्ध रहे। राष्ट्रीय जागरण एवं व्यक्तिगत बलिदान में उनका अवदान कुछ कम न था। देश के हर कोने में फैले इन ओसवाल नर पुंगवों के सम्पूर्ण विवरण संग्रहित करना अपने आप में एक महाभारत जैसा है। गिने चुने शीर्ष नेताओं के संक्षिप्त जीवन प्रसंग देने के अलावा कुछेक स्वतंत्रता सेनानियों का स्मरण मात्र कर ही मैं अपने को धन्य मानता हूँ।

सेठ अचलसिंह

ओसवाल समाज के २० शदी के कर्णधारों में आगरा के बोहरा गोत्रीय सेठ अचलसिंह का नाम सर्वोपरि है। उनका जन्म वि.सं. १९५२ में एक समृद्ध एवं धर्म प्रेमी परिवार में हुआ। आगरा एवं कानपुर में शिक्षा प्राप्त की। ३५ वर्ष के युवा अचलसिंह राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन को समर्पित हो गए। अनेकों बार जेल गए। नमक सत्याग्रह में १८ महीने, व्यक्तिगत सत्याग्रह में १२ महीने एवं सन् ४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में ३० महीने जेल भुगती। सेठजी ने सार्वजनिक सेवा कार्य को जीवन ध्येय बना लिया वे आगरा नगरपालिका के उपसभापति, एवं नगर कांग्रेस व कांग्रेस के सन् ३० से ४८ तक अध्यक्ष रहे। उत्तर प्रदेश की धारा सभा के वे सन् १९२०, १९३६ एवं १९४६ में सदस्य चुने गए। सन् १९५२ में वे भारत की लोक सभा के सदस्य बने।

आपने ग्रामों के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सन् १९२८ में आपने अचल ग्राम सेवा सघं की स्थापना की जिसने अपनी शैक्षणिक एवं स्वास्थ्य सेवाओं से गावों में क्रान्ति कर दी। सन् १९३५ में उन्होंने एक लाख रूपए का अचल ट्रस्ट घोषित किया। जिससे पुस्तकालय एवं वाचनालय आदि अनेक प्रवृतियों का संचालन होता था। उनकी पत्नि भगवती देवी ने अपनी समस्त चल अचल सम्पत्ति (ढ़ाई लाख) से एक शैक्षणिक सोसाईटी का निर्माण किया जो एक कालेज, स्कूल एवं बाल मन्दिर का संचालन करती है।

आपने आगरा शहर की अनेक विकास मूलक प्रवृतियों का सफल संचालन किया। सन् १९३६ में अजमेर में हुए द्वितीय ओसवाल महा सम्मेलन के आप सभापति चुने गए। सम्मेलन के मुख पत्र ओसवाल सुधारक का प्रकाशन आप ही की देख रेख में होता था। भगवान महावीर के २५०० वें परिनिर्वाण महोत्सव समिति के आप सदस्य थे। अखिल भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस कमेटी के आप वर्षों सदस्य रहे। आपके ८० वे जन्म दिवस पर सन् १९७४ में भारत के राष्ट्रपति ने आपका अभिनन्दन किया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री पूनमचन्द जी रांका

नागपुर के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता ओसवाल श्रेष्ठि श्री पूनमचन्द जी रांका महात्मा गांधी के अत्यंत प्रिय कार्यकर्ताओं में से एक थे। स्वतत्रंता प्राप्ति के पूर्व के ३० वर्ष भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से अंकित है। वह बलिदान और सेवा का युग था एवं रांकाजी उसके मूर्ति मान प्रतीक। आप अजमेर तालुका के तोंडापुर ग्राम निवासी श्री छोग मलजी रांका के पुत्र थे। आपका जन्म संवत् १९५६ में हुआ। संवत् १९६२ में आप नागपुर के रांका शंभूरामजी के दत्तक आए। आपका जीवन त्याग और तपस्या से ओत-प्रोत था। हाथ की कती-बुनी काली कमली कंधे पर डाले संवत् १९७७ से गांधीजी के सभी आन्दोलनों में वे अग्रणी रहे। इस हेतु छः सात बार उन्हें जेल यातनाऐं भी सहनी पड़ी। प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष तो वे थे ही, संवत् १९९६ में अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी के भी सदस्य चुने गए।

उन्होंने अपनी वैयक्तिक सम्पति का बहुत बड़ा भाग देश हित के लिए अर्पित कर दिया था। सामाजिक सुधारों के वे सूत्रधार थे। ओसवाल महेश्वरी एवं पोरवाल समाज में मोसर की कुप्रथा के उन्मूलन हेतु उन्होंने अनथक प्रयास किया। वे अपनी धार्मिक सहिष्णुता के लिए सर्वत्र लोकप्रिय थे। अखिल भारतवर्षीय सनातन जैन महासभा के सातवें अधिवेशन के वे सभापति चुने गए। आपकी धर्मपत्नि धनवती बाई रांका राष्ट्रीय आन्दोलन की महिला नेत्री थी। वे भी अनेक बार जेल गई। खादी एवं चरखा को अपने जीवन का अगं बना कर उन्होंने तात्कालीन समाज को नई दिशा दी।

देशभक्त जीतमल जी लूणिया

आपका जन्म वि.सं.१९५२ में अजमेर के प्रसिद्ध ओसवाल लूणिया गोत्र के सेठ नागराज रुपराज के परिवार में हुआ। आपके पिता सेठ पूनमचन्द जी लूणिया का अल्पायु में प्लेग की बिमारी में देहांत हो गया था। आप बचपन से ही बड़े एकांत प्रिय और आध्यात्मिक प्रवृति के थे। एम.ए. तक शिक्षा ग्रहण कर आप सं.१९७२ में इन्दौर आए और प्रसिद्ध धनकुबेर सेठ हुकमचन्द के यहाँ उनके प्राइवेट सेक्रेटरी का काम सम्भाला। ड़ेढ वर्ष बाद ही आप सार्वजनिक क्षेत्र में कूद पड़े और आपने देश सेवा को अपना ध्येय बनाया। शुरु में साहित्य प्रकाशन का काम प्रारम्भ किया एवं मालव-मयूर नामक मासिक पत्र निकाला। सं.१९७७ में भारत में गांधीजी के असहयोग आन्दोलन का बड़ा जोर था। आप स्वतंत्र लेखन की दृष्टि से इन्दौर रियासत छोड़-कर बनारस चले गए और वहां हिन्दी साहित्य मन्दिर की स्थापना की आपने राष्ट्रीय एवं शैक्षणिक महत्व के लगभग ३५ ग्रन्थ प्रकाशित किये।

सं.१९८२ में आपका परिचय देशभक्त सेठ जमनालाल बजाज से हुआ और उनके आग्रह पर अजमेर आ गए। बिड़ला एवं बजाज बन्धुओं के सहयोग से आपने सस्ता साहित्य मंडल की स्थापना की। थोड़े ही समय में यह संस्था अपने राष्ट्रीय प्रकाशनों के कारण देश भर में प्रसिद्ध हो गई। वि.सं.१९८७ में आपका स्वास्थ्य अत्यंत खराब हो गया फिर भी आप स्वतत्रंता आन्दोलन में भाग लेते रहे। उसी वर्ष आप गिरफ्तार कर लिए गए एवं छ मास कठोर कारावास

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से दंड़ित हुए। जेल से छूटकर आपने १९८८ में अजमेर सेवा भवन की नीवं रखी। १९८९ में आप फिर गिरफ्तार कर लिए गए। आपकी पत्नि सरदार बाई लूणिया ने भी स्वतंत्रता यज्ञ में आहुति दी। वे ओसवाल समाज की प्रथम महिला थी जो पर्दा का बहिष्कार कर राष्ट्रीय संग्राम में जेल गई। जेल से छूटकर लूणिया जी ने सस्ता साहित्य मंडल का प्रेस खरीद कर आदर्श प्रिंटिंग प्रेस के नाम से फिर प्रकाशन चालू किया। श्री सुख सम्पत राज भंडारी लिखित ओसवाल जाति का इतिहास मय ७०० से अधिक चित्रों के इसी प्रेस में छपा।

श्री दीपचन्दजी गोठी

बैतूल के त्यागवीर ओसवाल श्रेष्ठि दीपचन्द गोठी स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी नेताओं में से थे। इनके पूर्वज श्री शेर सिंह जी संवत १९२३ में रास बाबरा (जोधपुर) से बैतूल आकर बसे। दीपचन्द जी के पिता श्री लक्ष्मीचन्दजी प्रदेश के प्रसिद्ध उद्योगपति एवं जमींदार थे। इन्होने ७५ गाँव खरीदे एवं अनेक जगह दूकानें स्थापित की। संवत् १९७१ के प्रथम विश्व युद्ध में आपने ब्रिटिश सरकार की अनेक तरह से मदद की। दीपचन्द जी का जन्म संवत १९५४ में हुआ। बचपन से ही वे दयावान एवं सेवा भावी थे। युवा होकर वे बेतूल सेवा समिति के नायक बने। ब्रिटिश शासन के प्रति विद्रोह उनकी नस-नस में समाया हुआ था। संवत १९८७ में वे राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य बने एवं स्वतत्रंता—यज्ञ में उन्होने भरपूर योगदान दिया। समस्त वैभव को ठुकरा कर नंगे पाँवों राष्ट्रीयता का अलख जगाने के लिए पद यात्राऐं की। संवत १९९१ के जंगल सत्याग्रह में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। संवत १९९३ में जब प्रांतीय धारासभाओं के चुनाव हुए तो वे कांग्रेस की तरफ से एम.एल.ए. चुने गए। अनेक समाज हितकारी प्रवृतियों एवं सस्थाओं से जुड़े रहकर वे सदा गरीबों की सेवा में जुटे रहे।

श्री राजमल ललवानी

प्रसिद्ध कर्मयोगी श्री राजमल ललवानी का जन्म वि. सं. १९५१ में आऊ (फलौदी) के साधारण ललवानी परिवार में हुआ। अजमेर के प्रसिद्ध सेठ लखीचन्दजी लालवानी ने आपकी प्रतिभा से आकर्षित होकर वि. सं. १९६३ में आपको दत्तक (गोद) ले लिया। संवत १९६४ में ही सेठजी की मृत्यु से सारी जिम्मेदारी अल्पवय में ही आपके कन्धों पर आ पड़ी। आपने बड़ी दूरदर्शिता से जमींदारीं एवं व्यापार का संचालन किया। प्रथम महायुद्ध में अंग्रेज सरकार की आपने बहुत मदद की परन्तु जब भारत का स्वतंत्रता संग्राम छिड़ा तो आप तन मन धन से उसमें कूद पड़े। असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के कारण आपको सरकार का कोप भाजन बनना पड़ा। वि. सं. १९७७ में जलगाँव में हुए बम्बई प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन में आप अध्यक्ष थे। इसी वर्ष आप बम्बई लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य चुने गए। सं. १९९३ में आप कांग्रेस की तरफ से प्रांतीय एसेम्बली के सदस्य चुने गए।

खान देशीय ओसवाल सभा और बाद में अखिल भारतीय ओसवाल महासभा की स्थापना आपने ही की—प्रारम्भ में आप ही उसके अध्यक्ष थे। वि. सं. १९९१ में अजमेर में हुए ओसवाल महासम्मेलन के प्रथम अधिवेशन के आप स्वागताध्यक्ष थे। आप अनेक लोक-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हितकारी संस्थाओं से आजीवन जुड़े रहे। प्रारम्भ में स्थानकवासी जैन धर्म के अनुयायी होते हुए भी आपने वेदांत,पातञ्जलि योग आदि का अध्ययन किया एवं अन्ततः प्राकृतिक मानवधर्म के हामी हो गए। ओसवाल महासम्मेलन के तृतीय मदंसौर अधिवेशन (१९३५) के आप सभापति चुने गए।

श्री राजरूप टांक

जयपुर के प्रसिद्ध रत्न पारखी श्रीमाल श्रेष्ठि श्री राजरूप टांक प्रमुख स्वतंत्रता सेनानियों में से थे। लोगों में 'चा साब' के नाम से लोक प्रिय श्री टांक रत्न व्यवसाय में अग्रणी थे। आपका जन्म संवत १९६२ में चिड़ावा ग्राम में हुआ। आपके पूर्वज श्री सावंतराम जी ने झुनझनू में दादाबाड़ी एवं शेखावटी प्रदेश में प्यास बुझाने के लिए अनेक कुओं का निर्माण कराया था। आपके पिता श्री मानकचन्दजी का ओसवाल समाज में प्रमुख स्थान था। छः वर्ष की उम्र में राजरूप जी श्री छगनमलजी टाँक के गोद गए। बड़े होकर उन्होनें जवाहरात के पुश्तैनी व्यवसाय को खूब चमकाया। आपने जयपुर में हीरे एवं अन्य कीमती जवाहरात तराशने की फैक्ट्री स्थापित की। रंगीन पत्थरों—माणक एवं पन्ने के आप विशेषज्ञ माने जाते थे। अनेक जवाहरात कर्मियों को आपने प्रोत्साहन देकर व्यवसाय—दक्ष बनाया। संवत २०२७ में उनके शिष्यों द्वारा उन्हें चौसठ हजार रूपए का पर्स (थैली) भेंट कर सम्मानित किया गया। आपने जवाहरात पर 'इंडियन जेमोलोजी' (अंग्रेजी) व 'रत्न प्रकाश' (हिन्दी) ग्रंथों की रचना की। उनके संग्रह में अनेक प्रकार के प्राचीन अर्वाचीन विशिष्ट रत्न संग्रहित है। आप संस्कृत एवं आयुर्वेद के ज्ञाता थे।

'चा साब' में अपने देश के प्रति प्रगाढ़ प्रेम था। स्वतंत्रता संग्राम में उनका विशेष अवदान रहा। स्वभाव से सरल एवं मिलनसार तो थे ही,उनका पहनावा खादी का कुर्ता और धोती उन्हें जन साधारण के और निकट ला देता था। आप संवत १९९५-९६ में राज्य प्रजा मंडल के कोषाध्यक्ष रहे। संवत २००५ में कांग्रेस के जयपुर अधिवेशन के वे संयोजक मनोनीत हुए। राज्यों के एकीकरण के बाद संयुक्त राजस्थान में लोक प्रिय सरकार का गठन हुआ तो वे राज्य एसेम्बली के सदस्य निर्वाचित हुए। आप गाँधीजी के हरिजन सेवक संघ से हमेशा जुड़े रहे। अनेक अन्य लोक हितकारी प्रवृत्तियों एवं संस्थाओं को उनका सहयोग एवं वरद हस्त प्राप्त था। संवत १९८२ में उन्होंने हिन्दू अनाथाश्रम की स्थापना की। भारत जैन महामंडल की जयपुर शाखा के आप सभापति रहे। संवत २०११ से ही आप राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के कोषाध्यक्ष रहे।

श्री देवराज सिंघी

जोधपुर के प्रबुद्ध क्रांतिकारियों में श्री देवराज सिंघी का नाम बड़े फख्र से लिया जाता है। आपका जन्म संवत १९७९ में हुआ था। बचपन से ही क्रांति का विचार आपके मानस को आन्दोलित करने लगा। जब सरदार हाई स्कूल में पढ़ते थे तभी से आपने खादी के वस्त्र पहनने शुरु कर दिए। संवत १९९९ में आपका विवाह श्री जेठमलजी संचेती की पुत्री सोहनकुमारी से हुआ। सन् ४२ में भारत छोड़ों आन्दोलन का एक सिलसिला जोधपुर में भी शुरू हुआ। बम बनाने का काम देवराजजी के सुपुर्द किया गया। उस समय जोधपुर के हवाई अड्डे

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पर अंग्रेजी वायुसेना की एक पूरी बटालियन थीं जो मनोविनोद के लिए हर शनिवार शहर के सिनेमा गृह स्टेडियम में आया करती थी। देवराजजी ने अध्ययन कर टाइम बम बनाया। उसे थैले में रख कर बड़े भाई श्रीलालचन्द के हाथों हाल में कुर्सी के नीचे रखवा दिया। विस्फोट हुआ पर कोई आहत नहीं हुआ। अपितु सरकार अवश्य दहल गई। धर पकड़ शुरू हुई। दुर्भाग्य से दल का एक सदस्य मुखबिर बन गया। दोनों भाई पकड़े गए। जेल में उन्हें अनेक यातनाऐ दी गई। सजा के दिन लालचन्द अदालत से फरार हो गए एवं अनेक दिन साधु बन कर रहे। दल के अन्य सभी अभियुक्तों को सजाऐं हुई। देवराज को दस साल की कैद दी गई। द्वितीय महायुद्ध समाप्त होने पर संवत २००२ में सभी बन्दी रिहा कर दिए गए। देवराज ने अनेक जगह घूमने के बाद कलकत्ता में अपना कारखाना स्थापित किया। सामाजिक एवं रचनात्मक कार्यक्रमों में भी आप सक्रिय हुए।

श्री ऋषभदास रांका

समाज सेवकों में प्रमुख राकां जी का जन्म वि.सं.१९६० में खानदेश (महाराष्ट्र) के फत्तेपुर ग्राम में हुआ। उनका कार्यक्षेत्र यों तो सारा भारत रहा किन्तु मुख्य क्षेत्र फत्तेपुर, जामनेर, जलगांव, पूना और बम्बई रहे। शुरू में वे पुश्तैनी कपड़ा व्यापार में रहे—फिर खेती और डेयरी उद्योग की तरफ झुके। कुछ समय बाद इन्स्योरेन्स का धन्धा किया और अंततः सं. २०१५ में बम्बई में स्थायी रूप से समाज सेवा को समर्पित हो गए।

महात्मा गांधी, विनोबा भावे, सेठ जमनालाल बजाज आदि राष्ट्रीय नेताओं के सम्पर्क से आप स्वतन्त्रता संग्राम के सिपाही बन गए। नमक सत्याग्रह में वे कई बार जेल गए। सं. १९९९ के भारत छोड़ो आन्दोलन के समय भी वे प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानी रहे। हरिजन सेवा गौ सेवा, ग्राम सेवा आदि जन सेवा के कार्यक्रमों से सर्वदा जुड़े रहे। सं. २००३ से वे भारत जैन महामण्डल से जुड़े। "जैन जगत" का कार्यभार सम्भाला। सं. २०२५ में आप अखिल भारतीय अणुवत समिति के उपसभापति चुने गए एवं मुख पत्र "अणुव्रत" का सम्पादन भी संभाला। महावीर कल्याण केन्द्र के आप महामंत्री रहे। आप भगवान महावीर की २५०० वे निर्वाण महोत्सव समिति के महामन्त्री चुने गए।

श्री आनन्दराज सुराणा

आपका जन्म जोधपुर में वि. सं. १९४८ में हुआ। आपको अहिंसा एवं आध्यात्म से लगाव पैतृक विरासत में मिला। आपके पिता सेठ श्री चांदमल सुराणा सार्वजनिक हित के कामों में सदैव तत्पर रहते थे। वे जोधपुर पिंजरापोल के संरक्षक थे। श्री आनन्दराजजी जब ३२ वर्ष के थे तभी राष्ट्रीय आन्दोलन में कूद पड़े। बीकानेर महाराज ने आपको राज से निर्वासित कर दिया। जोधपुर का सामन्ती शासन भी उन्हें बर्दास्त न कर सका। आपने लोक परिषद एवं सन् ४२ के भारत छोड़ों आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। अनेक बार जेल की यातनाएं सही। आप दिल्ली धारा सभा के सन् १९५२-५७ तक सदस्य रहे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपने निजी कारोबार शुरू किया। छापेखाने की मशीनों के आयात एवं निर्माण का बहुत बड़ा औद्योगिक प्रतिष्ठान आपके ही अध्यवसाय का फल था। साथ ही, रासायनिक उद्योग में भी आपने भाग्य आजमाया एवं समृद्धि हासिल की। आपके हृदय में जानवरों एवं प्रकृति के प्रति बहुत प्रेम था। लोगों का जानवरों के प्रति क्रूर व्यवहार देखकर आपका मन सदा दुखी रहता था। आपने उनके विरूद्ध जिहाद छेड़ दिया। जोधपुर राजमहल में लाखों पशुओं को कत्ल से बचाने के लिए सत्याग्रह किया। हिसार में अकाल की विभीषिका से पशुओं को बचाने के लिए कैम्प लगाए। बिहार व राजस्थान के अकाल पीड़ितों की सहायतार्थ घर-घर जाकर धन एकत्रित किया।

भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण महोत्सव के समय उन्होंने २५०० गायों को कत्ल घर से बचाकर गौ सदनों के हवाले किया। आप अखिल भारतीय श्वेताम्बर जैन कान्फ्रेन्स के २५ वर्ष तक महामन्त्री एवं ट्रस्टी रहे। आप दिल्ली की अनेक संस्थाओं के सभापति रहे। भारत के राष्ट्रपति ने उन्हें प्राणीमित्र की उपाधि से विभूषित किया। सन् १९७१ में उन्हें भारत सरकार द्वारा पद्मश्री की उपाधि से सम्मानित किया गया।

श्री कुन्दनमल फिरोदिया

अहमदनगर के ओसवाल श्रेष्ठि श्री कुन्दनमल फिरोदिया ने स्वतंत्रता आन्दोलन में अभूतपूर्व सहयोग दिया। आप स्वतंत्रता पूर्व सन् १९३६ में हुए चुनावों में कांग्रेस की तरफ से बम्बई धारा सभा के सदस्य चुने गये। आप जिला बोर्ड के प्रेसिडेन्ट रहें। सामाजिक सुधारों के लिए हर समय तत्परता ने आपको समाज में लोकप्रियता प्रदान की।

श्री सुगनचन्द लूणावत

धामन गाँव के ओसवाल श्रेष्ठि श्री सुगनचन्द लूणावत महात्मा गाँधी की ललकार पर सत्याग्रह आन्दोलन में सम्मिलित हुए। मध्य प्रांतीय धारा सभा के लिए चुने जाने वाले आप सबसे कम उम्र के सदस्य थे।

श्री मोतीलाल भूरा

जबलपुर के ओसवाल श्रेष्ठि श्री मोतीलाल भूरा बड़े हसँमुख एवं मिलनसार व्यक्ति थे। आपने राष्ट्रीय आन्दोलन में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। त्रिपुरा कांग्रेस अधिवेशन के आप अर्थ मंत्री नियुक्त हुए थे। सभी राष्ट्रीय नेता आपकी क्षमता एवं स्फूर्ति के कायल थे। लगातार सतरह वर्षों तक आप जबलपुर म्यूनिसिपालिटी के सदस्य रहे एवं उपचेयरमेन चुने गए। संवत् १९९९ में पुष्कर में हुए अखिल भारतीय ओसवाल महासम्मेलन के पाचँवे अधिवेशन में समाज ने आपको सभापति चुन कर सम्मानित किया।

श्री सरदार सिंह महनोत

मध्यप्रदेश के ओसवाल क्रांतिकारियों में अग्रणी श्री सरदार सिंह महनोत ने कुछ समय तक शिवपुरी विद्यालय में व्यवस्थापकीय दायित्व निभाने के बाद कलकत्ता को अपना कार्य

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

क्षेत्र बनाया। सन् १९३१ के नमक सत्याग्रह में भाग लेकर डण्डे खाए एवं जेल गए। सन् ४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में भाग लेने पर चार वर्षो तक आपको नजरबन्द रखा गया। ओसवाल महासम्मेलन के मुखपत्र 'ओसवाल' का आपने अनेक वर्षों तक सफलता पूर्वक सम्पादन किया। आपके प्रबंधों एवं सम्पादकीय लेखों में सामाजिक सुधार की तड़प रहती थी। आपकी पत्नि सज्जन देवी महनोत ने भी राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लेकर समाज का मुख उज्जवल किया।

श्री डालिमचन्द सेठिया

थली प्रांतीय ओसवाल समाज के प्रथम बैरिस्टर एवं सुजानगढ़ के ओसवाल श्रेष्ठि श्री मूलचन्दजी सेठिया के सुपुत्र श्री डालिम चन्द सेठिया का राष्ट्रीय आन्दोलन को अवदान कुछ कम न था। सन् ४२ के भारत छोड़ों आन्दोलन में राष्ट्र नायक श्री जय प्रकाश नारायण और श्री राम मनोहर लोहिया ने फरार होकर आपके निवास पर ही शरण ली थी। ब्रिटिश सरकार के कोपभाजन होकर आपको ५४ दिनों का कारावास भुगतना पड़ा। कलकत्ता के मारवाड़ी छात्र संघ के भी आप सभापति रहे।

श्री नथमल चोरड़िया

राष्ट्र भक्त एवं प्रमुख समाज सेवी श्री नथमलजी चोरड़िया के पूर्वजों का मूल निवास डीडवाना था। वे विक्रम संवत १७७५ के आसपास नीमच छावनी आकर बसे। नथमल जी का जन्म संवत् १९३२ में हुआ। अल्पायु में ही आपके पिता श्री की मृत्यु हो गई। आपने बड़ी कुशलता से पारिवारिक व्यापार को संभाला। बम्बई में आपने मेवाड़ के प्रसिद्ध करोड़पती सेठ मेघजी गिरधारीलाल के साझे में काम शुरू किया और लाखों की सम्पत्ति अर्जित की। स्वभावतः आप सरलमना एवं समाज सुधार के हामी थे। महात्मा गांधी के विचारों से प्रेरणा ले आप राष्ट्रीय आन्दोलन में कूद पड़े। स्वयं सत्याग्रह कर कई बार जेल गए। मालवा प्रांतीय कांग्रेस कमेटी के आप सभापति निर्वाचित हुए। हरिजन उत्थान के लिए आपने पाठशालाएं शुरू की। समाज की शैक्षणिक उन्नति के लिए आपने जी खोलकर दान दिया। सत्तर हजार रूपये का अवदान देकर प्रदेश में कन्या गुरूकुल की स्थापना की। आपके तपस्वी जीवन ने आपको लोकप्रिय बना दिया। अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स ने आपको समाज भूषण की पदवी से सम्मानित किया। आप विधवा विवाह के समर्थक थे।संवत् १९९३ में आपका देहावसान हो गया।

श्री चाँदमल चोरड़िया

आगरा के विख्यात वकील श्री चाँदमल चोरड़िया महात्मा गाँधी के अनन्य भक्त थे। आपका जन्म संवत १९३१ में हुआ। आपके पिता बाबू गुलाबचन्द जी जवाहरात का काम करते थे। उनके फर्म की बड़ी साख थी, आपको वायसराय और क्वीन मेरी के सार्टिफिकेट प्राप्त थे। चाँदमलजी बड़े निरभिमानी और विचारशील युवक थे। वे आदर्शवादी थे। सर्वदा सच्चे मुकदमें ही लेते थे। उनके इस सिद्धांत से प्रभावित होकर जज लायड साहब ने लिखित

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

रूप में उनकी प्रशंसा की। अक्सर आपको विवाद निपटाने हेतु कमिश्नर नियुक्त किया जाता। जब मक्सी जी विवाद में दिगम्बर और श्वेताम्बर जैन सम्प्रदाय उलझ पड़े तो चोरड़िया जी ने उन्हें सुलझाने हेतु अनथक परिश्रम किया। वे आनन्द जी कल्याण जी पेढ़ी के सदस्य थे। योग और प्राकृतिक चिकित्सा पर उन्हें बहुत भरोसा था।

खद्दरधारी तो वे जीवन पर्यन्त रहे। आगरा में कांग्रेस के वे पाँच वर्ष तक प्रधान रहे। संवत १९७८ से ही वे गाँधी जी के असहयोग आन्दोलन में शरीक हो गए थे—अनेक बार जेल गए। अन्याय के विरूद्ध लड़ने वाले वे जन्मजात बागी थे। एक बार बीच बाजार में गोरा (अंग्रेज) शासक एक व्यक्ति को कोड़े मार रहा था— आपसे रहा नही गया और उस एवज में खुद कोड़ों के शिकार हुए। भरी पूरी वकालत को लात मारकर स्वतंत्रता आन्दोलन को समर्पित हो जाना उनकी देश भक्ति एवं गांधीजी के प्रति गहरी आस्था का परिचायक था। सामाजिक सुधारों के प्रति भी आप सदा जागरुक रहते थे। ओसवाल महासम्मेलन के मुखपत्र 'ओसवाल सुधारक' का आगरा से सफल सम्पादन करने का श्रेय आपको ही है। संवत् १९९५ में आपका देहावसान हुआ।

श्री तिलकचन्द तिरपंखिया

पंजाब के बीसा ओसवाल समाज में गुजरानवाला के श्री तिलकचन्द तिरपंखिया का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। भारत के स्वतत्रंता संग्राम में योगदान करने वाले श्री तिलकचन्द का जन्म वि. सं. १९५७ में हुआ। पिता लाला फग्गुमल धातु के बर्तनों के प्रसिद्ध व्यापारी थे। तिलकचन्द की शिक्षा गुजरानवाला के मिशन हाई स्कूल में हुई। वहीं से आपने क्रांतिकारी विचारधारा लेकर जीवन में प्रवेश किया। महात्मा गांधी ने जब नमक सत्याग्रह छेड़ा तो तत्काल आप उसमें शरीक हुए एवं जेल गए। फिर तो आप राष्ट्रीय आन्दोलन में पूरी तरह जुट गए। जिसके फलस्वरूप आपको अनेक बार कारावास भुगतना पड़ा।

आप सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास की सभी मुख्य धाराओं से जुड़े। आत्मानन्द जैन गुरूकुल के आप प्रारम्भ से अवैतनिक मंत्री रहे एवं उसे उन्नति के शिखर तक पहुँचाने का श्रेय भी आपको है। श्वेताम्बर मूर्ति पूजक जैन संघ की तीर्थ व्यवस्था एवं सुरक्षा के निमित अहमदाबाद में संस्थापित आनन्दजी कल्याणजी की पेढ़ी में आप पंजाब का प्रतिनिधित्व करते रहे। आत्मानन्द जैन महासभा के आप दो बार प्रधान चुने गए। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के आजीवन सदस्य रहे एवं जिला कांग्रेस कमेटीके सचिव तो थे ही। गुजरानवाला म्यूनिसिपलीटी में आप कांग्रेस के मुख्य सचेतक थे। देस-सेवा के कामों में बेसुध जुट जाने के कारण आपका व्यापार और स्वास्थ्य दोनों ही चौपट हो गया। वि. सं. २००२ में देश के स्वत्रंत होने के मात्र दो वर्ष पूर्व भारत का यह स्वतंत्रता सेनानी सदा के लिए सो गया।

श्री रोशनलाल बोरदिया—आपने सन् १९३२ के कर विरोधी आन्दोलन एवं सन् १९३८ के प्रजा मंडलीय आन्दोलन में गिरफ्तारियां दी एवं सन् ४२ के भारत छोड़ो आन्दोलन में भी भाग लिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री चिमनलाल बोरदिया— आपने भी राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लेकर गिरफ्तारियां दी एवं जेल गए।

श्री रतनलाल कर्णावट— उदयपुर से भारत छोड़ो आन्दोलन में तेरह माह तक नजरबन्द रहे।

श्री पूनमचन्द नाहर— छोटी सादड़ी से सामन्ती अत्याचारों का विरोध करने में आप अग्रणी थे। ये अनेक बार जेल गए।

श्री उमरावसिंह ढ़ाबरिया— भीलवाड़ा के प्रजा मंडलीय आन्दोलनों से सम्बद्ध रहे। सन् ४२ के भारत छोड़ों आन्दोलन में नजरबन्द किए गए। देश आजाद होने के बाद राज्य विधान सभा के सदस्य चुने गए एवं समाजवादी दल की तरफ से दर्जनों बार जेल गए।

श्री मोतीलाल तेजावत— उदयपुर में जब जलियावाला बाग कांड की पुनरावृति हुई तो बारह सौ बहादुर क्रांतिकारियों ने श्री तेजावत के नेतृत्व में मशीनगनों के सामने बहादुरी से सीना तान कर ब्रिटिश आतताईयों को ललकारा।

श्री दाड़मचन्द्र दोषी— आपने बांसवाड़ा में सरकारी कार्यालय की तीसरी मंजिल पर जाकर सहस्त्रों पुलिस की परवाह न करते हुए क्रांति का वाहक तिरंगा झंड़ा फहराया।

श्री बालकृष्ण भंडारी— अमरावती के वकील श्री भंडारी ने राष्ट्रीय आन्दोंलन में सक्रिय सहयोग दिया। सन् १९४१ में आपने जेल की यातनाऐं सही।

साहित्य-संस्कृति-शिक्षा एवं न्यायविद्

धर्म और आध्यात्म की साधना—प्रभावना के लिए जिस जाति का उद्भव हुआ वह साहित्य और संस्कृति से कैसे विमुख रह सकती थी। भक्ति का एक आयाम प्राचीन काल से ही श्रुत ज्ञान को अक्षुण्ण रखने के विविध सरंजाम जुटाना था। अनेक ओसवाल श्रेष्ठियों ने अमूल्य हस्तलिखित ग्रंथ लिखवा कर इस सांस्कृतिक धरोहर को बचाया एवं विपुल धन खर्च कर चित्रमय, स्वर्णाक्षरी एवं रौप्याक्षरी ग्रंथों का निर्माण कराया। उनके संचयन एवं संग्रहण के लिए ज्ञान भंडारों की स्थापना की । मंत्रीश्वर पेथडकुमार ने भड़ौच, सुरगिरी, मण्डप दुर्ग, अर्बुदाचल आदि सात स्थानों पर सरस्वती भंडार खोले। कहते है भगवती सूत्र के लेखन पर जहाँ-जहाँ गोयमा (गौतम) शब्द आया, आपने एक एक स्वर्ण मुद्रा दान में दी। ऐसे लाखों ग्रंथ अब भी भंडारों में उपलब्ध है जिनके अन्त में उन आश्रयदाता श्रेष्ठियों की प्रशस्ति अंकित है। इन प्रशस्ति अंकित ग्रन्थों की शोध एवं इन प्रशस्तियों का प्रकाशन बहुत महत्वपूर्ण है।

यद्यपि प्राचीन काल में मौलिक साहित्य सृजन मूलतः जैन मुनियों एवं आचार्यों तक सीमित था किन्तु इसके अपवाद भी है। ऐसे ओसवाल वंशीय श्रावकों के उल्लेख मिलते है जिन्होंने मौलिक रचनाऐं की। श्री अगरचन्दजी नाहटा प्रभृति विद्वानों ने अपनी अनवरत शोध द्वारा कुछेक ऐसे रचनाकारों पर प्रकाश डाला है परन्तु अधिकांश अभी भी विश्रुत है। आधुनिक युग में शिक्षा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से जो क्रांति घटित हुई उसके फल स्वरुप इस समाज में भी साहित्य, कला शिक्षा एवं न्याय के क्षेत्र में ऐसे प्रसून खिले हैं जिनकी सुवास से दिग-दिगन्त महके हैं। समस्त तो नहीं पर ऐसे कुछ प्रमुख व्यक्तियों का परिचय यहाँ समीचीन है।

आसड़ श्रीमाल

विक्रम की ११वी शताब्दो में जैन दर्शन के एक महान श्रावक हुए श्रीमाल वंशीय कट्टकराज के पुत्र आसड़। आसड़ बड़े मेधावी एवं अनेक शास्त्रों के ज्ञाता थे। वे एक महान कवि थे। उन्होंने कालिदास के प्रसिद्ध संस्कृत महाकाव्य 'मेघदूत' की संस्कृत टीका लिखी। राज्य की ओर से उन्हें 'कवि सभा श्रृंगार' की उपाधि से विभूषित किया गया। उन्होंने अनेक जैन स्तोत्रों की टीकाएं एवं 'उपदेश कंदली' ग्रन्थ की रचना की। आपके विद्वान पुत्र बाल सरस्वती का तरुणावस्था में देहान्त हो गया था। इससे आप अत्यन्त दुखी थे। आचार्य अभयदेव सूरि (संवत १०७२-११३५) के सदुपदेशों से आपका मन शान्त हुआ। तदुपरान्त आपने "विवेक मंजरी" नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ की रचना की।

भंडारी नेमिचन्द

अधिकांश श्वेताम्बर जैन साहित्य की रचना जैन आचार्यों और जैन मुनियों की ही की हुई है। श्रावकों की रचनाएं कम है और प्रभावी रचनाएं तो बहुत ही कम। श्वेताम्बर श्रावकों में विक्रम की १३ वी शताब्दी में ऐसे ही एक प्रसिद्ध विद्वान हुए नेमिचन्द भण्डारी जिनका "षष्टि-शतक" बहुत प्रसिद्ध हुआ। इस ग्रन्थ पर अनेक टीकाएं रची गई। दिगम्बर शास्त्र भंडारों में भी इस ग्रन्थ की प्रतियाँ मिलती हैं। "उपदेश सिद्धान्त रत्नमाला" नाम से इसकी भागचन्द कृत वचनिका (भाषा टीका) बहुत लोकप्रिय हुई। श्वेताम्बर समाज में षष्टिशतक बहुत लोकप्रिय है। इसकी १०-१२ संस्कृत एवं भाषा टीकाओं का उल्लेख डा. वेलनकर ने किया है। इस ग्रन्थ के पद्यानुवाद भी संस्कृत, गुजराती आदि भाषाओं में हुए हैं।

नेमिचन्द भण्डारी मरू देश के मरोठ नगर के निवासी थे। इनके पिता का नाम सज्जन साह, पत्नि का नाम लखमिणी और पुत्र का नाम आंवड़ था। पाटण में खरतर गच्छीय आ. जिन पति सूरि से इन्होनें सम्यकत्व ग्रहण किया था। आंवड़ आ. जिनपति सूरि द्वारा दीक्षित हुए एवं जिनेश्वर सूरि के नाम से उनके पट्टधर हुए। खरतर गच्छ गुरूवावली के अनुसार जिनपति सुरि जी वि. सं. १२५३ में पाटण पधारे थे। भंडारी नेमिचन्द कृत और भी ग्रन्थ मिलते हैं जिनमें पार्श्वनाथ स्तोत्र मुख्य है।

भण्डशाली आजड़

विक्रम की तेरहवी शदी में संस्कृत के अनन्य विद्वान भण्डशालि आजड़ हुए। आपने भोजराज कृत सरस्वती कण्ठाभरणालंकार ग्रन्थ पर 'पद प्रकाश' नामक पांडित्यपूर्ण कृति की रचना की। इसकी ताड़पत्रीय प्रति पाटण के संघवी पाड़ा भंडार में उपलब्ध है। आपके पिता का नाम पार्श्वचन्द्र था। आप मधुमती के निवासी थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सोनी संग्रामसिंह

सुलतान अलाउद्दीन खिलजी के जमाने में प्रसिद्ध ओसवाल श्रेष्ठि सोनी गोत्रीय सांगण का उल्लेख मिलता है। इन्हीं के वंशज थे सोनी संग्रामसिंह। आपके पिता नरदेव हूसंग राजा के. भंडारी थे। संग्रामसिंह बड़े दयालु एवं वीर थे। धनकुबेर तो वे थे ही विद्वान भी थे। उन्हें खिलजी बादशाह गयासुद्दीन से 'नगदुल मुलुक' का विरूद मिला था। आपने छत्तीस हजार स्वर्ण मुद्राऐं मन्दिर में चढ़ाई जिनसे अनेक ज्ञान भंडार स्थापित हुए। आपकी मौलिक कृति है "बुद्धिसागर" नामक संस्कृत पद्य रचना जिसमे देव, गुरु, धर्म, ज्योतिष, अश्व, वैद्यक, वास्तु कला, शकुन, रत्न, मुद्रा, सामुद्रिक आदि नाना विषयों की चर्चा है। इस ग्रन्थ की रचना प्रतिष्ठानपुर में संवत् १५२० में पूर्ण हुई है। आपकी प्रशस्ति में भानुचन्द्र कृत "संग्राम सोनी रास" प्रसिद्ध है।

मण्डन श्रीमाल

महमूद खिलजी के समय श्रीमाल वंश के अनेक श्रेष्ठि राज्य के सम्मानित ओहदों पर थे उनमें से एक झांझण श्रीमाल थे। उनके पुत्र देहड़ भी दीवान थे - उन्हें "आफताब" की उपाधि प्राप्त थी। देहड़ के पुत्र धनद महान धर्मनिष्ठ और विद्वान थे। उन्होंने वि. सं. १५४७ में श्रृंगार धनद शतक, नीति घनद शतक और वैराग्य धनद शतक नामक तीन काव्य ग्रंथों की रचना की।
देहड़ के अग्रज बाहड़ ने कई बार संघ निकाले, अतः संघपति कहलाए। बाहड़ के पुत्र मण्डन श्रीमाल दिग्गज विद्वान और महान कवि थे। वे सुलतान आलमशाह (वि. सं. १४६२-१४८९) के प्रधान मंत्री रहे। उन्होनें दस प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थों की रचना की—सारस्वत मंडन, काव्य मंडन, चंपू मंडन, कादम्बरी मंडन, अलंकार मंडन, संगीत मंडन, उपसर्ग मंडन, चन्द्र विजय एवं कवि कल्पद्रुम स्कंध।

महाकवि संघवी रइधू

अपभ्रंश साहित्य में महाकवि रइधू का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है। आपके पिता का नाम संघवी हरिसिंह था। आप भट्टारक कमलकीर्ति (वि. सं. १५०६-१५३६) के शिष्य थे। महाकवि की अनेक रचनाएं संग्रहालयों में उपलब्ध हैं। श्री पूर्णचन्द्रजी नाहर के हस्तलिखित संग्रह भंडार में सुरक्षित "सावय चरिउ" (श्रावक चरित्र) आपकी प्रधान कृति मानी जाती है। इसमें अपभ्रंश भाषा में लिखित आठ कहानियां हैं जो सम्यकत्व को आधार बनाकर रची गई हैं। रइधू के अन्य ग्रंथ हैं—महापुराण, गाथाबन्ध, सिद्धान्तसार, पुण्याश्रव कथा, मेघेश्वर चरित आदि। आप विशाल हृदय थे। सावय चरिउ का मूल आधार संस्कृत की "सम्यकत्व कौमूदी" है जिसके सुपात्रों के माध्यम से जीवन की समृद्धि हेतु सुन्दर आदर्शों की स्थापना की गई है।

सेठ हीरानन्द मुकीम

आगरा के श्रीमाल मुकीम गोत्र के साहू कन्हड़ एवं भामिनी के पुत्र हीरानन्द इलाहाबाद में रहते थे। शाहजादा सलीम उनकी बहुत इज्जत करते थे उन्होने हीरानन्द को राज-जौहरी नियुक्त कर रखा था। सं. १६६२ में सेठ हीरानन्द ने आगरा से सम्मेद शिखर तीर्थ के लिए एक संघ

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

निकाला जिसे शाहजादा सलीम का भी संरक्षण मिला। बादशाह अकबर की मृत्यु के बाद सं. १६६७ में सलीम जब जहांगीर के नाम से दिल्ली के तख्त पर बैठे तब से सेठ हीरानन्द भी आगरा में बस गए। वे कवि थे—उनकी "आध्यात्म बावनी" बहुत प्रसिद्ध ग्रंथ है।

कवि पं. बनारसीदास (सं. १६४३-१७००)

हिन्दी साहित्य की प्रथम आत्मकथा के लेखक पण्डित बनारसी दास आगरा के श्रीमाल गोत्रीय श्रेष्ठि थे। प्रारम्भ में वे लघु खरतर गच्छ एवं यति भानुचन्द्र जी के भक्त थे। उस समय आगरा दिगम्बर समाज का प्रमुछ केन्द्र था। आप उसके अनुरागी हो गए एवं कालान्तर में दिगम्बर समाज के तेरापन्थ सम्प्रदाय के संस्थापक बने। वैष्णव कवियों में जो स्थान तुलसीदास का है, जैन कवियों में वही स्थान बनारसीदास का माना जाता है।

आप वि.सं.१६४३ में जौनपुर में पैदा हुए थे। इनके पितामह मूलदास हिन्दी व फारसी के विद्वान थे। पिता खड़ग सेन जवाहरात का काम करते थे। बनारसी दास भी पिता के काम में हाथ बंटाते थे पर मन से कवि थे। आगरा आपका निवास स्थान था। ये पहले श्रृंगार रस की रचनाएं किया करते थे। उन दिनों आगरा जैन मुनि भानुचन्द्र के आध्यात्मिक आलोक से आलोकित हो रहा था। बनारसी दास भी उनके सत्संग से वंचित न रह सके। १५ वर्ष की उम्र में प्यार व श्रृंगार के १००० छन्द रचने वाले बनारसीदास अपनी दो पत्नियों के निधन से मर्माहत तो थे ही, सम्राट अकबर के निधन ने इनकी जीवन दिशा आध्यात्म की ओर मोड़ दी। आपने अपना । "श्रृंगारिक हजारा" गोमती में प्रवाहित कर दिया एवं वैराग्य प्रधान काव्य रचने लगे। आपकी ५७ स्फुट रचनाएं "बनारसी-विलास" में संग्रहित हैं। "नवरत्न कवित्त " "तेरह काठिया" आदि आपकी प्रसिद्ध रचनाएं हैं। आपकी रचनाएं भावपूर्ण हैं एवं समाज में नीति एवं दया के प्रसार की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती हैं। मौलिक नीति काव्यों के अतिरिक्त आपकी रचना 'नाटक समयसार' धार्मिक समाज में मानस की तरह ही लोकप्रिय हुआ। आपने नाममाला नामक पद्यबद्ध कोश की रचना की।

आपने आचार्य सोमप्रभ (१३वी शदी) की "सुक्ति मुक्तावली" (संस्कृत) का वि.सं.१६९१ में हिन्दी काव्यानुवाद किया जो साहित्य की बेजोड़ कृति है। आपका आत्मचरित्र "अर्द्धकथानक" (सं. १९९८ में रचित) हिन्दी साहित्य का प्रथम आत्म कथा ग्रन्थ माना जाता है। इसमे ओसवाल श्रीमाल एवं अग्रवाल जाति के पूर्व इतिहास की भी झलकियां हैं। पं. बनारसीदास चतुर्वेदी के शब्दों में यह छोटी सी पुस्तक कई सौ वर्षों तक हिन्दी जगत में इनके यशः शरीर को जीवित रखने में समर्थ होगी। बादशाह शाहजहां ने आपको दरबारी सम्मान बख्शा। मानस प्रणेता संत तुलसीदास उनके समकालीन थे एवं उनसे मिले भी थे। सं. १७०० में आप दिवंगत हुफ

कवि जटमल नाहर

डिगंल साहित्य की प्रसिद्ध वार्ता-"गोरा बादल की कथा" के रचयिता ओसवाल जाति के नाहर गोत्रीय सिंबुला ग्राम (कहीं कहीं उन्हें मोरधड़ा वासी भी बताया गया है) के रहने वाले

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्रेष्ठि धरमसी के पुत्र जटमल थे। यह हिन्दी साहित्य में खड़ी बोली का द्वितीय ग्रन्थ रत्न माना जाता है। इसकी रचना वि.सं.१६८० में हुई। इसमें मेवाड़ के महाराणा रत्नसेन महाराणी पद्मिनी एवं गोरा बादल के देश प्रेम एवं बलिदान की ओजस्वी कथा पद्यबद्ध हुई है। ग्रन्थ की उपलब्ध हस्तलिखित प्रतियों में ढूंढाड़ी हिन्दी (राजस्थानी) का गद्य बद्ध अनुवाद साथ में होने से हिन्दी साहित्य के इतिहास लेखकों ने भ्रमवश उसे गद्य ग्रन्थ लिख दिया है। इन्होंने संवत् १६९३ में एक अन्य ग्रंथ 'प्रेम विलास' की रचना की। ये कालान्तर में लाहौर जाकर बस गए। अनेक गजल संग्रह, बावनी, सवैया आदि इन्हीं के रचे माने जाते है।

कवि भगवती प्रसाद भैया

आप ओसवाल जाति के कटारिया गोत्रीय श्री दशरथ साहू के पौत्र और लालजी साहू के पुत्र थे। आप प्रतिभाशाली आध्यात्मिक कवि थे। ये १८वी शदी के हिन्दी के नामी कवियों में गिने जाते थे। पं. नाथूराम प्रेमी ने अपने अमूल्य ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' में बड़ी श्रद्धा से आपका स्मरण किया है। आपकी प्रमुख रचनाएं वि. सं. १७३१ से १७५५ के मध्य लिखी गई। ब्रह्म विलास नामक वृहद ग्रंथ में आपकी ६७ कृतियों का संग्रह है जिनमें अनेक स्वतन्त्र ग्रंथ हैं। आपकी कविता में अलंकारो एवं अनुप्रासों की छटा हिन्दी के रीतिकालीन कवियों की याद दिलाती है।

कवि चेतन विजय

बंगाल से जैन धर्म का अति प्राचीन सम्बन्ध है। भगवान महावीर का यह विहार क्षेत्र रहा है। उनके पश्चात् ताम्रलिप्ति (तामलुक प्रदेश) पेण्डूवर्हनी (पौण्डूवर्धन) आदि अनेक श्रमण शाखाओं के नाम बंगाल से सम्बन्धित रहे हैं। मानभूम और वीर भूम आदि जिलों में बसने वाली जाति का नाम "सराक" मूलतः जैन "श्रावक" का ही रूप है— यह इतिहास कार मानने लगे हैं। यद्यपि महावीर के पश्चात् श्रमण संघ शैव व तांत्रिकों के बढ़ते प्रभाव से तंग आकर भारत के अन्य प्रदेशों में चला गया परन्तु "सराक" जाति में जैन संस्कार अवस्थित रहे।

सतरहवीं सदी के बंगाल में जगत सेठ का प्रभाव बढ़ा और तभी से ओसवालों का वर्चस्व भी। मारवाड, बीकानेर व किशनगढ़ रियासतों से अनेक ओसवाल परिवार मुर्शिदाबाद व अन्य स्थानों पर आकर बसे। इसी समय चेतन विजय नामक एक कवि हुए जिनकी अनेक रचनाएं श्री पूर्णचन्द्र जी नाहर के हस्तलिखित ग्रन्थों के संग्रह में एवं अन्यत्र उपलब्ध हैं। ये रचनाएं वि. सं. १८३० से १८५३ के बीच अजीमगंज में लिखी गई थी। इनकी भाषा राजस्थानी मिश्रित हिन्दी है। इनके जन्म, स्थान, वंश आदि का निश्चित पता नही मिलता किन्तु जैन इतिहासकार एवं पुरातत्ववेता श्री अगरचन्द्र जी नाहटा के अनुसार उनके बंग देशवासी ओसवाल जाति के होने की ही सम्भावना है। वे खरतर गच्छ के आचार्य हीर विजय जी की परम्परा के ऋद्धि विजय जी के शिष्य थे। इनकी रचनाएं आध्यात्म प्रेरित हैं। करीब ६००० श्लोक परिमाण ३११ छोटी बड़ी रचनाओं में "जम्बू चरित्र", "श्रीपाल रास", लघु

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पिंगल, सीता चरित्र, कुण्डलिया, बत्तीसी आदि अनेक सरस काव्य ग्रन्थ हैं। इनकी मृत्यु वि. सं. १८६० के आस-पास हुई।

भंडारी उत्तमचन्द

आपने संवत १८५७ में 'अलंकार आशय' नामक भव्य ग्रंथ की रचना की जो राजस्थान रिसर्च सोसाइटी के भंडार में उपलब्ध है।

भंडारी उदयचन्द

आपने 'साहित्य सार' (शब्दार्थ चन्द्रिका) नामक ग्रंथ की रचना की जो राजस्थान रिसर्च सोसाइटी भंडार में उपलब्ध है।

हरजसराम ओसवाल

आप कुशल छन्द शास्त्री थे। आप द्वारा रचित 'साधु गुण रत्न माला' (संवत १८९४ में रचित) और 'देव रचना' (संवत १८९५ में रचित) ग्रंथों में विविध छन्दों का प्रयोग एवं संकलन अभूत पूर्व है।

कुंभट विनयचन्द

आप धार्मिक वृत्ति के कवि थे। संवत् १९०९ में आपने भगवान के चौबीस स्तवनों की रचना की जो बीकानेर से प्रकाशित हुए। आपके पिता का नाम गोकुलचन्द्र था।

जेठमाल चोरड़िया

आप मारवाड़ी भाषा के मधुर स्तवन रचने में प्रवीण थे। 'जम्बू गुण रत्नमाला रास' संवत १९२० में रचित आपकी प्रसिद्ध कृति है। आप जयपुर निवासी थे।

सुखसम्पतराय भंडारी

शब्द-ब्रह्म की उपासना में लीन रहने वाले भंडारी गोत्रीय श्री सुख सम्पतराय का जन्म भानपुरा (मध्य प्रदेश) में विक्रम संवत १९५० में हुआ। आपके पिता का नाम जसराज जी था। बीस बरस की वय में आपने 'वेंकटेश्वर समाचार' का सम्पादन भार सम्भाला। फिर सद्धर्म प्रचारक (१९७१) 'पाटलीपुत्र' (१९७२) मल्लारि मार्तण्ड (१९७३) नवीन भारत (१९८०) एवं किसान आदि विभिन्न पत्रिकाओं का सम्पादन—प्रकाशन संभाला। आपने विभिन्न विषयों पर लगभग २५ ग्रंथ लिखे जिनकी विद्वानों द्वारा भूरि-भूरि प्रशंसा की गई। लाला लाजपत राय ने आपके भारत दर्शन ग्रंथ की एवं महामना मालवीय जी ने आपके 'तिलक दर्शन' ग्रंथ की भूमिका लिखी थी। आपकी 'राजनीति विज्ञान' पुस्तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा समादृत हुई एवं 'भारत के देशी राज्य' पुस्तक राजस्थान में पाठ्य पुस्तक के रूप में स्वीकृत एवं इन्दौर से पुरस्कृत हुई। आपने जिस 'अंग्रेजी हिन्दी कोष' (२०००० पृष्ठ) की रचना की थी उसे डा. वुलनर, डा. गंगानाथ झा, सर पी. सी. राय एवं डा. राधा कुमुद मुखर्जी ने भारतीय साहित्य का 'अटल स्मारक' कह कर सराहा था।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आप तात्कालीन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के सदस्य थे। सं.१९७७ के स्वतत्रंता आन्दोलन में आपने सक्रिय भाग लिया था। इन्दौर में देशी राज्यों की पहली कांग्रेस की स्थापना का श्रेय भी आपको है।

आपने सं. १९९१ में 'ओसवाल जाति का इतिहास' लिख कर अजमेर से प्रकाशित करवाया। सालों अध्यवसाय व शोध संलग्न रह कर यह भागीरथ कार्य सम्पन्न करने के लिए समाज आपका चिर ऋणी रहेगा। भारत के दूरंदाज प्रदेशों में प्रवासित ओसवाल परिवारों के विवरण संकलन करना आसान काम न था। भंडारी जी की कीर्ति को अक्षुण्ण बनाए रखने वाली उनकी सुपुत्री मन्नू भंडारी हिन्दी की यशस्विनी कथाकार है। उनके पति राजेन्द्र यादव ने हिन्दी कथा को नये आयाम दिए है।

लाला ठाकुरदास मुन्हनी

स्यालकोट (पाकिस्तान) के सोहदरा नगर में भाबडा-ओसवालों के अनेक घर थे। उनमें मुन्हनी गोत्रीय लाला जौहरीशाह का परिवार भी था। जौहरीशाह के प्रपौत्र लाला ठाकुरदास का जन्म गुजरानवाला में वि.सं.१८८० में हुआ। आप मुनि बूटेराय एवं जैनाचार्य विजयानन्द सूरि के समकालीन थे। आप जैनागमों एवं जैन दर्शन के प्रौढ़ विद्वान थे। आपने बाल ब्रह्मचारी रह कर धर्म की सेवा की। उन दिनों आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द ने "सत्यार्थ प्रकाश" नामक ग्रंथ की रचना की थी जिसके १२ सम्मुलास में उन्होंने जैन धर्म एवं सिद्धांतों की अनुचित, निराधार व कटु आलोचना की थी। आ. विजयानन्द सुरि ने उसके संदर्भ में "आज्ञान-तिमिर-भाष्कर" ग्रंथ की रचना की एवं स्वामी दयानन्द को समुचित सैद्धान्तिक उत्तर दिया। आचार्य जी ने स्वामी जी को शास्त्रार्थ के लिए भी ललकारा। लाला ठाकुरदास ने भी स्वामी दयानन्द से शास्त्रार्थ करने के अनेक प्रयास किए एवं इसी हेतु उनके पीछे-पीछे लाहौर, अमृतसर, दिल्ली, जोधपुर तक गए। पंजाब एवं राजस्थान में स्वामी जी का बड़ा प्रभाव था एवं उन्हें शास्त्रार्थ के लिए चुनौती देना कम हिम्मत का काम नही था। अन्ततोगत्वा स्वामी जी के जोधपुर में अचानक देहावसान से शास्त्रार्थ न हो सका। लालाजी निराश होकर लौट आए। गुजरानवाला आकर लालाजी ने स्वामी जी के साथ इस संम्बध में हुए पत्र व्यवहार को पुस्तकाकार प्रकाशित करवाया। अपने अंतिम समय में वे आत्म साधना में लीन रहे एवं वि. सं. १९७० में उनकी मृत्यु हुई।

पंजाब में जब सत्यार्थ प्रकाश के आक्षेपों को लेकर श्वेताम्बर मूर्तिपूजक समाज एवं सनातन धर्मी हिन्दू समाज में ठन रही थी तो कहते हैं ढूंढक मतानुयायी श्वेताम्बर समाज ने सनातन धर्मी समाज का साथ दिया। इसका कुल कारण मुनि आत्माराम जी का ढूंढ़क मत छोड़कर मूर्तिपूजक संघ में दीक्षित होने से पैदा हुई ईर्ष्या थी। अनेक जगह जैनों की जान-माल जोखम पूर्ण हो गई। अन्ततोगत्वा— स्वामी दयानन्द के देहावसान से यह विवाद धीरे-धीरे अपने आप शांत हो गया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

कवि लाला खुशीराम दुग्गड़

विक्रम की बीसवीं शताब्दी में पंजाब जैन श्वेताम्बर मूर्ति पूजक संघ की प्रभावना में ओसवालों का बड़ा योगदान रहा। आचार्य विजयानन्द सूरि के समकालीन-गुजरानवाला (पाकिस्तान) निवासी बीसा ओसवाल दुग्गड गोत्रीय श्रावक खुशीरामजी उच्चकोटि के कवि थे। शाह नानकचन्द के वंशधर शाह दित्तामल सोना चाँदी (सर्राफा) का व्यवसाय करते थे। आपके पुत्र खुशीराम जी जैन दर्शन और वांगमय के उद्भट विद्वान थे। आपने सैकड़ो रचनाये हिन्दी एवं पंजाबी भाषा में की। आपके रचित स्तवन, बारहमासा, लावणी व पद पंजाब में बहुत लोकप्रिय हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से भी वे बड़े महत्व के हैं। उनमें तात्कालीन धार्मिक संघर्षो, प्रमुख श्रावकों, पंजाब में विचरण करने वाले साधु साध्वियों, सामाजिक व धार्मिक उत्सवों का मार्मिक चित्रण हुआ है। छंद अलंकार, राग रागनियों की दृष्टि से वे उत्कृष्ट हैं। अब तक आपका कोई संकलन प्रकाशित नहीं हुआ है। वि. सं. १९८३ में गुजरानवाला में आपका देहांत हुआ।

आपके वंशज पाकिस्तान बनने के बाद आम्बाला एवं लुधियाना में बस गए है।मध्य एशिया और पंजाब में "जैन धर्म" नामक इतिहास ग्रंथ के लेखक प. हीरालाल दुग्गड भी शाह नानक चन्द के वंशधर हैं।

मुनि ज्ञान सुन्दरजी

ओसवाल जाति के उत्पति समय को तर्क पूर्ण आधार देने वाले मुनि ज्ञान सुन्दर जी का जन्म बिसलपुर (मारवाड) में संवत १९३७ में वैद मुहत्ता गोत्रीय शाह नवलमलजी के घर हुआ। बाल्यकाल से ही आप स्थानकवासी साधुओं की सेवा उपासना में संलग्न रहने लगे। १७ वर्ष की आयु में आपका विवाह हुआ। किन्तु आपका वैरागी मन गृहस्थी से न बंध सका। संवत १९९३ में आपने लालजी महाराज से दीक्षा ग्रहण की।

तात्कालीन लोंका शाह द्वारा उद्बोधित मूर्तिपूजा विरोधी धारा के विपरीत गहरी शोध से उसे शास्त्र सम्मत सिद्ध करने वाले मूर्ति पूजा के पक्षधर मुनि ज्ञान सुन्दरजी ने ओसवाल समाज के इतिहास को भी ठोस आधार दिए। उनसे पूर्व यति श्रीपाल जी (जैन सम्प्रदाय शिक्षा) एवं यति रामलालजी (महाजन वंश मुक्तावली) ने उपासरों में उपलब्ध विभिन्न गोत्रों की वंशावलियां संजों कर ओसवाल इतिहास प्रस्तुत करने का प्रयास अवश्य किया था किन्तु गोत्रों की उत्पत्ति विषयक कथानकों में अतिशयोक्ति एवं कल्पनापूर्ण वैविध्य डालकर उन्हें बौद्धिक रूप से अग्राह्य बना दिया था। मुनि ज्ञान सुन्दर जी ने विभिन्न गोत्रों की वंशावलियों का शास्त्रीय आधार ढूंढ़ा। उन्होंने पुरातत्व वेत्ता एवं इतिहासकारों की ओसवाल उत्पत्ति सम्बंधी चुनौती को स्वीकार कर समाज की वीरात ७० वें वर्ष की उत्पत्ति —की धारणा को अपनी शोध से तर्क पूर्ण बना दिया। उनकी ओसवाल संस्थापक रत्नप्रभसूरी के पार्श्व संतानीय छठे पट्टधर एवं उपकेश गच्छ जनक होने की प्रस्थापना किसी भी तरह नकारी नहीं जा सकती। जैन शास्त्रों एवं इतिहास के क्षेत्र में आपका अध्ययन अगाध था। आपने १७१ पुस्तकें लिखी व सम्पादित की। "जैन जाति महोदय" जैसा विशाल शोध ग्रंथ लिखकर आपने ओसवाल समाज को उपकृत किया है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री परमानन्द भाई कापड़िया

धार्मिक क्रांति के प्रणेता श्री परमानन्द भाई का जन्म भावनगर के गुजराती ओसवाल कुल के कापड़िया गोत्रीय सुसंस्कृत जैन परिवार में १८ जून १९९३ को हुआ। श्री कापड़िया को उनके क्रांतिकारी विचारों के कारण जैन श्वेताम्बर मूर्ति पूजक संघ ने बहिष्कृत कर दिया था। पेशे से वकील और जौहरी होते हुए भी आपका मन उनमें रमा नहीं। तात्कालीन धार्मिक विसंगतियों के विरूद्ध जिहाद ने आपको समाज का मार्टिन लूथर बना दिया। सन् १९१० में जैन समाज की कलाविहीन जीवन चर्या, बालदीक्षा, एवं देव-द्रव्य के खिलाफ आपने जगह-जगह सभाएं आयोजित की। वे जल्दी ही युवा जैन समाज के नेता बन गए। सामाजिक एवं धार्मिक रूढ़ियों के पोषक आचार्यगण इससे बौखला उठे। परमानन्द भाई ने जैन धर्म को नया वैज्ञानिक आयाम दिया। धार्मिक अन्धविश्वासों का साधुचर्या से कोई वास्ता नहीं— इसी उद्घोष के साथ-सन् १९२९ में परमानन्द भाई ने बम्बई जैन युवक संघ की स्थापना की। सन् १९३१ में उन्होने 'प्रबुद्ध जैन' का सम्पादन सँभाला जो १९५३ से 'प्रबुद्ध जीवन' में रूपान्तरित हुआ। सन् १९३२ से उन्होनें 'पर्युषण व्याख्यान माला' का प्रारम्भ किया जो निरंतर चालीस वर्षों तक जैन समाज की अन्तश्चेतना जगाती रही। वे शीघ्र ही सारे जैन समाज के बिना किसी सम्प्रदायिक भेद-भाव के, प्रेरणास्त्रोत बन गए। वे अंतिम समय तक रुढ़िवादिता, अन्धविश्वास एवं धर्मांधता के खिलाफ सजग प्रहरी बने रहे। सन् १९५४ में उनका विचार दर्शन "सत्यम शिवम सुन्दरम" नाम से प्रकाशित हुआ। वे विचार स्वातंत्र्य के पक्षधर थे। १७ अप्रैल १९७१ को ओसवाल समाज का यह मनीषी दिवंगत हुआ।

प्रज्ञाचक्षु पंडित सुख लाल संघवी

आधुनिक भारत के ज्ञानाकाश के उज्जवल नक्षत्र थे पंडित सुखलालजी संघवी। आपका जन्म ओसवाल वंश के संघवी गोत्र में गुजरात के एक छोटे से ग्राम लिमली में ८ दिसम्बर १८८० को हुआ। पिता संघजी भाई धाकड़ (श्री माली) छोटे मोटे व्यवसायी थे। ७ वर्ष के थे तभी से आप ने शिक्षा छोड़ दूकान पर बैठना शुरू कर दिया। १५ वर्ष की अवस्था में विवाह सम्बंध तय हो गया, परन्तु नियति को कुछ और ही मंजूर था। उन्हें भयंकर चेचक निकली जिसमें उनकी दोनो आँखे जाती रही। अब तो विवाह करने का प्रश्न ही नहीं रहा, न दूकान पर बैठ सकते थे। यही स्थिति उनके लिए वरदान बन गई। शुरू में आपका ध्यान अवधान विद्या एवं मंत्र-तंत्र सिद्धि की ओर गया परन्तु जल्दी ही उससे विमुख हो गए एवं अन्तर्प्रज्ञा की ओर झुके। दृढ़ संकल्प शक्ति ने गहन अंधकार को ज्योतिर्मय कर दिया।

आपने ज्ञान की खोज में बनारस, मिथिला और आगरा जाकर संस्कृत और प्राकृत का गहन अध्ययन किया एवं न्यायाचार्य की उपाधि अर्जित की। तभी प. बालकृष्ण मिश्र बनारस ओरिएंटल कालेज के प्रिंसिपल नियुक्त हुए एवं पंडितजी वहाँ भारतीय वांगमय एवं जैन दर्शन के आचार्य बने। तदुपरांत गाँधी जी के आह्वान पर आपने गुजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद में सेवारत रहकर जैनदर्शन के अभूतपूर्व ग्रंथ 'सन्मति तर्क' का सम्पादन किया। डा. हरमन जेकोबी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ने इसे अद्वितीय ग्रंथ बताया है। सन् १९३३ से पं. मदनमोहन मालवीय के अनुरोध पर आप बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी के दर्शन विभाग के प्राचार्य बने जहाँ १९४४ तक आपने दर्शन साहित्य के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किए। आपने करीब २६ महत्वपूर्ण ग्रंथों का सम्पादन किया जिनमें सिद्ध सेन दिवाकर का 'न्यायावतार' उमास्वाति का 'तत्त्वार्थ सूत्र' और हेमचन्द्राचार्य का 'प्रमाण मीमांसा' मुख्य हैं। अनेकानेक शोध प्रबंध आपके निर्देशन में लिखे गए।

वे क्रांति द्रष्टा एवं सत्य शोधक थे इसीलिए पाश्चात्य मनीषियों ने उन्हें ऋषि तुल्य माना। १९५७ में डा. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में आपका अभिनन्दन किया गया। सन १९५६ में गुजरात यूनिवर्सिटी ने आपको D. Lit. की मानद उपाधि से सम्मानित किया। सन् १९६७ में सरदार पटेल यूनिवर्सिटी वल्लभविद्या नगर, गुजरात ने भी D. Lit. की उपाधि से आपका सम्मान किया। आपके निबंधों एंव शोध प्रबंधों का संग्रह 'दर्शन और चिन्तन' नाम से तीन खण्डों में प्रकाशित हुआ है। डा. वासुदेव शरण अग्रवाल के शब्दों में वे महाप्रज्ञ थे। २ मार्च १९७८ के दिन अहमदाबाद में पंडितजी ने इस संसार से विदा ली। भारतीय दर्शन-संसार एवं ओसवाल समाज इस प्रज्ञा चक्षु मनीषी को इनकी अप्रतिम सेवाओं के लिए हमेशा याद रखेगा।

पंडित बेचरदास डोसी

बीसवीं सदी के जैन दर्शन की क्रांति द्रष्टा त्रयी में एक पंडित बेचरदासजी डोसी हैं(अन्य मुनि जिन विजयजी एवं पं. सुखलालजी संघवी गिने जाते है)। आपका जन्म ओसवाल कुल के डोसी गोत्रीय अत्यंत गरीब घर में सन् १९०२ में हुआ। दस वर्ष की उम्र में ही पिता का देहांत हो गया। माँ मेहनत मजदूरी करके घर खर्च चलाती। आप भी माँ का हाथ बंटाने उसके साथ जाते। तभी भाग्य ने पलटा खाया। गुजरात के प्रसिद्ध जैन मुनि विजय धर्म सूरि की नजर आप पर पड़ी— वे जैन दर्शन के शिक्षण के लिए चुन लिए गए। मंडल एवं पालीताना में कुछ महीने पढ़ने के बाद आप काशी चले गए। वहाँ जैन दर्शन का विशद अध्ययन किया एवं कलकत्ता संस्कृत कालेज की स्नातक परीक्षा पास की। काशी में अध्ययनरत रहते हुए 'श्री यशो विजय जैन सीरीज' का सम्पादन किया। उनका यह अध्यवसाय पुरस्कृत भी हुआ, अनेक स्कालरशिप मिले। प्राकृत एवं अर्धमागधी भाषाओं के अध्ययन में आपकी विशेष रुचि थी। श्री लंका जाकर आपने पाली भाषा में भी महारत हासिल की एवं बौद्ध दर्शन का अध्ययन किया।

इन्हीं दिनों महात्मा गांधी के क्रांतिकारी विचारों का प्रभाव आप पर पड़ा। सन् १९१९ में बम्बई नगर में "जैन शास्त्रों के भ्रष्ट रूपान्तरों का समाज पर नुक्शान कारक प्रभाव" विषय पर हुए आपके व्याख्यानों ने जैन समाज में हलचल मचा दी। धर्म के नाम पर चल रहे पाखण्ड के भंडाफोड़ से महन्त व आचार्य बौखला गए एवं आपको समाज बहिष्कृत कर दिया गया। पंडितजी थे कि डटे रहे-हार न मानी। उन्हें खतरनाक परम्पराघाती एवं नास्तिक के नाम से गालियाँ दी गई। परन्तु वे जैन युवकों एवं विचारकों के चहेते बन गए। बहुतों ने उन व्याख्यानों से प्रेरणा ग्रहण की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सन् १९२१ में आपने गुजरात विद्यापीठ में अध्यापन शुरू किया। वहाँ काका कालेकर, जे. बी. कृपलानी, किशोरीलाल मशरूवाला एवं मुनि जिन विजय जी के सान्निध्य ने आपको क्रांति द्रष्टा बना दिया। उन्हीं दिनों प्रज्ञाचक्षु प. सुखलालजी के साथ मिलकर आचार्य सिद्ध सेन दिवाकर के अभूतपूर्व प्राकृत ग्रंथ 'सन्मति तर्क' का सम्पादन किया। तभी गांधीजी का प्रसिद्ध 'डांडी सत्याग्रह' शुरू हुआ। गांधी जी के आग्रह पर 'नव जीवन' पत्र के सम्पादन का भार आपने सम्भाला, गिरफ्तार हुए एवं नौ महीन तक जेल में बंद रहे। वहाँ से छूटकर करीब ४-५ वर्ष आपने बड़े आर्थिक संकट में गुजारे। अंत में अहमदाबाद के एस. एल. डी. आर्ट्स कालेज में अर्धमागधी भाषा के लेक्चरर नियुक्त हुए। सन् १९४० में बम्बई यूनिवर्सिटी के तत्त्वाधान में गुजराती भाषा के विकास पर हुई भाषण-श्रृखंला से आपने विद्वत् मंडली में बहुत नाम कमाया। आप पचास से भी अधिक महत्वपूर्ण ग्रंथों का सर्जन-सम्पादन कर चुके हैं। राष्ट्रपति ने संस्कृत भाषा की सेवा के लिए आपको सम्मानित किया है।

श्री अगरचन्द नाहटा

श्री अगरचन्द्र नाहटा

जैन शासन के साधना शील अन्वेषी, बहुमुखी प्रतिभा के धनी ओसवाल वंश एवं नाहटा गोत्र के सरस्वती समुपासक श्री अगरचन्दजी नाहटा का जन्म बीकानेर में संवत् १९६७ चेत्र कृष्णा चतुर्थी को हुआ। स्कूली शिक्षा नहीं के बराबर हुई। जल्द ही कलकत्ते की गद्दी में व्यापार सीखने लगे। संवत् १९८४ में श्री जिन कृपाचन्द सूरि की प्रेरणा से आप धार्मिक साहित्योन्मुखी हुए एवं प्राचीन लिपि और ग्रंथों के अनुशीलन में प्रविष्ट हुए। धीरे-धीरे ताड़ पत्र उत्कीर्णित ग्रंथों का संग्रह करने लगे। हस्तलिखित ग्रंथों की खोज में आप अनेक ज्ञान भंडारों एवं ग्रंथागारों का चक्कर लगाने लगे एवं घन्टों वहाँ निमग्न रहने लगे। उनके इस कार्य में सहयोगी बने भ्रातृपुत्र श्री भंवर लालजी नाहटा। कठिन परिश्रम से ग्रंथों का अमूल्य भंडार आपने संग्रहित किया। ग्रंथों के अलावा प्राचीन चित्रों, मूर्तियों, सिक्कों, सीलों का भी अलभ्य संकलन किया। इसके लिए आपको कहाँ नही जाना पड़ा—एक जुनून सर पर सवार था—श्मशानों, ध्वस्त खंडहरों में भूखें प्यासे, चिलचिलाती घूप में मीलों पैदल सफर कर पहुँचते और मंजिल पर मनचिंती सामग्री पाकर उल्लसित हो उठते। आज उनका श्री अभय जैन ग्रंथालय और श्री शंकरदान नाहटा कला भवन विश्व के प्रथम श्रेणी के ग्रंथालयों में हैं जहाँ तीन हजार दुष्प्राप्य चित्र, सैकड़ों सिक्के, हजारों मूर्तियां, पचास हजार दुर्लभ हस्तलिखित एवं पचास हजार मुद्रित ग्रंथ संग्रहित है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपने अनेक पत्रिकाओं का सम्पादन किया यथा—राजस्थानी, विश्वम्भरा, मरू भारती, अन्वेषणा, वैचारिकी आदि। अनेक स्मारक ग्रंथों का सम्पादन आपने किया है जिनमें मुख्य हैं—राजेन्द्र सूरि स्मारक ग्रंथ। आपके पाँच हजार से अधिक शोध प्रबंध विभिन्न भारतीय पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए है। संवत १९८६ से अब तक आपने साठ से अधिक महत्वपूर्ण ग्रंथों का सम्पादन किया हैं जिनमे मुख्य है युग प्रधान श्री जिन चन्द्र सूरि, बीकानेर जैन लेख संग्रह, ज्ञान सार ग्रंथावली, रत्नपरीक्षा, धर्म वर्द्धन ग्रंथावली, सीताराम चौपाई आदि। समाज ने आपके कृतित्व का समुचित सम्मान कर आपको सिद्धांताचार्य, जैन इतिहास रत्न विद्यावारिधि, संघ रत्न, साहित्य वाचस्पति आदि उच्चस्तरीय उपाधियों से विभूषित किया। सरस्वती के इस वरद पुत्र का स्वर्गवास संवत् २०४० में हो गया। आपके भ्रातृ-पुत्र श्री भंवरलाल जी नाहटा सरस्वती उपासना की वह मशाल अभी तक थामे हुए हैं।

जस्टिस चाँदमल लोढ़ा

आपका जन्म जोधपुर में सन् १९१८ में हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा जोधपुर में ही हुई। सन् १९४० में आपने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी से एल.एल.बी. की परीक्षा उत्तीर्ण की (प्रथम श्रेणी में प्रथम) एवं तीन स्वर्णपदक प्राप्त किए। वाद विवाद प्रतियोगिताओं में आपकी सानी नहीं थी—आपने अनेक स्वर्ण पदक एवं ईनाम जीते।सन् १९४० से १९६९ तक आपने जोधपुर में कानून का अध्यापन एवं प्रेक्टिस की। आप सफल वकीलों में से एक थे। सन् १९५६ में उन्हें भारतीय विधि आयोग का सदस्य बनाया गया। १९६९ में वे राजस्थान हाई कोर्ट के जज बने। वे सन् १९५६ से ही राजस्थान बार कौंसिल के मानद मंत्री रहे। सन् १९५७ से वे रोटरी क्लब की विभिन्न प्रवृतियों से अनेक सम्मानित पदों पर जुड़े रहे। विभिन्न सार्वजनिक एवं समाज हितकारी कार्यों में सहयोग कर आपने यश अर्जित किया।

श्री कस्तूरचन्द ललवानी

सरस्वती मंदिर के मौन साधकों में श्री कस्तूरचन्द ललवानी उल्लेखनीय है। वे प्रख्यात अर्थशास्त्री, दार्शनिक, इतिहासवेत्ता एवं अधिकारी जैन विद्वान थे। श्री ललवानी का जन्म राजशाही (बंगलादेश) में संवत १९७८ में हुआ। व्यवसायी परिवार में जन्म लेकर भी संवेदनशीलता एवं दयालुता उन्हें अपने पिताश्री से विरासत में मिली। निरन्तर पाँच वर्ष तक एकाहारी रहकर पिता ने बच्चों को पढ़ाया, लिखाया। वे मेधावी छात्र थे। मैट्रिक से लगातार एम. ए. तक सभी परीक्षाऐं प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। रजत पदक एंव छात्रवृतियां मिली। संवत २००० से उन्होंने अध्यापन प्रारम्भ किया। संवत २००२ में आपका विवाह मुर्शिदाबाद के सम्पन्न घराने की कन्या कमला शामसुखा से हुआ। पूना कलकत्ता, दिल्ली आदि नगरों की सर्वोच्च शिक्षण संस्थाओं में अध्यापन कर अन्ततः सं २०११ में वे खड़गपुर के भारतीय टेकनालाजी संस्थान से जुड़े एवं सम्पूर्ण जीवन यहीं बिताया। सं. २०१७ में आपने अमेरीका एवं यूरोपीय देशों की यात्रा की एवं विभिन्न जगहों में भाषण दिए। सं. २०३७ में अमस्टरडाम (नीदरलैंड) में होने वाली अन्तर्जातीय कांग्रेस आफ लीगल साईन्स के अधिवेशन में आप आमंत्रित होकर विदेश गए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

महावीर स्वामी की जीवनी निराले ढ़ंग से लिखकर उन्हें एक महामानव के रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय ललवानी जी को ही है। भगवती सूत्र जैसे विशाल ग्रंथ का अंग्रेजी अनुवाद कर उन्होंने एक खासी कमी पाट दी। दस वैकालिक, उत्तराध्ययन एवं कल्पसूत्र आदि आगम ग्रंथों के अंग्रेजी में अनुवाद कर देना ललवानी जी जैसे श्रमनिष्ठ अध्येता का ही काम था। भगवत गीता का सरल एवं सुललित बंगला पद्यानुवाद उनके संवेदनशील एवं काव्यात्म होने का परिचायक है। उनकी सबसे बड़ी सामाज को देन थी "जैन जरनल" का सम्पादन। जैन भवन के संरक्षण में उनका यह प्रयोग देश विदेश में जैन संस्कृति की सुगंध पहुँचाने वाला स्तुत्य प्रयास था।

भारतीय इतिहास को ललवानीजी ने एक नई दृष्टि से लिखा एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि प्रदान की। सम्पूर्ण भारतीय इतिहास को तीन खंडों में विभाजित कर हिन्दू, मुस्लिम एवं पाश्चात्य संस्कृतियों के परस्पर आदान प्रदान का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण इस विवेचन की आधारशिला है। दुर्भाग्य से पहले दो खंड ही प्रकाशित हुए, तीसरा खंड अभी अप्रकाशित ही है। उन्होंने प्रसिद्ध मनीषी जे. एम. केइनस की "जनरल थ्योरी" का भी बंगला अनुवाद किया जिसे संवत २०३९ में वेस्ट बंगाल बुक बोर्ड ने प्रकाशित कर अपने को धन्य माना। अर्थशास्त्र एवं भारतीय अर्थ तंत्र से सम्बधित उनके करीब २८ ग्रंथ प्रकाशित हुए।

संवत २०३९ में अध्यापन से अवकाश ग्रहण करने के बाद उन्होने सोचा था अब सारा समय वे मौलिक साहित्य सृजन में लगाऐंगे। किन्तु संवत २०४० में हृदय रोग से ऐसे आक्रान्त हुए कि फिर स्वस्थ न हो सके। उसी वर्ष उनका देहांत हुआ। जैन भवन के मौन साधक, कलाकार एवं जैन जरनल के वर्तमान सम्पादक श्री गणेश ललवानी उन्हीं के अनुज हैं।

जस्टिस श्री रणधीर सिंह बछावत

बंगाल के सांस्कृतिक एवं बौद्धिक क्षितिज को अपनी मेधा के आलोक से आलोकित करने वाले ओसवालों में श्री रणधीर सिंह बछावत अग्रगण्य है। एक विधि वेत्ता एवं कलकत्ता उच्च न्यायालय और दिल्ली उच्चतम न्यायालय के माननीय जज के नाते अपने महत्वपूर्ण निर्णयों के लिए वे हमेशा याद किए जाते रहेंगे।

सन् १९०७ में जन्मे श्री बच्छावत की प्रारम्भिक शिक्षा कलकत्ता में हुई। यही से उन्होनें एम. ए. किया। वे एक मेधावी छात्र थे। उन्होने अनेक पारितोषिक जीते जिनमें बंकिम बिहारी गोल्ड मेडल एवं सर्वेश्वर पूर्णचन्द्र गोल्ड मेडल मुख्य थे। तात्कालीन बंगाल में मेधावी छात्रों के लिए इंगलैड जाकर बैरिस्टर बनना सन्मान जनक माना जाता था। श्री बच्छावत भी इंगलैड गए एवं सन् १९३१ में लंदन यूनिवर्सिटी से एल.एल.बी की डिग्री ली और बैरिस्टर बनकर भारत लौटे। कलकत्ता उच्च न्यायालय में प्रेक्टिस शुरू करते ही चन्द महीनों में ही वे अपनी विश्लेषण की क्षमता एवं अभिव्यक्ति की सरलता के कारण लोकप्रिय हो गए। व्यवसायिक न्याय विधि के वे विशेषज्ञ माने जाते थे। कुछ ही वर्षों में उनकी प्रेक्टिस आसमान छूने लगी।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सन् १९५० में उनकी इस विशेषज्ञता को मान्यता मिली और वे कलकत्ता उच्च न्यायालय के जज बना दिए गए। मात्र ओसवाल ही नही समूची मारवाड़ी जातियों में वे पहले व्यक्ति थे जिन्हें बंगाल में यह सम्मान हासिल हुआ। अपनी लाखों की प्रेक्टिस छोड़कर सामाजिक कर्त्तव्य को सर्वोपरि मानते हुए जजशीप स्वीकार करना उनके न्याय-बोध का परिचायक है। अपने निर्णयों में तथ्यपरक निष्पक्षता के कारण वे हमेशा याद किये जांएगें। सन् १९६४ में वे उच्चतम न्यायालय दिल्ली के माननीय जज मनोनीत हुए। उनमें तथ्यों के जंगल में मुख्य बात तत्काल ढूँढ लेने की अद्भुत क्षमता थी। इसी कारण बिना तैयारी आने वाले वरिष्ठ वकील भी उनसे सकपकाते थे। वे हमेशा साफ और सत्य बात पसन्द करते थे एवं जल्द ही तथ्यों के हार्द्र तक पहुँच कर मूल प्रश्न पर आ जाते थे जिस कारण बाल की खाल खींचने वाले विधि वेत्ताओं की एक नहीं चल पाती थी। उनके अनेक निर्णय विधि जगत के मील के पत्थर माने जाते हैं।

सन् १९६९ में उच्चतम न्यायालय से अवकाश लेने के बाद भी वे सक्रिय रहे। भारत सरकार ने उनकी निष्पक्ष निर्णायकता का सम्मान करते हुए उन्हें "गोदावरी जल विवाद ट्रिब्यूनल" का चेयरमेन नियुक्त किया। इस विवाद में उनके निर्णय की सभी पक्षों ने सराहना की। सन् १९७९ में विवाद पर अपना निर्णय देने के बाद वे कलकत्ता आकर रहने लगे। आपने लॉ ऑफ आर्बिट्रेशन पर एक ग्रंथ लिखा जिसे विधि न्यायालयों में बड़े सम्मान से उद्धृत किया जाता हैं। सन् १९८६ की १२ जून को उनका देहांत हुआ। उन्होंने अपनी सौरभ से विधि जगत को ही नहीं महकाया, ओसवालों की गौरवशाली परम्परा को भी अक्षुण्ण रखा।

श्री इन्द्र दूगड़

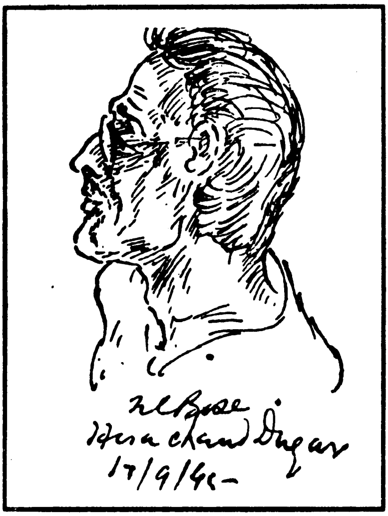

शांतिनिकेतन में आचार्य नन्दलाल बसु द्वारा अंकित श्री हीराचन्द दूगड़ का रेखाचित्र

क्षात्र तेज को चित्र फलक पर रूपायित करने वाले लब्ध प्रतिष्ठित चित्रकार श्री इन्द्र दूगड़ ने ओसवाल समाज को एक अछूते एवं अभिनव क्षेत्र में महिमा मंडित किया। आदि काल से ओसवाल श्रेष्ठियों ने कला व संस्कृति के पुजारियों को भरपूर आश्रय दिया था किन्तु स्वयं तूलिका, रेखाओं और रंगों से अरूप की अभिव्यंजना एवं अभ्यर्थना को समर्पित हो जाने वाले इन्द्र बाबू के समान कला साधक गिने चुने ही हुए है।

मुर्शिदाबाद जिला का जियागंज अंचल जगत सेठों के समय से सुविख्यात रहा। श्री इन्द्र दूगड के पूर्वज़ दो-ढाई सौ वर्ष पूर्व राजलदेसर (राजस्थान) से आकर यहाँ बस गए। पिता श्री

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री इन्द्र दूगड़

हीराचन्द्र दूगड़ (जन्म-संवत १९५५) पुश्तैनी व्यवसाय छोड़ कर कला की ओर आकर्षित हुए। कलकत्ता आर्ट स्कूल में उत्तीर्ण होकर शांति निकेतन चले गए। वहाँ आचार्य नन्दलाल बसु के निर्देशन में चार-पाँच साल कला भवन में प्रशिक्षण ग्रहण किया। तभी पारिवारिक समस्याओं से घिरे हीराचन्दजी को जियागंज लौटना पड़ा। आते ही माँ का दोहान्त हो गया। चन्द महीनों बाद ही तीन छोटे बच्चों को छोड़कर पत्नि चल बसी। इन मार्मिक आघातों से वे तिल मिला उठे। रोजगार के लिए तूलिका और रंग बक्शे में बन्द कर देने पड़े। बीस वर्षों तक उन्होंने तूलिका को हाथ नही लगाया। उनके जीवन के अंतिम दस वर्ष एक कलात्मक चेतना के ज्वार से उद्वेलित रहे। इस काल में उन्होंने बहुत महत्वपूर्ण चित्रों का सृजन किया। अपने गुरू श्री ईश्वरीप्रसाद वर्मा से सीखी मिनियेचर शैली में हाथी दाँत पर उन्होंने अद्भुत चित्रों का निर्माण किया। राजगृह के प्राकृतिक एवं आध्यात्मिक सौन्दर्य से अभिभूत चित्रों की एक श्रृंखला ही रच डाली। संवत् २००८ में वे जैन तीर्थ स्थल पालिताना गए। तीर्थ के भव्य सौन्दर्य को रूपायित करते वहीं मात्र ५२ वर्ष की अवस्था में उनका अकस्मात देहांत हो गया। उनके बनाए चित्र प्रकृति के सूक्ष्म चित्रांकन, नारी सौन्दर्य के अंकन एवं भावाभिव्यञ्जना में बेजोड़ है।

इन्हीं हीराचन्दजी के सुपुत्र थे श्री इन्द्र दूगड़। इन्द्र बाबू का जन्म संवत् १९७७ में हुआ। कल्पनाशील मन, तूलिका और रंग उन्हें विरासत में मिले। पिता की देखरेख में चित्रांकन प्रारम्भ हुआ। प्रकृति से उन्हें प्रेम था। धीरे-धीरे उनकी चित्र शैली में निखार आता गया। संवत १९९६ में रामगढ़ कांग्रेस अधिवेशन में स्थल एवं मंच की साज-सज्जा के लिए चार कलाकार आमंत्रित किये गये इनमें इन्द्र बाबू भी थे। उनके बनाए बिहार के प्राचीन इतिहास सम्बंधी चित्रों ने प्रथम बार कला रसिकों की दृष्टि आकृष्ट की। संवत २००३ में राजगिर के विस्तृत प्रांतर, प्रकृति छटा और इतिहास बोध से अभिभूत पिता और पुत्र दोनों ने तूलिका सम्भाली और अनेक चित्रों का सृजन किया। जहाँ हीराचन्द जी के चित्रों में सूक्ष्म रेखाओं एवं स्निग्ध रंगों का समावेश था, इन्द्र बाबू के चित्र अधिक मुखर और त्रिमात्रिक (थ्री डाई मेन्सनल) आभाष युक्त थे। आधुनिक निसर्ग चित्रकारों की नामावली में तभी से इन्द्र बाबू का नाम जुड़ा।

संवत २००६ में जयपुर में कांग्रेस नगर सुसज्जित करने एवं संवत २०१३ में अमृतसर में हुए कांग्रेस अधिवेशन में मंच अलंकृत करने के लिए भी इन्द्र बाबू को आमंत्रित किया गया। यूनेस्को के तत्वाधान में संवत २००३ में पेरिस में हुई आधुनिक चित्रकला प्रदर्शनी में उनके

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

चित्र प्रदर्शित हुए। संवत २०२१ में पश्चिमी जर्मनी के विभिन्न नगरों में उनके ८० चित्रों की एकल प्रदर्शनी लगी। जैन मंदिर, ग्रांड होटल, दिल्ली के संसद भवन आदि विभिन्न स्थलों पर उनके भित्ति चित्र अंकित है। संवत २०३८-३९ में वे पश्चिम बंगाल की नृत्य नाटक संगीत व चारूकला अकादमी द्वारा पुरस्कृत किए गए। संवत २०४३ में संगीत श्यामला के वार्षिक पुरस्कार द्वारा उन्हें सम्मानित किया गया।

इन्द्र बाबू ने राजस्थान के जनजीवन के असंख्य चित्र बनाए। उनमें रंग बहुल साज-सज्जा एवं वर्ण सुषमा का सौन्दर्य है। शिल्पगत वैशिष्ठ्य के अलावा उनका सामाजिक एवं नृतात्विक मूल्य है। प्रसिद्ध अंग्रेज चित्रकार सर रसेल फ्लीटंस, फ्रेंक ब्रैगुइन एवं आगस्टस जॉन उन्हें देखकर मुग्ध हो गए। साधारणतः वे टेम्पेरा व वास पद्धति से चित्र अंकित करते थे किन्तु कहीं कहीं तेल रंगों का भी व्यवहार किया है। संवत २०३२-३३ में इन्द्रबाबू ने विभिन्न ऋतुओं के आगमन में गंगा के रूप परिवर्तन से अभिभूत हो अनेक चित्र बनाए। ये चित्र उनके शिल्प जीवन की महत्तम कीर्ति है। संवत २०३९ में उन्होंने कश्मीर के दृश्य-सौन्दर्य से प्रेरित हो शिल्प सृजन किया। इस चित्रमाला में उन्होंने अत्यंत सूक्ष्म भाव से यथावत रंगों के प्रयोग द्वारा प्रकृति के इन्द्रिय लब्ध रूप को उद्घाटित किया। दर्शको को मंत्र मुग्ध कर देने वाले इन चित्रों को सदरे रियासत डा. कर्ण सिंह ने अमर महल (जम्मू) की कला दीर्घा के लिए मांग लिया और उदार मना सरल हृदय इन्द्र बाबू ने विश्व बाजार में लाखों की कीमत वाले ये चित्र उन्हें प्रदान कर दिए।

समाज ने उनकी अभ्यर्थनार्थ एक समिति गठित की किन्तु संवत २०४६ में इन्द्र बाबू के आकस्मिक निधन से कला जगत निस्तब्ध रह गया।

समाज-धर्म-शासन-उद्योग एवं व्यापार उन्नायक

धर्म प्रभावना के लिए जिस जाति का उद्भव हुआ हो एवं जिसके श्रेष्ठियों ने अपने शौर्य एवं ऐश्वर्य से सम्पूर्ण भारत के इतिहास को प्रभावित किया हो, उनके इसी सबल पक्ष का बार बार स्मरण हमें गौरवान्वित ही नहीं करता भविष्य के प्रति सजग रहने की प्रेरणा भी देता है। जातीय वर्चस्व की इस अजस्र धारा के कुछेक मनोहारी चरित्र-द्वीपों का परिभ्रमण हम ग्रंथ के प्रथम खण्ड में कर आए हैं। यहाँ उसी श्रृंखला की अन्य मणियाँ पिरोई गई हैं यद्यपि इसके उपरांत भी इतना कुछ बचा रहता है जो किसी भी लेखकीय सामर्थ्य-सीमा को चुनौती देता रहेगा।

राजा डालचन्द गोखरू

जगत सेठ के गेहलड़ा खानदान से जुड़ा और उतना ही ऐश्वर्यशाली ओसवाल जाति का गोखरू गोत्र रहा है। रणथम्भौर के परमार वंशी श्रेष्ठि धांधल ने वि.सं. १०४५ में आचार्य जयप्रभ सूरि के उपदेशों से प्रभावित हो पुत्र प्राप्ति के लिए अछुप्ता देवी की आराधना की। श्रम एवं तपसाध्य आराधना से प्रसन्न हो देवी ने वरदान दिया। देवी के एक हस्तपर में गोखरू

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

था। अतः जब पुत्र का जन्म हुआ तो उसका नाम गोखरू रखा गया। कालान्तर में वे ओसवाल वंश में शामिल हुए एवं उनके वंशज गोखरू कहलाने लगे।

इसी कुल के अमरदत्तजी को बादशाह ने राय की पदवी दी। तभी से ये परिवार दिल्ली आए और जवाहरात का काम करने लगे। दिल्ली से उनके पुत्र उदयचन्द आगरा आ बसे। मुर्शिदाबाद के गेहलड़ा गोत्रीय श्रेष्ठि हीरानन्द की कन्या धनबाई, इन्हीं राजा उदयचन्द को ब्याही गई जिनके पुत्र फतहचन्द जगत सेठ माणकचन्द के गोद गए और स्वंय भी जगत सेठ की पदवी से विभूषित हुए।

इन्हीं उदयचन्द के प्रपौत्र राजा डालचन्द हुए। उस समय दिल्ली पर नादिरशाह का आक्रमण और कत्लेआम शुरू हुआ। उसके अत्याचारों से तंग आकर राजा डालचन्द अपने अग्रज मुहकम सिंह के साथ मुर्शिदाबाद जा बसे। उस वक्त मुर्शिदाबाद में जगत सेठ खानदान का वर्चस्व था।

राजा डालचन्द बड़े ज्ञानी थे। वे तत्वज्ञान के पंड़ित और योगाभ्यास में माहिर थे। कहते हैं, उन्हें खेचरी मुद्रा सिद्ध हो चुकी थी। उनकी जिह्वा भृकुटी के मध्य तक पहुँचती थी। ऐसे चलते थे जैसे हवा में चल रहे हों। चमत्कार यह था कि पांव तले चींटी आ भी जाए तो नहीं मरती थी। अन्ततः उन्होंने देहत्याग भी इसी मुद्रा में किया। "भाषा कल्प सूत्र" (१८८९) की भूमिका में राजा शिवप्रसाद सितारे हिन्द ने उनके पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला है। राजा डालचन्द ने अनेक ग्रन्थ रचे एवं अनेक ग्रंथों का भाषानुवाद किया। वे संस्कृत, फारसी, बंगला एवं बृज भाषा के अच्छे जानकार थे। ज्योतिष एवं वैद्यक में भी उन्हें महारत हासिल थी। इनके अलावा उन्हें अनेक इल्मों का ज्ञान था। अनेक सृजनात्मक प्रवृत्तियों में लगे रहना उनका शौक था। जगत सेठ उनकी बहुत इज्जत करते थे एवं बराबर परामर्श लेते थे। बारहवीं शदी के विश्व प्रसिद्ध गणितज्ञ भास्काराचार्य की 'लीलावती' का छन्दोबद्ध अनुवाद (बनारस से संवत १९१५ में प्रकाशित) कराने का श्रेय राजा डालचन्द को ही है।

जगतसेठ महताबराय उस समय मुगलिया सल्तनत की अवसान संध्या और अंग्रेजों के उगते सूर्य के बीच झूल रहे थे। नबाव कासिम अली खाँ ने जुल्म ढ़ाने पर कमर कस ली थी। जनाने में हरदम खौफ रहता था कि नवाब बेइज्जत न कर डाले। नवाब और अंग्रेजों के बीच भी कशमकश चल रही थी। जगतसेठ ने ऐसे समय अंग्रेजों का साथ देना उचित समझा। अंग्रेजों को इस समय रूपयों की बड़ी तंगी थी। जगतसेठ ने उनकी मदद की। परन्तु इसकी खबर नवाब को हो गई। तुरन्त नवाब ने सेना भेज कर जगत सेठ और राजा डालचन्द को पकड़वा मंगाया। अब करिश्मा देखिए-राजा डालचन्द सबकी श्रद्धा के पात्र थे-परिवार में आपसी सलाह हुई और राजा डालचन्द की जगह महताबराय के चचेरे भाई स्वरूपचन्द कैद चले गए। दोनो भाईयों को धोखे से कुछ दिन बन्दी बना कर रखा गया। नवाब कासिम अली खाँ को अंग्रेज फौज का सामना करना पड़ा और वह बंगाल छोड़कर भाग गया। परन्तु उसने जगतसेठ खानदान से बदला लेने की ठान रखी थी-वह भागते हुए भी दोनो भाईयों को साथ लेता गया। अन्ततः

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मुंगेर पहुँच कर उन्हें तीरों से मरवा डाला। कहते हैं उनका स्वामी भक्त नौकर चुन्नी उनके साथ था। जिस समय यह हादशा अंजाम दिया जा रहा था चुन्नी ढाल बन कर दोनो भाईयों के आगे खड़ा हो गया। जब उसका शरीर तीरों से छलनी हो कर गिर गया तभी दोनो भाईयों को बींध पाए।

राजा बच्छराज नाहटा

अवध के चतुर्थ नवाब आसफ-ऊ-दौला (वि. सं. १८३२-१८५४) ने फैजाबाद से अपनी राजधानी लखनऊ बना ली-तब से लखनऊ शहर ने बहुत तरक्की की एवं मुस्लिम तहजीब का आला उदाहरण बन गया। अनेक ओसवाल जौहरी एवं व्यापारी लखनऊ जाकर बसे। बच्छराज जी नाहटा भी उनमें से थे जिन्हें अवध दरबार में बहुत सम्मान मिला। वे राज-जौहरी ही नहीं नियुक्त हुए उन्हें "राजा" का खिताब भी बख्शा गया। जल्द ही वहां के जैन समाज में वे बड़े सम्मान की दृष्टि से देखे जाने लगे। बनारस का भदौनी घाट, जहां तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ का एक भव्य मन्दिर है, आज भी "बच्छराज घाट" के नाम से जाना जाता है। बनारस के राजा से उनके बड़े अच्छे ताल्लुक थे एवं वहां बहुत बड़ी जमींदारी थी जो बच्छराज जी के फाटक के नाम से जानी जाती थी।

कोठारी केशरीसिंह

महाराणा स्वरूपसिंह ने संवत् १९१६ में मेहता गोकुलचन्द के स्थान पर कोठारी केशरी सिंह को मेवाड़ राज्य का प्रधान नियुक्त किया। इससे पूर्व वे संवत् १९०२ में स्टेट बेंक एवं चुंगी विभाग के अधिकारी रह चुके थे। महाराणा के एकलिंग मंदिर का प्रबंध भी आपके सुपुर्द था। आप महाराणा के निजी परामर्शदाता भी थे। आपके सुप्रबंध से प्रसन्न होकर महाराणा ने आपके निवास पर जाकर आपका सम्मान किया एवं नेतावल ग्राम जागीर में बख्शा। आप बड़े स्पष्टवादी पर स्वामी भक्त थे। राज्यहित की दुहाई देकर जागीरें इनाम में देने से रोकने पर आप अनेक सरदारों के कोपभाजन बने। असंतुष्ट सरदारों ने ब्रिटिश राजनैतिक एंजेट से मिल कर आप पर गबन का आरोप लगा कर आपको राज्य से पद्च्युत कर निष्काषित करवा दिया। महाराणा ने जाँच पड़ताल के बाद आपको ससम्मान वाणिज्य प्रधानगी के पद पर बहाल कर दिया। संवत १९२५ में भयानक अकाल के समय आपने सेठ साहूकारों के सहयोग से किसी को भूखों नहीं मरने दिया और प्रजा की प्रशंसा पाई। सं. १९२६ में आपने त्याग पत्र देकर पद से मुक्ति पा ली। सं. १९२८ में आपका निधन हुआ।

आपके अग्रज छगनलालजी भी बड़े गुणवान थे। संवत १९०० से आपने खजाने का प्रबंध संभाला। बाद में कोठार और सेना का प्रबंध भी आपको सौंपा गया। महाराणा ने प्रसन्न होकर आपको जागीर भेंट की।

शाह कर्मचन्द दूगड़

पंजाब के जैन शास्त्रज्ञ एवं सिद्धातों को आचरण में आत्मसात करने वाले श्रावकों में शाह कर्मचन्द दूगड़ का नाम सर्वोपरि है। आपका जन्म पंजाब के गुजरानवाला (अब पश्चिमी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

पाकिस्तान में) नगर में वि. सं. १८७५ में शाह धर्मयश के घर हुआ। पिता-पुत्र सराफा (सोना चाँदी) का व्यापार करते थे। आपके सही दाम और पूरा तोल के सिद्धांत ने ग्राहकों को सन्तोष दिया और आपको लोकप्रिय बना दिया।

उस समय पंजाब में ढूंढक मत का बोलबाला था। गुजरानवाला के सारे ओसवाल भाबड़ामय दूगड़ जी का परिवार ढूंढक मत अनुयायी थे। कर्मचन्द्र जी ने संतों के सम्पर्क से ३२ आगमों का सांगोपांग अध्ययन किया। ये इसी मनन में इतने रचपच गए कि लोग उन्हें शास्त्रीजी कह कर पुकारने लगे। यहाँ तक कि साधु-साध्वी भी आपकी देख-भाल में आगम अभ्यास करने लगे। उनकी अनुपस्थिति में कर्मचन्दजी व्याख्यान भी देते थे। वि. सं. १८९७ में ऋषि बूटेराय ने संवेगी दीक्षा लेने के बाद यहाँ आकर दूगड़ जी से आगम चर्चा की एवं उनका समर्थन मिलने के बाद ही सद्धर्म के पुनरोद्धार का गुजरानवाला में श्री गणेश किया। फलतः प्रायः सारे परिवारों ने ऋषि जी की श्रद्धा स्वीकार कर ली एवं वहाँ पार्श्वनाथ मंदिर की स्थापना हुई। कर्मचन्द जी ने सद्धर्म स्वीकार कर श्रावक के १२ व्रत ग्रहण किए। आप मिलनसार थे एवं जैन दर्शन को जीवन का अंग बना चुके थे। वि. सं. १९५१ में आपके एक मात्र पुत्र का, फिर बड़े पौत्र का फिर छोटे पौत्र का, एवं १९५९ में छोटे भाई का देहांत हो गया। इस तरह कष्टों का पहाड़ आप पर टूट पड़ा। वृद्धावस्था, कमजोर स्वास्थ्य, एवं आर्थिक स्थिति डावाँ डोल होने के बावजूद आपने समता पूर्वक सब कुछ सहा। वि. सं. १९६१ में आपका देहांत हुआ।

आपके छोट भाई मथुरादास दूगड़ भी कुछ कम न थे। आप विलक्षण बुद्धि के धनी थे। आप सदैव राजस्थानी वेशभूषा में रहते थे। लम्बी मूंछें और दाढ़ी रखते थे—कानों में सोने की बालियाँ झूलती थी। गुजरान वाला जैन समाज में आपका बड़ा सम्मान था। आपको "चौधरी" की पदवी से समाज ने विभूषित किया। वे पंच पंचायती में अग्रणी थे—सरकारी कोर्ट भी आपके फैसलों को मान्य रखते थे। पंजाब में आप "बापूजी" नाम से प्रसिद्ध थे। आपके परिवार ने भी वि. सं. १८९७ में ढूंढक मत की मान्यता छोड़ मूर्ति पूजक धर्म स्वीकार किया। जो कोई आपके पास जाता, आप हर प्रकार से उसकी मदद करते। वि. स. १९६६ में जालंधर में आपका स्वर्गवास हुआ।

आपके पुत्र दीनानाथ भी चौधरी पद पर आसीन रहे। आप श्वेताम्बर श्री संघ के मंत्री एवं कोषाध्यक्ष रहे। आप ज्योतिष विद्या में पारंगत थे। श्री संघ ने वि. सं. १९८६ में आपके सम्मान में वृहद समारोह आयोजित किया। वि. सं, २००४ में जब देश स्वतंत्र हुआ तो गुजरानवाला में जैन बीसा ओसवालों (भाबड़ा) के तीन सौ घर थे। मिलिटरी के संरक्षण में सभी परिवरों ने आ. विजयानन्द सूरि के साथ अमृतसर की ओर कूच किया। रास्ते में लाहौर के निकट दीनानाथ जी के द्वितीय पुत्र आतताईयों द्वारा कत्ल कर दिए गए। भारत पहुँच कर आपका परिवार आगरा में बस गया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

राय बहादुर बद्री दास मुनीम

श्रीमाल-सिंधड़ (सिंहधण) गोत्रीय राय बहादुर बद्रीदास कलकत्ता के समस्त ओसवाल-जैन समाज में बड़े आदर और सम्मान की दृष्टि से देखे जाते थे। सिंहधण गोत्र की उत्पत्ति खरतर गच्छीय आ. जिनचन्द्र सूरि (अकबर प्रतिबोधक) द्वारा मानी जाती है। इनके परदादा देवीसिंह जी दिल्ली में रहते थे। दादा विजय सिंह जी अवध के नवाब के आग्रह पर लखनऊ आकर बसे। इनके पिता लाला कालकादास जी लखनऊ के नवाब के राज जौहरी थे। बद्रीदास जी का जन्म सन् १८३२ में हुआ। वे युवा होकर व्यवसाय देखने लगे। जल्द ही लखनऊ के नवाबजादों से उनकी अच्छी जान पहचान हो गई।

सन् १८५२ में अंग्रेज सरकार लखनऊ के नवाब वाजिदअली साह को गिरफ्तार कर कलकत्ता लाई तभी आप उसके साथ कलकत्ता आए। मौके का फायदा उठाकर आपने जवाहरात का व्यवसाय प्रारम्भ कर दिया। आपके पास बेशकीमती जवाहरातों का संग्रह था। ब्रिटेन के बादशाह एडवर्ड सप्तम जब भारत पधारे तो यह बेशकीमती संग्रह देखकर वे बहुत प्रसन्न हुए।

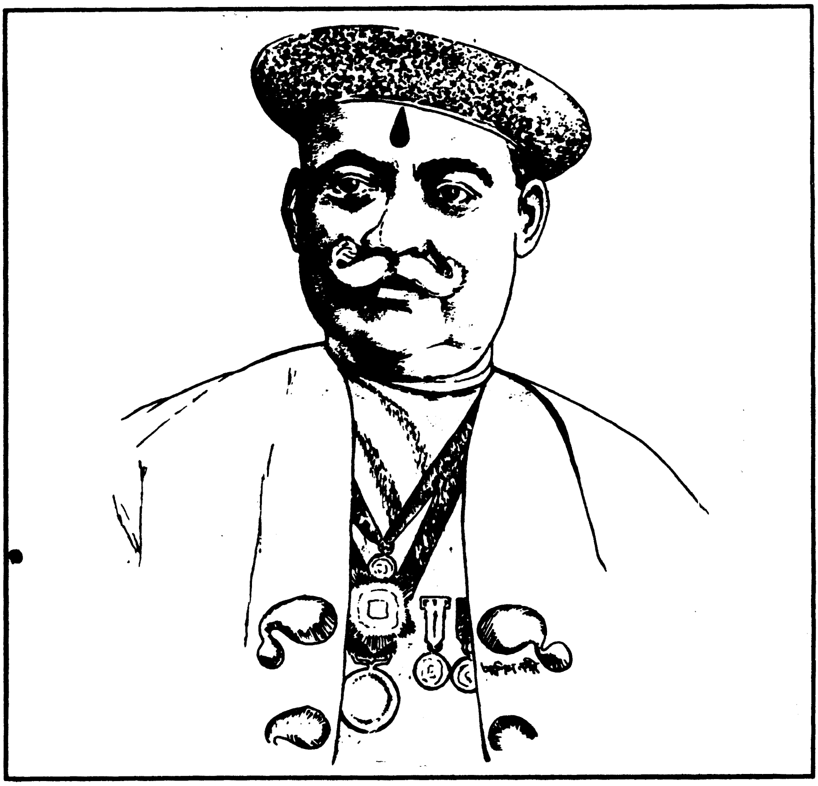

श्री बद्रीदास मुकीम

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपके संग्रह में एक ऐतिहासिक रत्न "छत्रपति माणिक" भी था जो १ इंच लम्बा और पौन इंच चौड़ा तथा २४ रत्ती वजन का था। कहते हैं कभी यह माणिक भारत सम्राट चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के मुकुट की शोभा था—फिर किसी दक्षिण के तानाशाह के खजाने में रहा, वहाँ से बादशाह औरंगजेब और फिर जगतसेठ के हाथ में आया जिनसे राय बद्रीदास जी के पास आया। सन् १८६३ में एक अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी में आपने वह संग्रह प्रदर्शित किया एवं मुक्तकंठ से विदेशी जौहरियों की प्रशंसा प्राप्त की।

सन् १८६८ में लार्ड लारेंस के शासन काल में आपको सरकारी जौहरी बनाया गया। सन् १८७१ में भारत के तात्कालीन वाइसराय लार्ड मेयो ने "मुकीम" की पदवी देकर न्यायिक मान्यता प्राप्त जौहरी नियुक्त किया। लार्ड नार्थब्रुक आदि अन्य वायसरायों ने भी आपके इस पद को मान्यता दीं। तभी से आपके वंशज मुकीम कहलाते हैं। सन् १८७७ के दिल्ली दरबार में तात्कालीन वायसराय लार्ड लिटन ने आपको "राय बहादुर" के खिताब से सम्मानित किया एवं 'एम्प्रेस आफ इंडिया' मेडल प्रदान किया।

आपने सन् १८६७ में कलकत्ता हाल्सीबगान क्षेत्र में विश्व प्रसिद्ध दादा बाड़ी एवं भव्य जैन मन्दिर का निर्माण करवाया। यहाँ आपने १० वें तीर्थंकर शीतल नाथ की भव्य मूर्ति प्रतिष्ठित की। ब्रिटेन के बादशाह पंचमजार्ज के शासन के रजत समारोह के अवसर पर इस भव्य मंदिर का चित्रांकित डाक टिकट जारी किया गया था। विश्व के अनेक सरकारी एवं गैर सरकारी सोवेनियरों में इस मन्दिर की आकर्षक छवि प्रदर्शित की जाती है। पान-अमरीकन वर्ल्ड एअरवेज दो बार अपने कलेण्डरों को इस नयनाभिराम छवि से मंडित कर चुकी है। इस मन्दिर में अनेक रत्न जटित मूर्तियों का अमूल्य संग्रह है। मन्दिर से संलग्न म्यूजियम में तमिल एवं तेलगू के ताड़ पत्रीय ग्रंथ एवं नागरी लिपि के प्राचीन ग्रंथ भरे पड़े हैं जिनकी शोध अपेक्षित है।

राय साहब ने बड़ी हसरत से भादियलपुर तीर्थ को पुनः स्थापित करने के लिए वहाँ की पहाड़ी खरीद ली थी परन्तु अपने जीवन में वे इस तीर्थ की स्थापना का स्वप्न साकार न कर सके। आपने सम्मेद शिखर पर एक विशाल मन्दिर का निर्माण करवाया जो १८ सालों में बनकर तैयार हुआ। सन् १८८५ में सिद्धांचल तीर्थ पर से यात्री टेक्स उठवाकर सालाना रकम नियत कराने में आप सफल हुए। सन् १८९१ में आपने सपत्नीक श्रावक के १२ व्रत ग्रहण किए। आप ब्रिटिश इंडियन एसोशियेसन, हिन्दू युनिवर्सिटी, इम्पीरियल लीग आदि प्रभावशाली संस्थाओं के सदस्य थे। बंगाल के सुप्रसिद्ध नेशनल चेम्बर आफ कामर्स के प्रथम सभापति होने का श्रेय आप ही को प्राप्त हुआ। सम्मेद शिखर पहाड़ी पर जब सरकार ने निजी व सरकारी बंगले बनाने सम्बंधी बिल पास कर दिया तो आपने अथक प्रयास कर उसे रद्द करवाया। विभिन्न देशी नरेशों की ओर से आपकों अनेक सम्मान बख्शे गए। अलवर नरेश ने आपको हाथी, गांव एवं पालकी से सम्मानित किया। हाड़ोती नरेश ने पॉव में सोना इनायत किया। जैन श्वेताम्बर समाज में आपकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। तीर्थराज सम्मेद शिखर एवं पालीताणा के क्षेत्रीय विवादों को बड़ी कुशलता से आपने सुलझाया। बम्बई में सन् १९०३ में हुई द्वितीय श्वेताम्बर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

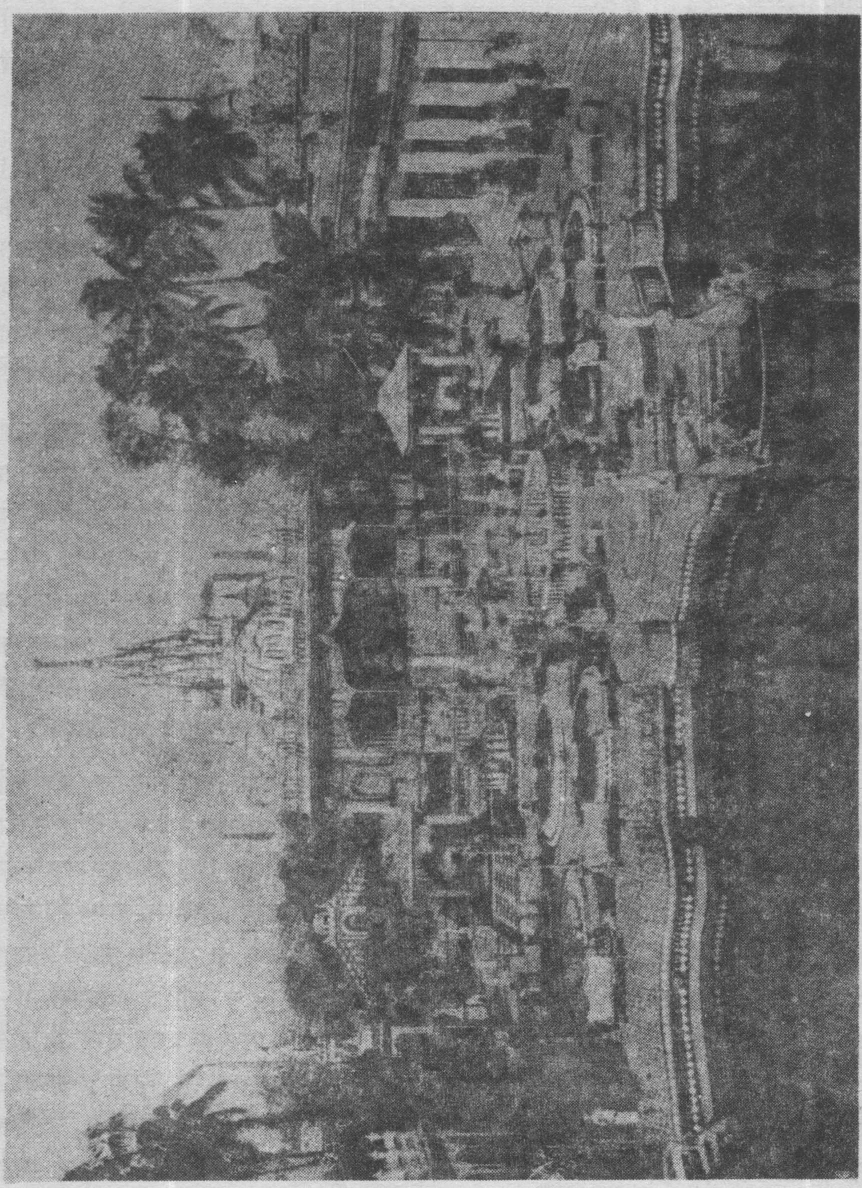

राय बहादुर बद्रीदास मुकीम द्वारा निर्मित जैन मन्दिर, कलकत्ता

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जैन कान्फ्रेस के आप सभापति चुने गए। सन् १९१७ में आपका देहावसान हुआ। आपके सुपुत्र रायकुमारसिंह और राजकुमार सिंह ने आपकी कीर्ति को अक्षुण्ण रखा। प्रतिवर्ष कलकत्ता में समस्त जैन समाज कार्तिक महोत्सव के अवसर पर बड़ा बाजार से दर्शनीय जलसा बनाकर इस भव्य मन्दिर की अभ्यर्थना करने जाता है।

दानवीर सेठ प्रेमचन्द रायचन्द

सूरत के दसा ओसवाल (बनिया) श्रेष्ठि श्री प्रेमचन्द भाई का जन्म सन् १८३० में अत्यंत गरीब परिवार में हुआ। वे अपने अध्यवसाय से उन्नति कर सम्पूर्ण देश में रूई की व्योपारिक दुनिया के 'बादशाह' नाम से विख्यात हुए। बाजार में भावों पर आपका नियंत्रण इतना जबरदस्त था कि लोग कहते आज का भाव तो यह है, कल की बात प्रेमचन्द भाई जाने। यह स्थिति पूरे बम्बई इलाके में चालीस वर्ष तक रही।

स्व. सेठ प्रेमचन्द रायचन्द

कोट्याधीश होकर आप अपने धर्म कौम और जाति को नहीं भूले। समृद्धि के साथ ही आपकी दान भावना विस्तार पाती गई। सन् १८६४ में आपने बम्बई यूनिवर्सिटी में सवा छ लाख के अभूतपूर्व दान से "प्रेम चन्द राय चन्द फेलोशिप" की स्थापना की। उसी समय कलकत्ता यूनिवर्सिटी को भी सवा चार लाख रूपये प्रदान कर वहाँ "प्रेमचन्द राय चन्द फेलोशिप" स्थापित की। ये दोनो फेलोशिप आज करीब १२० वर्षो से निरन्तर उच्च शिक्षा के क्षेत्र में शोध कर्त्ताओं के लिए आर्थिक सम्बल बनी हुई है। इसी तरह अन्य अनेक स्थानों पर कन्या शालाओं, कालेजों व अनाथालयों को लाखों रूपए उदारता पूर्वक प्रदान किए। धार्मिक तीर्थों एवं धर्मशालाओं के निर्माण एवं पुनरूद्धार के लिए भी आपने लाखों रूपयों का अवदान दिया। आपकी मातुश्री के नाम पर बना बम्बई यूनिवर्सिटी का सर्वोच्च राज बाई टावर आपका कीर्ति स्तम्भ कहा जा सकता है।

दान के बारे में आप कहा करते थे— "जिनकी प्रेरणा से मै दान देने को प्रेरित होता हूँ वे ही मेरे सच्चे मित्र हैं। जो मैने दिया वही मेरा था। जो मेरे पास है उसका मालिक मै नहीं" इस तरह गाँधीं जी के ट्रस्टीशिप के सिद्धांत को आकार देने वाले वे सच्चे दानवीर थे। ऐसे उदार चेता कुशल व्यापारी का देहांत सन् १९०५ की भाद्र शुक्ला १२ को हुआ। गुजरात के ओसवाल श्रेष्ठियों में आपकी यश-गाथा अद्वितीय है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री जोधराज बैद

सामाजिक धार्मिक एवं आर्थिक सुधारों के प्रणेता श्री जोधराज जी लाडनूँ के नामांकित व्यक्ति थे। बत्तीस वर्ष की अवस्था में धर्मपत्नि के अवसान पर आपने अपनी जीवन धारा को मोड़ कर दीन दुखियों की सेवा के लिए समर्पित कर दिया।वैद्यकी एवं जैन शास्त्रों का गहन् अध्ययन कर उसे समाज हित में लगाया। घर में वैद्यशाला स्थापित कर बिना मूल्य लिए दवाओं का वितरण शुरू किया। प्राकृतिक चिकित्सा के विभिन्न प्रयोग कर आपने लोगों को मिट्टी, पानी एवं हवा के सही उपयोग पर आधारित जीवन शैली अपनाने की प्रेरणा दी। स्त्री शिक्षा, पर्दा बहिष्कार, धार्मिक व सामाजिक अंधविश्वासों से छुटकारा दिलाने जैसे जन हितकारी आन्दोलनों में उन्होंने आपना सारा जीवन लगा दिया। हरिजनों एवं अछूतों के साथ सौहार्द्र पूर्ण व्यवहार कर वे जन साधारण की श्रद्धा के पात्र बन गए। हिन्दू-मुस्लिम दंगे के समय शहर के कुंजड़ों (मुस्लिम) को अपने घर में पनाह देकर उन्होने विश्व बंधुत्व का आदर्श रखा।

आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए हवाई जहाज के घिसे हुए रिजेक्टेड टायरों का इक्कों के लिए प्रयोग उनके उर्वर मस्तिष्क की ही उपज थी जिसने स्थानीय व्यवसाय में क्रांति ला दी। इस तकनीकी सुधार से उँट और भैंसों से खींची जाने वाली गाड़ियों में जैसे पंख ही लग गए। आज शहर में टायरों के ये कारखाने लाखों रूपए का कारोबार करते है और सेठ साहब का नाम स्मरण करते हैं। भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भी उनका अवदान कुछ कम नही था। प्रजा परिषद के नेता उनके घर में बराबर मेहमान बनते। ऐसे क्रियाशील व्यक्तित्व का ८२. वर्ष की आयु में देहावसान हुआ।

श्री जसवन्तराय भाभू

होशियारपुर (पंजाब) के भाभू गोत्रीय ओसवाल श्रेष्ठि जसवन्त राय जी ने पुराने मंदिरों के जीर्णोद्धार के लिए अथक प्रयत्न किए। आप आर्थिक दृष्टि से सामान्य होते हुए भी समाज-सुधार के लिए बराबर प्रयत्नशील रहें। आप हिन्दी फारसी उर्दू एवं अंग्रेजी के अच्छे जानकार थे। आपने लाहौर के श्वेताम्बर जैन मंदिर को मरम्मत करवाकर व्यवस्थित किया। कई वर्षों तक लाहौर से "श्री आत्मानन्द जैन" मासिक पत्रिका का संचालन किया। मूर्तिमंडन, शिकागों प्रश्नोत्तर आदि अनेक पुस्तकों का प्रकाशन किया। भारतवर्ष श्वेताम्बर जैन कांफ्रेस की पंजाब शाखा के आप वर्षों तक मंत्री रहे। वि.स. १९७० में आप दिल्ली आकर बस गए। हस्तिनापुर जैन तीर्थ को व्यवस्थित करने का श्रेय भी आपको है।

आपका सबसे बड़ा अवदान सामाजिक संगठन एवं विभिन्न प्रांतों के ओसवालों में आपस में बेटी व्यवहार चालू करवाना है। तब तक राजस्थान के ओसवालों से पंजाब के ओसवालों में शादी विवाह नहीं होता था। आपने अपने पुत्र का विवाह दिल्ली के जौहरी परिवार की कन्या से किया। अपने अन्य दो पुत्रों की शादियां भी अजमेर के ओसवाल समाज की कन्याओं से की। पंजाब के अन्य नगरों गुजरानवाला, जम्मू, लुधियाना, होशियारपुर, अम्बाला आदि जगहों के ओसवाल समाज में भी आपने राजस्थान के ओसवालों से रिश्ते करवाए। इस तरह शदियों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

से विलग हुए एक ही कुल के दो समाजों को फिर से सन्निकट लाने में आपने उल्लेखनीय भूमिका निभाई।

राय बहादुर विशनदास दूगड़

१९वीं शताब्दी में सुदूर कश्मीर में ओसवाल वंश की कीर्ति पताका फहराने वाले मेजर जनरल विशनदास दूगड़ का नाम इतिहास के पन्नों में अमर रहेगा। आपके पूर्वज सैकड़ों वर्ष पूर्व बीकानेर से सरसा जा बसे। वहाँ से कसूर बसे और महाराजा रणजीतसिंह के समय लाहौर चले गए। सन् १८५७ की क्रांति के समय ये परिवार जम्मू आकर बस गए। विशनदास जी के पितामह लाला दानमल महाराजा रणजीत सिहं की सेवा में थे। विशनदास जी का जन्म सं. १९२१ में हुआ। अपनी प्रतिभा एवं अध्यवसाय से सं. १९४३ में वे राजकीय सेवा में नियुक्त हुए। महाराजा के निजी सचिव पद से तरक्की कर राज्य के गृहमंत्री एवं राजस्व मंत्री बने एवं अन्ततः कश्मीर के चीफ मिनिस्टर बनाए गए।

प्रथम विश्वयुद्ध के समय ब्रिटिश सरकार की भरपूर सहायता करने के उपलक्ष में आपको रायबहादुर की उपाधि से विभूषित किया गया। सं. १९७२ में सरकार ने आपको C. I. E. (केसरे हिन्द) के खिताब से सम्मानित किया एवं सं. १९७९ में C. S. I. का खिताब दिया। कश्मीर के महाराजा प्रतापसिंह ने राजपूत जाति एवं राज्यों की एकता के लिए आपके द्वारा किए गए प्रयासों की भूरि-भूरि प्रशंसा की।आपने सामाजिक एवं धार्मिक क्षेत्र में भी उल्लेखनीय सेवाएं दी। पंजाब स्थानकवासी क्रांफेन्स के स्यालकोट व लाहौर अधिवेशनों के आप सभापति मनोनीत हुए। बनारस के धर्म-महा-मंडल ने आपको सम्मानित किया। आपके छोटे भ्राता लाला अनन्तराय जी प्रारम्भ में कश्मीर नरेश के निजी सचिव रहे।

श्री चैन रूप सम्पतराम दूगड़

सरदार शहर का चैनरूप सम्पतराम दूगड़ का खानदान ओसवाल समाज में नैतिक मुल्यों का प्रतिस्थापक माना जाता है। सन् १८१४ में साढ़े तीन मास की कठिन यात्रा कर चैनरूपजी कलकत्ता गए। अपने अध्यवसाय से कपड़े का व्यापार स्थापित किया एवं चन्द वर्षों में प्रमुख व्यापारियों की कोटि में गिने जाने लगे। विदेशों से कपड़ा आयात करने वाले वे पहले व्यापारी थे। सन् १८९३ में आपका स्वर्गवास हुआ।

इनके पुत्र सेठ सम्पतरामजी (जन्म सन् १८६६) अपनी बात के धनी एवं बड़े ईमानदार व्यक्ति थे। बीकानेर के महाराजा गंगासिंह जी की उन पर विशेष कृपा थी। ये राजघराने के प्रमुख साहूकार थे। राज्य की तरफ से उन्हें अनेक सुविधाऐं व बख्शीशें प्राप्त हुई। महाराजा शार्दूल सिंह ने भी उन्हें अनेक सम्मान बख्शे—सिरोपांव, सिंहासन के निकट बैठने का अधिकार, रुक्के, ताजीम (आभूषण) अदालतों में हाजिर होने से मुआफी, जकात-तलाशी-टैक्स आदि की मुआफी, चपरास, हाथी की सवारी, स्वर्ण-रजत-दण्ड आदि।

सेठ सम्पतराम जी के पुत्र सेठ सुमेरमलजी (जन्म सन् १८९३) बड़े निरभिमानी, विचारशील एवं व्यवहार कुशल व्यक्ति थे। इनकी ईमानदारी की अनेक कथाएं प्रचलित हैं। अधिकारी

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

को भूल बताकर अतिरिक्त कर चुकाना उनकी सदाशयता का द्योतक था। चीनी के कन्ट्रोल के समय किसी भी कीमत पर ब्लेक से चीनी न खरीदना, यहाँ तक कि विशेष परमिट भी न लेना, अनुकरणीय उदाहरण था। विवाहों में सरकारी नियमों का उल्लंघन कर कभी अधिक व्यक्ति आमंत्रित नहीं किए। एक बार पौत्र मिलापचन्द को डिफ्थेरिया हो गया। उसके इंजेक्शन चोर बाजारों से ही उपलब्ध थे। आपने इजाजत न दी। कहते हैं कराधिकारी उनके हिसाब किताब को शत प्रतिशत सही मान कर असेसमेंट करते थे। उन्हें आयुर्वेद का गहरा ज्ञान था।

सेठ रूपचन्द जी सेठिया

सुजानगढ़ के सेठिया परिवार के श्रावक रूपचन्द जी एक असाधारण व्यक्तित्व के धनी थे। उनका जन्म वि. सं. १९२३ में हुआ। दस वर्ष की लघु वय में ही उनका विवाह कर दिया गया। ३२ वर्ष की उम्र में उन्होंने ब्रह्मचर्य का पालन शुरू कर दिया एवं वि. सं. १९६० में यावज्जीवन सपत्नीक ब्रह्मचर्य-व्रत ग्रहण किया। वे अपने स्वच्छ आचार, विचार, व्यवहार क्रिया आदि के लिए प्रसिद्ध थे। उनके चार पुत्र थे। सेठ रूपचन्द जी सिद्धान्तों के पक्के एवं कठोर यम-नियम पालने के हामी थे। उनमें सूक्ष्म अहिंसा दृष्टि और आचारिक विवेक उच्चकोटि का था। उनके जीवन का सूत्र था "ठगायो बाजे ते हरजो नहीं, ठग नही बाजणों"।

वे बाल विवाह के विरुद्ध थे। देवी देवताओं की मनौती मानने, सीरणी करने या हाथ जोड़ने को वे मिथ्या लौकेषणा और बहम मानते थे। वे निष्ठावान श्रावक और नैसर्गिक ज्ञानी थे। दूसरों के दुख दर्द का हमेशा ख्याल रखते। उनकी संवेदनशीलता बड़ी सूक्ष्म थी। रात्रि में किवाड़ खोलने या चलने में भी किसी प्रकार की ध्वनि न हो, किसी की नींद न टूट जाए, यह ख्याल रहता।

निर्भीकता के किस्से तो राज दरबार तक मशहूर थे। जो चीज न देनी होती, उसके लिए तुरन्त स्पष्ट "ना" कर देते फिर मांगने वाला नाजिम ही क्यों न हो। ईमानदारी दूरदर्शिता, दया, सहनशीलता, क्षमा आदि आत्मिक गुणों की तो वे खान थे। वि.सं.१९८३ में वे स्वर्गस्थ हुए।

दानवीर भैरोदान सेठिया

स्थानकवासी जैन समाज को थोकड़ो एवं सूत्रों के टब्बों से ऊपर उठाकर वहाँ पांडित्य एवं प्रामाणिक साहित्य की प्राण प्रतिष्ठा करने वाले बीकानेर के सेठिया गोत्रीय सेठ भैरोंदान जी का जन्म सन् १८६६ में "कस्तूरिया" ग्राम में हुआ। शुरू आपने मुनीमी से किया और अपने अध्यवसाय से प्रसिद्ध उद्योगपति बन गए। कलकत्ते में आपने रंग एवं मनिहारी के काम में बहुत लाभ कमाया। अंग्रेज जर्मन एवं बंगाली कारिंदे आपका बहुत सम्मान करते थे। आपने भारत के प्रमुख नगरों एवं जापान में अपनी फर्म की शाखाऐं खोली। सन् १९२१ में आप शिक्षा एवं धर्म प्रचार के लिए समर्पित हो गए। धार्मिक पुस्तकों को प्रकाशित कर उन्हें लागत मूल्य पर उपलब्ध कर आपने धर्म की बहुत सेवा की। सन् १९२६ मे आप अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स के सभापति चुने गए। दस वर्ष तक आप बीकानेर म्यूनिसिपलिटी के कमिश्नर एवं १९२९ में उप-सभापति रहे। आप राज्य द्वारा आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सन् १९३० में ऐक बार फिर आप व्यवसाय में उतरें। बीकानेर की ऊन फैक्ट्री आपकी ही सूझ-बूझ का परिणाम है जहां से हजारों मन ऊन प्रतिवर्ष अमरीका एवं यूरोप निर्यात की जाती है। आप द्वारा संस्थापित जैन पारमार्थिक संस्था, बीकानेर अनेक धार्मिक एवं परोपकारी कार्यों में संलग्न है।

राजा विजयसिंह दूधोरिया

मुर्शिदाबाद (अजीमगंज) का दूधोरिया घराना किसी समय बुलन्दी पर था। इस घराने के राय विष्णुचन्द्र प्रतिष्ठित जमींदार थे। उनके पुत्र विजयसिह जी ओसवाल समाज ही नहीं समस्त जन साधारण एवं ब्रिटश सरकार के चहेते व्यक्तियों में से थे। संवत् १९६३ से १९७८ तक लगातार वे अजीमगंज म्युनिसिपालिटी के चेयरमैन रहे। संवत् १९६५ में सरकार ने उन्हें 'राजा' के खिताब से सम्मानित किया। आपने शिक्षण संस्थाओं को लाखों रूपए दान दिए। बालूचर, पाली, जोधपुर आदि स्थानों पर आपने धर्मशालाओं एवं स्कूलों का निर्माण करवाया। सार्वजनिक कार्यों एवं संस्थाओं को आपका सहयोग हर समय उपलब्ध रहता था। संवत् १९६८ में बम्बई एवं संवत् १९८६ में सूरत में आयोजित अखिल भारतीय जैन परिषद के आप सभापति निर्वाचित हुए। संवत् १९७६ में तूफान पीड़ितों की भरपूर सहायता करने के उपलक्ष में सरकार ने आपको सनद देकर सम्मानित किया। इम्पीरियल लीग, कलकत्ता लेंड होल्डर्स (जमींदार) एसो-शियेसन, भारत जैन महामंडलल आदि अनेक संस्थाओं के आप सदस्य थे। संवत् १९८६ में लार्ड इरविन द्वारा काउन्सिल आफ स्टेट के सदस्य नामजद होने वाले वे प्रथम ओसवाल श्रेष्ठि थे। संवत् १९९० में आपका ५२ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हुआ।

सितारे हिन्द श्री चांदमल ढ़ढ़ा : (वि. सं. १९२६-१९९०)

बीकानेर के ओसवाल वंश के ढ़ढा गोत्रीय श्रेष्ठि तिलोकसी के तीसरे पुत्र सेठ अमरसी ने हैदराबाद (दक्षिण) में अमरसी सुजानमल नाम से व्यवसायिक फर्म स्थापित की।थोड़े समय में ही इस फर्म ने बड़ी प्रतिष्ठा अर्जितकी। निजाम हैदराबाद के जवाहरातों का क्रय विक्रय आपकी ही मार्फत होता थाा। सुरक्षा के लिए निजाम की ओर से आपके रहवास एवं विभिन्न प्रतिष्ठानों पर एक सौ जवान तैनात रहते थे। राज्य में आपके दावे बिना स्टाम्प फीस और अवधि सीमा के सुने जाते थे। आपके पुत्र न था। दत्तक पुत्र नथमल के पुत्र सुजानमल हुए। उनके तीन पुत्रों की निसंतान मृत्यु हो गई। चौथे पुत्र समीरमल भी निसंतान थे। उन्होंने उदयमल को गोद लिया। उदयमल जी के पुत्र चादंमल जी हुए।

इनका जन्म सं. १९२६ में हुआ। चांदमल जी ने मद्रास कलकत्ता, सिलहट एवं पंजाब के अनेकों शहरों में साहूकारी व्यापारिक प्रतिष्ठन स्थापित किए। जावरा राज्य के आप खजांची मनोनीत हुए। हैदराबाद के निजाम एवं अन्य रियासतों के नरेश आपका बहुत सम्मान करते थे। ब्रिटिश सरकार ने उन्हें सी. आई. ई. (सितारे हिन्द) की उपाधि से विभूषित किया। आपने साढ़े तीन लाख रूपयों की लागत से देशनोक के करणी माता के मन्दिर का अभूतपूर्व कलात्मक तोरण द्वार बनवाया जो अद्वितीय है। वे बड़े समृद्ध और उदार हृदय थे। संवत १९५९ में

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बीकानेर नरेश ने आपके घर जाकर आपको सम्मानित किया। आपको विभिन्न राज्यों की ओर से प्रशस्ति पत्र मिले।

लाला गुज्जरमल दौलतराम नाहर

होशियापुर (पंजाब) में ढुंढ़क मतानुयायी जिन परिवारों ने आचार्य विजयानन्द सूरि के उपदेश से मुर्तिपूजक सद्धर्म की श्रद्धा ग्रहण की उनमें लाला गुज्जरमल का परिवार भी था। आपके परिवार में धर्मश्रद्धा के साथ ही अतुल धनवृद्धि हुई। मुहल्ला भाबड़िया में आपने जैन मन्दिर, उपाश्रय एवं धर्मशाला का निर्माण करवाया। इस विशाल मन्दिर का शिखर एक हजार तोला स्वर्ण पात्रों से मढ़ा हुआ है एवं भारतवर्ष में इस दृष्टि से अद्वितीय है। मन्दिर में वासुपूज्य स्वामी की मूर्ति प्रतिष्ठा के समय चारों दिशाओं के १०-१० मील की दूरी के गाँवों में बसने वाले सभी ब्राह्मणों को न्योता दिया गया। कहते है संभावना से अधिक ब्राह्मणों के आ जाने से भोजन सामग्री कम पड़ने लगी तो आचार्यजी ने एक स्वच्छ चादर मंत्रित कर सामग्री को ओढ़ा दी। एक पल्ला उठाकर सामग्री निकाली जाती रही और सब लोगों के खा चुकने पर चादर उठाकर देखा गया तो उतनी ही सामग्री मौजूद मिली। भोजन के बाद लालाजी ने प्रत्येक ब्राह्मण को एक एक चाँदी का रूपया दक्षिणा में दिया। लालाजी ने आम आदमी के लाभार्थ होशियारपुर में एक सराय भी बनवाई।

आपके पौत्र लाला दौलतराम नाहर भी अपने पितामह के समान उदार एवं सदाचारी थे। उनका स्वभाव बड़ा सरल एवं विचार उच्च थे। वि. सं. १९७६ में सादड़ी में मुनि वल्लभ विजय जी (आचार्य विजय वल्लभ जी) के नेतृत्व में हुई भारत वर्षीय जैन श्वेताम्बर कान्फ्रेन्स के आप प्रधान चुने गए। १९७८ में आचार्य जी के होशियारपुर पधारने पर आपने सच्चे मोतियों के साखिए पर सोने की मोहरें (एक-एक तोला वजन की) चढ़ाई थी। पंजाब में जैन गुरु कुल की स्थापना के लिए आपकी माताजी ने अपने तन के तमाम गहने उतार कर तत्सम्बंधी फंड में दान कर दिए। आपने आचार्य जी के जीवन काल में उनकी आदमकद प्रतिमा बनवाकर होशियारपुर के जैन मन्दिर में प्रतिष्ठित करवाई। ऐसा उदाहरण जैन इतिहास में मात्र एक बार और मिलता है जब चालुक्यराज कुमारपाल ने अपने गुरू आ. हेमचन्द्र सूरि की प्रतिमा पाटण में उनके जीवन काल में ही स्थापित करवाई थी। लालाजी ने भगवान की रथयात्रा के लिए एक हजार तोले का चांदी का रथ बनवाया जिसपर सोने का काम किया गया था। कहते है कलकत्ते के बद्री दास जैन टेम्पल से पार्श्वनाथ की एक प्रतिमा लाकर होशियारपुर जैन मन्दिर में स्थापित की गई जो बड़ी चमत्कारी है।

सेठ वालचन्द हीराचन्द शाह

सेठ हीराचन्द जैन समाज के प्रमुख श्रेष्ठि थे। बम्बई के सेठ मानेकचन्द पन्नालाल के साथ मिलकर उन्होंने अखिल भारतीय जैन कान्फ्रेन्स की नीवं डाली। ये शोलापुर में सरकार द्वारा मानद मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

इनके पुत्र सेठ वालचन्द अधिक पढ़े लिखे नहीं थे किन्तु गजब के अध्यवसायी थे। उन्होने निर्माण के काम में बहुत उन्नति की और रेलवे के लिए बड़े-बड़े ब्रिज बनाने के ठेकों से प्रथम विश्व युद्ध के समय अपार सम्पत्ति अर्जित की। युद्ध समाप्त होने पर "सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी" के संस्थापन में सेठ वालचन्द का प्रमुख हाथ था। इस कम्पनी ने जहाजरानी उद्योग में नये कीर्तिमान स्थापित किए। अन्ततः सरकार ने इस संस्थान का अधिग्रहण कर लिया। संवत १९८१ में आपने "इन्डियन ह्यूम पाईप कम्पनी" की स्थापना की जो सीमेंट कांक्रीट के भारी पाईप बनाती है। पूरे भारत में इस कम्पनी की साठ से अधिक शाखाएं हैं। विदेशों में भी इस कम्पनी की बड़ी साख है।

सेठ वालचन्द बहुत दयालु और मिलनसार थे। समाज हितकारी प्रवृतियों के लिए उन्होंने आर्थिक अवदान दिए। इंडियन चम्बर ऑफ कामर्स के आप सभापति रहे है। संवत २०१० में आपका देहावसान हुआ।

श्री ईसरदास चोपड़ा

आपका जन्म संवत् १९३३ में हुआ। आपके पिता श्री मेघराज जी गुसाईसर से आकर गंगाशहर (बीकानेर) बस गये। प्रारम्भ में ईसरदासजी ने मुर्शिदाबाद के सिंघी फर्म एवं तदुपरांत कलकत्ता की प्रतिष्ठित फर्म हरिसिंह निहालचन्द में नौकरी कर ली। कालान्तर में उसी फर्म में साझीदार बन गए। संवत् १९९० में अपनी स्वतंत्र फर्म छगनमल तोलाराम स्थापित की। जूट निर्यात के व्यवसाय में आपको आशातीत सफलता मिली। वे दस लाख गांठ जूट सालाना निर्यात करने लगे। संवत २००२ में आपका देहांत हुआ।

आपके पुत्र पूरणचन्द जी नामांकित व्यक्ति थे। आपने बनारस हिन्दू युनिवर्सिटी को आर्थिक सहयोग दिया। महाराजा गंगा सिंह जी ने जब गंग नहर का निर्माण कराया तो आपने इस हेतु धन दिया। बीकानेर महाराजा ने उन्हें रूक्का व सोने की घड़ी बख्शी एवं सेठ की उपाधि दी। आपने बीकानेर में चोपड़ा हाई स्कूल एवं गंगाशहर में अस्पताल बनवाये। करणपुर एवं गंगानगर में उन्होंने रूई की जीनिगं फैक्ट्रियां स्थापित की। कलकत्ता में तेरापंथी महासभा की स्थापना में उनका प्रमुख हाथ था।

राय साहब कृष्णलाल बाफणा

ओसवाल समाज की हित चिन्ता को समर्पित अनोखे व्यक्तित्व के धनी श्री कृष्णलाल जी का जन्म संवत् १९३३ में जोंधपुर में हुआ। आपके पिता श्री लक्ष्मणलाल जी बाफणा जोधपुर राज्य के फौजबख्शी (सेना नायक) रहे थे। अल्पायु में ही आपके माता पिता का देहांत हो गया। भृत्य हीरजी जो स्वयं ब्रह्मचारी योगी व त्यागी पुरूष थे, की संरक्षता में कृष्णलालजी ने बड़ी अच्छी तालीम पाई। वे हिन्दी उर्दू के कवि थे एवं ज्योतिष— वैद्यक के अच्छे जानकार। स्नातकीय परीक्षा उत्तीर्ण होते ही आप राज्य सेवा में नियुक्त हो गए। संवत १९७० में आप राज्य के एडवोकेट मनोनीत हुए। तभी राज्य में प्लेग की महामारी फैली। यहीं से उनके जन-जीवन की कहानी शुरू होती है। आपने निर्भिकता से रोगियों की सेवा सुश्रुषा की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संवत् १९७१ से उनके हृदय में छिपी समाज हित की तड़प ने नवीन आकार लिया। आपने 'ओसवाल' मासिक पत्रिका का सम्पादन-प्रकाशन प्रारम्भ किया। आपने एक 'ओसवाल हुनर शाला' की भी स्थापना की। आपके अथक प्रयत्नों से संवत् १९८९ में अखिल भारतवर्षीय ओसवाल महासम्मेलन का प्रथम अधिवेशन अजमेर में हुआ। आपके उत्साह ने समाज में जागरण की लहर पैदा कर दी। आप द्वितीय महा सम्मेलन तक उसके प्रधानमंत्री रहे। जब प्रगति और पुरातन पंथियों की कशमकश में महासम्मेलन विघटन के कगार पर आ गया तो आपने पुष्कर में संवत् १९९६ में महासम्मेलन का पंचम अधिवेशन बुलाया पर विधि की विडम्बना ऐसी रही कि वह अंतिम ही बन गया।

संवत् १९७४ में भारत सरकार ने आपको राय साहब की पदवी दी। आप अनेक सार्वजनिक संस्थाओं के प्राण थे।

श्री छोगमल चोपड़ा

समाज भूषण श्री छोगमल चोपड़ा एक असाधारण साधु पुरुष थे। उनमें ज्ञान और आचरण का अदभुत संयोग था। सहजता और सरलता की तो वे प्रतिमूर्ति थे। आप का जन्म वि. स. १९४० में देराजसर (बीकानेर) में हुआ। आपके पिता का नाम श्री फूसराज जी था। आपने कलकत्ता विश्वविद्यालय से कानून की स्नातक उपाधि ली। आप बहु भाषा विद् थे—बंगला, संस्कृत, अंग्रेजी एवं हिन्दी पर पूरा अधिकार था—गुजराती, उर्दू, अर्ध मागधी का भी अच्छा ज्ञान था। विधि वक्ता के रूप में आपका बड़ा सम्मान था। कलकत्ते के स्माल काज कोर्ट बार एसोसियेसन के आप सभापति एवं कोषाध्यक्ष रहे। झूठे मुकदमें लेने से आप इन्कार कर देते थे। आपके निजी ग्रंथागार में बहुमूल्य ग्रंथों का संग्रह था।

कलकते में जैन श्वेताम्बर तेरापंथी महासभा की स्थापना का श्रेय आपको ही है—आप लगातार २० वर्ष तक उसके सभापति रहे—देश के अनेक भागों में उसकी शाखाऐं खुलवाई। तेरापंथी समाज ने आपकी सेवाओं का सही आकलन कर आपका अभिनन्दन किया एवं आपको समाज भूषण की उपाधि से विभूषित किया। आपको समाज ने एक लाख रूपये की राशि भेंट की जिसे आपने तत्काल महासभा को समर्पित कर दिया। तेरापंथ में जब परमार्थिक शिक्षण संस्था का अविर्भाव हुआ तो आप उसके प्रथम सभापति चुने गए। अणुव्रत अनुशास्ता आचार्य तुलसी ने जब अणुव्रत अभियान छेड़ा तो आप अणुव्रती संघ के सभापति निर्वाचित हुए। आप सत्य-शोध एवं निष्पक्ष चिंतन के हामी थे। आप सैदव कहते— उक्त मत की बात ठीक नहीं—ऐसा उपदेश कभी नहीं देना चाहिए।

कलकते में ओसवाल समाज की सार्वजनिक प्रवृतियों के संचालनार्थ एकमात्र संस्थान ओसवाल नवयुवक समिति की स्थापना हुई तो आप उसके सभापति चुने गए। आप अनेक आध्यात्मिक जन हितकारी एवं शैक्षणिक संस्थाओं से सम्बद्ध रहे—एशियाटिक सोसाइटी, महाबोधि सोसाइटी, संस्कृति परिषद, मारवाड़ी छात्रावास, मारवाड़ी सम्मेलन, भारत चेम्बर आफ कामर्स आदि संस्थाओं में आपने सक्रिय योगदान दिया।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आप सदैव समाज के उत्थान के लिए प्रयत्नशील रहे। दहेज के विरोध एवं नारी जागृति के लिए आप सदैव सक्रिय रहते थे। दो ईसाई बालिकाओं के ओसवाल युवकों से विवाह का आपने पुरजोर समर्थन किया। श्री संघ विलायती विवाद में विलायतियों के एक साथ पंगत में बैठ कर खाना खाने के अपराध में मारवाड़ी धडे की पंचायत ने आपके परिवार से बिरादरी-व्यवहार बन्द कर दिया था। पर आप ऐसे अवरोधों के सामने झुके नहीं। वि. सं. २०१७ में आप दिवंगत हुए।

राय बहादुर फूलचन्द मोघा

न्याय और विधि के क्षेत्र में अखिल भारतीय स्तर पर ख्याति एवं सम्मान अर्जित करने वाले श्रीमाल गोत्रीय श्री फूलचन्द मोघा का जन्म विक्रम संवत १९४२ में सहारनपुर में हुआ। कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कालेज से स्नातकीय परीक्षा उत्तीर्ण कर संवत १९६८ में आपने अलीगढ़ में वकालत शुरू की। अगले वर्ष ही सरकार ने उन्हें मुन्सिफ नियुक्त किया। कानूनी विषयों में उनकी पैठ का उचित सम्मान करते हुए संवत १९८१ में वे जज बना दिए गए। संवत १९८४ में सरकार ने उन्हें अपना कानूनी सलाहकार नियुक्त किया। संवत १९८९ में वे राय बहादुर की पदवी से विभूषित किए गए। संवत १९९२ में मोघाजी कश्मीर राज्य के कानून एवं रेवेन्यू विभाग के मंत्री बनाए गये। वे सर्व प्रथम भारतीय थे जिन्हें किसी प्रान्तीय सरकार का यह अहम विभाग सौंपा गया हो।

राय बहादुर श्री फूलचन्द मोघा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपका सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवदान था न्याय और विधि सम्बंधी एक अनुपम ग्रंथ "प्लीडिंग्स इन ब्रिटिश इंडिया" की रचना जिसमें न्यायालयों में व्यवहृत विभिन्न विषयों के दावों एवं जवाबदावों के नमूने संग्रहित हैं। इस ग्रंथ ने सभी विधि वेत्ताओं की प्रशंसा अर्जित की। इससे पहले किसी भारतीय ने इस विषय पर कलम नहीं चलाई थी। देश के तमाम न्यायालयों में आज भी यह ग्रन्थ आदर की दृष्टि से देखा जाता है एवं संदर्भ ग्रंथ की भाँति इस्तेमाल किया जाता है। यह अब भी इस विषय की सर्वमान्य उच्चतम पुस्तक मानी जाती है।

श्री बहादुर सिंह सिंघी

भारत की सांस्कृतिक धरोहर के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए ओसवाल श्रेष्ठि बाबू बहादुर सिंह जी सिंघी हमेशा याद किए जाऐगें। आपका जन्म संवत १९४२ में हुआ। दयालुता और मिलन सारिता आपमें कूट-कूट कर भरी थी। करोड़पति तो वे थे ही। परिवार की जमींदारी चौबीस परगना, पूर्णिया, मालदा एवं मुर्शिदाबाद जिलों में फैली हुई थी। फर्म हरिसिंह निहालचन्द में कलकत्ता सरसाबाड़ी सिराजगंज, अजीमगंज, फारबीसगंज़ आदि स्थानों पर पाट का व्यवसाय होता था। करोड़ों की सम्पत्ति थी, लाखों की आय थी।

सर्वाधिक श्लाघनीय था इनका विद्याप्रेम। अनेक विद्वानों के वे आश्रयदाता थे। जैन संस्कृति से उन्हें बहुत लगाव था। खोज-खोज कर अलभ्य और अमूल्य पुरातन ऐतिहासिक वस्तुओं का आपने संग्रह किया। ऐसे अरेबियन और परसियन हस्तलिखित ग्रंथ जो कभी दिल्ली के बादशाहों के पास थे और विश्व में बेमिसाल थे आपके संग्रह की शोभा बढ़ाने लगे। कई पर तो स्वयं बादशाह के हस्ताक्षर थे। प्राचीन कुशान, गुप्त और हिन्दू राजाओं तथा मुसलमान बादशाहों के सिक्कों का अपूर्व संग्रह सिंघी जी ने किया। जैन संस्कृति, विज्ञान, स्थापत्य व भाषा के उन्नयन एवं प्राचीन धर्म ग्रंथों के शोध सम्पादन व प्रकाशन हेतु मुनि जिन विजयजी के आचार्यत्व में बोलपुर स्थित रविन्द्रनाथ ठाकुर के शांति निकेतन में सिंघवी जैन विद्यापीठ की स्थापना का श्रेय आपको ही है। इस संस्थान से मुनि जी ने अनेक दुर्लभ ग्रंथ विश्व-साहित्य को भेंट किए।

संवत १९८३ में सिंघी जी को बम्बई में हुंई जैन श्वेताम्बर कानफ्रेन्स का सभापति चुना गया। पंजाब के गुजरानवाला स्थित जैन गुरूकुल के छठे अधिवेशन के भी आप सभापति निर्वाचित हुए।

श्री अम्बालाल साराभाई (वि. स. १९७४-२०२४)

दसा-श्रीमाल खानदान के सेठ अम्बालाल साराभाई का जन्म वि. सं. १९४७ में हुआ। आपके पिता सेठ साराभाई मगन भाई करमचन्द ३० वर्ष की अल्पायु में स्वर्ग सिधारे—उस समय अम्बालाल मात्र ५ वर्ष के बालक थे। चाचा चिमन भाई नगीनदास की देखरेख में आपकी शिक्षा अहमदाबाद में हुई। १७ वर्ष की आयु में आपने पारिवारिक कारोबार देखना आरम्भ कर दिया। वि. सं. १९६७ में आपका विवाह राजकोट के श्री हरिलाल गोसालिया की पुत्री सरला देवी से हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

आपने विलायत में कपड़ा उद्योग का गहरा अध्ययन किया। संवत १९७२ में आप गांधीजी के सम्पर्क में आए। अहमदाबाद में मिल मजदूरों की मांगों को लेकर हुए संघर्ष में आपने मजदूरों का पक्ष लिया। आपकी सूझ-बूझ एवं अध्यवसाय से कपड़ा उद्योग के क्षेत्र में आपका प्रतिष्ठान शीर्षस्थ प्रतिष्ठानों में गिना जाने लगा। केलिकों मिल्स की प्रबंधक "कर्मचन्द प्रेमचन्द कम्पनी" के आप वरिष्ठ डाइरेक्टर थे। रासायनिक दवाओं के मुख्य निर्माता बड़ोदा के साराभाई केमिकल्स, सुहृद गीगी, साराभाई मर्क सीनोबायोटिक्स आदि कम्पनियों की मालिक यही कम्पनी थी। स्टेप्टोमायसीन एवं पेनसलीन के निर्माता स्टेंडर्ड फार्मास्यूटिक्ल्स भी उसी समूह में शामिल है। जल्द ही अपने बुद्धि कौशल से आप भारत के प्रमुख उद्योगपतियों में गिने जाने लगे। वि. सं. १९६५ में आप अहमदाबाद मिल मालिक संगठन के अध्यक्ष चुने गये।

ब्रिटिश सरकार ने आपको कैसरे हिन्द स्वर्ण पदक से सम्मानित किया। महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन के समय वि. सं. १९८७ में यह पदक आपने सरकार को लौटा दिया। आपने समाज की अनेक शैक्षणिक हितकारी संस्थाओं एवं प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन दिया। राष्ट्रीय कांग्रेस को दिल खोल कर राष्ट्रीय समृद्धि के लिए धन दिया। कवि गुरू रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सी. एफ. एन्डूज, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, प्रसिद्ध चित्रकार गगनेन्द्रनाथ एवं अवनीन्द्रनाथ टैगोर, नन्दलाल बोस, प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री जगदीशचन्द्र बसु एवं प्रसिद्ध इतिहासकार जदुनाथ सरकार से आपके अच्छे व्यक्तिगत सम्पर्क रहे। आपकी धर्मपत्नि श्रीमती सरलाबेन भी विदेशी वस्त्रों एवं शराब की दुकानों पर धरना देते हुए जेल गई। वि. सं. २०२४ में आप दिवंगत हुए।

सेठ कस्तूर भाई लालभाई

आधुनिक भारत के उद्योगपतियों में गुजरात के ओसवाल श्रेष्ठि कस्तूर भाई लालभाई अग्रगण्य थे। आपका जन्म अहमदाबाद में १९ दिसम्बर १८९४ को हुआ। आपके पूर्वज श्री शांतिदास जौहरी की मुगल दरबार में बड़ी आवभगत थी। बादशाह जहाँगीर ने उन्हें जगतसेठ की पदवी बख्शी एवं हमेशा "मामा" कह कर बुलाते थे। आपके पिता सेठ लालभाई समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति थे एवं सरदार कहलाते थे।

१८ वर्ष की उम्र में ही आपके पिता दिवंगत हो गये। तभी से आपने कारोबार सम्भाला एवं जल्द ही उन्नति के शिखर पर पँहुच गये। आपने कपड़ा मिलों की एक श्रृखंला ही खड़ी कर दी। रायपुर, अशोक, सरसपुर, अरविन्द, नूतन एवं न्यूकाटन मिल्स आपके अध्यवसाय एवं सूझबूझ की कहानी है। १९२६ में आप जैनियों की प्रमुख संस्था आनन्दजी कल्याणजी ट्रस्ट के ट्रस्टी मनोनीत हुए। पालीताना शत्रुञ्जय तीर्थ को आपकी महत सेवाऐ प्राप्त हुई। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद कस्तूरभाई रासायनिक उद्योग की ओर मुड़े एवं १८ करोड़ की पूँजी और अमरीकी सहयोग से बहुत बड़ा साम्राज्य खड़ा कर दिया।

गांधी जी का आप पर बहुत प्रभाव था। पालीताना के राजा से शत्रुञ्जय तीर्थ के विवाद पर आपने सत्याग्रह का सहारा लिया। सन् १९२३ में आप राष्ट्रीय एसेम्बली के सदस्य रहे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सेठ कस्तूर भाई लाल भाई

आप अनेक जन हितकारी कार्यों से जुड़े—शान्तिनिकेतन, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी आदि राष्ट्रीय महत्व की संस्थाओं को लाखों रूपए दान में दिए। सन् १९३७ से १९४९ एवं १९५७ से १९६० के बीच आप रिजर्व बैंक के निर्देशक भी रहे। गवर्नर के पद पर श्री सी.डी. देशमुख की नियुक्ति आपके ही सद्प्रयत्नों का फल थी। राष्ट्रीय उद्योगों को बढ़ाने की दृष्टि से आपने विदेशों की यात्राएँ की। सन् १९५४ में रूस जाने वाले उद्योग और कृषि सम्बंधी भारतीय शिष्टमंडल के आप नेता चुने गए। कांडला के नये बन्दरगाह की निर्मिति में आप प्रमुख प्रेरणा स्रोत रहे। तदर्थ १९४८ में भारत सरकार द्वारा निर्मित विकास समिति के आप चेयरमेन बनाए गए। प्रशासन की खामियां ढूढ़ने के लिए सरकार द्वारा बनाई गई कमेटी के आप अध्यक्ष रहे। गांधी स्मारक निधि के लिए आपकी अध्यक्षता में पांच करोड़ रूपये इक्ट्ठे किए गए थे। आप द्वारा संस्थापित अहमदाबाद एजुकेशनल सोसाईटी अनेक कालेजों का संचालन करती है। गुजरात यूनिवर्सिटी की स्थापना में भी आपका प्रमुख हाथ था। अनेकों शोध संस्थानों के आप जन्मदाता थे। आप आनन्द जी कल्याणजी पेढ़ी के अध्यक्ष रहे हैं। गिरनार, रणकपुर, आबू आदि तीर्थों एवं मन्दिरों के पुनरूद्धार में आपका सहयोग स्तुत्य रहा। आपके सद्प्रयत्नों से जैन मन्दिरों

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

के दरवाजे हरिजनों एवं अछूतों के लिए खोल दिए गये। आपने समाज हितकारी कार्यों के लिए अपना जीवन अर्पण कर दिया। सन् १९६९ में भारत सरकार ने आपकों "पद्मभूषण" की सम्मानित उपाधि से विभूषित किया। २० जनवरी १९८० को अहमदाबाद में ह्रदय गनि रुक जाने से आपका देहावसान हुआ

डा. मोहन सिंह मेहता

शिक्षा जगत में नये कीर्तिमान संस्थापित करने वाले एवं विदेशों में भारतीय मनीषा की गरिमा का बोध कराने वाले डा. मोहनसिंह मेहता का जन्म संवत् १९५३ में हुआ। बचपन से ही आदर्शवादिता उनके चरित्र की विशेषता रही। अजमेर एवं आगरा में स्नातकीय शिक्षा समाप्त कर इलाहाबाद विश्वविद्यालय से उन्होंने एम. ए. एवं एल. एल. बी. की उपाधियाँ हासिल की और प्राध्यापक बन गये। किन्तु प्राध्यापिकी से उन्हें सन्तोष नहीं हुआ। वे युवकों के चरित्र एवं संस्कार निर्माण को प्राथमिकता देते थे। संवत् १९७७ में वे स्काउट-कमिश्नर नियुक्त हुए। पारिवारिक कारणों से मेवाड़ आने के बाद वे कुम्भलगढ़ में जिलाधिकारी एवं उदयपुर में राजस्व अधिकारी रहे। संवत् १९८१ में पत्नि का देहांत हो गया। आपने आजीवन दूसरा विवाह न करने का निश्चय किया और उच्च शिक्षार्थ लंदन चले गए।

संवत् १९८४ में श्री मेहता पी. एच. डी की उपाधि एवं बैरिस्ट्री का प्रशिक्षण पूर्ण कर भारत लौटे। इंग्लेंड मे रहते हुए उन्होंने वहां के कुछ श्रेष्ठ स्कूलों का निरीक्षण किया। भारत लौट कर संवत् १९८८ में उन्होंने उदयपुर में विद्याभवन की नींव रखीं। कालांतर में वहाँ बुनियादी शाला, शिक्षक महाविद्यालय कला संस्थान तथा ग्राम विद्यापीठ खुले। विद्या भवन को शांति निकेतन के समकक्ष वृहद शिक्षा संस्थान बना देने का श्रेय श्री मेहता को ही है।

राज्य सेवा में राजस्व अधिकारी की हैसियत से वे गाँव-गाँव का दौरा करते थे और किसानों के साथ गहरी सहानुभूति के कारण अत्यंत लोकप्रिय हो गये थे। बाद में मेंवाड़ राज्य के मुख्य मंत्री बनने पर भी उन्होंने सर्वदा जनहित को अपना लक्ष्य रखा।

देश स्वतंत्र होने के बाद श्री मेहता देशी राज्यों की ओर से संविधान सभा के सदस्य मनोनीत हुए। भारत सरकार ने उनकी प्रशासनिक क्षमता का सम्मान करते हुए उन्हें विदेशों में राजदूत नियुक्त किया। लगातार चौदह वर्ष तक हालैंड, पाकिस्तान तथा स्विट्जर लैंड में भारतीय राजदूत रह कर उन्होंने देश का गौरव बढ़ाया। संवत २०१५ में उन्हे संयुक्त राष्ट्र संघ महासभा में भारतीय प्रतिनिधि मंडल का सदस्य बना कर भेजा गया। यह उनकी राज्य सेवा का शीर्ष बिन्दु था।

अपनी उत्कट इच्छा के अनुरूप संवत् २०१७ से २०२३ तक वे राजस्थान विश्वविद्यालय के कुलपति रह कर उसे भारत का प्रसिद्ध शिक्षण संस्थान बनाने में सफल हुए। वहाँ से सेवा निवृत होकर वे उदयपुर आ गए। बहत्तर वर्ष की आयु में भी अपने यशस्वी कृतित्व से संतुष्ट होकर विश्राम करना उन्हें रुचा नहीं। जिस विद्याभवन की स्थापना उन्होंनें संवत् १९८८ में की थी, उसका सर्वांगीण विकास उनके जीवन का ध्येय बन गया। आपने सेवा

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

मन्दिर ट्रस्ट की स्थापना कर अपने जीवन की लगभग समस्त बचत ट्रस्ट को प्रदान कर दी। आज सेवा मन्दिर ग्राम सेवा के क्षेत्र में देश की एक प्रमुख संस्था है जिसका कार्यक्षेत्र लगभग ३५० गांवों तक फैल गया है। इसमें १०४ पूर्णकालीन एवं ३७० अंशकालीन कार्यकर्त्ता सेवा भाव से कार्यरत हैं। संवत् २०१६ से ही श्री मेहता अखिल भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ के अध्यक्ष रहे। प्रौढ़ शिक्षा के माध्यम से अपढ़ ग्रामीणों में जागृति लाने का देशव्यापी अभियान चलाया। कृषि सुधार, ग्रामोंद्योग, आदिवासियों के विकास के लिए ग्राम संगठन एवं महिला मंडल का संस्थापन इस योजना के अंग थे। लोक नायक जयप्रकाश नारायण द्वारा स्थापित लोक समिति संगठन के भी वे अध्यक्ष रहे।

देश विदेश में नागरिकों पर होने वाले अत्याचारों एवं दमन के विरुद्ध कार्य करने वाली अन्तर्राष्ट्रीय संस्था "एमनेस्टी इंटरनेशनल" ने श्री मेहता को भारतीय संभाग का उपाध्यक्ष मनोनीत किया। सत्यनिष्ठा, निर्भीकता एवं अदम्य आशावाद के धनी, दलित व गरीब जनता की सेवा में समर्पित श्री मेहता संवत् २०४२ में उदयपुर में स्वर्गस्थ हुए

लाला मोती शाह गद्हिया

ओसवाल समाज ने भी देश के विभाजनोपरांत हुए दंगों में अपनी शहादत दर्ज कराई—यह बड़े फख्र की बात है। स्यालकोट (पाकिस्तान) में रहने वाले गद्हिया गोत्रीय लाला मोतीशाह के परिवार की पंजाब में अच्छी प्रतिष्ठा थी। लालाजी स्थानकवासी समाज के आजीवन प्रधान रहे। आप स्यालकोट नगरपालिका के सदस्य चुने गए। सरकार ने आपको आनरेरी मजिस्ट्रेट नियुक्त किया। नगर के हर कोने में आपकी अचल सम्पत्ति थी। पंजाब के गणमान्य रईसों में आपकी गिनती थी। पाकिस्तान बनने से नगर में सबसे अधिक नुकसान आपके परिवार का हुआ। वह नुकशान मात्र आर्थिक सम्पत्ति का ही नहीं था। स्यालकोट में जब मुस्लिम लीग के गुण्डों ने जैन मुहल्ले पर हमला कर दिया तो उन्हें रोकने के लिए आपके मकान पर ही मोर्चा कायम किया गया एवं गोली का जबाव गोली से दिया गया। मुसलमानों के इस आक्रमण को नाकाम करने का श्रेय आपके परिवार को है। आपके छोटे भाई लाला खजांचीलाल इसी हमले में गोली लगने से वीर गति को प्राप्त हुए।

पाकिस्तान से बच कर आया बाकी परिवार दिल्ली में आबाद हो गया। ७९ वर्ष की आयु में आपका दिल्ली में देहांत हुआ।

सेठ रामलाल गोलछा

अपने अध्यवसाय से समृद्धि हासिल कर ओसवाल समाज को गौरवान्वित करने वाले सेठ रामलालजी गोलछा का जन्म सन् १९०० में नबावगंज (बंगलादेश) के साधारण व्यापारी परिवार में हुआ। शिक्षा भी अधिक नहीं पाई। आपके पिता तनसुखलालजी ने अलबत्ता महाजनी में पुत्र को दक्ष कर दिया। १५ वर्ष की अल्पवय में आपका विवाह हो गया। २ वर्ष बाद ही माता पिता का देहांत हो गया। यहीं से उनके जीवन ने अलग मोड़ लिया। घर की जिम्मेदारी आपके कंधों पर आ पड़ी। आप नबावगंज छोड़ सुन्दरगंज आ गये एवं

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वहाँ जूट का कारोबार शुरू किया। थोड़े समय बाद फारबीसगंज में भी शाखा खोल दी। सन् १९२६ में उन्होंने विराटनगर में प्रवेश किया—तभी से भाग्यश्री उनपर मुस्कराने लगी। तत्कालीन विराटनगर एक जंगल एवं पिछड़ा प्रदेश था। वहाँ जूट खरीद कर कलकत्ता की मिलों में देना शुरू किया। उन्हें सफलता तो मिली ही पूरा प्रदेश इस व्यापार से लाभान्वित हुआ। सन् १९३५ में उन्होंने सेठ राधाकिशन चमड़िया को विराटनगर में जूट मिल स्थापित करने के लिए राजी कर लिया। निस्वार्थ सेवाऐं देकर उन्होनें जूट मिल को नेपाल का शीर्षस्थ उद्योग बना दिया।

गोलछा जी ने सन् १९४२ में विराटनगर में नेपाल राज घराने के सहयोग से रघुपति जूट मिल की स्थापना की। लाखों रूपये का घाटा स्वयं बर्दास्त कर उन्होंने इसे चोटी के लाभप्रद उद्योग में बदल दिया। सन् १९५९ में उन्होने हिमालय जूट प्रेस की स्थापना की। जूट निर्यात के व्यवसाय में उन्हें खूब सफलता मिली और सरकार को विदेशी मुद्रा। वे पहले उद्योगपति थे जिन्होने नेपाल से जूट निर्यात शुरू किया। वे "नेपाल के जूट किंग" नाम से प्रसिद्ध थे। सन् १९६२ में उन्होने विराटनगर में स्वंयचालित चावल मिल की स्थापना की जो पूरे नेपाल में अपनी तरह की एक ही है। सन् १९६३ में उन्होने स्टेनलेस स्टील के बर्तनों का कारखाना लगाया जो देश ही नहीं विदेशों की मांग सम्पूर्ति भी करता है।

नेपाल के राजाधिराज महेन्द्र ने नेपाल के विकास में सहयोग के लिए उन्हें संवत् २०२० में "प्रवाल गोरखा दक्षिण बाहू" की उपाधि से सम्मानित किया। जैन सूत्रों के प्रकाशन के लिए गोलच्छा जी ने लाखों रूपयों का अनुदान दिया। आपके सुपुत्र श्री हंसराज जी गोलछा भी सं. २०४२ में नेपाल सरकार द्वारा उक्त उपाधि से सम्मानित किये गए। द्वितीय पुत्र श्री हुलासचन्द जी गोलछा जन कल्याण कारी कार्यों में योगदान हेतु सदा तत्पर रहते हैं।

पद्मश्री मोहनलाल चोरड़िया

श्री मोहनलाल जी चोरड़िया ओसवाल समाज के प्रेरणा स्रोत थे। मारवाड़ के एक छोटे से गांव नोखा में सन् १९०२ में उनका जन्म हुआ। सन् १९१७ में मद्रास के प्रमुख व्यापारी श्री सोहनलाल जी चोरड़िया ने उन्हें गोद ले लिया और उसी वर्ष मद्रास की प्रसिद्ध फर्म "अगरचन्द मानमल" के वे मालिक हो गए।

वे बड़े कर्तव्यनिष्ठ एवं धर्म परायण थे। विभिन्न धार्मिक एवं जन कल्याणकारी प्रवृत्तियों के लिए सन् १९३९ में जोधपुर महाराजा ने उन्हें सम्मानित कर पालकी एवं सिरोपाव बख्शा। तामिलनाडु में रह कर आपने वहां के जन जीवन हितैषी शिक्षालयों, औषधालयों एवं कालेजों का निर्माण कराया। वे "भगवान महावीर अहिंसा प्रचार संघ" एवं रीसर्च फाउन्डेशन फार जैनोलाजी के अध्यक्ष थे। अखिल भारतवर्षीय स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स के तो आप प्राण थे। सन् १९७२ में भारत सरकार ने आपको सेवापरायणता के लिए "पद्मश्री" के अंलकरण से विभूषित किया। ५ फरवरी १९८४ को आप दिवंगत हुए। कोट्याधीश होते हुए भी आप निरभिमानी कर्मयोगी थे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री मेघजी पेथराज शाह

श्री मेघजी भाई शाह

गलियों की गर्द से उठ अपने अध्यवसाय से ऐश्वर्य के महल खड़े कर सम्पत्ति का समाज कल्याण के लिए सही उपयोग करने वाले श्रेष्ठि की यह अनुपम यश गाथा है। कच्छ से प्रवसित होकर संवत् १५९७ के करीब जामनगर (काठियावाड) के हलारी तालुका में बसने वाले बीसा ओसवालों में शाह घराना भी था। दबा संग ग्राम मे बसे पेथराज मामूली खेती बाड़ी कर दिन गुजार रहे थे। संवत् १९६१ मे मेघजी भाई का जन्म हुआ। उनका बचपन अभावों में बीता। पांचवी कक्षा तक शिक्षा पाकर वे गांव के ही स्कूल में आठ रूपए माहवार पर अध्यापक बन गए। संवत् १९७५ में उनका विवाह जैसिंह शाह की सुपुत्री मांगी बाई से हो गया। प्रथम महायुद्ध के समाप्त होते-होते सौराष्ट्र के अनेक बीसा ओसवाल पूर्वी अफ्रीका जाकर बसने लगे थे। किशोर मेघजी भाई में भी ललक जगी। माँ के जेवर गिरवी रख कर किसी तरह पैसों का जुगाड़ किया और संवत् १९७६ में वे मोम्बासा आए।

वहाँ "कानजी मेपा कम्पनी" में तीन सौ रूपए सालाना पगार पर खाता बही लिखने के काम पर लग गए। तब पूर्वी अफ्रीका में हिन्दुस्तानी रूपये का ही चलन था। तीन वर्ष बाद मालिकों ने उनकी ईमानदारी एवं कार्य कुशलता से प्रसन्न होकर पगार पन्द्रह सौ रूपए सालाना कर दी। कुछ वर्षों बाद फर्म बन्द हो गई। मेघजी नैरोबी चले गए एवं मोम्बासा से फुटकर सामान ले जाकर नैरोबी में बेचना शुरू किया। संवत् १९७९ में उनके दो भाई भी अफ्रीका आ गए एवं रायचन्द ब्रादर्स नाम से स्वतंत्र फर्म कायम की। संवत् १९८७ में मेघजी भाई की पत्नि का देहांत हो गया। उनका दूसरा विवाह नाथूभाई शाह की सुपुत्री मनी बेन से हुआ। पिता एवं प्रथम पुत्री की मृत्यु के मानसिक आघात झेलने के बाद मेघजी भाई के दिन फिरे। व्यवसाय दिन दूना रात चौगुना बढ़ा। कई उद्योग स्थापित किए एवं पूर्वी अफ्रीका के समृद्ध श्रेष्ठियों में गिने जाने लगे।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

संवत् २००० में जब भारत में बंगाल का अकाल पड़ा, मेघजी भाई रीलीफ फंड के कोषाध्यक्ष मनोनीत हुए। तभी पुत्र विपिन का जन्म हुआ। मेघजी भाई ने उसे अकाल के लिए किये सेवा कार्य का पुरस्कार माना। तभी से शिक्षा एवं असहायों की सहायता करने को मेघजी भाई ने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया। ज्यों-ज्यों सम्पत्ति बढ़ी, मेघजी भाई के सेवा-अवदानों की रकम भी बढ़ती रही। संवत् २०१० में उन्होंने व्यवसाय से सन्यास ले लिया। उस समय उनकी कुल सम्पत्ति २५ लाख पाउंड यानि ७ करोड़ ५० लाख रूपये थे। उनके अवदान ३ करोड़ रूपयों से कहीं अधिक थे। ऐसे दान दाता विश्व के इतिहास में गिने चुने ही है। संवत् २००५ में उन्होंने अपनी सम्स्त भारतीय सम्पत्ति को एक ट्रस्ट के सुपुर्द कर दिया। यह मेघजी पेथराज चोरीटेबल ट्रस्ट निरंतर शैक्षणिक अवदान देता रहेगा एवं मेघजी भाई की स्मृति सर्वदा अक्षुण्ण रखेगा।

संवत २०१२ में उन्हें भारत की राज्य सभा का सदस्य मनोनीत कर उनका समुचित सम्मान किया गया। संवत् २०२१ में अचानक ह्रदय गति अवरोध से इस नर पुंगव का देहावसान हो गया। आप दो पुत्रों एवं पाँच पुत्रियों से भरा पूरा परिवार छोड़कर स्वर्गस्थ हुए।

श्री कन्हैयालाल मेहता

उदयपुर के श्री कन्हैयालालजी मेहता असाधारण व्यक्तित्व के धनी थे। एक तरफ उन्होने ओसवाल समाज के प्रथम अधुनातन आई. सी. एस. अफसर बनने का गौरव प्राप्त किया दूसरी तरफ मनोरंजन व खेलों की दुनिया में विश्व की प्रसिद्ध टेनिस व बेडमिंटन टीमों की कप्तानी करने का सौभाग्य पाया। आप का जन्म संवत् १९७१ में उदयपुर के प्रसिद्ध मेहता खानदान में हुआ। यह वही मेहता खानदान है जो मंत्रीश्वर कर्मचन्द बच्छावत के परिवार में बची एक मात्र निशानी से पल्लवित हुआ। आपके पितामह दीवान मेहता पन्नालाल जी का मेवाड़ राज्य में बड़ा सम्मान था। संवत् १९८९ में अजमेर से स्नातकीय परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद आप विलायत चले गये। वहाँ लंदन विश्वविद्यालय की स्नाकोत्तर परीक्षा में प्रथम रहे। वहीं लंदन विश्वविद्यालय की टेनिस टीम के प्रथम भारतीय कप्तान चुने गए। संवत् १९९२ में आप बैरिस्टर बने। इसी वर्ष आप लंदन विश्वविद्यालय की बैडमिंटन क्लब के भी सभापति निर्वाचित हुए। संवत् १९९३ में आपने इंडियन सिविल सर्विस (आई. सी. एस.) परीक्षा उत्तीर्ण की।

श्री भंवरलाल दूगड़

सरदारशहर के चैनरूप सम्पतराम दूगड़ खानदान के सेठ सुमेरमल जी के दो पुत्र हुए— भंवरलाल जी और कन्हैयालालजी दोनो ही पुत्रों से ओसवाल समाज गौरवान्वित है। सेठ भंवरलाल जी का जन्म सन १९१८ में हुआ। कहते है, मां (राजलदेसर के श्री जयचन्दलाल जी बैद की पुत्री) इचरज देवी ने पुत्रों के जन्म से पूर्व दो सिंह शावकों का स्वप्न देखा था। बड़े होकर दोनों भाई समाज सेवा के क्षेत्र में अग्रणी बने। सन् १९४८ में सेठ भंवरलालजी ने सरदार शहर में सेठ सम्पतराम दूगड़ विद्यालय की स्थापना की। कालान्तर में इन्होंने ही सेठ बुधमल दूगड़ डिग्री कालेज की स्थापना की। अनुज कन्हैयालाल जी ने विश्व प्रसिद्ध गांधी विद्या मन्दिर

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

की स्थापना की। किन्तु थोड़े समय बाद ही कन्हैयालाल जी का झुकाव आध्यात्म की ओर हो गया। अतः १९६० में गांधी विद्या मन्दिर के संचालन का भार भी सेठ भंवरलाल जी के कंधे पर आ पड़ा।

आप बड़े आदर्शवादी और स्वप्नदर्शी थे। समाज हित की अनेक योजनाएं आपने क्रियान्वित की। गांधी विद्या मन्दिर के अन्तर्गत बालवाड़ी, बेसिक रीसर्च ट्रेनिंग कालेज, महिला विद्यापीठ, गोशाला, पशु चिकित्सालय, अनुसंधान केन्द्र आदि अनेक प्रवृत्तियां विकसित की। सन् १९५४ में "ग्राम ज्योति केन्द्र" और "आयुर्वेद विश्व भारती" की स्थापना की एवं दो लाख रूपयों का अवदान दिया। आयुर्वेद का गहरा ज्ञान उन्हें पिता से विरासत में मिला था। रोगियों की निःस्वार्थ सेवा को उन्होंने जीवन का ध्येय बना लिया था। बापा सेवा सदन की स्थापना इसी की एक कड़ी थी। आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को उन्होने नये आयाम दिए। कहते हैं, वे रोगी की व्यथा से द्रवित हो उसे अपने ऊपर ले लेने से भी नही चूकते थे। एक बार मोहनलाल जी जैन की लड़की के ज्वर ग्रस्त होने पर वे इतने द्रवित हुए कि बच्ची की नाड़ी धरे बैठे ही रहे—फलतः लड़की तो अच्छी हो गई पर उन्हें कई दिन ज्वर पकड़े रहा।

सन् १९६० के जल प्रलय के समय सरदार शहर क्षेत्र में अनेक मकान धराशायी हो गए। लाखों लोग बेघर हो गए। उस समय उन्होने जी जान लगाकर सेवाकार्य का नियोजन किया। इस तरह शिक्षा, चिकित्सा और सेवा की त्रिवेणी के वे सूत्रधार थे। सरदार शहर में इण्डस्ट्रियल इस्टेट की स्थापना उनका अंतिम स्वप्न था जिसके लिए जयपुर जाते हुए सन् १९६१ में एक कार दुर्घटना में इस कर्मवीर का असमय निधन होने से समाज की अपूरणीय क्षति हुई।

श्री भंवरमल सिंघी

नये समाज के स्वप्न द्रष्टा, कवि चिन्तक, स्वतत्रंता सेनानी, सामाजिक एवं धार्मिक क्रांतियों के प्रणेता एवं कलाकार श्री भंवरमल सिंघी का बहुआयामी संघर्षशील व्यक्तित्व जैनों और ओसवालों के लिए ही नहीं, समस्त भारतीय मनीषा के लिए प्रेरणा स्रोत है।

संवत् १९७१ में जोधपुर के निकट बड़ू ग्राम की एक झोपड़ी में उनका जन्म हुआ। सिंघी जी के दादा पेशे से मुंशी थे। उनके कुल २४ सन्ताने हुई। उन्नीस का निधन हो गया। सिंघी जी के पिता बीसवीं सन्तान थे। अतः उन्हें प्यार तो मिला पर अभाव भी। संवत् १९७६ मे फैली प्लेग की महामारी में दाद-दादी का देहांत हो गया। अनेक अन्य हादसों में से गुजरते हुए सिंघी जी बड़े हुए। मेधावी तो वे थे, मिडिल की परीक्षा में सर्वोच्च अंक मिले किन्तु घर की हालत पतली थी। पहले बिसात खाने की और फिर पान की दूकान पर बैठना पड़ा। पर पढ़ते रहे। हाई स्कूल की परीक्षा में फिर जयपुर में सर्वोच्च अंक प्राप्त किए। उन्हें ग्लासीं गोल्ड मेडल प्रदान किया गया। किन्तु नियति को कुछ और ही मंजूर था। पिता की जब अमानत में खयानत के मुकदमें में गिरफ्तार होने की नौबत आई तो माँ के गहने और अपना गोल्ड मेडल बेचकर साहूकार की भरपाई की।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

श्री भंवर मल सिंघी

संवत् १९८९ में अजमेर में ओसवाल महासम्मेलन हुआ। सिंघीजी ने इस सम्मेलन से सामाजिक कार्यों में हिस्सेदारी शुरू की। तभी उनका प्रथम विवाह हुआ परन्तु मानसिक रूप से वे इसे कभी स्वीकार नहीं कर सके। हिन्दी के प्रति प्रेम और स्वराज्य-आन्दोलन का बीज वपन तब तक हो चुका था। उन्होने हिन्दी साहित्य सम्मेलन की विशारद एवं तत्पश्चात् साहित्यरत्न परीक्षाएं उत्तीर्ण की। तभी उनका सम्पर्क श्री कंवरलाल बापना से हुआ जो प्रतिभावान वकील थे एवं आजादी के बाद राजस्थान उच्च न्यायालय के पहले मुख्य न्यायाधीश बने। उनके सहयोग से सिंघी जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ने चले आए। यहाँ उनकी भेंट हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार प्रेमचन्द से हुई जिनकी प्रेरणा से सिंघीजी ने गद्य गीत लिखने शुरू किये जो हंस में प्रकाशित हुए। प्रेमचन्द की संवेदना एवं उदात्त मूल्यों के प्रति आस्था ने सिंघीजी के जीवन की दिशा निर्धारित कर दी। बनारस से स्नातकीय परीक्षा उत्तीर्ण कर आप कलकत्ता आ गए। यहां आकर उनकी प्रतिभा चमक उठी — उनका क्षेत्र विस्तृत हो गया। वे अनेक सामाजिक संस्थाओं और सभाओं (विशेषतः मारवाड़ी सम्मेलन) से जुड़े। संवत् १९९४ में उनके गद्यकाव्यों का संकलन 'वेदना' प्रकाशित हुआ। डा. सुनीति कुमार चटर्जी ने इस काव्य-ग्रंथ की भूमिका लिखी थी। कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने हिन्दी साहित्य में इस नये प्राण संचार एवं भावक्षेत्र के सीमा प्रसार की प्रशंसा की। डा. रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रंथ "हिन्दी साहित्य का इतिहास" में सिंघीजी को हिन्दी का प्रथम गद्य गीतकार माना है।

इसी दरम्यान सिंघी जी ने 'ओसवाल नवयुवक' पत्र का सम्पादन भार सम्भाला। वे समाज को रूढ़ियों एवं अंध धार्मिक साम्प्रदायिकता की कारागार से बाहर लाना चाहते थे। होम करते हाथ जल गया। ज्यों ही पत्रिका में भग्न हृदय का 'साधुत्व' शीर्षक लेख छपा, धर्म एवं समाज के तथाकथित ठेकेदार बौखला गए एवं सिंघी जी को स्तीफा देना पड़ा। संवत् १९९७ में उन्होंने तरूण संघ की स्थापना की एवं तरूण ओसवाल (जो बाद में 'तरूण जैन' और फिर 'तरूण' नाम से निकला) पत्र निकालना शुरू किया। अपनी ओजस्वी पत्रकारिता से उन्होने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

समाज को नई दिशा दी। इसी वर्ष राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा की एक बैठक में वे महात्मा गांधी से मिले। स्वाधीनता आन्दोलन तीव्रतर हो रहा था। संवत् १९९९ में गांधी जी ने 'करो या मरो' एवं "अंग्रेजों भारत छोड़ो" का नारा दिया। सिंघी जी तन मन से आन्दोलन में कूद पड़े। इस बीच उनकी प्रथम पत्नि असमय काल-कवलित हो चुकी थी। आन्दोलन के दरम्यान वे अनेक क्रांतिकारियों से मिले एवं भूमिगत राष्ट्रीय नेताओं से उनका घनिष्ट सम्पर्क रहा। जब नागपुर और बम्बई के बीच रेलवे ट्रेनों को डायनामाइट से उड़ाने की योजना बनीं तो सिंघीजी उसके सूत्र धार नियुक्त हुए। वे डायनामाइट प्राप्त करने में भी समर्थ हुए परन्तु तभी पुलिस को इसकी भनक मिल गई, तलाशी हुई और वे गिरफ्तार कर लिए गये। प्रेसिडेंसी जेल में उन्हें वर्षों रखा गया। पेट में दर्द के कारण उनकी तबीयत बहुत शोचनीय रहने लगी तब उन्हें अस्पताल में स्थानान्तरित किया गया एवं अन्ततः संवत् २००२ में रिहा किया गया।

संवत २००३ में सिंघी जी ने सामाजिक क्रांति में एक नया पृष्ठ जोड़ा। उन्होंने एक बाल विधवा 'सुशीला जैन' से पुनर्विवाह किया जिसे मारवाड़ी समाज के गणमान्य नेताओं का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। यह विवाह रूढ़ परम्पराओं को तिलाञ्जलीं देकर हुआ एवं इसमे पौरोहित्य भी एक महिला ने किया। जब संवत् २००३-४ में बंगाल मे साम्प्रदायिक दंगें भड़क उठे तो सिंघीजी एवं सुशीला जी ने 'बड़ा बाजार अमन सभा' के तहत मुसलमानों की सुरक्षा व्यवस्था में अहम भूमिका निभाई। देश आजाद होने के बाद जब नेतागण अपने राजनैतिक प्रभाव को भुनाने में लग गए तब सिंघी जी राजनीति को ठोकर मार कर सामाजिक सुधारों के अभियान पर निकल पड़े।

'नया समाज' के माध्यम से सिंघी जी का लेखन एक बार फिर सक्रिय हुआ। संवत् २००६ में उन्होंने कलकत्ता में एक विराट सामाजिक क्रांति सम्मेलन का आयोजन किया जिसका सभापतित्व राजस्थान के तात्कालीन नव नियुक्त उद्योग मंत्री श्री सिद्धराज ढ़ढा ने किया एवं उद्घाटन किया श्रीमती अरूणा आसफअली ने। इस सम्मेलन की एक ओर उपलब्धि भी थी— मिनर्वा थियेटर में विष्णु प्रभाकर द्वारा लिखित एकांकी नाटकों का समाज कर्मियों द्वारा सफल मंचन। इन नाटकों में मारवाड़ी समाज के अनेक युवकों-युवतियों ने भाग लिया। ऐसा लगा कि समाज सुधार आन्दोलन में ये नाटक महत्वपूर्ण माध्यम बन सकते है। इसी की फलश्रुति थी प्रसिद्ध नाटककार तरूण राय के साथ मिलकर 'थियेटर सेंटर' की स्थापना। इस सेंटर द्वारा बहुभाषी नाट्य प्रस्तुतियों के साथ नाटक समारोह भी आयोजित किए गए। प्रमुख नाट्य संस्थान अनामिका को अस्तित्व में लाने एवं प्रसिद्ध नाट्यकर्मी श्रीमती प्रतिभा अग्रवाल एवं श्यामानंद जालान को मंच पर लाने का श्रेय सिंघी जी को ही है। संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार पाने वाली अनामिका की प्रस्तुति 'नये हाथ' में सिंघी जी की महत्वपूर्ण भूमिका थी। संवत् २०३७ में अनामिका के रजत जंयती वर्ष पर नये हाथ का पुनः मंचन हुआ तो सिंघी जी ने ६६ वर्ष की अवस्था में एक बार फिर वह भूमिका निभाकर सबको अचम्भित कर दिया।

उनके अदम्य साहस, क्षमता और निडरता का एक उदाहरण संवत् २००७ में सामने आया। पूर्वी पाकिस्तान में फंसे हजारों हिन्दुओं को पश्चिमी बंगाल में लाने की चुनौती सामने

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

थी। पं. बंगाल के मुख्यमंत्री डा. विधानचन्द्र राय ने बड़े सोच विचार के बाद सिघींजी को इस अभियान की कमान सौंपी। बड़ी ही खतरनाक परिस्थिति में १७ विशाल जहाजों का बेड़ा लेकर सिंघीजी रवाना हुए। जैसे-जैसे पूर्वी पाकिस्तान का किनारा नजदीक आ रहा था पानी में डूबती उतरती लाशें दिख रही थी, साम्प्रदायिकता ने खुलकर खून की होली खेली थी। खुलना के पास पाकिस्तानी सेना ने आकर जहाजों को घेर लिया। नेहरू, लियाकत अली और डा. विधान चन्द्र राय से सम्पर्क किया गया, समझौतो की याद दिलाई गई तब कहीं पाकिस्तानी सेना राजी हुई। ढ़ाका, नारायणगंज, चाँदपुर, बारीसाल से शरणार्थी शिविरों में घोर दुर्दशा भोगते बीस हजार हिन्दुओं को जहाजों पर लादा गया। पर रसद और ईधन भला पाकिस्तानी क्यों देतें। रसद खत्म होते देर न लगी और तब शुरू हुआ भूख से तडपना और दम तोड़ती मौतों का सिल सिला। कलकत्ता पहुँचने तक १५० लाशों को पानी में फेंकने के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं था। ज्यों ही जहाज कलकत्ता पहुँचे डा. राय ने सिंघीजी को गले लगा लिया। बीस हजार निराश्रितों की आँखों से प्रकट होता आभार पाकर सिंधीजी का सीना गर्व से फूल गया।

सिंघीजी की जिस कार्य के लिए देश भर में राष्ट्रीय स्तर पर सम्माननीय छवि बनी वह था परिवार नियोजन का प्रचार प्रसार। इस अपूर्व विचार व कार्य को पूर्णतः समर्पित दो चार लोग ही हुए है। संवत् २००५ में पहली परियोजना क्लीनिक खुली-मातृ सेवा सदन अस्पताल के भवन में। कहते है पहले सात महीनों में मात्र दो स्त्रियाँ सलाह लेने आई। पर सिंघीजी ने हार न मानी, दर्जनो लेख लिखे, पेम्फलेट छपवा कर वितरित किए, घरो और फैक्ट्रियों में जाकर प्रशिक्षण की व्यवस्था करवाई। उनकी लिखी 'राष्ट्र योजना और परिवार योजना' पुस्तक बेहद लोकप्रिय हुई। नियोजन सम्बन्धी एक पत्रिका का नियमित प्रकाशन किया। परिवार नियोजन संघ की स्थापना उन्होने ही की थी। पन्द्रह वर्षों तक वे इस संघ के उपाध्यक्ष रहे। इसी हेतु जापान, थाईलेंड, इंग्लैंड, फ्रांस, डेनमार्क, स्वीडन, अमरीका, नाईजेरिया, ट्यूनिशिया, चिली, सूरीनाम आदि देशों की यात्राएं की।

शिक्षा प्रसार में सिंधीजी की भूमिका और भी महत्वपूर्ण रही। कलकत्ता स्थित नोपानी विद्यालय, बालिका शिक्षा सदन, टांटिया हाई स्कूल, शिक्षायतन कालेज, पारिवारिकी आदि संस्थाऐं उनके निर्देशन से उपकृत हुई। पारिवारिकी सुशीला जी द्वारा स्थापित झुग्गियों में रहने वाले बच्चों का सबसे बड़ा स्कूल है जहां ७०० बच्चे निःशुल्क शिक्षा, दोपहर का भोजन, पुस्तके एवं ड्रेस मुफ्त पाते है। जयपुर के कानोड़िया महिला महाविद्यालय, मुकन्द गढ़ के शारदा सदन, रांचीं के विकास विद्यालय आदि के संचालन व विकास में सिंघीजी का प्रमुख हाथ था।

सामाजिक एवं धार्मिक सुधार-आन्दोलनों में उन्हें साम्प्रदायिक व कट्टर परम्परावादी तत्त्वों की प्रताड़ना व प्रहार भी कम नहीं सहने पड़े। परदा विरोधी प्रदर्शनों में धरना और सत्याग्रह भी शामिल थे। इन प्रदर्शनों में प्रदर्शकों पर पत्थर बरसाये जाते, थूका जाता, अपमानित किया जाता, महिला प्रदर्शनकारियों के कपड़े तक फाड़ दिए जाते। परन्तु सिंघीजी ने हार न मानी। आखिर पर्दा समाज से विदा लेकर ही रहा। इसी तरह विवाहों में होने वाले आडम्बर, फिजूल

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

खर्ची एवं दिखावे के खिलाफ भी उन्होने आन्दोलन किया। इन कार्यों में उनके बहुत से दुश्मन भी बने। संवत् २०१२ में "बाल दीक्षा निवारक विधेयक" के समर्थन में कलकत्ता स्थित जैन भवन में हुई एक सभा में तेरापंथ सम्प्रदाय के कट्टर पंथियों ने उन पर प्राणघाती हमला किया। हाल की बिजली गुल कर लोहे की छड़ों से उन पर अंधाधुंध वार किये गए। ४८ घंटें बाद उन्हें हेश आया।

मारवाड़ी समाज ने उनकी अनगिनत सेवाओं का समुचित सम्मान करते हुए संवत् २०३० में रांची में हुए अखिल भारतवर्षीय मारवाड़ी सम्मेलन का उन्हें अध्यक्ष चुना। पहली बार एक पूँजींपति श्रेष्ठि की बजाय एक मामूली नौकरी पेशा व्यक्ति को अध्यक्ष चुन कर समाज ने उनके अमूल्य अवदान का उचित मूल्यांकन किया। संवत् २०३३ में हैदराबाद में हुए सम्मेलन में उन्हें पुनः अध्यक्ष चुना गया। सम्मेलन के इतिहास में यह पुनरावृति भी पहली बार हुई। यह सिंघीजी के संघर्षशील उदात्त व्यक्तित्व का शीर्ष बिन्दु था। 'मारवाड़ी' शब्द जो अपनी साख पूर्णतया खो चुका था, सिंघीजी ने उसे प्रणम्य बना दिया। संवत् २०४३ में जीवन के ७० वर्ष पूरे कर लेने पर कलकत्ता में श्री भगवती प्रसाद खेतान की अध्यक्षता में बनी अभ्यर्थना समिति द्वारा सिंघीजी का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। संवत् २०४३ में जयपुर में उनका देहा-वसान हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

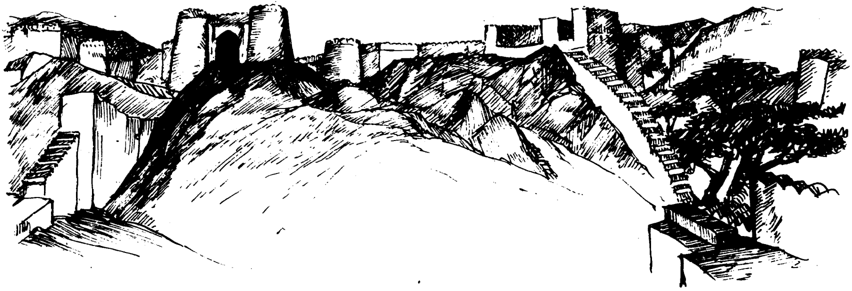

अध्याय

त्रि-बिंश

प्रगति के बढ़ते चरण

ओसवाल व्यवसायी जाति है। क्षत्रिय वर्ण होते हुए भी राज्यों का कोष्ठागार हमेशा उन्हीं के सुपुर्द रहा। पर यह तो हुई कुछेक इने गिने श्रेष्ठियों की बात। विभिन्न जातियों के हजारों नर नारी जैन आचार्यों द्वारा प्रतिबोधित हो ओसवाल कुल में शामिल हुए। वे सभी न तो लक्षाधिपति ही थे न शासन से सम्बन्धित। ओसवालों की संख्या दिनोदिन बढ़ती रही परन्तु अधिकांश भारत की आम जनता की तरह वैभव हीन ही थे एवं श्रेष्ठि वर्ग द्वारा उनका नाना प्रकार से शोषण भी जारी रहा। यहां तक कि पंचायतों को भी उस शोषण का माध्यम बना लिया गया। इसीलिए समाज में नाना समस्याऐं उठ खड़ी हुई। बीसवीं शदी में प्रवेश करते करते समाज उनसे घिर गया था। समाज के चिंतन शील् व्यक्तियों ने लेखन एवं अन्य माध्यमों से जन जागरण के प्रयास शुरु किए।इसी ऐतिहासिक उपक्रम की कड़ियाँ हैं-महासम्मेलन, संस्थाऐं एवं पत्रिकाऐं।

इस चेतना का सामूहिक रूप सर्वप्रथम उजागर हुआ संवत् १९१९ में जिसके प्रेरणा स्रोत थे स्थानकवासी मुनि परमानन्दजी। उनके सद्प्रयत्नों से बोदवड़ (खान देश) में अखिल भारतवर्षीय ओसवाल महासभा की स्थापना हुई। इसका प्रथम अधिवेशन माले गांव (नासिक) में

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

नरसिंह पुर के श्री मानकचन्दजी कोचर की अध्यक्षता में हुआ। परन्तु काम आगे न बढ़ सका। धार्मिक एवं साम्प्रदायिक मतभेद हो जाने से महासभा का काम ठप्प हो गया।

सन् १९२० में जोधपुर के राय साहब किशनलालजी बाफना ने 'ओसवाल' नाम से एक मासिक पत्रिका निकालनी प्रारम्भ की। समाज की दुर्दशा का चित्रण करने वाली इस प्रथम पत्रिका का सम्पादन कुछ दिन आगरा के श्री पद्मसिंह जी सुराना ने संभाला। सुजानगढ़ के श्री पृथ्वीराज जी डागा भी कुछ समय तक इसके सम्पादक रहे। जोधपुर के नवयुवक ओसवालों ने सन् १९२२ में अखिल भारतवर्षीय नवयुवक महामंडल की स्थापना की। परन्तु यह जोश भी कुछ दिन बाद ठंडा पड़ गया।

अखिल भारतवर्षीय प्रथम ओसवाल महा-सम्मेलन

भारतवर्ष के कोने-कोने में फैले हुए ओसवाल समाज को संगठित करने का प्रथम वृहद प्रयास सन् १९३२ में हुआ। रायसाहब कृष्णलालजी बाफना एवं आगरा के दयालसिंह जी जौहरी के सद्प्रयत्नों से ओसवाल जाति का अखिल भारतवर्षीय महा सम्मेलन अजमेर में बुलाया गया। इस सम्मेलन में देश के समस्त भागों से समाज के प्रतिष्ठित एवं मनोनीत प्रतिनिधियों ने भाग लिया। कलकत्ता के प्रसिद्ध विद्वान एवं पुरातत्त्ववेत्ता ओसवाल श्रेष्ठि श्री पूर्णचन्द्र जी नाहर ने सम्मेलन का सभापतित्व किया। अनेक क्रान्तिकारी प्रस्ताव सम्मेलन में पारित हुए जिनमें मुख्य थे-पर्दा बहिष्कार, बाल-विवाह-निषेध, एक पत्नि के रहते हुए दूसरा विवाह-निषेध, चालीस वर्ष से ऊपर आयु में वृद्ध-विवाह-निषेध, मृत्यु-भोज-निषेध, वर-कन्या क्रय-विक्रय-निषेध, शादी विवाह के समय रूढ़ियों व आडम्बरों का निषेध-विषयक प्रस्ताव। विडम्बना यह है कि इनमे से अनेक प्रस्तावों ने आज भी अपनी उपयोगिता नहीं खोई है। वृद्ध विवाह की चालीस वर्षीय सीमा मनुष्य की औसत आयु बढ़ जाने से व्यर्थ हो गई है। उस समय चालीस वर्ष की आयु में आदमी वृद्धता के कगार पर आ जाता था, अब साठ वर्ष की आयु में भी वह वृद्ध नहीं कहलाता। मजेदार बात यह है कि सम्मेलन में जयपुर के प्रसिद्ध समाज सेवी श्री गुलाबचन्द जी ढ़ढा ने वृद्ध विवाह की आयु सीमा ४० की बजाय ४५ कर देने का संशोधन रखा था जो आपके क्रांतिकारी सुपुत्र श्री सिद्धराज जी ढ़ढा के जोरदार शब्दों में विरोध करने पर वापस ले लिया गया।

समाज के अग्रगण्य नेता राष्ट्रीय समस्याओं से तब भी मुहँ मोड़ रहे थे। श्री सिद्धराज जी ढ़ढ़ा का "अछूतोद्धार" विषयक प्रस्ताव सम्मेलन में पारित नही हो सका था। सम्मेलन की सबसे बड़ी फलश्रुति यह रही कि सम्मेलन ने समाज की अग्रणी शक्तियों को एक मंच पर ला खड़ा किया एवं उससे उज्जवल भविष्य की आशाऐं बंधीं। प्रथम महासम्मेलन को जिन्होंने नेतृत्व दिया उनमें मुख्य थे प्रज्ञाचक्षु पण्डित सुखलालजी, कुन्दन मलजी फिरोदिया, राजमलजी ललवाणी, गुलाबचन्दजी ढ़ढ़ा, नथमल जी चोरडिया प्रभृति ओसवाल श्रेष्ठि। इनमे से अनेक देश के राष्ट्रीय आन्दोंलन से भी जुड़े।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

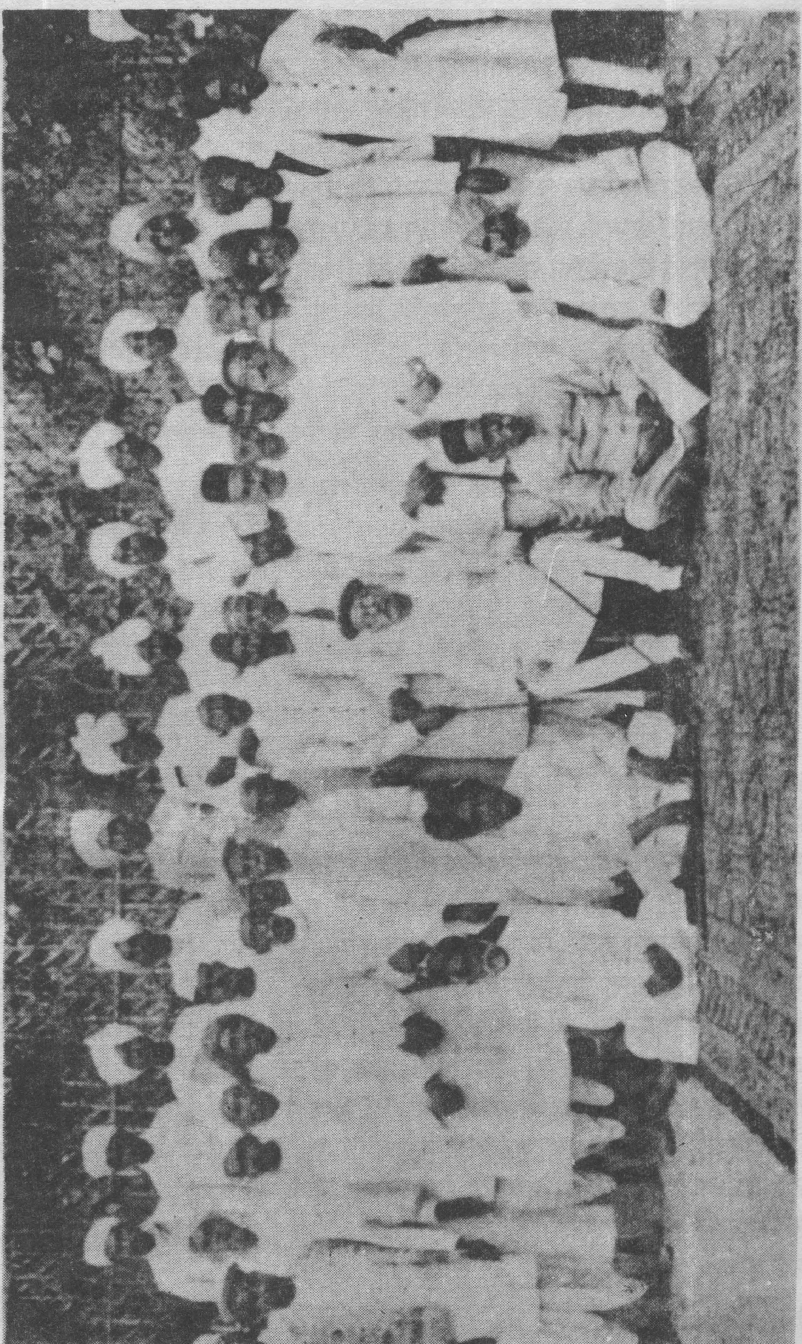

प्रथम अखिल भारतीय ओसवाल महोत्सव, अजमेर, १९३२

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

द्वितीय महासम्मेलन

दो वर्ष उपरान्त अखिल भारतवर्षीय ओसवाल महासम्मेलन का द्वितीय अधिवेशन फिर अजमेर में हुआ। सन् १९३४ के इस अधिवेशन का सभापतित्व किया आगरा के प्रसिद्ध कांग्रेसी नेता ओसवाल श्रेष्ठि श्री अचलसिंह जी ने एवं मंत्री थे आगरा के जौहरी श्री दयाल सिंहजी चोरड़िया। इस बार सम्मेलन के मंच से कुल पन्द्रह प्रस्ताव पारित किए गए जिनमें मुख्य था "मौसर बन्द करने" सम्बधी प्रस्ताव। सम्मेलन द्वारा पारित प्रस्तावों के फलस्वरूप परम्परा गत पंचायतों एवं पंचों से सम्मेलन सीधी टकराहट की स्थिति में आ गया था। उस समय समाज पर पंचायती शिकञ्जा इस कदर जकड़ा हुआ था कि आम आदमी कुछ करने को स्वतंत्र न रहा था। मौसर जैसी कुप्रथाओं ने विभत्स रूप धारण कर लिया था-जबरन पंचायत द्वारा लोगों को मौसर करने के लिए मजबूर किया जाता था। यही नहीं, मौसर में कौन सी मिठाईयाँ बनेगी एवं कितने लोगों को न्योता जायेगा-यह निर्धारण भी पंच मनमाने ढ़ंग से करते थे। यही

नहीं, पंच विधवाओं एवं गरीबों की मजबूरी का बेजा फायदा उठाते थे, उन्हें कर्ज लेने, जायदाद बेचने एवं नाबालिग लड़कियों की अनमेल शादी करने पर मजबूर किया जाता था। सम्मेलन के प्रस्ताव के फलस्वरूप अनेक जगहों पर सम्मेलन के कार्य-कर्ताओं ने समझाबुझा कर मौसर रूकवाए, अनेक जगहों पर सत्याग्रह और अनशन करना पड़ा। लोगों ने मौसर न करने की प्रतिज्ञाऐं ली। सम्मेलन का मंच इस तरह सामाजिक सुधारों एवं क्रांति का वाहक बन गया।

तात्कालीन ओसवाल समाज में प्रांतीय भेद बढ़ने लगा था। दसा-बीसा प्रभेद से तो समाज सदियों से पीड़ित था ही, इधर मालवा के अरूणोदय समाज के ओसवाल बीसा ओस-वालों से पृथक समझे जाने लगे थे। उनके साथ रोटी-बेटी व्यवहार बन्द हो गया था। सम्मेलन ने एक कमीशन नियुक्त कर मालवीय अरूणोदयी ओसवालों की उत्पत्ति एवं पूर्वजों सम्बन्धी गवेषणाऐं करवाई। ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर यह सिद्ध हो गया कि वे मूलतः बीसा ओसवाल है। सम्मेलन के इस द्वितीय अधिवेशन में एक प्रस्ताव द्वारा इस प्रांतीय भेद को हटाने एवं उन्हें बीसा ओसवाल मान कर रोटी-बेटी व्यवहार खोलने पर बल दिया गया। एक अन्य प्रस्ताव द्वारा समाज में फैली हुई नाना कुरीतियों के निवारणार्थ रियासती नरेशों से कानून बनाने की अपील की गई। सम्मेलन के कार्यकर्त्ता यह महसूस करने लगे थे कि परम्परागत पंचायतों का विरोध करना विशेष फलदायी नहीं हो पा रहा था कारण आम आदमी उनकी गिरफ्त में था। इन प्रस्तावों के अलावा अन्य प्रस्तावों में वृद्ध विवाह, बाल विवाह, अनमेल विवाह, कन्या विक्रय, पर्दा आदि रूढ़ियों का एक बार फिर विरोध किया गया। एक ओर प्रस्ताव देश की राष्ट्रीय चेतना के अनुरूप स्वदेशी के पक्ष में पारित हुआ। यह ओसवाल समाज में नव-जागरण का प्रतीक था।

तृतीय महासम्मेलन

सन् १९३५ में अखिल भारतवर्षीय तीसरा ओसवाल महासम्मेलन मन्दसौर (मालवा) में हुआ। जामनेर के प्रसिद्ध ओसवाल श्रेष्ठि श्री राजमलजी ललवानी ने इस सम्मेलन की अध्य-

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

क्षता की। शनै-शनै सम्मेलन की गति विधियों में समाज की दिलचस्पी बढ़ रही थी। इस बार देश के विभिन्न भागों से आए एक हजार से भी अधिक प्रतिनिधियों ने सम्मेलन में भाग लिया-यह संख्या सम्मेलन के पिछले दोनो अधिवेशनों में शामिल हुए प्रतिनिधियों की सम्मिलित संख्या से भी अधिक थी। इस वक्त तक इन्दौर के प्रसिद्ध वकील एवं विद्वान इतिहासकार सुखसम्पतरायजी भंडारी का लिखा "ओसवाल समाज का इतिहास" प्रकाशित हो चुका था। सम्मेलन के अध्यक्ष ने अपने भाषण में ओसवाल जाति के गौरवपूर्ण इतिहास का स्मरण करते हुए उन्हें राज्य निर्माता बताया।

समाज में व्याप्त कुरीतियों के निवारणार्थ जो प्रस्ताव इस सम्मेलन में पारित हुए उनमें से अधिकांश पिछले दो सम्मेलनों मे पारित हो चुके थे। किन्तु बार-बार उन्हें दोहराने की आवश्यकता से ही लगता है समस्यायें कितनी संगीन थी। मौसर की पाशविक प्रथा रूकवाने के लिए सम्मेलन के कार्यकर्त्ताओं द्वारा चलाए जा रहे सत्याग्रह का सम्मेलन के मंच से अभिनन्दन किया गया। एक नई समस्या को इंगित करने वाला प्रस्ताव था-"क्वांरी लड़कियों का विवाह क्वांरे लड़कों से ही किया जाय।" तात्कालीन जन गणना के आंकड़ों पर दृष्टिपात करने से एक विभत्स तथ्य उजागर होता है-समाज में क्वांरे युवकों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि। इसका मूल कारण था समाज में बढ़ती हुई गरीबी। शिक्षा के सर्वथा अभाव ने उसे और विभत्स बना दिया। धनी-मानी विषय लोलुप समाज के ठेकेदार तीन-तीन चार-चार विवाह करने लगे। कन्याओं के पिता मजबूरी में कन्याऐं बेचने लगे, अल्पवय एवं अनमेल विवाह का कोढ़ समाज को रसातल में ले जा रहा था। रतलाम की कंचन बाई ने इन्हीं दिनों परम्परागत बेड़ियाँ तोड़कर स्वमतानुसार एक पोरवाड़ युवक से विवाह किया था-सम्मेलन के मंच से उनका अभिनन्दन किया गया और पंच पंचायती एवं सरकारी तंत्र द्वारा उन्हें दी गई यातनाओं की भर्त्सना की गई।

चतुर्थ महासम्मेलन

ओसवाल समाज का चौथा अखिल भारतवर्षीय महासम्मेलन सन् १९३७ में कलकत्ता महानगर में हुआ। कलकत्ता की प्रमुख समज सेवी संस्था 'ओसवाल नवयुवक समिति' के संयुक्त तत्वाधान में होने से इसकी महत्ता ओर भी बढ़ गई थी। इस अधिवेशन की अध्यक्षता जयपुर के प्रसिद्ध समाज सेवी श्री गुलाबचन्द जी ढ़ढ़ा ने की। उन्हें ओसवाल समाज में प्रथम एम. ए. होने का गौरव प्राप्त था। आपके सुपुत्र श्री सिद्ध राज जी ढ़ढ़ा अपने राष्ट्रीय क्रांतिकारी विचारों से सम्मेलन के लोकप्रिय एवं चहेते नेता बन चुके थे। फिर भी सम्मेलन में वर्चस्व परम्परागत विचारों वाले प्रौढ़ नेताओं का था जो राष्ट्रीय धारा के साथ तो होना चाहते थे परन्तु पुरानी मान्यताओं का व्यामोह उन्हें क्रांतिकारी कदम उठाने से रोके हुए था।

इस सम्मेलन में देश के विभिन्न भागों से आए प्रतिनिधियों के अलावा अन्य जातियों के शीर्षस्थ नेताओं को भी आमंत्रित किया गया। महाराजा भावनगर, महाराजा त्रिपुरा, लक्ष्मीनिवास जी बिड़ला, भागीरथ जी कानोड़िया, रामकुमारजी भुवालका, प्रो. विनयकुमार सरकार,

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

वेणी शंकर जी शर्मा प्रभृति सज्जनों का सानिध्य एवं मार्गदर्शन सम्मेलन को प्राप्त हुआ। सबसे बड़ी उपलब्धि थी देश की राष्ट्रीय धारा के अनुरुप पारित हुए राष्ट्रीय प्रस्ताव जिनमें से एक हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दिए जानेसे सम्बंधित था। इसी सम्मेलन में समाजभूषण छोगमलजी चोपड़ा एवं सन्तोकचन्द जी बरड़िया आदि सज्जनों ने "जैन धर्म की संस्कृति एवं आदर्श" को ओसवाल जाति की मूल प्रेरणा एवं आदर्श के रूप में मान्यता दिए जाने सम्बंधी प्रस्ताव रखा था जो समाज के विराट स्वरूप को देखते हुए सम्मेलन ने अस्वीकार कर दिया।

समाज में पंचों की धांधली रोकने एवं जन साधारण की गर्दन पर कसे उनके शिकञ्जे को छिन्न-भिन्न करने वाला एक ओर क्रांतिकारी प्रस्ताव सम्मेलन के मंच से पारित हुआ-"जाति बहिष्कार" की विघटन कारी प्रथा के विरूद्ध। पंच लोग मनमाने ढ़ंग से न्यस्त स्वार्थों एवं विषय लोलुपता वश जारी किए गए उनके हुक्मनामों को न मानने पर हर किसी को जाति बहिष्कृत कर देते थे। श्री-संघ विलायती विवाद उनकी इसी अमंगलकारी वृत्ति का प्रतीक था। सम्मेलन में पुरजोर शब्दों में इस वृत्ति की भर्त्सना की गई।

सम्मेलन की गति विधियों में शनै-शनै समाज सुधार के अलावा समाज के सांस्कृतिक उत्थान के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों की स्वीकृति भी इसी अधिवेशन की फलश्रुति है। सम्मेलन के मंच से साहित्य पुरस्कार की घोषणा हुई। सम्मेलन के मुख पत्र "ओसवाल सुधारक" का नाम बदल कर ओसवाल कर दिया गया एवं उसका कार्यालय कलकत्ता लाकर संचालन भार सर्वश्री बहादुरसिंह जी सिंघी, विजयसिंह जी नाहर एवं सन्तोकचन्दजी बरड़िया को सौपा गया। श्री विजयसिंह जी नाहर सम्मेलन के प्रधान मंत्री मनोनीत हुए।

ऐसा लगता है कि सम्मेलन अपना एवं पत्रिका का कार्यालय कलकत्ता लाकर नई और पुरानी पीढ़ी के बीच चल रही शाश्वत जद्दोजहद के झंझावात में फँस गया। परम्परागत रूढ़ियों में सुधार लाना एक बात है किन्तु आमूल चूल क्रांति की कोशीश उसकी जड़ें उखाड़ने के समान कष्टकारी होती है। बड़े-बूढ़ों को क्रांति सर्वदा ग्राह्य नही होती। श्री नाहर का प्रधान मंत्री चुना जाना युवा-शक्ति की जीत थी परन्तु वही सम्मेलन के विकास के लिए घातक बन गई। यह वह समय था जब स्वतंत्रता की लड़ाई दिनों-दिन तेज हो रही थी। महात्मा गांधी के आह्वान पर लाखों युवक ब्रिटिश सरकार की जेलें भर रहे थे। ओसवाल युवक भी किसी से कम न थे। विजयसिंह जी नाहर, सिद्धराज जी ढ़ढ़ा, भंवरमलजी सिंघी, सरदार सिंह जी महनोत प्रभृति ओसवाल क्रांतिकारी युवकों ने भी स्वाधीनता संग्राम में जेल जाकर समाज का मुखोज्जवल किया। साथ ही समाज की परम्परागत पुरानी पीढ़ी से भी टकरा गए। 'ओसवाल' में छपे क्रांतिकारी विचार समाज को ग्राह्य न हो सके और अन्ततः नाहरजी को स्तीफा देकर उससे अलग होना पड़ा।

पुरानी पीढ़ी के नेता चाहते थे कि धार्मिक एवं वैचारिक मतभेदों को सम्मेलन के मंच पर न लाया जाय। समस्त समाज को साथ लेकर चलने की इच्छा से नये विचारों की धार ही कुंठित हो जाती थी। विशाल संगठन के लोभ एवं एकता बनाए रखने की मृगतृष्णा के कारण

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

हर क्रांतिकारी विचार दबा दिया गया। फलतः कलकत्ता अधिवेशन के बाद सम्मेलन एक बार फिर वहीं आ खड़ा हुआ जहाँ से चला था।

पंचम महासम्मेलन

राय बहादुर कृष्णलाल जी बाफना के प्रयत्नों से ओसवाल समाज का पंचम महासम्मेलन सन् १९३९ में पुष्कर में हुआ। जबलपुर के श्री मोतीलाल जी भूरा इस अधिवेशन के सभापति चुने गए। इस अधिवेशन में भी अनेक प्रस्ताव पारित किए गए किन्तु वास्तविक समस्या से जूझने का साहस किसी में न हुआ। श्री भूरा ने विवाहों में क्रय-विक्रय, बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, समाज में बढ़ती सट्टेबाजी, निर्धनता, बेकारी, शारीरिक शक्ति ह्रास आदि की ओर लोगों का ध्यान खींचा किन्तु विधवा विवाह जैसे प्रस्तावित सुधारों के प्रति सम्मेलन उदास बना रहा।

इस सम्मेलन की एक फलश्रुति थी सम्मेलन के विधान का स्वीकृत किया जाना। स्वीकृत विधान के अनुसार ओसवाल महासम्मेलन का प्रधान कार्यालय प्रति वर्ष अधिवेशन के लिए निश्चित हुए स्थान पर रखने का निश्चय किया गया। यही बिखराव का असली कारण बना। स्थायी कार्यालय कहीं न रहने से सम्मेलन की प्रवृत्तियों में त्वरा न आसकी। स्वीकृत विधान में 'ओसवाल' शब्द को भी व्याख्यायित किया गया-'ओसवाल' से तात्पर्य उस जन समूह से है जो ओसवाल कहलाते है या जिनका बेटी व्यवहार हो जैसे श्रीमाल आदि। इस परिभाषा द्वारा श्रीमालों को तो ओसवालों का अंग माना ही गया, पोरवालों के लिए भी द्वार खुला रखा गया।

सम्मेलन के इस अधिवेशन में ओस वंश की उत्पत्ति विषयक विवाद भी उभर कर सामने आया। "ओसवाल वंश के संस्थापक श्री रत्न प्रभ सूरी की जय घोष एवं स्मरण" करने सम्बंधी प्रस्ताव को साम्प्रदायिक रंग देकर पारित नहीं होने दिया गया। आचार्य रत्न प्रभ सूरि का सम्बंध भगवान पार्श्वनाथ के संतानीय उपकेश गच्छ से था अतः साम्प्रदायिक सहिष्णुता बनाए रखने के नाम पर इसे अस्वीकार कर दिया गया। यह अपने मूल स्रोत को नकारने जैसा ही था। इस तरह धर्म फिर समाज के विकास का अवरोध बन गया। धार्मिक कदाग्रह के कारण सम्मेलन का कार्यकलाप वहीं ठप्प हो गया। जो जातीय संस्था राष्ट्रव्यापी सामाजिक हित को ताक पर रख अमुक धर्म, सम्प्रदाय या वर्ग के न्यस्त स्वार्थ को प्रमुख मान बैठती है, वह कायम नही रह सकती।

अमरावती सम्मेलन

सन् १९५५ में ओसवाल जाति के उत्साही विशिष्ट जनों ने अमरावती (महाराष्ट्र) में एक ओसवाल सम्मेलन का आयोजन किया। किन्तु कलकत्ते की क्रांतिकारी धारा के विपरीत विशाल संगठन का लाभ वहाँ भी आड़े आया। वहाँ भी विचार से ऊपर समाज को माना गया। इसी कशमकश में समाज एक मंच से वंचित रह गया। यद्यपि ओसवाल जाति ने विगत साठ वर्षों से हर क्षेत्र में उन्नति की है किन्तु न तो उसका कोई संगठन बन सका न ही फिर कोई महासम्मेलन आयोजित किया जा सका।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ओसवाल नवयुवक समिति, कलकत्ता

ओसवाल जाति के सर्वाधिक पुराने सक्रिय स्थानीय संगठनों में सर्वोपरि कलकत्ता की 'ओसवाल नवयुवक समिति' है। सन् १९२६/२७ में कलकत्ता के प्रसिद्ध मनोरम उद्यान ईडन गार्डन में एकत्रित समाज के चन्द नवयुवकों ने समाज में व्याप्त कुरीतियों के निवारण एवं चेतना जागृत करने हेतु इस संस्था की नींव रखी। अनेक वर्षों तक सामाजिक सुधार इसका मूल लक्ष्य रहा। संघर्षों से जूझना प्रारम्भ से ही संस्था की नियति बन गया। सांस्कृतिक एवं शारीरिक विकास हेतु अनेक प्रवृतियों का संचालन किया गया।

समिति के ही आह्वान पर अखिल भारतवर्षीय ओसवाल महासम्मेलन का चतुर्थ अधिवेशन सन् १९३७ में कलकत्ता महानगर में आयोजित हुआ। इसकी अध्यक्षता प्रसिद्ध समाज सेवी श्री गुलाबचन्द जी ढ़ढ़ा ने की। समिति निरंतर सामाजिक सुधारों के लिए प्रयत्नशील रही। पर्दा प्रथा, बाल विवाह, वृद्ध विवाह, ओसर, दहेज, छुआछूत, निरक्षरता के विरोध में गोष्ठियों का आयोजन होता। समिति के कार्यकर्त्ताओं को लांछन एवं विरोध भी कम नहीं सहना पड़ा।

धीरे-धीरे देश में राजनैतिक चेतना के जागरण से समिति भी अछूती न रही। अनेक सदस्य स्वतंत्रता संग्राम मे कूद पड़े एवं जेल गए। जेल जाने वाले प्रमुख कार्यकर्ता थे श्री सिद्ध राज ढ़ढ़ा, श्री विजयसिंह नाहर, श्री भंवरमल सिंघी, श्री शेरसिंह बांठिया, श्री सरदार सिंह महनोत आदि। समिति के मंच से भी बिगुल बजा। हमारा समाज भी देश की स्वतत्रंता के लिए बलिदान देने एवं यातनाऐं सहने में भी किसी से पीछे नहीं रहा। भूकम्प एवं अकाल जैसे राष्ट्रीय संकटों में भी सहयोगार्थ समिति सर्वदा अग्रणी रही। राष्ट्र हित कोष के लिए श्री जवाहरलाल नेहरू को समिति की ओर से दस हजार रूपए की थैली भेंट की गई। इसी तरह श्री जय प्रकाश नारायण को उनके समग्र क्रांति अभियान के लिए दस हजार रूपये समिति ने भेंट किए। १५ अगस्त १९४७ को समिति ने बालिका विद्या भवन की स्थापना की जो स्त्री शिक्षा का स्वर्णिम सोपान सिद्ध हुआ। इस शिक्षण संस्था में ७०० से अधिक बालिकाएं हर वर्ष शिक्षा ग्रहण करती हैं। सन् १९५३ में समिति ने कला केन्द्र की स्थापना की। प्रसिद्ध संगीत निर्देशक श्री रवीन्द्र जैन अनेक वर्षों तक इस केन्द्र से संबद्ध रहे। कलाकेन्द्र में सिलाई, चित्रकला नृत्य कला, संगीत की कक्षाएं (दो शिफ्टों में) चालू हैं। प्रायः ३०० बालिकाएं हर वर्ष स्केच पेंटिंगं फैब्रिक्स पेंटिंगं, हस्त कला, क्रास टीचिंग आदि का शिक्षण ग्रहण करती है।

सन् १९५९ के समिति के अधिवेशन में भवन निर्माण की योजना बनी। दानवीर सेठ सोहनलालजी दूगड़ की प्रेरणा एवं श्री सोहनलालजी सेठिया, श्री पूनमचन्द जी भूतोड़िया, श्री रामचन्द्रजी सिंघी प्रभृति समाज्ञ नेताओं के सहयोग एवं अथक प्रयत्नों से न. २ नन्दों मालिक लेन स्थित ओसवाल भवन का निर्माण हुआ। यह संस्था की समस्त प्रवृतियों के सुचारू संचालन के लिए वरदान सिद्ध हुआ।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

सन् १९७० में समति की ओर से कलकत्ता में निशुल्क नेत्र चिकित्सा शिविर का आयोजन किया गया। सन् १९७२ में एक होमियोपैथिक चिकित्सालय की स्थापना की गई। सन् १९७४ में खेलकूद परिषद की स्थापना हुई जिसके अन्तर्गत समिति के प्रागंण में ही बिलियर्ड, स्नूकर, टेबिल टेनिस, बालीबाल, केरम आदि खेलों की समुचित व्यवस्था है। इस परिषद के ३०० सक्रिय सदस्य है एवं वार्षिक प्रतियोगिताऐं आयोजित की जाती हैं।

समिति को ओसवाल समाज के शीर्ष नेताओं का मार्ग दर्शन प्राप्त होता रहा है। श्री छोगमल जी चोपड़ा (सन् १९४० से ४४) श्री पूनमचन्द जी भूतोड़िया (सन् १९५८ से ६९) श्री तिलोकचन्द जी सुराणा (सन् १९५५ से ५८) श्री रामचन्द्र जी सिंघी (सन् १९६९ से ७३) श्री ताजमल जी बोथरा (सन् १९७३ से ८०) प्रभृति सज्जन समिति के अध्यक्ष रहे हैं। एक विशाल भवन के अतिरिक्त समिति का अपना स्थायी कोष है जिसे अक्षुण्ण रखने के लिए समिति की वर्तमान कार्यकारिणी सदा प्रयत्नशील रहती है।

ओसवाल मित्र मंडल, बम्बई

ओसवाल समाज की प्रतिनिधि संस्थाओं में बम्बई का ओसवाल मित्र मंडल है। परस्पर सौहार्द्र एवं सहयोग की भावना के विकास, जन-जागृति, समाज कल्याण, अंधश्रद्धा एवं कुरीतियों के उन्मूलन के उद्देश्य से संवत् २०२७ (सन् १९७१) में बम्बई में इस संस्थान की नींव रखी गई। बम्बई सदियों से भारत के विभिन्न प्रदेशों से आए प्रवासियों का मुख्य केन्द्र रहा है। लाखों प्रवासी यहाँ आकर बस गए है एवं हर दिन आते ही रहते हैं। उन्हें एक डोर से जोड़े रखने एवं परस्पर पर सहज आदान प्रदान का कोई प्रयत्न अब तक सफल नहीं हुआ था। मात्र ८ सदस्यों से शुरू की गई यह संस्था आज बम्बई एवं आसपास के क्षेत्रों में ओसवालों की प्रतिनिधि संस्था मानी जाती है।

श्री बंशीलाल कुचेरिया

मंडल के अन्तर्गत मुलुंड में ओसवाल छात्रावास सुचारू रूप से चल रहा है। होनहार विद्यार्थियों को दस वर्षों से लगातार छात्रवृतियाँ प्रदान की जाती है। मंडल की ओर से एक त्रैमासिक पत्रिका 'ओसवाल जगत' का प्रकाशन होता है। मंडल प्रतिवर्ष सहवन-भोज का आयोजन कर आपसी सौहार्द्र बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। सांस्कृतिक एवं मनोरंजन के कार्यक्रमों का आयोजन मुफ्त कपड़े एवं दवाइयों का वितरण, खेलकूद प्रतियोगिताओं का संचालन एवं क्षमापना (मैत्री)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

दिवस पर समुचित दिशा निर्देशना हेतु विद्वानों के व्याख्यानों का समायोजन मंडल की प्रवृतियों के अंग है। संवत् २०४१ से मंडल ने सर जे.जे. हास्पिटल भायखला में "कृत्रिम अवयव केन्द्र" खोला है जहाँ जयपुरी पांव निशुल्क प्रदान करने की व्यवस्था है। सात सौ सदस्यों वाला यह संस्थान सामाजिक उत्थान हेतु निरंतर कार्यरत है।

ओसवाल मित्र मंडल को ओसवालों का एक प्रतिनिधि संस्थान बना देने का श्रेय श्री बंशीलाल जी कुचेरिया को है। डोन्डाईचा (धुलिया) में संवत् १९८६ में जन्मे श्री कुचेरिया ने चार्टर्ड एकाउन्टेन्सी परीक्षा उत्तीर्ण कर बम्बई में ही कुचेरिया एंड एसोसिएट्स नाम से अपनी फर्म स्थापित की। वे मित्र मंडल के तो प्राण थे ही जनहित की अन्य अनेक संस्थाएं उनके सहयोग से फली-फूली। जयपुर फुट के सिलसिले में उन्होने देश एवं विदेश (मनीला, बैंकाक) भ्रमण कर जगह-जगह कैम्प लगाए। उनकी सार्वजनिक सेवाओं का समुचित सम्मान कर राजस्थानी वेलफेयर एसोशियेसन ने उन्हें ग्यारह हजार रूपए भेंट किए। उदरमना कुचेरियाजी ने उसमें दस हजार रूपये मिला कर समस्त राशि जयपुर फूट केन्द्र को भेंट कर दी। संवत् २०४४ में कुचेरिया जी का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। मात्र एक माह उपरान्त बम्बई में उनका देहावसान हुआ। अब मित्र मंडल की सम्पूर्ण जिम्मेदारी उनके सुपुत्र श्री अजीत कुचेरिया संभाल रहे हैं।

"ओसवाल"— "ओसवाल सुधारक"— "ओसवाल नवयुवक"— "तरुण ओसवाल"

समाज की प्रगति श्रृखंला की बहुमूल्य कड़ियां हैं ये पत्रिकाएं।

ओसवाल महासम्मेलन के विचार के जनक थे राय साहब श्री कृष्णल्लालजी बापना। आपके मन में समाज में फैली रूढ़ियों और कुरीतियों के प्रति समाज को जागृत करने की बड़ी ललक थी। इन स्वप्नों को साकार करने के लिए सन् १९२० में जोधपुर से उन्होंने ओसवाल नाम से एक मासिक पत्र का प्रकाशन शुरू किया। इस पत्रिका का सम्पादन कुछ दिन आगरा के श्री पद्म सिंह सुराणा एवं कुछ दिन सुजान गढ़ के श्री पृथ्वीराज जी डागा ने संभाला। यह पत्र चन्द वर्ष प्रकाशित होकर बन्द हो गया।

जब सन् १९३४ में अजमेर में ओसवाल महासम्मेलन आयोजित हुआ तो 'ओसवाल सुधारक' नाम से एक मासिक पत्र प्रकाशित करने का निर्णय हुआ। सन् १९३७ तक यह पत्र आगरा से श्री अक्षयसिंह जी डांगी के सम्पादकत्व में प्रकाशित होता रहा। महासम्मेलन का चतुर्थ अधिवेशन सन् १९३७ में कलकत्ता में आयोजित हुआ। तभी सम्मेलन का दफ्तर भी आगरा से कलकत्ता स्थानान्तरित कर दिया गया। उसी साल सम्मेलन के मुख पत्र का नाम "ओसवाल सुधारक" से बदल कर "ओसवाल" कर दिया गया एवं श्री विजयसिंह जी नाहर इसके सम्पादक मनोनीत हुए। तब से पत्र पाक्षिक रूप से प्रकाशित होने लगा। सन् १९३९ तक यह पत्र कलकत्ता से ४८ इंडियन मिरर स्ट्रीट कार्यालय से प्रकाशित होता रहा। उस समय उसका सम्पादन श्री गोर्वधनसिंह महनोत कर रहे थे। महनोत साहब के अथक प्रयत्नों के बावजूद

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

समाज ने उन्हें कोई सहयोग नहीं दिया। मायूस होकर उन्होंने अपना अंतिम सम्पदकीय लिखा और पत्र का प्रकाशन बन्द कर दिया।

ओसवाल नवयुवक समिति के उत्साही कार्यकर्त्ताओं ने भी एक पत्रिका प्रारम्भ की। 'ओसवाल नवयुवक' नाम से जिस हस्तलिखित पत्रिका में कलकत्ता के ओसवाल समाज की कलात्मक साहित्यिक रूचि के दर्शन हुए थे उसे समिति का मुख पत्र बना लिया गया और श्री सिद्ध राज ढ़ढ़ा इसके प्रथम सम्पादक मनोनीत हुए। कालांतर में सम्पादन का भार श्री विजयसिंह जी नाहर एवं श्री भंवरमल जी सिंघी के संयुक्त कंधों पर पड़ा। उन्होंने पत्र को क्रांतिकारी स्वरूप प्रदान किया। ज्यों ही पत्र में भग्न हृदय के नाम से विचारोत्तेजक लेख छपने शुरू हुए कि समाज के रूढ़िवादी वर्ग में खलबली मच गई। 'साधुत्व' शीर्षक लेख के छपते ही परम्परा पोषक तत्त्वों ने जबाबी हमले शुरू कर दिए। आगरा से प्रकाशित होने वाले 'ओसवाल सुधारक' पत्र में 'साधुत्व' लेख के खिलाफ लेख छपे। कलकत्ता का परम्परा पोषक ओसवाल समाज भी 'साधुत्व' के क्रांतिकारी विचारों को पचा नहीं सका। ओसवाल नवयुवक के सम्पादक द्वय को स्तीफा देना पड़ा। सन् १९३८ के बाद पत्र निकलना ही बन्द हो गया।

सन् १९४० में श्री भंवरमल जी सिंघी ने तरुण संघ के तत्त्वाधान में कलकत्ता से 'तरुण ओसवाल' नामक मासिक पत्र निकालना शुरू किया। कालांतर में जाति गत सीमा लांघ कर यह पत्र तरुण नाम से निकलता रहा और कई वर्षो तक सामाजिक चेतना का वाहक रहा। सिंघी जी ने स्वतत्रंता प्राप्ति के बाद भी इस मशाल को जलाए रखा। अन्ततः इसका भी वही हश्र हुआ जो अन्य पत्रों का हुआ था।

नये क्षितिज की पुकार

नवीन भारत एवं विश्व के अन्य देशों में ओसवाल जाति की क्या स्थिति है-यह बड़ा अहम् सवाल है। पुरखों के गौरव पर कितने दिन जिया जा सकता है। आज इस समाज का न तो कोई व्यापक संगठन है न कोई समर्थ नेतृत्व। नई पीढ़ी दिग्भ्रमित एवं लक्ष्य हीन लगती है। सांस्कृतिक कोरापन हमें खा रहा है। समाज में व्याप्त दहेज,अंध विश्वास,धार्मिक एवं सामाजिक रुढ़ियां आदि हमारी उन्नति के पथावरोध बने हुए है। दुर्भाग्य से संतों,आचार्यों एवं नाना धार्मिक सम्प्रदायों ने समाज के विकास को कभी अधिक महत्व नहीं दिया। हमारे समस्त क्रिया-कलाप,सोच और रिश्ते अर्थ की धुरी के ईर्द-गिर्द मंडराते हैं। यह स्थिति विचारकों के सम्मुख एक चुनौती है।

आज से करीब ५२ वर्ष बाद ओसवाल समाज २५०० वर्ष पूरे करेगा। समाज के युवक, विचारक,कार्यकर्त्ता, धनपति सभी एक जूट होकर समाज को नई दिशा दें,नये क्षितिज की पुकार हम सुन सकें— यही अभीप्सा है।

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

परिशिष्ट

इतिहास की अमर बेल

ओसवाल

(द्वितीय खण्ड)

सन्दर्भ-ग्रन्थ सूची

अकबर दी ग्रेट मुगल—लेखक : विसेंट स्मिथ
अकबरनामा—बदाउनी
अखिल भारतीय मोहनोत सम्मेलन (स्मारिका)—सम्पादक : डा. कृष्णा मोहनोत (१९८६)
अगरवाल इतिहास परिचय—लेखक : बालचन्द मोदी
अगरवालों की उत्तपत्ति—लेखक : भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (१८९३)
अथ महाजनां री जाता रो छन्द : मत्थेन अमीचन्द रो कयो
(नाहर ग्रंथागार, कलकत्ता) (१८८३)
अंतिम यात्रा कर्मवीर की—लेखक : श्री हंसराज गोलछा (१९८४)
अनेकांत (पत्रिका)—ओसवाल वंशावली
अर्ध कथानक—लेखक : कवि बनारसीदास
अभियान (गुजराती मासिक पत्रिका)—मुंबईना कच्छी जैनों :
लेखिका—शीला भट्ट (१९८३)

आईने अकबरी—लेखक : अबुल फजल (१५९६)
आसाम में ओसवाल (कुशल निर्देश)—लेखक : श्री भँवरलाल नाहटा

इतिहास ओस वंश (गुटका नं २७०३३)—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान,
बीकानेर (१९१३)
इतिहास के दर्पण में-जम्मड़ भवन—लेखिका : श्री कँवर जम्मड़ (१९८४)
इतिहास के बोलते पृष्ठ—लेखक : मुनि छत्रमल जी (१९६१)
इन्डियन एन्टी क्वेरी (Vol. XX)—
इम्पीरियल गजेटियर

उपकेश गच्छ पट्टावलि—लेखक : देवगुप्त सूरि (१३४५)

एक युग : एक पुरुष (सर सिरेमल बापना)—लेखक : ओमप्रकाश शर्मा (१९६९)
एन साईक्लोपिडिया ऑफ रिलीजन
एनाल्स ऑफ मेवाड़—लेखक : कर्नल जेम्स टॉड
एनाल्स एंड एंटीक्वीटीज ऑफ राजस्थान—लेखक : कर्नल टॉड (१८२९)
एपिग्राफिका इंडिका—३२
एशियाटिक सोसाईटी ऑफ बेंगाल रिपोर्ट (Vol.३५, part-१, १८६६ एवं मई-१८६५)
ऐतिहासिक पूर्वजों की गौरव गाथा—लेखक : चौकसी

ओस वंश : अनुसंधान के आलोक में—लेखक : सोहनराज भंसाली (१९८१)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

ओसवाल जाति का इतिहास—लेखक : सुख सम्पतराय भंडारी (१९३४)
ओसवाल : दर्शन-दिग्दर्शन—लेखिका : श्रीमती मनमोहिनी (१९७५)
ओसवाल (पत्रिका)—सम्पादक : गोवर्धनसिंह महनोत (१९३८/१९३९)
ओसवाल नवयुवक (पत्रिका)—
ओसवाल नवयुवक समिति स्मारिका—सम्पादक : भूपराज जैन (१९७८)
ओसवाल संचिका—सम्पादक : श्री विजयराज सुराणा (१९८९)
ओसवाल समाज की परिस्थिति—लेखक : मूलचन्द बोहरा (१९२५)
ओसवाल सुधारक (पत्रिका)—
ओसवालां री पीढियाँ—डा. टैसीटरी (ग्रंथ-२५, अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर)
ओसवालों के गोत्रों की उत्पत्ति—(हस्तलिखित गुटका न. २२) केसरियानाथ मंदिर ग्रंथागार

कच्छ विकास (पत्रिका)—(नवम्बर १९७८)
कल्पसूत्र प्रशस्ति—(संवत् १५४७ लिखित) : मोहनलाल जी महाराज का ग्रंथ भंडार (संदर्भ श्री भँवरलाल जी नाहटा)
कर्मयोगी श्री केसरीमल सुराणा अभिनन्दन ग्रंथ : तामिलनाडु में जैन धर्म—लेखक : मुनि सुमेरमल
कापरड़ा स्वर्ण जयंती महोत्सव अंक
क्रीड़ा कौशल्यम्—
कुवलयमाला—लेखक : उद्योतन सूरि
कुशल निर्देश (पत्रिका)

खण्डेलवाल जैन इतिहास—लेखक : राजमल बड़जात्या (१९१०)
खरतर गच्छ का संक्षिप्त इतिहास (श्रमणी-१९८९) लेखक : विनयसागर जी खरतर
खरतर गच्छ प्रतिबोधित गोत्र और जातियाँ—लेखक : अगरचन्द भँवरलाल नाहटा (१९३०)

गजेटियर ऑफ मानभूम डिस्ट्रिक्ट—प्रबंध : जी कूपलैंड
गजेटियर ऑफ बाम्बे प्रेसिडेसी—केम्पबेल

चण्डी काव्य—रचयिता : मुकुंद राम (१५७४)
चाँद (पत्रिका)—मारवाड़ी विशेषांक (१९३४)
चुरू मंडल का शोधपूर्ण इतिहास—लेखक : गोविन्द अग्रवाल (१९७४)

छाजेहड़ गोत्रीय ओसवाल इतिहास (अप्रकाशित)—लेखक : श्री भँवरलाल नाहटा (१९८९)

जगत सेठ—लेखक : पारसनाथसिंह (१९५०)
जयपुर श्वेताम्बर समाज डाईरेक्टरी १९८४—सम्पादक : श्री सौभाग्यमल श्रीश्रीमाल
जैन ऐतिहासिक रास माला—लेखक : मुनि बुद्धिसागर
जैन डायरेक्टरी (अंग्रेजी)—सम्पादक : श्री सी. एल. मेहता (१९७६)
जैन डायरेक्टरी (अंग्रेजी)—सम्पादक : डा. विनय जैन (१९८७)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

जैन जाति महोदय—लेखक : मुनि ज्ञान सुन्दर जी (१९२९)
जैन जातियों का उद्भव और विकास— लेखक : डा. कैलाशचन्द पंत
जैन परम्परा नो इतिहास (गुजराती)—लेखक : त्रिपुरी महाराज
जैन पुस्तक प्रशस्ति संग्रह—सम्पादक : मुनि जिन विजय जी
जैन लेख संग्रह—सम्पादक : श्री पूर्णचन्द्र नाहर
जैन वीरों का इतिहास—लेखक : अयोध्या प्रसाद गोयलीय
जैन सम्प्रदाय शिक्षा—लेखक : यति श्री पालचन्द्र (१९१०)
जैनिज्म इन राजस्थान—लेखक : डा. के. सी. जैन
जोधपुर राज्य री ख्यात

तमसो मा ज्योतिर्गमय (स्मारिका)—सम्पादक : श्री गणपतिचन्द्र भंडारी (१९८३)
तिथ्ययर (पत्रिका) : स्व. श्री कस्तूरचन्द ललवानी—लेखिका : गीता ललवानी

द्रव्य परीक्षा—लेखक : ठक्कर फेरू
दिग्विजय प्रकाश
दी टेलीग्राफ (दैनिक पत्र)—लेखक : श्री खुशवंत सिंह (१९९०)
दी पेंटेड वाल्स ऑफ शेखावाटी—लेखक : फ्रांसिस वर्गिज
दी मारवाड़ीज—लेखक : थामस ए. टिमबर्ग (१९७८)

न्यू लाईफ (अंग्रेजी पत्रिका)—लेखक : मनसुख शाह (१९८९)
नगर सेठ शांतिदास झवेरी (गुजराती)—लेखिका : मालती शाह (१९८७)
नैणसी री ख्यात—लेखक : मुहणोत नैणसी (अनुवादक : रामनारायण दूगड़, सम्पादक : गौरीशंकर हीराचन्द ओझा-१९२४, संशोधित संस्करण—प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर)

पत्र (हस्तलिखित)—मुनि सुव्रत जी जैन मन्दिर ग्रंथ भण्डार, जोधपुर
पत्र (हस्तलिखित)—उपाध्याय जयचन्द गणि का प्राचीन संग्रह, बीकानेर
प्रबंध कोश—लेखक : आ. राजशेखर सूरि
प्रबंध चिन्तामणि—लेखक मेरु तुंग बीकानेर
प्रशस्ति संग्रह (अखिल ओसवाल पत्रिका) लेखक : श्री अगरचन्द नाहटा (१९३८)
प्राचीन जैन लेख संग्रह—सम्पादक : विजय धर्म सूरि जी
पाणिनिकालीन भारत
पार्श्वनाथ चरित—लेखक : वादिराज सूरि
पार्श्वनाथ परम्परा का इतिहास—लेखक : मुनि ज्ञान सुन्दर जी
पुरुषार्थ की गाथा (श्री छोगमल जी चोपड़ा)—सम्पादक : मुनि सुखलाल जी (१९९१)
पूर्वकालीन ओसवाल ग्रंथकार (आलेख—ओसवाल पत्रिका)—
लेखक : श्री अगरचन्द भँवरलाल नाहटा (१९३७)
प्रोग्रेसिव जैम्स—लेखक : सतीश कुमार जैन (१९८७)

बच्छावत गोत्रीय मेहता वंश—लेखक : श्री लक्ष्मण सिंह मेहता (१९८३)
बंगाल डिस्ट्रिक्ट गजेट ऑफ सिंहभूम—लेखक : ओ, माली (Vol. २०-१८९०, १९१०)
बनारसी विलास—लेखक : कवि बनारसीदास
बीकानेर जैन लेख संग्रह—लेखक : श्री अगरचन्द नाहटा (१९५५)

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

बीदावतों की ख्यात—
भगवान् पार्श्वनाथ की परम्परा का इतिहास—लेखक : मुनि ज्ञान सुन्दर जी
भण्डारियों की ख्यात
भँवरलाल सिंघी: सात दशकों की जीवन यात्रा—
सम्पादिका : श्रीमती प्रतिभा अग्रवाल (१९८४)
भविष्य पुराण (महालक्ष्मी व्रत-कथा)—
भामाशाह एवं ठाकुर ताराचन्द—लेखक : डा. राजेन्द्र प्रकाश भटनागर (१९८७)
भारत का व्यापारिक इतिहास—लेखक : मोहनलाल बड़जात्या (१९२८)
भारतीय व्यापारियों का परिचय—लेखक : श्री चन्द्रराज भंडारी व अन्य (१९२८)
भाषा कल्पद्रुम—लेखक : शिवप्रसाद सितारे हिन्द (१८८९)
भीनमाल दर्शन—लेखक : भँवरलाल सेठिया
भीलड्या बोहरा (हस्तलिखित गुटका न. २/१०७)—श्री कुंथुनाथ मंदिर ग्रंथ भण्डार

मध्य एशिया और पंजाब में जैन धर्म—लेखक : हीरालाल दुग्गड़ (१९७९)
मध्यकालीन संस्कृति—लेखक : डा. गौरीशंकर हीराचन्द ओझा
मनसा मंगल—लेखक : विप्रदास (१४९५)
मनोरमा (पत्रिका)—फरवरी (१९८३)
मरुश्री (पत्रिका)—लेखक : गोविन्द अग्रवाल (१९७३, १९७४, १९७५)
महाजन वंश मुक्तावली—लेखक : यति रामलाल (१९१०)
मारवाड़ रा परगनां री विगत—लेखक : मुहनोत नैणसी (सम्पादक : श्रीफत्तहसिंह-१९६९)
मारवाड़ राज्य का इतिहास—लेखक : जगदीश सिंह गहलोत (१९२५)
मारवाड़ी समाज—लेखक : थामस ए. टिमबर्ग (हिन्दी अनुवाद -देव लीना)
मारवाड़ी समाज : चिन्तन और चुनौती—लेखक : भँवरमल सिंघी (१९६५)
मुहणोतों की ख्यात
मेघजी पेथराज शाह (अंग्रेजी)—लेखक : पॉल मरेट (१९८८)
मैं अपने मारवाड़ी समाज को प्यार करता हूँ (खण्ड-१,२)—
लेखक : जैमिनी कौशिक बरुआ
मोरखणा—डा. एल. पी. टैसी. टोरी
मोहनोत परिवार (स्मारिका)—सम्पादक : डा. पदमचन्द मोहनोत (१९८६)
मोहनोत वंश प्रकाश—लेखिका : डा. कृष्णा मोहनोत

राजपूताना का इतिहास—लेखक : गौरीशंकर हीराचन्द ओझा (१९२७)
राजरूपक—लेखक : वीरभान रतनू
राजस्थान की जातियाँ—लेखक : बजरंग लाल लोहिया (१९५४)
राठोड़ों की ख्यात
रायकुमर सिंह व अन्य बनाम सर सेठ हुकमचन्द व अन्य (१९२४)

लाडनूँ गौरव—लेखक : मुनि नवरत्न मल (१९८५)
लाडनूँ : युवक परिषद् (स्मारिका)—आलेख : श्री आनन्दप्रकाश माथुर (१९८४-६)
लेट मुगल्स—लेखक : विलियम इर्विन

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

विविध तीर्थ कल्प—लेखक : आ. जिन प्रभ सूरि (१३६४-८९)
वीर विनोद—लेखक : कवि राजा श्यामलदास
वैश्य कुलभूषण (इतिहास कल्पद्रुम) माहेश्वरी कुल
वैश्य समुदाय का इतिहास—लेखक : डा. रामेश्वर दयाल गुप्त (१९९०)

शुद्ध दर्पण—लेखक : शिवकरण रामरतन दरक (१९०९)
शंकर दिग्विजय
शत्रुञ्जय माहात्म्य—लेखक : धनेश्वर सूरि
शत्रुञ्जय रास—लेखक : उपाध्याय समयसु र

स्कंध पुराण
स्टडीज इन साउथ इंडिया जैनिज्म—लेखक : एम. एस. रामास्वामी आयंगर (१९२२)
स्टेटिकल एकाउंट ऑफ बेंगाल (Vol.९) लेखक : हंटर
स्टडीज इन दी हिस्ट्री ऑफ गुजरात—लेखक : एम. एस. कामिसारियत (१९३५)
स्मृति यात्रा—लेखक : श्री पूनमचन्द भूतोड़िया (१९७९)
सरदार शहर इतिहास एवं परम्परा—लेखक : प्रो. देवेन्द्र हाण्डा
सद्धर्म संरक्षक बूटे राव—लेखक : मुनि विद्याविजय जी
सार्द्ध शताब्दि स्मृति ग्रंथ—संकलन : श्री भँवरलाल नाहटा (१९६५)
सिंघीयों की ख्यात
सूरज प्रकाश—लेखक : कविराजा करणीदान
सेठिया डाईरेक्टरी—प्रकाशक : श्री चम्पालाल सेठिया (१९८६)
सोहन लाल सुराणा स्मृति ग्रंथ—सम्पादक : मुरलीधर सारस्वत (१९८०)

हर्षचरित—
हीराचन्द दूगड़ (बंगला)—प्रकाशक : गेलेरी शिवम् (१९९०)
श्री अमरभारती (पत्रिका)—सम्पादक : श्री कृष्णानन्द शास्त्री
श्री आर्य कल्याण गौतम स्मृति ग्रंथ—सम्पादक : मुनि कलाप्रभ सागर जी (१९८२)
श्री इन्द्र दूगड़ अभिनन्दन समारोह (स्मारिका) (१९८९)
श्री जैन गोत्र संग्रह (गुजराती) लेखक : पं. हीरालाल हंसराज लालन (१९२३)
श्री प्रशस्ति संग्रह
श्री भँवरलाल नाहटा अभिनन्दन ग्रंथ—सम्पादक : श्री गणेश ललवानी (१९८६)
श्री मालों की ख्यात—

Ac. Gunratnasuri MS Jin Gun Aradhak Trust

Ac. Gunratnasuri MS

Jin Gun Aradhak Trust